जयधवलासहितं

कसायपाहुडं

भाग १४

भारतीय दिगम्बर जैन संघ

भारतवर्षीय दि० जैन संघ चौरासी मथुरा द्वारा प्रकाशित

श्रीयतिवृषभाचार्यरचितचूर्णिसूत्रसमन्वित्

श्रीभगवद्गुणभद्राचार्यप्रणीतम्

कसाय पाहुडं

(जयधवल, महाधवल)

तयोश्च

श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका

[चतुर्दशमाधिकारे चारित्रमोहोपशमनानुयोगद्वारं पञ्चमदशमाधिरे चारित्रमोहक्षपणानुयोगद्वारम्]

भाग–14

सम्पादकौ :

विद्वतरत्न
स्व०श्री पं० फूलचन्द्रः
सिद्धान्तशास्त्री, सिद्धान्ताचार्य, वाराणसी
सम्पादक महाबन्ध, सह सम्पादक
धवला आदि

विद्वतरत्न
स्व० श्री पं० कैलाशचन्द्रः
सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्ताचार्य
सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ,
प्रधानाचार्य स्याद्वाद महाविद्यालय
वाराणसी

द्वितीय संस्करण

प्रकाशक

भारतवर्षीय दि० जैन संघ, चौरासी–मथुरा (उत्तरप्रदेश)

जिनवाणी के प्राचीन शास्त्र जयधवला जी के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग दीजिए

हमारे महान पुण्योदय से मूढ़विद्री (दक्षिण) के शास्त्र भण्डार से बड़ी कठिनाई से प्राप्त द्वादशांग श्रुत के मूल अंश 'कषाय पाहुड' की आचार्य वीरसेनकृत विशाल टीका जय धवला के लगभग १६ भागों में जैन संघ मथुरा द्वारा प्रकाशित किया गया था जिसके धीरे-धीरे सभी भाग समाप्त हो गये। गत् ३ वर्ष पूर्व १२ भागों को पुनः प्रकाशित कराया और अब शेष ४ भागों १, १४, १५, १६ को प्रकाशन हेतु प्रेस को भेज दिये हैं। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ मथुरा ने अपने अनेक महत्वपूर्ण सेवा कार्यों में जैन धर्म आदि सर्वोपयोगी ग्रन्थों के साथ जयधवला के सम्पूर्ण लगभग १६ भागों में से कुछ बचे हुए भागों के एवं कुछ पूर्ण प्रकाशित भागों के पुनः प्रकाशन का भार सम्हाले रखा है। संघ की इस जिम्मेदारी को पूर्ण करने हेतु उदार दानदाताओं के आर्थिक सहयोग की महती आवश्यकता है।

अग्रायणी पूर्व के मूल अंश षटखंडागम् की धवल महाधवल टीकाओं का दो बार प्रकाशन हो चुका है। यह षटखंडागम् आचार्य धरसैन की रचना है जिसकी टीका आचार्य वीरसैन ने की है। आचार्य धरसैन से कुछ पूर्ववर्ती उक्त कषाय पाहुड के ज्ञात आचार्य गुणधर थे। इसी के आधार पर आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार आदि दृव्य दृष्टि प्रधान ग्रन्थों की रचना की है। संघ के संस्थापक समाज के वरिष्ठ विद्वान स्व० पं० राजेन्द्र कुमार जी सिद्धान्ताचार्य पं० कैलाशचंद जी, पं० फूलचंद जी ने ही उक्त जयधवला टीका का हिन्दी अनुवाद किया है। संघ के पूर्व प्रधान मंत्री प्रो० खुशालचंद जी गोरा वाला, पं० जगन्मोहन लाल जी शास्त्री रहे हैं। वर्तमान में अखिल भारतीय स्तर के समाजसेवी श्री ताराचंद जी प्रेमी, उक्त सभी क्रियाशील विद्वान समर्पित भाव से संघ समाज और साहित्य सेवाओं में संलग्न हैं।

अंत में जिस प्रकार समाज में पंचकल्याणकों एवं मंदिर निर्माण में उदार दानदाता अपना आर्थिक सहयोग देते हैं, उसी प्रकार उन्हें इस प्राचीन शास्त्र जयधवला जी के प्रकाशन में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान करना चाहिए।

– पं० नाथूलाल जैन शास्त्री, इन्दौर

प्रथम संस्करण : 1983
(वीर निर्वाण) : 2509
द्वितीय संस्करण : 2004
(वीर निर्वाण) : 2530

मूल्य : संशोधित मूल्य 250/-

मुद्रक :
नरूला ऑफसेट प्रिन्टर्स
शाहदरा, दिल्ली

प्रकाशक:
भारतवर्षीय दि० जैन संघ
चौरासी–मथुरा (उत्तरप्रदेश)

कार्यालय दूरभाष :
0565–2420711

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ

संक्षिप्त इतिहास

सन् 1933 में महामनीषी विद्वान स्व० पं० राजेन्द्र कुमार जी न्यायतीर्थ के अदम्य उत्साह और विलक्षण सूझ–बूझ ने एक नयी संस्था को जन्म दिया। नाम था शास्त्रार्थ संघ। इस संघ में स्व० लाला सिब्बामल जैन का सहयोग था। 1933 में अम्बाला में स्थापित इस संस्था के द्वारा देश के अनेक नगरों में धर्म–संरक्षण की भावना से जैन धर्म के आलोचकों से सार्वजनिक शास्त्रार्थ किये गये। उसका परिणाम यह हुआ कि आलोचकों ने जैन धर्म की आलोचना बन्द कर दी।

शास्त्रार्थ संघ को सबसे बड़ी विजय तब मिली, जब आलोचकों के प्रमुख सन्यासी स्वामी कर्मानन्द जी ने जैन धर्म को स्वीकार कर लिया और जैन धर्म की प्रमाणिकता में ''ईश्वर मीमांसा'' नाम की एक पुस्तक लिखी, जिसका प्रकाशन संघ ने किया है।

सन् 1940 के लगभग, संघ का स्थान अम्बाला की जगह मथुरा में हो गया। चौरासी स्थित भगवान् जम्बू स्वामी की निर्वाण स्थली के समीप पं० राजेन्द्र कुमार जी और उनके सहयोगियों के द्वारा भव्य–भवन का निर्माण किया गया और संघ का नाम ''शास्त्रार्थ–संघ'' के स्थान पर ''भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ'' रखा गया। अब संघ का कार्य धर्म प्रचार था।

उस समय संघ भवन में हर समय 10–12 विद्वान रहा करते थे और पूरे देश में होने वाले सामाजिक, धार्मिक उत्सवों में उन विद्वानों को आमंत्रित किया जाता था। उन्हीं दिनों संघ में एक प्रकाशन विभाग की स्थापना हुई, जिसके द्वारा अनेक समाजोपयोगी एवं धार्मिक पुस्तकों का प्रकाशन हुआ, जिनमें कैलाश चन्द्र जी शास्त्री द्वारा लिखा गया ''**जैन–धर्म**'' नाम का ग्रन्थ अब सातवें संस्करण के रूप में छप गया है। इन्हीं के द्वारा ''**तत्वार्थ सूत्र**'' की गौरवपूर्ण हिन्दी टीका लिखी है, जिसका तीसरा संस्करण प्रकाशित हो चुका है।

सन् 1950 के आस–पास संघ ने स्व० पंडित हीरालाल जी शास्त्री, अमरावती (महाराष्ट्र) ए.एन. उपाध्ये की प्रेरणा से ''कसायपाहुडं'' (जयधवल, महाधवल) ग्रंथराज के प्रकाशन की योजना बनायी। आर्थिक अभावों के होते हुए भी स्वर्गीय पं० फूलचन्द्र जी और पं० कैलाश चन्द्र जी शास्त्री के श्रम और सूझ–बूझ से मूल ग्रन्थ का हिन्दी में सरलीकरण किया गया। जिसे संघ ने 16 भागों में प्रकाशित कराया है।

उपरोक्त महाग्रन्थ के 12 भागों का द्वितीय संस्करण पूर्व में प्रकाशित कर चुके हैं एवं शेष चार भागों का द्वितीय संस्करण अब प्रकाशित करा रहे हैं। हमारे वर्तमान अध्यक्ष श्री स्वरूप चन्द्र जी मारसंस, आगरा का इन प्रकाशनों में हमें भरपूर सहयोग मिला है। हमारे अन्य दातारों का भी हमें आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है। आज संघ संस्थापक पं० राजेन्द्र कुमार जी तथा उनके सहयोगी पं० फूलचन्द्र जी, पं० कैलाश चन्द्र जी, पं० जगमोहन लाल जी नहीं हैं और अब संस्थानों के संचालन में वो उत्साह भी नहीं रहा, फिर भी हमारी भावना है कि संघ–भवन और उसके प्रकाशन विभाग को किसी न किसी प्रकार संचालित रखा जाये। संघ का मुख पत्र ''**जैन सन्देश**'' पिछले 6 दशक से निरन्तर प्रकाशित हो रहा है। हमारी भावना है कि समाज के उत्साहीजनों का निरन्तर सहयोग मिलता रहे और संघ भवन से यह आलोक निरन्तर प्रकाशमान होता रहे।

प्रधानमंत्री
ताराचन्द जैन 'प्रेमी'
भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ
चौरासी, मथुरा

—: आभार :—

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, चौरासी, मथुरा को प्रमुख आर्ष ग्रन्थ ''कसायपाहुडं'' जयधवल महाधवल को सोलह भागों में प्रकाशित करने का गौरव प्राप्त हुआ है। इसके प्रकाशन का शुभारंभ 6 दशक पूर्व हो गया था, जिसके अन्तिम दो भाग 15 और 16 को प्रकाशित करवाने में अर्थाभाव की कमी महसूस की गई। बाद में सोलहवां भाग का प्रकाशन ब्र० श्री हीरालाल खुशालचन्द दोशी, मांडवे (सोलापुर) के आर्थिक सहयोग से किया गया। 16 भागों का वितरण क्रमशः न होने के कारण प्रथम दो और चार भाग को मथुरा में ही पुनर्प्रकाशन कराना पड़ा। जयधवला के 14 भागों का प्रकाशन अनिवार्य समझ कर श्री रतनलाल जी जैन, वन्दना पब्लिशिंग हाउस, अलवर (राज.) के सहयोग और परामर्श से इनका पुनर्प्रकाशन वर्ष 2000 में किया गया। शेष भाग 1, 14, 15 एवं 16 का पुनर्प्रकाशन अब किया जा रहा है। इनके प्रकाशन में आर्थिक योगदान के लिये हमारे निम्न दानदाताओं ने उदारतापूर्वक दान देकर इस कार्य में अपना अमूल्य सहयोग दिया है। इसके लिए संघ इन सभी सधर्मी बन्धुओं का आभार प्रकट करता है।

1. श्री बलवंत राय जैन, भिलाई (म. प्र.)
2. श्री स्वरूप चन्द जैन (मारसंस), आगरा (उ. प्र.)
3. श्री रतन लाल जैन, (वन्दना प्रकाशन) अलवर (राज.)
4. श्री ताराचन्द जैन, अलवर (राज.)
5. श्री ओमप्रकाश जैन, कोसीकलाँ (उ. प्र.)
6. श्री भोलानाथ जैन, आगरा (उ. प्र.)
7. श्री निर्मल कुमार जैन, आगरा (उ. प्र.)
8. श्री प्रदीप कुमार जैन, आगरा (उ. प्र.)
9. श्री ज्ञानचन्द जी खिन्दूका, जयपुर (राज.)
10. कान्ता बहन मनुभाई शाह, सोजीत्रा (गुजरात)
11. श्री मनुभाई छगन लाल शाह, सोजीत्रा (गुजरात)

अब भाग 1, 14, 15 एवं 16 के पुनः प्रकाशन में जैन संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री स्वरुप चन्द जी जैन, मारसंस आगरा के समर्पित सहयोग से निम्न दानदातारों से आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ। इसके लिए संघ परिवार इन सभी दानदातारों का आभार व्यक्त करता है।

62,000/- श्री स्वरूप चन्द जी जैन (मारसन्स), आगरा
62,000/- श्री भोलानाथ जी जैन, आगरा
32,000/- श्री प्रदीप कुमार जी जैन, आगरा
11,000/- श्री निर्मल कुमार जी जैन, आगरा
15,000/- श्री शाह मगनीराम पन्नालाल जी जैन, उदयपुर
1,100/- श्री गुलजारी लाल जैन, फर्म– मुरलीधर गुलजारीलाल जैन, रफीगंज (बिहार)
1,000/- श्रीमती कुसुमलता, धर्मपत्नी डॉ० श्री के० सी० भारिल्ल, सिवनी

प्रधानमंत्री
ताराचन्द जैन 'प्रेमी'

प्रस्तावना

कषायप्राभृत जयधवलाका यह चौदहवाँ भाग है। चारित्रमोह उपशमनाका प्रकरण है। उपशम श्रेणिपर आरोहणका कथन भाग १३में कर आये हैं। प्रकृतमें उपशम श्रेणिसे अवरोहणका विवेचन क्रम प्राप्त है। उसमें भी सर्वप्रथम उपशमश्रेणिकी अपेक्षा कषायप्राभृतमें जो आठ सूत्र-गायाएँ निबद्ध हैं उनको लक्ष्यमें रखकर 'एत्तो सुत्तविहासा' यह चूर्णिसूत्र निबद्ध किया गया है। उन सूत्रगाथाओंको तो चारित्रमोहनीय उपशामना अनुयोग द्वारके प्रारम्भमें ही निबद्ध कर आये हैं। अतः हम यहाँ उनके पदोंका निर्देश न करके उनमें जिस विषयका प्रतिपादन किया गया है उसीका स्पष्टीकरण प्रकृतमें प्रस्तुत करेंगे।

उपशामनाकरण और उसके भेद

कर्मोंके उदयादिपरिणामोंके विना उपशान्तभावसे अवस्थित रहना इसका नाम उपशामना है। इसके दो भेद हैं—करणोपशामना और अकरणोपशामना।

करणोपशामना

प्रशस्त और अप्रशस्त परिणामोंसे कर्मप्रदेशोंका उपशान्त रहना करणोपशामना है। अथवा करणोंकी उपशामनाको करणोपशामना कहते हैं। उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचना करण आदि आठ करणोंकी प्रशस्त उपशामनाद्वारा उपशामना होना करणोपशामना है। अथवा अपकर्षण आदि करणोंकी अप्रशस्त उपशामनाद्वारा उपशामना होना करणोपशामना है यह उक्त कथन का तात्पर्य है।

अकरणोपशामना और उसके भेद

यहाँ करणोपशामनाका जो लक्षण निर्दिष्ट किया है। इससे अतिरिक्त लक्षणवाली अकरणोपशामना होती है। प्रशस्त और अप्रशस्तकरण परिणामोंके बिना जिनका उदयकाल अभी प्राप्त नहीं हुआ है ऐसे कर्मपरमाणुओंका उदय परिणामके बिना अवस्थित रहना अकरणोपशामना है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। मलयगिरिने श्वे० कर्मप्रकृतिमें इसके लक्षणका निर्देश करते हुए लिखा है कि संसारी जीवोंके जैसे पर्वत और नदीके पत्थर चतुष्कोण और त्रिकोण परिणम कर अवस्थित रहते हैं वैसे ही अधःप्रवृत्तकरण आदि करण परिणामोंके बिना वेदनाके अनुभवन आदि कारणों से कर्मप्रदेशोंका उपशान्त होना अकरणोपशामना है।

प्रकृतमें वीरसेन स्वामीने अकरणोपशामनाका जो लक्षण प्रतिपादित किया है उसमें बाह्य किसी कारणका निर्देश नहीं किया गया है। जब कि श्वे० कर्मप्रकृतिमें मलयगिरि अकरणोप-शामनामें वेदनादिके अनुभवको कारणरूपसे प्रस्तुत करते हैं। मलयगिरिके अनुसार यह एक करण-कृत और दूसरी अकरणकृत दोनों प्रकारकी देशोपशामनामें ही देखनी चाहिये, सर्वोपशामनामें नहीं, क्योंकि करणोंसे ही उसकी उत्पत्ति होती है। किन्तु यह कथन कषायप्राभृतकी चूर्णि और उसकी टीका दोनोंके विरुद्ध है।

अकरणोपशामनाके दो भेद हैं—अकरणोपशामना और अनुदीर्णोपशामना। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावका आलम्बन लेकर कर्मोंका जो विपाक परिणाम होता है उसे उदय कहते हैं

तथा उस उदयसे परिणत कर्मको उदीर्ण कहते हैं। उसके बिना जिसने विपाक परिणाम प्राप्त नहीं किया है उसे अनुदीर्ण कहते हैं। इन अनुदीर्ण कर्मोंकी उपशामनाका नाम अनुदीर्णोपशामना है। यह करण परिणामोंके बिना होती है, इसलिए इसका दूसरा नाम अकरणोपशामना भी है। इसका विवेचन कर्मप्रवाद नामक आठवें पूर्वमें द्रष्टव्य है।

श्वे० कर्मप्रकृति मूलमें तो इस सम्बन्धमें इतना ही कहा गया है कि इसके जानकार अनुयोगधरोंको हम प्रणाम करते हैं। किन्तु इसकी चूर्णिमें यह अवश्य ही स्वीकार किया गया है कि अकरणोपशामनाका विवेचन करनेवाला आगम विच्छिन्न हो जानेसे ही ग्रन्थकारने इसके जानकार अनुयोगधरोंको प्रणाम किया है।

करणोपशामना और उसके भेद

कर्णोपशामनाके दो भेद हैं—देशकरणोपशामना और सर्वकरणोपशामना। अप्रशस्त उपशामना आदि करणोंके द्वारा एकदेश कर्मप्रदेशोंका उदयादिपरिणामके बिना उपशान्तरूपसे रहना देशकरणोपशामना है। इसमें किन्हीं करणोंका परिमित कर्मप्रदेशोंमें ही उपशान्तपना होता है, इसीलिये इसे देशकरणोपशामना कहते हैं।

किन्तु इस विषयमें अन्य व्याख्यानाचार्योंका यह अभिप्राय है कि यहाँ इस प्रकारकी देश करणोपशामना विवक्षित नहीं है, क्योंकि इसका अकरणोपशामनामें समावेश हो जाता है। इसलिये यहाँ देशकरणोपशामनाका दूसरा अभिप्राय है। यथा—दर्शनमोहनीयकी उपशामना होने पर कितने ही करण उपशान्त रहते हैं और कितने ही करण अनुपशान्त रहते हैं, यह देशकरणोपशामना है। तात्पर्य यह है कि दर्शनमोहनीयकी उपशामना होने पर अपकर्षणकरण और परप्रकृतिसंक्रमकरण अनुपशान्त रहते हैं तथा शेष करण उपशान्त हो जाते हैं यह देशकरणोपशामना है। अथवा उपशमश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण ये तीन करण अपने-अपने स्वरूपसे विनष्ट हो जाते हैं। अर्थात् संसार अवस्थामें उदय, संक्रम, उत्कर्षण और अपकर्षणरूपसे जो उपशान्त थे उनका इस समय पुनः उत्कर्षण आदि क्रियाका होना इसका नाम देशकरणोपशामना है। अथवा नपुंसकवेदके प्रदेशोंका उपशमन करते हुए जब तक सर्वोपशम नहीं होता तब तक उसका नाम देशकरणोपशामना है। इसी प्रकार आगे भी स्त्रीवेद आदिके विषयमें समझना चाहिये। किन्तु का प्रा० चूर्णिके अनुसार वीरसेन स्वामीने इसे स्वीकार नहीं किया है।

तथा सब करणोंकी उपशामनाको सर्वोपशामना कहते हैं। तात्पर्य यह है कि अप्रशस्त उपशामना आदि आठ करणोंका अपनी-अपनी क्रिया को छोड़कर उनका प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशान्त होना सर्वकरणोपशामना है।

श्वे० कर्मप्रकृतिमें करणोपशामनाके सर्वकरणोपशामना और देशकरणोपशाना ये दो भेद किये गये हैं। उनमेंसे सर्वकरणोपशामनाके स्वरूप और उसकी प्रवृत्तिको स्पष्ट करनेके लिये इसमें विशेष कथन प्रस्तुत किया गया है। देशोपशामनाका कथन करते हुए उसकी चूर्णिमें इतना ही कहा गया है कि वह आठों कर्मोंकी होती है। मलयगिरिने इस सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है उसका आधार श्वे० पँचसंग्रह है। उसमें यह उल्लेख आया है—

देशोपशामनाकरणकृता करणरहिता च। सर्वोपशामना तु करणकृतैवेति।

आशय यह है कि देशोपशामना दो प्रकारकी होती है—करणकृत और करणरहित। सर्वोपशामना मात्र करणकृत ही होती है। जब कि जयधवलामें देशोपशामनाको अप्रशस्त उपशा-

मनाकरण आदि करणोंसे मात्र एकदेश कर्मप्रदेशोंके उपशम होनेको देशकरणोपशामना कहा गया है। आश्चर्य इस बातका है कि पचसंग्रह और कर्मप्रकृतिकी मलयगिरि टीकामें इसका नाम देशकरणोपशामना होते हुए भी इसमें अकरणोपशामनाको कैसे परिगणित कर लिया गया है जो जयधवलामें प्रतिपादित देशकरणोपशामनाके लक्षणके विरुद्ध हैं।

देशकरणोपशामनाके भेद

कषायप्राभृत चूर्णिमें देशकरणोपशामनाके ये दो नाम आये है—देशकरणोपशामना और अप्रशस्त उपशामना। इसका स्पष्टीकरण करते हुए जयधवलामें लिखा है कि यह संसारी जीवोंके अप्रशस्त परिणामोंके निमित्तसे होती है, इसलिए इसका पर्यायवाची नाम अप्रशस्त उपशामना भी है और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि अति तीव्र संक्लेश परिणामोंके कारण अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरणकी प्रवृत्ति होती है। क्षपकश्रेणि और उपशमश्रेणीमें विशुद्धतर परिणामोंके कारण इसका विनाश भी देखा जाता है, इसलिए भी यह अप्रशस्त है यह सिद्ध हो जाता है। इसका विशेष विवेचन कषायप्राभृतचूर्णिके अनुसार दूसरे अग्रायणीय नामक पूर्वकी पाँचवीं वस्तु अधिकारके चौथे महाकर्म प्रकृति नामक अनुयोगद्वारमें देखना चाहिए।

यह कषायप्राभृतचूर्णि और उसकी जयधवला टीकामें कहा गया है। किन्तु श्वे० कर्मप्रकृति और उसकी चूर्णिमें इसके देशोपशामनाके अतिरिक्त अगुणोपशामना और अप्रशस्तोपशामना ये दो नाम और दृष्टिगोचर होते हैं। जब कि इनमेंसे अगुणोपशामना यह नाम कषायप्राभृत चूर्णिमें आगे-पीछे कहीं भी उपलब्ध नहीं होता। यहाँ देशोपशामनाका अप्रशस्तोपशामनाके समान अगुणोपशामना यह नाम होना चाहिए या नहीं, विचारका यह मुख्य मुद्दा नहीं है। यहाँ विचार तो इस बातका करना है कि यदि कषायप्राभृत चूर्णि लिखते समय यतिवृषभ आचार्यके सामने श्वे० कर्मप्रकृति उपस्थित थी तो वे देशोपशामनाके पर्यायवाची नामोंका उल्लेख करते समय अगुणोपशामनाका उल्लेख करना क्यों भूल गये? इससे स्पष्ट है कि देशोपशामनाका विवेचन देखनेके लिए जो आचार्य यतिवृषभने अपनी चूर्णिमें 'एसा कम्मपयडीसु' पदका उल्लेख किया है उससे उनका आशय दूसरे पूर्वकी पांचवी वस्तुके चौथे प्राभृतसे ही रहा है, श्वे० कर्मप्रकृतिसे नहीं।

कसायपाहुड सुत्तकी प्रस्तावनामें एक मुद्दा यह भी उपस्थित किया गया है कि श्वे० कर्मप्रकृतिमें गाथा ६६ से ७१वीं गाथा तककी इन छह गाथाओं द्वारा देशोपशमनाका विस्तृत विवेचन किया गया है, इसलिए उसमें यह स्वीकार किया गया है कि आ० यतिवृषभके सामने श्वे० कर्मप्रकृति रही है। उन्होंने देशोपशामनाके स्वरूप आदिको समझनेके लिए 'एसा कम्पयडीसु' लिखकर जिस कर्मप्रकृतिकी ओर संकेत किया है वह श्वे० कर्मप्रकृति ही है।

किन्तु श्वे० कर्मप्रकृतिकी जिन ६ गाथाओंमें सब कर्मोंके उत्तर भेदोंकी प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशभेदसे जिस देशोपशामनाका निर्देश किया गया है उसका आशय इतना ही है कि देशोपशामना अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक ही होती है, अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें देशोपशामनाकी व्युच्छित्ति ही रहती हैं सो यह अभिप्राय तो कषायप्राभृत और उसकी चूर्णिमें प्रतिपादित दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी उपशमना और क्षपणाके कथनसे ही फलित हो जाता है। यतिवृषभ आचार्यने अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरणका स्वयं निषेध किया ही है। अतः मात्र इतने अभिप्रायको

स्पष्ट करनेके लिए आचार्य यतिवृषभने देशोपशामनाके स्वरूपपर प्रकाश डालनेके लिए 'एसा कम्मपयडोसु' लिख कर श्वे० कर्मप्रकृतिकी ओर इशारा किया होगा इसे कोई भी परीक्षक स्वीकार नहीं करेगा।

कसायपाहुडसुत्तकी प्रस्तावनामें एक बात यह भी स्वीकार की गई है कि श्वेताम्बर आम्नायमें प्रसिद्ध शतक, सप्ततिका और कर्मप्रकृतिचूर्णिके कर्ता भी आचार्य यतिवृषभ ही हैं सो ऐसा प्रतिपादन करना भी युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता। यद्यपि इस समय शतक और सप्ततिका[1]की चूर्णियाँ तो हमारे सामने नहीं हैं, कर्मप्रकृतिकी चूर्णि अवश्य ही हमारे सामने है। अतः उसके आधारसे ही यहाँ इस बातका विचार किया जाता है कि श्वे० कर्मप्रकृतिचूर्णिके लेखक स्वयं यतिवृषभ आचार्य हैं या नहीं। यथा—

(१) दिगम्बर परम्परामें संक्रमको बन्धका एक प्रकार मानकर उद्वेलना प्रकृतियाँ १३ स्वीकार की गई हैं—आहारकद्विक, सम्यक्त्व, मिश्र, देवगतिद्विक, नरकगतिद्विक, वैक्रियिकद्विक, उच्चगोत्र और मनुष्यगतिद्विक। गो० क० गाथा ४१५।

किन्तु श्वे० कर्मप्रकृति चूर्णिमें २७ उद्वेलना प्रकृतियाँ स्वीकार की गई हैं। यथा—अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, देवद्विक, नरकद्विक, वैक्रियिक सप्तक, आहारक सप्तक मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र। कर्मप्र० चू० प्रदेशसंक्रम पत्र ९५ आदि।

(२) अपूर्वकरणमें स्थितिकाण्डकघात आदि कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर कषायप्राभृत चूर्णिमें स्थितिकाण्डकघातकी प्रक्रियापर प्रकाश डालते हुए दर्शनमोहनीयका जो स्थितिकाण्डकघात होता है उसमें उद्वेलना संक्रम नहीं स्वीकार करके मात्र यह उल्लेख दृष्टिगोचर होता है—

> पढमट्ठिदिखंडयं बहुअं, विदियट्ठिदिखंडयं विसेसहीणं, तदियं ट्ठिदिखंडयं विसेसहीणं। एदेण कमेण ट्ठिदिखंडयसहस्सेहि बहुएहिं गदेहिं अपुव्वकरणद्धाए चरिमसमयं पत्तो। भा० १३, पृ० ३६-३७।

किन्तु इसके स्थानमें इसी स्थिति काण्डकघात को श्वे० कर्मप्रकृतिचूर्णिमें उद्वेलना संक्रमपूर्वक स्वीकार किया गया है। यथा—

> अन्नं च उव्वलणालक्खणेण पठमट्ठिदिखंडयं सव्वमहन्तं। वितियं विसेसहीणं, ततिय विसेसहीणं जाव अपुव्वकरणस्स अंतिमट्ठितिखंडगं विसेसहीणं। उपशमनाकरण अधिकार पृ० २५।

यह दोनों चूर्णियोंका एक-एक उल्लेख है। इनमें से जहाँ कर्मप्रकृति चूर्णि में दर्शनमोहनीयके स्थितिकाण्डक घातको उद्वेलनासंक्रम पूर्वक स्वीकार किया है वहाँ कषायप्राभृतचूर्णि इस तथ्यको स्वीकार नहीं करती। इस प्रकार दोनों चूर्णियोंका यह अन्तर उपेक्षा करने योग्य नहीं है। प्रथम कारण तो यह है कि एक तो दोनों परम्पराओंके अनुसार मिथ्यात्व कर्म उद्वेलनाप्रकृति नहीं है। दूसरे इस तथ्यको कर्मप्रकृति स्वीकार करती है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो कर्म उद्वेलना प्रकृतियाँ होकर भी २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाला ही मिथ्यात्वदशामें इन दोनों प्रकृतियोंकी उद्वेलना करता है। श्वे० कर्मप्रकृतिने इसे स्वीकार करते हुए लिखा है—

---

१. कसायपाहुडसुत्त प्रस्तावना पृ० ३६।

एवं मिच्छदिट्ठिस्स वयगं मिस्सगं तओ पच्छा ॥६६॥ संक्रमक०

इसी तथ्यकी उसकी चूर्णिसे भी पुष्टि होती है। यथा—

मिच्छादिट्ठि अट्ठावीससंतकम्मितो पुव्वं सम्मत्तं एतेण विहिणा उव्वलेति। ततो सम्मामिच्छत्तं ते चेव विहिणा।

इसी तथ्यको दिगम्बर परम्परा भी स्वीकारती है। यथा—

मिच्छे सम्मिस्साणं अधापवत्तो मुहुत्तअंतो त्ति।
उव्वेलणं तु तत्तो दुचरिमकंडो त्ति णियमेण ॥४१२॥ गो० क०

(२) यह दोनों चूर्णियोंका एक-एक उदाहरण है जो इस तथ्य की पुष्टि करने के लिये पर्याप्त हैं कि इन दोनों चूर्णियोंका कर्ता एक व्यक्ति नहीं हो सकता। आगे भी हम इन दोनों चूर्णियोंमें मतभेदके कतिपय उदाहरण उपस्थित कर रहे हैं जिनसे इस तथ्यकी पुष्टिमें और भी सहायता मिलेगी। श्वे० कर्मप्रकृति चूर्णिके इस उल्लेखपर दृष्टिपात कीजिये—

इदाणीं सम्मदिट्ठिस्स उव्वलमाणितो भण्णंति—'अहाणियट्टिमि छत्तीसाए' अहसद्दो अण्णाहियारे। किमण्णं? भण्णइ—कालओ अंतोमुहुत्तेण उव्वलति त्ति। तं दरसेति—अणियट्टिखवगो छत्तीसं कम्मपगतीतो एएणेव विहिणा उव्वलेति। कर्मचूर्णि।

आशय यह है कि अनिवृत्तिकरण नौवें गुणस्थानमें जिन ३६ प्रकृतियोंकी क्षपणा होती है वह उद्वेलना संक्रमपूर्वक ही होती है। इसी प्रकार इस चूर्णिमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना तथा मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी क्षपणा भी उद्वेलनापूर्वक स्वीकार की गई है। जब कि कषाय प्राभृतचूर्णिमें इस बातका अणुमात्र भी उल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता।

(३) कषायप्राभृत चूर्णिके अनुसार जो जीव कषायोंकी उपशमना करता है वह अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें लोभसंज्वलनके मात्र पूर्वस्पर्धकोंसे ही सूक्ष्म कृष्टियोंकी रचना करता है। उल्लेख इस प्रकार है—

से काले विदियतिभागस्स पढमसमए लोभसंजलणाणुभागसंतकम्मस्स जं जहण्णफद्दयं तस्स हेट्ठदो अणुभागकिट्टीओ करेदि।

किन्तु श्वे० कर्मप्रकृतिचूर्णिमें पूर्वस्पर्धकोंसे अपूर्व स्पर्धकोंकी रचनाका विधान कर पुनः उनसे कृष्टियोंके करनेका विधान किया गया है। यथा—

अस्सकंनकरणद्धाते वट्टमाणो लोभसंजलणस्स पुव्वफद्दयेहिंतो समते समते अपुव्वाणि फड्डगाणि करेति।·······जाव एयं ठाणं न पावति ताव पुव्वफड्डगं अपुव्वफड्डगस्स रूवेणेव अणुभागसंतकम्मं आसि, तीए पठमसमते किट्टीओ पकरेइ।

(४) दोनों परम्पराओंके कर्मविषयक शास्त्रोंमें कुछ ऐसे भी शब्द प्रयोग पाये जाते हैं जो अपनी-अपनी परम्परामें ही प्रचलित हैं। जैसे (१) श्वे० कर्मप्रकृति और उसकी चूर्णिमें प्रदेश पुंजके स्थानमें 'दलिय' दलक शब्दका प्रयोग हुआ है[1]। किन्तु कषायप्राभृत मूल और उसकी चूर्णिमें इस शब्दके स्थानमें मात्र 'अग्ग' अग्रशब्दका प्रयोग दृष्टिगोचर होता है[2]। दलिय शब्दका प्रयोग भूलसे दोनोंमें कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता। (२) श्वे० कर्मप्रकृति और उसकी चूर्णिमें नपुंसकवेदके अर्थमें नपुंसकवेद शब्दका प्रयोग तो हुआ ही है। साथमें इस अर्थमें 'वरिसवर' शब्दका भी प्रयोग किया गया है। जब कि कषायप्राभृत मूल और उसकी चूर्णिमें इस अर्थमें

१. गा० २२ और उसकी चूर्णि। २. गा० ६२ और उसकी चूर्णि।

एकमात्र नपुंसकवेद शब्दका ही प्रयोग हुआ है[१]। (३) श्वे० कर्मप्रकृतिमें अविरत सम्यग्दृष्टिके लिये 'अजऊ' शब्दका प्रयोग हुआ है। इसकी चूर्णिमें इसके स्थानमें 'अजत' शब्द दृष्टिगोचर होता है[२]। जब कि कषायप्राभृत और उसकी चूर्णिमें अविरत सम्यग्दृष्टिके अर्थमें इस शब्दका प्रयोग नहीं ही हुआ है। शब्द प्रयोगभेदके ये कतिपय उदाहरण हैं, जिनको लक्ष्यमें लेनेसे भी यही निश्चित होता है कि इन दोनों चूर्णियोंके कर्ता आचार्य यतिवृषभ नहीं हो सकते यह स्पष्ट ही है। और न ही आ० यतिवृषभने अपनी चूर्णि लिखते समय श्वे० कर्मप्रकृति और उसकी चूर्णिका पदानुसरण ही किया है। कषायप्राभृत और उसकी चूर्णिमें झीनाझीन अधिकार और स्थितिक या स्थित्यन्तिक आदि ऐसे अनेक अनुयोगद्वार हैं जो श्वे० कर्मप्रकृति और उसकी चूर्णिमें नाममात्रको भी उपलब्ध नहीं होते। अतः यह स्पष्ट है कि उन विषयोंपर चूर्णिसूत्र लिखते समय जिन गुरुओं और मूलपूर्व आगमको आधार बनाकर उन्होंने उन विषयोंपर चूर्णिसूत्र लिखे हैं उन्हीं गुरुओं और पूर्वआगमको आधार बनाकर ही उन्होंने शेष चूर्णिसूत्रोंकी भी रचना की है, अतः कसायपाहुडसुत्तकी उक्त प्रस्तावनामें यह स्वीकार करना भी हास्यास्पद प्रतीत होता है कि—

'यतिवृषभके सम्मुख षट्खण्डागमके अतिरिक्त जो दूसरा आगम उपस्थित था वह है कर्म साहित्यका महान् ग्रन्थ कम्मपयडी। इसके संग्रहकर्ता या रचयिता शिवशर्म नामके आचार्य हैं और उस ग्रन्थ पर श्वेताम्बराचार्योंकी टीकाके उपलब्ध होनेसे अभी तक यह श्वेताम्बर सम्प्रदायका ग्रन्थ समझा जाता रहा है। किन्तु हालमें ही उसकी चूर्णिके प्रकाशमें आनेसे तथा प्रस्तुत कसाय-पाहुडकी चूर्णिका उसके साथ तुलनात्मक अध्ययन करनेसे इस बातमें कोई सन्देह नहीं रह जाता है कि कम्मपयडी एक दिगम्बर परम्पराका ग्रन्थ है और अज्ञात आचार्यके नामसे मुद्रित और प्रकाशित उसकी चूर्णि भी एक दिगम्बराचार्य इन्हीं यतिवृषभकी ही कृति है' पृ० ३१।

(५) हाँ उपशमना प्रकरणकी इन दोनों चूर्णियोंके अध्ययनसे इतना अवश्य ही स्वीकार किया जा सकता है कि जिस श्वेताम्बर आचार्यने कर्मप्रकृति चूर्णिकी रचना की है उनके सामने कषायप्राभृत चूर्णि अवश्य रही है। प्रमाणस्वरूप कषायप्राभृत गाथा १२२ की चूर्णि और श्वे० कर्मप्रकृति गाथा ५७ की चूर्णि द्रष्टव्य है—

> कदिविहो पडिवादो—भवक्खएण च उवसामणक्खएण च। भवक्खएण पदिदस्स सव्वाणि करणाणि एगसमएण उग्घाडिदाणि। पढमसमए चेव जाणि उदीरज्जंति कम्माणि ताणि उदयावलियं पवेसदाणि, जाणि ण उदीरंजति ताणि वि ओकड्डिदूण आवलियबाहिरे गोवुच्छाए सेढीए णिक्खित्ताणि। क० पा० सुत्त पृ० ७१४।

यह कषायप्राभृत चूर्णिका उल्लेख है। इसके प्रकाशमें श्वे० कर्मप्रकृति उपशमनाप्रकरणकी इस चूर्णिपर दृष्टिपात कीजिए—

> इयाणि पडिपातो सो दुविहो—भवक्खएण उवसमद्धक्खएण य। जो भवक्खएण पडिवज्जइ तस्स सव्वाणि करणाणि एतसमतेण उग्घाडिदाणि भवंति। पढमसमते जाणि उदीरंज्जति कम्माणि ताणि उदयावलियं पवेसियाणि, जाणि ण उदीरिज्जंति ताणि उकड्डिऊण उदयावलियबाहिरतो उवरिं गोपुच्छागितीते सेढीते रतेति। जो उवसमद्धाक्खएणं परिपडति तस्स विहासा। पत्र ६९

१. गा० ६५ और उसकी चूर्णि। २. गा० २७ और उसकी चूर्णि।

दोनों चूर्णियोंके उन दो उल्लेखोंमेंसे कषायप्राभृत चूर्णिको सामने रखकर कर्मप्रकृति चूर्णिके पाठपर दृष्टिपात करनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि कर्मप्रकृति चूर्णिकारके सामने कषायप्राभृत चूर्णि नियमसे रही है। प्रथम तो उसका कारण कर्मप्रकृति चूर्णिके उक्त उल्लेखमें पाया जानेवाला 'तस्स विहासा' पाठ है, क्योंकि किसी मूल सूत्र गाथाका विवरण उपस्थित करनेके पहले एत्तो सुत्त विहासा'[1] या 'तस्स विहासा[2]' या मात्र 'विहासा[3]' पाठ देनेकी परम्परा कषायप्राभृत चूर्णिमें ही पाई जाती है। किन्तु श्वे० कर्मप्रकृति चूर्णिमें किसी भी गाथाकी चूर्णि लिखते ससय 'तस्स विहासा' यह लिखकर उसका विवरण उपस्थित करनेकी परिपाटी इस स्थलको छोड़कर अन्यत्र कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होती।

एक तो यह कारण है कि जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि श्वे० कर्मप्रकृतिचूर्णिकारके सामने कषायप्राभृतचूर्णि नियमसे उपस्थित रही है। दूसरे श्वे० कर्मप्रकृतिकी इस चूर्णिमें 'गोपुच्छागितीते' पाठका पाया जाना भी इस तथ्यका समर्थन करनेके लिये पर्याप्त कारण है। हमने श्वे० कर्मप्रकृति मूल और उसकी चूर्णिका यथा सम्भव अवलोकन किया है, पर हमें उक्त स्थलकी चूर्णिको छोड़कर अन्यत्र कहीं भी इस तरहका पाठ उपलब्ध नहीं हुआ जिसमें निषेक क्रमसे स्थापित प्रदेश रचनाके लिये गोपुच्छाकी उपमा दी गई हो।

तीसरे उक्त दोनों चूर्णियोंमें रचनाके जिस क्रमको स्वीकार किया गया है उससे भी इसी तथ्यका समर्थन होता है कि श्वे० कर्मप्रकृतिचूर्णिके लेखकके सामने कसायपाहुडसुत्तकी चूर्णि नियमसे रही है।

इस प्रकार दोनों चूर्णियोंके उपशामना अधिकार पर दृष्टिपात करनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यतिवृषभ आचार्य न तो कर्मप्रकृति चूर्णिके कर्ता ही हैं और न ही कषायप्राभृत चूर्णिको निबद्ध करते समय उनके सामने श्वे० कर्मप्रकृति मूल ही उपस्थित रही है। उन्होंने अपनी चूर्णिमें जिस कर्मप्रकृतिका उल्लेख किया है वह प्रस्तुत श्वे० 'कर्मप्रकृति न होकर अग्रायणीय पूर्वकी पाँचवीं वस्तुका चौथा अनुयोगद्वार महाकम्मपयडिपाहुड ही है। उसके २४ अवान्तर अनुयोगद्वारोंको ध्यान में रख कर ही आ० यतिवृषभने 'कम्मपयडीसु' में बहुबचनका निर्देश किया है।

सर्वकरणोपशामना और उसका दूसरा नाम

करण आठ हैं—बन्धनकरण, उदीरणाकरण, संक्रमकरण, उत्कर्षणकरण, अपकर्षणकरण, अप्रशस्त उपशमनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण। कर्मोंके बन्ध आदि होनेमें आत्माके परिणाम मुख्य निमित्त हैं, इसलिये इनकी करण संज्ञा है। स्वभावभूत सहज आत्माके अवलम्बनसे इन बन्धादि समस्त करणोंकी क्रमसे उपशामना होती है, इसलिये इस उपशामनाको सर्वकरणोपशामना कहा गया है। सर्वोपशामना आत्माके मोक्षमार्गमें साधक आत्माके बिशुद्ध परिणामोंके निमित्त होती है, इसलिये इसका दूसरा नाम प्रशस्त करणोपशामना भी है। श्वे० कर्मप्रकृति और उसकी चूर्णिमें इसे इन दो नामोंके अतिरिक्त गुणोपशामना भी कहा गया है। यह भी एक ऐसा प्रमाण है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि श्वे० कर्मप्रकृति चूर्णिकी बात तो छोड़िये, कषाप्राभृत चूर्णिकी रचना करते समय आ० यतिवृषभके सामने श्वे० कर्मप्रकृति भी उपस्थित नहीं थी।

यह प्रशस्त करणोपशामना मात्र मोहनीय कर्मकी ही होती है। उसमें भी चारित्रमोहनीयकी प्रशस्त उपशामना करते समय आठों करणोंकी होती है। मात्र दर्शन मोहनीयकी प्रशस्त

१. कषायपाहुड सुत्त पृ० ६०८, ७००। २. पृ० ७१५। ३. वही ७०९।

उपशामना हो जाने पर भी उपशमसम्यदृष्टिके अपकर्षणकरण और संक्रमकरण इन दो कारणोंकी प्रवृत्ति चालू रहती है। यहां चारित्रमोहनीयकी उपशामना प्रकृत है, क्योंकि उपशम श्रेणीमें दर्शनमोहनीयकी उपशामना तो होती ही नहीं है, क्योंकि जो उपशमश्रेणि पर आरोहण करनेके पूर्व ही दर्शन मोहनीयकी उपशामना या क्षपणा कर चुका है वही उपशम श्रेणि पर आरोहण करनेका अधिकारी होता है। तथा अनन्तानुबन्धीकी उपशामना होती नहीं। यहाँ मात्र उसकी विसंयोजना ही होती है। इसलिये प्रकृतमें अप्रत्याख्यानावरण आदि १२ कषाय और हास्यादि नौ नोकषाय इन २१ प्रकृतियोंकी सर्वोपशामना ही विवक्षित है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

२१ प्रकृतियोंकी उपशामनाका क्रमनिर्देश

जो जीव पुरुषवेदके उदयके साथ श्रेणिपर आरोहण करता है वह नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, सात नोकषाय, तीन क्रोध, तीन मान, तीन माया और सूक्ष्म कृष्टि लोभको छोड़कर तीन लोभ इन २१ प्रकृतियोंको उक्त परिपाटीक्रमसे सर्वोपशामना करता है। तथा इसके बाद सूक्ष्मकृष्टिगत लोभकी उपशामना करता है। और इस प्रकार पूरा मोहनीय कर्म उपशान्त हो जाता है। यहाँ इनमेंसे प्रत्येक प्रकृतिके उपशम करनेमें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है और समस्त २१ प्रकृतियोंके उपशम करनेमें भी अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। आशय यह है कि जिस कर्मके उपशम करनेका प्रारम्भ करता है प्रथम समयमें उसके सबसे कम प्रदेश पुंजका उपशम करता है, दूसरे समयमें उससे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको उपशमाता है। तीसरे समयमें उससे भी असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको उपशमाता है। यह क्रम विवक्षित प्रकृतिके पूरी तरहसे उपशम होनेके अन्तिम समय तक चालू रहता है। इसी प्रकार समस्त २१ प्रकृत्तियोंके विषयमें समझना चाहिये। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि उदयावलिप्रमाण स्थितियोंका और बन्धावलिप्रमाण स्थितियोंका उपशम नहीं होता, क्योंकि वे अनन्तर पर प्रकृतिरूप परिणम जाते हैं। इसी प्रकार अनुभागसम्बन्धी सभी स्पर्धकों और सभी वर्गणाओंकी उपशामना करता है। यहाँ बन्धावलि और उदयावलिको छोड़कर ऐसा नहीं कहना चाहिये, क्योंकि जितने भी स्थितियोंके भेद हैं उन सबमें स्पर्धक और सब वर्गणाएँ पाई जाती हैं। यहाँ संक्रम, उदीरणा, बन्ध, उदय और सत्त्वके प्रसंगसे भी ऊहापोह करते हुए अल्पबहुत्व द्वारा उसे स्पष्ट किया गया है सो उसे मूलसे समझ लेना चाहिये। यहाँ तकका जितना विवेचन है वह नपुंसकवेद और स्त्रीवेद पर अविकल घटित हो जाता है। मात्र उदय और उदीरणा उस-उस वेदसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके ही कहनी चाहिए। तथा आठ कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा उक्त प्ररूपणा उदय और उदीरणाको छोड़कर ही करनी चाहिये। अब रहे पुरुषवेद और चार संज्वलन सो इनकी अपेक्षा भी उदय और उदीरणको ध्यानमें रखकर विचार करनेपर कदाचित् अनियम बन जाता है।

यहाँ इतना विशेष समझना चाहिये कि पहले जो आठ करण कहे हैं उनमें अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरणकी प्रवृत्ति आठवें गुणस्थानके अन्तिम समय तक ही होती है। नौवें गुणस्थानके प्रथम समयमें इनकी व्युच्छित्ति हो जाती है। इसका अर्थ है कि आठवें गुणस्थान तक जो कर्म अभी तक उदयमें दिये जानेके अयोग्य थे और जिन कर्मोंका यथा-सम्भव संक्रम, उत्कर्षण और अपकर्षण नहीं हो सकता था उनका नौवें गुणस्थानके प्रथम समयसे ये सब कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं। यद्यपि वस्तुस्थिति यह अवश्य है पर आगे प्रशस्त उपशामना द्वारा चारित्र मोहनीयसम्बन्धी उन कर्मोंका भी प्रशस्त परिणामोंके द्वारा उपशम कर दिया जाता है और इसीलिये प्रकृतमें आठ करणोंकी उपशामनाको सर्वोपशामना कहा गया है।

करणसम्बन्धी विशेष विचार

आयुकर्ममेंसे नरकायुके बन्धनकरण और उत्कर्षणकरण मिथ्यात्वगुणस्थानमें ही होते हैं। संक्रम करणको छोड़कर शेष पाँच करण, उदय और सत्त्व चौथे गुणस्थान तक होते हैं। तिर्यञ्चायुके बन्धनकरण और उत्कर्षणकरण दूसरे गुणस्थान तक ही होते हैं। संक्रमकरणको छोड़कर शेष पाँच करण, उदय और सत्त्व पाँचवें गुणस्थान तक होते हैं। मनुष्यायुके बन्धनकरण और उत्कर्षणकरण चौथे गुणस्थान तक होते हैं। उदीरणाकरण प्रमत्तसंयतगुणस्थान तक होता है। अपकर्षणकरण १३वें गुणस्थान तक होता है। संक्रमकरणके बिना अप्रशस्त उपशामनाकरण, निकाचनाकरण और निधत्तीकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। तथा उदय और सत्त्व अयोगिकेवली गुणस्थान तक होते हैं। तथा देवायुके बन्धनकरण और उत्कर्षणकरण अप्रमत्तगुणस्थान तक होते हैं। अपकर्षणकरण और सत्त्व उपशान्तकषाय गुणस्थान होते हैं। उदय और उदीरणा असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक होते हैं तथा अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण ८वें गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं। इसका भी संक्रमकरण नहीं होता।

साता वेदनीयके बन्धनकरण और अपकर्षणकरण सयोगिकेवली गुणस्थान तक होते हैं। उत्कर्षणकरण सूक्ष्मसाम्यपराय गुणस्थान तक होता है। उदीरणाकरण और संक्रमकरण प्रमत्त संयत गुणस्थान तक होते हैं। उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। उदय और सत्त्व अयोगिकेवली गुणस्थान तक होते हैं। असातावेदनीयके बन्धनकरण, उत्कर्षणकरण और उदीरणाकरण प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक होते हैं। संक्रमकरण सूक्ष्मसाम्परायगुस्थान तक होता है। अपकर्षणकरण सयोगिकेवली गुणस्थान तक होता है। उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। उदय और सत्त्व अयोगिकेवली गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं।

मोहनीय कर्मके अपवर्तनाकरण और उदीरणाकरण सूक्ष्मसाम्परायमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक होते हैं। उदय इसके अन्तिम समय तक होता है। बन्धनकरण उत्कर्षणकरण और संक्रमकरण अनिवृत्तिकरणके विवक्षित स्थान तक होते हैं। अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण अपूर्वकरण गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं। तथा सत्त्व उपशान्त मोहके अन्तिम समय तक होता है।

शेष ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मोंके अपवर्तनाकरण और उदीरणाकरण क्षीणमोह गुणस्थानमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक होते हैं। उदय और सत्त्व अन्तिम समय तक होते हैं। बन्धनकरण, उत्कर्षणकरण और संक्रमकरण सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान तक होते हैं। उपशमनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण अपूर्वकरण गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं।

नाम और गोत्र कर्मके बन्धनकरण, उत्कर्षणकरण और संक्रमकरण सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थान तक होते हैं। उदीरणा और अकर्षणकरण सयोगकेवली गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं। उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण अपूर्वकरण गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं। उदय और सत्त्व अयोगकेवलीगणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं।

उपशामनाके भेद

उपशामना दो प्रकारकी होती है—सव्याघात उपशामना और निर्व्याघात उपशामना। यदि नपुंसक वेद आदिका उपशम करते समय बीचमें ही मरण हो जाता है तो वह सव्याघात

उपशामना कही जाती है। इसका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि नपुंसकवेदकी प्रशस्त उपशामना करनेके बाद दूसरे समयमें मरणको प्राप्त हो जानेपर सव्याघात उपशामनाका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होता है यह स्पष्ट ही है। तथा निर्व्याघात उपशामनाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

दूसरे प्रकारसे भी उपशामना दो प्रकारकी है—अप्रशस्त उपशामना और प्रशस्त उपशामना! इनमेंसे अप्रशस्त उपशामनाकी अनुपशान्त अवस्थाका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि अप्रशस्त उपशामनाके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अनुपशान्त होनेके बाद द्वितीय समयमें मरकर उसके देव हो जानेपर इसका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। तथा उपशम श्रेणीपर आरोहण करते समय अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर ऊपर चढ़नेके बाद लौटनेपर अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय तकके कुल कालका योग अन्तर्मुहूर्त है। इस प्रकार अप्रशस्त उपशामनाके अनुपशान्त रहनेका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है। प्रशस्त उपशामनाके भेदों सहित जघन्य और उत्कृष्टकाल का निर्देश अनन्तर पूर्ण किया हो है।

प्रतिपात के दो भेद

उपशमश्रेणिपर आरोहण करके जो उपशान्त कषायगुणस्थानको प्राप्त हुआ है उसका वहांसे दो प्रकारसे पतन होता है—भवक्षयनिमित्तक और उपशामनाक्षयनिमित्तक। जिसका भवक्षयके निमित्तसे पतन होता है वह मरकर नियमसे अविरत सम्यग्दृष्टि देव होता है, इसलिये उसके प्रथम समयमें ही बन्धन आदि सभी करण एक साथ उद्घाटित हो जाते हैं। उसके प्रथम समयमें जिन कर्मोंकी उदीरणा होती है उनका निक्षेप उदयावलिके प्रथम समयसे करता है और जिन कर्मोंकी उदीरणा नहीं होती उनका निक्षेप उदयावलिके बाहर प्रथम समयसे करता है।

इस प्रकार भवक्षयनिमित्तक प्रतिपातका कथन करके आगे उपशामनाक्षयनिमित्तक प्रतिपातका कथन करते हैं। मोहनीयकी विवक्षित प्रकृतिकी उपशामनाका अपना काल है उसके समाप्त होनेपर इस जीवका उपशमश्रेणिसे नियमसे पतन होता है। और इस प्रकार पतन होनेपर सर्वप्रथम यह लोभ संज्वलनकी उदीरणा करके उसकी उदयादि गुणश्रेणि रचना करता है। यद्यपि उसी समय अन्य दो लोभोंका भी अपकर्षण करता है, परन्तु वे उदय प्रकृतियां न होनेसे उनका गुणश्रेणिरूपसे उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है। साथ ही ये तीनों प्रकारके लोभ उसी समयसे प्रशस्त उपशामनासे अनुपशान्त हो जाते हैं। संज्वलन लोभका वेदन करते हुए इस जीवके ये आवश्यक होते हैं—(१) लोभ वेदक कालके प्रथम त्रिभागमें कृष्टियोंके असंख्यात बहुभागकी उदीरणा होती है। (२) प्रथम समयमें जिन कृष्टियोंकी उदीरणा होती है वे थोड़ी होती हैं। दूसरे समयमें जिन कृष्टियोंकी उदीरणा होती है वे विशेष अधिक होती हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्पराय के अन्तिम समय तक जानना चाहिये।

इस प्रकार कृष्टिवेदककालके समाप्त होनेपर जिस समय यह जीव प्रथम समयवर्ती बादर साम्परायिक होता है उसी समयसे समस्त मोहनीय कर्मका अनानुपूर्वी संक्रम प्रारम्भ हो जाता है। उसी समयसे दोनों लोभोंका लोभ संज्वलनमें संक्रमण करता है और उसी समयसे स्पर्धकगत लोभका वेदन करता है। इस समय उसकी सब कृष्टियां नष्ट हो जाती हैं। मात्र उदयावलिगत वे स्पर्धकगत लोभरूप परिणमती जाती हैं। पुनः वह तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण कर मायासंज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणिरचना करता है। तथा दो मायाओंकी उदयावलिबाह्य गुणश्रेणि रचना करता है। मायावेदकके तीन प्रकारका लोभ और दो प्रकारकी मायाका मायासंज्वलनमें

संक्रमण होता है। तथा तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारके लोभका लोभसंज्वलनमें संक्रम होता है।

तदनन्तर क्रमसे तीन प्रकारके मानका अपकर्षण करके मानसंज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणि रचना करता है तथा अन्य दो प्रकारके मानकी उदयावलिवाह्य गुणश्रेणि रचना करता है। इस प्रकार यहाँसे नौ प्रकारके कषायका गुणश्रेणि निक्षेप होने लगता है।

तदनन्तर तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करके क्रोधसंज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणि रचना करता है। तथा अन्य दो प्रकारके क्रोधकी उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि रचना करता है। यहाँसे बारह कषायोंका गुणश्रेणि निक्षेप होने लगता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि संज्वलन लोभ आदि कषायोंका गुणश्रेणि निक्षेप प्रारम्भसे ही शेष ज्ञानावरणादि कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके सदृश होकर भी गलित शेष गुणिश्रेणिनिक्षेप होता है। यह विशेषता आगे भी जान लेनी चाहिये।

तदनन्तर यह जीव क्रमसे पुरुषवेद का बन्धक होता है तथा उसी समय पुरुषवेद और छह नोकषाय ये सात कर्म प्रशस्त उपशामनासे अनुपशान्त हो जाते हैं। साथ ही उसी समय सात नोकषायोंका अपकर्षण कर पुरुषवेदकी उदयादि गुणश्रेणि रचना करता है तथा शेष छह कर्मोंकी उदय बाह्य गुणश्रेणि रचना करता है। इसके बाद स्त्रीवेद और नपुंसकवेदको अनुपशान्त करते हुए उनकी उदय बाह्य गुणश्रेणि रचना करता है। फिर क्रमसे अन्तरकरण करनेके कालको प्राप्त करनेके बाद अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें ये कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं—(१) अभीतक जो मोहनीयका एक स्थानीय बन्ध-उदय होता रहा वह द्विस्थानीय होने लगता है। (२) उपशमश्रेणिपर चढ़ते समय छह आवलि कालके बाद जो उदीरणाका नियम था वह नहीं रहता। यहाँ चूर्णिसूत्रमें 'सर्व' पद दिया है सो उसपरसे यह अर्थ फलित किया गया है कि उतरते समय सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयसे ही यह नियम नहीं रहता। (३) अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे मोहनीयका अनानुपूर्वी संक्रम होने लगता है। साथ ही क्रोधसंजलनका भी इसी प्रकार अनानुपूर्वी संक्रम होने लगता है। (४) चढ़ते समय जिस स्थानपर कर्मोंका देशघातीकरण हुआ था उनका पुनः सर्वघातीकरण हो जाता है। तथा उपशमश्रेणिपर चढ़ते समय जो असंख्यात समयप्रबद्धोंकी प्रति समय उदीरणा होने लगी थी वह नियम अब नहीं रहता। निर्जराका जो सामान्य क्रम है वह यहाँसे प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकार क्रम-क्रमसे प्रारम्भसे ही स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धको बढ़ाता हुआ अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयको प्राप्त होता है।

तदनन्तर यह जीव अपूर्वकरणमें प्रवेश करके उसके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरणको उद्घाटित करनेके साथ हास्य-शोक और रति-अरति इनमेंसे किसी एक युगलका तथा भय या जुगुप्साका या दोनोंका या किसीका भी नहीं अनियमसे उदीरक होता है। पुनः अपूर्वकरण गुणस्थानका संख्यातवाँ भाग जानेपर परभवसम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोंका बन्धक होता है। फिर अपूर्वकरण गुणस्थानके संख्यात बहुभागके जानेपर निद्रा और प्रचलाका बन्धक होता है। फिर क्रमसे अपूर्वकरणके अन्तिम समयको प्राप्त करता है।

इस प्रकारसे उपशमश्रेणिसे उतर कर अधःप्रवृत्तसंयत होकर गुणश्रेणि निक्षेप करता हुआ यह पुराने गुणश्रेणि निक्षेपसे संख्यातगुणा गुणश्रेणि निक्षेप करता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि जब तक यह जीव अपूर्वकरण गुणस्थानमें स्थित रहा तब तक गलितशेष गुणश्रेणी निक्षप होता रहा। किन्तु अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे अवस्थित गुणश्रेणिनिक्षेप

होने लगता है। जिसका काल अन्तर्मुहूर्त है। इसका अर्थ यह है कि गुणश्रेणिनिक्षेपमेंसे क्रमशः एक-एक निषेकप्रमाण द्रव्यके निर्जरित होनेपर ऊपर गुणश्रेणि शीर्षमें एक-एक समयप्रमाण निषेककी वृद्धि होती जानेसे यहाँसे इस गुणश्रेणिनिक्षेपका काल बराबर अन्तमुहूर्त सदृश बना रहता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक अवस्थित आयामरूप गुणश्रेणिनिक्षेप करके अनन्तर परिणामोंके अनुसार गुणश्रेणिनिक्षेपमें वृद्धि, हानि और अवस्थानका क्रम चालू हो जाता है। आशय यह है कि स्वस्थान संयत होकर प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत गुणस्थानोंमें रहते हुए यह जीव अवस्थित आयामरूप ही गुणश्रेणीनिक्षेप करता है। इसके बाद परिणामोंके अनुसार यह पुनः क्षपकश्रेणिपर या उपशमश्रेणिपर आरोहण कर सकता है। यहाँ अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रमकी व्युच्छित्ति हो जाती है। तथा जिन कर्मोंका बन्ध होता है उनका अधःप्रवृत्त संक्रम होने लगता है। मात्र नपुंसकवेद आदि अप्रशस्त कर्मोंका विध्यातसंक्रम ही होता रहता है।

उपशमश्रेणिसे गिरा हुआ यह जीव द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि भी हो सकता है और क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी हो सकता है। जो द्वितीयोपशम सम्यक्त्वसे उपशमश्रेणि पर चढ़ा और उतरा है उसके अधःप्रवृत्तकरणका यह काल, अपूर्वकरणसे लेकर चढ़ने और उतरकर अपूर्वकरणके अन्तिम समयको प्राप्त करनेमें जितना काल लगता है उससे, संख्यातगुणा होता है। पुनः इस उपशम सम्यक्त्वके कालके भीतर यह असंयम या संयमासंयम या दोनोंको प्राप्त हो सकता है। उस कालमें एक समयसे लेकर अधिकसे अधिक छह आवलि कालके शेष रहने पर कदाचित् सासादन गुणस्थानको भी प्राप्त हो सकता है।

यहाँ यह कहा जा सकता है कि इसके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना हो जानेसे जब अनन्तानुबन्धीकी सत्ता ही नहीं है तब यह सासादन गुणस्थानको कैसे प्राप्त होता है, क्योंकि सासादन गुणस्थानकी प्राप्ति मात्र अनन्तानुबन्धी चतुष्कमेंसे किसी एक प्रकृतिकी उदीरणा होने पर ही होती है यह एक नियम है? समाधान यह है कि परिणामोंके निमित्तसे जिसने अनन्तानुबन्धीकी सत्ता प्राप्त करनेके साथ उसकी उसी समय उदीरणा की है, ऐसे उस जीवके सासादन गुणस्थानके प्राप्त करनेमें कोई बाधा नहीं आती।

पुरुषवेद और क्रोधकषायके उदयसे जो श्रेणिपर चढ़ा है उसकी मुख्यतासे यह विवेचन किया गया है। इसी प्रकार पुरुष वेदके साथ शेष तीनों कषायोंके उदयसे श्रेणिपर आरोहरण करनेकी अपेक्षा भी विचार कर लेना चाहिये। इसे समझनेके लिए हमने मूल पृ० १०८ में एक नकशा दे दिया है। साथही विशेषार्थमें इस विषयको स्पष्ट भी किया गया है उससे इस विषयको हृदयंगम करनेमें सहायता मिलेगी, इसलिये यहाँ इस विषयपर अलगसे प्रकाश नहीं डाला जारहा है। अब रहे शेष दो वेद तो स्त्रीवेदी पहले अवेदी होकर बादमें सात नोकषायोंको यथाविधि उपशमाता है। तथा जो नपुंसक वेदके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है वह नपुंसकवेद और स्त्रीवेद इन दोनोंका एक साथ उपशम करता है। इस प्रकार संक्षेपमें आरोहरण और अवतरण इन दोनों प्रकारसे उपशमश्रेणिकी विवेचना करनेके बाद अन्तमें पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनके उदयसे उपशमश्रेणिपर आरोहण करने और अवतरण करनेकी अपेक्षा चढ़ते समय अपूर्वकरणसे लेकर उतरते समय अपूर्वकरणके अन्तिम समयके प्राप्त होनेतक वहाँ जितने पद सम्भव हैं उन सबके कालकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका कथन करके चारित्रमोहउपशामना प्रकरणको समाप्त किया गया है।

चारित्रमोहक्षपणा

चारित्रमोहकी क्षपणामें भी अधःप्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण ये ही तीन करण होते हैं। ये तीनों बिना अन्तरालके परस्पर लगे हुए ही होते हैं। क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव

ही क्षपक श्रेणिपर आरोहरण करता है, इसलिये सर्वप्रथम अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनापूर्वक दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करके क्षणकश्रेणिपर आरोहण करनेवाला श्रमण प्रमत्त और अप्रमत्तस्थानों-में साता-असाताके हजारों बन्ध परावर्तन करके क्षपकश्रेणिके योग्य विशुद्ध होता हुआ इन तीन करणोंको क्रमसे करता है। इनमेंसे प्रत्येकका काल अन्तर्मुहूर्त है। इनके लक्षण पूर्वमें कह ही आये हैं। इनमेंसे पहले अधःप्रवृतकरणका प्रारम्भ करता है। उसके बाद उससे लगकर अपूर्वकरणका प्रारम्भ करता है और तदनन्तर अनिवृत्तिकरणको प्रारम्भ करता है।

यहाँ अधःप्रवृत्तकरणमें स्थितिकाण्डकघात आदि कार्य तो नहीं होते। केवल (१) यह प्रथम समयसे ही अनन्तगुणी विशुद्धिके द्वारा विशुद्ध होता जाता है। (२) स्थितिबन्धापसरणके द्वारा उत्तरोत्तर स्थितिबन्धमें हानि होती जाती है। (३) अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागबन्धको द्विस्थानीय करता है और (४) प्रशस्त कर्मोंके अनुभागबन्धको चतुःस्थानीय करता है। और ऐसा करते हुए यह अधःप्रवृत्तकरणके कालके अन्तिम समयको प्राप्त होना है।

इसप्रकार जो जीव क्षपकश्रेणिपर आरोहणकर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत होता है उसका परिणाम विशुद्ध होता है। ज्ञायकस्वभाव आत्मामें उपयुक्त होनेसे वह परिणाम शुद्ध तो है ही किन्तु संज्वलन कषायका अव्यक्त उदय होनेसे उसमें अबुद्धिपूर्वक धर्मानुरागरूप किञ्चित् रागांश भी पाया जाता है, इसलिये वहाँ शुद्ध-शुभ परिणाम स्वीकार किया गया है। योगकी अपेक्षा वहाँ मनोयोग, वचनयोग और औदारिककायोगमें से कोई एक योग होता है। कषाय कोई भी होकर वह हीयमान होती है। वहाँ उपयोग कौन सा होता है इस विषयमें दो उपदेश पाये जाते हैं। एक उपदेशकी अपेक्षा वहाँ नियमसे श्रुतज्ञानसे उपयुक्त होता है। दूसरे उपदेशके अनुसार मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन इनमेंसे कोई एक उपयोग होता है। यहाँ श्रुतोपयोगके कारणरूपसे उसके शेष उपयोगोंका निर्देश किया गया है ऐसा यहाँ समझना चाहिये। छह लेश्याओंमेंसे इसके नियमसे वर्धमान शुक्ललेश्या होती है। इसके द्रव्यवेद तो पुरुषवेद ही होता है। भाववेद अवश्य ही तीनों वेदोंमें कोई एक हो सकता है।

यह इस जीवकी पर्यायगत योग्यता है। कर्मबन्ध, उदय-उदीरणा और सत्त्व आदि इसके क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थानकी भूमिकानुसार ही होता है जिसका विशेष विचार मूलमें किया ही है। इस क्षपकके अपूर्वकरण गुणस्थानके प्रथम समयसे ये कार्य विशेष प्रारम्भ हो जाते हैं—(१) स्थितिकाण्डकघात। यह जघन्य भी होता है और उत्कृष्ट भी होता है। यद्यपि दोनोंका आयाम पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण है। फिर भी जघन्यसे उत्कृष्ट संख्यातगुणा आयाम-वाला होता है। कारण कि जो जीव संख्यातगुणे हीन स्थितिसत्त्वके साथ क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उसका उत्कृष्टकी अपेक्षा स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा हीन होता है और जो जीव जघन्यसे संख्यातगुणे अधिक स्थितिसत्त्वके साथ क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है उसके जघन्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा अधिक आयामवाला होता है। यह प्रथम समयकी प्ररूपणा है। इसी प्रकार क्षपक अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक जानना चाहिये।

(२) स्थितिबन्धापसरण। एक-एक स्थितिबन्धापसरणका प्रमाण भी पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होता है। एक स्थितिकाण्डकघातके साथ एक स्थितिबन्धापसरणका काल अन्तर्मुहूर्त होता है। इसका अर्थ यह है कि एक अन्तर्मुहूर्तके जितने समय होते हैं उतने काल तक समान स्थितिबन्ध होता रहता है। फिर अन्तर्मुहूर्त काल समाप्त होकर दूसरा अन्तर्मुहूर्त प्रारम्भ होनेपर इस अन्तर्मुहूर्तमें पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थिति घटकर अन्य स्थितिका बन्ध होने लगता है। इस प्रकार अपूर्वकरणके अन्तिम समयतक जानना चाहिये।

परन्तु स्थितिकाण्डकाघात फालिक्रमसे होता है। अर्थात् एक अन्तर्मुहूर्तकालके जितने समय होते हैं उतने समयप्रमाण प्रत्येक काण्डककी फालियाँ होतीं हैं। यहाँ फालिका अर्थ है— जैसे लकड़ीके एक कुन्देके चीरनेपर जो फालियाँ बनती हैं उसी प्रकार पल्योपमप्रमाण स्थिति-काण्डकके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण फालियाँ करके उनमेंसे एक-एक समयमें एक-एक फालिका अपकर्षण करके यथाविधि अतिस्थापनावलिसे नीचेकी स्थितिमें निक्षेप करते हुए अन्तिम समयमें शेषका काण्डकके नीचेकी स्थितिमें निक्षेप करनेपर एक अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर उतनी सत्त्वस्थिति घट-कर दूसरे मुहूर्तके प्रथम समयमें पल्योपमका संख्यातवें भागप्रमाण कर्मस्थिति सत्त्व रह जाता है।

(३) अनुभागकाण्डकघातका क्रम वही है जैसा स्थितिकाण्डकघातका सूचित किया है। इतनी विशेषता है कि एक स्थितिकाण्डकघातप्रमाण कालके भीतर हजारों अनुभागकाण्डकघात हो लेते हैं। यह अप्रशस्त कर्मोंका ही होता है। प्रशस्त कर्मोंका नहीं होता। अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जितना अनुभाग सत्कर्म होता है उसके अनन्त बहुभाग अनुभाग प्रमाण प्रथम अनुभागकाण्डक होता है। दूसरा अनुभागकाण्डक भी शेष रहे अनुभागका अनन्त बहुभागप्रमाण होता है। आगे भी इसी प्रकार समझना चाहिये।

(४) अपूर्वकरणके प्रथम समयसे असंख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्यका अपकर्षण करके उदयावलि बाह्य गुणश्रेणिकी रचना करता है। इसका आयाम अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक होता है। यहाँ विशेष अधिकसे सूक्ष्मसाम्परायके कालसे कुछ अधिक लेना चाहिये।

(५) अपूर्वकरणके प्रथस समयसे जो अप्रशस्त कर्म बन्धको नहीं प्राप्त होते हैं उनका गुण-सक्रम भी प्रारम्भ हो जाता है। प्रत्येक समयमें उत्तरोतर असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्रदेशपुंज-का अन्य प्रकृतियोंमें संक्रम होना इसका नाम गुणसंक्रम है। परन्तु वह अबध्यमान अप्रशस्त कर्मोंका ही होता है।

यह अपूर्वकरणके प्रथम समयकी प्ररूपणा है। दूसरे समयमें प्रथम समयमें अपकर्षित किये गये प्रदेशपुंजसे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके गुणश्रेणि रचना करता है। शेष कथन पूर्व समयके समान है।

इस प्रकार इस विधिसे अपूर्वकरणके संख्यातवें भागके व्यतीत होनेपर वहाँ निद्रा और प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति होकर उनका गुणसंक्रम प्रारम्भ हो जाता है। इसके बाद इस विधिसे हजारों स्थितिबन्धापसरणोंके व्यतीत होनेपर वहाँ नामकर्मकी परभवसम्बन्धी देवगतिके साथ बँधनेवाली प्रवृतियोंकी बन्धव्युच्छिति होजाती है। तदनन्तर इस विधिसे अपूर्वकरणके अन्तिम समयके प्राप्त होनेपर वहाँ हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी बन्धव्युच्छित्ति और हास्यादि छहनो-कषायोंकी उदयव्युच्छिति करके तदनन्तर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानको प्राप्त होता है। यहाँ नया स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डके प्रारम्भ हो जाता है। किन्तु त्रिकालगोचर अनिवृत्तिकरणोंके समान परिणाम रहनेपर भी किसीका प्रथम स्थितिकाण्डक विषम होता है और किसीका समान होता है। कारणका निर्देश मूलमें किया ही है। बादमें प्रथम स्थितिकाण्डकका पतन होनेपर सभी त्रिकाल गोचर अनिवृत्तिकरणोंका स्थिति सत्कर्म भी समान होता है और स्थितिकाण्डक भी समान होता है। अर्थात् एक जीवका जितना दूसरा स्थितिकाण्डक होता है, अन्य जीवोंका भी दूसरा स्थितिकाण्डक उतना ही होता है। आगे भी इसी विधिसे जान लेना चाहिये। अपूर्वकरणमें जिस गलितशेष गुणश्रेणिनिक्षेपका प्रारम्भ हुआ था, यहाँ भी वहीं चालू रहता है।

यहाँ प्रथम समयमें सभी कर्मोंके तीन करण व्युच्छिन्न हो जाते हैं। उनके नाम हैं अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण। दूसरे समयमें भी यही विधि चालू रहती

है। मात्र प्रथम समयकी अपेक्षा गुणश्रेणिनिक्षेप असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजरूप होता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके जानेपर क्रमसे असंज्ञी, चतुरिन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रियके समान मोहनीयका स्थितिबन्ध होने लगता है। इसी अनुपातसे शेष कर्मोंके स्थितिबन्धको समझ लेना चाहिये। आगे भी यथासम्भव किस विधिसे स्थितिबन्ध और स्थिति सत्कर्म उत्तरोत्तर कम कम होता जाता है उसका निर्देश मूलमें किया ही है। अन्तमें जब मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे थोड़ा, उससे तीन घाति कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा उससे नाम-गोत्रका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा तथा उससे वेदनीयका स्थिति सत्कर्म विशेष अधिक प्राप्त होता है, तब वेदे जानेवाले आयुकर्मके सिवाय शेष सब कर्मोंके असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा प्रारम्भ हो जाती है।

तदनन्तर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंका घात होनेपर मध्यकी आठ कषायोंकी क्षपणाका प्रस्थापक होकर स्थिति काण्डकपृथक्त्वके घात होनेमें जितना समय लगे उतने समय द्वारा इन आठ कषायोंका निर्मूल क्षय करता है।

इतनी विशेषता है कि आठ कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन होनेपर उसके उदयावलिके भीतर एक निषेक कम एक आवलिप्रमाण जो निषेक शेष रह जाते हैं वे स्तिबुक संक्रम द्वारा सजातीय उदय प्रकृतिरूप होकर निर्जीर्ण हो जाते हैं। तदनन्तर स्थितिकाण्डक पृथक्त्वप्रमाण कालके द्वारा निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिके साथ नरकगति और तिर्यञ्चगतिप्रायोग्य नामकर्मकी प्रकृतियोंका पूर्वोक्त विधिसे क्षय करता है। नरकगतिद्विक, तिर्यञ्चगतिद्विक, एकेन्द्रियादि चार जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण ये नामकर्मकी १३ प्रकृतियाँ हैं।

तदनन्तर स्थितिकाण्डकपृथक्त्वप्रमाण कालके द्वारा क्रमसे मनःपर्ययज्ञानावरण और दानान्तरायका, पश्चात् उतने ही कालके द्वारा अवधिज्ञानावरण, अवधिदर्शनावरण और लाभान्तरायका, पश्चात् उतने ही कालके द्वारा श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण और भोगान्तरायका, पश्चात् उतने ही कालके द्वारा चक्षुदर्शनावरणका, पश्चात् उतने ही कालके द्वारा आभिनिबोधिक ज्ञानावरण और परिभोगान्तरायका, पश्चात् उतने ही कालके द्वारा वीर्यान्तरायका देशघातीकरण करता है।

तदनन्तर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकप्रमाण काल जानेपर अन्य स्थितिकाण्डक, अन्य अनुभागकाण्डक और अन्य स्थितिबन्धके प्रारम्भ होनेके प्रथम समयसे एक स्थितिकाण्डकके घातमें जितना समय लगता है उतने कालके द्वारा चार संज्वलन कषाय और नौ नोकषायवेदनीय—इन १३ प्रकृतियोंका अन्तरकरण विधिके द्वारा अन्तर करता है। यतः यह जीव पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनके उदयके साथ क्षपकश्रेणीपर चढ़ा है अतः इन दोनों कर्मोंकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण छोड़कर तथा अनुदयरूप शेष ११ कर्मोंकी प्रथम स्थिति एक आवलिप्रमाण छोड़कर अन्तर करता है। यहाँ ऐसा समझना चाहिये कि—

(१) अन्तरके लिये जिन प्रकृतियोंको उत्कीरित किया जाता है उनका अन्तर करनेमें जितना समय लगता है उतनी फालियाँ बनाकर उनके प्रदेशपुंजको उत्कीरितकी जानेवाली स्थितियोंमें नियमसे नहीं देता है।

(२) वेदी जानेवाली जिन प्रकृतियोंकी प्रथम स्थिति है उनकी उस प्रथम स्थितिके ऊपरकी अपनी और अन्य प्रकृतियोंकी अन्तरको प्राप्त होनेवाली स्थितियोंके उत्कीरित किये जानेवाले प्रदेशपुंजको अपकर्षणके द्वारा तथा यथासम्भव समस्थिति संक्रमके द्वारा संक्रान्त करता है।

(३) जो प्रकृतियां उस समय बन्धको प्राप्त हो रही हैं उनकी आबाधाको उल्लंघनकर बन्ध स्थितिके प्रथम निषेक से लेकर जो कि द्वितीय स्थितिमें स्थित है, उनकी बन्धको प्राप्त होनेवाली स्थितियोंमें अन्तर स्थितियोंके उत्कीरित किये जानेवाले प्रदेशपुंजको उत्कर्षण करके संक्रान्त करता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि अन्तरस्थितिके आयामकी अपेक्षा उस समय बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियोंकी आबाधा संख्यातगुणी आयामसे युक्त होती है।

यहाँ जिस समय अन्तरकी अन्तिम फालिका पतन होता है उस समय अन्तर प्रथम समयकृत कहलाता है और तदनन्तर समयमें द्विसमयकृत कहलाता है। आगे चूर्णिसूत्रों और उसकी जयधवला टीकामें 'द्विसमयकृत' पद आया है उसका सर्वत्र यह अर्थ समझ लेना चाहिये। अनुवाद लिखते समय उपयोगकी अस्थिरता वश हमसे इस पदके एक ही अर्थ करनेमें सावधानी नहीं वरती गई है सो पाठक इसे ध्यानमें रखकर उसको समझ करके ही स्वाध्याय करें। क्योंकि 'अन्तर द्विसयकृत' पदका अर्थ अन्तर द्विसमयकृतरूप करना भी असंगत नहीं है।

इस प्रकार अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके अनन्तर समयमें यह जीव नपुंसकवेदका आयुक्तकरण संक्रामक होता है अर्थात् यहाँसे यह जीव नपुंसकवेदकी क्षपणाके लिये उद्यत होकर प्रवृत्त हो जाता है। तदनन्तर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके जानेपर नपुंसकवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका पुरुषवेदमें संक्रम हो जाता है।

तदनन्तर स्त्रीवेदकी क्षपणाका प्रारम्भ करते ही अन्य स्थितिकाण्डक, अन्य अनुभागकाण्डक और अन्य स्थितिबन्ध प्रारम्भ हो जाता है। विधि वही है जो नपुंसकवेदकी अपेक्षा कह आये हैं।

तदनन्तर सात नोकषायोंका संक्रामक होता है। अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके अनन्तर समयसे ही आनुपूर्वी संक्रम प्रारम्भ हो जाता है, उक्त नियमके अनुसार छह नोकषायोंका तो क्रोधसंज्वलनमें संक्रम होता ही है। पुरुषवेदका भी शेष मान संज्वलन आदि कषायोंको छोड़कर क्रोधसंज्वलनमें ही संक्रम होता है। आगे भी इसी प्रकार संक्रमकी आनुपूर्वी जान लेनी चाहिये। मात्र लोभ संज्वलनका अन्य किसी प्रकृतिमें संक्रम न होकर उसका स्वमुखसे ही क्षय होता है।

तदनन्तर जब पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिमें दो आवलिप्रमाण काल शेष रह जाता है तब आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है तथा वहाँसे लेकर प्रथम स्थितिमेंसे ही उदीरणा होने लगती है। प्रथम स्थितिमें स्थित प्रदेशपुंजको उत्कर्षण द्वारा द्वितीय स्थितिमें निक्षिप्त करना इसका नाम आगाल है। तथा द्वितीय स्थितिमें स्थित प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिमें निक्षिप्त करना इसका नाम प्रत्यागाल है।

इन प्रकृतियोंकी प्रथम स्थितिमें जब एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है तब इनकी जघन्य स्थिति उदीरणा होती है। उसके बाद जब यह जीव अन्तिम समयवर्ती सवेदी होता है तभी छह नोकषायोंके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालि सर्व संक्रम द्वारा क्रोधसंज्वलनमें संक्रान्त हो जाती है। किन्तु उस समय पुरुषवेदका एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध द्वितीय स्थितिमें शेष रहता है और उसयस्थिति भी शेष रहती है। यहाँ जो यह नवकप्रबन्ध शेष रहा है उसका अगले समयसे उतने ही काल द्वारा क्रोधसंज्वलनमें संक्रम होकर क्षपणा होती है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

आगे अपगतवेदी होनेके बाद क्रोधसंज्वलनकी क्षपणाका प्रारम्भ करता हुआ यह जीव अश्वकर्णकरण नामक करणविशेषको प्रारम्भ करता है। फिर भी इसे स्थगित कर सबसे पहले प्रकृतमें पठित गाथा सूत्रोंकी मीमांसा करते हैं।

(१) क्रमांक (७१) १२४ संज्ञक प्रथम मूलगाथा द्वारा तीन बातोंको जाननेकी जिज्ञासा की गई है। (१) प्रथम जिज्ञासा द्वारा नपुंसकवेदकी क्षपणा करनेवालेके पूर्वबद्ध कर्मोंकी स्थिति कितनी होती है यह पृच्छा की गई है। (२) द्वितीय जिज्ञासा द्वारा पूर्वबद्ध कर्मोंका अनुभाग कितना होता है यह पृच्छा की गई है। तथा (३) तीसरी जिज्ञासा द्वारा अन्तरकरण करनेके पूर्व किन कर्मोंकी क्षपणा हो गई है और किन कर्मोंकी होती है यह पृच्छाकी गई है।

यह प्रकृतमें प्रथम मूल सूत्रगाथा है। इसकी पाँच भाष्य गाथाएँ हैं। भाष्य गाथा और प्ररूपणा गाथा इन दोनों शब्दोंका अर्थ एक है। अन्तर करनेके अनन्तर समयसे इस जीवकी अन्तरद्विसमयकृत (अंतरकरणसमत्तीदो विदियसमयम्हि पृ० २२०) संज्ञा है। इसी प्रकार नोकषायोंकी प्ररूपणा करनेवाला जीव संक्रामकप्रस्थापक कहलाता है। यहाँ (७२) १२५ संज्ञक पहली भाष्यगथाद्वारा स्थिति सत्कर्मका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया गया है कि नोकषायोंकी प्ररूपणाका प्रारम्भ करनेवाले जीवके मोहनीय कर्मकी प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थिति ये दो स्थितियाँ होती हैं और उनके मध्यमें कुछ कम अन्तमुहूर्त प्रमाण अन्तर होता है।

(७३) १२६ संख्याक दूसरी भाष्यगाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके एक समय कम एक आवलिकालके जानेपर स्वोदयरूप जिन मोहनीय प्रकृतियोंकी यह जीव क्षपणा कर रहा है वे प्रथम और द्वितीय दोनों स्थितियोंमें पाये जाते हैं। किन्तु मोहनीयके जिन कर्मोंकी परोदयसे क्षपणा कर रहा है उनकी उस समयसे लेकर मात्र द्वितीय स्थिति ही पाई जाती है। उदाहरणार्थ जो जीव पुरुषवेदके साथ क्रोध संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा है तो उसके अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके समयसे लेकर एक समय कम एक आवलि काल जानेपर इन दोनों कर्मोंकी प्रथम और द्वितीय दोनों स्थितियाँ पाई जाती हैं। कारण कि इनकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होती है और शेष ११ प्रकृतियोंकी उस समयसे मात्र द्वितीय स्थिति ही पाई जाती है। कारण कि इनकी प्रथम स्थिति एक आवलि प्रमाण होनेसे इस समय तक वह गल चुकी होती है। इसी प्रकार विवक्षित एक वेद और विवक्षित एक संज्वलन कषायको मुख्य कर समझ लेना चाहिये।

(७४) १२७ संख्याक तीसरी भाष्यगाथा द्वारा सत्तामें स्थित कर्मोंकी स्थिति और अनुभाग-विषयक विशेषताका कथन करते हुए यह बतलाया गया है कि इस जीवके जो कर्म सत्तामें स्थित हैं उनका स्थितिसत्त्व न तो जघन्य ही होता है और न उत्कृष्ट ही होता है। किन्तु अजघन्य-अनुत्कृष्ट होता है। इसी प्रकार साता वेदनीय, प्रशस्त नामकर्म प्रकृतियाँ और उच्चगोत्र इनका अनुभागसत्त्व आदेश उत्कृष्ट होता है। विशेष स्पष्टीकरण मूलमें देखिये।

(७५) १२८ संख्याक चौथी भाष्यगाथा द्वारा उन प्रकृतियोंके विषयोंमें कहा गया है जिनकी यह जीव पहले ही क्षपणा कर आया है। उनका नाम निर्देश मूलमें किया ही है। इस भाष्य-गाथामें जो संछोहणा शब्द आया है सो उसका अर्थ सर्व संक्रमके प्राप्त होने तक परप्रकृति संक्रम है।

(७६) १२९ संख्याक पाँचवीं भाष्यगाथा द्वारा पुरुषवेदके प्राचीन सत्कर्मके साथ छह नोकषायोंकी क्षपणा अर्थात् परप्रकृतिरूप संक्रमके होनेपर नामकर्म, गोत्रकर्म और वेदनीय कर्म इन तीन अघाति कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है तथा ज्ञानावरणादि चार घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है यह स्पष्ट किया गया है।

(२) (७७) १३० संख्याक मूल गाथामें ये तीन अर्थ निबद्ध हैं—प्रथम अर्थ है कि संक्रामक प्रस्थापक यह जीव अन्तर करनेके अनन्तर समयमें प्रकृति आदिके भेदसे किन कर्मोंको बाँधता है।

यह प्रथम अर्थ है। यह जीव प्रकृति आदिके भेदसे किन कर्मोंको वेदता है यह दूसरा अर्थ है। तथा यह जीव प्रकृति आदिके भेदसे किन कर्मोंका संक्रम करता है और किनका नहीं करता है यह तीसरा अर्थ है। इनमेंसे प्रथम अर्थको स्पष्ट करनेके लिए तीन भाष्यगाथाएँ आई हैं।

(७८) १३१ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया गया है कि यह संक्रामक प्रस्थापक जीव अन्तर करनेके बाद प्रथम समयमें मोहनीय कर्मका संख्यात लक्ष वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध करता है तथा शेष कर्मोंका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध करता है। (७९) १३२ संख्याक दूसरी भाष्यगाथा द्वारा उक्त जीव किन प्रकृतियोंका बन्ध करता है और किन प्रकृतियोंका बन्ध नहीं करता है यह स्पष्ट किया गया है। प्रकृतियोंका नाम निर्देश मूलमें किया ही है। (८०) १३३ संख्याक तीसरी भाष्यगाथा द्वारा भी पूर्वोक्त अर्थको विशेषरूपसे स्पष्ट किया गया है। मात्र अनुभागबन्धके विषयमें स्पष्ट करते हुए इसमें बतलाया है कि जिन कर्मोंके सर्वघाति स्पर्धकोंकी अपवर्तना होती है अर्थात् जिन १२ लब्धिकर्मांश प्रकृतियोंका देशघातीकरण कर आये हैं उनका यहाँ एक अन्तर्मुहूर्त पहलेसे लेकर द्विस्थानीय देशघाति स्पर्धकरूप ही बन्ध होता है। इस प्रकार उक्त दूसरी मूल सूत्रगाथाके प्रथम अर्थकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

आगे उसके दूसरे अर्थमें निबद्ध दो भाष्यगाथाओंमें से (८१) १३४ संख्याक प्रथम भाष्यगाथा द्वारा निद्रानिद्रा आदि तीन, छह नोकषाय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका यह विवक्षित जीव नियमसे अवेदक होता है, क्योंकि इनमेंसे स्त्यानगृद्धित्रिककी प्रमत्तसंयतगुणास्थानमें, छह नोकषायोंकी अपूर्वकरणगुणस्थानके अन्तिम समयमें, अयशःकीर्तिकी अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें और नीचगोत्रकी संयतासंयत गुणस्थानमें उदयव्युच्छित्ति हो जाती हैं। इस भाष्यगाथामें अयशःकीर्ति नामका उल्लेख उपलक्षणरूपमें आया है। इससे नामकर्मकी अन्य जिन प्रकृतियोंका यहाँ उदय नहीं पाया जाता है उन सबको ग्रहण कर लेना चाहिये।

उक्त भाष्यगामें 'निद्रा' और 'प्रचला' शब्दका ग्रहण होनेसे यहाँ निद्रा और प्रचलाके उदयका भी प्रतिषेध किया गया है ऐसा समझना चाहिए। इसपर यह शंका होती है कि क्षीणकषायीके द्विचरम समयमें इन दोनों प्रकृतियोंकी उदयव्युच्छित्ति होती है ऐसी अवस्थामें इन कर्मोंका उदयाभाव यहाँ कैसे माना जा सकता है? समाधान यह है कि ध्यानकी भूमिका होनेसे यहाँ पहलेसे ही इन दो कर्मोंका अव्यक्त उदय पाया जाता है। साथ ही उपयोग विशेषके कारण इनके अनुभागकी शक्ति क्षीण होती रहती है, इसलिए इनका उदय अनुदयके समान होनेसे यहाँ इनका उदय नहीं है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। प्रारम्भसे लेकर उत्तरोत्तर यह जीव मोक्षमार्गमें आरूढ कैसे होता है और आगे कैसे बढ़ता है यह इसकी प्रक्रिया है जो हृदयंगम करने योग्य हैं।

उक्त दूसरी मूल सूत्र गाथाके दूसरे अर्थमें निबद्ध (८२) १३५ संख्याक दूसरी भाष्यगाथाद्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि यह जीव तीनों वेद, दो वेदनीय, आभिनिबोधिक आदि चार ज्ञान और चार संज्वलन इन कर्मोंका भजनीयपनेसे वेदन करता है शेष जिन कर्मोंका यहाँ उदय पाया जाता है उनका नियमसे वेदन करता है। यहाँ चारों ज्ञानावरणोंके विषयमें ऐसा जानना चाहिये कि इन कर्मोंका जिनके उत्कृष्ट क्षयोपशम होता है उनके इनके देशघाति स्पर्धकोंका ही उदय होता है और जिनके इनका उत्कृष्ट क्षयोपशम नहीं होता है उनके इनके देशघाति स्पर्धकोंके साथ विवक्षित सर्वघाति स्पर्धकोंका भी उदय पाया जाता है। शेष कथन स्पष्ट हो है।

अब उक्त दूसरी मूल गाथाके तीसरे अर्थमें जो छह भाष्य गाथाएँ आई हैं उनमेंसे (८३-१३६) क्रमांक प्रथम भाष्य गाथा द्वारा नपुंसक वेद आदि प्रकृतियोंका आनुपूर्वी संक्रम स्वीकार करके लोभ संज्वलनका असंक्रम स्वीकार किया गया है। स्पष्टीकरण पहले कर ही आये हैं।

आगे इसी अर्थका (८४) १३७ संख्याक दूसरी भाष्य गाथा द्वारा तथा (८५) १३८ संख्याक तीसरी गाथा द्वारा और (८६) १३९ संख्याक चौथी भाष्य गाथा द्वारा आनुपूर्वी संक्रमका विशेषरूपसे निर्देश करके चौथी गाथामें इन कर्मोंका प्रतिलोम संक्रम नहीं होता यह स्पष्ट किया गया है। आगे (८७) १४० संख्याक पाँचवीं भाष्य गाथा द्वारा संक्रमके विषयमें नियम करते हुए बतलाया गया है कि जिस प्रकृतिका बन्ध हो रहा हो उसीमें बध्यमान और अबध्यमान सजातीय प्रकृतियों-का उत्कर्षण होकर वहीं तक संक्रम होता है। जितना उसका स्थितिबन्ध हो रहा है। उससे अधिक सत्त्व स्थितिमें संक्रम नहीं होता। आगे (८८) १४१ संख्याक छठी भाष्य गाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि आगेकी संज्वलन कषायका वेदन करते समय पिछली कषायके नवकबन्धको उसमें संक्रमित करता है।

(८९) १४२ संख्याक तीसरी मूल गाथा द्वारा प्रदेश और अनुभाग विषयक बन्ध, संक्रम और उदय कौन किस रूपमें होते हैं इत्यादि विषयक जिज्ञासा की गई है। इसकी चार भाष्य-गाथाएँ हैं। उनमेंसे (९०) १४३ संख्याक प्रथम भाष्य गाथा द्वारा बन्ध, उदय और संक्रम इनमें क्रमसे अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे अनुभाग होनेका नियम किया गया है। तथा (९१) १४४ संख्याक भाष्य गाथा द्वारा क्रमसे इन्हीं तीनोंमें प्रदेशोंकी प्राप्ति असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे होती है यह नियम किया गया है। आगे (९२) १४५ संख्याक भाष्यगाथा द्वारा यह नियम किया गया है कि वर्तमान बन्धसे उसी समय होनेवाला उदय अनन्तगुणा होता है। किन्तु इससे अगले समय जितने अनुभागका उदय होता है उससे वर्तमान कालीन अनुभागबन्ध अनन्तगुणा होता है। (९३) १४६ संख्याक चौथी भाष्यगाथा द्वारा यह बतलाया गया है कि प्रत्येक समयमें यह जीव अनुभागकी अपेक्षा उत्तरोत्तर अनन्तगुणित हीन अनुभागका वेदक होता है और प्रदेशोंकी अपेक्षा उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे श्रेणिरूपसे प्रदेश पुञ्जका वेदक होता है।

(९४) १४७ संख्याक चौथी मूलगाथा द्वारा यह जिज्ञासा की गई है कि अगले-अगले समय-में बन्ध, संक्रम और उदय स्वस्थानकी अपेक्षा अधिक, हीन या समान किसरूपमें होते हैं। इसकी तीन भाष्यगाथाएँ हैं। (९५) १४८ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें यह बतलाया गया है कि बन्ध और उदयकी अपेक्षा अनुभाग अगले-अगले समयमें अनन्तगुणा हीन होता है। किन्तु संक्रम भजनीय है। कारण कि एक अनुभागकाण्डकके पतन काल तक सदृशरूपसे अनुभागसंक्रम होता है। किन्तु अनुभाग काण्डकका पतन होनेपर अगले अनुभागकाण्डकमें अनुभाग संक्रम अनन्त-गुणा हीन हो जाता है। आगे भी इसी प्रकार जानना चाहिये। (९६) १४९ संख्याक दूसरी भाष्य-गाथा द्वारा यह बतलाया गया है कि प्रदेशपुंजकी अपेक्षा संक्रम और उदय अगले-अगले समयमें असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्रवृत्त होते हैं। किन्तु बन्ध प्रदेशपुंजकी अपेक्षा भजनीय है। कारण कि योगके अनुसार बन्धको प्राप्त होनेवाले प्रदेशपुंजमें चार प्रकार की वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थान देखा जाता है। आगे (९७) १५० संख्याक तीसरी भाष्यगाथा द्वारा यह नियम किया गया है कि प्रति समय यह जीव उत्तरोत्तर अनन्तगुणे अनुभागका और असंख्यात-गुणे प्रदेशपुञ्जका वेदन करता है।

(९८) १५१ संख्याक पाँचवीं मूल गाथा है। इसमें अन्तर करते हुए स्थिति और अनुभाग-का अपकर्षण और उत्कर्षण दोनों किस विधिसे होते हैं आदि विषयक जिज्ञासा की गई है। इसकी तीन भाष्यगाथाएँ हैं। (९९) १५२ संख्याक प्रथम भाष्यगाथा द्वारा जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपको बतलाकर अनन्त अनुभागोंमें जघन्य अपकर्षणको यथाविधि घटित करनेकी सूचना कर चूर्णिसूत्रों द्वारा निर्व्याघातविषयक अपकर्षणसम्बन्धी पूरे विषयपर प्रकाश डाला गया है। इसे विशदरूपसे समझनेके लिये पृ० २८१ के विशेषार्थपर दृष्टिपात करना चाहिये। (१००) १५३

संख्याक भाष्यगाथा द्वारा संक्रम और उत्कर्षणके विषयमें प्रकाश डालते हुए बतलाया गया है कि जिस कर्मका संक्रम और स्थिति-अनुभागकी अपेक्षा उत्कर्षण होता है वह भी एक आवलि काल तक तदवस्थ रहता है। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार नूतन बन्ध अपने बन्ध समयसे लेकर एक आवलि कालतक तदवस्थ रहता है उसी प्रकार संक्रमित और उत्कर्षित होनेवाले द्रव्यके विषयमें भी जानना चाहिये। उनका एक आवलि काल तक दूसरे प्रकारकी क्रियारूप परिणमन नहीं होता, उतने काल तक न तो उनका उत्कर्षण ही हो सकता है, न अपकर्षण ही हो सकता है और न ही संक्रमण हो सकता है। (१०१) १५४ संख्याक तीसरी भाष्यगाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि जिस प्रदेशपुञ्जका अपकर्षण होता है वह अपने अपकर्षण होनेके प्रथम समयके बाद अनन्तर समयमें ही उसका उत्कर्षण भी हो सकता है, अपकर्षण भी हो सकता है, संक्रमण भी हो सकता है, उदय भी हो सकता है और ये सब न होकर वह अपकर्षित प्रदेशपुञ्ज तदवस्थ भी रह सकता है। यहाँ चूर्णिसूत्रमें जो 'ट्ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा' पद आया है सो उसका यह आशय है कि जो कर्मप्रदेशोंका अपकर्षण होता है वह स्थिति और अनुभागमुखसे ही होता है।

(१०५) १५५ संख्याक मूल गाथा स्थिति और अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेप और अतिस्थापनाके प्रमाणको सूचित करती है। इसकी (१०६) १५६ संख्याक एक भाष्यगाथा है। इसमें जितने पद आये हैं उनका आशय इस प्रकार है—

(१) एक स्थिति विशेषका उत्कर्षण जघन्यसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविशेषोंमें होता है। यथा—जिसने प्राक्तन सत्कर्मकी अग्रस्थितिसे एक आवलिके असंख्यातवें भागसे अधिक एक आवलिप्रमाण अधिक स्थिति बन्ध किया है वह प्राक्तन अग्रस्थितिका उत्कर्षण करते हुए उसके आगे एक आवलिप्रमाण स्थितिको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके उसके आगे अन्तिम एक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें उस अग्रस्थितिका निक्षेप करता है। (यहाँ निर्व्याघात विषयक प्ररूपणा होनेसे अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण कही गई है।)

यह जघन्य निक्षेप है। पुनः इससे आगे निक्षेपमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। किन्तु आबाधाके ऊपरकी स्थितिका उत्कर्षण करनेपर अतिस्थापना सर्वत्र एक आवलिप्रमाण ही रहती है। मात्र प्राक्तन स्थितिके आबाधाके भीतरकी सत्त्वस्थितिका उत्कर्षण करनेपर यथा सम्भव स्थानसे लेकर अतिस्थापनामें वृद्धि होती जाती है। इस विधिसे जो उत्कृष्ट निक्षेप और उत्कृष्ट अतिस्थापना प्राप्त होती है उसका निर्देश करते हुए बतलाया है कि कषायोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट निक्षेप चार हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून चालीसकोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण प्राप्त होता है तथा चार हजार वर्षमेंसे एक समय अधिक एक आवलिकम कर देनेपर उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय अधिक एक आवलिकम चार हजार वर्ष प्रमाण प्राप्त होती है। खुलासा इस प्रकार है—

किसी जीवने उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेके बाद बन्धावलिके व्यतीत होनेके प्रथम समयमें उसके प्रदेशपुंजका अपकर्षण कर नीचे निक्षिप्त किया। पुनः दूसरे समयमें उदयावलिके बाहरका प्रथम निषेक उदयावलिमें प्रविष्ट हो गया है, इसलिये उससे अगले निषेकको अपकर्षण करनेके दूसरे समयमें उत्कर्षित करके उस समय उत्कृष्ट स्थितिके साथ बन्धको प्राप्त होनेवाले कर्मकी आबाधाके बादकी स्थितियोंमें निक्षिप्त करनेपर उक्त प्रमाण उत्कृष्ट निक्षेप चार हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलिकम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण प्राप्त होता है। यहाँ उत्कर्षित प्रदेशपुञ्जका तत्काल बन्धस्थितिके चार हजार वर्षप्रमाण आबाधामें निक्षेप नहीं हुआ है, इसलिये उत्कृष्ट निक्षेपमेंसे चार हजार वर्ष तो ये कम हो गये हैं और जिस विवक्षित स्थितिके प्रदेशपुंजका

उत्कर्षण किया गया है उसकी नीचे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण शक्तिस्थिति गल गई है, इसलिये उत्कृष्ट निक्षेपमेंसे इतनी स्थिति ये कम हो गई है, अतः इस विधिसे विचार करनेपर प्रकृतमें उत्कृष्ट निक्षेप चार हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलि कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण प्राप्त होता है यह सिद्ध हुआ।

यहाँ प्रकृत अतिस्थापना कितनी प्राप्त होगी इसका विचार करनेपर वह एक समय अधिक एक आवलि कम चार हजार वर्षप्रमाण प्राप्त होती है। कैसे ? वही कहते हैं—जिस समय यह जीव प्राक्तन स्थितिका उत्कर्षण कर रहा है उस समय तक उस स्थितिमेंसे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थिति गल गई है, अतः तत्काल जिस उत्कृष्ट स्थितिबन्धमें वह प्राक्तन विवक्षित स्थितिका उत्कर्षण कर रहा है उसकी उत्कृष्ट आबाधाकालमेंसे एक समय अधिक एक आवलि कम हो जानेसे उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय अधिक एक आवलि कम चार हजार वर्ष प्रमाण प्राप्त होती है यह निश्चित होता है। यह कषायप्राभृतचूर्णि और उसकी जयधवला टीकाका अभिप्राय है।

किन्तु श्वेताम्बर कर्मप्रकृतिमें जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण उक्त प्रमाण मान कर भी उसे घटित करनेकी प्रक्रिया भिन्न प्रकारसे स्वीकार की गई है। उसकी मूल गाथा है—

आवलि असंखभागाई जाव कम्मट्ठिइ त्ति णिक्खेवो।
समउत्तरावलियाए साबाहाए भवे ऊण ॥२॥उपशामना अ०

इसका आशय है कि आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियाँ जघन्य निक्षेपरूप होती हैं और आबाधासहित एक समय अधिक एक आवलिकम उत्कृष्ट स्थितियाँ उत्कृष्ट निक्षेपरूप होती हैं।

यहाँ इसकी चूर्णिमें लिखा है कि जघन्य निक्षेपको प्राप्त करनेके लिये सत्त्वस्थितिमेंसे एक आवलिके असंख्यातवें भागसे अधिक एक आवलिप्रमाण स्थिति नीचे उतरकर जिस स्थितिका उद्वर्तन करता है उसकी अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण और निक्षेप आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। पुनः इसके आगे अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण ही रहती है मात्र उत्तरोत्तर नीचेकी स्थितियोंका उत्कर्षण करानेपर निक्षेप बढ़ता जाता है। इस विधिसे निक्षेप उत्कृष्ट आबाधासहित एक समय अधिक एक आवलिकम उत्कृष्ट कर्मस्थितिप्रमाण बन जाता है। इसकी चूर्णिमें कहा भी है—

बंधावलियाए गयाए बितियसमए उवट्टेति। एवं समउत्तरिआ आवलिया गया, अबाहाए निक्खेवो णत्थि त्ति अबाहा य तहा, तेण समउत्तराए आवलिआए साबाहाए ऊणा भवति।

इसपर विचार करनेपर भी वही आशय फलित होता है जिसे क० चू० और उसकी जयधवला टीकामें स्वीकार किया गया है। किन्तु

मलयगिरिने इसकी इस प्रकार व्याख्या की है—

अबाधोपरिस्थस्थितीनामुद्वर्तना भवति। तत्राबाधाया उपरितने स्थितिस्थाने उद्वर्त्यमानेऽबाधाया उपरि दलिकनिक्षेपो भवति नाबाधाया मध्येऽपि, उद्वर्त्यमानदलिकस्योद्वर्त्यमानस्थितेरूर्ध्वमेव निक्षेपात्। तत्राप्युद्वर्त्यमानस्थितेरुपरि आवलिकामात्रा स्थितीरतिक्रम्योपरितनीषु स्थितीषु सर्वासु दलिकनिक्षेपो भवति। अतोऽतीत्थापनावलिकामुद्वर्त्यमानां च समयमात्रां स्थितिमबाधां च वर्जयित्वा शेषा सर्वापि कर्मस्थितिरुत्कृष्टो दलिकनिक्षेपविषयः।

अबाधाके ऊपरकी स्थितियोंकी उद्वर्तना होती है। उसमें भी अबाधाके ऊपरकी स्थितिस्थानके उद्वर्तना करनेपर अबाधाके ऊपर दलिकका निक्षेप होता है, अबाधामें नहीं, क्योंकि

उद्वर्त्यमान दलिकका उद्वर्त्यमान स्थितिसे आगेकी स्थितियोंमें निक्षेप होता है। इसलिए आवलिका-रूप अतीस्थापना, उद्वर्त्यमान समयमात्र स्थिति और अबाधाको छोड़ कर शेष सम्पूर्ण कर्मस्थिति उत्कृष्ट दलिकनिक्षेपका विषय होती है।

इस व्याख्यामें एक तो आबाधाके अनन्तर समयमें स्थित स्थितिका उद्वर्तन कराया गया है। दूसरे अतिस्थापना एक आवलिमात्र रखी गई है और इस प्रकार उत्कृष्ट निक्षेप प्राप्त किया गया है। किन्तु इस व्याख्याके अनुसार श्वे० कर्मप्रकृति चूर्णिमें जो यह कहा गया है कि बन्धाव-लियाए गयाए वितियसमये उवट्टेति, अर्थात् बन्धावलिके जानेपर दूसरे समयमें उद्वर्तित करता है इस वचनका समर्थन नहीं होता, क्योंकि उक्त चूर्णिमें बन्धावलिके जानेपर दूसरे समयमें उद्वर्तित करता है यह कहा गया है और मलयगिरि कहते हैं कि 'अबाधोपरिस्थस्थितीनामुद्वर्तना भवति' अर्थात्, आबाधाके ऊपर स्थित स्थितियोंकी उद्वर्तना होती है। यहां यदि उक्त चूर्णिकी मलयगिरि कृत व्याख्याको ही समीचीन मान लिया जाय तो या तो उक्त चूर्णिमें बन्धावलिके बाद अनन्तर समयमें उद्वर्तना करता है यह कहना चाहिये था या फिर मलयगिरिने उक्त चूर्णिकी जो व्याख्या-की है उसे समीचीन नहीं माना जाना चाहिये। स्पष्ट है कि यहाँपर मलयगिरिने उक्त चूर्णिकी जो व्याख्या की है वह विचारणीय अवश्य है। अतः प्रकृतमें उत्कृष्ट निक्षेपको प्राप्त करते समय कषायप्राभृत चूर्णिकी जो व्याख्या जयधवला टीकामें की गई है वही समीचीन है। इससे एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण निर्व्याघातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना भी प्राप्त हो जाती है। साथ ही मलयगिरिने श्वे० क० चू० की व्याख्या करते हुए अल्पबहुत्वके प्रसंगसे जो स्थितिविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापनाको 'तस्या उत्कृष्टोबाधारूपत्वात्' लिखकर जो उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण लिखा है उसकी (जयधवलाकथित उक्त व्याख्याके मान लेनेपर ही) एक प्रकारसे संगति बैठ सकती है। वैसे उत्कृष्ट अतिस्थापनाका प्रमाण उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण नहीं प्राप्त होकर वह एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण ही प्राप्त होता है। स्पष्टी-करण पूर्वमें किया ही है।

आगे उक्त अपकर्षण और उत्कर्षणविषयक प्ररूपणाको ध्यानमें रखकर अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है।

आगे (१०४) १५७ संख्याक सातवीं मूलगाथा स्थिति और अनुभागविषयक अपकर्षण, उत्कर्षण और अवस्थान कितना होता है इसका स्पष्टीकरण करनेके लिये आई है। इसकी चार भाष्य गाथाएँ हैं। (१०५) १५८ संख्याक प्रथम भाष्य गाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि सत्त्वस्थितिका अपकर्षण बन्धकी अपेक्षा कम, अधिक या समान किसी भी प्रकारकी सत्त्वस्थितिके होनेमें कोई बाधा नहीं आती, क्योंकि अपकर्षण उदयावलिबाह्य किसी भी सत्त्वस्थितिका उसीमें होता है, इसमें अपकर्षणके समय उसी कर्मके बन्धकी अपेक्षा नहीं रहती। मात्र उत्कर्षण उदया-वलि बाह्य सत्त्वस्थितिका उसकी बन्ध स्थितिमें ही होता है, इसलिए इसमें जो सत्त्वस्थिति तत्काल बन्धस्थितिसे कम प्रमाणवाली है या समान प्रमाणवाली है उसीका सम्भव है, बन्ध स्थितिसे अधिक सत्त्व स्थितिका उत्कर्षण सम्भव नहीं है। यह इस भाष्यगाथाका मथितार्थ है।

यह सत्त्वस्थितिविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणका विचार है। आगे (१०६) १५९ संख्यक दूसरी भाष्यगाथा द्वारा अनुभागका विचार करते हुए इसका दो प्रकारसे विचार किया गया है—एक बन्धानुलोमकी अपेक्षा और दूसरा सद्भावकी अपेक्षा। गाथासूत्रके रचनाको लक्ष्यमें रखकर स्थितिको माध्यम बना कर जो उत्कर्षण और अपकर्षण विषयक प्ररूपणा की जाती है वह बन्धानुलोम प्ररूपणा कहलाती है। यह स्थूल स्वरूप है। तथा जिसमें स्थितिकी विवक्षा किये

बिना अनुभागकी प्रधानतासे उत्कर्षण और अपकर्षणकी मीमांसा की जाती है वह सद्भावसंज्ञक प्ररूपणा कहलाती है। यह सूक्ष्मस्वरूप होती है। उनमें प्रथम प्ररूपणाके अनुसार विचार करते हुए लिखा है कि उदयावलिमें प्रविष्ट हुए अनुभागको छोड़कर शेष सब अनुभागस्पर्धकोंका अपकर्षण और उत्कर्षण होना सम्भव है। परन्तु परमार्थसे यह सम्भव नहीं है, क्योंकि अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणकी जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण स्पर्धकोंको छोड़कर शेष स्पर्धकोंमें उनकी प्रवृत्ति होती है। अतः बन्धानुलोम प्ररूपणाको प्रकृतमें स्थूलस्वरूप कहा गया है। सद्भावप्ररूपणाकी अपेक्षा विचार करनेपर प्रथम स्पर्धकसे लेकर अनन्त स्पर्धकोंका अपकर्षण नहीं होता, क्योंकि उनकी अतिस्थापना और निक्षेपका प्राप्त होना सम्भव नहीं है, इसलिए जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण अनुभागस्पर्धकोंको छोड़ कर इनसे ऊपरके स्पर्धकोंका अपकर्षण होता है। यह अपकर्षणविषयक सद्भावप्ररूपणा है जो सूक्ष्मस्वरूप है।

उत्कर्षणकी अपेक्षा विचार करनेपर अन्तिम स्पर्धकका उत्कर्षण नहीं होता। इस प्रकार इस स्पर्धकसे अनन्त स्पर्धक नीचे उतर कर जो स्पर्धक अवस्थित हैं उन सबका उत्कर्षण हो सकता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसीलिये इसे सूक्ष्मस्वरूप स्वीकार किया गया है।

आगे इनकी अल्पबहुत्वविधिकी प्ररूपणा करते हुए (१०७) १६० तीसरी भाष्यगाथा द्वारा उपशम और क्षपकश्रेणिमें अपकर्षण, उत्कर्षण और अवस्थानविषयक अल्पबहुत्वको स्पष्ट किया गया है। यहाँ (१०४) १५७ संख्याक मूल गाथामें वृद्धि और हानि ये शब्द आये हैं सो उनसे क्रमशः उत्कर्षण और अपकर्षणका ग्रहण किया गया है। तथा जिन स्पर्धकोंका उत्कर्षण और अपकर्षण नहीं होता उनकी अवस्थान संज्ञा है।

आगे (१०८) १६१ संख्याक चौथी भाष्य गाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि कृष्टि करणसे रहित कर्मोंमें अपवर्तना और उद्वर्तना दोनों होते हैं। कृष्टिकरणमें अपवर्तना ही होती है, क्योंकि कृष्टिकरणसे लेकर ऊपर सर्वत्र उद्वर्तना नहीं होती। यह क्षपकश्रेणिकी अपेक्षा जानना चाहिये। उपशमश्रेणिमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि उपशमश्रेणिमें उतरते समय सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयसे लेकर अनिवृत्तिकरणके प्रथम समय तक अपवर्तना ही होती है। पुनः इससे नीचे उतरते हुए सर्वत्र अपवर्तना और उद्वर्तना दोनों ही होते हैं। उपशमना अधिकारमें सूक्ष्मसाम्परायमें जो मोहनीयकी उद्वर्तना कही गई है सो वह शक्तिकी अपेक्षा कही गई है।

इस प्रकार प्रकृतमें सात मूल गाथाओं और उनकी भाष्यगाथाओंकी विवेचना कर पहले जो अश्वकर्णकरणकी प्ररूपणाको स्थगित कर आये हैं, आगे उसकी प्ररूपणा करते हैं—

अश्वकर्णकरणप्ररूपणा

अश्वकर्णकरणके तीन पर्यायवाची नाम हैं—अश्वकरण, आदोलकरण और उद्वर्तन-अपवर्तनकरण। यह अश्वके कर्णके समान होता है, अतः इसकी अश्वकर्णकरण संज्ञा है। जैसे घोड़ेके कान मूलसे लेकर दोनों ओर क्रमसे घटते जाते हैं वैसे ही क्रोध संज्वलनसे लेकर अनुभाग पर्स्धक रचना क्रमसे अनन्तगुणी हीन होती जाती है, इसी कारण इसकी संज्ञा अश्वकर्णकरण है। आदोल हिंडोलनाको कहते हैं। उसके समान करणकी आदोलकरण संज्ञा है। जैसे हिंडोलेके खम्भे और रस्सी अन्तरालमें कर्णरेखाके आकाररूपसे दिखाई देते है उसी प्रकार यहाँपर भी क्रोधादि कषायोंके अनुभागकी रचना क्रमसे दोनों ओर घटती हुई दिखाई देती है, इसलिए इसकी आदोलकरण संज्ञा है। इसी प्रकार, अपवर्तना-उद्वर्तनाकरण यह भी इसका सार्थक नाम है।

जब यह जीव पुरुषवेदके पुराने सत्कर्मके साथ छह नोकषायोंका क्रोधसंज्वलनमें संक्रमण करके उनकी स्वरूपसे निर्जरा कर देता है और तदनन्तर प्रथम समयमें अवेदभावको प्राप्त हो जाता है तब यह जीव उस समय अश्वकर्णकरणका कारक होता है। वहाँसे लेकर क्रोधादि संज्वलन कषायोंके अनुभाग सत्कर्मका काण्डकघात द्वारा अश्वकर्णकरणके आकारसे करनेके लिये आरम्भ करता है। ऐसा करते हुए उसके मानमें सबसे थोड़ा अनुभागसत्कर्म होता है, क्रोधमें उससे विशेष अधिक अनुभागसत्कर्म होता है, मायामें उससे विशेष अधिक अनुभागसत्कर्म होता है और लोभमें उससे विशेष अधिक अनुभागसत्कर्म होता है। यहाँपर विशेष अधिकका प्रमाण अनन्त अनुभाग स्पर्धक हैं। उसके अनुभागबन्ध भी उक्त कर्मोंमें इसी विधिसे प्रवृत्त होता है। परन्तु ऐसा करते हुए घातके लिये काण्डकको आरम्भ करता हुआ वह क्रोधमें अपने सत्कर्मके अनन्तवें भागप्रमाण सबसे थोड़े स्पर्धक ग्रहण करता है, मानमें उससे विशेष अधिक स्पर्धक ग्रहण करता है, मायामें उससे विशेष अधिक स्पर्धक ग्रहण करता है और लोभमें विशेष अधिक स्पर्धक ग्रहण करता है। ऐसा करनेसे उसके लोभादि परिपाटीके अनुसार अश्वकर्णकरणके आकारसे अवस्थान बन जाता है। इस हिसाबसे उसके लोभमें सबसे थोड़े स्पर्धक शेष रहते हैं। मायामें उनसे अनन्तगुणे स्पर्धक शेष रहते हैं, मानमें उनसे अनन्तगुणे स्पर्धक शेष रहते हैं और क्रोधमें उनसे अनन्तगुणे स्पर्धक शेष रहते हैं। यहाँ इन चारों संज्वलनोंका जो अनुभाग शेष रहा उसे जयधवला टीकामें अंक संदृष्टि-द्वारा स्पष्ट किया ही गया है। इसके लिये टीका पृष्ठ ३२८ और उसे स्पष्ट करनेके लिये दिया गया विशेषार्थ देखिये।

यह अश्वकर्णकरणरूप अनुभागके करनेपर प्रथम समयमें जो स्थिति बनती है तत्सम्बन्धी प्ररूपणा है। इस प्रकार क्षपक अनिवृत्तिकरणमें जिस समय इस जीवने अश्वकर्णकरणरूप क्रिया सम्पन्न की उसी समय पूर्व स्पर्धकोंसे अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है। संसार अवस्थामें जो कभी भी नहीं प्राप्त हुए, किन्तु क्षपक श्रेणिमें अश्वकर्णकरणके कालमें जो प्राप्त किये गये और पूर्वस्पर्धकोंमेंसे अनन्तगुणी हानि द्वारा अपवर्तन करके प्राप्त हुए हैं उनकी अपूर्व स्पर्धक संज्ञा है।

यहाँ यह प्रश्न होता है कि पूर्व स्पर्धकोंमेंसे अनन्तगुणी हानि द्वारा अपवर्तन होकर जो अनुभाग प्राप्त होता है उनको यहाँ कृष्टि क्यों नहीं कहा गया है। समाधान यह है कि यहाँ इस विधिसे जो अनुभाग प्राप्त होता है उनमें स्पर्धकका लक्षण घटित हो जानेसे उन्हें कृष्टि नहीं कहा गया है, क्योंकि कृष्टिगत जो अनुभाग होता है उसमें स्पर्धकके लक्षणके अनुसार क्रम वृद्धि और क्रमहानि नहीं पाई जाती। जब कि इस प्रकार अश्वकर्णकरणके द्वारा प्राप्त हुए अनुभागमें क्रमवृद्धि और क्रम हानि अभी भी बनी हुई है, इसलिये इस अनुभागकी कृष्टि संज्ञा न कहकर इसे अपूर्व स्पर्धक कहा गया है। अब आगे इसी विषयको स्पष्ट किया जाता है—

कर्म दो प्रकारके है—देशघाति और सर्वघाति। उनमेंसे देशघाति कर्मोंकी आदि वर्गणा समान होती है, क्योंकि लतासमान जघन्य स्पर्धकस्वरूपसे उसकी रचना होती है। इसी प्रकार सर्वघाति कर्मोंकी मिथ्यात्वको छोड़कर शेष सब कर्मोंकी आदि वर्गणा समान होती है, क्योंकि दारु समान अनुभागके अनन्तवें भागरूप देशघाति स्पर्धकोंके समाप्त होनेपर वहाँसे आगे सर्वघाति जघन्य स्पर्धकसे लेकर उन सर्वघाति कर्मोंके अनुभागकी रचनाका अवस्थान प्राप्त होता है। इतना अवश्य है कि मिथ्यात्व सर्वघाति जघन्य स्पर्धककी आदि वर्गणा शेष सर्वघाति कर्मोंकी आदि वर्गणाके समान नहीं होती, क्योंकि जहाँ सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट देशघाति स्पर्धक समाप्त होता है उससे आगे सम्यग्मिथ्यात्व सर्वघाति प्रकृतिके जघन्य स्पर्धककी आदि वर्गणा प्रारम्भ होती है। इसलिये यह मिथ्यात्वको छोड़कर शेष सर्वघाति सब कर्मोंकी आदि वर्गणाके समान बन जाती है। पुनः सर्वघाति जघन्य स्पर्धकसे लेकर अनन्त स्पर्धक आगे जानेपर वहाँ सम्यग्मिथ्यात्व

प्रकृतिके स्पर्धक समाप्त होते हैं, क्योंकि दारुसमान सर्वघाति अनन्तवें भागमें ही उनकी आदि और समाप्ति देखी जाती है। पुनः इसके आगे अनुभागस्पर्धकसे लेकर मिथ्यात्वके अनुभागकी रचना प्रारम्भ होती है।

इस प्रकार चारों संज्वलनोंसम्बन्धी पूर्व स्पर्धकोंमें जो सबसे जघन्य स्पर्धक है उसकी आदिवर्गणाके प्रदेशपुंजको अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा हीन करके उन कर्मोंके अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है। उसमें भी लोभसंज्वलनके प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागमें प्रथम देशघाति स्पर्धकके नीचे अनन्तगुणहानि द्वारा अपवर्तित करके पूर्व स्पर्धकोंके अनन्तवें भागमें अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है। इस प्रकार जो अपूर्व स्पर्धक प्राप्त होते हैं उनके अन्तिम स्पर्धककी अन्तिम वर्गणामें जो अविभाग प्रतिच्छेद प्राप्त होते हैं वे प्रथम देशघाति स्पर्धककी आदि वर्गणाके अनन्तवें भागप्रमाण ही होते हैं। प्रथम समयमें किये गये ये सब अपूर्व स्पर्धक अनन्त होकर भी एक प्रदेश गुणहानिप्रमाण स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं।

इन अपूर्व स्पर्धकोंमें अविभाग प्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा विचार करनेपर प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक किये जाते हैं उनमेंसे प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणामें सबसे कम अविभागप्रतिच्छेद होते हैं। उनसे दूसरे स्पर्धककी आदि वर्गणामें अनन्तवें भाग अधिक अविभागप्रतिच्छेद होते हैं। इस प्रकार क्रमसे जाकर द्विचरम स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभाग प्रतिच्छेदोंसे अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणा अनन्तवें भागप्रमाण विशेष अधिक होती है।

आगे अल्पबहुत्वकी दृष्टिसे विचार करनेपर प्रथम समयमें जितने स्पर्धकोंकी रचना की गई है उनमेंसे प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणा सबसे अल्प होती है। उससे अन्तिम अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा अन्तगुणी होती है। तथा उससे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा अनन्तगुणी होती है।

यहाँ लोभ संज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंकी जिस प्रकार प्ररूपणा की है उसी प्रकार माया, मान और क्रोधसंज्वलनके अपूर्व स्वर्धकोंकी प्ररूपणा कर लेनी चाहिये। यहाँपर इतनी विशेषता जाननी चाहिये कि अश्वकर्ण-करणके प्रारम्भमें पुरुषवेदके नवकबन्धका अनुभाग सम्भव है, पर उसके अनुभागकी न तो अपूर्व स्पर्धकरूपसे रचना ही होती है और न ही उसका काण्डकघात ही होता है। मात्र उसका जो एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध शेष रहता है उसकी निर्जराको छोड़कर अन्य कोई क्रिया नहीं होती।

इस विधिसे प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक रचे जाते हैं वे क्रोधमें सवसे थोड़े होते हैं, मानमें विशेष अधिक होते हैं, मायामें विशेष अधिक होते हैं और लोभमें विशेष अधिक होते हैं। यहाँ विशेषका प्रमाण अनन्तवें भाग है। आशय यह है कि क्रोधके जितने अपूर्व स्पर्धक होते हैं उनमें अनन्तका भाग देनेपर जो एक भाग प्राप्त होता है, क्रोधके अपूर्व स्पर्धकोंसे मानके अपूर्व स्पर्धक उतने अधिक होते हैं। इसी प्रकार आगे भी समझ लेना चाहिये। और इस प्रकार अश्वकर्णकरणके प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न होते हैं उनमेंसे लोभसंज्वलनकी आदिवर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद सवसे थोड़े होते हैं। उनसे मायाकी आदि वर्गणामें वे विशेष अधिक होते हैं। उनसे मानकी आदि वर्गणामें विशेष अधिक होते हैं और उनसे क्रोधकी आदि वर्गणामें वे विशेष अधिक होते हैं। इस प्रकार चारों ही कषायोंके जो अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न होते हैं उनमें चारों ही कषायोंके अन्तिम आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद समान होकर भी इन्हीके प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणाके आविभाग प्रतिच्छेदोंसे अनन्तगुणे होते हैं। इस तथ्यको अंक-संदृष्टि द्वारा विशेष समझनेके लिए इस भागके पृ० ३०३ की मूल टोका और विशेषार्थ द्रष्टव्य है।

अब कितने प्रदेशपुञ्जके द्वारा इन अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना होती है इसे स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि अश्वकर्ण-करणकारकके प्रथम समयमें यह जीव जितने प्रदेशपुञ्जका अपकर्षण

करता है, उसकी अपेक्षा कर्मका अवहारकाल सबसे स्तोक होता है। अपूर्व स्वर्धकोंकी अपेक्षा एक प्रदेश गुणहानिका अवहारकाल असंख्यातगुणा होता है तथा इसकी अपेक्षा पल्योपमका प्रथम वर्गमूल असंख्यातगुणा होता है। इस प्रकार इस भागहार द्वारा लोभ संज्वलनके जो अपूर्व स्पर्धक प्राप्त होते हैं उनकी आदि वर्गणामें पूर्व स्पर्धकोंमेंसे अपकर्षित कर, बहुत प्रदेशपुंजको देता है। द्वितोय वर्गणामें विशेष हीन प्रदेश पुञ्ज देता है। इस विधिसे उत्तरोत्तर प्रत्येक वर्गणामें हीन-हीन प्रदेशपुञ्ज देता हुआ अन्तिम वर्गणामें विशेषहीन देता है। पुनः उससे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें असंख्यातगुणा हीन प्रदेशपुञ्ज देता है और इस प्रकार यहाँ भी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष ~~हीन विशेष~~ हीन प्रदेशपुञ्ज देता है।

यह तो अपकर्षण करके दीयमान प्रदेशपुञ्जकी व्यवस्था है। ऐसा करनेपर उन अपूर्व स्पर्धकों और पूर्व स्पर्धकोंमें किस प्रकार प्रदेशपुञ्ज दिखलाई देता है इसे स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि उसी प्रथम समयमें अपूर्व स्पर्धकोंकी प्रथम वर्गणामें बहुत प्रदेशपुञ्ज दिखाई देता है। उससे पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणा विशेष तीन प्रदेशपुञ्ज दिखाई देता है। यहाँ जिसप्रकार यह लोभ संज्वलनकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार माया, मान और क्रोधसंज्वलनकी प्ररूपणा भी जाननी चाहिये।

इन स्पर्धकोंके उदयकी अपेक्षा विचार करनेपर उसी प्रथम समयमें तत्काल जो अनुभागसत्कर्म अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणत होता है उसके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके उदीरणा करनेवाले जीवके उदयस्थितिके भीतर सभी अपूर्व स्पर्धकोंसम्बन्धी अनुभागसत्कर्म पाया जाता है। और इसप्रकार पाये जानेपर सभी अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण होते हैं यह कहा गया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणत पूरा सत्कर्म उदयरूप परिणत नहीं हुआ है, क्योंकि प्रत्येक स्पर्धकके प्रति अपूर्व स्पर्धकों सम्बन्धी सदृश धनवाले परमाणुओंके अवस्थित होनेपर उनमेंसे कितने ही परमाणुओंका उदय होनेपर भी शेष परमाणु उसी प्रकार अवस्थित रहते हैं। इसीलिए चूर्णिसूत्रमें यह कहा गया है कि उस प्रथम समयमें सभी स्पर्धक उदीर्ण भी होते है और अनुदीर्ण भी रहते हैं। इसीप्रकार पूर्व स्पर्धकोंकी अपेक्षा भी आदिसे लेकर अनन्तवां भाग उदीर्ण और अनुदीर्ण कहना चाहिये, क्योंकि उनमें भी सदृश धनवाले परमाणुओंमेंसे कितने ही परमाणु उदोर्ण होते हैं और कितने ही परमाणु अनुदीर्ण रहते हैं यह व्यवस्था बन जाती है।

बन्धकी अपेक्षा विचार करनेपर पूर्व स्पर्धकोंमेंसे प्रथम आदिके अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न होते हैं वे लता समान पूर्व स्पर्धकोंके अनन्तवें भागस्वरूप प्रवृत्त होते हुए भी अनन्त गुणहानि द्वारा और भी कम अनुभागवाले होकर प्रवृत्त होते हैं ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

यह अश्वकर्णकरण कारकको प्रथम समय सन्बन्धी प्ररूपणा है। दूसरे समयमें स्थितिकाण्डक, अनुभागकाण्डक और स्थितिबन्ध यद्यपि पहले समयके समान वही रहता है, परन्तु अनुभागबन्ध प्रथम समयके अनुभागबन्धसे अनन्तगुणा होन होता है। तथा प्रथम समयकी अपेक्षा इस समय विशुद्धिमें वृद्धि होनेके कारण प्रथम समयमें जितने प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके गुणश्रेणिकी रचना की थी उससे इस समय असंख्यातगुणे प्रदेश पुंजका अपकर्षण करके गुणश्रेणिकी रचना करता है।

यह प्रथम समयकी प्ररूपणा है। दूसरे समयमें प्रथम समयमें निष्पन्न अपूर्व स्पर्धकोंसे असंख्यातगुणे हीन नये अपूर्व स्पर्धकोंको निष्पन्न तो करता ही है। साथ ही प्रथम समयके अपूर्व स्पर्धकोंको भी निष्पन्न करता है। आशय यह है कि प्रथम समयमें एक प्रदेश गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण जिन अपूर्व स्पर्धकोंको निष्पन्न किया था उनको उसी रूपमें दूसरे समयमें

भी निष्पन्न करता है। साथ ही इस समय उनसे असंख्यातगुणे हीन प्रकाशवाले दूसरे नये अपूर्व स्पर्धकोंको निष्पन्न करता है।

दूसरे समयके इन अपूर्व स्पर्धकोंमें जिस प्रदेशपुञ्जको निक्षिप्त करता है उसकी विधिकी प्ररूपणा इस प्रकार की गई है—दूसरे समयमें निष्पन्न हुए अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें सबसे अधिक प्रदेशपुंज विक्षिप्त करता है। दूसरी वर्गणामें विशेष हीन प्रदेशपुञ्ज निक्षिप्त करता है। इसी प्रकार आगे भी दूसरे समयमें जितने अपूर्व स्पर्धकोंकी निस्पन्न किया है उनकी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन विशेष हीन प्रदेशपुञ्ज देता है। पुनः उस अन्तिम वर्गणासे प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक बिष्पन्न किये थे उनकी आदि वर्गणामें असंख्यातगुणे हीन प्रदेशपुञ्जको देता है। दूसरी वर्गणामें विशेष हीन प्रदेशपुञ्ज देता है। इसी प्रकार आगे भी इन स्पर्धकोंकी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन प्रदेशपुञ्ज देता है। इस समय किये गये इसके बाद पूर्व स्पर्धकोंकी आदिवर्गणामें भी विशेष हीन प्रदेशपुञ्ज देता है। इसी प्रकार आगे सर्वत्र विशेष हीन, विशेष हीन प्रदेशपुञ्ज देता है।

यह तो प्राचीन पूर्व स्पर्धकोंसे प्रदेशपुञ्जका अपकर्षण करके इन अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोंकी प्रथमादि वर्गणाओंमें किस बिधिसे निक्षेप करता है इसका उहापोह किया। आगे वह दिखाई कैसा देता है इसका निर्देश करते हुए बतलाया है कि इन अपूर्व स्पर्धकों और पूर्व स्पर्धकोंकी एक एक वर्गणामें जो प्रदेशपुञ्ज दिखाई देता है वह अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें बहुत होता है। आगे शेष सब वर्गणाओंमें क्रमसे विशेष हीन, विशेष हीन होता है।

यह दूसरे समयकी प्ररूपणा है। तीसरे समयकी प्ररूपणा दूसरे समयकी प्ररूपणाके समान ही कर लेनी चाहिये। तथा इसी प्रकार प्रथम अनुभाग काण्डकके अन्तिम समय तक जाननी चाहिये क्योंकि यहाँ तक वही स्थितिकाण्डक है और वही अनुभाग सत्कर्म हैं। मात्र अमुभागबन्ध अनन्तागुणा हीन होता जाता हे तथा गुणश्रेणि असंख्यातगुणी होती जाती है। यहाँ इतना विशेष समझना चाहिये कि प्रथम अनुभागकाण्डकका घात होनेपर जो अनुभागसत्कर्म शेष बचता है उसमें फरक है। जो इस प्रकार है—लोभसंज्वलनमें अनुभागसत्कर्म सबसे स्तोक होता है। उससे मायासंज्वलनमें अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा होता है। उससे मानसंज्वलनमें अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा होता है और ऊससे क्रोधसंज्वलनमें अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा होता है। आगे जब तक अश्वकर्ण करणका काल प्रवृत्त रहता है तब तक अनुभागसत्कर्म तथा अपूर्व स्पर्धक आदिके करनेका यही क्रम जानना चाहिये।

अश्वकर्ण करणके प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक किये गये वे बहुत होते हैं। दूसरे समयमें किये गये अपूर्व स्पर्धक असंख्यातगुणे हीन होते हैं। इस प्रकार अश्वकर्ण-करण कालके भीतर प्रत्येक समयमें जो अपूर्व स्पर्धक किये गये वे उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे हीन होते जाते हैं। यहाँपर उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा हीनका प्रमाण लानेके लिये गुणाकार पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असंख्यातवें भागप्रमाण जानना चाहिये। आशय यह है कि दूसरे समयमें जो अपूर्वस्पर्धक किये जाते हैं उनमें जिन गुणकारोंका गुणा करनेपर प्रथम समयके अपूर्व स्पर्धकोंका प्रमाण उत्पन्न होता है वह पल्योपमके प्रथम वर्गमूल प्रमाण होता है। यह प्रथम समयकी प्ररूपणा है, शेष समयोंकी इसी प्रकार जानना चाहिये। आगे उन अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें अविभाग-प्रतिच्छेद इस रूपमें उत्पन्न होते हैं इस बातका ज्ञात करानेके लिये कहा है कि—

अन्तिम समयमें लोभ संज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद सबसे थोड़े होते हैं। दूसरे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद दूने होते हैं। तीसरे

अपूर्वस्पर्धककी आदि वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेद तिगुणे होते हैं। इसी प्रकार आगे भी अन्तिम अपूर्व स्पर्धकके प्राप्त होने तक जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार माया, मान और क्रोधकी अपेक्षा भी कथन करना चाहिये।

यहाँ जो अविभागप्रतिच्छेदोंके अल्पवहुत्वकी प्ररूपणा की है वह एक-एक परमाणुमें जो अनुभाग प्राप्त होता है उसकी अपेक्षा ही जाननी नाना परमाणुओंमें सदृश धनकी विवक्षासे यदि प्ररूपणा की जाती है तो प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणामें जितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं उनसे दूसरे स्पर्धककी आदि वर्गणामें कुछ कम दूने अविभाग प्रतिच्छेद प्राप्त होते हैं। आगे भी इसी प्रकार कुछ कम करते जाना चाहिये। आगे प्रकृतमें पूर्व और अपूर्व स्पर्धक तथा उनकी वर्गणाओंका प्रमाणविषयक निर्णय प्राप्त करनेके लिये अल्पबहुत्वका विधान कर अन्तर्मुहूर्त कालमें निष्पन्न होनेवाले अश्वकर्ण करणकी प्ररूपणा समाप्त की गई है।

फूलचन्द्र शास्त्री

७-११-८२

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
मूल सूत्रोंके विवरण करनेकी प्रतिज्ञा	१
उपशामनाके भेद और लक्षण	२
अकरणोपशामनाका विवेचन	३
करणोपशामनाका विवेचन	४
देशकरणोपशामनाका विवेचन	८
सर्वकरणोपशामनाका विवेचन	९
किस कर्मकी उपशामना होती है इसका निर्देश	१०
प्रकृतमें दर्शन मोहकी उपशामना विवक्षित नहीं	१०
अनन्तानुबन्धीकी करणोउपशामना होती ही नहीं	११
बारह कषाय और नोकषायोंकी उपशामनाका क्रमनिर्देश	११
कृष्टिगत मात्र लोभसंज्वलनकी उपशामनाका निर्देश	१३
प्रदेशपुंजकी उपशामना विधिका निर्देश	१४
उदयावलि और बन्धावलिको छोड़कर शेष सब स्थितियोंकी उपशामनाका निर्देश	१५
अनुभागमें सब स्पर्धकों और सब वर्गणाओंकी उपशामनाका निर्देश	१६
प्रदेशसंक्रमके सम्बन्धमें विशेष निर्देश	१७
स्थितिसंक्रमके ,, ,,	२०
अनुभागसंक्रमके ,, ,,	२१
प्रदेश, स्थिति और अनुभाग उदीरणाके विषयमें विशेष विचार	२२
नपुंसकवेदकी उपशामनामें जो कार्य होते हैं उनका निर्देश	२३
कृष्टिवेदनकालमें बन्ध नहीं होता इसका निर्देश	
स्त्रीवेदकी उपशामनामें जो कार्य होते हैं उनका निर्देश	३१
आठ करणोंका नामोल्लेख करके किस कर्ममें कहाँ तक कौन करण होता है इसका निर्देश	३२
व्याघात और अव्याघातके भेदसे उपशमनाके दो भेदोंकी अपेक्षा कथन	४२
प्रतिपातके दो भेदोंकी अपेक्षा कथन	४५
प्रकृतमें उपशामनासे पतनके कारणका निर्देश	४७
पतन होनेपर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें होनेवाले कार्योंमें तीनों लोभोंकी अपेक्षा मीमांसा	४८
बादरसाम्पराय गुणस्थानमें होनेवाले कार्योंका निर्देश	
उसमें सर्वप्रथम अनानुपूर्वी संक्रमकी सूचना तथा तीनों लोभोंसम्बन्धी अन्य कार्योंका निर्देश यहाँ होनेवाले क्रमसे स्थितिबन्धका निर्देश	५८
लोभवेदक कालके समाप्त होनेपर तीन मायाके आलम्बनसे विशेष निर्देश	६१
इसके तीन लोभोंका जो गुणश्रेणिनिक्षेप होता है उसके विषयमें विशेष निर्देश	६१
एतद्विषयक शेष कर्मोंके विषयमें निर्देश	६२
इसके संक्रमके विषयमें विशेष निर्देश	६३
यहाँ स्थितिबन्धके विषयमें निर्देश	६३
मायावेदकके अन्तिम समयमें स्थितिबन्धका निर्देश	६४
माया वेदककालके समाप्त होनेपर मानवेदक कालके प्रथम समयमें कार्योंका निर्देश	६५
इसके प्रथम समयमें नौ प्रकारका संक्रमका निर्देश	६५
इसी समय होनेवाले स्थितिबन्धके विषयमें निर्देश	६६

मानवेदक कालके समाप्त होनेपर क्रोधवेदक कालके प्रथम समयमें होनेवाले कार्य ६६
इसके शेष कर्मोंके समान गुणश्रेणिनिक्षेप होनेकी सूचना ६७
इसके प्रथम समयमें बारह प्रकारकी कषायोंके संक्रमका निर्देश ६८
उसी समय होनेवाले स्थितिबन्धका निर्देश ६८
यहाँ कुछ काल बाद जो कार्य होते हैं उनका निर्देश ६९
तदनन्तर समयमें पुरुषवेदके बन्धका निर्देश ७०
इसी समय होनेवाले शेष कार्योंका निर्देश ७०
कुछ काल बाद स्त्रीवेदका अनुपशामक होता है इसका निर्देश ७१
इसी कालमें स्थितिबन्धका निर्देश ७३
कुछ काल बाद नपुंसकवेदका अनुपशामक होता है इसका निर्देश ७५
इसके अन्तर्मुहूर्त बाद होनेवाले स्थितिबन्धका निर्देश ७५
यहींसे होनेवाले द्विस्थानीय बन्ध और उदयका निर्देश ७७
उपशमश्रेणिसे गिरनेवालेको बन्धावलिके बाद उदीरणा होने लगनेका निर्देश ७७
प्रकृत विषयमें अभिप्रायान्तरका निर्देश ७७
अनिवृत्तिकरण गुणस्थानसे अनानुपूर्वी संक्रम और लोभका संक्रम होने लगनेका विधान ७८
यहाँसे लेकर होनेवाला स्थितिबन्ध-सम्बन्धी विशेष निर्देश ८०
आगे यत्स्थितिबन्ध सहित स्थितिबन्धके निर्देश करनेका विधान ८५
अपूर्वकरण गुणस्थानमें होनेवाले कार्योंका निर्देश ९२
अपूर्वकरणके प्रथम समयसे अप्रशस्त उपशामना करण आदिके उद्घाटित होनेका निर्देश ९२
यहींसे हस्यादिकी उदीरणा होने लगनेका विधान ९२
इस गुणस्थानके संख्यात बहुभागके बीतनेपर निद्रा प्रचलाके बन्ध होनेका निर्देश ९३
इसके बाद क्रमसे अधःप्रवृत्तकरणके प्राप्त होने पर अवस्थित अन्य गुणश्रेणी निक्षेपके प्रारम्भ करनेका विधान ९४
मात्र यहाँसे यह गुणहानिनिक्षेप हानि-वृद्धि और अवस्थानरूप होता है इसका निर्देश ९६
यहींसे अधःप्रवृत्त संक्रमके प्रारम्भ होनेका निर्देश ९७
यहाँ द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका कितना काल शेष है इसका निर्देश ९८
इस सम्यकत्वमें छह आवलि काल शेष रहनेपर सासादन गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव है इसका निर्देश ९९
इसके प्राप्त होते समय परिणाम प्रत्ययवश अनन्तानुबन्धीमेंसे किसी एककी उदीरणा हो जाती है इसका निर्देश ९९
इस गुणस्थानमें मरा हुआ जीव मात्र देवगतिको प्राप्त होता है इसका सकारण निर्देश १००
उपशमश्रेणीकी यह प्ररूपणा पुरुष वेद और क्रोध संज्वलनके उदयकी अपेक्षासे की है इसका निर्देश १०१
आगे पुरुषवेदीके मान संज्वलनकी अपेक्षा प्ररूपणामें जो अन्तर पड़ता है उसका निर्देश १०१
आगे पुरुषवेदीके मायाकी अपेक्षा प्ररूपणामें जो अन्तर पड़ता है उसका निर्देश १११
आगे पुरुषवेदीके लोभकी अपेक्षा प्ररूपणामें जो अन्तर प्राप्त होता है इसका निर्देश ११५
स्त्रीवेदीकी अपेक्षा विधान ११७
नपुंसकवेदीकी अपेक्षा विधान ११८
जो पुरुषवेद और क्रोध संज्वलनके उदयसे श्रेणि चढ़ता है उसके प्रकृतमें काल-संयुक्त पदोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश १२०-१४५
क्षुल्लक भवग्रहण किसके कितने होते हैं इसका निर्देश १२९

क्षपक श्रेणी

टीकाकारका मंगलाचरण १४७
क्षपकश्रेणिमें भी तीन करण किस विधिसे होते हैं इसका निर्देश १४८
सत्कर्मोंकी जो स्थितियाँ शेष हैं उनकी रचनाका निर्देश १५०
अनुभाग सत्कर्मसम्बन्धी निर्देश १५१
अधःप्रवृत्तकरणके अन्तमें विवक्षित चार गाथाओंका विशेष ऊहापोह १५३

क्षपकश्रेणिमें चढ़ते समय कौन उपयोग होता है इसका अभिप्राय-भेदके साथ विशेष खुलासा १५७
इसमें कौन प्रकृतियाँ उदयावलिमे प्रविष्ट होती हैं और कौन नहीं इसका निर्देश १६१
यहाँसे पहले जिन प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है इसका निर्देश १६३
यहाँसे पहले जिन प्रकृतियोंकी उदयव्युच्छित्ति हो जाती हैं इसका निर्देश १६४
अन्तरकरण और संक्रामक आगे होगा इसका निर्देश १६५
स्थितिकाण्डक-घात और अनुभाग-काण्डक-घात अपूर्वकरणके प्रथम समयसे होने का निर्देश १६७
कषायोंका उपशम करनेवाले किसके कितना जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति-काण्डक होता है इसका निर्देश १६९
कषायोंकी क्षपणा करनेवाले किसके कितना जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक होता है इसका निर्देश १७१
अपूर्वकरणके प्रथम समयमें होनेवाले आवश्यकोंका निर्देश १७३
इसके दूसरे समयमें उनमें जो भेद पड़ता है उसका निर्देश १७५
इसके संख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाने पर निद्रा-प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति का निर्देश १७७
क्षपक और उपशम श्रेणिमें गुणसंक्रम होनेका निर्देश १७८
तदनन्तर इसके ६/७ भाग-वीत जाने-पर परभवसम्बन्धी प्रकृतियोंकी बन्ध-व्युच्छित्तिका निर्देश १७८
इसके अन्तिम समयमें हास्यादि चारकी बन्धव्युच्छित्ति होनेका निर्देश १९९
अनिवृत्तिकरणके प्रथय समयमें होनेवाले आवश्यकोंका निर्देश १७९
यहाँ प्रथम समयमें विषम स्थिति-काण्डकघात होता है इसका सकारण निर्देश १८०
इसके दूसरे समयमें पूर्वोक्त आवश्यक होते हैं, केवल गुणश्रेणि असंख्यातगुणी होती है इसका निर्देश १८४
यहाँ आगे कहाँ कितना स्थितिबन्ध होता है इसका निर्देश १८५
इसी प्रसंगसे स्थितिसत्कर्मका निर्देश १८६
प्रकृतमें अल्पबहुत्वका निर्देश १८६
आगे क्रमसे होनेवाले स्थितिबन्धका पुनः निर्देश १८७
प्रकृतमें पुनः पुनः अल्पबहुत्वका निर्देश कर आगे क्रमसे होनेवाले स्थितिबन्धका निर्देश १९०
आगे इसी विधिसे कहाँ किसका स्थिति सत्कर्म स्थितिबन्धके समान होता है इसका क्रमसे निर्देश १९५
आगे स्थिति सत्कर्म विषयक पुनः पुनः अल्पबहुत्वके साथ क्रमसे घटते हुए स्थिति सत्कर्मका निर्देश १९७
आगे प्रतिसमय असंख्यात समयप्रवद्धों की उदीरणा कहाँसे होती है इसका निर्देश २००
यहाँ सर्वप्रथम मध्यकी आठ कषायोंकी क्षपणाका क्रम निर्देश २००
तदनन्तर कुछ आगे जीनेपर दर्शनावरण की तीन और नामकर्मकी दस प्रकृतियोंकी क्षपणाका क्रम निर्देश
तदनन्तर कुछ स्थान जाने पर १२ प्रकृतियोंका बन्धकी अपेक्षा देशघातीकरणका निर्देश २०
तदनन्तर नौ नोकषाय और चार संज्वलनोंके अन्तरकरण विधानका निर्देश
ऐसा करते हुए किसकी कितनी प्रथम स्थिति करता है इसका निर्देश २०४
उत्कीरित अन्तर स्थितियोंमेंसे किसका कहाँ निक्षेप होता है इसका निर्देश २०५
अनन्तर प्रथम समयकृत और द्विसमयकृत कब कहलाता है इसका निर्देश २०७
नपुंसकवेदमें आयुक्तकरण संक्रामक कब होता है इसका निर्देश २०७

नपुंसकवेदकी क्षपणा होनेके बाद स्त्रीवेदकी क्षपणाके साथ होनेवाले कार्योंका निर्देश २०८
तदनन्तर सात नोकषायोंकी क्षपणाके साथ होनेवाले कार्योंका निर्देश २११
अन्तर करनेके बाद छह नोकषायोंका क्रोध-संज्वलनमें संक्रम होता है इसका निर्देश २१६
पुरुषवेदके सम्बन्धमें विशेष निर्देश २१६
सवेद भागके अन्तिम समयमें छह नोकषायोंकी अन्तिम फालिका पतन होता है इसका निर्देश २१७
उस समय पुरुषवेदके मात्र एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध शेष रहते हैं उनका क्रमसे क्रोधसंज्वलनमें संक्रम हो जाता है यह निर्देश २१७
तदनन्तर अश्वकर्ण-करण विधि प्रारम्भ होती है इसका निर्देश २१८
यहाँ अश्वकर्णकरण विधिको स्थगित करके क्षपक सम्बन्धी सभाष्य सूत्र गाथाओं की व्याख्या करनेका निर्देश २१८
प्रथम सूत्रगाथा और उसकी व्याख्याका निर्देश २१९
उसकी पाँच भाष्यगाथाओंके पूर्व भाष्यगाथाका अर्थ २२१
प्रथम भाष्यगाथाकी व्याख्या २२२
दूसरी भाष्यगाथा की व्याख्या २२३
तीसरी ,, ,, २२५
चौथी ,, ,, २२८
पाँचवीं ,, ,, २२९
दूसरी मूलगाथा तीन अर्थोंमें प्रतिबद्ध है इस निर्देशके साथ उसकी व्याख्या २३१
तीन अर्थोंका क्रमसे स्पष्टीकरण २३२
प्रथम अर्थमें तीन भाष्यागाथाओंकी सूचना २३२
दूसरे अर्थमें दो भाष्यगाथाओं की सूचना २३३
तीसरे अर्थमें छह भाष्यगाथाओं की सूचना २३३
प्रथम अर्थमें निबद्ध प्रथम भाष्यगाथाकी व्याख्या २३४
प्रथम अर्थमें निबद्ध दूसरी भाष्यगाथाकी व्याख्या २३५
प्रथम अर्थमें निबद्ध तीसरी भाष्यगाथाकी व्याख्या २३७
द्वितीय मूलगाथाके दूसरे अर्थमें निबद्ध प्रथम भाष्यगाथाकी व्याख्या २४१
दूसरे अर्थमें निबद्ध दूसरी भाष्यगाथाकी व्याख्या २४३
दूसरी मूलगाथाके तीसरे अर्थमें निबद्ध प्रथम भाष्यगाथाकी व्याख्या २४७
तीसरे अर्थमें निबद्ध दूसरी भाष्यगाथाकी व्याक्या २४९
तीसरे अर्थमें निबद्ध तीसरी भाष्यगाथाकी व्याख्या २५०
तीसरे अर्थमें निबद्ध चौथी भाष्यगाथाकी व्याख्या २५१
तीसरे अर्थमें निबद्ध पाँचवीं भाष्यगाथाकी व्याख्या २५२
तीसरे अर्थमें निबद्ध छठी भाष्यगाथाकी व्याख्या २५७
तीसरी मूल गाथाकी व्याख्या २५८
उसमें निबद्ध अर्थमें चार भाष्यगाथाओंमेंसे प्रथम भाष्यगाथाकी व्याख्या २६१
दूसरी भाष्य गाथाकी व्याख्या २६३
तीसरी ,, ,, २६५
चौथी ,, ,, २६७
चौथी मूल गाथाकी ,, २६८
इसकी तीन भाष्यगाथाओंमें से प्रथम भाष्य गाथाकी व्याख्या २६९
दूसरी भाष्य गाथाकी व्याख्या २७२
तीसरी ,, ,, २७३
पाँचवीं मूलगाथाकी व्याख्या २७५
इसमें निबद्ध तीन भाष्य गाथाओंमें से प्रथम भाष्य गाथाकी व्याख्याके प्रसंगसे अपकर्षण की अतिस्थापना और निक्षेपका निर्देश २७७
दूसरी भाष्य गाथामें संक्रम और उत्कर्षणका निर्देश २८३
तीसरी भाष्यगाथा द्वारा स्थिति और अनुभाग-को लक्ष्यमें रखकर अपकर्षणके बाद दूसरे समयमें होनेवाले कार्योंका निर्देश २८५

छठी मूल गाथा द्वारा स्थिति और अनुभागको लक्ष्यमें रखकर उत्कर्षण और अपकर्षण किस प्रमाणमें होता है इस जिज्ञासाका निर्देशपूर्वक व्याख्या २८७
इसमें निबद्ध एक भाष्य गाथाकी व्याख्या २८९
अग्रस्थितिका उत्कर्षण किस स्थितिमें होता है इसका निर्देश २९०
कषायोंकी उत्कर्षित स्थितिके उत्कृष्ट २९३
निक्षेपका विधान, उत्कर्षणामें अतिस्थापनाका निर्देश २९५
उत्कृष्ट अतिस्थापनाका निर्देश २९७
प्रकृतमें उपयोगी अल्पबहुत्वका निर्देश ,,
सातवीं मूल गाथाकी व्याख्या ३०२
उसमें निबद्ध चार भाष्यगाथाओंका उल्लेख ३०४
कितनी स्थितिका अपकर्षण और उत्कर्षण होता है इसमें निबद्ध प्रथम भाष्य गाथाकी व्याख्या ३०५
किस अवस्थामें किस अनुभागका अपकर्षण और उत्कर्षण होता है ३०८
दूसरी भाष्यगाथाके दो अर्थोंका निर्देश ३०९
प्रथम बन्धानुलोमकी अर्थ सहित व्याख्या ३१०
दूसरे सद्भावार्थकी व्याख्या ३१२
उत्कर्षणमें सद्भावरूप अर्थका निर्देश ३१३
प्रकृतमें अल्पबहुत्वका निर्देश ३१४
तीसरी भाष्यगाथाकी व्याख्या ३१५
वृद्धि, हानि और अवस्थानका अर्थ ३१७
प्रकृतमें अल्पबहुत्वका निर्देश ३१८
चौथी भाष्य गाथाकी व्याख्याके प्रसंगसे उद्वर्तना और अपवर्तना कहाँ होती है और कहाँ नहीं होती इसका स्पष्टीकरण ३२०
अश्वकर्णकरणके पर्यायवाची नाम और उनका अर्थ ३२२
अश्वकर्णकरणकी प्रवृत्ति अवेदभागके प्रथम समयसे होनेका निर्देश ३२३
उस समय संज्वलनोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका निर्देश ३२४
चारों संज्वलनोंमें अनुभाग सत्कर्म और बन्धकी प्रवृत्ति किस क्रमसे उत्तरोत्तर होती है इसका अंकसंदृष्टिपूर्वक निर्देश ३२५
अश्वकर्णकरणके प्रथम समयसे अपूर्व स्पर्धकोंकी रचनाका निर्देश ३२९
अपूर्व स्पर्धक और कृष्टिमें अन्तरका निर्देश ३२९
पूर्व स्पर्धक किस कर्मके कहाँसे होते हैं इसका निर्देश ३३१
अपूर्व स्पर्धक चारों संज्वलनोंके होते हैं, इसका निर्देश ३३२
अपूर्व स्पर्धक करनेकी विधिका निर्देश ३३२
ये अपूर्व स्पर्धक लोभके देशघाति स्पर्धकोंके नीचे किये जाते हैं इसका निर्देश ३३३
अपूर्व स्पर्धक गणनाकी अपेक्षा कितने होते हैं इसका निर्देश ३३४
प्रथम समयमें किये गये अपूर्व स्पर्धकोंके अल्पबहुत्वका निर्देश ३३५
लोभके समान शेष माया आदि तीन कर्मोंके करनेकी विधिका निर्देश ३४०
इन कर्मोंके अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोंके अल्पबहुत्वका निर्देश ३४१
इन अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोंकी परंपरोपनिधा श्रेणिप्ररूपणाका निर्देश ३४४
प्रथम समयमें निर्वर्त्यमान अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोंके अल्पबहुत्वका निर्देश ३४८
आगे इनकी उदय प्ररूपणाका निर्देश ३५५
दूसरे समयमें होनेवाले कार्योंका निर्देश
दूसरे समयमें नये अपूर्व स्पर्धकोंके साथ प्रथम समयके अपूर्व स्वर्धकोंके पुनः करनेका निर्देश ३५८
दूसरे समयमें इन स्पर्धकोंकी प्रथमादि वर्गणाओंमें किस विधिसे प्रदेशपुंज दिया जाता है इसका निर्देश ३६०
दूसरे समयमें ये पूर्व और अपूर्व स्पर्धक किस प्रकार दिखाई देते हैं इसका निर्देश ३६१
तीसरे समयमे यही क्रम चालू रहता है इसका निर्देश ३६१
तीसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणाका निर्देश ३६२

उस समय जो प्रदेशपुंज उनमें दिखाई देता है उसका निर्देश ३६३
आगे अन्तिम समय तक अनुत्कीर्ण अनुभाग-काण्डककी विधि तीसरे समयके समान होती है इसका निर्देश ३६३
तदनन्तर समयमें अनुभागसत्कर्ममें नानापनका निर्देश ३६४
इन प्रथमादि समयोंमें अपूर्व स्पर्धक किस समय कितने किये गये इसका निर्देश ३६५
लोभसंज्वलनकी प्रथमादि वर्गणाओंमें अल्पबहुत्वका निर्देश ३६६
माया आदि तीन संज्वलनोंमें इसी प्रकार जाननेका निर्देश ३६७
क्रोध आदि चारों संज्वलनोंमें अपूर्व स्पर्धक आदिके अल्पबहुत्वका निर्देश ३६७
अश्वकर्णकरणके अन्तिम समयमें संज्वलन आदि सब कर्मोंके स्थितिबन्धका निर्देश ३७१

●

शुद्धिपत्रक

	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
	९	८	सप्पसिद्धा	सुप्पसिद्धा
	२२	१३	एव ताव	एवं ताव
	२५	१४	संजमो	संकमो
	२६	१२	अणक्कस्स	अणुक्कस्स
	२८	११	संजमो	संकमो
	५८	१३	ट्ठिदिबंघादो	ट्ठिदिबंधा दो
	९२	४	उग्घाडिदादि	उग्घाडिदाणि
	९९	१३	अणुफालेभाणो	अणुपालेमाणो
	,,	१४	सिाय	सिया
	१०९	५	कमेणाइक्कतेसु	कमेणाइक्कंतेसु
	१२४	६	संपराइस्स	संपराइयस्स
	१७५	१३	विदियसमए	विदियसमए
	१८८	७	जादा	जादो
	२०५	१०	....	(ट्ठिदीओ)
हि० सं०	२०६	१०	अंतरायाभादो	अंतरायामादो
	२३५	१८	दूसरे	अनन्तर
हिन्दी	२४८	१७	करनेके बाद दूसरे	करनेके अनन्तर
हिन्दी	२५२	२८	बन्धप्रकृतिमें	बंधसदृश उस प्रकृतिमें
	२५७	८	भविस्स	भणिस्स
हिन्दी	२५९	२३	क्या और उदय	और उदय क्या
	३०५	४	गाहाएद्धा पुव्वण वि	गाहाए पुव्वद्धेण वि
हिन्दी	३०५	२८	अपकर्षण	उत्कर्षण
	३१०	६	बंघाणलोम	बंधाणुलोमं
	३१७	८	ओकड्डिज्जदि	ओकड्डिज्जदि ण उक्कड्डिज्जदि
	३४०	१-२	तहा तहा	तहा
	३४३	७	मायाए आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं विसोहियां कोहस्स	मायाए आदिवग्गणाए अविभाग-पडिच्छेदग्गं विसेसाहियं । माणस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं विसेसाहियं । कोहस्स

(१) सूचना—'अंतरदुसमयकदावत्थाए' पाठका सर्वत्र 'अन्तर करनेके अनन्तर समयमें' यह अर्थ विवक्षित है। अतः जहाँ चूक हुई है वहाँ सुधार लेना चाहिये।

श्रीजइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

कसाय पाहुडं

तस्स

सिरि-वीरसेणविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

चारित्तमोहणीय-उवसामणा णाम चोद्दसमो अत्थाहियारो

*** एत्तो सुत्तविहासा**

§ १. पुव्वं सुत्तपासेण विणा सुत्तसूचिदासेसत्थस्स परूवणा कदा। एण्हिं पुण गाहासुत्ताणमवयवत्थविहासा कीरदि त्ति भणिदं होइ।

*** तं जहा**

§ २. सुगमं। संपहि एवं पुच्छाविसईकयविहासणं जहाकमं कुणमाणो तत्थ ताव कसायोवसामणाए पडिबद्धाणमट्ठण्हं गाहासुत्ताणमादिमगाहाए अवयवत्थविहासणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

---

* अब आगे गाथासूत्रोंका व्याख्यान करते हैं।

§ १. पहले गाथा सूत्रोंको स्पर्श किये बिना गाथासूत्रोंद्वारा सूचित हुए पूरे अर्थकी प्ररूपणा की। किन्तु यहाँ सर्व प्रथम गाथासूत्रोंके प्रत्येक पदमें निहित अर्थका विशेष व्याख्यान करते हैं यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है।

* वह जैसे।

§ २. यह सूत्र सुगम है। अब इस प्रकार पृच्छाके विषय हुए अर्थका क्रमसे व्याख्यान करते हुए वहाँ सर्व प्रथम कषायविषयक उपशामनासे सम्बन्धित आठ सूत्रगाथाओंमेंसे प्रथम सूत्रगाथाके पदोंके अर्थका व्याख्यान करनेके लिये आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** उवसामणा कदिविधा त्ति। उवसामणा दुविहा—करणोवसामणा च अकरणोवसामणा च।**

§ ३. उवसामणा कदिविधा त्ति एदस्स ताव पढमगाहापढमावयवस्स अत्थविहासणं कस्सामो त्ति जाणावणट्ठं पुव्वमेव तदुच्चारणं कदं। उवसामणा णाम कम्माणमुदयादिपरिणामेहिं विणा उवसंतभावेणावट्ठाणं।

§ ४. सा एत्थ दुविहा होइ करणाकरणोवसमणाभेदेण। तत्थ करणोवसमणा णाम पसत्थापसत्थपरिणामेहिं कम्मपदेसाणं उवसमभावसंपादणं। अधवा करणाणमुवसामणा करणोवसामणा, उवसामणा-णिधत्त-णिकाचणादिअट्ठकरणाणं पसत्थोवसामणाए उवसामणा, ओकड्डणादिकरणाणं वा अपसत्थोवसामणाए उवसामणा करणोवसामणा त्ति भणिदं होइ। एदंवदिरित्तलक्खणा अकरणोवसामणा णाम। पसत्थापसत्थकरणपरिणामेहिं विणा अपत्तकालाणं कम्मपदेसाणमुदयपरिणामेण विणा अवट्ठाणमकरणोवसामणा त्ति वुत्तं होइ।

*** उपशामना कितने प्रकारकी है? उपशामना दो प्रकारकी है—करणोपशामना और अकरणोपशामना।**

§ ३. 'उपशामना कितने प्रकारकी है' इस प्रकार गाथाके इस प्रथम अवयवके अर्थका व्याख्यान करते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये सर्वप्रथम उक्त अवयवका उच्चारण किया है। उदयादिरूप परिणामोंके विना कर्मोंका उपशान्त भावसे अवस्थित रहना इसका नाम उपशामना है।

विशेषार्थ—चारित्रमोहनीयकी उपशामना प्रकरणमें जो आठ गाथाएँ आई हैं उनमेंसे प्रथम गाथाका प्रथम पाद है—'उवसामणा कदिविधा'—उपशामना कितने प्रकारकी है। वृत्तिकार आचार्य यतिवृषभ इसकी व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि उपशामना दो प्रकारकी है—करणोपशामना और अकरणोपशामना। उनमेंसे सर्वप्रथम उपशामना पदकी व्याख्या करते हुए यहाँ जयधवला टीकामें बतलाया है कि उदयादि परिणामोंके विना कर्मोंका उपशान्तभावसे अवस्थित रहना इसका नाम उपशामना है। यहाँ 'उदयादि परिणामोंके विना' इसका आशय है कि किसी कर्मका बन्ध होने पर विवक्षित काल तक उदयादिके विना तदवस्थ रहना इसका नाम उपशामना है। यह उपशामनाका सामान्य लक्षण है जो यथासम्भव करणोपशामना और अकरणोपशामना दोनोंमें घटित होता है।

§ ४. वह यहाँ दो प्रकारकी है—करणोपशामना और अकरणोपशामना। उनमेंसे प्रशस्त और अप्रशस्त परिणामोंके द्वारा कर्म प्रदेशोंका उपशमभावसे सम्पादित होना करणोपशामना है। अथवा करणोंकी उपशामनाका नाम करणोपशामना है। उपशामना, निधत्त और निकाचना आदि आठ करणोंका प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशम होना करणोपशामना है। अथवा अपकर्षण आदि करणोंका अप्रशस्त उपशामना द्वारा उपशम होना करणोपशामना है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इससे भिन्न लक्षणवाली अकरणोपशामना है। प्रशस्त और अप्रशस्त परिणामोंके विना जिन कर्मप्रदेशोंका उदयकाल प्राप्त नहीं हुआ है उनका उदयरूप परिणामके विना अवस्थित रहना अकरणोपशामना है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ५. एवमेदेण सुत्तेण उवसामणाए दुविहत्तं पदुप्पाइय संपहि एत्थ अकरणोवसामणाए अप्पवण्णणिज्जत्तादो पुव्वपरूवणाजोग्गाए सरूवपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** जा सा अकरणोवसामणा तिस्से इमे दुवे णामधेयाणि—अकरणोवसामणा त्ति वि अणुदिण्णोवसामणा त्ति वि ।**

§ ६. एदस्सत्थो वुच्चदे । तं जहा—दव्व-खेत्त-काल-भावे अस्सिदूण कम्माणं विवागपरिणामो उदयो णाम । तेणोदयेण परिणदं कम्ममुदिण्णं । तत्तो अण्णमणासादिततप्परिणाममणुदिण्णं णाम । अणुदिण्णस्स उवसामणा अणुदिण्णोवसामणा । अणुदिण्णावत्था चेव करणपरिणामणिरवेक्खा अणुदिण्णोवसामणा त्ति भणिदं होदि । एसा चेव अकरणोवसामणा त्ति वि भण्णदे, करणपरिणामणिरवेक्खत्तादो । एवमेसा अकरणोवसामणाए समासपरूवणा । तव्वित्थरो पुण अण्णत्थ दट्ठव्वो । ताए एत्थाणहियारादो त्ति पदुप्पायमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एसा कम्मपवादे ।**

§ ७. कम्मपवादो णाम अट्ठमो पुव्वाहियारो । जत्थ सव्वेसिं कम्माणं मूलुत्तरपयडिभेयभिण्णाणं दव्व-खेत्त-काल-भावमस्सियूण विवागपरिणामो अविवाग-

---

विशेषार्थ—यहाँ करणोपशामना और अकरणोपशामना इन दोनोंके स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है । विशेष ऊहापोह आगे स्वयं टीकाकार चूर्णिसूत्रोंको ध्यानमें रखकर करनेवाले हैं ।

§ ५. इस प्रकार इस सूत्र द्वारा उपशामनाके दो भेदोंका प्रतिपादनकर अब यहाँ अकरणोशामना अल्प वर्णनके योग्य होनेसे पहले वह कथन करनेके योग्य है, इसलिये उसका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जो वह अकरणोपशामना है उसके ये दो नाम हैं—अकरणोपशामना और अनुदीर्णोपशामना ।**

§ ६. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावको निमित्त कर कर्मोंके विपाकरूप परिणामका नाम उदय है । उस उदयसे परिणत कर्मको उदीर्ण कहते हैं । उससे भिन्न जिसने विपाक परिणामको प्राप्त नहीं किया है उसे अनुदीर्ण कहते हैं । अनुदीर्ण कर्मकी उपशामना अनुदीर्ण उपशामना कहलाती है । करणपरिणामोंसे निरपेक्ष होकर जो अनुदीर्ण अवस्था होती है वही अनुदीर्णोपशामना है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसीको अकरणोपशामना भी कहते हैं, क्योंकि यह करण परिणामोंसे निरपेक्ष होती है । इस प्रकार यह अकरणोपशामनाकी संक्षिप्त प्ररूपणा है । उसका विस्तारसे कथन अन्यत्र देखना चाहिये । अधिकारवश यहाँ उसका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** यह कर्मप्रवाद पूर्वमें प्ररूपित है ।**

§ ७. कर्मप्रवाद आठवें पूर्वका नाम है । जहाँ मूल और उत्तर प्रकृतिभेदोंको प्राप्त सभी कर्मोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावको निमित्त कर अनेक प्रकारके विपाकपरिणाम और अविपाक-

पज्जाओ च बहुवित्थरो अणुवण्णिदो। एसा अकरणोवसामणा दट्ठव्वा, तत्थेदिस्से पबंधेण परूवणोलंभादो।

§ ८. एवमकरणोवसामणाए अत्थपरूवणं कादूण संपहि करणोवसामणाए परूवणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** जा सा करणोवसामणा सा दुविहा—देसकरणोवसामणा त्ति वि सव्वकरणोवसामणा त्ति वि।**

§ ९. जा सा पुव्वुद्दिट्ठा करणोवसामणा सा दुविहा होइ देस-सव्वकरणोवसामणाभेदेण। तत्थ देसकरणोवसामणा णाम अप्पसत्थोवसामणादिकरणेहिं देसदो कम्मपदेसाणमुदयादिपरिणामपरमुहीभावेण उवसंतभावसंपायणं। कुदो एदस्स तव्ववएसो चे? ण, तत्थ केसिंचिदेव करणाणं परिमिएसु चेव कम्मपदेसेसु उवसंतभावदंसणेण तव्ववएसोववत्तीए।

§ १०. अण्णेसिं वक्खाणाइरियाणमहिप्पाओ, ण एवंविहा देसकरणोवसामणा एत्थ विवक्खिया, अकरणोवसामणाए एदिस्से अंतभावब्भुवगमादो। किंतु अण्णहा देसकरणोवसामणाए अत्थो वत्तव्वो। तं जहा—

§ ११. दंसणमोहणीये उवसामिदे उदयादिकरणेसु काणि वि करणाणि उवसंताणि

परिणामका वर्णन किया गया है। वहाँ इस अकरणोपशामनाके स्वरूपको जानना चाहिये, क्योंकि वहाँ इसकी प्रबन्धरूपसे प्ररूपणा उपलब्ध होती है।

§ ८. इस प्रकार अकरणोपशामनाके अर्थका कथन करके अब करणोपशामनाका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** जो वह करणोपशामना है वह दो प्रकारकी है—देशकरणोपशामना और सर्वकरणोपशामना।**

§ ९. जो यह पहले कही गई करणोपशामना है वह देशकरणोपशामना और सर्वकरणोपशामनाके भेदसे दो प्रकारकी है। उनमेंसे अप्रशस्त उपशामना आदि करणोंके द्वारा एकदेश कर्मपरमाणुओंका उदयादि परिणामके परमुखीभावसे उपशान्त भावको प्राप्त होना देशकरणोपशामना है।

शंका—इसका देशकरणोपशामना नाम क्यों है?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ किन्हीं करणोंके परिमित कर्मप्रदेशोंमें ही उपशान्तपना देखा जाता है, इसलिये इसकी देशकरणोपशामना संज्ञा बन जाती है।

§ १०. अन्य व्याख्यानाचार्योंका अभिप्राय है कि इस प्रकारकी देशकरणोपशामना यहाँ विवक्षित नहीं है, क्योंकि इसका अकरणोपशामनामें अन्तर्भाव स्वीकार किया गया है। अतः देशकरणोपशामनाका अन्य प्रकारसे अर्थ कहना चाहिये। यथा—

§ ११. दर्शनमोहनीयका उपशम होने पर उदयादि करणोंमेंसे कोई करण उपशान्त हो जाते हैं और कोई करण अनुपशान्त रहते हैं इसलिये यह देशकरणोपशामना कहलाती है। इसका

काणि वि करणाणि अणुवसंताणि, तेणेसा देसकरणोवसामणा त्ति भण्णदे। एदस्स भावत्थो—दंसणमोहणीयस्स अप्पसत्थउवसामणा णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं बंधणकरणं उक्कड्डणकरणं उदीरणाकरणं उदयकरणमिदि एदाणि सत्त करणाणि उवसंताणि, ओकड्डण-परपयडिसंकमणसण्णिदाणि दोण्णि करणाणि अणुवसंताणि। तदो केसिं पि उवसमेण केसिं पि अणुवसमेण च इमा देसकरणोवसामणा णाम भवदि त्ति।

§ १२. अधवा उवसमसेढिं चडिदस्स अणियट्टिकरणपढमसमए अप्पसत्थ-उपसामणाकरण-णिधत्तीकरण-णिकाचणाकरणाणि त्ति एदाणि तिण्णि वि अप्पप्पणो सरूवेण विणट्ठाणि। एदेसिं च विणासो णाम संसारावत्थाए उदय-संकमणोकड्डु-क्कड्डणसरूवेण जाणि उवसंताणि तेसिमिदाणिं पुणो उक्कड्डणादिकिरियाणं करण-संभवो। एवं च संते उवसमाभावो पसज्जदि त्ति भणिदे उच्चदे—

§ १३. पुव्वं संसारावत्थाए अप्पसत्थकरणोवसामणाए उवसंताणि जादाणि पुणो तहापरिणदाणं तेसिं तिहिं करणेहिं पडिग्गहियाणं पदेसाणं तेण सरूवेण जो विणासो सो चेव देसकरणोवसामणा त्ति वुच्चदे, तिण्हं करणाणं सगरूवेण विणा-सस्स देसकरणोवसामणाभावेणेत्थ विवक्खियत्तादो। तदो अप्पसत्थोवसामणादीणं तिण्हं करणाणं विणासे ओकड्डणादिकिरियाणं संभवो अणियट्टि-सुहुमेसु देसकरणो-वसामणासण्णं लहदि त्ति एसो एत्थ भावत्थो।

§ १४. अधवा णवुंसयवेदपदेसग्गमुवसामेमाणस्स जाव सव्वोवसमं ण गच्छदि

तात्पर्य यह है कि दर्शनमोहनीयकर्मसम्बन्धी अप्रशस्त उपशामना, निधत्तीकरण, निकाचनाकरण, बन्धनकरण, उत्कर्षणकरण, उदीरणाकरण और उदयकरण इस प्रकार ये सात करण उपशान्त हो जाते हैं, तथा अपकर्षणकरण और परप्रकृतिसंक्रमकरण ये दो करण अनुपशान्त रहते हैं। इसलिये किन्हीं करणोंके उपशम होनेसे और किन्हीं करणोंके अनुपशम रहनेसे इसकी देशकरणोपशामना संज्ञा है।

§ १२. अथवा उपशमश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण ये तीनों ही करण अपने-अपने स्वरूपसे विनष्ट हो जाते हैं। इनके विनाशका अर्थ है कि संसार अवस्थामें उदय, संक्रमण, उत्कर्षण और अपकर्षण-रूपसे जो कर्म उपशान्त हुए इस समय उन कर्मोंकी पुनः उत्कर्षण आदि क्रियाका किया जाना सम्भव है और ऐसा होने पर उपशमका अभाव प्राप्त होता है ऐसा कहने पर आचार्य कहते हैं—

§ १३. पहले संसार अवस्थामें अप्रशस्त करणोपशामनाके द्वारा जो कर्म उपशान्त हुए, पुनः तीन करणोंके द्वारा ग्रहण किये गये उस प्रकारसे परिणत उन कर्मप्रदेशोंका उस रूपसे जो विनाश होता है वही यहाँ देशकरणोपशामना कही जाती है, क्योंकि तीन करणोंका अपनेरूपसे विनाश यहाँ पर देशकरणोपशामनारूपसे विवक्षित है, इसलिए अप्रशस्त उपशामना आदि तीन करणोंका विनाश होने पर अपकर्षण, उत्कर्षण आदि क्रियाओंका सम्भव होना ही अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें देशकरणोपशामना संज्ञाको प्राप्त होता है यह यहाँ भावार्थ है।

§ १४. अथवा नपुंसक वेदके प्रदेशपुंजका उपशम करनेवालेके, जब तक वह सर्वोपशमको

ताव देसकरणोवसामणा णाम वुच्चदि। अधवा णवुंसयवेदे उवसंते सेसेसु च अणुवसंतेसु एसा देसकरणोवसामणा णाम भवदि। कुदो? करणपरिणामेहिं कम्मपदेसस्सेव तत्थोवसंतभावदंसणादो त्ति। एत्थ पुण पुव्वुत्तो चेव अत्थो पहाणभावेणावलंबेयव्वो, सव्वस्सेवाणंतरोवण्णासस्स सव्वकरणोवसामणाभेदस्स तत्थेवंतब्भावब्भुवगमादो। अण्णहा पसत्थोवसामणाभेदस्सेदस्स अप्पसत्थोवसामणासरूवदेसकरणोवसामणाए अंतब्भावविरोहादो।

नहीं प्राप्त होता, तब तक देशकरणोपशामना कही जाती है। अथवा नपुंसकवेदके उपशान्त होने पर और शेष चारित्रमोहनीय कर्मोके अनुपशान्त होने पर यह देशकरणोपशामना होती है, क्योंकि करण परिणामोंके द्वारा विवक्षित कर्मपुंजका ही वहाँ उपशमपना देखा जाता है। जयधवलाकार कहते हैं कि यहाँ पर तो पूर्वोक्त अर्थका ही प्रधानरूपसे अवलम्बन करना चाहिये, क्योंकि अनन्तर पूर्व जो कुछ कहा गया है वह सब सर्वकरणोपशामनाके भेदरूप है, अतः उसका उसीमें अन्तर्भाव स्वीकार किया गया है। अन्यथा प्रशस्त उपशामनाके भेदरूप इसका अप्रशस्त उपशामनास्वरूप देशकरणोपशामनामें अन्तर्भाव स्वीकार करने पर विरोध आता है।

विशेषार्थ—यहाँ करणोपशामनाके देशकरणोपशामना और सर्वकरणोपशामना ऐसे दो भेद करके उनके स्वरूप पर विशेष प्रकाश डाला गया है। संसार अवस्थामें अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचना आदि करणोंके माध्यमसे जो परिमित कर्मपुंजका उपशामनारूप होकर उदयके अयोग्य रहना वह देशकरणोपशामना है और दर्शनमोहनीयकी अपेक्षा अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचनाकी व्युच्छित्ति होनेके बाद अनिवृत्तिकरण परिणामोंके द्वारा दर्शनमोहनीयके पूरे कर्मपुंजको अन्तर्मुहूर्तकालके लिए उदयके अयोग्य करना सर्वोपशामना है। या चारित्रमोहनीयकी अपेक्षा अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचनाकी व्युच्छित्ति हो कर अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्पराय द्वारा चारित्रमोहनीयके पूरे कर्मपुंजको अन्तर्मुहूर्तकालके लिए उदयादिके अयोग्य करना सर्वोपशामना है। यहाँ दर्शनमोहनीयका उपशम होने पर भी उसमें संक्रमणकरण और अपकर्षणकरणकी प्रवृत्ति होने पर भी पूरा कर्मपुंज विवक्षित समयके लिए उदयके अयोग्य बना रहता है, इसलिए इसे सर्वोपशामनारूप माननेमें कोई बाधा नहीं आती। यह देशकरणोपशामना और सर्वकरणोपशामना इन दोनों में भेद है। किन्तु कुछ आचार्य देशकरणोपशामनाकी अन्यथा प्ररूपणा करते हुए कहते हैं कि (१) यद्यपि अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचनाकरणकी व्युच्छित्ति हो जाती है और ऐसा होने पर जो कर्मपुंज पहले उक्त रूपसे परिणत था वह अब उस रूपसे परिणत नहीं रहा यही यहाँ देशकरणोपशामना है। इस विवक्षामें उक्त अप्रशस्त तीन करणोंकी व्युच्छित्ति ही देशकरणोपशामना है। इससे अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें विवक्षित कर्मपुंजकी यथासम्भव अपकर्षण और उत्कर्षण आदि क्रिया सम्भव हो जाती है। (२) अथवा नपुंसकवेदका उपशम करते समय जब तक उसका पूरा उपशम नहीं होता तब तक उसकी अपेक्षा देशकरणोपशामना जानना चाहिये। (३) अथवा नपुंसकवेदका उपशम हो जाने पर आगे जब तक क्रमसे शेष चारित्रमोहनीयका पूरी तरहसे उपशम नहीं होता तब तक उपशमके जितने प्रकार बनते हैं वे सब देशकरणोपशामना है। किन्तु अन्य आचार्योंका यह कथन प्रकृतमें इसलिए ग्राह्य नहीं है, क्योंकि इससे प्रशस्त उपशामनाकी क्रमिक उपशामनाको अप्रशस्त उपशामना माननेका प्रसंग प्राप्त होता है, जो युक्त नहीं है, अतः सर्वोपशामनासे देशकरणोपशामनाको भिन्न ही जानना चाहिये।

§ १५. संपहि सव्वकरणोवसामणाए अत्थो वुच्चदे। तं जहा—सव्वेसिं करणाणमुवसामणा सव्वकरणोवसामणा। अप्पसत्थोवसामणा - णिधत्त - णिकाचणादिभेयभिण्णाणमट्ठण्हं करणाणमप्पप्पणो किरियाओ छंडेयूण पसत्थउवसामणाए जो सव्वोवसमो सा सव्वकरणोवसामणा त्ति वुत्तं होइ। जइ एवं, सव्वकरणोवसामणाए ओकड्डुणादिकिरियाणमभावे तत्थ अप्पसत्थउवसामणा-णिधत्त-णिकाचणाकरणाणमत्थित्तसंभवो पसज्जदे, ओकड्डुणादिकिरियाविरहस्स तब्भावोववत्तीदो। तहा च संते कधमेत्थ तेसिमुवसंतभावो त्ति? ण एस दोसो, अप्पसत्थोवसामणादिकरणपवेसपढमसमए चेव अच्चंतुच्छिण्णसंताणाणं उवरि पवुत्तिसंभवाभावेण तत्थ तेसिमुवसंतभावसिद्धीदो।

§ १६. ण च सव्वोवसामणाए ओकड्डुणादिविरहो अप्पसत्थोवसामणादिकरणववएसारिहो, संसारावत्थाए ओकड्डुणादिसंभवविसये केत्तियाणं पि परमाणूणं बज्झंतरंगकारणवसेण जो तब्भावपरमुहीभावो सो अप्पसत्थोसामणाकरणादिववएसारिहो, ण तदच्चंतविच्छेदविसयो त्ति अणब्भुवगमादो, तम्हा एवंविहा सव्वकरणोवसामणा त्ति णिरवज्जं।

---

§ १५. अब सर्वकरणोपशामनाका अर्थ कहते हैं। यथा—सब करणोंकी उपशामना सर्वकरणोपशामना है। अप्रशस्त उपशामना, निधत्त और निकाचना आदि भेदवाले आठ करणोंका अपनी-अपनी क्रियाको छोड़कर प्रशस्त उपशामनाके द्वारा जो सर्वोपशम होता है वह सर्वोपशामना है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यदि ऐसा है तो सर्वकरणोपशामनाके द्वारा अपकर्षण आदि क्रियाओंका अभाव होनेपर वहाँ अप्रशस्त उपशामना, निधत्त और निकाचना करणोंका अस्तित्व प्राप्त होता है, क्योंकि अपकर्षण आदि क्रियासे रहित उसकी उस प्रकारसे प्राप्ति बन जाती है। और ऐसी अवस्थामें यहाँ पर उनका उपशान्तपना कैसे सम्भव है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अप्रशस्त उपशामना आदिकी सन्तान अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेके प्रथम समयमें ही अत्यन्त उच्छिन्न हो जाती है, इसलिए ऊपर उनकी प्रवृत्ति सम्भव न होनेसे वहाँ उनके उपशान्तपनेकी सिद्धि हो जाती है।

§ १६. यदि कहा जाय कि सर्वोपशामनामें अपकर्षण आदिका विरह हो जाता है, इसलिए वह अप्रशस्त उपशामना करण आदि संज्ञाके योग्य है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि संसार अवस्थामें अपकर्षण आदिकी विषय प्रवृतिमें कितने ही कर्म परमाणुओंका बाह्य और अन्तरंग कारणोंके वशसे जो अपकर्षण आदिपनेसे विमुख होना है उसे अप्रशस्त उपशमनाकरण आदि संज्ञा देना योग्य है, किन्तु वह अत्यन्त विच्छेदका विषय नहीं होता ऐसा यहाँ स्वीकार किया गया है। इसलिए सर्वकरणोपशामना इस प्रकारकी है यह सब निर्दोष है।

विशेषार्थ—यहाँ सर्वोपशामनाके स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए जो कुछ कहा गया है उसका भाव यह है कि अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामना आदिकी व्युच्छित्ति हो जानेके बाद चारित्रमोहनीयकी विवक्षामें २१ प्रकृतियोंसम्बन्धी सब करणोंकी प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशामना होती है वह सर्वकरणोपशामना है। यद्यपि अनिवृत्तिकरणके पूर्व जो कर्मपुंज अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति और निकाचनारूप थे, यहाँ इन करणोंकी व्युच्छित्ति हो जाने पर उन कर्म-

§ १७. एवमेदेण सुत्तेण करणोवसामणाए दुविहत्तं पदुप्पाइय तत्थ ताव देसकरणोवसामणाए सण्णाभेदपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

***देसकरणोवसामणाए दुवे णामाणि—देसकरणोवसामणा त्ति वि अप्पसत्थउवसामणा त्ति वि।**

§ १८. तं जहा—संसारपाओग्गअप्पसत्थपरिणामणिबंधणत्तादो एसा अप्पसत्थोवसामणा त्ति भण्णदे। णेदिस्से तण्णिबंधणत्तमसिद्धं, अइतिव्वसंकिलेसवसेण अप्पसत्थोवसामणा-णिधत्त-णिकाचणकरणाणं पवुत्तिदंसणादो, खवगोवसमसेढीसु विसुद्धयरपरिणामेहिं विणासिज्जमाणाए एदिस्से अप्पसत्थभावसिद्धीए पडिबंधाभावादो य। तदो एवंविहा जा अप्पसत्थउवसामणा सा चेव देसकरणोवसामणा त्ति भण्णदे, तिस्से तव्ववएससिद्धीए पडिबंधाभावादो।

*** एसा कम्मपयडीसु**

§ १९. कम्मपयडीओ णाम विदियपुव्वपंचमवत्थुपडिबद्धो चउत्थो पाहुडसण्णिदो अहियारो अत्थि। तत्थेसा देसकरणोवसामणा दट्ठव्वा, सवित्थरमेदिस्से तत्थ

परमाणुओंका भी अपकर्षण और उत्कर्षण आदि क्रिया प्रारम्भ हो जाती है, किन्तु दसवें गुणस्थानके अन्त तक सभी करण प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशान्तभावको प्राप्त हो जाते हैं, इसलिए इसकी सर्वकरणोपशामना यह संज्ञा सार्थक है। दर्शनमोहनीयकी अपेक्षा उसे प्रशस्त करण परिणामों द्वारा उदयके अयोग्य करना मुख्य है।

§ १७. इस प्रकार इस सूत्र द्वारा करणोपशामनाके दो भेदोंका कथन करके वहाँ सर्व प्रथम देशकरणोपशामनाकी संज्ञाके भेदोंका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

***देशकरणोपशामनाके दो नाम हैं—देशकरणोपशामना और अप्रशस्त उपशामना।**

§ १८. यथा—संसारके योग्य अप्रशस्त परिणामनिमित्तक होनेसे यह अप्रशस्त उपशामना कही जाती है। यह संसारप्रायोग्य अप्रशस्त परिणामनिमित्तक होती है यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि अतितीव्र संक्लेशके कारण अप्रशस्त उपशामना, निधत्त और निकाचनाकरणोंकी प्रवृत्ति देखी जाती है। तथा क्षपकश्रेणि और उपशमश्रेणिमें विशुद्ध परिणामोंके निमित्तसे यह विनाशको प्राप्त हो जाती है, इसलिए इसका अप्रशस्तपनेकी सिद्धिमें प्रतिबन्धका अभाव है। इसलिए इस प्रकारकी जो अप्रशस्त उपशामना है वही देशकरणोपशामना कही जाती है, क्योंकि उसके उक्त संज्ञाकी सिद्धिमें प्रतिबन्धका अभाव है।

विशेषार्थ—संसार अवस्थामें जो उपशामनाकरण होता है, एक तो वह अप्रशस्त परिणामोंको निमित्त कर होता है, दूसरे कुछ कर्मपरमाणुओंमें ही उसका व्यापार होता है, इस लिए इसके अप्रशस्त उपशामना या देशकरणोपशामना ये दोनों नाम सार्थक हैं।

*** यह कर्मप्रकृतिप्राभृतमें अवलोकनीय है।**

§ १९. दूसरे पूर्वकी पांचवीं वस्तुका जो चौथा प्राभृत नामक अधिकार है उसकी कर्मप्रकृति

पवंचेणपरूविदत्तादो। कथमेत्थ एगस्स कम्मपयडिपाहुडस्स कम्मपयडीसु त्ति बहुवयण णिद्देसो त्ति णासंकणिज्जं, एगस्स वि तस्स कदि-वेदयणादिअवंतरअहियारभेदावेक्खाए बहुवयणणिद्देसाविरोहादो।

§ २०. संपहि सव्वकरणोवसामणाए सण्णाभेदपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** जा सा सव्वकरणोवसामणा तिस्से वि दुवे णामाणि सव्वकरणोवसामणा त्ति वि पसत्थकरणोवसामणा त्ति वि।**

§ २१. एत्थ सव्वकरणोवसामणा त्ति पढमा सण्णा पुव्वमेव वक्खाणिदा। पसत्थकरणोवसामणा त्ति वि एसा सण्णा सुप्पसिद्धत्था चेव, पसत्थयरकरणपरिणामणिबंधणाए तिस्से तव्ववएससिद्धीए पडिबंधाभावादो। संपहि एवमुवसामणाए अणेयभेयसंभवे तत्थ केण पयदमिच्चासंकाए णिरारेगीकरणट्ठमिदमाह—

*** एदाए एत्थ पयदं।**

§ २२. एदाए अणंतरणिद्दिट्ठाए सव्वकरणोवसामणाए एत्थ कसायोवसामणापरूवणावसरे पयदमहिकयं दट्ठव्वं, अकरणोवसामणाए देसकरणोवसामणाए च एत्थ पओजणाभावादो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवमुवसामणा कदिविधा त्ति

संज्ञा है। यह देशकरणोपशामना जाननी चाहिये, क्योंकि वहाँ इसका विस्तारके साथ प्रबन्धरूपसे प्ररूपण किया गया है।

शंका—कर्मप्रकृतिप्राभृत एक है उसका चूर्णिसूत्रमें 'कम्मपयडीसु' इस प्रकार बहुवचनरूपसे निर्देश कैसे किया गया है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि यद्यपि कर्मप्रकृतिप्राभृत एक है तो भी उसका कृति, वेदना आदि अवान्तर अधिकारोंके भेदोंकी विवक्षामें बहुवचननिर्देश करनेमें कोई विरोध नहीं आता।

§ २०. अब सर्वकरणोपशामनाके संज्ञाभेदोंका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जो वह सर्वकरणोपशामना है उसके दो नाम हैं—सर्वकरणोपशामना और प्रशस्तकरणोपशामना।**

§ २१. यहाँ सर्वकरणोपशामना इस संज्ञाका पहले ही व्याख्यान कर आये हैं। तथा प्रशस्तकरणोपशामना यह संज्ञा भी प्रसिद्ध अर्थवाली ही है, क्योंकि यह प्रशस्त करणपरिणामोंके निमित्तसे होती है, इसलिये उसकी उक्त संज्ञाकी सिद्धिमें प्रतिबन्धका अभाव है। अब इस प्रकार उपशामनाके अनेक भेद सम्भव होनेपर उनमेंसे प्रकरणप्राप्त कौन है ऐसी आशंकाका निराकरण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** यही यहाँ प्रकृत है।**

§ २२. पूर्वमें जो सर्वोपशामनाका कथन कर आये हैं, यहाँ कषायोंकी उपशामनाकी प्ररूपणाके अवसर पर वही प्रकृत है अर्थात् अधिकृत है ऐसा यहाँ समझना चाहिये, क्योंकि अकरणोपशामना और देशकरणोपशामनाका यहाँ प्रयोजन नहीं है यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार 'उपशमना कितने प्रकारकी है' इस गाथाके प्रथम अवयवकी अर्थप्ररूपणा समाप्त हुई।

एदस्स गाहापढमावयवस्स अत्थपरूवणा समत्ता। संपहि पढमगाहाविदियावयवस्स अत्थविहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** उवसामो कस्स कस्स कम्मस्सेत्ति विहासा।**

§ २३. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ २४. सुगममेदं पि पुच्छासुत्तं।

*** मोहणीयवज्जाणं कम्माणं णत्थि उवसामो।**

§ २५. कुदो? सहावदो चेव। णाणावरणादिकम्माणमुवसामणपरिणामस्स संभवाणुवलंभादो। अकरणोवसामणा देसकरणोवसामणा च तत्थ वि अत्थि त्ति णासंकणिज्जं, पसत्थकरणोवसामणाए एत्थ पयदत्तादो। तम्हा सेसकम्मपरिहारेण मोहणीयस्सेव पसत्थोवसामणाए उवसामगो होदि त्ति घेत्तव्वं। तत्थ वि दंसणमोहणीयपरिहारेण चरित्तमोहणीयस्सेव उवसामगो होदि, तेणेत्थ पयदत्तादो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

*** दंसणमोहणीयस्स वि णत्थि उवसामो।**

§ २६. कुदो? तस्स पुव्वमेव उवसंतत्तादो खीणत्तादो वा, तेणेत्थहियारा-

---

अब प्रथम गाथाके दूसरे अवयवकी अर्थप्ररूपणाका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध है—

*** उपशम किस किस कर्मका होता है इस पदकी विभाषा करते हैं।**

§ २३. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २४. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

*** मोहनीयकर्मको छोड़कर शेष कर्मोंका उपशम नहीं होता।**

§ २५. क्योंकि स्वभावसे ही शेष कर्मोंका उपशम नहीं होता, क्योंकि ज्ञानावरणादि कर्मोंके उपशमरूप परिणामकी सम्भावना नहीं पाई जाती।

शंका—उन कर्मोंकी अकरणोपशामना और देशकरणोपशामना तो होती है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि प्रशस्त करणोपशामना यहाँ अधिकृत है, इसलिये शेष कर्मोंका निराकरण करके मोहनीयकर्मका ही प्रशस्तोपशमना द्वारा उपशम होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। उसमें भी प्रकृतमें अनधिकृत दर्शनमोहनीयके निषेध द्वारा चारित्रमोहनीयका ही उपशम होता है, क्योंकि वह यहाँ अधिकृत है ऐसा ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** यहाँ दर्शनमोहनीयका भी उपशम नहीं होता।**

§ २६. क्योंकि वह पहले ही उपशान्त अथवा क्षीण हो गई है, इसलिये यहाँ उसका

भावादो च। तदो संते वि दंसणमोहणीयस्स उवसमसंभवे सो एत्थ ण विवक्खिओ त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

*** अणंताणुबंधीणं पि णत्थि उवसामो।**

§ २७. कुदो? तेसिं पुव्वमेव विसंजोयणं कादूण पच्छा उवसमसेढिसमारोहण-संभवादो। तदो विसंयोजणपयडीणमणंताणुबंधीणमुवसामणाए णत्थि संभवो त्ति सिद्धं।

*** बारसकसाय-णवणोकसायवेदणीयाणमुवसामो।**

§ २८. कुदो? उवसमसेढीए एदेसिं कम्माणं सव्वोवसामणाए परिप्फुडमुव-लंभादो। एवमुवसामो कस्स कस्स कम्मस्सेत्ति गाहासुत्तविदियावयवस्स अत्थविहासा समत्ता। संपहि गाहापच्छद्धस्स अत्थविहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** कं कम्मं उवसंतं अणुवसंतं च कं कम्मेत्ति विहासा।**

§ २९. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ ३०. सुत्तमेदं पि पुच्छावक्कं।

अधिकार नहीं है। अतः दर्शनमोहनीयका उपशम सम्भव होनेपर भी वह यहाँ विवक्षित नहीं है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

*** अनन्तानुबन्धियोंका भी उपशम नहीं होता।**

§ २७. क्योंकि उनकी पहले ही विसंयोजना करके उपशमश्रेणिपर आरोहण करना सम्भव है। इसलिए विसंयोजनारूप अनन्तानुबन्धी प्रकृतियोंकी उपशामना सम्भव नहीं है यह बात स्वयंसिद्ध है।

*** बारह कषाय और नौ नोकषायवेदनीयका उपशम होता है।**

§ २८. क्योंकि उपशमश्रेणिमें इन कर्मोंका सर्वोपशम स्फुटरूपसे उपलब्ध होता है। इस प्रकार 'किस-किस कर्मका उपशम होता है' गाथासूत्रके इस दूसरे अवयवके अर्थका विशेष विवरण समाप्त हुआ। अब गाथाके उत्तरार्धके अर्थका विशेष व्याख्यान करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** 'कौन कर्म उपशान्त होते हैं और कौन कर्म अनुपशान्त रहते हैं' इसकी विभाषा की जाती है।**

§ २९. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ ३०. यह पृच्छासूत्र भी सुगम है।

*** पुरिसवेदेण उवट्ठिदस्स पढमं ताव णवुंसयवेदो उवसमेदि, सेसाणि कम्माणि अणुवसमाणि ।**

§ ३१. किमट्ठमेसा उवसंताणुवसंतकम्मपरूवणा आढत्तेत्ति णासंकणिज्जं, सव्वेसिं कसाय-णोकसायाणमक्कमोवसामणापडिसेहमुहेण कमोवसमपदंसणट्ठमेदिस्से परूवणाए आढत्तादो । तं कधं ? पुरिसवेदोदएण उवट्ठिदो जो उवसामगो तस्स पुव्वमेव ताव णवुंसयवेदो उवसमेदि, ताधे पुण सेसाणि कम्माणि अणुवसंताणि । कुदो ? तदुवसमणिबंधणविसोहीणमज्ज वि समुप्पत्तीए असंभवादो । ण चाणंतगुण-विसोहीहिं उवसमिज्जमाणाणं कम्माणमणंतगुणहीणहेट्ठिमविसोहिविसए उवसम-सब्भावो, विप्पडिसेहादो ।

*** तदो इत्थिवेदो उवसमदि ।**

§ ३२. णवुंसयवेदे उवसंते तदो पच्छा अंतोमुहुत्तं गंतूण इत्थिवेदो उवसमदि, तदुवसमणिबंधणाणं विसोहीणं तत्थ संपुण्णत्तदंसणादो । एवमुवरिमसुत्ते वि कारण-णिद्देसो अणुगंतव्वो ।

*** तदो सत्तणोकसाया उवसामेदि ।**

*** पुरुषवेदसे उपशमश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके सबसे पहले नपुंसकवेदका उपशम होता है, उस समय शेष कर्म अनुपशान्त रहते हैं ।**

§ ३१. शंका—यहाँ उपशान्त और अनुपशान्त होनेवाले कर्मोंकी प्ररूपणा किसलिए स्वीकार की गई है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि सब कषायों और नोकषायोंकी अक्रमसे उपशामनाके निषेध द्वारा क्रमसे उपशमको दिखलानेके लिए यह प्ररूपणा स्वीकार की गई है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि पुरुषवेदके उदयसे श्रेणिपर चढ़कर जो उपशम करनेवाला जीव है उसके सबसे पहले नपुंसकवेदका ही उपशम होता है । परन्तु उस समय शेष कर्म अनुपशान्त रहते हैं, क्योंकि उनके उपशमनकी कारणभूत विशुद्धियाँ अभी भी उत्पन्न नहीं हुई हैं । और जो कर्म अनन्तगुणी विशुद्धिसे उपशमभावको प्राप्त होते हैं उनका अनन्तगुणहीन अधस्तन विशुद्धिके स्थानमें उपशमका सद्भाव नहीं हो सकता, क्योंकि इसका निषेध है ।

*** उसके बाद स्त्रीवेदका उपशम होता है ।**

§ ३२. नपुंसकवेदके उपशान्त हो जानेपर तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त जाकर स्त्रीवेदका उपशम होता है, क्योंकि उस समय स्त्रीवेदकी कारणभूत विशुद्धियाँ वहाँ पूरी देखी जाती है । इसी प्रकार आगेके सूत्रोंमें भी कारणका निर्देश जान लेना चाहिये ।

*** उसके बाद सात नोकषायोंका उपशम होता है ।**

§ ३३. सुगममेदं । णवरि छण्णोकसाएसु उवसंतेसु पच्छा समयूणदोआवलिमेत्तकालचरिमसमए पुरिसवेदणवकबंधो उवसमदि त्ति वत्तव्वं ।

*** तदो तिविहो कोहो उवसमदि ।**

*** तदो तिविहो माणो उवसमदि ।**

*** तदो तिविहा माया उवसमदि ।**

§ ३४. एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि सुबोहाणि ।

*** तदो तिविहो लोहो उवसमदि किट्टिवज्जो ।**

§ ३५. एदं पि सुगमं । अणियट्टिबादरसंपराइयचरिमसमए किट्टिवज्जस्स तिविहस्स लोहस्स सव्वोवसामणापरिणामो होदि त्ति पुव्वमेव परूवदत्तादो ।

*** किट्टीसु लोहसंजलणमुवसमदि ।**

§ ३६. गयत्थमेदं पि सुत्तं, सुहुमसांपराइयचरिमसमए सुहुमकिट्टीसरूवेण लोहसंजलणमुवसामेदि त्ति पुव्वमेव परूविदत्तादो ।

*** तदो सव्वं मोहणीयं उवसंतं भवदि ।**

§ ३७. कुदो ? किट्टीसु उवसामिदासु णिरवसेसस्स मोहणीयस्स उवसंतभावेणावट्ठाणदंसणादो । एवमेत्तिएण पबंधेण पढमगाहाए अत्थविहासं समाणिय संपहि

---

§ ३३. यह सूत्र सुगम हे । इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंका उपशम हो जानेपर तदनन्तर एक समय कम दो आवलिप्रमाण कालके अन्तिम समयमें पुरुषवेदके नवकबन्धका उपशम होता है ऐसा कथन करना चाहिये ।

*** उसके बाद तीन क्रोधों का उपशम होता है ।**

*** उसके बाद तीन मानोंका उपशम होता है ।**

*** उसके बाद तीन मायाका उपशम होता है ।**

§ ३४. ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

*** उसके बाद कृष्टियोंको छोड़कर तीन लोभोंका उपशम होता है ।**

§ ३५. यह सूत्र भी सुगम है। अनिवृत्तिबादरसाम्परायके अन्तिम समयमें कृष्टियोंको छोड़कर तीन प्रकारके लोभोंकी सर्वोपशामनारूप पर्याय हो जाती है यह पहले ही कह आये हैं ।

*** तदनन्तर कृष्टिगत लोभसंज्वलनका उपशम होता है ।**

§ ३६. यह सूत्र भी गतार्थ है, क्योंकि सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें सूक्ष्म कृष्टिरूपसे लोभसंज्वलनका उपशम होता है यह पहले ही कह आये हैं ।

*** ऐसा होनेपर सम्पूर्ण मोहनीयकर्म उपशमभावको प्राप्त हो जाता है ।**

§ ३७. क्योंकि कृष्टियोंके उपशमित हो जानेपर सम्पूर्ण मोहनीयकर्मका उपशमरूपसे अवस्थान देखा जाता है । इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा प्रथम गाथाके अर्थका व्याख्यान समाप्त

विदियगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाह—

*** कदिभागुवसामिज्जदि संकममुदीरणा च कदिभागेत्ति विहासा ।**

§ ३८. एसा बिदियगाहा सपुव्वपच्छद्धा णवुंसयवेदादिपयडीणं समयं पडि उवसामिज्जमाणपदेसग्गस्स ट्ठिदि-अणुभागाणं च पमाणावहारणट्ठं पुणो तप्पसंगेणेव बज्झमाण-वेदिज्जमाणसंकामिज्जमाणोवसामिज्जमाणट्ठिदि-अणुभागपदेसाणमप्पाबहुअ-विहाणं च समोइण्णं । एवं परूविदसंबंधाए एदिस्से गाहाए अत्थविहासा एण्हिमहि-कीरदि त्ति एदेण सुत्तेण जाणाविदं ।

*** तं जहा ।**

§ ३९. सुगममेदं पुच्छावक्कं । तत्थ ताव 'कदिभागुवसामिज्जदि' त्ति एदस्स पढमावयवस्स अत्थविहासणट्ठमुवरिमं पबंधमाढवेइ—

*** जं कम्ममुवसामिज्जदि तमंतोमुहुत्तेण उवसामिज्जदि । जस्स जं पढमसमए उवसामिज्जदि पदेसग्गं तं थोवं । विदियसमए उवसामिज्जदि पदेसग्गमसंखेज्जगुणं । एवं गंतूण चरिमसमए पदेसग्गस्स असंखेज्जा भागा उवसामिज्जंति ।**

करके अब अवसरप्राप्त दूसरी गाथाके अर्थका व्याख्यान करते हुए आगेके प्रबन्धका कथन करते हैं—

*** 'कितने भागको उपशमाता है और कितने भागका संक्रम और उदीरणा करता है' इसकी विभाषा की जाती है ।**

§ ३८. पूर्वार्ध और पश्चिमार्धके साथ यह दूसरी गाथा नपुंसकवेद आदि प्रकृतियोंसम्बन्धी प्रत्येक समयमें उपशमित होनेवाले प्रदेशपुंजका कथन करनेके लिए तथा स्थिति और अनुभागके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए तथा उसी प्रसंगसे बन्धको प्राप्त होनेवाले, उदयको प्राप्त होनेवाले, संक्रमको प्राप्त होनेवाले और उपशमको प्राप्त होनेवाले स्थिति, अनुभाग और प्रदेशों-के अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आई है । इस प्रकार जिसके सम्बन्धकी प्ररूपणा कर दी गई है ऐसी इस गाथाका विशेष व्याख्यान इस समय अधिकृत है यह इस सूत्रसे जाना जाता है ।

*** वह जैसे ।**

§ ३९. यह पृच्छावाक्य सुगम है । वहाँ सर्व प्रथम 'कितने भागको उपशमाता है' गाथाके इस प्रथम पादके अर्थकी विशेष व्याख्या करनेके लिए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** जिस कर्मको उपशमाया जाता है उसे अन्तर्मुहूर्तके द्वारा उपशमाता है । जिस कर्मका जो प्रदेशपुंज प्रथम समयमें उपशमाया जाता है वह प्रदेशपुंज सबसे थोड़ा है । दूसरे समयमें जो प्रदेशपुंज उपशमाया जाता है वह असंख्यातगुणा है । इस प्रकार जाकर अन्तिम समयमें प्रदेशपुंजका असंख्यात बहुभाग उपशमाया जाता है ।**

§ ४०. णवुंसयवेदादीणमण्णदरस्स णिरुद्धकम्मस्स अंतोमुहुत्तेण उवसामिज्जमाणस्स पढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमयो त्ति ताव समए उवसामिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स असंखेज्जगुणाए सेढीए उवसामणा पयट्टदि त्ति भणिदं होदि। तदो दुचरिमादिहेट्ठिमसमएसु असंखेज्जदिभागो उवसामिज्जदि। चरिमसमए च असंखेज्जा भागा पदेसग्गस्स उवसामिज्जंति त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो।

*** एवं सव्वकम्माणं।**

§ ४१. णवुंसयवेदादिसव्वकम्माणं एसो चेव कमो, णाण्णारिसो त्ति भणिदं होइ।

§ ४२. एवमुवसामिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि ट्ठिदीणमुवसामणा कधं पयट्टदि त्ति एदस्स णिण्णयकरणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

*** ट्ठिदीओ उदयावलियं बंधावलियं च मोत्तूण सेसाओ सव्वाओ समए समए उवसामिज्जंति।**

---

§ ४०. नपुंसकवेद आदि जो अन्यतर विवक्षित कर्मसम्बन्धी प्रदेशपुंज अन्तर्मुहूर्तके द्वारा उपशमाया जाता है उस उपशमाये जानेवाले प्रदेशपुंजकी प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समयतक प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे उपशामना प्रवृत्त होती है यह उक्त चूर्णिसूत्रका तात्पर्य है। इसलिए सिद्ध हुआ कि द्विचरम समयसे पूर्वके सब समयोंमें असंख्यातवाँ भागप्रमाण प्रदेशपुंज उपशमाया जाता है और अन्तिम समयमें प्रदेशपुंजका असंख्यात बहुभाग उपशमाया जाता है। यह इस चूर्णिसूत्रका भावार्थ है।

*** इसी प्रकार सब कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये।**

§ ४१. नपुंसकवेद आदि सब कर्मोंका यही क्रम है, अन्य प्रकारका नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—यहाँ प्रथम गाथाके उत्तरार्धकी प्ररूपणा करते हुए चारित्रमोहनीयकी २१ प्रकृतियोंकी किस क्रमसे उपशामना होती हैं इसे स्पष्ट करते हुए सर्व प्रथम सामान्यसे सभी २१ प्रकृतियोंकी उपशामना पर विशेष प्रकाश डालते हुए बतलाया गया है कि जिस कर्मकी उपशामना होती है उसमें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। उसमें भी प्रथम समयमें सबसे कम प्रदेशपुंजकी उपशम्मना होती है। आगे अन्तर्मुहूर्त काल तक प्रत्येक समयमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजकी उपशामना होती जाती है। और इस प्रकार एक अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर तत्कर्मसम्बन्धी पूरा प्रदेशपुंज उपशामित हो जाता है। जो जीव क्रोधादि कषायोंमेंसे किसी एक कषाय और पुरुषवेदकी अपेक्षा श्रेणिपर आरोहण करता है उसके सर्व प्रथम नपुंसकवेदकी उपशामना होती है। इसके बाद क्रमसे स्त्रीवेद आदिकी उपशामना होती है। क्रमका निर्देश पहले ही कर आये हैं।

§ ४२. इस प्रकार उपशमको प्राप्त होनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब उक्त कर्मोंकी स्थिति उपशामना कैसे प्रवृत्त होती है इस प्रकार इस बातका निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** उदयावलि और बन्धावलिको छोड़कर शेष सब स्थितियाँ प्रत्येक समयमें उपशमित होती जाती हैं।**

§ ४३. सव्वेसिं कम्माणं सव्वाओ ट्ठिदीओ समए समए उवसामिज्जंति त्ति एत्थ संबंधो। किमविसेसेण? नेत्याह—उदयावलियं बंधावलियं च मोत्तूण। उदयावलियपविट्ठाणं ताव ट्ठिदीणं णत्थि उवसामणा। कुदो? उदयावलियपविट्ठस्स कम्मस्स कम्मोदयं मोत्तूण तत्थुवसामणादिकिरियाणं पवुत्तिविरोहादो। एदेण सोदयाणं पयडीणं पढमट्ठिदीए सव्विस्से चेव उवसामणा णत्थि त्ति एसो वि अत्थो सूचिदो दट्ठव्वो, तिस्से णियमेणुदयावलियं पविसमाणाए उदयावलियग्गहणेणेव संगहे विरोहाभावादो। जासिं पयडीणं बंधो अत्थि तासिं बंधावलियं पि मोत्तूण बंधावलियादिक्कंतसमयपबद्धाणं सव्वाओ ट्ठिदीओ समयं पडि उवसामेदि त्ति घेत्तव्वं, अणइक्कंतबंधावलियाणं ट्ठिदीणं उवसामणादिकरणाणमप्पाओग्गत्तादो।

§ ४४. संपहि अणुभागोवसामणा कधमेत्थ पयट्टदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** अणुभागाणं सव्वाणि फद्दयाणि सव्वाओ वग्गणाओ उवसामिज्जंति।**

---

§ ४३. सभी कर्मोंकी सब स्थितियाँ प्रत्येक समयमें उपशमित होती जाती हैं ऐसा यहाँ चूर्णिसूत्रके पदोंका सम्बन्ध करना चाहिये।

शंका—क्या अविशेषरूपसे सभी स्थितियाँ उपशमित होती जाती हैं?

समाधान—नहीं, आगे उसे ही स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि उदयावलि और बन्धावलिको छोड़कर शेष सभी स्थितियाँ प्रत्येक समयमें उपशमित होती जाती हैं।

उदयावलिमें प्रविष्ट हुई स्थितियोंकी तो उपशामना होती नहीं, क्योंकि उदयावलिमें प्रविष्ट हुए कर्मके उदयको छोड़कर वहाँ उपशमनादि क्रियाओंकी प्रवृत्ति होनेमें विरोध है। इस वचनसे, जो सोदय प्रकृतियाँ हैं उनकी सम्पूर्ण प्रथम स्थितिकी भी उपशामना नहीं होती, यह अर्थ भी सूचित किया गया जानना चाहिये, क्योंकि उसका नियमसे उदयावलिमें प्रवेश होता है, इसलिये उदयावलिके ग्रहण करनेसे ही उसका संग्रह हो जाता है इसमें कोई विरोध नहीं आता। तथा जिन प्रकृतियोंका बन्ध होता है उनकी बन्धावलिको छोड़कर बन्धावलि व्यतीत होनेके बाद समयप्रबद्धोंकी सम्पूर्ण स्थितियोंको प्रत्येक समयमें उपशमाता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि जिन स्थितियोंकी बन्धावलि व्यतीत नहीं हुई है वे उपशामनाकरण आदिके अयोग्य हैं।

विशेषार्थ—अन्तर करनेवाला जीव जिस कषाय और वेदका वेदन करता है उसकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम स्थिति स्थापित करता है। यतः यह प्रथम स्थिति क्रमसे उदयावलिमें प्रवेश करती जाती है, इसलिए उदयावलिके साथ एक तो इन स्थितियोंकी उपशामना नहीं होती। दूसरे प्रति समय जिन कर्मोंका नया बन्ध होता है उनके उन समयप्रबद्धोंकी भी बन्धावलि कालके भीतर उपशमना नहीं होती यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४४. अब अनुभागोपशामना यहाँ कैसे प्रवृत्त होती है ऐसी आशंकाके दूर करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अनुभागके सब स्पर्धक और सब वर्गणाऐं उपशमाई जाती हैं।**

§ ४५. कुदो ? सव्वासु ट्ठिदीसु सव्वेसिं अणुभागफद्दयाणं सव्ववग्गणाणं च संभवदंसणादो। एदस्स भावत्थो—सव्वाणुभागफद्दयाणं सव्ववग्गणाणं च तत्थ एक्केक्कस्स फद्दयस्स एक्केक्किस्से वग्गणाए च जइ वि एगेगपरमाणुपदेसाणुभागमुवसमेदि तो वि सव्वाणि फद्दयाणि सव्ववग्गणाओ च उवसमेदि त्ति वुच्चदे। सरिसधणियपरमाणू पुणो वि अत्थि चेव कारणं, पढमसमयम्मि सरिसधणियवग्गणाणं असंखेज्जदिभागं चेव उवसामेदि त्ति। तदो सव्वाणि फद्दयाणि सव्ववग्गणाओ च पडिसमयमुवसामिज्जंति त्ति भणिदं। एत्थ बंधावलियमुदयावलियं च मोत्तूणेत्ति ण वत्तव्वं, सव्वेसिं ट्ठिदिविसेसेसु सव्वासिं फद्दयवग्गणाणं संभवे तहाविहवयणविसेसस्स फलविसेसाणुवलंभादो। एवं ताव 'कदिभागमुवसामिज्जदि' त्ति एदस्स पदस्स 'ट्ठिदि-अणुभागे पदेसग्गे' इच्चेदेण चरिमावयवेण कयाहिसंबंधस्स अत्थपरूवणा कया।

§ ४६. संपहि 'संकमणमुदीरणा च कदिभागो' त्ति एदस्स सुत्तावयवस्स सुत्तसूचिदमत्थविवरणं कस्सामो। तं जहा—पदेससंकमो ताव अबज्झमाणपयडीणं समयं पडि असंखेज्जगुणो च सेढीए दट्ठव्वो। कारणं, सेढिं मोत्तूण हेट्ठा सव्वत्थ अबज्झमाणाणमप्पसत्थपयडीणं विज्झादसंकमो होदि। सेढीए पुण गुणसंकमो होदि त्ति।

---

§ ४५. क्योंकि सब स्थितियोंमें सब अनुभागसम्बन्धी स्पर्धकों और सब वर्गणाओंकी उपशमनक्रिया सम्भव प्रतीत होती है। इसका भावार्थ—सब अनुभागस्पर्धक और सब वर्गणाओंके मध्य वहाँ एक-एक स्पर्धक और एक-एक वर्गणाके यद्यपि एक-एक परमाणुप्रदेशसम्बन्धी अनुभागको उपशमाता है तो भी सभी स्पर्धकों और सभी वर्गणाओंको उपशमाता है ऐसा कहा जाता है। सदृश धनवाले परमाणुओंकी अपेक्षा फिर भी कारण है कि प्रथम समयमें सदृश धनवाली वर्गणाओंके असंख्यातवें भागको ही उपशमाता है, इसलिये सभी स्पर्धक और सभी वर्गणाएँ प्रत्येक समयमें उपशमाई जाती हैं यह कहा है। यहाँपर बन्धावलि और उदयावलिको छोड़कर ऐसा नहीं कहना चाहिये, क्योंकि सभी स्थितिविशेषोंमें सभी स्पर्धक और वर्गणाएँ सम्भव हैं, इसलिए उक्त प्रकारके वचनविशेषका कोई फल विशेष नहीं पाया जाता। इस प्रकार 'कदिभागमुवसामिज्जदि' इस पदका 'ट्ठिदि-अणुभागे पदेसग्गे' इस पदके साथ सम्बन्ध करके अर्थकी प्ररूपणा की।

विशेषार्थ—यहाँ प्रत्येक समयमें कितने अनुभागको उपशमाता है इसका विचार करते हुए बतलाया है कि जितने भी स्थितियोंके भेद हैं उन सबमें सदृश धनवाली वर्गणाएँ होती हैं, इसलिए यहाँ बन्धावलि और उदयावलिको छोड़कर ऐसा कहनेका प्रयोजन नहीं रहता। और ऐसी अवस्थामें सदृश धनवाली वर्गणाओंके असंख्यातवें भागको उपशमाता है ऐसा होनेसे अनुभागसम्बन्धी सभी स्पर्धकों और सभी वर्गणाओंको उपशमाता है यह कथन बन जाता है।

§ ४६. अब 'संकममुदीरणा च कदिभागो' गाथासूत्रके इस अवयवसम्बन्धी गाथासूत्रसे सूचित अर्थका विशेष व्याख्यान करते हैं। वह जैसे—अबध्यमान प्रकृतियोंका प्रदेशसंक्रम प्रत्येक समयमें श्रेणिरूपसे असंख्यातगुणा जानना चाहिये, क्योंकि श्रेणिको छोड़कर नीचे सर्वत्र अबध्यमान अप्रशस्त प्रकृतियोंका विध्यातसंक्रम होता है। परन्तु श्रेणिमें गुणसंक्रम होता है। बध्यमान

बज्झमाणाओ पयडीओ जाव गुणसंकमे ण पडिच्छंति ताव तासिं पदेसग्गमधापवत्त-संकमेण समयं पडि विसेसाहियं चेव संकामिज्जदि।

§ ४७. संपहि एदस्स फुडीकरणं वत्तइस्सामो। तं जहा—जं वा तं वा बज्झ-माणमेगं कम्मं पुरिसवेदादिसु णिरुद्धं कायव्वं। तत्थ अण्णपयडिपदेसग्गं गुणसंकमेण गच्छमाणं पि अत्थि। पुणो तस्सेव पढमट्ठिदिसंभवे अप्पणो पदेसग्गं गुणसेढिसरूवेण ट्ठिदं समयं पडि उदये गलमाणं पि अत्थि। एत्थ जइ पडिच्छिज्जमाणदव्वादो समयं पडि गलमाणदव्वं बहुअं होज्ज तो बज्झमाणाणं पयडीणं पदेसग्गं परपयडीसु संकामिज्जमाणं विसेसहीणं चेव होदि, समयं पडि हीयमाणसंतकम्मादो गच्छमाणदव्वस्स वि तहाभावसिद्धीए णिप्पडिबंधमुवलंभादो। अह गलमाणदव्वादो समयं पडि पडिच्छिज्जमाणदव्वं बहुअं होज्ज तो समयं पडि विसेसा-हियकमेण संतकम्मं वड्ढमाणं गच्छदि त्ति। तत्तो परपयडीसु संकामिज्जमाणदव्वं पि तहा चेव पयट्टदि त्ति विसेसाहिओ चेव संकमो जायदे। एत्थ पुण समयं पडि गलमाणदव्वादो पडिच्छिज्जमाणदव्वं गुणसंकमपाहम्मेणासंखेज्जगुणं चेव होदि। तदो संकमिददव्वं पि विसेसाहियं चेव होदि त्ति णिच्छेयव्वं।

प्रकृतियाँ जबतक गुणसंक्रमको नहीं प्राप्त होती हैं तबतक उनका प्रदेशपुंज अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा प्रत्येक समयमें विशेष अधिकरूपसे संक्रमित होता है।

§ ४७, अब इसका स्पष्टीकरण करके बतलाते हैं। वह जैसे—प्रकृतमें पुरुषवेदादिकमेंसे कोई एक कर्म विवक्षित करना चाहिये। वहाँ अन्य प्रकृतियोंका प्रदेशपुंज गुणसंक्रम द्वारा जाता हुआ भी है। पुनः उसीकी प्रथम स्थिति होनेपर गुणश्रेणीरूपसे स्थित अपना प्रदेशपुंज प्रत्येक समयमें उदयद्वारा जीर्ण होता हुआ भी है, यहाँपर यदि संक्रमित होनेवाले द्रव्यसे प्रत्येक समयमें गलित होनेवाला द्रव्य बहुत होवे तो बध्यमान प्रकृतियोंका पर प्रकृतियोंमें संक्रमित होनेवाला प्रदेशपुञ्ज विशेषहीन ही होता है, क्योंकि प्रत्येक समयमें कम होनेवाले सत्कर्ममेंसे जानेवाला द्रव्य भी उस प्रकारसे बन जाता है इसकी सिद्धिमें कोई बाधा नहीं पाई जाती। और यदि गलनेवाले द्रव्यसे प्रत्येक समयमें संक्रमित होनेवाला द्रव्य बहुत होवे तो प्रत्येक समयमें सत्कर्म विशेष अधिक क्रमसे वृद्धिको प्राप्त होता जाता है। इसलिए परप्रकृतियोंमें संक्रमित होनेवाला द्रव्य भी उसीप्रकार प्रवृत्त होता है, अतः संक्रममें विशेष अधिक ही हो जाता है। परन्तु यहाँपर प्रत्येक समयमें गलनेवाले द्रव्यसे परप्रकृतियोंमें संक्रमित होनेवाला द्रव्य गुणसंक्रमके माहात्म्यवश असंख्यातगुणा ही होता है, इसलिए संक्रमित होनेवाला द्रव्य भी विशेष अधिक ही होता है ऐसा निश्चय करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ पर किन प्रकृतियोंका कितना संक्रम और उदीरणा होती हैं इसका विचार करते हुए बतलाया है कि जो यहाँ पर नहीं बँधनेवाली अप्रशस्त प्रकृतियाँ हैं उनका प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणा प्रदेशसंक्रम जानना चाहिये, क्योंकि जब तक यह जीव श्रेणिपर आरोहण नहीं करता तब तक सर्वत्र नहीं बँधनेवाली उक्त प्रकृतियोंका विध्यातसंक्रम होता है और श्रेणि आरोहण करनेपर गुणसंक्रम होने लगता है। यह तो अप्रशस्त प्रकृतियों सम्बन्धी कथन है।

§ ४८. संपहि केसिं कम्माणं केत्तियं कालमेसो विसेसाहियसंकमो होदि त्ति भग्गणं कस्सामो। तं जहा—पुरिसवेदस्स ताव इत्थिवेदं चरिमगुणसंकमेण पडिच्छियूण जाव आवलियमेत्तकालो गच्छइ ताव विसेसाहिओ चेव संकमो होदि। तत्तो परं विसेसहीणं चेव भवदि जाव सगसव्वोवसामणाचरिमसमओ त्ति। णवरि चिराणसंतकम्ममुवसामेयूण णवकबंधमुवसामेमाणस्स पढमसमए असंखेज्जगुणहाणी होदूण तदो दुसमयूणदोआवलिमेत्तणवकबंधसंकमो जोगविसेसमस्सियूण चउव्विहाए वड्ढीए हाणीए अवट्ठिदसरूवेण च पयट्टदि त्ति वत्तव्वं, णाणासमयपबद्धावलंबणेण तत्थ तहाभावोववत्तीए। कोहसंजलणस्स वि सत्तणोकसाएहिं सह दुविहकोहकसायस्स जाव संकमो ताव विसेसाहिओ चेव संकमो होदि। पुणो छण्णोकसायचरिमगुणसंकमे पडिच्छिदे पच्छा आवलियमेत्तकालं विसेसाहियसंकमो होदूण थक्कदि। एत्तो प्पहुडि जाव कोहसंजलणो सव्वोवसमं गच्छदि ताव माणस्सुवरि विसेसहीणकमेण संकमो भवदि। कारणमेत्थ सुगमं। णवरि कोहसंजलणणवकबंधसंकमो पुव्वं व चदुवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदसरूवेण पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं।

परन्तु जो बध्यमान प्रकृतियाँ हैं उनका जब तक गुणसंक्रम नहीं होता तब तक उनका भी प्रदेशपुञ्ज अधःप्रवृत्त संक्रमक द्वारा विशेष अधिक ही संक्रमित होता है। कारण कि जो बध्यमान पुरुष वेद आदि मेंसे विवक्षित एक प्रकृति है उसका गुणसंक्रमके द्वारा अन्य प्रकृतिरूप प्रदेशसंक्रम भी होता है और उसकी प्रथम स्थिति सम्भव है, इस लिये उसका असंख्यातगुणी गुणश्रेणिरूपसे प्राप्त हुआ प्रदेशपुञ्ज प्रत्येक समयमें उदयमें भी दिया जाता है, यतः यहाँपर संक्रमित होनेवाले द्रव्यसे प्रत्येक समयमें गलनेवाला द्रव्य बहुत होता है, इसलिए उक्त व्यवस्था बन जाती है। शेष कथन सुगम है। प्रदेशपुञ्ज विशेष हीन ही होता है, क्योंकि प्रत्येक समयमें विशेषहीन होता जाता है।

§ ४८. अब किन कर्मोंका कितने काल तक यह विशेष अधिक संक्रम होता है इसकी मार्गणा करते हैं। वह जैसे—पुरुषवेदका तो, स्त्रीवेदको अन्तिम गुणसंक्रमके द्वारा ग्रहण करके, जब तक एक आवलि काल जाता है तब तक विशेष अधिक ही संक्रम होता है। उसके बाद अपनी सर्वोपशमनाके अन्तिम समय तक विशेष हीन ही संक्रम होता है। इतनी विशेषता है कि पुराने सत्कर्मको उपशमा कर नवकबन्धका उपशम करनेवाले जीवके प्रथम समयमें असंख्यात गुणहानि होकर उसके बाद दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्धका संक्रम योग विशेषकी अपेक्षा चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थितरूपसे प्रवृत्त होता है ऐसा यहाँ कहना चाहिये, क्योंकि नाना समयप्रबद्धोंकी अपेक्षा वहाँ उक्त संक्रम उस प्रकारसे बन जाता है। क्रोधसंज्वलनका भी, सात नोकषायोंके साथ दो प्रकारके क्रोधकषायका जब तक संक्रम होता है; तब तक विशेष अधिक ही संक्रम होता है। पुनः छह नोकषायोंके अन्तिम गुणसंक्रमके प्राप्त होनेके बाद एक आवलि कालतक विशेष अधिक संक्रम होता रहता है। पुनः यहाँसे लेकर जब तक क्रोधसंज्वलनका सर्वोपशम होता है तब तक मान कषायके ऊपर विशेष हीन क्रमसे संक्रम होता है। यहाँ कारण सुगम है। इतनी विशेषता है कि क्रोधसंज्वलनके नवकबन्धका संक्रम पहलेके समान चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितरूपसे प्रवृत्त होता है ऐसा यहाँ ग्रहण

§ ४९. संपहि माणसंजणस्स वुच्चदे। तं जहा—अंतरकरणे समत्ते पच्छा छण्णोकसायदुविहकोहदव्वं गुणसंकमेण कोहसंजलणस्सुवरि संकामेदि। णवरि एदं दव्वं अप्पहाणं, सव्वघादिपडिभागियत्तादो। किंतु कोहसंजलणादो अधापवत्तसकमेण माण-संजलणस्स उवरि संकममाणदव्वं पहाणं। तेण समयं पडि माणसंतकम्मं विसेसाहियं होदूण गच्छदि। पुणो एवं माणसरूवेण वड्ढिदूण ट्ठिददव्वादो मायासरूवेण गच्छमाण-दव्वं पि समयं पडि विसेसाहियं भवदि जाव कोहसंजलणचिराणसंतकम्मस्स माण-संजलणस्सुवरि संकमे थक्के पुणो आवलियमेत्तकालमुवरि गंतूण तव्विसयो थक्को त्ति। एत्तो प्पहुडि विसेसहीणसंकमो भवदि जाव सगसव्वोवसमचरिमसमओ त्ति। णवरि णवकबंधसंकमो पुव्वं व चउव्विहवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणेहिं दट्ठव्वो। एवं मायासंजलणस्स वि एसा मग्गणा जाणिय कायव्वा। लोहसंजलणस्स पुण अंतरकरणादो हेट्ठा चेव सेस-कसाय-णोकसायगुणसंकमपडिग्गहवसेण विसेसाहियो संकमविसयो अणुगंतव्वो, पयद-विसये तस्स संकमाभावादो।

§ ५०. ट्ठिदिसंकमो अणुदइल्लाणं अवट्ठिदो चेव होदि, तत्थ विदियट्ठिदीए पयट्टमाणस्स संकमस्स वड्ढिहाणीणमणुवलंभादो। वेदिज्जमाणं पुण समयं पडि विसेस-हीणो चेव संकमो जायदे, तत्थ पढमट्ठिदिए णिरंतरं गलमाणोवलंभादो। णवरि वि

करना चाहिये।

§ ४९. अब मानसंज्वलनका कहते हैं। वह जैसे—अन्तरकरण समाप्त होनेपर पश्चात् छह नोकषाय और दो प्रकारके क्रोधके द्रव्यको गुणसंक्रमके द्वारा क्रोधसंज्वलनके ऊपर संक्रमित करता है। इतनी विशेषता है कि यह द्रव्य अप्रधान है, क्योंकि यह सर्वघाति द्रव्यका प्रतिभाग होकर प्राप्त हुआ है। किन्तु क्रोधसंज्वलनमेंसे अधःप्रवृत्तसंक्रमण द्वारा मानसंज्वलनके ऊपर संक्रमित होनेवाला द्रव्य प्रधान है, उस द्वारा मानसंज्वलनका द्रव्य प्रत्येक समयमें विशेष अधिक होता जाता है। पुनः इस प्रकार मानरूपसे वृद्धिको प्राप्त होकर स्थित हुए द्रव्यमेंसे मायारूपसे प्राप्त होनेवाला द्रव्य भी प्रत्येक समयमें तबतक विशेष अधिक होता जाता है जबतक क्रोध-संज्वलनके चिरकालीन सत्कर्मका मानसंज्वलनके ऊपर संक्रम पूरा होनेके बाद आवलिमात्र काल ऊपर जाकर उसका विषय समाप्त होता है। यहाँसे लेकर सर्वोपशमके अन्तिम समयतक विशेष-हीन संक्रम होता है। इतनी विशेषता है कि नवकबन्धका संक्रम पहलेके समान चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितरूपसे जानना चाहिये। इसी प्रकार मायासंज्वलनकी भी गवेषणा करके जान लेनी चाहिये। लोभसंज्वलनको तो अन्तरकरणसे पूर्व ही शेष कषायों और नोकषायके गुणसंक्रमसन्बन्धी प्रतिग्रहके कारण विशेष अधिक संक्रमका विषय मानना चाहिये, क्योंकि प्रकृत स्थानपर उसके संक्रमका अभाव है।

§ ५०. अनुदयरूप प्रकृतियोंका स्थितिसंक्रम अवस्थित ही होता है, क्योंकि उनकी द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रवृत्त हुए संक्रममें वृद्धि-हानि नहीं पाई जाती। तथा जो प्रकृतियाँ वेदी जाती हैं उनका प्रति समय विशेषहीन ही संक्रम होता है, क्योंकि उनकी प्रथम स्थिति निरन्तर गलती

संजलणपुरिसवेदाणं चिराणसंतकम्ममुवसामिय णवकबंधमुवसामेमाणस्स संधीए सइ-मसंखेज्जगुणहाणी होदूण तदो अवट्ठिदसंकमो होदि त्ति दट्ठव्वं ।

§ ५१. अणुभागसंकमो वि सव्वासिं मोहपयडीणमेदम्मि विसये अवट्ठिदो चेव दट्ठव्वो । तं कधं ? जहण्णफद्दयप्पहुडि अभवसिद्धि० अणंतगुण-सिद्धाणमणंतभागमेत्त-फद्दयरयणाए सरिसधणियपमाणं पि एत्तियं चेव होदि । पुणो एदेसिमसंखेज्जदिभागं समये० संकामिज्जदि तेणावट्ठिदो चेव संकमो भवदि । सोदयाणं पढमट्ठिदीए गल-माणाये अणवट्ठिदो संकमो किण्ण जायदे ? ण, पढमट्ठिदिफद्दयाणं विदियट्ठिदिअणु-भागफद्दएहिं सह सरिसधणियाणं गलणे वि तत्थाणवट्ठिदसंकमाणुवलद्धीदो । खंडए घादिदे अणंतगुणहाणी किण्ण होदि त्ति णासंकणिज्जं, अंतरकरणे कदे मोहणीयस्स ट्ठिदिअणुभागखंडयघादाणब्भुवगमादो । णवरि तिण्णिसंजलणपुरिसवेदाणं णवकबंधाणु-भागसंकमो समयं पडि अणंतगुणहीणकमेण पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं ।

रहती है । इतनी विशेषता है कि संज्वलन कषाय और पुरुषवेदके चिरकालीन सत्कर्मको उपशमा कर नवकबन्धका उपशम करनेवाले जीवके सन्धिमें एकबार असंख्यात गुणहानि होकर तदनन्तर अवस्थित संक्रम होता है ऐसा जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—यहाँ अनुदयरूप प्रकृतियोंकी एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थिति होती है और उदयवाली प्रकृतियोंकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम स्थिति होती है तथा चार संज्वलन और पुरुषवेद ये यथासम्भव बन्धप्रकृतियाँ भी हैं, इसलिये संक्रमकी उक्त व्यवस्था बन जाती है ।

§ ५१. सम्पूर्ण मोहप्रकृतियोंका इस स्थलपर अनुभागसंक्रम भी अवस्थित ही जानना चाहिये ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—जघन्य स्पर्धकसे लेकर अभव्योंसे अनन्तगुणे तथा सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण स्पर्धकोंकी रचनामें सदृश धनवालोंका प्रमाण भी उतना ही होता है । पुनः इनका असंख्यातवाँ भाग प्रत्येक समयमें संक्रमित होता है, इसलिए अवस्थित ही संक्रम होता है ।

शंका—सोदय प्रकृतियोंकी प्रथम स्थितिके गलित होते समय अनवस्थित संक्रम क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि द्वितीय स्थितिके अनुभागसम्बन्धी स्पर्धकोंके साथ समान धनवाले प्रथम स्थितिके स्पर्धकोंके गलनेपर भी वहाँ अनवस्थित संक्रम नहीं उपलब्ध होता ।

शंका—अनुभागकाण्डकका घात करते समय अनन्त गुणहानि क्यों नहीं होती है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि अन्तरकरण करनेके बाद मोहनीय-कर्मका स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नहीं पाया जाता । इतनी विशेषता है कि तीन संज्वलन और पुरुषवेदके नवकबन्धका अनुभागसंक्रम प्रत्येक समयमें अनन्त गुणहीनक्रमसे प्रवृत्त होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये ।

विशेषार्थ—जघन्य स्पर्धकसे लेकर जितने अनुभागस्पर्धक हैं वे अभव्योंसे अनन्तगुणे या सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण होते हैं । उनमें सदृश धनवालोंका प्रमाण भी उतना ही है और यहाँ इनके असंख्यातवें भागका प्रत्येक समयमें संक्रम होता है, इसलिये प्रकृतमें अवस्थित संक्रम बन जाता है । तथा जो सोदय प्रकृतियाँ हैं उनमें भी प्रथम स्थितिके स्पर्धक द्वितीय स्थितिके स्पर्धकोंके

§ ५२. संपहि उदीरणाए मग्गणं कसामो। तं जहा—पदेसग्गेण ताव समयं पडि असंखेज्जगुणाए सेडीए सव्वेसिं कम्माणं वेदिज्जमाणाणमुदीरणा पयट्टदे। किं कारणं? विसोहीए समयं पडि अणंतगुणकमेण वड्ढिदंसणादो। ट्ठिदिउदीरणा पुण विसेसहीणा होदूण गच्छदि जाव पढमट्ठिदीए आवलियपडिआवलियाओ अच्छिदाओ त्ति। पुणो ट्ठिदिउदीरणा असंखे०गुणहीणा भवदि। कुदो? आवलियपडिआवलियासु सेसासु तत्थागालपडिआगालवोच्छेदवसेण ट्ठिदिउदीरणाए असंखेज्जगुणहीणत्तदंसणादो। पुणो पडिआवलियमेत्तकालमधट्ठिदिगलणेण विसेसहीणा भवदि।

§ ५३. अणुभागउदीरणा पुण समयं पडि अणंतगुणहीणा चेव भवदि। किं कारणं? मोहणीयमप्पसत्थपयडी होदि। अप्पसत्थपयडीणं च विसोहिवड्ढीए अणुभागमणुसमयमणंतगुणहीणं होदूणुदीरिज्जदे। तेणाणुभागुदीरणा अणंतगुणहीणा चेव होदि त्ति सिद्धं। एवं बंधोदयाणं च ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसविसयाणमेत्थ मग्गणा जाणिय कायव्वा। एसा च सव्वा मग्गणा सुगमा त्ति ण 'सुत्तयारेण' पवंचिदा।

§ ५४. एव ताव सत्थाणे एदेसिं मग्गणं कादूण संपहि एदेसिं चेव सुत्तणिद्दिट्ठसव्वपदाणं परत्थाणे अप्पाबहुअं कुणमाणो 'चुण्णिसुत्तयारो' इदमाह—

साथ समान धनवाले होते हैं, इसलिए उनमें भी अवस्थित संक्रम घटित हो जाता है। तथा अन्तरकरण क्रियाके बाद मोहनीय कर्ममें काण्डकघात क्रिया होती नहीं, इसलिए इस क्रियाके निमित्तसे अनुभागकी प्रति समय होनेवाली अनन्त गुणहानि भी यहाँ सम्भव नहीं है। इतना अवश्य है कि पुरुषवेद और क्रोधादि तीन संज्वलन प्रकृतियोंके नवकबन्धके अनुभागमें प्रति समय अनन्त गुणहीनक्रमसे संक्रम बन जाता है।

§ ५२. अब उदीरणाकी मार्गणा करते हैं। वह जैसे—प्रदेशपुञ्जकी अपेक्षा तो सभी वेदे जानेवाले कर्मोंकी उदीरणा असंख्यातगुणी श्रेणीरूपसे प्रवृत्त होती है, क्योंकि प्रत्येक समयमें विशुद्धिकी अनन्तगुणे क्रमसे वृद्धि देखी जाती है। परन्तु स्थिति उदीरणा आवलि प्रत्यावलिके अवस्थित रहने तक विशेष हीन होती जाती है। पुनः स्थिति उदीरणा असंख्यातगुणी हीन होती है, क्योंकि वहाँ आगाल-प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जानेके कारण स्थिति उदीरणा असंख्यातगुणी हीन देखी जाती है। पुनः प्रत्यावलिप्रमाण काल तक अधःस्थितिगलनाके द्वारा विशेष हीन होती है।

§ ५३. अनुभाग उदीरणा तो प्रत्येक समयमें अनन्त गुणहीन ही होती है, क्योंकि मोहनीय अप्रशस्त प्रकृति है और विशुद्धिकी वृद्धि होनेसे अप्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग प्रत्येक समयमें अनन्तगुणा हीन होकर उदीरित होता है, इसलिए अनुभाग उदीरणा अनन्तगुणी हीन ही होती है यह सिद्ध हुआ। इसीप्रकार स्थिति, अनुभाग और प्रदेश विषयक बन्ध और उदयकी मार्गणा यहाँ पर जानकर करना चाहिये। यह सब मार्गणा सुगम है, इसलिये सूत्रकारने विस्तार नहीं किया।

§ ५४. इस प्रकार सर्वप्रथम स्वस्थानमें इनकी मार्गणा करके अब सूत्रमें निर्दिष्ट किये गये इन्हीं सब पदोंका परस्थानमें अल्पबहुत्वका कथन करते हुए चूर्णिसूत्रकार इस सूत्रको कहते हैं—

*** णवुंसयवेदस्स पढमसमयउवसामगस्स जाओ ठिदीओ बज्झंति ताओ थोवाओ ।**

§ ५५. अंतरकरणे णिट्ठिदे णवुंसयवेदस्स पढमसमयउवसामगो णाम जायदे । तस्स तक्काले जाओ ट्ठिदीओ बज्झंति मोहणीयस्स ताओ थोवाओ । किं कारणं ? अंतरकरणाणंतरमेव मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिबंधस्स पारंभदंसणादो ।

*** जाओ संकामिज्जंति ताओ असंखेज्जगुणाओ ।**

§ ५६. कुदो ? अंतोकोडाकोडीसागरोवमपमाणत्तादो । एत्थोवसामिज्जमाणाणं ट्ठिदीणं णिद्देसो किण्ण कदो त्ति णासंकणिज्जं, संकामिज्जमाणट्ठिदीसु चेव तासिमंतब्भावो होदि त्ति पुध णिद्देसाकरणादो । जो च तत्थ को वि अब्भंतरो सुहुमभेदो सो वि वक्खाणादो जाणिज्जदे, व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिरिति न्यायात् ।

*** जाओ उदीरिज्जंति ताओ तत्तियाओ चेव ।**

§ ५७. कुदो ? उदयावलियबाहिरासेसट्ठिदीणमुदीरिज्जमाणाणंतपमाणत्तदंसणादो ।

*** उदिण्णाओ विसेसाहियाओ ।**

*** नपुंसकवेदका प्रथम समयमें उपशम करनेवालेके जो स्थितियाँ बँधती हैं वे थोड़ी हैं ।**

§ ५५. अन्तरकरण क्रिया समाप्त होनेपर नपुंसकवेदका प्रथम समयवर्ती उपशामक होता है । उसके उस समय मोहनीयकी जो स्थितियाँ बँधती हैं वे स्तोक हैं, क्योंकि अन्तरकरण क्रिया करनेके अनन्तर ही मोहनीयका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध देखा जाता है ।

*** जो स्थितियाँ संक्रमित की जाती हैं वे असंख्यातगुणी हैं ।**

§ ५६. क्योंकि वे अन्तःकोडाकोडी सागरोपमप्रमाण हैं ।

शंका—यहाँपर उपशमायी जानेवाली स्थितियोंका निर्देश क्यों नहीं किया ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि संक्रमित की जानेवाली स्थितियोंमें ही उनका अन्तर्भाव हो जाता है, इसलिए उनका अलगसे निर्देश नहीं किया है । और जो कुछ उनमें भीतरी सूक्ष्म भेद है वह भी व्याख्यानसे जान लिया जाता है, क्योंकि व्याख्यानसे विशेषकी प्रतिपत्ति होती है ऐसा न्याय है । तात्पर्य यह है कि प्रथम स्थितिगत स्थितियोंकी उपशमना नहीं होती, संक्रम होता है ।

*** जो स्थितियाँ उदीरित की जाती हैं वे उतनी ही हैं ।**

§ ५७. क्योंकि उदयावलिके बाहरकी समस्त स्थितियाँ उदीरित की जाती हैं, इसलिए वे संक्रमित की जानेवाली स्थितियोंके बराबर देखी जाती है ।

*** उदीर्ण स्थितियाँ विशेष अधिक हैं ।**

§ ५८. किं कारणं ? उदयट्ठिदीए वि एत्थ पवेसदंसणादो ।

✻ जट्ठिदिउदयोदीरणा संतकम्मं च विसेसाहिओ ।

§ ५९. कुदो ? समयूणुदयावलियाए एत्थ पवेसदंसणादो । जट्ठिदिसंकमो वि एत्थेवंतब्भूदो वि वक्खाणेयव्वो, जट्ठिदिउदीरणाए तस्स समाणपरूवणत्तादो । संपहि मोहणीयम्मि चदुसंजलण-पुरिसवेदाणमेदमप्पाबहुअं दट्ठव्वं । णाणावरणदंसणावरण-णामागोदवेदणीयंतराइयाणं पि एवं चेव अप्पाबहुअं कायव्वं, विसेसाभावादो । णवरि वेदणीयस्स उदीरणा णत्थि । इत्थिणवुंसयवेदाणं बंधं मोत्तूण संकमउदीरणाउदयसंत-कम्मट्ठिदीदो [ओ] घेत्तूण एवं चेव वत्तव्वं, सोदयविवक्खाए तदुववत्तीदो । अट्ठकसाय-छण्णोकसायाणं णत्थि अप्पाबहुअं, बंधोदयादिपदाणं तत्थासंभवादो ।

§ ६०. एवं ट्ठिदीओ अस्सियूण पयदप्पाबहुअं समाणिय संपहि अणुभाग-विसए पयदप्पाबहुअमग्गणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

✻ अणुभागेण बंधो थोवो ।

§ ६१. कुदो ? देसघादिएयट्ठाणियसरूवत्तादो । तदो सव्वत्थोवत्तमेदस्स सिद्धं कादूण संपहि एत्तो बहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

✻ उदयो उदीरणा च अणंतगुणा ।

---

§ ५८. क्योंकि उदयावलिका भी इनमें प्रवेश देखा जाता है ।

✻ यत्स्थिति उदय, उदीरणा और सत्कर्म विशेष अधिक हैं ।

§ ५९. क्योंकि एक समयकम उदयावलिका इनमें प्रवेश देखा जाता है । यत्स्थितिसंक्रम भी इनमें अन्तर्भूत है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि यत्स्थिति उदीरणाके समान उसका प्ररूपण है । यहाँ मोहनीयके चार संज्वलन और पुरुषवेदका यह अल्पबहुत्व जानना चाहिये । ज्ञानावरण, दर्शनावरण, नाम, गोत्र, वेदनीय और अन्तरायका भी इसी प्रकार अल्प-बहुत्व करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई भेद नहीं है । इतनी विशेषता है कि वेदनीय-कर्मकी प्रकृतमें उदीरणा नहीं होती । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके बन्धको छोड़कर संक्रम, उदीरणा, उदय और सत्कर्मसम्बन्धी स्थितियोंको ग्रहणकर इसी प्रकार कथन करना चाहिये, क्योंकि उदय सहित अवस्थाकी विवक्षामें उक्त अल्पबहुत्व बन जाता है । आठ कषाय और छह नोकषायोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि इन प्रकृतियोंका वहाँ बन्ध और उदय आदि पद सम्भव नहीं है ।

§ ६०. इस प्रकार स्थितियोका आश्रय लेकर प्रकृत अल्पबहुत्वको समाप्त करके अब अनुभागविषयक प्रकृत अल्पबहुत्वकी मार्गणा करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

✻ अनुभागकी अपेक्षा बन्ध स्तोक है ।

§ ६१. क्योंकि वह देशघाति एकस्थानीयस्वरूप है, इसलिए इसके सबसे स्तोकपनेकी सिद्धि करके अब इससे आगे बहुविषयक अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

✻ उदय और उदीरणा अनन्तगुणे हैं ।

§ ६२. कुदो ? देसघादिएयट्ठाणियत्ताविसेसे वि उदयोदीरणाणुभागस्स चिराणसंतसरूवस्स तहाभावोवलद्धीदो ।

❀ संकमो संतकम्मं च अणंतगुणं ।

§ ६३. कुदो ? सव्वघादिविट्ठाणियसरूवत्तादो । एवमप्पाबहुअमंतरकरणप्पहुडि-अणियट्टिबादरसांपराइयम्मि परूविदं । संपहि एदेणेव संबंधेण किट्टीवेदगस्स सुहुम-सांपराइयस्स केरिसमणुभागप्पाबहुअं होदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

❀ किट्टीओ वेदेंतस्स बंधो णत्थि ।

§ ६४. कुदो ? मोहणीयस्स अणियट्टिगुणट्ठाणादो उवरि बंधासंभवादो । तदो बंधं मोत्तूण सेसपदाणं चेव अप्पाबहुअं कस्सामो त्ति उत्तं होइ ।

❀ उदयोदीरणा च थोवा ।

§ ६५. कुदो ? किट्टीणमणंतगुणहाणीए हाइदूण उदयोदीरणासरूवेण परिणमण-दंसणादो ।

❀ संजमो अणंतगुणो ।

---

§ ६२. क्योंकि देशघाति एकस्थानीयपनेकी अपेक्षा विशेषता न होनेपर भी चिरकालीन सत्कर्मस्वरूप उदय और उदीरणाका अनुभाग उसरूप पाया जाता है ।

❀ संक्रम और सत्कर्म अनन्तगुणे हैं ।

§ ६३. क्योंकि इनका अनुभाग सर्वघाति द्विस्थानीयस्वरूप है । इस प्रकार यह अल्पबहुत्व अन्तरकरणसे लेकर अनिवृत्तिबादरसाम्परायको लक्ष्यमें रखकर कहा है । अब इसके सम्बन्धसे कृष्टिवेदक सूक्ष्मसाम्परायके किस प्रकारका अनुभागसम्बन्धी अल्पबहुत्व होता है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

❀ कृष्टियोंका वेदन करनेवालेके बन्ध नहीं होता ।

§ ६४. क्योंकि अनिवृत्ति गुणस्थानके बाद मोहनीयका बन्ध नहीं होता । इसलिए बन्धको छोड़कर शेष पदोंका ही अल्पबहुत्व करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ उदय और उदीरणा सबसे स्तोक हैं ।

§ ६५. क्योंकि अनन्तगुणहानिरूपसे घटाकर कृष्टियोंका उदय और उदीरणारूपसे परिणमन देखा जाता है । तात्पर्य यह है कि जिन कृष्टियोंका प्रत्येक समयमें उदय और उदीरणा होती है वे उसीरूपसे उदय और उदीरणाको नहीं प्राप्त होतीं किन्तु अनन्तगुणहानिरूपसे घट कर ही वे उदय और उदीरणाको प्राप्त होती हैं । इसलिए यहां कृष्टियोंके उदय और उदीरणाको सबसे स्तोक कहा है ।

❀ संक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ६६. किं कारणं ? सव्वकिट्टीणं हेट्ठा उवरिं च असंखेज्जभागं मोत्तूण पुणो मज्झिमकिट्टीओ वेदिज्जमाणाओ भवंति । सव्वाओ चेव संकामिज्जमाणाओ भवंति, ओकड्डणासंकमस्स सव्वत्थ पडिसेहाभावादो । तेण संकमो अणंतगुणो जादो । एदस्स भावत्थो—वेदिज्जमाणकिट्टीणमग्गकिट्टीदो अणंतरोवरिमअवेदिज्जमाणजहण्णकिट्टी जइ वि एगा घेप्पदि तो वि मज्झिमकिट्टीणं सव्वाणुभागादो णिच्छयेणाणंतगुणा चेव भवदि । किं पुण तासिं उवरिमासंखेज्जदिभागे सव्वम्मि चेव घेप्पमाणे संकमो अणंतगुणो ण होज्ज, णिच्छयेणाणंतगुणो चेव भवदि त्ति ।

❀ संतकम्ममणंतगुणं ।

§ ६७. कुदो ? फड्डयसरूवेणावट्ठिदसव्वाणुभागस्स गहणादो । एवमणुभागमस्सियूण पयदप्पाबहुअमग्गणा समत्ता । संपहि पदेसमस्सियूण तव्विहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* एत्तो पदेसेण णवुंसयवेदस्स पदेसउदीरणा अणक्कस्सअजहण्णा थोवा ।

§ ६८. पदेसग्गेण अप्पाबहुए णिहाणिज्जमाणे तत्थ ताव णवुंसयवेदस्स अंतरदुसमयकदप्पहुडि जत्थ वा तत्थ वा णिरुद्धसमयम्मि पदेसुदीरणा असंखेज्जसमयपबद्ध-

---

§ ६६. क्योंकि सब कृष्टियोंमेंसे नीचेकी और ऊपरकी असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोंको छोड़कर मध्यम कृष्टियाँ ही वेदी जाती हैं। परन्तु संक्रमित सभी कृष्टियाँ होती हैं, क्योंकि अपकर्षण संक्रम सभी कृष्टियोंका होता है इसका निषेध नहीं है। इसलिए उदय-उदीरणासे संक्रम अनन्तगुणा हो जाता है। इसका भावार्थ है कि वेदी जानेवाली कृष्टियोंको अग्र (उपरिम) कृष्टिकी अपेक्षा उससे अनन्तर उपरिम नहीं वेदी जानेवाली जघन्य कृष्टि यदि एक भी ग्रहण की जाती है तो भी वह मध्यम कृष्टियोंसम्बन्धी पूरे अनुभागसे अनन्तगुणा ही होता है तो क्या उन मध्यम कृष्टियोंके उपरिम भागमें स्थित असंख्यातवें भागप्रमाण सभी कृष्टियोंके ग्रहण करनेपर संक्रम अनन्तगुणा नहीं होगा, नियमसे अनन्तगुणा ही होता है।

❀ सत्कर्म अनन्तगुणा है ।

§ ६७. क्योंकि इसमें स्पर्धकरूपसे स्थित पूरे अनुभागका ग्रहण किया है। इस प्रकार अनुभागका अवलम्बन लेकर प्रकृत अल्पबहुत्वकी मार्गणा समाप्त हुई। अब प्रदेशोंका अवलम्बन लेकर उसका खुलासा करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

❀ इससे आगे प्रदेशकी अपेक्षा अल्पबहुत्व देखनेपर नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट-अजघन्य प्रदेश उदीरणा स्तोक है ।

§ ६८. प्रदेश पुंजकी अपेक्षा अल्पबहुत्व देखनेपर वहाँ सर्वप्रथम नपुंसकवेदकी अपेक्षा कहते हैं—अन्तर किये जानेके दो समयसे लेकर जिस किसी विवक्षित समयमें प्रदेश उदीरणा असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होकर स्तोक होती है।

पमाणा होदूण थोवा होदि। किमेसा जहण्णा आहो उक्कस्सा त्ति पुच्छिदे अणुक्कस्स-अजहण्णा त्ति भणिदं। कुदो? खविदगुणिदकम्मंसिएसु दव्वविसेसमणपेक्खिय परि-णामपरतंतभावेण पयट्टमाणाये एदिस्से तिकालगोयरासेसाणियट्टीसु णिरुद्धेगसमयम्मि परिणामेसु जहण्णुक्कस्सभावेहिं विणा एयसरूवेण पवुत्तिदंसणादो।

*** जहण्णओ उदओ असंखेज्जगुणो।**

§ ६९. इमो वि तम्मि चेव समए गहिदो, किंतु उदीरणा णाम एगसमइया भवदि। उदओ पुण अंतोमुहुत्तसंगलिदगुणसेडिगोवुच्छसरूवो तेण असंखेज्जगुणो जादो। एसो वुण खविदकम्मंसियम्मि जहण्णो घेत्तव्वो, तदण्णत्थ पयडिगोवुच्छाए सह जहण्णगुणसेढिगोवुच्छाणुवलंभादो।

*** उक्कस्सओ उदओ विसेसाहिओ।**

§ ७०. किं कारणं? गुणिदकम्मंसियम्मि तदवलंबणादो। तं जहा—खविद-कम्मंसिओ गुणिदकम्मंसिओ च अणियट्टिपरिणाममस्सियूण अप्पप्पणो दव्वं सरिस-

---

शंका—क्या यह प्रदेश उदीरणा जघन्य होती है या उत्कृष्ट ?

समाधान—ऐसी पृच्छा होने पर कहते हैं यह अनुत्कृष्ट-अजघन्य होती है ऐसा सूत्रमें कहा गया है, क्योंकि क्षपित कर्मांशिक और गुणित कर्मांशिकके द्रव्य विशेषकी अपेक्षा न कर परि-णामोंके अधीन होकर प्रवृत्त होनेवाली इसकी, त्रिकालगोचर समस्त अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी परिणामोंसे विवक्षित एक समयमें जघन्य उत्कृष्ट भावके बिना, एकरूपसे प्रवृत्ति देखी जाती है।

विशेषार्थ—जो गुणित कर्मांशिक जीव या क्षपित कर्मांशिक जीव अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करते हैं उनके नपुंसक वेदकी प्रदेश उदीरणा यहाँ विवक्षित नहीं है। अत: उनसे भिन्न जीवोंके अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेपर वहाँके परिणामोंके अनुसार जो नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट-अजघन्य उदीरणा होती है वह सबसे जघन्यरूपसे यहाँ विवक्षित है। तीनों कालोंसम्बन्धी अनिवृत्ति-करणके परिणमोंमें से विवक्षित एक समयको लक्ष्य कर यह अनुत्कृष्ट-अजघन्य उदीरणा ली गई है ऐसा यहाँ समझना चाहिये। वह भी अन्तरकरणक्रिया सम्पन्न करनेके अनन्तर दूसरे समयकी यह प्रदेश उदीरणा है इतना विशेष जानना चाहिये।

*** जघन्य उदय असंख्यातगुणा है।**

§ ६९. यह भी उसी समयका लेना चाहिये। किन्तु उदीरणा एक समयवाली होती है, परन्तु उदय अन्तर्मुहूर्त गलानेवाली गुणश्रेणिगोपुच्छास्वरूप होता है, इसलिए उदीरणासे उदय असंख्यातगुणा हो जाता है। परन्तु यह क्षपित कर्मांशिकका जघन्य लेना चाहिये, क्योंकि उसके सिवाय अन्यत्र प्रकृतिगोपुच्छाके साथ जघन्य गुणश्रेणिगोपुच्छा नहीं उपलब्ध होती।

*** उत्कृष्ट उदय विशेष अधिक है।**

§ ७०. क्योंकि गुणितकर्मांशिकके उसका अवलम्बन लिया गया है। वह जैसे—क्षपित कर्मांशिक और गुणितकर्मांशिक दोनों ही अनिवृत्तिकरण परिणामका आलम्बन लेकर अपने-अपने

मोकड्डिय गुणसेढिं करेंति, तेण दोण्हं पि अणियट्टिगुणसेडिदव्वं समाणं होदि। संपहि जहण्णुदये विवक्खिये अपुव्वकरणगुणसेडिजहण्णपरिणामेहिं करावेयव्वा। उक्कस्सुदये पुण उक्कस्सपरिणामेहिं करावेयव्वा त्ति। एदेण कारणेण असंखेज्जेहिं समयपबद्धहिं विसेसाहियत्तमेत्थ गहेयव्वं। अपुव्वजहण्णगुणसेढिगोवुच्छं तदुक्कस्सगुणसेढिगोवुच्छादो सोहिय सुद्धसेसमेत्तेण परिप्फुडमेवेत्थ विसेसाहियत्तदंसणादो। संजमगुणसेढिविसेसं पि समस्सियूण विसेसाहियत्तमेत्थ दरिसेयव्वं। अण्णं च खविदगुणिदकम्मंसियाणं गुणसेढिगोवुच्छासु अंतब्भुदा पयडिगोवुच्छा वि अत्थि। तत्थ खविदकम्मंसियगोवुच्छादो गुणिदकम्मंसियगोवुच्छा असंखेज्जगुणा भवदि। अंतरकदविदियादिसमएसु सोदएण तदुवलद्धीए वि बाहाणुवलंभादो। तदो एदं पि गोवुच्छदव्वं पविसिय विसेसाहियं जादं।

* जहण्णओ संजमो असंखेज्जगुणो।

§ ७१. कुदो? गुणसंकमपाहम्मादो। णेदमेत्थासंकणिज्जं, जहण्णसंकमदव्वागमणट्ठं दिवड्ढगुणहाणिमेत्तजहण्णसमयपबद्धाणमोकड्डुक्कड्डणभागहारवेछावट्ठिसागरोवणाणा-

---

सदृश द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणि करते हैं, इस कारण दोनोंका ही अनिवृत्तिगुणश्रेणि द्रव्य समान होता है। अब जघन्य उदयकी विवक्षा होने पर अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिके जघन्य परिणामोंके द्वारा कराना चाहिये। परन्तु उत्कृष्ट उदय होनेपर उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा कराना चाहिये। इस कारण यहाँ असंख्यात समयप्रबद्धोंके द्वारा विशेष अधिक ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि अपूर्वकरणसम्बन्धी जघन्य गुणश्रेणिगोपुच्छाको उसकी उत्कृष्ट गुणश्रेणिगोपुच्छामेंसे घटाकर जो शुद्ध शेष रहे वह स्पष्टरूपसे यहाँ विशेष अधिक देखा जाता है। अथवा संयम गुणश्रेणिविशेषका भी आलम्बन लेकर यहाँ विशेष अधिकपना दिखलाना चाहिये। तथा क्षपित और गुणित कर्मांशिकोंकी गुणश्रेणिगोपुच्छाओंमें गर्भित हुई दूसरी प्रकृतिगोपुच्छा भी है। परन्तु वहाँ क्षपितकर्मांशिककी गुणश्रेणिगोपुच्छासे गुणितकर्मांशिककी गोपुच्छा असंख्यातगुणी होती है जो अन्तर करनेके दूसरे आदि समयोंमें उदयके साथ पायी जाती है तो इसमें कोई बाधा नहीं आती, इसलिये यह गोपुच्छा द्रव्य भी प्रविष्ट होकर विशेष अधिक हो जाता है।

विशेषार्थ—प्रकृत्त नपुंसकवेदके जघन्य उदयसे उत्कृष्ट उदय प्रदेशोंकी अपेक्षा विशेष अधिक होता है इसे कई प्रकारसे घटित करके बतलाया गया है। मुख्य बात यह है कि अन्तर करण करनेके बाद द्वितीय समयवर्ती जीव चाहे गुणित कर्मांशिक हो और चाहे क्षपित कर्मांशिक हो दोनोंके अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिद्रव्यका उदय समान होता है फिर भी जघन्य प्रदेश उदयसे यहाँ जो उत्कृष्ट प्रदेश उदय विशेष अधिक हो जाता है वह एक तो प्रकृति गोपुच्छाके कारण, दूसरे अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिद्रव्यके कारण और तीसरे संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिद्रव्यके कारण विशेष अधिक होता है। इसी तथ्यको यहाँ विशेषरूपसे स्पष्ट करके बतलाया गया है।

* जघन्य संक्रम असंख्यातगुणा है।

§ ७१. क्योंकि गुणसंक्रमके माहात्म्यवश उत्कृष्ट उदय द्रव्यसे जघन्य संक्रमद्रव्य असंख्यातगुणा है।

गुणहाणिअण्णोण्णसंवग्गमेत्तो भागहारो उक्कस्सुदयदव्वागमणट्ठं पुण दिवड्ढगुणहाणि-मेत्तुक्कस्ससमयपबद्धाणमोकड्डुक्कड्डणभागहारादो असंखेज्जगुणो पलिदो० असंखे०-भागो भागहारो, तदो णेदेसिमसंखेज्जगुणहीणाहियभावो परिप्फुडमवगम्मदि त्ति। किं कारणं? उदयदव्वागमणट्ठमोकड्डुक्कड्डणभागहारस्स पवेसिदपलिदो० असंखे०-भागमेत्तगुणयारमाहप्पमस्सियूण पुव्विल्लादो एदस्स असंखेज्जगुणत्तसिद्धीदो।

*** जहण्णयं उवसामिज्जदि असंखेज्जगुणं।**

§ कुदो? परत्थाणे संकामिज्जमाणदव्वादो सत्थाणे उवसामिज्जमाणदव्वस्स सव्वत्थासंखेज्जगुणभावब्भुवगमादो। णाब्भुवगमो णिण्णिबंधणो, एदं चेव सुत्तं णिबंधणीकरिय पयट्टत्तादो।

*** जहण्णयं संतकम्ममसंखेज्जगुणं।**

§ ७३. कुदो? पढमसमयणवुंसयवेदोवसामगेण उवसामिज्जमाणपदेसग्गस्स जहण्णसंतकम्मस्सासंखेज्जदिभागपमाणत्तादो।

शंका—जघन्य संक्रमद्रव्यके लानेके लिए डेढ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंका अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, दो छयासठ सागरोपम, नानागुणहानियोंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और गुण-संक्रमभागहारके परस्पर संवर्ग करने पर जो राशि उत्पन्न हो वह भागहार है और उत्कृष्ट उदय द्रव्यके लानेके लिए तो डेढ़ गुणहानिप्रमाण उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंका उत्कर्षण-अपकर्षणसे असंख्यात-गुणा पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग भागहार है, इसलिए नपुंसकवेदके उत्कृष्ट उदय द्रव्य और जघन्य संक्रम द्रव्य इनमें असंख्यातगुणा हीनपना है या अधिकपना है स्पष्टरूपसे ज्ञात नहीं होता?

समाधान—यहाँ ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उदयद्रव्यके लानेके लिये जो उत्कर्षण-अपकर्षण भागहार है उसमें प्रवेश कराये गये पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण गुण-कारके माहात्म्यका आश्रय लेनेसे पहलेकी अपेक्षा यह असंख्यातगुणा है यह सिद्ध होता है।

विशेषार्थ—तात्पर्य यह है कि जिस उपरितन द्रव्यमें उत्कर्षण-अपकर्षणभागहारका भाग देनेसे लब्ध आवे उसे उदयमें निक्षिप्त करता है। उस भागहारका पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण गुणकारसे गुणा करनेपर जो लब्ध आवे उससे उपरितन द्रव्यको भाजित करनेपर लब्ध द्रव्यका संक्रम होता है, इसलिए सिद्ध हुआ कि नपुंसकवेदके उत्कृष्ट उदय द्रव्यसे जघन्य संक्रम द्रव्य असंख्यातगुणा है।

*** उपशम कराया गया जघन्य द्रव्य असंख्यातगुणा है।**

§ ७२. क्योंकि परस्थानमें संक्रम कराये गये द्रव्यसे स्वस्थानमें उपशम कराया गया द्रव्य सर्वत्र असंख्यातगुणा उपलब्ध होता है। और यह स्वीकार करना बिना कारणके नहीं है, क्योंकि यहाँ यही सूत्र कारण होकर प्रवृत्त हुआ है। तात्पर्य यह है कि जघन्य संक्रम द्रव्यसे जघन्य उपशम कराया गया द्रव्य असंख्यातगुणा है इसकी पुष्टि इसी सूत्रसे होती है।

*** जघन्य सत्कर्म असंख्यातगुणा है।**

§ ७३. क्योंकि प्रथम समयमें नपुंसकवेदके उपशमानेसे उपशमाया जानेवाला जो प्रदेश-

*** उक्कस्सयं संकामिज्जदि असंखेज्जगुणं ।**

§ ७४. तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण तिपलिदोवमाहियवेछावट्ठि-सागरोवमाणि परिभमिय अणियट्टिउवसामणभावेण परिणदस्स णिरुद्धविसए जहण्ण-संतकम्मं होदि । एदं च उक्कस्ससंतकम्मस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं होदि, जोगगुण-गारब्भत्थतिपलिदो० वेछावट्ठि० अण्णोण्णब्भत्थरासि-ओकड्डुकड्डणभागहारेहिं उक्कस्सदव्वे ओकट्टिदे जहण्णदव्वागमणदंसणादो । संपहि उक्कस्ससंतकम्मादो संकामिज्जमाणमुक्कस्ससंकम्मदव्वं पि उक्कस्ससंतकम्मस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होदि, गुणसंकमभागहारेणुक्कस्सदव्वे ओवट्टिदे पयददव्वागमणदंसणादो । एत्थ हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्मि ओवट्टिदे जोगगुणगारपदुप्पण्णतिपलिदोवमवेछावट्ठि-अण्णोण्णब्भत्थरासीदो असंखेज्जगुणो गुणगारो आगच्छदि । तदो सिद्धमेदस्सा-संखेज्जगुणत्तं ।

*** उक्कस्सगं उवसामिज्जदि असंखेज्जगुणं ।**

§ ७५. किं कारणं ? संकामिज्जमाणाणमुवसामिज्जमाणाणं च दो वि उक्कस्स-संतकम्मस्स असंखेज्जदिभागो चेव, किंतु उवसामिज्जमाणमसंखेज्जे भागे कादूण तत्थेगभागमेत्तं परपयडीसु संकामिज्जदि । बहुभागा सत्थाणे चेव उवसामिज्जंति । तेण कारणेणेदं दव्वं असंखेज्जगुणं भणिदं ।

पुंज प्राप्त होता है वह जघन्य सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाणमात्र है ।

*** संक्रम कराया गया उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यातगुणा है ।**

§ ७४. वह जैसे—क्षपित कर्मांशिक लक्षणसे आकर और तीन पल्योपम अधिक दो छयासठ सागरोपम कालतक परिभ्रमण करके जो अनिवृत्तिकरण जीव उपशम स्वभावसे परिणत होता है उसके विवक्षित स्थानमें जघन्य सत्कर्म होता है, और यह उत्कृष्ट सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है, क्योंकि योगगुणकारसे गुणित तीन पल्योपम अधिक दो छयासठ सागरोपमप्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशि तथा अपकर्षण उत्कर्षण भागहारसे उत्कृष्ट द्रव्यके अपवर्तित करनेपर जघन्य द्रव्यका आगमन देखा जाता है । अब उत्कृष्ट सत्कर्ममेंसे संक्रमित होनेवाला उत्कृष्ट संक्रम द्रव्य भी उत्कृष्ट सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है । क्योंकि गुणसंक्रम भागहारसे उत्कृष्ट द्रव्यके भाजित करनेपर प्रकृत द्रव्यकी प्राप्ति देखी जाती है । यहाँ अधस्तन राशिसे उपरिम राशिके भाजित करनेपर योग गुणकारसे गुणित तीन पल्योपम अधिक दो छयासठ सागरोपमकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे असंख्यातगुणा गुणकार आता है । इसलिए जघन्य सत्कर्मसे संक्रमित कराया गया उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यातगुणा है ।

*** उपशम कराया गया उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यातगुणा है ।**

§ ७५. क्योंकि संक्रम करानेवालेके और उपशम करानेवालेके दोनों ही उत्कृष्ट सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण ही हैं, किन्तु उपशमाये जानेवाले द्रव्यको असंख्यात बहुभाग करके वहाँ एक भागमात्र द्रव्य पर प्रकृतियोंमें संक्रमित कराया जाकर बहुभाग स्वस्थानमें ही उपशमाया जाता है । इस कारण पूर्वके द्रव्यसे यह असंख्यात गुणा कहा है ।

*** उक्कस्सयं संतकम्ममसंखेज्जगुणं ।**

§ ७६. किं कारणं ? हेट्ठिमासेसरासीणमेदस्सासंखेज्जदिभागपमाणत्तादो । एत्थ गुणगारो गुणसंकमभागहारादो असंखेज्जगुणहीणो पलिदो० असंखे०भागो । संपहि एदमप्पाबहुअं णवुंसयवेदपदेसग्गमहिकिच्च परूविदमिदि जाणावणट्ठमिदमाह—

*** एदं सव्वमंतरदुसमयकदे णवुंसयवेदपदेसग्गस्स अप्पाबहुअं ।**

§ ७७. गयत्थमेदं ।

*** इत्थीवेदस्स वि णिरवयवमेदमप्पाबहुअमणुगंतव्वं । अट्ठकसाय-छण्णोकसायाणमुदयमुदीरणं च मोत्तूण एवं चेव वत्तव्वं । पुरिसवेदचदु-संजलणाणं च जाणिदूण णेदव्वं । णवरि बंधपदस्स तत्थ सव्वत्थोवत्तं दट्ठव्वं ।**

§ ७८. एवमेदम्मि अप्पाबहुए समत्ते कदिभागुवसामिज्जदि त्ति एदिस्से विदिय-गाहाए अत्थविहासा समत्ता भवदि । संपहि एत्तो तदियगाहाए जहावसरपत्तमत्थ-विहासमुल्लंघियूण चउत्थगाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो उत्तरं पबंधमाह—किमट्ठमेवं

*** उत्कृष्ट सत्कर्म असंख्यातगुणा है ।**

§ ७६. क्योंकि पूर्वमें कही गयी समस्त राशियाँ इसके असंख्यातवें भागप्रमाण है । यहाँपर गुणकार गुणसंक्रम भागहारसे असंख्यातगुणाहीन पल्योपमके असंक्यातवें भागप्रमाण है । प्रकृतमें यह अल्पबहुत्व नपुंसकवेदके प्रदेशपुंजको अधिकृत करके प्ररूपित किया है इसका ज्ञान करानेके लिए आगे सूत्र कहते हैं—

*** सब अन्तर कर चुकनेके दूसरे समयमें होनेवाले नपुंसकवेदसम्बन्धी प्रदेश-पुंजका यह अल्पबहुत्व है ।**

§ ७७. यह सूत्र गतार्थ है ।

*** स्त्रीवेदका भी यह सब पूरा अल्पबहुत्व जानना चाहिये । आठ कषाय और छह नोकषायोंका भी उदय और उदीरणाको छोड़कर इसी प्रकार अल्पबहुत्व कहना चाहिये । पुरुषवेद और चार संज्वलनका जानकर कहना चाहिये । इतनी विशेषता कि पुरुषवेद और चार संज्वलनोंके अल्पबहुत्वमें बन्धपदका सबसे स्तोकपना जानना चाहिये ।**

§ ७८. इस प्रकार इस अल्पबतुत्वके समाप्त होनेपर कितने भागको उपशमाता है इस प्रकार इस दूसरी गाथाकी अर्थ प्ररूपण्ा समाप्त हुई । अब आगे तीसरी गाथाकी अवसर प्राप्त अर्थप्ररूपणाको उल्लंधन कर चौथी गाथाके अर्थकी विशेष व्याख्या करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

कमगुल्लंघिय परूवणा आढविज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, चउत्थगाहत्थविहासाए चेव तदियगाहत्थस्स वि पाएण गयत्थभावपदंसणट्ठं तहा परूवणावलंबणादो ।

*** कं करणं वोच्छिज्जदि अव्वोच्छिण्णं च होइ कं करणं ति विहासा ।**

§ ७९. एदस्स ताव चउत्थगाहापुव्वद्धस्स अत्थविहासा कीरदि त्ति भणिदं होइ । अप्पसत्थउवसामणादिकरणेसु कसायउवसामगस्स कम्मि अवत्थाविसेसे कदमं करणं वोच्छिज्जदि कदमं वा ण वोच्छिज्जदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिच्छयकरणट्ठ-मेदस्सावयारो ।

*** तं जहा ।**

§ ८०. सुगममेदं पुच्छावक्कं । एवं च पुच्छाविसईकयपयदगाहापुव्वद्धविहासणं कुणमाणो तत्थ ताव करणभेदाणं चेव संखाए सह णामणिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** अट्ठविहं ताव करणं, जहा अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्ती-करणं णिकाचणाकरणं बंधकरणं उदीरणकरणं ओकड्डणाकरणं उक्कड्डणा-करणं संकामणकरणं च ८ ।**

शंका—इस प्रकार क्रमको उल्लंघन करके आगेकी प्ररूपणा किसलिए आरम्भ की जा रही है।

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि चौथी गाथाकी विशेष व्याख्या करनेसे ही तीसरी गाथाका अर्थ भी प्रायः गतार्थ हो जाता है यह दिखलानेके लिए उस प्रकार प्ररूपणाका अवलम्बन लिया है।

*** 'कौन करण व्युच्छिन्न होता है और कौन करण अव्युच्छिन्न रहता है' इसकी विभाषा की जाती है ।**

§ ७९. सर्व प्रथम इस चौथी गाथाके पूर्वार्धकी अर्थविभाषा करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अप्रशस्त उपशामना आदि कारणोंमेंसे कषायोंकी उपशमना करनेवाले जीवके किस अवस्था-विशेषमें कौन करण व्युच्छिन्न होता है और कौन करण व्युच्छिन्न नहीं होता है इस अर्थ विशेषका निश्चय करनेके लिये इस सूत्रका अवतार हुआ है।

*** वह जैसे ।**

§ ८०. यह पृच्छावाक्य सुगम है। इस प्रकार पृच्छाके विषय किये गये प्रथम गाथाके पूर्वार्धका व्याख्यान करते हुए सर्व प्रथम वहाँ करणभेदोंका ही संख्याके साथ नाम निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** करण आठ प्रकारके हैं । यथा—अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण, निकाचनाकरण, बन्धनकरण, उदीरणाकरण, अपकर्षणकरण, उत्कर्षणकरण और संक्रमणकरण ।**

§ ८१. एवमट्ठविहं करणं। एवमेदाणि अट्ठकरणाणि एत्थ विवक्खियाणि त्ति भणिदं होदि। एदेसिं करणाणं लक्खणपरूवणा सुगमा त्ति णेह पुणो पवंचिज्जदे गंथगउरवभएण। संपहि एदेसु करणेसु केसिं कम्माणं कम्हि उद्देसे कं करणं वोच्छिज्जदि कं वा ण वोच्छिण्णं इदि एदमत्थविसेसं मूलपयडीओ अस्सियूण परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एदेसिं करणाणं अणियट्टिपढमसमए सव्वकम्माणं पि अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं च वोच्छिण्णाणि।**

§ ८२. एदेसिमणंतरणिद्दिट्ठाणमट्ठण्हं करणाणं मज्झे अणियट्टिपढमसमए ताव सव्वेसिं कम्माणं णाणावरणादीणं अप्पसत्थउवसामणादीणि तिण्णि करणाणि वोच्छिण्णाणि, अणियट्टिकरणपरिणामपाहम्मेण तेसिं करणाणं तिव्वसंकिलेसणिबंधणाणं एत्थ वोच्छेदसिद्धीए बाहाणुवलंभादो। संपहि सेसकरणेसु केसिं कम्माणं केत्तियाणि करणाणि होंति त्ति जाणावणट्ठमुत्तरो सुत्तणिबंधो—

*** सेसाणि ताधे आउगवेदणीयवज्जाणं पंच वि करणाणि अत्थि।**

§ ८३. तदवत्थाए आउगवेदणीयवज्जाणं छण्हं मूलपयडीणं सेसाणि बंधणोदीरणोकड्डुक्कड्डणसंकमणाकरणाणि च पंच वि होंति, तेसिमज्ज वि वोच्छेदाभावादो।

---

§ ८१. इस प्रकार करण आठ प्रकारके हैं। इस प्रकार ये आठ करण यहाँपर विवक्षित हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इन करणोंके लक्षणोंकी प्ररूपणा सुगम है, इसलिए यहाँपर ग्रन्थके गौरवको प्राप्त हो जानेके भयसे उनका विस्तार नहीं किया जाता है। अब इन करणोंमेंसे किन कर्मोंके किस स्थानपर कौन करण व्युच्छिन्न होता है और कौन करण व्युच्छिन्न नहीं होता है इसका प्ररूपण करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इन करणोंमेंसे अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें सभी कर्मोंके अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण व्युच्छिन्न हो जाते हैं।**

§ ८२. इन अनन्तर पूर्व निर्दिष्ट करणोंमेंसे अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें सर्वप्रथम सब ज्ञानावरणादि कर्मोंके अप्रशस्त उपशामना आदि तीन करण व्युच्छिन्न हो जाते हैं। ये तीनों करण तीव्र संक्लेशके निमित्तसे होते हैं इसलिए यहाँ पर अनिवृत्तिकरणके माहात्म्यसे तीव्र संक्लेशनिमित्तक उन करणोंकी व्युच्छित्तिकी सिद्धिमें कोई बाधा नहीं पाई जाती। अब किन कर्मोंके शेष करणोंमेंसे कितने करण होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** आयु कर्म और वेदनीय कर्मको छोड़कर वहाँ शेष पांचों ही करण होते हैं।**

§ ८३. उस अवस्थामें आयुकर्म और वेदनीय कर्मको छोड़कर छह मूल प्रकृतियोंके शेष बन्धन, उदीरणा, अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमण करण पाँचों ही होते हैं, क्योंकि उनका अभी भी विच्छेद नहीं हुआ है।

कधं मूलपयडीणं संकमणाकरणस्स संभवो, तासु परत्थाणसंकतीए अणब्भुवगमादो त्ति णासंकणिज्जं, उत्तरपयडिदुवारेण तासिं पि तदुववत्तीए विरोहाभावादो। संपहि एत्थ परिवज्जिदाणं आउअवेदणीयाणं केत्तियाणि करणाणि होंति त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमिदमाह—

*** आउगस्स ओवट्टणाकरणमत्थि सेसाणि सत्तकरणाणि णत्थि।**

§ ८४. आउअस्स ताव ओवट्टणाकरणमेक्कं चेव एत्थ संभवइ, सेससत्तकरणाणमेत्थ संभवाणुवलंभादो। तं जहा—णिरयाउअस्स बंधणकरणमुक्कड्डणाकरणं च मिच्छाइट्ठिम्मि अत्थि। उवरिमगुणट्ठाणेसु णत्थि। ओवट्टणकरणमुदओदीरणा-उवसमणिकाचणाणिधत्तीकरणं च संतं जाव असंजदसम्मादिट्ठि त्ति, संकामणाकरणं णत्थि चेव। एत्थ संतोदयाणं परूवणा पसंगागदो त्ति णासंबद्धा, तिरिक्खाउअस्स बंधण० उक्कड्डण० जाव सासणसम्माइट्ठि त्ति, संकामणा णत्थि। सेसाणं करणाणं संतोदयाणं च संजदासंजदम्मि वोच्छेदो, तत्तो परं तदसंभवादो। मणुसाउअस्स बंधण० उक्कड्डण० जाव असंजदसम्माइट्ठि त्ति, उदीरणा जाव पमत्तो त्ति, ओकड्डणा जाव सजोगिचरिमसमओ त्ति, उदओ संतं च जाव अजोगिचरिमसमओ त्ति, उवसामणा० णिकाचणा० णिधत्तीकरणं जाव अपुव्वचरिमसमओ त्ति, संकामणा णत्थि।

शंका—मूल प्रकृतियोंका संक्रमण करण कैसे सम्भव है, क्योंकि उनमें परस्थान संक्रम नहीं स्वीकार किया गया है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा उनका भी संक्रम बन जानेमें विरोधका अभाव है। अब यहाँ जिनका निषेध किया गया है ऐसे आयु कर्म और वेदनीय कर्मके कितने करण होते हैं ऐसी आशंकाका निराकरण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** आयुकर्मका अपवर्तनाकरण है शेष सात करण नहीं हैं।**

§ ८४. आयुकर्मकी तो अपवर्तना एक ही यहाँ सम्भव है, शेष सात करण यहाँ सम्भव नहीं हैं। जैसे—नरकायुका बन्धनकरण और उत्कर्षणाकरण मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें होते हैं, उपरिम गुणस्थानोंमें नहीं होते। अपवर्तन, उदय, उदीरणा, उपशम, निकाचना और निधत्तीकरण जहाँ तक सत्त्व है ऐसे असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक होते हैं। इसका संक्रमण करण होता ही नहीं। यहाँ सत्त्व और उदयका कथन प्रसंगसे आ गया है, इसलिए असम्बद्ध नहीं है। तिर्यञ्चायुका बन्धन और उत्कर्षण करण सासादन गुणस्थान तक होता है। इसकी संक्रमणा होती ही नहीं। शेष पाँच करणों तथा सत्त्व और उदयका संयतासंयत गुणस्थानमें विच्छेद हो हो जाता है, क्योंकि उसके आगे तिर्यञ्चायुका असत्त्व होनेसे वे करण सम्भव नहीं हैं। मनुष्यायुके बन्धनकरण और उत्कर्षणकरण असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक सम्भव हैं। उदीरणा प्रमत्त गुणस्थान तक होती है। अपकर्षण करण सयोगिकेवली गुणस्थान तक होता है। उदय और सत्त्व अयोगिकेवली गुणस्थान तक होते हैं। उपशमना करण, निकाचना करण और निधत्तीकरण अपूर्व-

देवाउअस्स बंधण० उक्कड्डणा जाव अप्पमत्तो त्ति, उदयोदीरणा च जाव असंजदसम्माइट्ठि त्ति, ओकड्डण० संतं च जाव उवसंतकसायो त्ति, उवसामणा० णिकाचणा० णिधत्तीकरणं जाव अपुव्वकरणोवसामगचरिमसमओ त्ति। संकामणा णत्थि। तदो आउअमूलपयडीए अणियट्टिकरणपविट्ठपढमसमए ओवट्टणाकरणं एक्कं चेव, ण सेसाणि त्ति सिद्धं, संतोदयाणमट्ठसु करणेसु अविवक्खियत्तादो।

*** वेदणीयस्स बंधणाकरणमोवट्टणाकरणमुवट्टणाकरणं संकमणाकरणं एदाणि चत्तारि करणाणि अत्थि सेसाणि चत्तारि करणाणि णत्थि।**

§ ८५. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे। तं जहा—सादावेदणीयस्स बंधण० ओकड्डणाकरणं[1] च जाव सजोगिचरिमसमओ त्ति, उक्कड्डणा० जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमओ त्ति, उदीरणा० संकमणा जाव पमत्तसंजदो त्ति, उवसामणा० णिकाचणा० णिधत्ती० जाव अपुव्वकरणचरिमसमओ त्ति। उदओ संतं च जाव अजोगिचरिमसमयो त्ति। आसादावेदणीयस्स बंधण० उक्कड्डण० उदीरणाकरणं च जाव पमत्तो त्ति, संकमणा० जाव सुहुम० चरिमसमओ त्ति, ओक्कड्डणा[2] जाव सजोगि त्ति, उवसामणा० णिकाचणा० णिधत्तीकरणं च अपुव्वकरणचरिमसमओ त्ति, उदयो संतं च अजोगिचरिमसमओ त्ति। तदो वेदणीयमूलपयडीए एदम्मि विसए बंधणकरणमो-

करण गुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं। इसकी संक्रमणा नहीं होती। देवायुके बन्धन करण और उत्कर्षणकरण अप्रमत्तगुणस्थान तक होते हैं। उदय और उदीरणाकरण असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक होते हैं। अपकर्षणकरण और सत्त्व उपशान्तकषाय गुणस्थान तक होते हैं। तथा उपशामनाकरण निकाचनाकरण और निधत्तीकरण अपूर्वकरणगुणस्थानके अन्तिम समय तक होते हैं। इसकी संक्रमणा नहीं होती। इसलिए आयु मूल प्रकृतिका अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेके प्रथम समयमें एक अपवर्तनाकरण ही है, शेष करण नहीं है यह सिद्ध हुआ, क्योंकि सत्त्व और उदय आठों करणोंमें अविवक्षित हैं।

*** वेदनीयकर्मके बन्धनकरण, अपवर्तनाकरण, उद्वर्तनाकरण और संक्रमणाकरण ये चार करण होते हैं। शेष चार करण नहीं होते।**

§ ८५. इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—सातावेदनीयके बन्धनकरण और अपकर्षणकरण सयोगिकेवलीके अन्तिम समय तक होते हैं। उत्कर्षणकरण सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समय तक होता है। उदीरणाकरण और संक्रमणा प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक होता है। उपशामनाकरण, निकाचनाकरण और निधत्तीकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। उदय और सत्त्व अयोगिकेवलीके अन्तिम समय तक होते हैं। असातावेदनीयके बन्धनकरण, उत्कर्षणकरण और उदीरणाकरण प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक होते हैं। संक्रमणाकरण सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समय तक होता। अपकर्षणाकरण सयोगिकेवली गुणस्थान तक होता है। उपशामनाकरण, निकाचना-

१. आदर्शप्रतौ ता०प्रतौ च उक्कड्डणाकरणे इति पाठः। २. आदर्शप्रतौ ता०प्रतौ च उक्कड्डणा इति पाठः।

वट्टणाकरणमुव्वट्टणाकरणं संकामणाकरणं चेदि एदाणि चत्तारि चेव करणाणि होंति ण सेसाणि त्ति सम्ममवहारिदं। एवमेदं परूविय संपहि एस कमो एत्तो उवरि केत्तिय-मद्धाणं गच्छदि त्ति आसंकाए इदमाह—

*** मूलपयडीओ पडुच्च एस कमो ताव जाव चरिमसमयबादर सांपराइयो त्ति।**

§ ८६. एत्थ मूलपयडिणिद्देसो एदस्स गाहापुव्वद्धस्स मूलपयडिविसयत्तं सूचेदि। तदो मूलपयडिविवक्खाए एसो अणंतरपरूविदो करणवोच्छेदावोच्छेदकमो ताव दट्ठव्वो जाव अणियट्टिबादरसांपराइयचरिमसमओ त्ति। कुदो? एदम्हि अंतरे पयदपरूवणाए णाणत्ताणुवलंभादो।

*** सुहुमसांपराइयस्स मोहणीयस्स दो करणाणि ओवट्टणाकरण-मुदीरणाकरण च सेसाणं कम्माणं ताणि चेव करणाणि।**

§ ८७. एत्थ सुहुमसांपराइयम्मि मोहणीयस्स बंधो णत्थि। तदो चेव उक्कड्डणा संकमो च णत्थि त्ति वत्तव्वं, बंधणिबंधणाणं तेसिं बंधाभावे पवुत्ति-विराहादो। तदो ओकड्डणाकरणमुदीरणाकरणं चेदि दो चेव एत्थ मोहणीयस्स करणाणि होंति त्ति सिद्धं। सेसाणं पुण कम्माणं ताणि चेव पुव्वपरूविदाणि करणाणि एत्थ वि णायव्वाणि, तत्थ णाणत्ताभावादो।

करण और निधत्तीकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। उदय और सत्व अयोगि-केवलीके अन्तिम समय तक होते हैं। इसलिए वेदनीय मूलप्रकृतिके इस स्थानपर बन्धनकरण, अपवर्तनाकरण, उद्वर्तनाकरण और संक्रमकरण ये चार ही करण होते हैं, शेष नहीं इसका सम्यक् प्रकारसे विचार किया। इस प्रकार इसका कथन करके अब यह क्रम यहाँसे ऊपर कितने स्थान तक जाता है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** मूल प्रकृतियोंकी अपेक्षा यह क्रम बादरसाम्परायके अन्तिम समय तक जानना चाहिये।**

§ ८६. यहाँ चूर्णिसूत्रमें 'मूलप्रकृति' पदका निर्देश इस गाथाके पूर्वार्धके मूलप्रकृति-सम्बन्धी विषयको सूचित करता है। इसलिए मूलप्रकृतिकी विवक्षामें यह अनन्तर पूर्व कहा गया करणोंके विच्छेद और अविच्छेदका क्रम अनिवृत्ति बादरसाम्परायके अन्तिम समय तक जानना चाहिए, क्योंकि इस अन्तरमें प्रकृत प्ररूपणाका नानापना नहीं उपलब्ध होता।

*** सूक्ष्मसाम्पराय जीवके मोहनीयके दो करण होते हैं—अपवर्तनाकरण और उदीरणाकरण तथा शेष कर्मोंके पूर्वोक्त वे ही करण होते हैं।**

§ ८७. यहाँ सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें मोहनीयका बन्ध नहीं होता इसीलिए उसका यहाँ उत्कर्षण और संक्रम नहीं होता ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि बन्ध निमित्तक उनकी बन्धके अभावमें प्रवृत्ति होनेमें विरोध है। अतः अकर्षणाकरण और उदीरणाकरण ये दो ही

*** उवसंतकसायवीयरायस्स मोहणीयस्स वि णत्थि किंचि वि करणं मोत्तूण दंसणमोहणीयं, दंसणमोहणीयस्स वि ओवट्टणाकरणं संकमणाकरणं च अत्थि ।**

§ ८८. उवसंतकसायवीयरायस्स मोहणीयस्स णत्थि किंचि वि करणमिदि एदेण सामण्णवयणेण दंसणमोहणीयस्स वि सव्वकरणपडिसेहे पसत्ते तण्णिवारणट्ठं मोत्तूण दंसणमोहणीयमिदि वुत्तं । तत्थ वि ओकड्डणाकरणं संकमणाकरणं चेदि दो चेव करणाणि णिद्दिट्ठाणि, सेसपरिहारेण दोण्हमेवेदेसिमेत्थ संभवोवलंभादो ।

*** सेसाणं कम्माणं पि ओवट्टणाकरणमुदीरणा च अत्थि, णवरि आउग-वेदणीयाणमोवट्टणा चेव ।**

§ ८९. सेसकम्माणं पि णाणावरणादीणमुवसंतकसायम्मि ओवट्टणाकरण-मुदीरणाकरणं चेदि दो चेव करणाणि होंति, सेसाणमेत्थ संभवाणुवलंभादो । तं जहा—उवसंतकसायम्हि सव्वेसिं कम्माणं बंधो णत्थि । तेण बंधाभावे संकमो वि णत्थि, तस्स तण्णंतरीयत्तादो । तदभावे तस्सहचरिदमुक्कड्डणाकरणं पि णत्थि । तम्हा अणियट्टि०-सुहुमेसु होंताणं पंचण्हं करणाणं मज्झे तिण्हमेदेसिं करणाणमेत्थ वोच्छेदेण सेसाणि दो चेव करणाणि होंति त्ति भणिदं होदि । णवरि आउग-वेयणी-

---

करण यहाँ मोहनीयके होते हैं यह सिद्ध हुआ । परन्तु शेष कर्मोंके पहले कहे गये वे ही करण जानना चाहिये उनके कथनमें कोई भेद नहीं है ।

*** उपशान्तकषाय वीतरागके दर्शनमोहनीयको छोड़कर मोहनीयका कोई भी करण नहीं है । दर्शनमोहनीयका भी अपवर्तनाकरण और संक्रमणाकरण है ।**

§ ८८. उपशान्तकषायवीतरागके मोहनीयका कोई भी करण नहीं है इस प्रकार इस सामान्य वचनसे दर्शनमोहनीयके भी सब करणोंका प्रतिषेध प्राप्त होने पर उसका निषेध करनेके लिए 'दर्शनमोहनीयको छोड़कर' यह वचन कहा है । उसमें भी अपकर्षणाकरण और संक्रमणा-करण ये दो ही करण निर्दिष्ट किए गये हैं, क्योंकि शेष करणोंका अभाव होकर ये दो ही करण यहाँ उसके पाये जाते हैं ।

*** शेष कर्मोंके भी अपवर्तनाकरण और उदीरणाकरण हैं । इतनी विशेषता है कि आयु और वेदनीय कर्मका अपवर्तनाकरण ही है ।**

§ ८९. शेष ज्ञानावरणादि कर्मोके भी अपवर्तनाकरण और उदीरणाकरण ये दो ही करण होते हैं, क्योंकि शेष करण यहाँ पर सम्भव नहीं हैं । यथा—उपशान्तकषायमें सभी कर्मोंका बन्ध नहीं होता, इसलिए बन्धके अभावमें संक्रम भी नहीं होता, क्योंकि वह उसका अविनाभावी है । उसका अभाव होनेपर उसका सहचारी उत्कर्षणाकरण भी नहीं होता । इसलिए अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें होनेवाले पाँच करणोंमेंसे तीन करणोंकी यहाँ व्युच्छित्ति हो जानेके कारण शेष दो ही करण होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इतनी विशेषता है कि आयुकर्म और

याणमुदीरणाकरणस्स पुव्वमेवोच्छिण्णत्तादो ओवट्टणाकरणमेक्कं चेव होदि त्ति दट्ठव्वं, तत्थ पयारंतराणुवलंभादो। वेदणीयस्स बंधणकरणेण वि एत्थ होदव्वं, उवसंत-खीणकसाय-सजोगीसु सादावेदणीयबंधस्स पडिसेहाभावादो। तदो ओवट्टणाकरणमेक्कं चेवेत्ति णेदमवहारणं घडदे? ण एस दोसो, तत्थ ट्ठिदिबंधाभावेण तव्बंधस्सावंधसमाणत्तेण विवक्खियत्तादो। यथोक्तं—'शुष्ककुड्यपतितसिकतामुष्टिवदनन्तरसमये निवर्तते कर्मेर्यापथं वीतरागाणामिति'। 'दसकरणीसंगहे' पुण पयडिबंधसंभवमेत्तमवेक्खिय वेदणीयस्स वीयरागगुणट्ठाणेसु वि बंधणकरणमोवट्टणकरणं च दो वि भाणिदाणि त्ति ण किंचि विरुद्धं। संपहि एत्थ तिण्हं घादिकम्माणमुदीरणाकरणमोवट्टणाकरणं च जाव समयाहियावलियखीणकसायो त्ति, तत्तो परं तदुभयसंभवाणुवलंभादो। णामा-गोदाणमुदीरणोवट्टणाकरणाणि वेदणीयाउआणमोवट्टणाकरणं च जाव सजोगिचरिमसमओ त्ति। एवं गाहापुव्वद्धस्स अत्थविहासा समत्ता। संपहि एदेणेव गाहापुव्वद्धविवरणेण पच्छद्धो वि गयत्थो त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** कं करणं उवसंतं अणुवसंतं च कं करणं ति एसा सव्वा वि गाहा विहासिदा भवदि।**

वेदनीय कर्मसम्बन्धी उदीरणाकरण पहले ही व्युच्छिन्न हो जानेके कारण यहाँ एक अपवर्तनाकरण ही होता है ऐसा यहाँ जानना चाहिए, क्योंकि उन कर्मोंका यहाँ प्रकारान्तर उपलब्ध नहीं होता।

शंका—वेदनीयकर्मका बन्धनकरण भी यहाँ होना चाहिए, क्योंकि उपशान्तकषाय, क्षीणकषाय और सयोगी गुणस्थानोंमें सातावेदनीयके बन्धका निषेध नहीं है? इसलिए इसका यहाँ एक अपवर्तनाकरण ही होता है ऐसा निश्चय करना घटित नहीं होता?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि इन गुणस्थानोंमें स्थितिबन्धका अभाव होनेसे सातावेदनीयका बन्ध अबन्धके समान विवक्षित है। कहा भी है—शुष्क दीवालपर गिरी हुई मूठ भर धूलिके समान वीतरागोंके सातावेदनीयका ईर्यापथ कर्म अनन्तर समयमें ही निवृत्त हो जाता है। दशकरणीसंग्रहमें तो प्रकृतिबन्धकी सम्भावनाकी अपेक्षा करके वेदनीय कर्मके वीतराग गुणस्थानोंमें भी बन्धनकरण और अपवर्तनाकरण ये दो करण कहे गये हैं, इसलिए कुछ विरुद्ध नहीं है। यहाँ तीन घाति कर्मोंके उदीरणाकरण और अपवर्तनाकरण क्षीणकषाय गुणस्थानमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक होते है, उससे आगे उन दोनों करणोंकी उपलब्धि नहीं पाई जाती। नामकर्म और गोत्रकर्मके उदीरणाकरण और अपवर्तनाकरण तथा वेदनीय और आयुकर्मके अपवर्तनाकरण सयोगिकेवलीके अन्तिम समय तक होते हैं। इस प्रकार गाथाके पूर्वार्धके इसी विवरणसे उत्तरार्ध भी गतार्थ हो गया इस प्रकार इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** कौन करण उपशान्त रहता है और कौन करण अनुपशान्त रहता है इस प्रकार यह पूरी गाथा ही विभाषित हो जाती है।**

§ ९०. गाहापुव्वद्धविहासाए चेव गाहापच्छद्धो त्ति विहासिदो त्ति तदो एसा चेव गाहा सव्वा सपुव्वपच्छद्धा विहासिदा दट्ठव्वा त्ति वुत्तं होइ। कुदो? जाणि चेव करणाणि जत्थ वोच्छिण्णाणि ताणि चेव तत्थ उवसंताणि जाणि च ण वोच्छिण्णाणि ताणि तत्थाणुवसंताणि, त्ति पुव्वद्धविहासाए चेव पच्छद्धस्स विगयत्थत्तदंसणादो।

§ ९१. अहवा मूलुत्तरपयडीणं साहारणभावेण एदम्मि करणे उवसंते सेसकरणाणि किमुवसंताणि आहो अणुवसंताणि त्ति सण्णियाससरूवेण करणाणमुवसंतभावगवेसणट्ठमेसो गाहापच्छद्धो समोइण्णो त्ति वक्खाणेयव्वं। ण च एवं संते अणंतरोवरिमगाहाए विहासिज्जमाणेण अत्थेणेदस्स पुणरुत्तभावो आसंकणिज्जो, एदेण सूचिदत्थस्स तत्थ कालेण विसेसियूण परूवणाए तद्दोसासंभवादो। एवं तदियगाहमुल्लंघियूण चउत्थगाहाए अत्थो विहासिदो। संपहि तदियगाहापुव्वद्धविहासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** केच्चिरमुवसामिज्जदि संकमणमुदीरणा च केवचिरं ति एदम्हि सुत्ते विहासिज्जमाणे एदाणि चेव अट्ठकरणाणि उत्तरपयडीणं पुध पुध विहासियव्वाणि।**

§ ९२. एदम्हि तदियगाहापुव्वद्धे विहासिज्जमाणे जहा चउत्थगाहमस्सियूण

---

§ ९०. गाथाके पूर्वार्धके व्याख्यात होनेपर ही गाथाका उत्तरार्ध भी व्याख्यात हो जाता है, इसलिए पूर्वार्ध और उत्तरार्धके साथ यह पूरी गाथा ही व्याख्यात जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि जो भी करण जिस स्थान पर व्युच्छिन्न हो गए वे वहाँ ही उपशान्त हो गए और जो व्युच्छिन्न नहीं हुए वे वहाँ अनुपशान्त रहे आये इस प्रकार पूर्वार्धके व्याख्यानमें ही उत्तरार्धकी गतार्थता देखी जाती हैं।

§ ९१. अथवा मूल और उत्तर प्रकृतियोंके साधारणरूपसे इस करणके उपशान्त होनेपर शेष करण क्या उपशान्त होते हैं या अनुपशान्त रहते हैं इस प्रकार सन्निकर्षस्वरूपसे करणोंके उपशान्त भावकी गवेषणा करनेके लिए यह गाथाका उत्तरार्ध आया है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए। और ऐसा होनेपर अनन्तर उपरिम गाथामें प्ररूपित किए जानेवाले अर्थके साथ इसके पुनरुक्तपनेकी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इस द्वारा सूचित किये गए अर्थकी वहाँ कालको विशेषण बनाकर प्ररूपणा करनेपर उक्त दोष सम्भव नहीं रहता। इस प्रकार तीसरी गाथाको उल्लंघन करके चौथी गाथाके अर्थका व्याख्यान किया। अब तीसरी गाथाके पूर्वार्धका व्याक्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं।

*** कितने काल तक कौन प्रकृति उपशमाई जाती है तथा संक्रम और उदीरणा कितने काल तक होते हैं इस प्रकार इस सूत्रके व्याख्यात होनेपर उत्तर प्रकृतियोंके ये ही आठ करण पृथक्-पृथक् व्याख्यान किये जाने चाहिये।**

§ ९२. इस तीसरी गाथाके पूर्वार्धका व्याख्यान करनेपर जिस प्रकार चौथी गाथाका

मूलपयडीसु अट्ठण्हमेदेसिं करणाणं मग्गणा कदा तहा एत्थ वि एदाणि चेव अट्ठ-करणाणि उत्तरपयडीणं पादेक्कणिरुंभणं कादूण पुध पुध विहासियव्वाणि, मूलपयडीसु विहासिदाणमट्ठण्हं करणाणमुत्तरपयडीसु कालमस्सियूण विहासट्ठं एदस्स गाहापुव्व-द्धस्स समोइण्णत्तादो त्ति। एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। अदो चेव कममुल्लंघियूण तदियगाहाविहासावसरे चउत्थगाहा विहासिदा।

§ ९३. संपहि कधमेदं गाहापुव्वद्धसुत्तं कालेण विसेसियूण उत्तरपयडीसु करणाण-मुवसंताणुवसंतभावपरूवयमिदि एवंविहासंकाए णिरारेगीकरणट्ठमेत्थ किंचि अवय-वत्थपरामरसं कस्सामो। 'केवचिरमुवसामिज्जदि' एवं भणिदे अंतरकरणे णिट्ठिदे संते केसिं कम्माणं कदमं करणं केवचिरेण कालेण उवसामिज्जदि त्ति, एदेण णवुंसय-वेदादिपयडीसु पडिबद्धाणं सव्वेसिमेव करणाणमुवसामणाए कालविसेसो पुच्छिदो होइ। 'संकमणमुदीरणा च केवचिरं' एदेण वि सुत्तावयवेण तेसिं चेव करणाणं संकमणोदीरणादीणमणुवसंतावत्था कालविसेसिदा पुच्छिदा होदि, तेसिमप्पणो सरूवेण पवुत्ती अणुवसंतभावो तेसिं चेव सगसरूवेणापवुत्ती उवसंतभावो त्ति विवक्खियत्तादो।

§ ९४. संपहि एत्थ पयदत्थमग्गणाए कीरमाणाए मूलपयडिभंगाणुसारेण सव्वेसिं कम्माणं करणवोच्छेदावोच्छेदो अणुगंतव्वो। तं जहा—णवुंसयवेदस्स ताव

आलम्बन लेकर मूल प्रकृतियोंमें इन आठ करणोंका अनुसन्धान किया उसी प्रकार यहाँ भी उत्तर प्रकृतियोंमेंसे एक-एक प्रकृतिको विवक्षित करके इन्हीं आठ करणोंका पृथक्-पृथक् व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि मूल प्रकृतियोंमें व्याख्यात आठ करणोंका उत्तर प्रकृतियोंमें कालका आलम्बन लेकर व्याख्यान करनेके लिए इस गाथाके पूर्वार्धका अवतार हुआ है। यह इस सूत्रका भावार्थ है। और इसीलिए उल्लंघन करके तीसरी गाथाके व्याख्यानके समय चौथी गाथाका व्याख्यान किया।

§ ९३. अब यह गाथासूत्रका पूर्वार्ध कालको विशेषण बनाकर उत्तर प्रकृतियोंमें करणोंके उपशान्त और अनुपशान्त अवस्थाका प्ररूपण किस प्रकार करता है इस प्रकार ऐसी आशंकाके होनेपर निःशंक करनेके लिए कुछ अवयवार्थका परामर्श करते हैं—'कितने कालके भीतर उपशामना की जाती है' ऐसा कहने पर अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेपर किन कर्मोंका कौनसा करण कितने कालके द्वारा उपशमाया जाता है इसप्रकार इस वचन द्वारा नपुंसक वेद आदि प्रकृतियोंसे सम्बन्ध रखनेवाले सभी करणोंका उपशामनामें लगनेवाला कालविशेष पूँछा गया है। 'संक्रमण और उदीरणा कितने काल तक होते हैं' इस प्रकार इस सूत्र वचन द्वारा उन्हीं संक्रमण और उदीरणा आदि करणोंकी काल सहित अनुपशान्त अवस्था कितने काल तक रहती है यह पूँछा गया है। उन करणोंका अपने स्वरूपसे प्रवृत्त रहना अनुपशान्त अवस्था है और उन्हीं करणोंका अपने स्वरूपसे प्रवृत्त नहीं रहना उपशान्त अवस्था है यह यहाँ विवक्षित है।

§ ९४. अब यहाँ पर प्रकृत अर्थकी गवेषणा करनेपर मूलप्रकृतियोंके भंगके अनुसार सभी कर्मोंके करणोंका विच्छेद और अविच्छेद जानना चाहिए। यथा—नपुंसकवेदके तो अनिवृत्ति-

अणियट्टिकरणपढमसमए अप्पसत्थउवसामणादीणि तिण्णि करणाणि णट्ठाणि त्ति, तेसिं सा चेव पसत्थकरणोवसामणा, अप्पसत्थभावेणणुवसंताणं तेसिं पसत्थभावेणो-वसंतभावसिद्धीए पडिबंधाभावादो। सेसाणि करणाणि अप्पणो सव्वोवसमट्ठाणे णट्ठाणि। णवरि सेढीए णवुंसयवेदस्स बंधणकरणं णात्थि, तदो चेव उक्कड्डणाकरणं पि णत्थि त्ति वत्तव्वं। एवमित्थिवेदस्स वि। एवं छण्णोकसायाणं पि वत्तव्वं, विसेसाभावादो। एवमट्ठकसायाणं पि वत्तव्वं। णवरि अप्पप्पणो सव्वोवसामणाविसयो जाणियव्वो। एवं पुरिसवेदचदुसंजलणाणं पि जाणिदूण पयदत्थमग्गणा कायव्वा। अथवा तिण्हं संजलणाणं बंधणा० उक्कड्डणा० संकामण० ओकड्डणा० उदय० उदीरणा० जाव अणियट्टि त्ति। उवसामणा० णिकाचणा० णिधत्ती० जाव अपुव्व-करणचरिमसमयो त्ति। संतं पुण जाव उवसंतकसायो त्ति। एवं पुरिसवेदस्स। लोह-संजलणस्स बंधणा० उक्कड्डणा० संकमणा० जाव अणियट्टि त्ति। ओकड्डणा० उदीरणाकरणं च जाव सुहुमसांपराइयसमयाहियावलिया त्ति। उदओ संतं च जाव सुहुमखवगचरिमसमओ त्ति। अधवा संतं जाव उवसंतकसायो त्ति। उवसामणा० णिकाचणा० णिधत्ती० अपुव्वकरणचरिमसमओ त्ति। संपहि आभिणिबोहियणाणा-वरणादीणं अप्पणो मूलपयडिभंगो जाणिय वत्तव्वो। तदो एदीए मग्गणाए समत्ताए गाहापुव्वद्धस्स विहासा समत्ता। संपहि गाहापच्छद्धविहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

करणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामना आदि तीन करण नष्ट हो जाते हैं, इसलिए उनकी वही प्रशस्त करणोपशामना है, क्योंकि अप्रशस्त भावसे अनुपशान्त हुए उनकी प्रशस्तभावसे उप-शान्त भावकी सिद्धिमें प्रतिबन्धका अभाव है। शेष करण अपने सर्वोपशमके स्थानमें नष्ट हो जाते हैं। इतनी विशेषता है कि श्रेणीमें नपुंसकवेदका बन्धनकरण नहीं है और इसीलिए उसका उत्कर्षणाकरण भी नहीं है ऐसा कहना चाहिए। इसी प्रकार स्त्रीवेदका भी कथन करना चाहिए। इसी प्रकार छह नोकषायोंका कथन करना चाहिये, क्योंकि उनके कथनसे इनके कथनमें कोई भेद नहीं है। इसी प्रकार अप्रत्याख्यानावरण आदि आठ कषायोंका भी कथन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपने-अपने सर्वोपशामनाका स्थान जान लेना चाहिए। इसी प्रकार पुरुषवेद और चार संज्वलनोंके प्रकृत अर्थको जानकर गवेषणा करनी चाहिए। अथवा तीन संज्वलनोंके बन्धनकरण, उत्कर्षणाकरण संक्रामण करण, अपकर्षणाकरण, उदय और उदीरणाकरण अनिवृत्तिकरण तक होते हैं। तथा उपशामनाकरण, निकाचनाकरण और निधत्तीकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। परन्तु सत्त्व उपशान्तकषाय गुणस्थान तक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदका जानना चाहिए। लोभसंज्वलनके बन्धनकरण, उत्कर्षणाकरण और संक्रमणाकरण अनिवृत्तिगुणस्थान तक होते हैं। अपवर्तनाकरण और उदीरणाकरण सूक्ष्मसाम्परायमें एक समय अधिक एक आवलि काल रहने तक होते हैं। उदय और सत्त्व सूक्ष्मसाम्परायक्षपकके अन्तिम समय तक होते हैं। अथवा सत्त्व उपशान्त गुणस्थानके अन्तिम समय तक होता है। उपशामनाकरण, निकाचनाकरण और निधत्तीकरण अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक होते हैं। आभिनिबोधिक ज्ञानावरण आदिका भंग अपनी मूल प्रकृतियोंके अनुसार जानकर कहना चाहिए। इस प्रकार इस मार्गणाके समाप्त

*** केवचिरमुवसंतं ति विहासा ।**

§ ९५. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ ९६. एदं पि सुगमं ।

*** उवसंतं णिव्वाघादेण अंतोमुहुत्तं ।**

§ ९७. एदस्सत्थो वुच्चदे—जदि मरणसण्णिदो वाघादो णत्थि तो णवुंसयवेदादिपयडीणं सव्वोवसमणं कादूण अंतोमुहुत्तकालमच्छदि, तत्तो परमुवसमपज्जायस्सावट्ठाणासंभवादो । उवसमसेढिं चडिय सव्वोवसमं कादूण पुणो ओदरमाणस्स जाव पसत्थोवसामणा ण णस्सदि ताव अंतोमुहुत्तकालं सव्वोवसामणाए परिणदो होदूणच्छदि त्ति भणिदं होदि । वाघादेण पुण एगसमओ वि लब्भइ । तं कधं ? णवुंस० पसत्थोवसामणं कादूण एगसमयमच्छिय से काले कालं कादूण देवेसुववण्णो तस्स वाघादेणेयसमओवसममुवलब्भदे । एवमित्थिवेदादीणं पि जोजेयव्वं ।

*** अणुवसंतं च केवचिरं ति विहासा ।**

होनेपर गाथाके पूर्वार्धकी विभाषा समाप्त हुई । अब गाथाके उत्तरार्धकी विभाषा करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** कितने काल तक उपशान्त रहते हैं इसकी विभाषा करते हैं ।**

§ ९५. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ ९६. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** णपुंसकवेद आदि कर्म निर्व्याघातरूपसे अन्तर्मुहूर्त काल तक उपशान्त रहते हैं ।**

§ ९७. इसका अर्थ कहते हैं—यदि मरणसंज्ञावाला व्याघात नहीं होता तो नपुंसकवेद आदि प्रकृतियोंका सर्वोपशम करके वह अन्तर्मुहूर्त काल तक रहता है, क्योंकि इतने कालके बाद उनकी उपशमपर्यायका अवस्थान असम्भव है । उपशमश्रेणिपर चढ़कर और सर्वोपशम करके पुनः उतरनेवालेकी जब तक प्रशस्त उपशामना नष्ट नहीं होती है तब तक अन्तर्मुहूर्त काल सर्वोपशामनासे परिणत होकर यह जीव अवस्थित रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । व्याघातसे तो एक समय भी प्राप्त होता है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—नपुंसेकवेदकी प्रशस्तोपशामना करके और एक समय रहकर तदनन्तर समयमें कालगत होकर जो देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके व्याघातसे एक समय प्रशस्त उपशम उपलब्ध होता है । इसी प्रकार स्त्रीवेद आदिकी अपेक्षा भी योजना करनी चाहिए ।

*** अब कौन कर्म कितने काल तक अनुपशान्त रहते हैं इस पदकी विभाषा करते हैं ।**

§ ९८. सुगमं ।

※ तं जहा ।

§ ९९. एदं पि सुगमं ।

※ अप्पसत्थउवसामणाए अणुवसंताणि कम्माणि णिव्वाघादेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १००. एत्थ उवसामणा दुविहा—पसत्थउवसामणा अप्पसत्थउवसामणा चेदि। तत्थ ताव अप्पसत्थउवसामणाए अणुवसंताणमेसो कालविसेसो सुत्ते णिद्दिट्ठो। तं जहा—उवसमसेढिं चडमाणस्स अणियट्टिपढमसमए अप्पसत्थउवसामणाए णवुंसयवेदादिकम्ममणुवसंतं जादं, तदो अणियट्टिकरणपढमसमयप्पहुडि उवरि चडिय पुणो ओदरमाणस्स जाव अणियट्टिचरिमसमओ त्ति ताव अणुवसंतं भवदि। तदो अपुव्वकरणपढमसमयं पत्तस्स अणुवसंतभावो दट्ठो, अप्पसत्थउवसामणाए तत्थ पुणरुप्पत्तिदंसणादो। एसो णिव्वाघादकालो। वाघादेण पुण एयसमओ भवदि। तं कधं? एगो अपुव्वकरणोवसामगो अणियट्टी जादो। तस्समए चेव तिण्णि करणाणि अणुवसंताणि, तत्थेगसमयमच्छियूण से काले देवेसुप्पण्णपढमसमए पुणो वि अप्पसत्थोवसामणाए पुणरुब्भावो जादो, तेणेगसमओ भवदि। एवं सव्वेसिं पि कम्माणं

---

§ ९८. यह सूत्र सुगम है।

※ वह जैसे।

§ ९९. यह सूत्र भी सुगम है।

※ अप्रशस्त उपशामनारूपसे अनुपशान्त हुए कर्म निर्व्याघातरूपसे अन्तर्मुहूर्त काल तक रहते हैं।

§ १००. प्रकृतमें उपशामना दो प्रकारकी है—प्रशस्त उपशामना और अप्रस्त उपशामना। उनमेंसे सर्वप्रथम अप्रशस्त उपशामनासे अनुपशान्त हुए कर्मोंका सूत्रमें यह काल निर्देश निर्दिष्ट किया गया है। वह जैसे—उपशमश्रेणिपर चढ़नेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामनारूपसे नपुंसकवेद आदि कर्म अनुपशान्त हुए। तत्पश्चात् अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर ऊपर चढ़कर पुनः उतरनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयतक अनुपशान्त रहते हैं। तत्पश्चात् अपूर्वकरणके प्रथम समयको प्राप्त हुए उस जीवके अनुपशान्त भाव दिखाई दिया, क्योंकि अप्रशस्त उपशामनाकी वहाँ पुनः उत्पत्ति देखी जाती है, यह निर्व्याधान विषयक काल है। व्याघातकी अपेक्षा तो एक समय काल प्राप्त होता है।

शंका—वह कैसे?

समाधान—एक अपूर्वकरण उपशामक जीव अनिवृत्तिकरणको प्राप्त हुआ। वहाँ उसी समयमें तीन करण अनुपशान्त हो गये। पुनः वहाँ एकसमय रहकर तदनन्तर समयमें देवोंमें उत्पन्न हुए उस जीवके प्रथम समयमें अप्रशस्त उपशामनाका पुनः उद्भव हो गया, इससे उसका एक

पसत्थोवसामणाए पुण अणुवसंतस्स जह० अंतोमुहुत्तं उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टमिदि। एसो अत्थो सुगमो त्ति सुत्ते अणुवइट्ठो, सादिसपज्जवसिदत्तकालस्स जहण्णुक्कस्सेण तप्पमाणत्तोवलंभादो। एवमुवसामगपडिबद्धाणं चउण्हं मूलगाहाणं अत्थविहासा समत्ता। एत्तो परिवदमाणयस्स विहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एत्तो पडिवदमाणयस्स विहासा।**

§ १०१. चडमाणोवसामगमस्सियूण एसा सव्वा वि विहासा कदा। एत्तो सेसचदुगाहापडिबद्धा पडिवदमाणगस्स विहासा अहिकया दट्ठव्वा त्ति पयदसंभालण-वक्कमेदं। एत्थ पडिवदमाणगो त्ति वुत्ते ओदरमाणो घेत्तव्वो। सा पुण पडिवद-माणगस्स विहासा दुविहा होदि—परूवणाविहासा सुत्तविहासा चेदि। तत्थ परूवणा-विहासा णाम सुत्तपदाणि अणुच्चारिय सुत्तसूचिदासेसत्थस्स वित्थरपरूवणा। सुत्त-विहासा णाम गाहासुत्ताणमवयवत्थपरामरसमुहेण सुत्तफासो। तत्थ ताव परूवणा-विहासाए पुव्वमणुगमो कायव्वो त्ति पदुप्पायणट्ठमिदमाह—

*** परूवणाविहासा ताव पच्छा सुत्तविहासा।**

§ १०२. परूवणाविहासा ताव पुव्वं गमणिज्जा, तीए विहासिदाए सुत्तविहासा

समय काल प्राप्त होता है। इसी प्रकार सभी कर्मोंकी अपेक्षा प्रशस्त उपशामनाके अनुपशान्त रहनेका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। यह अर्थ सुगम है, इसलिए सूत्रमें इसका निर्देश नहीं किया, क्योंकि सादि-सपर्यवसित काल जघन्य और उत्कृष्टरूपसे तत्प्रमाण उपलब्ध होता है। इस प्रकार उपशामकसे सम्बन्ध रखनेवाली चार मूल गाथाओंकी अर्थविभाषा समाप्त हुई। आगे उपशमश्रेणिसे गिरनेवाले जीवका व्याख्यान करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** आगे उपशमश्रेणिसे गिरनेवाले जीवकी प्ररूपणा करते हैं।**

§ १०१. चढ़नेवाला उपशामकका आश्रय लेकर यह सम्पूर्ण प्ररूपणा की। आगे गिरनेवाले-को लक्ष्यमें रखकर शेष चार गाथाओंसम्बन्धी प्ररूपणा अधिकृत जाननी चाहिये इसप्रकार प्रकृत विषयको संम्हालनेवाला यह सूत्रवचन है। यहाँ चूर्णिसूत्रमें गिरनेवाला ऐसा कहनेपर उपशम-श्रेणिसे उतरनेवाला जीव लेना चाहिये। उतरनेवालेकी वह प्ररूपणा दो प्रकारकी है—प्ररूपणा-विभाषा और सूत्रविभाषा। उनमेंसे सूत्रपदोंका उच्चारण किये बिना सूत्रसे सूचित होनेवाले अशेष अर्थकी विस्तारसे प्ररूपणा करनेका नाम प्ररूपणाविभाषा है। तथा गाथासूत्रोंके प्रत्येक पदके अर्थके परामर्शद्वारा सूत्रका स्पर्श करनेका नाम सूत्रविभाषा है। उनमेंसे सर्वप्रथम प्ररूपणा विभाषाका पहले अनुगम करना चाहिये इस बातका ज्ञान करानेकेलिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** यहाँ सर्वप्रथम प्ररूपणाविभाषा करके पश्चात् सूत्रविभाषा करनी चाहिये।**

§ १०२. सर्व प्रथम प्ररूपणाविभाषा जाननी चाहिये। उसकी विभाषा करनेपर सूत्रविभाषा

सुहावगमा होदि त्ति पच्छा सुत्तविहासा कायव्वा त्ति वुत्तं होदि। तदो परूवणाविहासाए ताव पयदमिदि पदुप्पायणपरमुवरिमसुत्तं—

*** परूवणाविहासा।**

§ १०३. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ १०४. एदं पि सुगमं।

*** दुविहो पडिवादो—भवक्खएण च उवसामणक्खएण च।**

§ १०५. सो खलु पडिवादो दुविहो होदि—भवक्खयणिबंधणो उवसामणक्खयणिबंधणो चेदि। तत्थ भवक्खयणिबंधणो णाम उवसमसेढिसिहरमारूढस्स तत्थेव झीणाउअस्स कालं कादूण कसायेसु पडिवादो। जो उण संते वि आउए उवसामणद्धाक्खएण कसायेसु पडिवादो सो उवसामणक्खयणिबंधणो णाम। तत्थ ताव भवक्खयणिबंधणस्स पडिवादस्स थोववत्तव्वपडिबद्धस्स संखेवेण विहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** भवक्खएण पदिदस्स सव्वाणि करणाणि एगसमएण उग्घाडिदाणि।**

जाननेके लिए सरल है, इसलिए बादमें सूत्रविभाषा करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिए सर्वप्रथम प्ररूपणाविभाषा प्रकृत है इस बातका कथन करनेवाला आगेका सूत्र आया है—

*** प्ररूपणाविभाषा प्रकृत है।**

§ १०३. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ १०४. यह सूत्र भी सुगम है।

*** भवक्षय और उपशामनाक्षयके भेदसे प्रतिपात दो प्रकारका है।**

§ १०५. वह प्रतिपात नियमसे दो प्रकारका है—भवक्षयनिमित्तक और उपशामनाक्षयनिमित्तक। प्रकृतमें जो उपशमश्रेणिके शिखरपर आरूढ़ है और जिसकी वहीं आयु समाप्त हो गई है उसके कालगत होकर कषायोंमें गिरनेका नाम भवक्षयनिमित्तक प्रतिपात है। और जो आयुके रहनेपर भी उपशामककालके क्षय होनेसे कषायोंमें गिरता है वह उपशामकक्षयनिमित्तक प्रतिपात है। उनमेंसे स्तोक वक्तव्यसे सम्बन्ध रखनेवाले भवक्षयनिमित्तक प्रतिपातकी सर्व प्रथम संक्षेपसे प्ररूपणा करते हुये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** भवक्षयसे गिरे हुए जीवके सब करण एक समयमें उद्घाटित हो जाते हैं।**

§ १०६. एदस्स सुत्तस्सत्थो—भवक्खएण पडिवादो णाम उवसंतकसायसगद्धाये पढमादिसमयेसु जत्थ वा तत्थ वा खीणाउअस्स देवेसुप्पण्णपढमसमए भवदि। एवं भवक्खएण पदिदस्स पढमसमयदेवस्स सव्वाणि करणाणि बंधणोदीरणासंकमणादीणि पुव्वमुवसामणावसेण णिरुद्धदुवाराणि एगसमएणेव समुग्घादिदाणि, अट्ठ वि करणाणि सव्वोवसामणापज्जायपरिच्चाएण अप्पप्पणो सरूवेण पुणो वि पयट्टदाणि त्ति भणिदं होदि। तदो चेव देवेसुप्पण्णपढमसमए जाणि कम्माणि वेदिज्जंति ताणि उदीरेमाणो उदयावलियं पवेसेदि। सेसाणि च ओकड्डमाणो उदयावलियबाहिरे एगगोवुच्छासेढीए णिक्खिविय अंतरमावूरेदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

*** पढमसमए चेव जाणि उदीरिज्जंति कम्माणि ताणि उदयावलियं पवेसिदाणि, जाणि ण उदीरिज्जंति ताणि वि ओकड्डियूण आवलियबाहिरे गोवुच्छाए सेढीए णिक्खित्ताणि।**

§ १०७. गयत्थमेदं सुत्तं। णवरि एत्थ पढमसमयदेवेणोदीरिज्जमाणाणि मोहकम्माणि एदाणि। तं जहा—पच्चक्खाणापच्चक्खाणसंजलणकोहमाणमायालोभाणमण्णदरं पुरिसवेदो हस्सरदीओ सिया भय दुगुंच्छाओ चेदि एदाणि ताधे उदीरणापाओग्गाणि, सेसाणि पुण णवुंसयवेदादिकम्माणि अणुदीरिज्जमाणाणि

§ १०६. इस सूत्रका अर्थ—उपशान्तकषायसम्बन्धी कालके प्रथमादि समयोंमेंसे जहाँ कहीं क्षीण हुई आयुवालेके देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें भवक्षयसे प्रतिपात होता है। इस प्रकार भवक्षयसे गिरकर देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके प्रथम समयमें उपशामना द्वारा जिनका पूर्वमें द्वार निरुद्ध कर दिया गया था वे सब बन्धन, उदीरणा और संक्रमण आदि करण एक समयद्वारा ही उद्घाटित हो जाते हैं। आठों ही करण सर्वोपशामनारूप पर्यायके परित्यागद्वारा अपने-अपने स्वरूपसे फिर भी उद्घाटित हो जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और इसीलिये देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें जो कर्म वेदे जाते हैं वे उदीरित होकर उदयावलिमें प्रवेश कराये जाते हैं और शेष कर्मोंका अपकर्षण करके उदयावलिके बाहर एक गोपुच्छाश्रेणिरूपसे निक्षिप्त करके अन्तरको भरता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं।

*** प्रथम समयमें ही जिन कर्मोंको उदीरित किया जाता है उन्हें उदयावलिमें प्रवेश कराता है और जो कर्म उदीरित नहीं किये जाते हैं उनका अपकर्षण करके उन्हें उदयावलिके बाहर गोपुच्छाश्रेणिरूपसे निक्षिप्त करता है।**

§ १०७. यह सूत्र गतार्थ है। इतनी विशेषता है कि यहाँपर देवोंद्वारा प्रथम समयमें उदीरित किये जानेवाले मोहनीय कर्म ये हैं। वह जैसे—प्रत्याख्यानावरण, अप्रत्याख्यानावरण और संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभमेंसे अन्यतर, पुरुषवेद, हास्स-रति, कदाचित् भय और जुगुप्सा इस प्रकार ये कर्म उस समय उदीरणाके योग्य हैं। परन्तु शेष नपुंसकवेद आदि कर्म अनुदीर्यमाण

१. त०प्रतौ हस्सदीआसिया, भय-इति पाठः।

दट्ठव्वाणि। एत्थेदेसिमंतरावूरणविहाणं भणिदूण गेण्हियव्वं। तदो भवक्खएण पडिवादो विहासिय समत्तो भवदि। संपहि उवसामणद्धाक्खएण जो पडिवादो तस्स विहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** जो उवसामणक्खएण पडिवददि तस्स विहासा।**

§ १०८. जो खलु उवसामणद्धाक्खएण पडिवददि तस्सेदाणिं विहासा कीरदि त्ति भणिदं होदि। तत्थ ताव पडिवादकारणगवेसणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** केण कारणेण पडिवददि अवट्ठिदपरिणामो संतो।**

§ १०९. एवं पुच्छंतस्साभिप्पायो, भवक्खएण पडिवादो ताव सकारणो खीणाउअस्स असंजदभावेण कसाएसु पडिवादं मोत्तूण उवसंतकसायभावेणावट्ठाण-विरोहादो। एदम्मि पुण पडिवादे ण किंचि कारणमुवलब्भदे। ण ताव परिणामहाणी तक्कारणं, अवट्ठिदपरिणामस्स उवसंतकसायस्स परिणामहाणीए असंभवादो। ण च कारणंतरमेत्थ संभवइ, विचारिज्जमाणस्स तस्साणुवलद्धीदो। तम्हा अवट्ठिदपरिणामो संतो एसो उवसंतकसाओ केण कारणेण पडिवददि त्ति पुच्छा कदा होइ। संपहि एदिस्से पुच्छाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** सुणु कारणं, जधा अद्धाखएण सो लोभे पडिवदिदो होइ।**

जानने चाहिए। यहाँ इन कर्मोंके अन्तरको भरनेके विधानको कहकर ग्रहण करना चाहिए। इसलिए भवक्षयसे प्रतिपातकी प्ररूपणा समाप्त हुई। अब उपशामनाद्धाके क्षयसे जो प्रतिपात होता है उसका प्रतिपादन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** जो उपशामनाक्षयसे उतरता है उसकी विभाषा करते हैं।**

§ १०८. जो उपशामनाके कालके क्षय होनेसे उतरता है उसकी इस समय प्ररूपणा करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसमें सर्वप्रथम प्रतिपातके कारणकी गवेषणा करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अवस्थित परिणामवाला होता हुआ किस कारणसे गिरता है।**

§ १०९. ऐसा पूछनेवालेका अभिप्राय है कि भवक्षयसे होनेवाला प्रतिपात तो सकारण होता है, क्योंकि क्षीण आयुवाले जीवका असंयतभावसे कषायोंमें प्रतिपातको छोड़कर उपशान्त-कषायरूपसे रहनेका विरोध है। परन्तु इस प्रतिपातमें कोई कारण नहीं उपलब्ध होता। परि-णामोंकी हानि तो उसका कारण हो नहीं सकता, क्योंकि उपशान्तकषाय अवस्थित परिणामवाला होता है, इसलिए उसके परिणामोंकी हानि होना असम्भव है। और यहाँ कोई दूसरा कारण सम्भव नहीं है, क्योंकि विचार करनेपर वह उपलब्ध नहीं होता। इसलिए अस्थित परिणामवाला होकर यह उपशान्तकषाय जीव किस कारणसे गिरता है यह यहाँ पृच्छा की गई है। अब इस पृच्छाके होने पर निःशंक करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** कारण सुनो। यथा—अद्धाक्षयसे लोभमें प्रतिपतित होता है।**

§ ११०. सुणु कारणमिदि सिस्ससंबोहणवयणमेदं। एवं सिस्ससंबोधणं कादूण तदो अद्धाक्खएण सो लोभे पडिवदिदो होइ त्ति कारणणिद्देसो कओ। एदस्स भावत्थो—जइ वि एसो उवसंतकसायो अवट्ठिदपरिणामो तो वि तस्स उवसंतकसायभावेणावट्ठाणकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो चेव, तत्तो परमुवसमपज्जायस्सावट्ठाणासंभवादो। तम्हा उवसंतद्धाक्खएण सुणु एवं[1] सिस्ससंबोधणं कादूण सो पडिवददि त्ति घेत्तव्वं, कारणंतरस्साणुवलंभादो। एवं पडिवदमाणो लोभकसाए चेव पडिवददि, सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणे पडिवदमाणयस्स कसायंतरासंभवादो त्ति। एवमेदस्स पडिवादस्स कारणं परूविय संपहि तमेव पडिवादं पबंधेण परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ तं परूवइस्सामो।

§ १११. तमेदमणंतरणिद्दिट्ठमद्धाक्खयणिबंधणं पडिवादमेत्तो पबंधेण वत्तइस्सामो त्ति वुत्तं होइ। तं जहा—

❀ पढमसमयसुहुमसांपराएण तिविहं लोभमोकड्डियूण संजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा।

§ ११२. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे। तं जहा—उवसामणद्धाक्खएण पडिवदमाणो उवसंतकसायो सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणे चेव णिवददि, तत्थ पयारंतरा-

---

§ ११०. 'कारण सुनो' यह शिष्यको सम्बोधन करनेवाला वचन है। इस प्रकार शिष्यको सम्बोधन करके उसके बाद अद्धाक्षयसे वह लोभमें प्रतिपतित होता है इस प्रकार कारणका निर्देश किया है। इसका भावार्थ—यद्यपि यह उपशान्तकषाय जीव अवस्थित परिणामवाला होता है तो भी उसका उपशान्तकषायभावसे अवस्थानकाल अन्तर्मुहूर्तमात्र ही है। उसके बाद उपशम पर्याय का अवस्थान असंभव है। इसलिए उपशान्तकालके क्षयसे 'सुनो' इस प्रकार शिष्यको सम्बोधित करके कहते हैं कि वह गिरता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि इसके गिरनेका दूसरा कोई कारण नहीं उपलब्ध होता। इस प्रकार गिरनेवाला जीव लोभकषायमें ही गिरता है, क्योंकि सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें गिरनेवालेके अन्य कोई कषायका होना असम्भव है। इस प्रकार इस प्रतिपातके कारणका कथन करके अब उसी प्रतिपातको सूत्रद्वारा प्ररूपण करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं।

*** उस प्रतिपातकी प्ररूपणा करेंगे।**

§ १११. अनन्तर पूर्व निर्दिष्ट अद्धाक्षयनिमित्तक उस प्रतिपातको आगेके प्रबन्ध द्वारा बतलायेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है, वह जैसे—

*** प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्पराय जीवने तीन प्रकारके लोभका अपकर्षण करके संज्वलनलोभकी उदयादि गुणश्रेणि की।**

§ ११२. इस सूत्रका अर्थ कहते हैं वह जैसे—उपशामना कालका क्षय होनेसे गिरनेवाला उपशान्तकषाय जीव सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें ही गिरता है, क्योंकि वहाँ कोई दूसरा प्रकार सम्भव

---

१. ता०प्रतौ मेदं (?) एवं इति पाठः।

संभवादो। ताधे चेव पढमसमयसुहुमसांपराइयभावे वट्टमाणो तिविहं लोभं विदियट्ठिदीदो ओकड्डदि, तक्कालमेव तिण्हं लोभाणं उवसामणक्खयदंसणादो। एवमोकड्डियूण गुणसेढिणिक्खेवं कुणमाणो लोभसंजलणस्स उदयादिगुणसेढिणिक्खेवं करेदि, वेदिज्जमाणस्स तस्स पयारंतरासंभवादो। किंपमाणो एदस्स गुणसेढिणिक्खेवो त्ति आसंकाए इदमाह—

*** जा तस्स किट्टी लोभवेदगद्धा तदो विसेसुत्तरकालो गुणसेढिणिक्खेवो।**

§ ११३. 'तस्स' परिवदमाणसुहुमसांपरायइस्स जा किट्टी लोभवेदगद्धा अंतोमुहुत्तावच्छिण्णपमाणा तत्तो विसेसुत्तरपमाणो एदस्स गुणसेढिणिक्खेवो दट्ठव्वो। एत्थ विसेसपमाणमावलियमेत्तमिदि घेत्तव्वं। दुविहस्स वि लोहस्स एवडिओ चेव गुणसेढिणिक्खेवो होदि, किंतु उदयावलियबाहिरे चेव णिक्खिप्पदे। किं कारणं? तेसिमवेदिज्जमाणाणमुदयावलियब्भंतरे णिक्खेवासंभवादो त्ति जाणावणट्ठमिदं सुत्तं—

*** दुविहस्स लोहस्स तत्तियो चेव णिक्खेवो, णवरि उदयावलियाए णत्थि।**

§ ११४. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि णाणावरणीयादिकम्माणमेत्थतणो गुणसेढिणिक्खेवो किंपमाणो त्ति आसंकाणिरारेगीकरणट्ठमिदमाह—

नहीं है। और उसी समय प्रथम समयके सूक्ष्मसाम्पराय परिणाममें विद्यमान होकर द्वितीय स्थितिमेंसे तीन प्रकारके लोभको अपकर्षित करता है, क्योंकि उसी समय तीन लोभोंके उपशामनाका क्षय देखा जाता है। इस प्रकार अपकर्षण करके गुणश्रेणिमें निक्षेप करता हुआ लोभसंज्वलनका उदयादि गुणश्रेणिनिक्षेप करता है, क्योंकि वेदी जानेवाली उसमें दूसरा कोई प्रकार सम्भव नहीं है। इसके गुणश्रेणिनिक्षेपका कितना प्रमाण है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** जो उसका कृष्टिगत लोभका वेदनकाल है उससे कुछ अधिक कालप्रमाण गुणश्रेणिनिक्षेप है।**

§ ११३. उसके अर्थात् गिरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिक जीवका जो कृष्टिगत लोभका वेदनकाल है वह अन्तर्मुहूर्त कालप्रमाण है, उससे कुछ अधिक कालप्रमाण इसका गुणश्रेणिनिक्षेप जानना चाहिये। यहाँ विशेषका प्रमाण एक आवलिमात्र ग्रहण करना चाहिये। अन्य दो प्रकारके लोभका भी इतना ही गुणश्रेणिनिक्षेप होता है। किन्तु उसे उदयावलिके बाहर ही निक्षिप्त करता है, क्योंकि नहीं वेदी जानेवाली उन प्रकृतियोंका उदयावलिके भीतर निक्षेप होना सम्भव नहीं है ऐसा ज्ञान करानेके लिए यह सूत्र आया है—

*** दो प्रकारके लोभका उतना ही निक्षेप होता है। इतनी विशेषता है कि उनका निक्षेप उदयावलिके भीतर नहीं होता।**

§ ११४. यह सूत्र गतार्थ है। अब ज्ञानावरणादि कर्मोंका यहाँ होनेवाला निक्षेप किस प्रमाण-

*** सेसाणमाउगवज्जाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो अणियट्टिकरणद्धादो अपुव्वकरणद्धादो च विसेसाहिओ, सेसे सेसे च णिक्खेवो ।**

§ ११५. पुव्वमुवसंतकसायद्धाए संखेज्जभागप्पमाणो[1] अवट्ठिदायामो णाणावरणादिकम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो एण्हिमोदरमाणापुव्वणियट्टिकरणद्धाहिंतो विसेसाहियायामो जादो त्ति वुत्तं होइ । गलिदसेसो च एसो णाणावरणादीणं गुणसेढिणिक्खेवो दट्ठव्वो त्ति जाणावणट्ठं 'सेसे सेसे च णिक्खेवो त्ति वुत्तं । उदयावलियबाहिरे गलिदसेसायामो णाणावरणादिकम्माणं उदीरणा पडिहम्मदि ताव णाणावरणादीणं पि उदयादिगुणसेढिणिक्खेवो होदि त्ति, एदं जाणिय वत्तव्वं, उदयादिगुणसेढिणिक्खेवाभावे वि असंखेज्जसमयपबद्धोदीरणाए चढमाणस्सेव संभवे विप्पडिसेहाभावादो ।

वाला होता है इस आशंकाको दूर करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** आयुकर्मको छोड़कर शेष कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप अनिवृत्तिकरणके कालसे और अपूर्वकरणके कालसे विशेष अधिक होता है। तथा शेष-शेषमें निक्षेप होता है ।**

§ ११५. पहले ज्ञानावरणादि कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप उपशान्तकषायके कालके संख्यातवें भागप्रमाण अवस्थित आयामवाला था इस तरह उतरनेवालेके वह अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक आयामवाला हो जाता है यह कहा गया है । ज्ञानावरणादि कर्मोंका यह गुणश्रेणिनिक्षेप गलित शेष जानना चाहिये इस बातका ज्ञान करानेके लिये शेष-शेषमें अर्थात् उत्तरोत्तर शेष रही गुणश्रेणिमें निक्षेप होता है यह कहा है । यहाँसे लेकर ज्ञानावरणादि कर्मोंका उदयावलिके बाहर गलित शेष आयामवाला गुणश्रेणि निक्षेप प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ किन्हींका अभिप्राय है कि यहाँसे लेकर जबतक असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा प्रवृत्त रहती है तबतक ज्ञानावरणादि कर्मोंका भी उदयादि गुणश्रेणिनिक्षेप होता है । सो इसे जानकर कहना चाहिये, क्योंकि उदयादि गुणश्रेणिनिक्षेपके अभावमें भी चढ़नेवालेके समान असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणाका निषेध नहीं है ।

विशेषार्थ—चूर्णि सूत्रोंके अनुसार उपशमश्रेणिसे उतरनेवाले जीवके ज्ञानावरणादि कर्मोंका गलितशेष गुणश्रेणिनिक्षेप होता है । किन्तु किन्हीं अन्य आचार्योंके अभिप्रायसे उपशमश्रेणि चढ़ते अनिवृत्तिकरणमें जहाँसे लेकर असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा होने लगती है, उतरते समय भी असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा करते हुए जब उस स्थानतक पहुँचता है तबतक ज्ञानावरणादि कर्मोंकी उदयादि गुणश्रेणि निर्जरा होती रहती है। इस प्रकार प्रकृतमें दो अभिप्राय प्राप्त होते हैं—एक चूर्णिसूत्रकारका अभिप्राय और दूसरा अन्य किन्हीं आचार्योंका अभिप्राय । इस पर जयधवलामें जो अभिप्राय व्यक्त किया गया है उसका आशय यह है कि एक तो इसको पूर्वानुमोदित आगमसे जानकर कथन करना चाहिये । दूसरे ज्ञानावरणादि कर्मोंका उदयादि गुणश्रेणि निक्षेप न होनेपर भी चढ़नेवालेके समान उतरने वालेके असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा बन सकती है, उसका कोई निषेध नहीं है ।

---

१. ता०प्रतौ असंखेज्जदिभागपमाणो इति पाठः ।

§ ११६. संपहि जहा णाणावरणादीणं गलिदसेसायामो गुणसेढिणिक्खेवो किमेवं तिविहस्स वि लोहस्स आहो तत्थावट्ठिदगुणसेढिणिक्खेवो त्ति आसंकाए इदमाह—

*** तिविहस्स लोहस्स तत्तियो चेव णिक्खेवो ।**

§ ११७. कुदो एवं चे ? जाव अंतरं णावूरिज्जदि ताव मोहणीयपयडीणं जहावसरमोकड्डिज्जमाणाणमवट्ठिदो चेव गुणसेढिणिक्खेवो होदि त्ति परमगुरूवएसादो । एत्थोकड्डिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स पढमविदियट्ठिदीसु णिसिंचमाणस्स सेढिपरूवणा जाणिय कायव्वा ।

*** ताधे चेव तिविहो लोभो एगसमएण पसत्थउवसामणाए अणुवसंतो ।**

§ ११८. तम्मि चेव सुहुमसांपराइयपढमसमए तिविहो लोहो पुव्वमुवसंतावत्थो संतो एगसमएणेव परिणामक्खएण पसत्थोवसामणाए अणुवसंतो जादो, तदो चेव तत्थोकड्डणादिकिरियाणं ताधे पुवत्ती ण विरुद्धा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो । सेसाओ पुण चरित्तमोहपयडीओ अज्ज वि उवसंताओ चेव, तासिमणुवसमपज्जायस्स जहाकममुवरि पादुब्भावदंसणादो । संपहि पढमसमयसुहुमसांपराइस्स णाणावरणादिकम्माणं ट्ठिदिबंधपमाणावहारट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

---

§ ११६. अब जिस प्रकार ज्ञानावरणादि कर्मोंका गलित शेष आयामवाला गुणश्रेणिनिक्षेप होता है उसीप्रकार तीन प्रकारके लोभका भी होता है या उनका अवस्थित गुणश्रेणिनिक्षेप होता है ऐसी आशंका होनेपर यह आगेका सूत्र कहते हैं—

*** तीन प्रकारके लोभोंका उतना-उतना ही निक्षेप होता है ।**

§ ११७. शंका—यह कैसे होता है ?

समाधान—जबतक अन्तरको नहीं भरता है तबतक यथावसर आकर्षित होनेवाली मोह-प्रकृतियोंका अवस्थित ही गुणश्रेणिनिक्षेप होता है ऐसा परम गुरुका उपदेश है । यहाँपर अपकर्षित होकर प्रथम-द्वितीय स्थितिमें निर्सिचित होनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा जानकर करनी चाहिये ।

*** उसी समय तीन प्रकारका लोभ एक समयमें प्रशस्त उपशामनासे अनुपशान्त हो जाता है ।**

§ ११८. उसी समय अर्थात् सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमें तीन प्रकारका लोभ पहले उपशान्त अवस्थारूप होता हुआ एक समयमें ही परिणामोंके क्षयके कारण प्रशस्त उपशामनासे अनुपशान्त हो जाता है । वहींसे ही उन प्रकृतियोंमें अपकर्षणादि क्रियाकी प्रवृत्ति उस समय विरुद्ध नहीं है यह सूत्रका भावार्थ है । परन्तु चारित्रमोहकी शेष प्रकृतियाँ अब भी उपशान्त ही रहती हैं, क्योंकि उनकी अनुपशम पर्यायका क्रमसे ऊपर प्रादुर्भाव देखा जाता है । अब प्रथम

*** ताधे तिण्हं घादिकम्माणमंतोमुहुत्तट्ठिदिगो बंधो, णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो बत्तीसमुहुत्ता, वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो अडतालीसमुहुत्ता ।**

§ ११९. चडमाणसुहुमसांपराइयस्स चरिमट्ठिदिबंधादो दुगुणमेत्तट्ठिदिबंधो णाणावरणादिकम्माणमेत्थ जादो त्ति वुत्तं होइ । एवं पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स कज्जभेदं पदुप्पाइय संपहि विदियसमए तण्णाणत्तपदुप्पायणट्ठमिदमुत्तरसुत्तमाह—

*** से काले गुणसेढी असंखेज्जगुणहीणा ।**

§ १२०. पुव्वुत्तेणेव विहिणा केसिं पि अवट्ठिदायामेण केसिं पि गलिदसेसायामेण च पयट्टमाणा गुणसेढी पढमसमयगुणसेढीदो 'से काले' तदणंतरसमए पदेसग्गं पेक्खियूणासंखेज्जगुणहीणा भवदि । किं कारणं ? तत्थतणविसोहीदो एत्थतणविसोहीए अणंतगुणहीणत्तदंसणादो ।

*** ट्ठिदिबंधो सो चेव ।**

§ १२१. पढमसमए जो आढत्तो ट्ठिदिबंधो णाणावरणादीणमणंतरणिद्दिट्ठपमाणो सो चेवाणूणाहिओ विदियसमए वि पयट्टदि, ण तत्थ णाणत्तमत्थि त्ति भणिदं होइ । कुदो एवं च ? अंतोमुहुत्तमेत्तकालमवट्ठिदट्ठिदिबंधब्भुवगमादो ।

समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थितिबन्धके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** उस समय तीन घाति कर्मोंका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिबन्ध होता है, नामकर्म और गोत्रकर्मका बत्तीस मुहूर्तप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तथा वेदनीय कर्मका अडतालिस मुहूर्तप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।**

§ ११९. चढ़नेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम स्थितिबन्धसे यहाँपर ज्ञानावरणादि कर्मोंका दुगुणा स्थितिबन्ध हो जाता है । यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके कार्यके भेदोंका कथन करके अब दूसरे समयमें कार्यके नानापनेका कथन करनेके लिए यह आगेका सूत्र कहते हैं—

*** तदनन्तर समयमें गुणश्रेणि असंख्यातगुणी हीन होती है ।**

§ १२०. पूर्वोक्त विधिसे ही किन्हीं कर्मों की अवस्थित आयामसे और किन्हीं कर्मोंकी गलितशेष आयामसे प्रवृत्त होती हुई गुणश्रेणि प्रथम समयकी गुणश्रेणिसे 'से काले' अर्थात् तदनन्तर समयमें प्रदेशपुंजकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन होती है, क्योंकि वहाँकी विशुद्धिसे यहाँकी विशुद्धि अनन्तगुणी हीन देखी जाती है ।

*** स्थितिबन्ध वही होता है ।**

§ १२१. प्रथम समयमें ज्ञानावरणादि कर्मोंका अनन्तर पूर्व निर्दिष्ट प्रमाणवाला जो स्थितिबन्ध प्रारम्भ हुआ वही न्यूनाधिकतासे रहित दूसरे समयमें भी प्रवृत्त रहता है, उसमें भेद नहीं होता यह प्रकृतमें कहा गया है ।

*** अणुभागबंधो अप्पसत्थाणमणंतगुणो, पसत्थाणं कम्मंसाणमणंतगुणहीणो ।**

§ १२२. संकिलेसवुड्ढीए अप्पसत्थाणं पंचणाणावरणादीणं अणंतगुणो अणुभागबंधो होइ । पसत्थाणं पुण सादादिपयडीणमणंतगुणहीणो होदि त्ति सुत्तत्थो । एवं समये समये णेदव्वं जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति । णवरि एदम्हि काले संखेज्जसहस्समेत्ता ट्ठिदिबंधा तिण्हं घादिकम्माणं अघादिकम्माणं च विसेसाहियवड्ढीय दट्ठव्वा । एवमेदाणि आवासयाणि सुहुमसांपराइयद्धाए परूविय संपहि अण्णाणि वि आवासयाणि एत्थ संभवंताणि परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** लोभं वेदयमाणयस्स इमाणि आवसयाणि ।**

§ १२३. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ १२४. एदं पि सुगमं ।

*** लोभवेदगद्धाए पढमतिभागे[1] किट्टीणमसंखेज्जा भागा उदिण्णा ।**

शंका—ऐसा कैसे होता है ?

समाधान—क्योंकि अन्तर्मूहूर्त काल तक अवस्थित स्थितिबन्ध स्वीकार किया गया है ।

*** अप्रशस्त कर्मोंका अनुभागबन्ध अनन्तगुणा होता है और प्रशस्त कर्मोंका अनन्तगुणा हीन होता है ।**

§ १२२. संक्लेशकी वृद्धि होनेके कारण ज्ञानावरणादि पाँच कर्मोंका अनन्तगुणा अनुभाग होता है, परन्तु सातावेदनीय आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका अनन्तगुणा हीन होता है यह उक्त सूत्रका अर्थ है, इस प्रकार सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक प्रत्येक समयमें जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इस कालमें तीन घाति और अघाति कर्मोंका विशेष अधिक वृद्धिके प्रमाणसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध जानना चाहिये । इस प्रकार सूक्ष्मसाम्परायके कालमें इन आवश्यकोंका कथन करके अब यहाँ पर जो अन्य आवश्यक सम्भव हैं उनका कथन करते हुए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

*** लोकका वेदन करनेवालेके ये आवश्यक होते हैं ।**

§ १२३. यह सूत्र सुगम है ।

*** वे जैसे ।**

§ १२४. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** लोभवेदककालके प्रथम त्रिभागमें कृष्टियोंके असंख्यात बहुभाग उदीर्ण होते हैं ।**

---

१. पढमतिभागो इति पाठः क० पा० सु० ।

§ १२५. एत्थ जो लोभवेदगद्धा त्ति वुत्ते ओदरमाणस्स जो सुहुमबादरलोभवेदगकालो सो सव्वो चेव घेत्तव्वो। तस्स पढमतिभागो णाम सुहुमसांपराइयकालो, एदम्हि काले सव्वम्हि चेव किट्टीणमसंखेज्जा भागा उदिण्णा। पुव्वं किट्टीकरणद्धाए कदाणं किट्टीणं हेट्ठिमोवरिमअसंखेज्जदिभागं मोत्तूण पुणो मज्झिमकिट्टीसरूवेण असंखेज्जदिभागो ताहे उदीरिदो त्ति वुत्तं होइ। संपहि सुहुमसांपराइयद्धाए पढमादिसमएसु अवट्ठिदपमाणाओ वेदेमाणो किं सव्वेसु चेव समएसु अवट्ठिदपमाणाओ वेदेदि आहो विसेसाहियवड्ढीए हाणीए [इ] त्ति पुच्छाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** पढमसमए उदिण्णाओ किट्टीओ थोवाओ, विदियसमए उदिण्णाओ किट्टीओ विसेसाहियाओ।**

§ १२६. सव्वसुहुमसांपराइयद्धाए विसेसाहियवड्ढीए किट्टीणमुदयो जहा चडमाणो विसोहिवसेण विसेसहाणीए किट्टीओ वेदेदि एवमोदरमाणगो वि संकिलेसवसेण असंखेज्जभागवड्ढीए समयं पडि किट्टीओ वेदेदि त्ति एसो एत्थ भावत्थो। तदो पढमसमयम्हि वेदिदकिट्टीणमुदयजहण्णकिट्टिप्पहुडि असंखेज्जदिभागमेत्ता हेट्ठा मोत्तूण पुणो पुव्विल्लकिट्टीणमुक्कस्सकिट्टिप्पहुडि उवरिमपुव्वमसंखे०भागं वेदेदि। हेट्ठा मु[उ]क्क० असंखे०भागादो उवरि अपुव्वभागाइद असंखे० भागो विसेसाहिओ भवदि। एवं णेदव्वं जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति।

---

§ १२५. यहाँ पर जो 'लोभवेदककाल' ऐसा कहनेपर उतरनेवालेका जो सूक्ष्मबादर लोभवेदककाल है वह पूरा ही लेना चाहिये। उसका प्रथम त्रिभाग यह सूक्ष्मसाम्पराय कालकी संज्ञा है। इस पूरे कालके भीतर कृष्टियोंका असंख्यात बहुभाग उदीर्ण हो जाता है। पहले कृष्टिकरणके कालमें की गई कृष्टियोंमेंसे अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोंको छोड़कर मध्यम कृष्टिरूपसे असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियाँ उस समय उदीरित होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब सूक्ष्मसाम्परायिकके कालमें प्रथमादि समयोंमें कृष्टियोंका वेदन करनेवाला क्या सभी समयोंमें अवस्थित परिणाम प्रमाण कृष्टियोंका वेदन करता है या विशेष अधिक वृद्धिरूपसे या विशेष अधिक हानिरूपसे उनका वेदन करता है ऐसी पृच्छा होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** प्रथम समयमें उदीर्ण हुई कृष्टियाँ स्तोक हैं, दूसरे समयमें उदीर्ण हुई कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं।**

§ १२६. सूक्ष्मसाम्परायके पूरे कालके भीतर विशेष अधिक वृद्धिरूपसे कृष्टियोंका उदय होता है। जिसप्रकार चढ़नेवाला जीव विशुद्धिवश विशेष हानिरूपसे कृष्टियोंको वेदता है उसी प्रकार उतरनेवाला जीव भी संक्लेशवश असंख्यात भागवृद्धिरूपसे प्रत्येक समयमें कृष्टियोंको वेदता है यह यहाँ भावार्थ है। इसलिए प्रथम समयमें वेदी गई कृष्टियोंमेंसे उदयरूप जघन्य कृष्टिसे लेकर नीचे असंख्यातवें भागमात्र कृष्टियोंको छोड़कर पुनः पूर्वकी कृष्टियोंमेंसे उत्कृष्ट कृष्टिसे लेकर उपरिम अपूर्व असंख्यातवें भागको वेदता है। नीचे उत्कृष्ट असंख्यातवें भागसे ऊपर

§ १२७. पदेसग्गं पुण समयं पडि असंखेज्जगुणहीणं होयूण उदीरिज्जदि, पदेसुदओ णाणावरणादिकम्माणं उवसंतकसायगुणसेढिवसेण विसेसहीणो एदम्हि विसये होदि। मोहणीयस्स पुण पढमसमयसुहुमसांपराइयगुणसेढिपाहम्मेणासंखेज्जगुणो चेव भवदि। एवमंतोमुहुत्तकालं सव्वमसंखे० गुणाए सेढीए लोभसंजलणपदेसग्गं वेदेमाणो किट्टीओ विसेसाहियवड्ढीए किट्टीअणुभागं च अणंतगुणवड्ढीए अणुहवंतो जाधे चरिमसमयसुहुमसांपराइयो जादो ताधे पढमसमयसुहुमसंपराइयेण कदगुणसेढी आवलियमेत्ता अत्थि, सेसबहुभागाणं गलिदत्तादो। ताधे णाणावरणादिकम्माणं ट्ठिदिबंधपमाणं चढमाणसुहुमसांपराइयपढमट्ठिदिबंधादो दुगुणमेत्तं होइ त्ति दट्ठव्वं।

§ १२८. एवमेदीए परूवणाए समद्धमणुफालिय तदो किट्टीवेदगद्धाए झीणाए से काले अणियट्टिबादरसांपराइयगुणट्ठाणमोइण्णो त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** किट्टीवेदगद्धाए गदाए पढमसमयबादरसांपराइयो जादो।**

अपूर्व ग्रहण किया गया असंख्यातवाँ भाग विशेष अधिक होता है। इस प्रकार सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयतक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ जो कृष्टियाँ वेदी जाती हैं उनका खुलासा करनेके साथ प्रथम समयसे द्वितीयादि समयोंमें उत्तरोत्तर जो विशेष अधिक अपूर्व कृष्टियाँ वेदी जातीं हैं उन्हें स्पष्ट किया गया है।

§ १२७. प्रदेशपुंज तो प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणा हीन होकर उदीरित होता है। तथा ज्ञानावरणादि कर्मोंका प्रदेश उदय उपशान्तकषायसम्बन्धी गुणश्रेणिके कारण इस स्थानपर विशेष हीन होता है। परन्तु मोहनीय कर्मका प्रदेशउदय तो प्रथम समयमें की गई सूक्ष्मसाम्पराय गुणश्रेणिके प्राधान्यके कारण असंख्यातगुणा ही होता है। इस प्रकार समस्त अन्तर्मुहूर्त कालतक असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे लोभसंज्वलनके प्रदेशपुंजको वेदता हुआ कृष्टियोंको विशेष अधिक वृद्धिरूपसे और कृष्टिगत अनुभागको अनन्तगुणी वृद्धिरूपसे अनुभवता हुआ जब अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक हो जाता है, तब सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा की गई गुणश्रेणि आवलिमात्र शेष रहती है, क्योंकि शेष बहुभागका गलन हो जाता है। उस समय ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थितिबन्धका प्रमाण चढ़नेवाले सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके प्रथम समयमें हुए स्थितिबन्धके प्रमाणसे दुगुणा हो जाता है ऐसा प्रकृतमें जानना चाहिये।

§ १२८. इस प्रकार श्रेणिकी प्ररूपणाकी अपेक्षा अपने काल तक उसका पालन करते हुए कृष्टिवेदककालके क्षीण हो जानेपर तदनन्तर समयमें अनिवृत्तिबादरसाम्पराय गुणस्थानमें अवतरित हुआ इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** कृष्टिवेदककालके व्यतीत हो जानेपर प्रथम समयवर्ती बादरसाम्परायिक हो गया।**

---

१. ता०प्रतौ अणियट्टिबादरसुहुमसांपराइयगुणट्ठाणपवेसि (सं०) इति पाठः।

§ १२९. किं कारणं ? ओदरमाणस्स सुहुमसांपराइयद्धाए खीणाए अणियट्टि-बादरसांपराइयगुणट्ठाणपवेसं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। एवमणियट्टिगुणट्ठाणं पइट्ठस्स पढमसमये चेव लोहसंजलणस्स बंधो आढत्तो। तदो तब्बंधवसेण मोहणीयस्स अणाणुपुव्वीसंकमगओ विसेसो पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

* ताहे चेव सव्वमोहणीयस्स अणाणुपुव्विओ संकमो।

§ १३०. सव्वस्सेव मोहणीयकम्मस्स आणुपुव्वीसंकमपइण्णा तक्काले चेव विणट्ठा त्ति भणिदं होइ। एदं सत्तिमवेक्खियूण भणिदं। वत्तीए पुण अज्ज वि आणुपुव्विसंकमो चेव, दुविहं लोहं लोहसंजलणम्हि णियमा संकामेयाणयस्स पयारंतर-संभवाणुवलंभादो। णवरि समाणजादीयबंधपयडिसंभवे लोहसंजलणस्स वि एत्थ संकमसंभवो जादो त्ति एवंविहसंभवमस्सियूण अणाणुपुव्विसंकमो एत्थ भणिदो। जइ वि एवं सुहुमसांपराइयपढमसमयप्पहुडि चेव मोहणीयस्साणाणुपुव्वीसंकमो त्ति किण्ण परूविदो ? ण, तत्थ मोहणीयस्स बंधाभावेण संकमसत्तीए अच्चंतमणुव-लंभादो।

* ताहे चेव दुविहो लोहो लोहसंजलणे संछुहादि।

§ १३१. कुदो ? तम्हि समए लोहसंजलणस्स बंधपरांभदंसणादो।

---

§ १२९. क्योंकि उतरने वालेका सूक्ष्मसाम्परायिकके कालके क्षीण हो जानेपर अनिवृत्ति-बादरसाम्परायिक गुणस्थानमें प्रवेशको छोड़कर और दूसरा प्रकार असम्भव है। इस प्रकार अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें प्रविष्ट हुए जीवके प्रथम समयमें ही लोभसंज्वलनका बन्ध प्रारम्भ हो जाता है। इसलिए उसके बन्धके सम्बन्धसे मोहनीय कर्मका अनानुपूर्वी संक्रमगत विशेष प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

* उसी समय समस्त मोहनीय कर्मका अनानुपूर्वीसंक्रम होने लगता है।

§ १३०. सम्पूर्ण मोहनीय कर्मके अनानुपूर्वीसंक्रमकी प्रतिज्ञा उसी समय नष्ट हो जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह शक्तिकी अपेक्षा कहा है, व्यक्त होनेकी अपेक्षा तो अभी भी आनुपूर्वी संक्रम ही प्रवृत्त रहता है, क्योंकि दो प्रकारके लोभका नियमसे लोभसंज्वलनमें संक्रम करनेवाले जीवके प्रकारान्तर सम्भव नहीं है। इतनी विशेषता है कि समान जातीय बन्ध प्रकृतिका सम्भव होनेपर यहाँ लोभसंज्वलनका भी संक्रम सम्भव हो जाता है इस प्रकारके सम्भवकी अपेक्षा अनानु-पूर्वी संक्रम यहाँपर कहा है।

शंका—यदि ऐसा है तो सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयसे लेकर ही अनानुपूर्वी संक्रम क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँपर मोहनीयका बन्ध न होनेसे संक्रमकी शक्तिका सर्वथा अभाव है।

* उसी समय दो प्रकारका लोभ लोभसंज्वलनमें संक्रमित होता है।

§ १३१. क्योंकि उसी समय लोभसंज्वलनके बन्धका प्रारम्भ देखा जाता है।

*** ताहे चेव फड्डयगदं लोभं वेदेदि ।**

§ १३२. कुदो ? बादरसांपराइयम्हि सुहुमकिट्टीणमुदयासंभवादो ।

*** किट्टीओ सव्वाओ णट्ठाओ ।**

§ १३३. किं कारणं ? तासिं सव्वासिमेगसमएणेव पयदभावेण परिणाम-दंसणादो ।

*** णवरि जाओ उदयावलियब्भंतराओ ताओ त्थिवुक्कसंकमेण फड्डएसु विपच्चिहिंति ।**

§ १३४. कुदो ? फड्डएसु वेदिज्जमाणेसु उदयावलियपविट्ठाणं किट्टीणं पि तब्भावपरिणामेणुदये विवागं मोत्तूण पयारंतरसंभवाणुवलंभादो । संपहि बादर-लोभं वेदेमाणो फड्डयगदं दव्वमोकड्डियूण संपहियलोभवेदगकालादो आवलियमेत्तेण विसेसाहियं गुणसेढिणिक्खेवं उदयादि णिक्खिवदि । सरिसो च तिविहस्स लोहस्स गुणसेढिणिक्खेवो, णवरि दोण्हं लोभाणं उदयावलियाए णत्थि गुणसेढि-णिक्खेवो । संपहियलोभवेदगकालो किंपमाणो त्ति भणिदे परिवदमाणयस्स जो लोभ-वेदगकालो तं तिण्णिभागे कायूण तत्थ सादिरेयवेत्तिभागमेत्तो । एवमेदेणायामेण गुणसेढिविण्णासं कुणमाणस्स अणियट्टिपढमसमए दिज्जमाणदव्वमसंखेज्जगुणाए

*** उसी समय स्पर्धकगत लोभका वेदन करता है ।**

§ १३२. क्योंकि बादरसाम्परायमें सूक्ष्म कृष्टियों का उदय असम्भव है ।

*** उस समय कृष्टियाँ सब नष्ट हो जाती हैं ।**

§ १३३. क्योंकि उन सबका एक समय द्वारा ही प्रकृत स्पर्धकरूपसे परिणमन देखा जाता है ।

*** इतनी विशेषता है कि जो कृष्टियाँ उदयावलिमें प्रविष्ट हैं वे स्तिवुक संक्रमण द्वारा स्पर्धकरूपसे विपाकको प्राप्त होती हैं ।**

§ १३४. क्योंकि स्पर्धकोंके वेदते समय उदयावलिमें प्रविष्ट हुई कृष्टियोंका भी स्पर्धक-रूपसे परिणमन होकर स्पर्धकरूपसे विपाकको छोड़कर अन्य कोई प्रकार सम्भव है इसकी उप-लब्धि नहीं होती । उस समय बादर लोभको वेदता हुआ स्पर्धकगत द्रव्यका अपकर्षण कर इस समय जो लोभका वेदक काल है उससे आवलिमात्र विशेष अधिक कर उदयादिसे लेकर गुण-श्रेणि निक्षेप करता है । तीनों लोभोंका गुणश्रेणिनिक्षेप सदृश होता है । इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण इन दो लोभोंका उदयावलिमें गुणश्रेणिनिक्षेप नहीं होता ।

शंका—साम्प्रतिक लोभवेदक कालका प्रमाण कितना है ?

समाधान—गिरनेवालेका जो लोभवेदक काल है उसके तीन भाग करके उनमेंसे साधिक दो त्रिभाग प्रमाण है ।

इस प्रकार इस आयामवाली गुणश्रेणिकी रचना करनेवालेके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें

सेढीए दट्ठव्वं जाव गुणसेढीसीसयं ति । दिस्समाणम्हि पुण जोइज्जमाणे सुहुमसांपराइयगुणसेढीए सह अण्णारिसी सेढिपरूवणा होइ । तं जहा—उदये थोवं दीसइ, तत्तो असंखेज्जगुणं जाव आवलियमेत्तकालो त्ति, तदो असंखेज्जगुणहीणं जाव चरिमसमयसुहुमसांपराइयेण कदगुणसेढीसीसयेत्ति, पुणो उवरिमएगट्ठिदिम्हि वि असंखेज्जगुणहीणं, तत्तो असंखेज्जगुणं भवदि जाव पढमसमयाणियट्टिणा कदतक्कालियगुणसेढिसीसएत्ति ।

§ १३५. संपहि विदियादिसमएसु वि असंखेज्जगुणहीणं पदेसग्गमोकड्डियूणावट्ठिदायामेण गुणसेढिं कुणदि । तत्थ वि दिज्जमाणदिस्समाणाणं सेढिपरूवणा जाणिय णेयव्वा जाव लोभवेदगद्धाचरिमसमओ त्ति । उदयो पुण अणियट्टिपढमसमए थोवो, से काले असंखेज्जगुणो इच्चादिदिस्समाणभंगाणुसारेण णेदव्वो जाव लोभवेदगद्धाचरिमसमयो त्ति । संपहि एत्थेव ट्ठिदिबंधपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** पढमसमयबादरसांपराइस्स लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तो, तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधादो अहोरत्ताणि देसूणाणि, वेदणीयणामागोदाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि वस्साणि देसूणाणि ।**

§ १३६. चडमाणबादरसांपराइयचरिमट्ठिदिबंधादो दुगुणमेत्तो ट्ठिदिबंधो एत्थ

दिया जानेवाला द्रव्य गुणश्रेणि शीर्षके प्राप्त होने तक असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे होता है ऐसा जानना चाहिए । परन्तु दृश्यमान द्रव्यका विचार करनेपर उसकी सूक्ष्मसाम्परायसम्बन्धी गुणश्रेणिके साथ अन्य प्रकारकी श्रेणिप्ररूपणा होती है । वह जैसे—उदयमें स्तोक दिखलाई देता है । उसके बाद एक आवलि काल तक असंख्यातगुणा दिखलाई देता है । उसके बाद अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके द्वारा की गई गुणश्रेणिके शीर्ष प्राप्त होने तक असंख्यातगुणा हीन दिखलाई देता है । पुनः उपरिम एक स्थितिमें भी असंख्यातगुणा हीन दिखलाई देता है । उसके बाद प्रथम समयवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवके द्वारा की गई तात्कालिक गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होनेतक असंख्यातगुणा दिखलाई देता है ।

§ १३५. अब द्वितीयादि समयोंमें असंख्यातगुणे हीन प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके अवस्थित आयामवाली गुणश्रेणिको करता है । वहाँ भी दिये जानेवाले और दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा लोभवेदककालके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक जानकर कहनी चाहिये । उदय तो अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें स्तोक होता है, तदनन्तर समयमें असंख्यातगुणा होता है इत्यादि कथन दृश्यमान भंगके समान लोभवेदककालके अन्तिम समय तक कथन करते जाना चाहिये । अब यहीं पर स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** बादरसाम्परायिक जीवके प्रथम समयमें लोभसंज्वलनका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त होता है, तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध कुछ कम दो दिन-रातप्रमाण होता है तथा वेदनीय नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध कुछ कम चार वर्षप्रमाण होता है ।**

§ १३६. चढ़नेवाले बादर साम्परायिकके अन्तिम स्थितिबन्धसे यहाँ दुगुना स्थितिबन्ध हो

जादो त्ति सुत्तत्थसंगहो। एवमेदेण सुत्तेण पढमसमयबादरसांपराइएणाढत्तट्ठिदि-बंधपमाणावहारणं संपहि विदियट्ठिदिबंधाणं पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** एदम्हि पुण्णे ट्ठिदिबंधे जो अण्णो वेदणीयणामागोदाणं ट्ठिदिबंधो सो संखेज्जवस्ससहस्साणि, तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो अहोरत्त-पुधत्तिगो, लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो पुव्वबंधादो विसेसाहिओ।**

§ १३७. बादरसांपराइयस्स णामागोदवेदणीयाणं विदियो ट्ठिदिबंधो पढमट्ठिदि-बंधादो संखेज्जगुणवड्ढीए पयट्टमाणो संखेज्जवस्ससहस्सपमाणो जादो, तिण्हं घादि-कम्माणं ट्ठिदिबंधो तप्पाओग्गवड्ढीए वड्ढमाणो अहोरत्तपुधत्तिओ जादो, लोहसंजलणस्स वि ट्ठिदिबंधो पुव्विल्लट्ठिदिबंधादो विसेसाहियवड्ढीए वड्ढियूण अंतोमुहुत्तपमाणो जादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थविणिच्छयो। एवमेदेण विहाणेण बादरलोभवेदगद्धाए संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधवियप्पेसु गदेसु तदो लोभवेदगद्धाविदियतिभागस्स संखेज्जदिभागं संपत्तो। पुणो तम्हि उद्देसे पयट्टमाणस्स जो ट्ठिदिबंधगओ विसेसो तदुप्पायणट्ठमुत्तरो सुत्त-णिबंधो—

*** लोभवेदगद्धाए विदियस्स तिभागस्स संखेज्जदिभागं गंतूण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो मुहुत्तपुधत्तं, णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिबंधो संखे-**

जाता है यह सूत्रार्थका समुच्चय अर्थ है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा बादरसाम्परायिक जीव प्रथम समयमें जितना स्थितिबन्ध करता है उसकी अवधारणा करके अब द्वितीय स्थितिबन्धोंके प्रमाण-का अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** इस स्थितिबन्धके पूर्ण होनेपर वेदनीय, नाम और गोत्र कर्मोंका जो अन्य स्थितिबन्ध होता है वह संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है, तीन घातिकर्मोंका दिन-रात पृथक्त्वप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तथा लोभसंज्वलनका पूर्वके बन्धसे विशेष अधिक स्थितिबन्ध होता है।**

§ १३७. बादरसाम्परायिक जीवके नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका दूसरा स्थितिबन्ध प्रथम स्थितिबन्धकी अपेक्षा संख्यातगुणवृद्धि रूपसे प्रवृत्त होकर संख्यात हजार वर्ष प्रमाण हो जाता है, तीन घाति कर्मोंका स्थितिबन्ध तत्प्रायोग्य वृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होता हुआ दिन-रात पृथक्त्व प्रमाण हो जाता है तथा लोभ संज्वलनका भी स्थितिबन्ध पहलेके स्थितिबन्धसे विशेष अधिक वृद्धिके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होता हुआ अन्तर्मुहूर्तप्रमाण हो जाता है यह यहाँ सूत्रार्थका निर्णय है। इस प्रकार इस विधिसे बादरलोभवेदकके कालके भीतर संख्यात स्थितिबन्धके भेदोंके जाने पर तब लोभवेदक कालके द्वितीय त्रिभागका संख्यातवाँ भाग प्राप्त होता है। पुनः उस स्थान पर रहनेवाले जीवके जो स्थितिबन्धगत विशेष होता है उसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र प्रबन्ध आया है—

*** लोभवेदककालका द्वितीय त्रिभाग सम्बन्धी असंख्यातवाँ भाग जाकर मोहनीय**

ज्जाणि वस्ससहस्साणि, तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो अहोरत्तपुधत्तियादो ट्ठिदिबंधादो वस्ससहस्सपुधत्तिगो ट्ठिदिबंधो जादो ।

§ १३८. चडमाणबादरसांपराइयस्स लोभवेदगद्धाविदियतिभागस्स संखेज्जेसु भागेसु गदेसु जम्हि उद्देसे मुहुत्तपुधत्तिओ लोहसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो विणट्ठो तमुद्देसं थोवंतरेण ण पावदि त्ति एदम्हि अवत्थंतरे पयट्टमाणस्स ओदरमाणबादरसांपराइयस्स एवंविहे मोहादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो संवुत्तो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ । एत्तो पाए मोहणीयवज्जाणं कम्माणं संखेज्जगुणवड्ढीए मोहणीयस्स च विसेसाहियवड्ढीए ट्ठिदिबंधसहस्साणि जहाकममणुपालेंतस्स लोभवेदगद्धा कमेण समप्पदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं ।

*** एवं ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु लोभवेदगद्धा पुण्णा ।**

§ १३९. सुगमं । णवरि चडमाणस्स बादरलोभवेदगद्धा विसेसहीणा दट्ठव्वा, सव्वासिमद्धाणमेदेणेव चडमाणोदरमाणेसु पवुत्तिअब्भुगमादो । एवं लोभवेदगद्धाए चरिमसमयम्हि वट्टमाणस्स ताहे पढमसमयबादरसांपराइएण णिक्खित्तगुणसेढीए आवलियमेत्ताओ गोवुच्छाओ अवसिट्ठाओ अत्थि । किं कारणं ? पढमसमयबादरसांपराइओ गुणसेढिं कुणमाणो तिविहस्स लोभस्स लोभवेदगकालादो आवलियब्भहियं

कर्मका स्थितिबन्ध मुहूर्तपृथक्त्वप्रमाण होता है, नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है, तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध दिन-रात पृथक्त्वप्रमाण स्थितिबन्धसे एक हजार वर्षपृथक्त्वप्रमाण हो जाता है ।

§ १३८. चढ़नेवाले बादरसाम्परायिकके लोभवेदककालके द्वितीय त्रिभागके संख्यात भागोंके जाने पर जिस स्थान पर लोभसंज्वलनका मुहूर्तपृथक्त्वप्रमाण स्थितिबन्ध विनष्ट हुआ उस स्थानको स्तोक अन्तर रहनेसे अभी प्राप्त नहीं किया है ऐसी दूसरी अवस्थामें रहते हुए उतरनेवाले बादरसाम्परायिक जीवके मोहनीय आदि कर्मोंका इसप्रकार स्थितिबन्ध हो गया यह यहाँ सूत्रार्थ का समुच्चय है । इससे आगे मोहनीयकर्मके सिवाय शेष कर्मोंके संख्यातगुणी वृद्धिरूपसे और मोहनीय कर्मके विशेष अधिक वृद्धिरूपसे हजारों स्थितिबन्धोंके क्रमसे प्राप्त होनेवाले जीवका लोभवेदक काल क्रमसे समाप्त होता है इस बातका ज्ञान कराने के लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इस प्रकार हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर लोभवेदककाल समाप्त होता है ।**

§ १३९. यह सूत्र सुगम है । इतनी विशेषता है कि चढ़नेवालेका लोभवेदक काल विशेष हीन जानना चाहिये, क्योंकि चढ़नेवाले और उतरनेवाले जीवोंमें सभी कालोंकी इसी विधिसे प्रवृत्ति स्वीकार की गई है । इसप्रकार लोभवेदककालके अन्तिम समयमें विद्यमान हुए जीवके तब प्रथम समयवर्ती बादरसाम्परायिक जीवके द्वारा की गई गुणश्रेणिकी आवलिमात्र गोपुच्छाऐं अवशिष्ट रहती हैं, क्योंकि प्रथम समयवर्ती बादरसाम्परायिक जीव गुणश्रेणिको करता हुआ

कायूण गुणसेढिविण्णासं करेदि त्ति। एवमेदेण कमेण लोभवेदगद्धाए णिट्ठिदाए मायावेदगो होयूण एदाणि आवासयाणि करेदि त्ति पदुप्पाएमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** से काले मायं तिविहमोकड्डियूण मायासंजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा, दुविहाए मायाए आवलियबाहिरा गुणसेढी कदा।**

§ १४०. लोभवेदगद्धाए णिट्ठिदाए तदणंतरसमए चेव विदियट्ठिदीदो तिविहं मायामोकड्डियूण एदेण विहाणेण गुणसेढिणिक्खेवं करेदि त्ति वुत्तं होइ। तं जहा— तिविहं मायमोकड्डेमाणो मायासंजलणस्स उदयादिगुणसेढिणिक्खेवमवट्ठिदायामेण सगवेदगद्धादो आवलियब्भहियं कादूण णिक्खिवदि। एवं चेव दोण्हं मायाणं, णवरि उदयावलियबाहिराए तत्थ गुणसेढी णिक्खित्ता। कुदो एवमिदि चे? ण, तेसिमवेदिज्जमाणाणमुदयावलियब्भंतरे पदेसणिसेगासंभवादो।

§ १४१. संपहि ताहे तिविहस्स लोहस्स गुणसेढिणिक्खेवो केरिसो त्ति आसंकाए इदमाह—

*** पढमसमयमायावेदगस्स गुणसेढिणिक्खेवो तिविहस्स लोहस्स**

तीन प्रकारके लोभकी लोभवेदककालसे एक आवलि अधिक प्रमाणवाली गुणश्रेणिको रचना करता है। इसप्रकार इस क्रमसे लोभवेदक कालके समाप्त होनेपर मायावेदक होकर इन आवश्यकोंको करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

*** तदनन्तर समयमें तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण करके मायासंज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणि करता है तथा अन्य दो प्रकारकी मायाकी आवलिबाह्य गुणश्रेणि करता है।**

§ १४०. लोभवेदक कालके समाप्त होनेपर तदनन्तर समयमें ही तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण करके इस विधिसे गुणश्रेणि निक्षेप करता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है। वह जैसे— तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण करता हुआ मायासंज्वलनकी अवस्थित आयामवाली उदयादि गुणश्रेणिको अपने वेदक कालसे एक आवलि अधिक रूपसे रचता है। इसीप्रकार शेष दोनों मायाओंकी गुणश्रेणिरचना करता है। इतनी विशेषता है कि उनकी उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि रचना करता है।

शंका—ऐसा, क्यों?

समाधान—नहीं, क्योंकि वे नहीं वेदी जानेवाली प्रकृतियाँ हैं, इसलिए उनका उदयावलिके भीतर प्रदेश निषेकोंकी गुणश्रेणि रचना होना असम्भव है।

§ १४१. अब उस समय तीन प्रकारके लोभका गुणश्रेणि निक्षेप किस प्रकारका है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** प्रथम समयमें मायावेदकके तीन प्रकारके लोभ और तीन प्रकारके मायाका**

तिविहाए मायाए च तुल्लो । मायावेदगद्धादो विसेसाहिओ ।

§ १४२. जहा तिविहाए मायाए मायावेदगद्धादो विसेसाहिओ एत्थ गुणसेढिणिक्खेवो जादो । एवं तिविहस्स लोहस्स वि तप्पमाणो चेव एण्हिमाढत्तो त्ति भणिदं होदि । णवरि तिण्हं पि लोहाणमुदयावलियबाहिरे पदेसविण्णासो, तेसिमुदयासंभवादो ।

* सव्वमायावेदगद्धाए तत्तियो तत्तियो चेव णिक्खेवो ।

§ १४३. तिविहस्स लोहस्स तिविहाए मायाए च जाव मायावेदगद्धाचरिमसमयो ताव अवट्ठिदो चेव गुणसेढिणिक्खेवो, ण गलिदसेसो त्ति वुत्तं होइ । णाणावरणादिकम्माणं तक्कालियगुणसेढिणिक्खेवो केरिसो होदि त्ति आसंकाए इदमाह—

* सेसाणं कम्माणं जो पुण पुव्विल्लो णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे चेव णिक्खिवदि गुणसेढिं ।

§ १४४. णाणा[1]वरणादिकम्माणं पुव्वाढत्तगुणसेढिणिक्खेवस्स अपुव्वाणियट्टिकरणद्धाहिंतो विसेसाहियपमाणस्स गलिदसेसायामेण झीयमाणस्स सेसे सेसे चेव णिक्खेवो होइ णाण्णारिसो त्ति भणिदं होइ । संपहि पढमसमयमायावेदगस्स मायालोहसंजलणाणं दोण्हं पि बंधसंभवे तत्थ तेसिं संकमकमावहारणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

गुणश्रेणिनिक्षेप एक समान होता है जो मायाके वेदक कालसे विशेष अधिक होता है ।

§ १४२. जिस प्रकार तीन प्रकारकी मायाका गुणश्रेणि निक्षेप यहाँपर मायाके वेदककालसे विशेष अधिक हो गया है उसी प्रकार तीन प्रकारके लोभका भी यहाँपर तत्प्रमाण ही गुणश्रेणि निक्षेप प्राप्त होता है, यह इस सूत्रका अर्थ है । इतनी विशेषता है कि तीन लोभोंका उदयावलिके बाहर प्रदेशविन्यास होता है, क्योंकि वहाँ उनका उदय नहीं पाया जाता ।

* पूरे मायावेदककालके भीतर उतना-उतना ही निक्षेप करता है ।

§ १४३. तीन प्रकारके लोभ और तीन प्रकारकी मायाका मायावेदक कालके अन्तिम समय तक अवस्थित ही गुणश्रेणिनिक्षेप होता है, गलित शेष नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । ज्ञानावरणादि कर्मोंका उस कालमें कैसा गुणश्रेणि निक्षेप होता है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

* परन्तु शेष कर्मोंका जो पूर्वका निक्षेप है उसके शेष-शेषमें ही गुणश्रेणिको निक्षिप्त करता है ।

§ १४४. ज्ञानावरणादि कर्मोंके पहले स्वीकार किये गये अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक प्रमाणवाले तथा गलित शेष आयामरूपसे गलनेवाले गुणश्रेणिनिक्षेपका उत्तरोत्तर शेष-शेषमें निक्षेप होता है, अन्य प्रकारसे नहीं यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है । अब प्रथम समयवर्ती मायावेदकके माया और लोभ दोनों संज्वलनोंका बन्ध सम्भव होनेपर वहाँ उनके संक्रमके

१. ता०प्रतौ [गुणसेढिं] णाणा—इति पाठः ।

❀ मायावेदगस्स लोहो तिविहो माया दुविहा मायासंजलणे संकमदि माया तिविहा लोभो च दुविहो[1] लोभसंजलणे संकमदि ।

§ १४५. कुदो एवं चे ? मायालोभसंजलणाणं एत्थ बंधसंभवे अणाणुपुव्वीसंकमे च जादे जहावुत्तेण सरूवेण संकमपवुत्तीए णिब्बाहमुवलंभादो । संपहि एत्थेव ट्ठिदिबंधपमाणावहारणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** पढमसमयमायावेदगस्स दोण्हं संजलणाणं दुमासट्ठिदिगो बंधो, सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जवस्ससहस्साणि ।**

§ १४६. चडमाणचरिमसमयमायावेदगस्स चरिमो ट्ठिदिबंधो मायालोभसंजलणाणं मासट्ठिदिओ जादो । एत्थ पुण पडिवादपरिणामपाहम्मेण तमुद्देसमपत्तस्सेव तत्तो दुगुणमेत्तो संजादो । एवं सेसकम्माणं पि एदेणेव पडिभागेण संखेज्जवस्ससहस्समेत्तो ट्ठिदिबंधो जादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो । एवं पढमसमयमायावेदगस्स ट्ठिदिबंधपमाणावहारणं कादूण संपहि विदियादिट्ठिदिबंधाणमेत्थ पवुत्ती कधं होदि त्ति आसंकाए उवरिमसुत्तारंभो—

क्रमका निश्चय करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** मायावेदकके तीन प्रकारके लोभ और दो प्रकारकी मायाका मायासंज्वलनमें संक्रम करता है तथा तीन प्रकारकी माया और दो प्रकारके लोभकी लोभसंज्वलनमें संक्रम करता है ।**

§ १४५. शंका—ऐसा किस कारणसे होता है ?

समाधान—एक तो माया और लोभ संज्वलनका यहाँपर बन्ध सम्भव है । दूसरे यहाँपर अनानुपूर्वी संक्रम होने लगता है, इसलिए चूर्णिसूत्रमें कहे अनुसार संक्रमकी प्रवृत्ति निर्बाधरूपसे पाई जाती है । अब यहींपर स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करनेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध कहते हैं—

*** प्रथम समयवर्ती मायावेदकके दो संज्वलनोंका दो मासप्रमाण स्थितिबन्ध होता है, शेष कर्मोंका संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।**

§ १४६. चढ़नेवाले चरम समयवर्ती माया वेदकके माया और लोभसंज्वलनका अन्तिम स्थितिबन्ध एक मास स्थिति वाला हो गया था । परन्तु यहाँपर गिरे हुए परिणामोंके माहात्म्यवश उस स्थानको प्राप्त न होनेके पहले ही उसके दूना हो गया है । इसी प्रकार शेष कर्मोंका भी इसी प्रतिभागके अनुसार संख्यात हजार वर्ष प्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है यह इस सूत्रका अर्थ है । इसप्रकार प्रथम समयवर्ती मायावेदकके स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करके अब द्वितीयादि स्थितिबन्धोंकी यहाँपर किस प्रकारकी प्रवृत्ति होती है ऐसी आशंकाके होनेपर आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

---

१. ता०प्रतौ चउव्विहो इति पाठः ।

*** पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबंधे मोहणीयवज्जाणं कम्माणं संखेजगुणो ट्ठिदिबंधो, मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ १४७. जहा चडमाणस्स संखेज्जगुणहाणीए एदम्मि विसए णाणावरणादिकम्माणं ट्ठिदिबंधपवुत्ती तहा ओदरमाणस्स संखेज्जगुणवड्ढीए ट्ठिदिबंधपवुत्ती। जहा च मोहणीयस्स विसेसहाणीए ट्ठिदिबंधो चडमाणस्स एवं विसेसाहियवड्ढीए ओदरमाणस्स ट्ठिदिबंधपवुत्ती होदि, चडमाणविवज्जासेण ओदरमाणपरूवणाए पवुत्तिदंसणादो त्ति। एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। एवमेदेण विहाणेण ट्ठिदिबंधसहस्साणि कुणमाणस्स जहाकमं मायावेदगद्धा समप्पइ त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

*** एदेण कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयमायावेदगो जादो।**

§ १४८. सुगममेदं सुत्तं। संपहि एदम्मि संधिविसेसे वट्टमाणस्स ट्ठिदिबंधपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** ताधे दोण्हं संजलणाणं ठिदिबंधो चत्तारि मासा अंतोमुहुत्तूणा, सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।**

*** उत्तरोत्तर एक-एक स्थितिबन्धके पूर्ण होनेपर मोहनीय कर्मके अतिरिक्त शेष कर्मोंका संख्यातगुणा स्थितिबन्ध होता है। तथा मोहनीयकर्मका विशेष अधिक स्थितिबन्ध होता है।**

§ १४७. जिसप्रकार चढ़नेवाले जीवके इस स्थान पर ज्ञानावरणादि कर्मोंके संख्यातगुणी हानिरूपसे स्थितिबन्धकी प्रवृत्ति होती है उसी प्रकार उतरनेवाले जीवके संख्यातगुणी वृद्धिरूपसे स्थितिबन्धकी प्रवृत्ति होती है। तथा जिस प्रकार चढ़नेवाले जीवके मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध विशेष हानिरूपसे होता है उसी प्रकार उतरनेवाले जीवके विशेष अधिक वृद्धिरूपसे स्थितिबन्धकी प्रवृत्ति होती है, क्योंकि चढ़नेवाले जीवकी अपेक्षा विपरीतरूपसे उतरनेवालेकी प्ररूपणाकी प्रवृत्ति देखी जाती है यह इस सूत्रका तात्पर्यार्थ है। इस प्रकार इस विधिसे हजारों स्थितिबन्ध करनेवालेके क्रमसे मायावेदक काल समाप्त होता है इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** इस क्रममें संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके गत होनेपर अन्तिम समयवर्ती मायावेदक हो जाता है।**

§ १४८. यह सूत्र सुगम है। अब इस सन्धिविशेषमें विद्यमान जीवके स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** तब दोनों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम चार मास होता है तथा शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है।**

§ १४९. कुदो ? चढमाणपढमसमयमायावेदगस्स ट्ठिदिबंधादो दुगुणमेत्त-ट्ठिदिबंधसिद्धीए णिप्पडिबंधमेत्थ संभवोवलंभादो। एवं च मायावेदगद्धं समाणिय से काले माणवेदगभावेण परिवदिदस्स जो परूवणाभेदो तदुप्पायणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** तदो से काले तिविहं माणमोकड्डियूण माणसंजलणस्स उदयादि-गुणसेढिं करेदि, दुविहस्स माणस्स आवलियबाहिरे गुणसेढिं करेदि, णवविहस्स वि कसायस्स गुणसेढिणिक्खेवो जा तस्स पडिवदमाणगस्स माणवेदगद्धा तत्तो विसेसाहिओ णिक्खेवो, मोहणीयवज्जाणं कम्माणं जो पढमसमयसुहुमसांपराइयेण णिक्खेवो णिक्खित्तो तस्स णिक्खेवस्स सेसे सेसे णिक्खिवदि।**

§ १५०. एत्थ माणसंजलणस्स उदयादिगुणसेढिपरूवणाए मायासंजलणभंगो। णवरि माणवेदगद्धादो उवरि आवलियमेत्तेण विसेसाहियं कादूण गुणसेढिणिक्खेवमेसो करेदि त्ति वत्तव्वं। सेसं सुगमं।

*** पढमसमयमाणवेदगस्स णवविहो वि कसायो संकमदि।**

§ १५१. कुदो ? तिसु संजलणेसु बज्झमाणेसु णवविहस्स वि कसायस्स अणाणुपुव्वीए संकमं पडि विप्पडिसेहाभावादो।

---

§ १४९. क्योंकि चढ़नेवाले मायावेदक जीवके स्थितिबन्धसे यहाँ दुगुणे स्थितिबन्धकी सिद्धि बिना बाधाके उपलब्ध होती है। इस प्रकार मायावेदकके कालको समाप्त करके तदनन्तर समयमें मानवेदकभावसे परिणत हुए जीवकी प्ररूपणामें जो भेद होता है उसका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** पश्चात् अनन्तर समयमें तीन प्रकारके मानका अपकर्षण करके मान-संज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणि करता है तथा अन्य दो प्रकारके मानकी उदयावलि बाह्य गुणश्रेणि करता है। नौ प्रकारके कषायका भी गुणश्रेणिनिक्षेप होता है जो गिरनेवाले उसका मानवेदककाल है उससे विशेष अधिक निक्षेप होता है। तथा मोह कर्मको छोड़कर प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा शेष कर्मोंका जो निक्षेप निक्षिप्त किया गया है उस निक्षेपके शेष-शेषमें निक्षिप्त करता है।**

§ १५०. यहाँ मानसंज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणिप्ररूपणा मायासंज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि ऊपर आवलिमात्र विशेष अधिक यह गुणश्रेणिनिक्षेप करता है ऐसा यहाँ कहना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ—यहाँ नौ प्रकारके कषायसे तीन मान, तीन माया और तीन लोभ लेने चाहिये।

*** प्रथम समयवर्ती मानवेदकके नौ प्रकारकी ही कषायें संक्रमित होती हैं।**

§ १५१. क्योंकि तीनों संज्वलनोंका बन्ध होते समय नौ प्रकारकी ही कषायोंके अनानुपूर्वीसे संक्रम होनेके प्रति निषेध नहीं है।

*** ताधे तिण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा पडिवुण्णा, सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।**

§ १५२. कुदो ? चडमाणस्स विवज्जासेणेत्थ तत्तो दुगुणमेत्तट्ठिदिबंधसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो ।

*** एवं ट्ठिदिबंधसहस्साणि बहूणि गंतूण माणस्स चरिमसमयवेदगस्स तिण्हं संजलणाणं ठिदिबंधो अट्ठ मासा अंतोमुहुत्तूणा, सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।**

§ १५३. गयत्थमेदं सुत्तं । एवं माणवेदगद्धमुल्लंघियूण से काले कोहवेदगद्धापढमसमए वट्टमाणस्स जो परूवणाविसेसो तप्पदुप्पायणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** से काले तिविहं कोहमोकड्डियूण कोहसंजणस्स उदयादिगुणसेढिं करेदि । दुविहस्स कोहस्स आवलियबाहिरे करेदि ।**[1]

§ १५४. एदेण सरूवेण गुणसेढिणिक्खेवं करेदि त्ति सुत्तत्थो ।

*** एण्हिं गुणसेढिणिक्खेवो केत्तिओ कायव्वो ।**

*** उस समय तीनों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध परिपूर्ण चार मास होता है, शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।**

§ १५२. क्योंकि चढ़नेवाले जीवके विपर्याससे यहाँ उससे दुगुणे स्थितिबन्धकी सिद्धि निर्बाधरूपसे होती है ।

*** इस प्रकार बहुत हजारों स्थितिबन्धके गत होनेपर मानसंज्वलनके अन्तिम समयवर्ती वेदकके तीन संज्वलनोंका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम आठ मास होता है, शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।**

§ १५३. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार मानवेदककालको उल्लंघन करके तदनन्तर समयमें क्रोधवेदककालके प्रथम समयमें विद्यमान जीवकी प्ररूपणामें जो विशेषता होती है उसका प्रतिपादन करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** तदनन्तर समयमें तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करके क्रोधसंज्वलनकी उदयादि गुणश्रेणि करता है तथा दो प्रकारके क्रोधकी उदयावलिके बाहर गुणश्रेणिनिक्षेप करता है ।**

§ १५४. इस रूपमें गुणश्रेणिनिक्षेप करता है यह इस सूत्रका अर्थ है ।

*** इस समय गुणश्रेणिनिक्षेप कितना किया जाता है ।**

---

१. ता०प्रतौ उदयादिगुणसेढिं करेदि इतः परं दुविहस्स कोहस्स उदयावलिबाहिरे करेदि इति सूत्रांशः टीकायामुपलभ्यते । अनन्तरं तत्र कोहवेदगपढमसमए तिविहं कोहमोकड्डियूण इत्यधिकः पाठः समुपलभ्यते ।

§ १५५. जहा लोहादिपयडीओ ओकड्डेमाणो सगवेदगद्धादो आवलियब्भहियं गुणसेढिणिक्खेवं करेदि किमेवमेसो वि आहो अण्णहा त्ति एदेण पुच्छिदं होदि ।

*** पढमसमयकोधवेदगस्स बारसण्हं पि कसायाणं जो गुणसेढिणिक्खेवो सो सेसाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसो होदि ।**

§ १५६. पढमसमयकोहवेदगस्सेदस्स बारसण्हं पि कसायाणं जो गुणसेढिविण्णासो सो सेसाणं णाणावरणादिकम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण पुव्वावहारिदपमाणेण सरिसो त्ति घेत्तव्वो । एत्तो पाये सव्वेसिं ओकड्डिज्जमाणाणं कम्माणमपुव्वाणियट्टिकरणाद्धाहिंतो विसेसाहियो, पुव्वपयट्टगुणसेढिणिक्खेवं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो ।

*** जहा मोहणीयवज्जाणं कम्माणं सेसे सेसे गुणसेढिं णिक्खिवदि तहा एत्तो पाये बारसण्हं कसायाणं सेसे सेसे गुणसेढी णिक्खिविदव्वा ।**

§ १५७. णाणावरणादिकम्माणं व बारसण्हं पि कसायाणं एत्तो पाए पयारंतरपरिहारेण गलिदसेसे गुणसेढिणिक्खेवो होइ त्ति एदेण सुत्तेण जाणाविदं । संपहि जाधे एवंविहो गुणसेढिणिक्खेवो जादो ताधे चेव बारसण्हं एदेसिं कम्माणमंतरमावूरिज्जदि त्ति घेत्तव्वं । जस्स कसायस्स उदएण सेढिमारूढो तम्मि कसाये ओकड्डिदे एवंविहो गुणसेढिणिक्खेवो अंतरावूरणं च होदि त्ति णिच्छेयव्वं ।

---

§ १५५. जिस प्रकार लोभादि प्रकृतियोंका अपकर्षण करनेवाला अपने वेदककालसे एक आवलि अधिक गुणश्रेणिनिक्षेप करता है क्या इसी प्रकार क्रोधवेदक जीव भी गुणश्रेणिनिक्षेप करता है या अन्य प्रकारसे करता है यह इस सूत्र द्वारा पृच्छा की गई है ।

*** प्रथम समयवर्ती क्रोधवेदकके बारहों कषायोंका जो गुणश्रेणिनिक्षेप होता है वह शेष कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके समान ही होता है ।**

§ १५६. इस प्रथम समयवर्ती क्रोधवेदकके बारहों कषायोंका जो गुणश्रेणिविन्यास होता है वह शेष ज्ञानावरणादि कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके पहले निश्चित कराये गये प्रमाणके सदृश होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । इससे आगेके सभी अपकर्षित होनेवाले कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक होता है, क्योंकि पूर्वमें प्रवृत्त हुए गुणश्रेणिनिक्षेपको छोड़कर यहाँ दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है ।

*** जिस प्रकार मोहनीय कर्मको छोड़कर शेष कर्मोंके गुणश्रेणिको शेष-शेषमें निक्षिप्त करता है उसी प्रकार यहाँसे लेकर बारह कषायोंकी गुणश्रेणिको शेष-शेषमें निक्षिप्त करना चाहिये ।**

§ १५७. ज्ञानावरणादि कर्मोंके समान यहाँसे लेकर बारह कषायोंका भी दूसरे प्रकारका परिहार कर गलित शेषमें गुणश्रेणि निक्षेप होता है इस बातका इस सूत्र द्वारा ज्ञान कराया गया है । अब जिस समय इस प्रकारका गुणश्रेणिनिक्षेप हो गया है उसी समय इन बारह कषायोंके अन्तरको पूरता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा था

§ १५८. तदो एत्थ अंतरावूरणविहाणं किंचि वत्तइस्सामो। तं जहा—बारसविहं कसायमोकड्डियूण तक्काले गुणसेढिणिक्खेवं करेमाणो कोहसंजलणस्स ताव उदए थोवं पदेसग्गं देदि। तत्तो असंखेज्जगुणं जाव णाणावरणादिकम्माणं पुव्वणिक्खित्तगुणसेढिसीसयं पत्तो त्ति। पुणो तदणंतरोवरिमअंतरसमयम्मि एक्कवारमसंखेज्जगुणहीणं णिक्खिवदि। तदो विसेसहीणं कादूण संछुहदि जाव अंतरचरिमट्ठिदि त्ति। तदो विदियट्ठिदिआदिसमयम्मि असंखेज्जगुणहीणं णिक्खिवदि। तत्तो परं सव्वत्थ विसेसहीणं चेव संछुहदि जाव अप्पप्पणो ओकड्डिदपदेसमइच्छावणावलियाए अपत्तो त्ति। एवं सेसकसायाणं पि अंतरावूरणविहाणमेत्थ दट्ठव्वं, विसेसाभावादो। णवरि तेसिमुदयावलियबाहिरे चेव गुणसेढिणिक्खेवो त्ति वत्तव्वं। सत्तणोकसायइत्थिणवुंसयवेदाणं पि अप्पप्पणो अंतरे जहावसरं पूरिज्जमाणे णिसेगपरूवणा एवं चेव कायव्वा।

*** पढमसमयकोहवेदगस्स बारसविहस्स वि कसायस्स संकमो होदि।**

§ १५९. कुदो? अणाणुपुव्विसंकमवसेण बारसण्हं पि कसायाणं संकमे विप्पडिसेहाभावादो।

*** ताधे ट्ठिदिबंधो चउण्हं संजलणाणमट्ठ मासा पडिवुण्णा, सेसाणं**

उसी कषायका अपकर्षण होनेपर इस प्रकारका गुणश्रेणिनिक्षेप और अन्तरका भरना होता है ऐसा निश्चय करना चाहिये।

§ १५८. इसलिये यहाँ पर किञ्चित् अन्तरके भरनेकी विधिको बतलावेंगे। वह जैसे—बारह प्रकारके कषायोंका अपकर्षण करके उसी समय गुणश्रेणिनिक्षेप करता हुआ उस समय क्रोधसंज्वलनके थोड़े प्रदेशपुंजको उदयमें देता है। उसके बाद ज्ञानावरणादि कर्मोंके पहले निक्षिप्त हुए गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होनेतक असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है। पुनः तदनन्तर उपरिम अन्तर समयमें एक बार असंख्यातगुणे हीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। उसके बाद अन्तर सम्बन्धी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होनेतक उत्तरोत्तर विशेष हीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। तदनन्तर द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें असंख्यात गुणहीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। उससे आगे अपने-अपने अपकर्षित प्रदेशको अतिस्थापनावलि नहीं प्राप्त होती वहाँतक सर्वत्र विशेष हीन प्रदेशपुंजको ही निक्षिप्त करता है। इसी प्रकार यहाँपर शेष कषायोंके अन्तरपूरणकी विधि जाननी चाहिये, क्योंकि उनके कथनमें कोई भेद नहीं है। इतनी विशेषता है कि उनके प्रदेशपुंजका उदयावलिके बाहर ही गुणश्रेणिनिक्षेप होता है ऐसा यहाँ कहना चाहिये। सात नोकषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदमेंसे भी यथावसर अपने-अपने अन्तरको पूरते समय इसी प्रकार निषेकप्ररूपणा करनी चाहिये।

*** प्रथम समयवर्ती क्रोधवेदकके बारह प्रकारकी कषायका संक्रम होता है।**

§ १५९. क्योंकि अनानुपूर्वी संक्रमके कारण बारहों कषायोंका संक्रम होनेमें निषेध नहीं है।

*** उस समय चारों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध पूरा आठ मास होता है तथा**

कम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ १६०. चडमाणचरिमसमयकोहवेदयपडिबद्धं ट्ठिदिबंधं पेक्खियूण दुगुणमेत्तट्ठिदिबंधसिद्धीए णिप्पडिबंधमेत्थ संभवोवलंभादो । संपहि एत्तो ट्ठिदिबंधसहस्सवारेण अंतोमुहुत्तमेत्तं हेट्ठा समोइण्णस्स से काले सत्त णोकसाये ओकड्डिहिदि त्ति एदम्मि अवत्थंतरे वट्टमाणस्स तक्काले मोहणीयविवक्खाए चरिमसमयचउव्विहबंधगत्तपदुप्पायणमुहेण तत्थतणट्ठिदिबंधपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ एदेण कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु मोहणीयस्स चरिमसमयचउव्विहबंधगो जादो, ताधे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो चदुसट्ठिवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि, सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ १६१. चडमाणपढमसमयकोहोवसामगस्स अंतोमुहुत्तूणबत्तीसवस्समेत्तचदुसंजलणट्ठिदिबंधादो एत्थ दुगुणमेत्तट्ठिदिबंधो जादो, सेसकम्माणं पि तप्पडिभागेणेव संखेज्जवस्ससहस्समेत्तो ट्ठिदिबंधो एदस्स जादो त्ति सुत्तत्थसंगहो । एवं चरिमसमए । एवं चउव्विहबंधगत्ते वट्टमाणस्स ट्ठिदिबंधपमाणविणिच्छयं कादूण संपहि तदणंतरसमए पुरिसवेदस्स बंधोदयपारंभेण पढमसमयपंचविहमोहबंधगो जायदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।

§ १६०. चढ़नेवाले अन्तिम समयवर्ती क्रोधवेदकसे सम्बन्ध रखनेवाले स्थितिबन्धको देखते हुए दूने स्थितिबन्धकी सिद्धि यहाँपर बिना प्रतिबन्धके उपलब्ध होती है । अब यहाँसे हजारों स्थितिबन्धोंके व्यापार द्वारा अन्तर्मुहूर्त काल नीचे उतरे हुए जीवके तदनन्तर समयमें सात नोकषायोंका अपकर्षण करेगा कि इस अवस्थाके मध्यमें विद्यमान हुए जीवके उस कालमें मोहनीयकर्मकी विवक्षासे अन्तिम समयमें चार प्रकारके कर्मोंका बन्ध करनेवाले जीवके प्रतिपादन द्वारा वहाँ होनेवाले स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके गत हो जानेपर अन्तिम समयमें मोहनीय कर्मका चतुर्विध बन्धक हो जाता है । उस समय मोहनीयका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम चौंसठ वर्षप्रमाण होता है तथा शेष कर्मोंका संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।**

§ १६१. चढ़नेवाले प्रथम समयवर्ती क्रोध उपशामकके अन्तर्मुहूर्त कम बत्तीस वर्षप्रमाण चार संज्वलनके स्थितिबन्धसे यहाँपर दुगुणा स्थितिबन्ध हो गया है तथा इसके शेष कर्मोंका भी उनके प्रतिभागके अनुसार संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो गया है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है । इस प्रकार पुरुषवेदका बन्ध प्रारम्भ होनेके पूर्व अन्तिम समयमें जानना चाहिये । इस प्रकार चार प्रकारका बन्ध करनेकी अवस्थामें विद्यमान जीवके स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करके अब तदनन्तर समयमें पुरुषवेदका बन्ध और उदय प्रारम्भ होनेके प्रथम

*** तदो से काले पुरिसवेदगस्स बंधगो जादो ।**

§ १६२. कुदो ? तम्हि समए अवगदवेदपज्जायपरिक्खएण सवेदभावे वट्ट-माणस्स पुरिसवेदबंधसंभवं पडि विसंवादाणुवलंभादो । एदम्मि चेव समए पुरिसवेदेण सह छण्णोकसायाणमुवसामणक्खएण अणुवसंतभावे संकमोकड्डणादिसंभवो अंतरावूरणं गुणसेढिणिक्खेवविसेसो च जुगवं पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** ताधे चेव सत्तण्हं कम्माणं पदेसग्गं पसत्थउवसामणाए सव्व-मणुवसंतं ताधे चेव सत्त कम्मंसे ओकड्डियूण पुरिसवेदस्स उदयादिगुणसेढिं[1] करेदि, छण्हं कम्मंसाणमुदयावलियबाहिरे गुणसेढिं करेदि, गुणसेढि-णिक्खेवो बारसण्हं कसायाणं सत्तण्हं णोकसायवेदणीयाणं सेसाणं च आउगवज्जाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण तुल्लो सेसे सेसे च णिक्खेवो[2] ।**

§ १६३. सुगमो एसो सुत्तपबंधो । संपहि एदम्मि चेव समए पुरिसवेदादीणं ट्ठिदिबंधपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

*** ताधे चेव पुरिसवेदस्स ट्ठिदिबंधो बत्तीसवस्साणि पडिबुण्णाणि,**

समयमें पाँच प्रकारके मोहनीय कर्मका बन्ध करनेवाला हो जाता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** पश्चात् अनन्तर समयमें पुरुषवेदका बन्धक हो जाता है ।**

§ १६२. क्योंकि उसी समय अपगतवेद पर्यायका क्षय हो जानेसे सवेदभावमें विद्यमान हुए जीवके पुरुषवेदका बन्ध होनेके प्रति कोई विसंवाद नहीं पाया जाता तथा इसी समय पुरुषवेदके साथ छह नोकषायोंके उपशमभावका क्षय हो जानेसे अनुपशम अवस्थामें संक्रम, अपकर्षण आदि-का सम्भव तथा अन्तरका भरना और गुणश्रेणि निक्षेपविशेष ये कार्य एक साथ प्रवृत्त होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

*** उसी समय सात कर्मोंका सम्पूर्ण प्रदेशपुंज प्रशस्त उपशामनासे अनुपशान्त हो जाता है तथा उसी समय सात कर्मोंके प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके पुरुषवेदकी उदयादि गुणश्रेणिको करता है । तथा छह कर्मोंके प्रदेशपुंजकी उदयावलिके बाहर गुणश्रेणिको करता है । बारह कषाय, सात नोकषायवेदनीय और आयुकर्मको छोड़कर शेष कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप गुणश्रेणिनिक्षेपकी अपेक्षा समान होता है तथा शेष-शेषमें निक्षेप होता है ।**

§ १६३. यह सूत्रप्रबन्ध सुगम है । अब पुरुषवेद आदिके स्थितिबन्धके प्रमाणका निश्चय करनेके लिये आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** उसी समय पुरुषवेदका स्थितिबन्ध पूरा बत्तीस वर्षप्रमाण होता है,**

---

१. ता०प्रतौ उदयादिगुणसेढिसीसयं इति पाठः । २. ता०प्रतौ णिक्खिवदि इति पाठः ।

संजलणाणं ठिदिबंधो चदुसट्ठिवस्साणि, सेसाणं कम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ १६४. एदं पि सुत्तं सुगमं। संपहि एवं पुरिसवेदमणुवसंतं काढूण हेट्ठा ओदरमाणयस्स ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तक्कालभाविओ जो ट्ठिदिबंधगओ विसेसो तदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** पुरिसवेदे अणुवसंते जाव इत्थिवेदो उवसंतो एदिस्से अद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णामागोदवेदणीयाणमसंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो ।**

§ १६५. चडमाणस्स सत्तणोकसायोसामणद्धाए संखेज्जदिभागं गंतूण जम्हि उद्देसे णामागोदवेदणीयाणं संखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो पारद्धो तमुद्देसमपत्तस्सेवेदस्स णामागोदवेदणीयाणं संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधमुल्लंघियूण असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो जादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। ण च चडमाणचरिमासंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधादो एदस्स दुगुणत्तमासंकणिज्जं, पडिवादपाहम्मेणेत्थ तत्तो असंखेज्जगुणमेत्तट्ठिदिबंधपवुत्तीए उवरिमथोवबहुत्तसुत्तबलेण दंसणादो। संपहि एवंविहट्ठिदिबंधे आढत्ते तक्काले सव्वकम्माणं ट्ठिदिबंधप्पाबहुअमित्थमणुगंतव्वमिदि पदुप्पाएमाणो उवरिमं पबंधमाह—

संज्वलनोंका स्थितिबन्ध चौंसठ वर्षप्रमाण होता है तथा शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।

§ १६४. यह सूत्र भी सुगम है। अब इस प्रकार पुरुषवेदको अनुपशान्त करके नीचे उतरनेवाले जीवके हजारों स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर उस समय होनेवाला जो स्थितिबन्धगत विशेष होता है उसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** पुरुषवेदके अनुपशान्त रहते हुए जबतक स्त्रीवेद उपशान्त होता है इस कालके संख्यात बहुभागोंके बीत जानेपर नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका असंख्यात वर्षकी स्थितिवाला बन्ध होता है ।**

§ १६५. चढ़नेवाले उपशामकके सात नोकषायोंकी उपशामनाकालके संख्यातवाँ भाग जाकर जिस स्थानपर नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध प्रारम्भ होता है उस स्थानको प्राप्त हुए बिना ही इसके नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धको उल्लंघन करके असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है वह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। और यहाँ ऐसी आशंका नहीं करना कि चढ़नेवाले उपशामकके अन्तिम संख्यातवें वर्षप्रमाण स्थितिबन्धसे इसका दुगुना स्थितिबन्ध होता है, क्योंकि प्रतिपातके माहात्म्यवश यहाँ उससे असंख्यातगुणे स्थितिबन्धकी प्रवृत्ति आगे कहे जानेवाले अल्पबहुत्वके प्रतिपादक सूत्रोंके बलसे देखी जाती है। अब इस प्रकारके स्थितिबन्धके आरम्भ होनेपर उस समय अन्य कर्मोंके स्थितिबन्धके अल्पबहुत्वको यहाँपर जानना चाहिये इस बातका कथन करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** ताधे अप्पाबहुअं कायव्वं ।**

§ १६६. सुगमं ।

*** सव्वत्थोवो मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो ।**

§ १६७. कुदो ? तप्पाओग्गसंखेज्जवस्ससहस्सपमाणत्तादो ।

*** तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।**

§ १६८. कुदो ? संखेज्जवस्ससहस्सपमाणत्ताविसेसे वि बादरलोभवेदगद्धाए चेव एदेसिं संखेज्जवस्ससहस्सियट्ठिदिबंधपारंभमाहप्पेण तहाभावसिद्धीए णिब्बाहमुवलंभादो ।

*** णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो ।**

§ १६९. किं कारणं ? असंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधस्स तेसिमेत्थ पारंभदंसणादो ।

*** वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।**

§ १७०. केत्तियमेत्तो विसेसो ? दुभागमेत्तो । एवमेदं ट्ठिदिबंधमाढविय एदेणेवप्पाबहुअविहिणा ट्ठिदिबंधसहस्साणि कादूण हेट्ठा ओदरमाणो एत्तो अंतोमुहुत्तकाले गदे तम्हि उद्देसे एगसमयेण इत्थिवेदमणुवसंतं कुणइ त्ति जाणावेमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** उस समय अल्पबहुत्व करना चाहिये ।**

§ १६६. यह सूत्र सुगम है ।

*** मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध सबसे थोड़ा है ।**

§ १६७. क्योंकि वह तत्प्रायोग्य संख्यात हजार वर्षप्रमाण है ।

*** तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ १६८. क्योंकि संख्यात हजार वर्षप्रमाणकी अपेक्षा अविशेषता होनेपर भी बादर लोभवेदक कालमें ही इन कर्मोंके संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका प्रारम्भ होनेके माहात्म्यवश उस तरहकी सिद्धि निर्बाध रूपसे पाई जाती है ।

*** नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।**

§ १६९. क्योंकि उन कर्मोंके असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका यहाँ प्रारम्भ देखा जाता है ।

*** वेदनीय कर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।**

§ १७०. विशेषका प्रमाण कितना है ? दुगुणा है । इस प्रकार इस स्थितिबन्धको आरम्भ कर इस अल्पबहुत्व विधिसे हजारों स्थितिबन्ध करके नीचे उतरनेवाला जीव यहाँसे अन्तर्मुहूर्त काल जानेके बाद उस स्थानपर एक समय द्वारा स्त्रीवेदको अनुपशान्त करता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** एत्तो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु इत्थिवेदमेगसमएण अणुवसंतं करेदि, ताधे चेव तमोकड्डियूण आवलियबाहिरे गुणसेढिं करेदि, इदरेसिं कम्माणं जो गुणसेढिणिक्खेवो तत्तिओ च इत्थिवेदस्स वि, सेसे सेसे च णिक्खिवदि ।**

§ १७१. सुगमो एसो सुत्तपबंधो। एवमित्थिवेदमणुवसंतं कादूण हेट्ठा ओयरमाणस्स पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्तेसु ट्ठिदिबंधेसु अणंतरपरूविदेणेव अप्पाबहुअ-विहिणा समइक्कंतेसु णवुंसयवेदे च अज्ज वि अणुवसंतभावम(च्छ)छ(ड)माणे ? एदम्मि अन्तरंतरे वट्टमाणस्स जो ट्ठिदिबंधविसयो विसेसो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्त-मोइण्णं—

*** इत्थिवेदे अणुवसंते जाव णवुंसयवेदो उवसंतो एदिस्से अद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणमसंखेज्ज-वस्सियट्ठिदिबंधो जादो ।**

§ १७२. चढमाणस्स इत्थिवेदोवसामणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे जम्हि उद्देसे तिण्हमेदेसिं कम्माणमसंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो पज्जवसिदो संखेज्जवस्सिओ च ट्ठिदिबंधो पारद्धो तमुद्देसं थोवंतरेण अपत्तस्सेवेदस्स णाणावरणदंसणावरणअंतराइयाणं संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधपरिक्खएण असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो जादो त्ति एसो एत्थ

*** यहाँसे लेकर हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर एक समय द्वारा स्त्रीवेदको अनुपशान्त करता है और उसी समय उसका अपकर्षण कर उदयावलिके बाहर गुण-श्रेणिको करता है। यहाँ दूसरे कर्मोंका जो गुणश्रेणिनिक्षेप होता है उतना ही स्त्रीवेदका भी गुणश्रेणिनिक्षेप होता है। तथा शेष-शेषमें निक्षेप करता है।**

§ १७१. यह सूत्रप्रबन्ध सुगम है। इस प्रकार स्त्रीवेदको अनुपशान्त करके नीचे उतरनेवाले जीवके फिर भी अनन्तर प्ररूपित की गई अल्पबहुत्व विधिसे ही संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर नपुंसकवेदके अभी भी अनुपशान्त भावको नहीं प्राप्त होते हुए ऐसी बीचकी अवस्थामें विद्यमान हुए उसके जो स्थितिबन्ध विषयक विशेषता होती है इसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** स्त्रीवेदके अनुपशान्त होनेपर जबतक नपुंसकवेद उपशान्त रहता है इस कालके संख्यात बहुभागोंके व्यतीत होनेपर ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मोंका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है।**

§ १७२. चढ़नेवाले जीवके स्त्रीवेदके उपशामना कालके संख्यातवें भाग जानेपर जिस स्थानमें इन तीन कर्मोंका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध समाप्त होकर संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध प्रारम्भ होता है उस स्थानको थोड़ेसे अन्तरके द्वारा नहीं प्राप्त करनेवाले इस जीवके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मोंका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका क्षय हो जानेसे

सुत्तत्थविणिच्छओ। संपहि एदम्मि ट्ठिदिबंधे आढत्ते अण्णारिसं ट्ठिदिबंधप्पाबहुअं होदि त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** ताधे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो, तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ १७३. सुगमत्तादो ण एत्थ किंचि वत्तव्वमत्थि।

*** जाधे घादिकम्माणमसंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो ताधे चेव एगसमएण णाणावरणीयचउव्विहं दंसणावरणीयतिविहं पंचंतराइयाणि एदाणि दुट्ठाणियाणि बंधेण जादाणि।**

§ १७४. चडमाणयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिबंधपारंभसमकालमेव एदेसिं कम्माणमेगट्ठाणियो बंधो जादो, एण्हिं पि संखेज्जवस्सट्ठिदिबंधे पज्जवसिदे असंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधपारंभसमकालमेव पज्जवसिदो। एत्तो पाये सव्वासिमेव तासिं दुट्ठाणियाणुभागं बंधइ त्ति सुत्तत्थसंगहो। संपहि एत्तो पुणो वि संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु अणंतरपरूविदेण अप्पाबहुअविहिणा गदेसु जम्हि उद्देसे चडमाणस्स णवुंसयवेदो उवसंतो तमुद्देसमपत्तस्सेवेदस्स णवुंसयवेदो अणुवसंतो होदि। ताधे चेव तमोकड्डियूण

असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है यह इस सूत्रका निश्चयार्थ है। अब इस स्थितिबन्धके प्राप्त होनेपर अन्य प्रकारका स्थितिबन्ध सम्बन्धी अल्पबहुत्व होता है इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** उस समय मोहनीयका स्थितिबन्ध स्तोक है, उससे तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है, उससे नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है तथा उससे वेदनीय कर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।**

§ १७३. सुगम होनेसे यहाँ कुछ वक्तव्य नहीं है।

*** जिस समय घातिकर्मोंका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिवाला बन्ध होता है उसी समय एक समयमें चार प्रकारका ज्ञानावरण, तीन प्रकारका दर्शनावरण और पाँच अन्तराय कर्म ये बन्धकी अपेक्षा द्विस्थानीय हो जाते हैं।**

§ १७४. चढ़नेवाले जीवके संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका प्रारम्भ जिस समय होता है उसी समय इन कर्मोंका एकस्थानीय बन्ध हो जाता है। यहाँ भी संख्यात वर्ष स्थितिबन्ध समाप्त होनेपर असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध प्रारम्भ होते समय यहाँसे लेकर उन्हीं सब प्रकृतियोंके द्विस्थानीय अनुभागको बाँधता है। यह सूत्रका समुच्चयार्थ है। अब यहाँसे आगे फिर भी अनन्तर कही गई अल्पबहुत्वविधिके अनुसार संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके जानेपर जिस स्थान पर चढ़नेवाले जीवके नपुंसकवेद उपशान्त होता है उस स्थानको नहीं प्राप्त हुए इसका नपुंसकवेद अनुपशान्त होता है। तथा उसी समय उसका अपकर्षण कर उसके अन्तरको भरता हुआ

तदंतरं पूरेमाणो सेसकम्माणं गलिदसेसगुणसेढिणिक्खेवायामेण सरिसं गुणसेढिणिक्खेवमुदयावलियबाहिरे णिक्खिवदि त्ति पदुप्पाएमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु णवुंसयवेदं अणुवसंतं करेदि। ताधे चेव णवुंसयवेदमोकड्डियूण आवलियबाहिरे गुणसेढिं णिक्खिवदि। इदरेसिं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसो गुणसेढिणिक्खेवो सेसे सेसे च णिक्खेवो।**

§ १७५. गयत्थमेदं सुत्तं।

*** णवुंसयवेदे अणुवसंते जाव अंतरकरणद्धाणं ण पावदि एदिस्से अद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु मोहणीयस्स असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो जादो।**

§ १७६. जम्हि उद्देसे चडमाणो अंतरकरणं कादूण मोहणीयस्स संखेज्जवस्सियं ट्ठिदिबंधं आढवेइ तमुद्देसमंतोमुहुत्तेण ण पावदि त्ति एदम्हि अवत्थंतरे वट्टमाणस्सेदस्स पडिवादपाहम्मेणासंखेज्जवस्सिओ मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो जादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो, चडमाणसव्वद्धाहिंतो ओदरमाणसव्वद्धाणं पुव्वमेव विसेसहीणभावेण पज्जवसाणदंसणादो। तदो एत्थुवजोगिओ एसो अत्थो वत्तव्वो। तं जहा—उवरि चढमाणसुहुमसांपराइयद्धा च हेट्ठा ओदरमाणसुहुमसांपराइयद्धा चेदि एवमेदाओ

शेष कर्मोंके गलितशेष गुणश्रेणिनिक्षेपके आयामके समान ही उदयावलिके बाहर गुणश्रेणिनिक्षेपको करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** पश्चात् संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर नपुंसकवेदको अनुपशान्त करता है। उसी समय नपुंसकवेदका अपकर्षण कर आवलिबाह्य गुणश्रेणिको निक्षिप्त करता है यह गुणश्रेणिनिक्षेप शेष कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके समान होता है तथा शेष-शेषमें निक्षेप होता है।**

§ १७५. यह सूत्र गतार्थ है।

*** नपुंसकवेदके अनुपशान्त होनेपर जबतक अन्तरकरणके कालको नहीं प्राप्त करता है इस कालके संख्यात भागोंके बीत जानेपर मोहनीयकर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है।**

§ १७६. चढ़नेवाला जीव जिस स्थानमें अन्तरकरणको करके मोहनीयकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध आरम्भ करता है उस स्थानको अन्तर्मुहूर्त द्वारा नहीं प्राप्त होता है इस अवस्थाके मध्य विद्यमान इसके प्रतिपातके माहात्म्यवश मोहनीय कर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है यह यहाँपर सूत्रार्थका संग्रह है, क्योंकि चढ़नेवाले सम्पूर्ण कालोंसे उतरनेवालेके सम्पूर्ण कालोंका पूर्व ही विशेष हीनरूपसे अन्त देखा जाता है। इसलिये यहाँपर यह उपयोगी अर्थ कहना चाहिये। वह जैसे—ऊपर चढ़नेवालेका सूक्ष्मसाम्परायका काल और नीचे उतरने-

दो वि एक्कदो कादूण जोइज्जमाणे का बहुआ का वा थोवा त्ति पुच्छिदे ओदरमाणसुहुमसांपराइयद्धा विसेसहीणा भवदि अंतोमुहुत्तमेत्तेण। एवं चेव चडमाणोदरमाणसंबंधिसव्वद्धाणमण्णोण्णं पेक्खियूण विसेसाहियहीणभावो जोजेयव्वो। अत्र चोद्यते—अंतरकणं कादूण विदिक्कंतो जो कालो चडमाणसंबंधिओ ण सो पडिणियत्तिय पुणरागच्छदि, वोलीणस्स तस्स पुणरागमणविराहादो। तदो कधमेदं वुच्चदे, 'णवुंसयवेदे अणुवसंते जाव अंतरकरणद्धाणं ण पावेदि' त्ति तहाविहसंभवस्स जुत्तिबाहियत्तादो ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—सच्चमेदं, ण सो कालो पुणरागच्छदि त्ति इच्छिज्जमाणत्तादो। किंतु अंतरकरणं कादूण उवरि चढिय उवसंतकसायो होदूण पुणो हेट्ठा ओदरमाणस्स उवसंतद्धादो उवरि होदूण ट्ठिदो एसो णवुंसयवेदस्साणुवसंतकालो उवसामगस्स णवुंसयवेदोवसामणद्धाये थोरुच्चयेण सरिसपरिमाणो त्ति कादूणेदस्स तब्भावोवचारेण अंतरकरणुद्देसं पि एत्थेव बुद्धीए संकप्पिय जेणेसा परूवणा आढत्ता तदो ण किंचि विरुज्झदे, उवसामगद्धाविवज्जासेण परिवदमाणद्धाओ विलोमक्कमेण ट्ठवेदूण एसा परूवणा आढत्ता त्ति। तम्हा णवुंसयवेदे अणुवसंते जाव अंतरकरणुद्दसं ण पावदि ताव एदमद्धाणं संखेज्जखण्डे करिय तत्थ बहुभागेसु गदेसु संखेज्जदिभागे च सेसे मोहणीयस्स संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधमुल्लंघियूण असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो पारद्धो त्ति सुसंबंधं।

वालेका सूक्ष्मसाम्पराय काल इस प्रकार इनको मिलाकर देखनेपर कौन काल बहुत होता है और कौन काल स्तोक होता है ऐसी पृच्छा होनेपर उतरनेवालेका सूक्ष्मसाम्पराय काल अन्तर्मुहूर्तमात्र विशेष हीन होता है। इसी प्रकार चढ़नेवाले और उतरनेवाले जीवोंके सम्पूर्ण कालोंको परस्पर मिलाकर देखते हुए क्रमसे विशेष अधिक और विशेष हीन कालकी योजना करनी चाहिये।

शंका—यहाँपर शंकाकार कहता है कि अन्तरकरण करके चढ़नेवालेसे सम्बन्ध रखनेवाला जो काल व्यतीत हो गया है वह लौटकर फिर नहीं आता है, क्योंकि व्यतीत हुए उस कालका पुनः लौटकर आनेका विरोध है। इसलिये यह कैसे कहते हैं कि 'नपुंसकवेदके अनुपशान्त होनेपर जबतक अन्तरकरणके कालको नहीं प्राप्त करता है', क्योंकि उस प्रकारका सम्भव युक्तिबाह्य है ?

समाधान—यहाँ उक्त शंकाका परिहार करते हैं—यह कहना सत्य है कि वह काल फिर लौटकर नहीं आता, क्योंकि यह हमें इष्ट है। किन्तु अन्तरकरण करके ऊपर चढ़कर और उपशान्तकषाय होकर पुनः नीचे उतरनेवालेके उपशान्त कालसे ऊपर होकर स्थित हुआ यह नपुंसकवेदका अनुपशान्त काल, उपशामकके नपुंसकवेदसम्बन्धी उपशामना कालसे, थोड़े फरकसे सदृश प्रमाणवाला है ऐसा करके इसके उसके सद्भावके उपचार द्वारा यहाँपर अन्तरकरण स्थानका बुद्धिसे संकल्प करके चूँकि यह प्ररूपणा स्वीकर की गई है, इसलिए यह कुछ भी विरुद्ध नहीं है। क्योंकि उपशामकके कालके विपर्यास द्वारा गिरनेवालेके कालोंको विलोम क्रमसे स्थापित कर यह प्ररूपणा आरम्भ की गई है। इसलिए नपुंसकवेदके अनुपशान्त होनेपर जबतक अन्तरकरणस्थानको नहीं प्राप्त करता है तबतक इस स्थानके संख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुत खण्डोंके जानेपर और संख्यातवें भागके शेष रहनेपर मोहनीयकर्मके संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धको उल्लंघन कर असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध प्रारम्भ किया इस प्रकार यह सूत्रकथन सुसम्बद्ध है।

*** ताधे चेव दुट्ठाणिया बंधोदया ।**

§ १७७. मोहणीयस्स संखेज्जवस्सियट्ठिबंधसमकालं पारंभाणमेदेसिं एगट्ठाणियबंधोदयाणं तप्पज्जवसाणे चेव परिसमत्तीए णाइयत्तादो । संपहि छसु आवलियासु गदासु उदीरणा त्ति जो णियमो उवसामगस्स अंतरकरणसमकालमेवाढत्तो वि सो एत्थ णत्थि, किंतु ओदरमाणस्स सव्वावत्थासु चेव बंधावलियादिक्कंतमेत्तं चेव कम्ममुदीरिज्जदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स पदुप्पायणफलो उत्तरसुत्तारंभो—

*** सव्वस्स पडिवदमाणस्स छसु आवलियासु गदासु उदीरणा इदि णत्थि णियमो आवलियादिक्कंतमुदीरिज्जदि ।**

§ १७८. एत्थ सव्वग्गहणेण पडिवदमाणसुहुमसांपराइयप्पहुडि सव्वत्थेव पयदणियमो णत्थि त्ति एसो अत्थो जाणाविदो, अण्णहा सव्वविसेसणस्स सोहल्लियाणुवलंभादो । अण्णे वुण आइरिया जाव मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो ताव ओदरमाणयस्स वि छसु आवलियासु गदासु उदीरणा त्ति एसो णियमो होदूण पुणो असंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधपारंभे एत्तो प्पहुडि तारिसो णियमो णट्ठो त्ति एदस्स सुत्तस्स अत्थं वक्खाणेंति । एदम्मि पुण वक्खाणे अवलंबिज्जमाणे सव्वग्गहणमेदं ण संबज्झदि त्ति तदो पुव्वुत्तो चेव अत्थो पहाणभावेणावलंबेयव्वो । संपहि मोहणीयस्स जो आणुपुव्वीसंकमणियमो उवसामगस्स अंतरसमत्तिसमकालमेव आढत्तो

*** उसी समय द्विस्थानिक बन्ध और उदय होते हैं ।**

§ १७७. मोहनीयके संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धके समान कालमें प्रारम्भ होनेवाले इन एक स्थानीय बन्ध और उदयका उसके अन्त होनेके समयमें ही एकस्थानीय बन्ध और उदयकी परिसमाप्ति न्यायप्राप्त है । अब छह आवलियोंके गत होनेपर उदीरणाका जो नियम उपशामकके अन्तरकरणके समान एक कालमें आरम्भ किया था वह यहाँ नहीं रहता, किन्तु उतरनेवालेके सभी अवस्थाओंमें बन्धावलि व्यतीत होनेके बाद ही कर्मकी उदीरणा करता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका प्रतिपादनस्वरूप आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** सभी गिरनेवालोंके छह आवलियोंके व्यतीत होनेपर उदीरणा होती है ऐसा नियम नहीं है, किन्तु बन्धावलिके व्यतीत होनेपर उदीरणा करने लगता है ।**

§ १७८. इस सूत्रमें 'सर्व' पदका ग्रहण करनेसे गिरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायसे सर्वत्र ही प्रकृत नियम नहीं रहता इस प्रकार इस अर्थका ज्ञान कराया गया है, अन्यथा 'सर्व' इस विशेषणकी सफलता नहीं प्राप्त होती । परन्तु अन्य आचार्य जबतक मोहनीयकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध रहता है तबतक उतरनेवालेके भी छह आवलियोंके जानेपर उदीरणा होती है इस प्रकार यह नियम होकर पुनः असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध प्रारम्भ होनेपर यहाँसे लेकर उस प्रकारका नियम नष्ट हो जाता है इस प्रकार इस सूत्रके अर्थका व्याख्यान करते हैं । परन्तु इस व्याख्यानके अवलम्बन करनेपर यह 'सर्व' पदका ग्रहण नहीं बनता, इसलिए पूर्वोक्त अर्थका ही प्रधानभावसे अवलम्बन करना चाहिये । अब उपशामकके अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके

सो वि ओदरमाणयस्स सव्वावत्थाए चेव णत्थि त्ति एदस्सत्थविसेसस्स पुव्वमवहारिदसरूवस्स वि पुणो वि णिच्छयकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** अणियट्टिप्पहुडि मोहणीयस्स अणाणुपुव्विसंकमो लोभस्स वि संकमो ।**

§ १७९. ओदरमाणाणियट्टिपढमसमयप्पहुडि सव्वत्थेवादिक्कंतविसयमोहणीयस्साणुपुव्वीसंकमणियमो णत्थि, किंतु अणाणुपुव्वीसंकमो चेव एत्थ होदि त्ति, अदो चेव लोभसंजलणस्स वि संकमो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थणिच्छओ । ओदरमाणसुहुमसांपराइयपढमसमयप्पहुडि चेव मोहणीयस्स अणाणुपुव्विसंकमो त्ति किमेवं ण उच्चदे ? ण, सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणे मोहणीयस्स बंधाभावेण संकमपवुत्तीए तत्थ संभवाणुवलंभादो । एदं च सत्तिं पडुच्च वुत्तं । लोभसंजलणस्स वि ताधे चेव संकमसत्ती समुप्पण्णा त्ति । अण्णहा पुण जाव तिविहा माया ण ओकड्डिदा ताव अणाणुपुव्वीसंकमस्सुववत्ती ण जायदे, तत्तो पुव्वं लोभसंजलणस्स पडिग्गहाभावेण संकमपवुत्तीए संभवाणुवलंभादो । संपहि एत्थतणट्ठिदिबंधप्पाबहुअसरूवावहारणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** जाधे असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो मोहणीयस्स ताधे मोहणीयस्स**

समान कालमें होनेवाला जो मोहनीयकर्मका आनुपूर्वीसंक्रमका नियम आरम्भ हुआ था वह भी उतरनेवालेके सब अवस्थाओंमें नहीं है इस प्रकार पूर्वमें अवधारित स्वरूपवाले इस अर्थविशेषका फिर भी निश्चय करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

*** अनिवृत्तिकरणसे लेकर मोहनीयकर्मका अनानुपूर्वी संक्रम होने लगता है । और लोभका भी संक्रम होने लगता है ।**

§ १७९. उतरनेवाले उपशामकके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर जिसका विषय अतिक्रान्त हो गया है ऐसे मोहनीयका आनुपूर्वीसंक्रम सब जगह नहीं रहता, किन्तु यहाँपर अर्थात् अनिवृत्तिकरणसे लेकर अनानुपूर्वीसंक्रम ही होता है और इसीलिए लोभसंज्वलनका भी संक्रम होता है यह यहाँ इस सूत्रके अर्थका निश्चय है ।

शंका—उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम समयसे लेकर ही मोहनीयकर्मका अनानुपूर्वीसंक्रम होता है ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें मोहनीयकर्मका बन्ध न होनेसे वहाँ संक्रमकी प्रवृत्ति सम्भव नहीं है । और यह शक्तिकी अपेक्षा कहा है, क्योंकि लोभसंज्वलनकी तो उसी समय संक्रमकी शक्ति उत्पन्न हो जाती है । अन्यथा जबतक तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण नहीं होता तबतक अनानुपूर्वी संक्रमकी उपपत्ति नहीं होती है, क्योंकि उससे पूर्व लोभसंज्वलनके प्रतिग्रहका अभाव होनेसे संक्रमकी प्रवृत्ति सम्भव नहीं है । अब यहाँ होनेवाले स्थितिबन्धके अल्पबहुत्वका निश्चय करनेके लिये आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** जब मोहनीय कर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब मोहनीय-**

ट्ठिदिबंधो थोवो, घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

§ १८०. सुगमं । संपहि एत्तो हेट्ठा वि एदेणेव अप्पाबहुअकमेण ट्ठिदिबंध-सहस्साणि कादूणोदरमाणस्स परूवणापबंधं सुत्ताणुसारेण वत्तइस्सामो—

❋ एदेण कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु अणुभागबंधेण वीरियंतराइयं सव्वघादी जादं । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण आभिणिबोधिय-णाणावरणीयं परिभोगंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि । तदो ट्ठिदिबंध-पुधत्तेण चक्खुदंसणावरणीयं सव्वघादी जादं । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण सुदणाणावरणीयमचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण मणपज्जव-णाणावरणीयं दाणंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि ।

§ १८१. अणुभागबंधेण जेणेव कमेण चडमाणयस्स बारसण्हमेदेसिं कम्माणं अणुभागबंधस्स देसघादित्तं जादं तेणेव कमेण पच्छाणुपुव्वीए हेट्ठा ओदरमाणस्स

कर्मका स्थितिबन्ध सबसे थोड़ा होता है, उससे घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यात-गुणा होता है, उससे नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है और उससे वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है ।

§ १८०. यह सूत्र सुगम है । अब यहाँसे नीचे भी इसी अल्पबहुत्वके क्रमसे हजारों स्थिति-बन्धोंको करके उतरनेवालेकी प्ररूपणाके प्रबन्धको सूत्रके अनुसार बतलावेंगे ।

❋ इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके जानेपर अनुभागबन्धकी अपेक्षा वीर्यान्तराय सर्वघाति हो जाता है । तत्पश्चात् स्थितिबन्धपृथक्त्वके द्वारा आभिनि-बोधिकज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय कर्म सर्वघाति हो जाते हैं । तत्पश्चात् स्थिति-बन्धपृथक्त्वके द्वारा चक्षुदर्शनावरणीय कर्म सर्वघाति हो जाता है । तत्पचात् स्थितिबन्ध पृथक्त्वके द्वारा श्रुतज्ञानावरणीय अचक्षुदर्शनावरणीय और भोगान्तराय कर्म सर्वघाति हो जाते हैं । तत्पश्चात् स्थितिबन्ध पृथक्त्वके द्वारा अवधिज्ञाना-वरणीय, अवधिदर्शनावरणीय और लाभान्तराय कर्म सर्वघाति हो जाते हैं । तत्पश्चात् स्थितिबन्धपृथक्त्वके द्वारा मनःपर्ययज्ञानावरणीय और दानान्तरायकर्म सर्वघाति हो जाते हैं ।

§ १८१. चढ़नेवाले जीवके अनुभागबन्धकी अपेक्षा जिस क्रमसे इन बारह कर्मोंका अनुभाग-बन्ध देशघातिपनेको प्राप्त हो गया था, नीचे उतरनेवाले जीवके पश्चादानुपूर्वीके अनुसार उसी

जहाणिद्दिट्ठविसए देसघादिकरणविणासेण सव्वघादित्तभेदेसिमणुभागबंधेण जादमिदि एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। णवरि सगसगदेसघादिकरणुद्देसमपत्तस्सेव पुव्वमंतोमुहुत्तमत्थि त्ति देसघादिकरणविघादो सव्वत्थ दट्ठव्वो।

*** तदो ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा पडिहम्मदि।**

§ १८२. असंखेज्जलोगभागो समयपबद्धस्स उदीरणा पवत्तदि तदो सव्वघादिबंधविसयादो पुणो वि असंखेज्जगुणवड्ढीए ट्ठिदिबंधसहस्सेसु बहुएसु गदेसु चडमाणस्स सगपारंभविसयादो पुव्वमेव अंतोमुहुत्तमत्थि त्ति सव्वेसिं कम्माणमाउगवेदणीयवज्जाणं असंखेज्जसमयपबद्धपडिबद्धा उदीरणा पडिहदा जादा। एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जलोगभागपडिभागेणोदीरणाए एत्तो प्पहुडि पवुत्ती जादा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ।

§ १८३. एवमेदं परूविय संपहि एत्थेवुद्देसे ट्ठिदिबंधप्पाबहुअमेवं पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

क्रमसे यथा निर्दिष्ट स्थानपर उन बारह कर्मोंके अनुभागबन्धके देशघातिकरणका विनाश हो जानेसे इनका अनुभागबन्धकी अपेक्षा सर्वघातिपना प्राप्त हो गया है यह यहाँपर इस सूत्रके अर्थका तात्पर्य है। इतनी विशेषता है कि अपने-अपने देशघातिकरणके स्थानको प्राप्त होनेके अन्तर्मुहूर्त पूर्व ही देशघातिकरणका विघात सर्वत्र जानना चाहिये।

*** तत्पश्चात् हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा नष्ट हो जाती है।**

§ १८२. एक समयप्रबद्धमें असंख्यात लोकके भागके अनुसार उदीरणा प्रवृत्त होती है, इसलिए जो सर्वघातिबन्धका स्थान है उससे फिर भी असंख्यात गुणवृद्धिके द्वारा बहुत हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर चढ़नेवाले उपशामकके जिस स्थानपर असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा प्रारम्भ हुई थी उस स्थानसे अन्तर्मुहूर्त पहले ही आयु और वेदनीय कर्मोंको छोड़कर शेष सभी कर्मोंकी असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा समाप्त हो जाती है। यहाँसे लेकर एक समयप्रबद्धकी असंख्यात लोकके भागके प्रतिभागके अनुसार उदीरणा प्रवृत्त हो जाती है यह सूत्रके अर्थका सार है।

विशेषार्थ—सामान्य नियम यह है कि उपशमश्रेणिमें चढ़नेवाले जीवके जिस स्थानसे असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा प्रारम्भ हो जाती है उसके पूर्व सर्वत्र असंख्यात लोकके प्रतिभाग के अनुसार ही उदीरणा प्रवृत्त रहती है। किन्तु चढ़ते समय जहाँसे असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा प्रवृत्त होती है, उतरनेवाले जीवके उस स्थानको प्राप्त होनेके अन्तर्मुहूर्त पूर्वसे ही असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा समाप्त होकर पुनः पूर्ववत् उदीरणा प्रारम्भ हो जाती है।

§ १८३. इस प्रकार प्रकृत विषयका प्ररूपण करके अब इस स्थानपर स्थितिबंधका अल्पबहुत्व इस प्रकार प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके प्रबंधको कहते हैं—

*** जाधे असंखेज्जलोगपडिभागे समयपबद्धस्स उदीरणा ताधे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो, घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ १८४. सुगमं। पुव्वुत्तस्सेव अप्पाबहुअपबंधस्स एत्थ वि संभालणफलत्तादो। एवमेदेण अप्पाबहुअविहाणेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि असंखेज्जगुणवड्ढीए कादूण हेट्ठा ओदरमाणस्स अंतोमुहुत्तं गंतूण तदो अण्णारिसो ट्ठिदिबंधप्पाबहुअकमो जायदि त्ति जाणावणफलो उत्तरसुत्तणिद्देसो—

*** एदेण कमेण ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तदो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो, णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, घादिकम्माणं ठिदिबंधो विसेसाहिओ, वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ १८५. कुदो? एवमेत्थुद्देसे एक्कवारेणेव तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधादो णामागोदट्ठिदिबंधस्स हेट्ठा विसेसहाणीए पडिवादो वेदणीयट्ठिदिबंधस्स च घादिकम्म-ट्ठिदिबंधादो विसेसाहियभावपरिणामो त्ति णासंकणिज्जं, परिणामविसेससमासेज्ज तहाभावसिद्धीए णिव्बाहमुवलंभादो। जम्हि उद्देसे णामागोदाणं ट्ठिदिबंधादो

*** जिस समय असंख्यात लोकके प्रतिभागके अनुसार समयप्रबद्धकी उदीरणा प्रारम्भ होती है उस समय मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध सबसे अल्प होता है उससे घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है उससे नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है और उससे वेदनीय कर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है।**

§ १८४. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि यहाँपर भी पूर्वके अल्पबहुत्वप्रबंधकी सम्हाल करना ही इसका फल है। इस प्रकार इस अल्पबहुत्वविधिसे असंख्यात गुणवृद्धिरूपसे संख्यात हजार स्थिति-बंध करके नीचे उतरनेवाले जीवके अन्तर्मुहूर्त काल जाकर तत्पश्चात् अन्य प्रकारका स्थितिबन्धके अल्पबहुत्वका क्रम प्रारम्भ होता है इस प्रकारका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** इस क्रमसे हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर पश्चात् एक ही बारमें मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध सबसे अल्प होता है, उससे नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है, उससे घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है और उससे वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है।**

§ १८५. शंका—इस स्थानपर एक ही बारमें तीन घातिकर्मोंके स्थितिबन्धसे नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध नीचे अर्थात् कम होकर विशेष हीन कैसे हो गया है तथा वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध घातिकर्मोंके स्थितिबन्धसे विशेषाधिकभावरूप परिणामको कैसे प्राप्त हो गया है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि परिणामविशेषका आलम्बन लेकर उस प्रकारकी सिद्धि निर्बाधरूपसे पाई जाती है। उपशामकके जिस स्थानपर नाम और गोत्रकर्मके

तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो उवसामगस्स एक्कसराहेण असंखेज्जगुणहाणीए हेट्ठा णिवदिदो तम्मुद्देसमपत्तस्सेव ओदरमाणयस्स एवंविहो ट्ठिदिबंधपरिवत्तो जादो त्ति एसो एदस्स भावत्थो। जइ एवं विसेसाहियवड्ढिं मोत्तूण असंखेज्जगुणवड्ढीए एसो परियत्तो किण्ण जादो त्ति णासंकियव्वं, ओदरमाणयस्स सव्वो ट्ठिदिबंधपल्लट्टो विसेसाहिय-वड्ढीए चेव पयट्टदि त्ति णियमदंसणादो। ण एस णियमो णिण्णिबंधणो, एवं चेव सुत्तं णिबंधणीकरिय पयट्टत्तादो। एवमेदेण कमेण पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्ताणि ट्ठिदिबंधब्भुस्सरणाणि कादूण हेट्ठा ओदरमाणस्स अंतोमुहुत्तकाले वोलीणे तदो अण्णारिसो ट्ठिदिबंधप्पाबहुअकमो संवुत्तो त्ति जाणावणफलो उत्तरसुत्तपबंधो—

*** एवं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि कादूण तदो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो, णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो, णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं ठिदिबंधो तुल्लो विसेसाहिओ।**

§ १८६. कुदो? एवमेत्थ वेदणीयट्ठिदिबंधस्स णाणावरणादिट्ठिदिबंधादो विसेसाहियभावेण पुव्वं पयट्टमाणस्स एक्कसराहेणेव तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधेण सरिस-

---

स्थितिबन्धसे तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध एक बारमें असंख्यात गुणहानिरूपसे नीचे (कम होकर) प्राप्त होता है उस स्थानको प्राप्त होनेके पूर्व ही उतरनेवाले जीवके इस प्रकारसे स्थितिबन्धका परिवर्तन हो जाता है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

शंका—यदि ऐसा है तो विशेष अधिकरूपसे वृद्धिको छोड़कर असंख्यात गुणवृद्धिरूपसे यह परिवर्तन क्यों नहीं हो जाता?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उतरनेवाले जीवके सम्पूर्ण स्थितिबन्धका परिवर्तन विशेष अधिक वृद्धिरूपसे ही प्रवृत्त होता है यह नियमसे देखा जाता है। और यह नियम कारणरहित है नहीं, क्योंकि यही सूत्र कारण करके प्रवृत्त होता है।

इस प्रकार इस क्रमसे फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्धोंका उत्सर्पण करके नीचे उतरनेवाले जीवके अन्तर्मुहूर्त कालके जानेपर अन्य प्रकारका स्थितिबन्धके अल्पबहुत्वका क्रम प्राप्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके फलस्वरूप आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** इस प्रकार संख्यात हजार स्थितिबन्धोंको करके पश्चात् एक बारमें मोहनीय-कर्मका स्थितिबन्ध सबसे अल्प होता है, उससे नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है और उससे ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय वेदनीय और अन्तराय कर्मोंका स्थितिबन्ध एक समान होकर विशेष अधिक होता है।**

§ १८६. शंका—पहले वेदनीय कर्मका स्थितिबन्ध ज्ञानावरणादि कर्मोंकी अपेक्षा विशेष अधिकरूपसे प्रवृत्त था वह यहाँपर इस प्रकार एक बारमें ही तीन घातिकर्मोंके स्थितिबन्धके समान परिणामवाला कैसे हो गया?

परिणामो जादो त्ति णासंकणिज्जं, अंतरंगपरिणामविसेसमस्सियूण तस्स तहाभाव-सिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो। एत्थ वि जम्हि उद्देसे चडमाणस्स णाणावरणादीणं ट्ठिदिबंधादो विप्पडियूण वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणब्भहिओ जादो तमुद्देस-मपत्तस्सेव एवंविहो परिवत्तो जादो त्ति घेत्तव्वं। एवमेदेणप्पाबहुअविहिणा पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्तट्ठिदिबंधब्भुस्सरणाणि कादूण हेट्ठा णिवदमाणस्स अंतोमुहुत्तकाले समइक्कंते तदो अण्णारिसो ट्ठिदिबंधपरिवत्तो जादो त्ति पदुप्पायणफलो उत्तरसुत्त-णिद्देसो—

*** एवं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि, तदो अण्णो ठिदिबंधो। एक्कसराहेण णामागोदाणं ठिदिबंधो थोवो, मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ, णाणावरणीयदंसणावरणीयवेदणीयअंतराइयाणं ठिदिबंधो तुल्लो विसेसाहिओ।**

§ १८७. कुदो? एवमेत्थ एक्कसराहेण णामागोदट्ठिदिबंधस्स मोहणीयट्ठिदिबंधादो असंखेज्जगुणत्तपरिच्चागेण हेट्ठा विसेसहीणभावेण णिवादो त्ति णासंका कायव्वा, परिणामविसेसमासेज्ज बहुसो दत्तुत्तरत्तादो। एवमेदेणप्पाबहुअकमेण पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्ताणि ट्ठिदिबंधब्भुस्सरणाणि कादूण हेट्ठा णिवदमाणस्स अंतोमुहुत्त-

---

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि अन्तरंग परिणामविशेषका आलम्बन लेकर उसके उस प्रकारकी सिद्धि होनेमें कोई निषेध नहीं पाया जाता।

यहाँ पर भी जिस स्थानमें चढ़नेवाले जीवके ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थितिबन्धसे पूर्व स्थितिबन्धको अति क्रम करके वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा अधिक हो गया था उस स्थानको नहीं प्राप्त हुए ही इस प्रकार परिवर्तन हो गया है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार इस अल्पबहुत्व विधिसे फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्ध जाकर नीचे गिरनेवाले जीवके अन्तर्मुहूत काल जानेपर तत्पश्चात् अन्य प्रकारके स्थितिबन्धका परिवर्तन हो जाता इस कथनके फलस्वरूप आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** इस प्रकार संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं। तत्पश्चात् अन्य स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। वहाँ एक बारमें नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे कम होता है, उससे मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है, उससे ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय और अन्तराय कर्मोंका स्थितिबन्ध परस्पर समान होकर विशेष अधिक होता है।**

§ १८७. शंका—यहाँपर मोहनीयके स्थितिबन्धसे, असंख्यातगुणेपनेका परित्याग करके एक बारमें नाम-गोत्रकर्मके स्थितिबन्धका, विशेष हीनरूपसे निपात कैसे हो गया है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि परिणामविशेषका आलम्बन लेकर बहुत बार उत्तर दे आये हैं।

इस प्रकार इस अल्पबहुत्वके क्रमसे फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्ध जाकर नीचे

कालादिक्कमे तदो अण्णारिसो ट्ठिदिबंधपरावत्तो जादो त्ति जाणावणफलो उत्तरसुत्त-णिबंधो—

*** एदेण कमेण ट्ठिदिबंधसहस्साणि बहूणि गदाणि। तदो अण्णो ठिदिबंधो। एक्कसराहेण णामागोदाणं ठिदिबंधो थोवो, चदुण्हं कम्माणं ठिदिबंधो तुल्लो विसेसाहिओ, मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ १८८. कुदो? एवमेत्थ मोहणीयट्ठिदिबंधादो चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधस्स एक्कसराहेण विसेसहाणीए हेट्ठा णिवादो त्ति णासंकणिज्जं, परिणामविसेसमासेज्ज बहुसो णिरारेगीकयत्तादो। एत्तोप्पहुडि सव्वत्थेव अप्पप्पणो उक्कस्सट्ठिदिबंधपडि-भागेण विसेसाहियत्तमुवगंतव्वं। तदो एवंविहट्ठिदिबंधपरावत्तणाए जहाकमं कादूण हेट्ठा ओदरमाणस्स पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्ताणि ट्ठिदिबंधओसरणाणि एदेणेव कमेण णेदव्वाणि जाव सव्वपच्छिमो पलिदो० असंखे० भागिओ ट्ठिदिबंधो त्ति। संपहि एदम्मि अइक्कंतविसए असंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधपडिबद्धे ट्ठिदिबंधवुड्ढी एदेण कमेण जादा त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरभणइ—

*** जत्तो पाए असंखेज्जवस्सट्ठिदिबंधो तत्तो पाए पुण्णे पुण्णे ठिदि-बंधे अण्णं ठिदिबंधमसंखेज्जगुणं बंधइ।**

गिरनेवालेके अन्तर्मुहूर्त कालके जानेपर तत्पश्चात् स्थितिबन्धका अन्य प्रकारसे परावर्तन हो जाता है यह ज्ञान करानेके फलस्वरूप आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इस क्रमसे बहुत हजारों स्थितिबन्ध गत हो जाते हैं। तत्पश्चात् अन्य स्थितिबन्ध प्राप्त होता है। वहाँ एक बारमें नाम और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे अल्प होता है, उससे चार कर्मोंका स्थितिबन्ध परस्पर तुल्य होकर विशेष अधिक होता है, उससे मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है।**

§ १८८. शंका—यहाँपर मोहनीयकर्मके स्थितिबन्धसे चार कर्मोंका स्थितिबन्ध एक बारमें विशेष हीन होकर नीचे निपतित कैसे हुआ है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि परिणामविशेषका आश्रय लेकर बहुत बार इस शंकाका निराकरण कर आये हैं।

इससे आगे सर्वत्र ही अपने-अपने उत्कृष्ट स्थितिबन्धके प्रतिभागके अनुसार सबका स्थितिबन्ध विशेष अधिक जानना चाहिये। तत्पश्चात् इस प्रकार स्थितिबन्धके परावर्तनोंको क्रमसे करके नीचे उतरनेवालेके फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्ध जाकर इसी क्रमसे सबसे अन्तिम पल्योपमका असंख्यातवाँ भागप्रमाण स्थितिबन्धके प्राप्त होनेतक ले जाना चाहिये। अब इस व्यतीत हुए स्थानमें असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धसे सम्बन्ध रखते हुए स्थितिबन्धकी वृद्धि इस क्रमसे हुई इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जिस स्थानसे लेकर असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है वहांसे लेकर स्थितिबन्धके पुनः पुनः पूर्ण होनेपर अन्य स्थितिबन्धको असंख्यातगुणा अधिक करके**

§ १८९. जत्तोप्पहुडि णामागोदादिकम्माणं पढमदाए असंखेवस्सिओ ट्ठिदिबंधो आढत्तो तत्तोप्पहुडि जाव णिपच्छिमो पलिदो० असंखे० भागिओ ट्ठिदिबंधो त्ति एदम्मि अंतरे पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबंधे जो अण्णो ट्ठिदिबंधो सो असंखेज्जगुणवड्ढीए वड्ढदि त्ति दट्ठव्वो, तत्थ पयारंतरासंभवादो त्ति भणिदं होदि। एवमेदेण कमेण पलिदो० असंखेज्जभागियं[1] ट्ठिदिबंधविसयं वोलीणस्स सव्वेसिं कम्माणमेक्कवारेण पलिदो० संखे० भागिओ पढमो ट्ठिदिबंधो आढविज्जदि त्ति पदुप्पायणट्ठमिदमाह—

*** एदेण कमेण सत्तण्हं पि कम्माणं[2] पलिदो० असंखे० भागियादो ट्ठिदिबंधादो एक्कसराहेण सत्तण्हं पि कम्माणं पलिदो० संखे० भागिओ ट्ठिदिबंधो जादो[3]।**

§ १९०. किमेसो पलिदो० संखे० भागिओ ट्ठिदिबंधो जायमाणो सत्तण्हं पि कम्माणं अक्कमेणेव जादो आहो कमेणेत्ति पुच्छिदे, अक्कमेणेत्ति भणामो। कुदो एदं णव्वदे ? एक्कसराहेणेत्ति सुत्तणिद्देसादो। कधं पुणो चढमाणस्स कमेण समुवलद्धसरूवो दूरावकिट्टीविसओ ओदरमाणस्स एक्कवारेणेव संभवदि त्ति णासंकणिज्जं, पडिवाद-बाधता है।

§ १८९. जिस स्थानसे लेकर नाम और गोत्र आदि कर्मोंका प्रथम बार असंख्यातगुणा स्थितिबन्ध आरम्भ हुआ था वहाँसे लेकर जब जाकर अन्तिम पल्योपमका असंख्यातवाँ भागप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होता है इस कालके भीतर पुनः पुनः स्थितिबन्धके पूर्ण होनेपर जो अन्य स्थितिबन्ध होता है वह असंख्यातगुणी वृद्धिसे बढ़ा हुआ होता है ऐसा यहाँ जानना चाहिये, क्योंकि वहाँ दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इस क्रमसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्धके स्थानको उल्लंघन करनेवाले जीवके सभी कर्मोंका एक बारमें पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध आरम्भ होता है इस बातका कथन करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इसी क्रमसे सातों ही कर्मोंका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्धसे एक बारमें सातों ही कर्मोंका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है।**

§ १९०. शंका—यह पल्योपमका संख्यातवाँ भागप्रमाण स्थितिबन्ध उत्पन्न होता हुआ क्या सातों कर्मोंका अक्रमसे ही हो जाता है या क्रमसे होता है ?

समाधान—ऐसा पूछनेपर अक्रमसे हो जाता है ऐसा हम कहते हैं।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—'एक्कसराहेण' इस प्रकार सूत्रमें निर्देश होनेसे जाना जाता है।

शंका—चढ़नेवालेके क्रमसे उपलब्ध होनेवाला दूरापकृष्टिविषयक स्थितिबन्ध उतरनेवाले

१. ता०प्रतौ कम्मपयडीणं इति पाठः। २. ता०प्रतौ पलिदो० इत्यतः जादो इति यावत् टीकायां सम्मिलतः। ३. ता०प्रतौ संखेज्जभागियं इति पाठः।

माहप्पेणेत्थ तहाभावसिद्धीए विरोहाभावादो। तदो एत्थ वि पुव्वुत्तो चेव अप्पाबहुअ-पबंधो णिव्वामोहमणुगंतव्वो।

§ १९१. संपहि एत्तो पुव्वं सव्वत्थेवासंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधविसये असंखेज्ज-गुणवड्ढीए पयट्टमाणो ट्ठिदिबंधो इदो प्पहुडि सव्वेसिं कम्माणं संखेज्जगुणवड्ढीए पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

*** एत्तो पाये पुण्णे पुण्णे ठिदिबंधे अण्णं ट्ठिदिबंधं संखेज्जगुणं बंधइ।**

§ १९२. कुदो? पलिदो० संखे०भागमेत्तट्ठिदिबंधविसये संखेज्जगुणवड्ढिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। संपहि एवमेदम्मि विसये संखेज्जगुणवड्ढीए वड्ढमाणस्स ट्ठिदिबंधवुड्ढिपमाणावहारणट्ठमुवरिमसुत्तारंभो—

*** एवं संखेज्जाणं ट्ठिदिबंधसहस्साणमपुव्वा वड्ढी पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो।**

§ १९३. एवमेदेण कमेण संखे०गुणवड्ढीए वड्ढमाणस्स सव्वेसिं कम्माणं

जीवके एक बारमें ही कैसे सम्भव है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि गिरनेके माहात्म्यवश यहाँपर उस प्रकारसे सिद्धि होनेमें कोई विरोध नहीं आता। इसलिये यहाँपर भी पूर्वोक्त ही अल्पबहुत्व प्रबन्ध बिना व्यामोहके जानना चाहिये।

विशेषार्थ—उपशमश्रेणिपर चढ़नेवाले जीवोंके सातों कर्मोंके स्थितिबन्धमें इस जातिकी विषमता बनी रहती है जिससे वहाँ सब कर्मोंका दूरापकृष्टिविषयक स्थितिबन्ध एक ही स्थानपर नहीं प्राप्त होता। किन्तु यहाँपर गिरनेरूप परिणामोंके माहात्म्यवश वह बन जाता है यह इस सूत्रका आशय है।

§ १९१. अब इससे पूर्व सर्वत्र ही असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धमें असंख्यात गुणवृद्धिरूपसे प्रवृत्त होता हुआ स्थितिबन्ध यहाँसे लेकर सभी कर्मोंका संख्यात गुणवृद्धिरूपसे प्रवृत्त होता है यह जाननेके लिये आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** यहांसे लेकर स्थितिबन्धके पुनः पुनः पूर्ण होनेपर संख्यातगुणे अन्य प्रमाण स्थितिबन्धको बांधता है।**

§ १९२. क्योंकि पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्धके होनेपर संख्यात गुणवृद्धिको छोड़कर दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है। अब इस प्रकार इस विषयमें संख्यात गुणवृद्धिको प्राप्त होनेवालेके स्थितिबन्धके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** इस प्रकार संख्यात हजार स्थितिबन्धोंकी अपूर्व वृद्धि पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होती है।**

§ १९३. इस प्रकार इस क्रमसे संख्यात गुणवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवके सभी

पलिदो० संखे०भागियाणं संखेज्जाणं ट्ठिदिबंधसहस्साणं अपुव्वा ट्ठिदिबंधवुड्ढी पलिदो० संखे०भागपमाणा चेव दट्ठव्वा, पलिदो० संखे०भागियट्ठिदिबंधविसये पयारंतरसंभवाणुवलंभादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थणिच्छओ।

*** तदो मोहणीयस्स जाधे अण्णस्स ट्ठिदिबंधस्स अपुव्वा वड्ढी पलिदोवमस्स संखेज्जा भागा।**

§ १९४. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—तदो सव्वपच्छिमादो पलिदो०संखे०-भागियादो ट्ठिदिबंधादो संखेज्जगुणवड्ढीए वड्ढमाणस्स जाधे जम्हि काले मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संपुण्णपलिदोवममेत्तो जादो ताधे तस्स ट्ठिदिबंधस्स पुव्वट्ठिदिबंधं पेक्खियूण अपुव्वा वड्ढी पलिदो० संखेज्जा भागा त्ति दट्ठव्वा। किं कारणं? अण्णहा पलिदोवमेत्ततक्कालभाविट्ठिदिबंधपमाणाणुप्पत्तीदो। संपहि तक्काले णाणावरणादीणं चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधवुड्ढी किंपमाणा त्ति जादारेगस्स सिस्सस्स तप्पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** ताधे चदुण्हं कम्माणं ठिदिबंधस्स वड्ढी पलिदोवमं चदुब्भागेण सादिरेगेण ऊणयं।**

§ १९५. तक्काले चदुण्हं कम्माणं णाणावरणदंसणावरणवेदणीयंतराइयाणं

कर्मोंके पल्योपमके संख्यातवें भागसे युक्त संख्यात हजार स्थितिबन्धोंकी स्थितिबन्धसम्बन्धी अपूर्व वृद्धि पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण ही जानना चाहिये, क्योंकि पल्योपमके संख्यातवें भागवाले स्थितिबन्धके विषयमें प्रकारान्तरकी सम्भावना नहीं उपलब्ध होती यह यहाँ इस सूत्रका निश्चित अभिप्राय है।

*** तत्पश्चात् जब मोहनीयकर्मके अन्य स्थितिबन्धकी अपूर्व वृद्धि पल्योपमके संख्यात बहुभागप्रमाण उपलब्ध होती है।**

§ १९४. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—तत्पश्चात् सबसे अन्तिम पल्योपमके संख्यातवें भागवाले स्थितिबन्धसे संख्यात गुणवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त हुए मोहनीय कर्मका 'जाधे' जिस कालमें स्थितिबन्ध पूरा पल्योपमप्रमाण हो जाता है 'ताधे' उस समय उस स्थितिबन्धके पूर्व स्थितिबन्धको देखते हुए अपूर्व वृद्धि पल्योपमके संख्यात बहुभागप्रमाण जाननी चाहिये, क्योंकि अन्यथा तत्काल होनेवाले पल्योपममात्र स्थितिबन्धका प्रमाण नहीं बन सकता। अब उस समय ज्ञानावरणादि चार कर्मोंके स्थितिबन्धकी वृद्धि किस प्रमाणमें होती है ऐसी शंका करनेवाले शिष्यको उसके प्रमाणका अवधारण करानेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** उस समय चार कर्मोंके स्थितिबन्धकी वृद्धि साधिक चौथे भागसे ऊन पल्योपमप्रमाण होती है।**

§ १९५. उस समय ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तराय इन चार कर्मोंके

ट्ठिदिबंधस्स अपुव्वा वड्ढी पलिदोवमं सादिरेगेण चउब्भागेण ऊणयं दट्ठव्वं, पलिदोवमस्स तिण्णिचउब्भागा देसूणा णाणावरणादीणं तक्कालियट्ठिदिबंधवुड्ढीए पमाणमिदि वुत्तं होदि। तं जहा—पलिदोवमं चत्तारिभागे कादूण तत्थ एगं चउब्भागं सयलमवणिय सेसतिण्णिचउब्भागेसु गहिदेसु चदुण्हं कम्माणं तक्कालियट्ठिदिबंधपमाणमागच्छदि। किं कारणं? चत्तालीसपडिभागेण जदि मोहणीयस्स संपुण्णपलिदोवममेत्तं ट्ठिदिबंधपमाणं लब्भइ तो तीसपडिभागियाणं णाणावरणादिकम्माणं केत्तियं लहामो त्ति |४०|१|३०| तेरासियं कादूण जोइदे तप्पमाणागमणदंसणादो $\frac{3}{4}$।

संपहि एदेसु तिण्णिचदुब्भागेसु पलिदो० संखे०भागमेत्ते पुव्वबंधे अवणिदे अवणिदसेसपमाणं किंचूणतिण्णिचउब्भागमेत्तमेत्थतणवड्ढिपमाणं होदि।

§ १९६. संपहि णामागोदाणं तक्कालभाविट्ठिदिबंधवुड्ढिपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** ताधे चेव णामागोदाणं ठिदिबंधपरिवड्ढी अद्धपलिदोवमं संखेज्जभागूणं।**

§ १९७. एत्थ वि तेरासियकमेण अद्धपलिदोवममेत्तं तक्कालियट्ठिदिबंधमाणिय

स्थितिबन्धकी अपूर्व वृद्धि साधिक चौथे भागसे हीन पल्योपमप्रमाण होती है, क्योंकि ज्ञानावरणादि कर्मोंके पल्योपमके कुछ कम तीन बटे चार भाग तात्कालिक स्थितिबन्धकी वृद्धिका प्रमाण है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। वह जैसे—पल्योपमके चार भाग करके उनमेंसे पूरे एक-चतुर्थ भागको अलग करके शेष तीन-चार भागोंके ग्रहण करनेपर चार कर्मोंके तात्कालिक स्थितिबन्धका प्रमाण आता है, क्योंकि चालीसके प्रतिभागके अनुसार यदि मोहनीयकर्मके स्थितिबन्धका प्रमाण पल्योपममात्र प्राप्त होता है तो तीस प्रतिभागवाले ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थितिबन्धका प्रमाण कितना प्राप्त होगा इस प्रकार |४०, १, ३०| का त्रैराशिक करके हिसाब करनेपर उसका $\frac{3}{4}$ आता हुआ देखा जाता है।

विशेषार्थ—संज्ञी मिथ्यादृष्टि पर्याप्तके चारित्रमोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण प्राप्त होता है और ज्ञानावरणादि चार कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण प्राप्त होता है उसी अनुपातमें यहाँपर चारित्रमोहनीयकर्मकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि तीसिय चार कर्मोंका त्रैराशिक विधिसे तीन बटे चार भाग पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध प्राप्त होगा यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ १९६. अब नाम और गोत्रकर्मके तत्कालभावी स्थितिबन्धकी वृद्धिके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

*** उसी समय नाम और गोत्र कर्मके स्थितिबन्धकी वृद्धि संख्यातवां भाग कम अर्धपल्योपमप्रमाण होती है।**

§ १९७. यहाँपर भी त्रैराशिकके क्रमसे तत्काल होनेवाले अर्धपल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धको

पुणो तत्थ पलिदो० संखे०भागमेत्तहेट्ठिमट्ठिदिबंधायामे सोहिदे सुद्धसेसं देसूणद्धपलिदोवममेत्तं तक्कालियट्ठिदिबंधवुड्ढिपमाणं णामागोदाणं होदि त्ति सिस्साणमत्थबोहो कायव्वो।

*** जाधे एसा परिवड्ढी ताधे मोहणीयस्स जट्ठिदिगो बंधो पलिदोवमं, चदुण्हं कम्माणं जट्ठिदिगो बंधो पलिदोवमं चदुण्हं भागूणं, णामागोदाणं जट्ठिदिगो बंधो अद्धपलिदोवमं।**

§ १९८. पुव्वं वड्ढीए चेव सुद्धाये पमाणावहारणं कदं, एदेण पुण सवड्ढिमूलस्स जट्ठिदिबंधस्स तक्कालभावियस्स पमाणपडिच्छेदो कओ त्ति दट्ठव्वं। सुगममण्णं।

§ १९९. संपहि एत्तो उवरि सव्वत्थेव सव्वकम्माणं ट्ठिदिबंधपरिवड्ढी पलिदो० संखे०भागपमाणा चेव दट्ठव्वा। णत्थि पयदंतरसंभवो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** एत्तो पाये ठिदिबंधे पुण्णे पुण्णे पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागेण वड्ढइ जत्तिया अणियट्टिअद्धा सेसा अपुव्वकरणद्धा सव्वा च तत्तियं[1]।**

लाकर पुनः उसमेंसे पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण अधस्तन स्थितिबन्धके प्रमाणको घटानेपर नाम और गोत्रकर्मके उस कालमें होनेवाले शुद्ध शेष कुछ कम अर्ध पल्योपममात्र स्थितिबन्धकी वृद्धिका प्रमाण होता है। इस प्रकार शिष्योंको अर्थका बोध कराना चाहिये।

*** जिस समय यह वृद्धि हुई है उस समय मोहनीय कर्मका यत्स्थितिबन्ध पल्योपमप्रमाण होता है, चार कर्मोंका यत्स्थितिबन्ध चौथा भाग कम पल्योपमप्रमाण होता है तथा नाम और गोत्रकर्मका यत्स्थितिबन्ध अर्ध पल्योपमप्रमाण होता है।**

§ १९८. पहले शुद्ध वृद्धिके प्रमाणका ही अवधारण किया था, परन्तु इस सूत्र द्वारा तत्कालभावी वृद्धि और मूल सहित यत्स्थितिबन्धके प्रमाणका परिच्छेद किया गया है ऐसा जानना चाहिये। अन्य सब कथन सुगम है।

विशेषार्थ—इसके पहले ग्यारहवें गुणस्थानसे गिरनेवाले जीवके एक स्थितिबन्धके बाद दूसरे स्थितिबन्धके प्रारम्भ होनेपर उसमें कितनी वृद्धि हुई है मात्र इसका निर्देश किया गया है। किन्तु विवक्षित सूत्रमें मूल और वृद्धि दोनोंको मिलाकर स्थितिबन्धके पूरे प्रमाणका निर्देश किया गया है। प्रकृतमें यत्स्थितिबन्धका यही तात्पर्य है। इसमें आबाधाकाल भी सम्मिलित है।

§ १९९. अब इससे आगे सभी जगह स्थितिबन्धकी वृद्धि पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण ही जाननी चाहिये, प्रकृत वृद्धिमें अन्तर सम्भव नहीं है इसका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इससे आगे जितना अनिवृत्तिकरणका काल शेष है और अपूर्वकरणके पूरे**

---

१. ता०प्रतौ जत्तिया इत्यतः तत्तियं यावत् टीकायां सम्मिलितः।

§ २००. मोहणीयस्स पलिदोवममेत्ते ट्ठिदिबंधे जादे तदोप्पहुडि अणियट्टि-करणद्धाए सेससंखेज्जेसु भागेसु अपुव्वकरणद्धाए च सव्विस्से पयारंतरपरिहारेण पलिदो० संखे०भागमेत्तपरिवड्ढीए ट्ठिदिबंधो पयट्टदि त्ति भणिदं होइ। एवं मोहणीयस्स पलिदोवमट्ठिदिबंधविसयप्पहुडि उवरि सव्वत्थेव ट्ठिदिबंधवुड्ढिपमाणा-वहारणं कादूण संपहि एदम्हि चेव णिरुद्धट्ठाणे जो अवंतरविसेसो ट्ठिदिबंधविसयो तप्पदुप्पायणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

❀ एदेण कमेण पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागपरिवड्ढीए ट्ठिदिबंध-सहस्सेसु गदेसु अण्णो एइंदियट्ठिदिबंधसमगो ट्ठिदिबंधो जादो।

§ २०१. पलिदोवमट्ठिदिबंधादो उवरि अणंतरपरूविदट्ठिदिबंधपरिवड्ढीए वड्ढमाणस्स अणियट्टिउवसामगस्स संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु समइक्कंतेसु सागरोवमचउसत्तभागमेत्तएइंदियट्ठिदिबंधेण सरिसो मोहणी यस्स ट्ठिदिबंधो जादो। सेसाणं च कम्माणमप्पप्पणो पडिभागेणेइंदियसमगो ट्ठिदिबंधो एत्थ जादो त्ति सुत्तत्थ संगहो। एवमेदेण कमेण पुणो वि वड्ढमाणस्स जहाकममप्पणो विसए बीइंदियादि-

---

कालके समाप्त होनेतक स्थितिबन्धके पुनः पुनः पूर्ण होनेपर पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्धकी वृद्धि होती जाती है।

§ २००. मोहनीय कर्मका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जानेपर वहाँसे लेकर अनिवृत्ति-करणका जो शेष काल संख्यात बहुभागप्रमाण शेष रहता है उसमें और पूरे अपूर्वकरणके कालमें प्रकारान्तरके निषेध द्वारा पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण वृद्धिको लिये हुए स्थितिबन्ध प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार मोहनीय कर्म पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धके स्थानसे लेकर आगे सर्वत्र ही स्थितिबन्धकी वृद्धिके प्रमाणका अवधारण करके अब इसी विवक्षित स्थानमें जो स्थितिबन्ध विषयक अवान्तर विशेष होता है उसका कथन करनेके लिये सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* इस क्रमसे पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण वृद्धिके द्वारा हजारों स्थिति-बन्धोंके जानेपर अन्य स्थितिबन्ध एकेन्द्रिय जीवोंके स्थितिबन्धके समान हो जाता है।

§ २०१. पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धोंसे ऊपर अनन्तर प्ररूपित स्थितिबन्धसम्बन्धी वृद्धिके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होनेवाले अनिवृत्ति उपशामक जीवके संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके निकल जानेपर सागरोपमके चार सात भागप्रमाण एकेन्द्रिय जीवोंसम्बन्धीं स्थितिबन्धके सदृश मोहनीय कर्मका स्थितिबन्ध हो जाता है। तथा शेष कर्मोंका अपने-अपने प्रतिभागके अनुसार एकेन्द्रिय जीवोंके समान स्थितिबन्ध हो जाता है यह सूत्रका समुच्चयार्थ है। इस प्रकार इस क्रमसे फिर भी स्थितिबन्धकी वृद्धि द्वारा वृद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवके क्रमसे अपने-अपने स्थानमें द्वीन्द्रिय

ट्ठिदिबंधसरिसो ट्ठिदिबंधो जादो त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तोवण्णासो—

❀ एवं बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिट्ठिदिबंधसमगो ट्ठिदिबंधो ।

§ २०२. गयत्थमेदं सुत्तं । एवमेदेण कमेण अणियट्टिअद्धाए सेसबहुभागेसु संखेज्जसहस्समेत्तट्ठिदिबंधगब्भेसु वोलीणेसु तदो अणियट्टिगुणट्ठाणस्स चरिमसमयमेसो हेट्ठिमगुणट्ठाणाहिमुहो होदूण समहिट्ठिदो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

❀ तदो ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयमणियट्टी जादो ।

§ २०३. सुगमं । संपहि एत्थतणट्ठिदिबंधपमाणावहारणट्ठमिदमाह—

❀ चरिमसमयअणियट्टिस्स ठिदिबंधो सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमंतोकोडीए[1] ।

§ २०४. चढमाणाणियट्टिपढमसमयट्ठिदिबंधपडिभागेणेत्थ सागरोवसदसहस्सपुधत्तमेत्तपयदट्ठिदिबंधसिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो ।

आदि जीवोंके समान स्थितिबन्ध हो जाता है इस बातका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रका उपन्यास करते हैं—

❀ इस प्रकार क्रमसे द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञी जीवोंके स्थितिबन्धके समान स्थितिबन्ध हो जाता है ।

§ २०२. इस सूत्रका अर्थ स्पष्ट है । इस प्रकार इस क्रमसे जिसमें संख्यात हजार स्थितिबन्ध अन्तर्निहित हैं ऐसे अनिवृत्तिकरणके शेष बहुभागोंके व्यतीत होनेपर तदनन्तर अधस्तन गुणस्थानके अभिमुख हुआ यह जीव अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें स्थित होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

❀ तत्पश्चात् हजारों स्थितिबन्धोंके बीत जानेपर यह जीव अन्तिम समयवर्ती अनिवृत्तिकरण हो जाता है ।

§ २०३. यह सूत्र सुगम है । अब यहाँ सम्बन्धी स्थितिबन्धके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ अन्तिम समयवर्ती अनिवृत्तिकरण संयतके एक कोटी सागरोपमके भीतर एक लाखपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।

§ २०४. चढ़नेवाले अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसम्बन्धी स्थितिबन्धके प्रतिभागके अनुसार यहाँपर अर्थात् उतरनेवाले अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें एकलाख पृथक्त्व सागरोपमप्रमाण स्थितिबन्धकी सिद्धि होनेमें निषेधका अभाव है ।

---

१. ता०प्रतौ—मंतो कोडाकोडीए इति पाठः ।

❀ से काले अपुव्वकरणं पविट्ठो ।

§ २०५. सुगमं ।

❀ ताधे चेव अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं च उग्घाडिदाडि ।

§ २०६. कुदो ? एदेसिं करणाणमणियट्टिकरणपाहम्मेण पुव्वमुवसंतभावेण परिणदाणमेण्हिमपुव्वकरणपवेसाणंतरमेव पुणरुब्भवे पडिबंधाभावादो।[1]

❀ ताधे चेव मोहणीयस्स णवविहबंधगो जादो ।

§ २०७. कुदो ? हस्सरदिभयदुगुंछाणमेत्थ परिणामविसेसमस्सियूण बंधसत्तीए पुणरुब्भवदंसणादो ।

❀ ताधे चेव हस्सरदिअरदिसोगाणमेक्कदरस्स संघादस्स य उदीरगो सिया भयदुगुंछाणमुदीरगो ।

§ २०८. छण्हमेदेसिं णोकसायाणमुदयपरिणामो समयाविरोहेणेत्थ पुणो वि पवुत्तो त्ति वुत्तं होइ । सुगममण्णं ।

❀ तदो अपुव्वकरद्धाए संखेज्जदिभागे गदे तदो परभवियणामाणं बंधगो जादो ।

❀ तदनन्तर समयमें यह जीव अपूर्वकरणमें प्रविष्ट होता है ।

§ २०५. यह सूत्र सुगम है ।

❀ उसी समय अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण पुनः प्रारम्भ हो जाते हैं ।

§ २०६. क्योंकि अनिवृत्तिकरणके माहात्म्यवश पहले उपशान्त भावसे परिणत हुए इन करणोंकी इस समय अपूर्वकरणमें प्रवेश करनेके समय ही पुनः उत्पत्ति होनेमें प्रतिबन्धका अभाव है ।

❀ उसी समय नौ प्रकारके मोहनीय कर्मका बन्धक हो जाता है ।

§ २०७. क्योंकि परिणाम विशेषका आश्रय करके हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी यहाँपर बन्धशक्तिकी पुनः उत्पत्ति देखी जाती है ।

❀ उसी समय हास्य-रति तथा अरति-शोक इनमेंसे किसी एक युगलका उदीरक होता है तथा भय और जुगुप्सा इनमेंसे किसी एकका या दोनोंका कदाचित् उदीरक होता है ।

§ २०८. इन छह नोकषायोंका उदयपरिणाम समयके अविरोधपूर्वक यहाँ पुनः प्रवृत्त हुआ यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अन्य कथन सुगम है ।

❀ तत्पश्चात् अपूर्वकरणके संख्यातवें भागके व्यतीत होनेपर वहाँसे परभव-सम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोंका बन्धक होता है ।

---

१. ता०प्रतौ पडिबंधभावादो इति पाठः ।

§ २०९. ओदरमाणापुव्वकरणद्धाए सत्तमभागमेत्तमोइण्णस्स परभवियणामाणं देवगदिपंचिंदियजादिआदीणं परिणामविसेसमस्सियूण बंधपारंभो जादो त्ति भणिदं होइ।

*** तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेहिं गदेहिं अपुव्वकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णिद्दापयलाओ बंधइ।**

§ २१०. ओदरमाणापुव्वकरणपढमसत्तमभागचरिमसमए परभवियणामाणं बंधे जादे तत्तो उवरि पुणो वि पंचसत्तमभागे गमिय छट्ठसत्तमभागचरिमसमए दोण्हमेदासिं पयडीणं बंधपारंभो जादो त्ति सुत्तत्थसंगहो।

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयअपुव्वकरणं पत्तो।**

§ २११. णिद्दापयलाणं बंधपारंभे जादे तत्तो उवरि पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्तट्ठिदिबंधगब्भे चरिमसत्तमभागे समइक्कंते चरिमसमयापुव्वकरणभावमेसो संपत्तो त्ति सुत्तत्थो। ताधे पुण ट्ठिदिबंधपमाणमंतोकोडाकोडीए सागरोवमकोडिसदसहस्सपुधत्तं, ट्ठिदिबंधप्पाबहुअं च पुव्वं व दट्ठव्वं। सव्वस्सेव ओदरमाणयस्स णत्थि ट्ठिदिघादो अणुभागघादो वा। गुणसेडी पुण गलिदसेसायामेण पडिसमयमसंखेज्जगुणहाणीए अइक्कंतविसये सव्वत्थ पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं।

---

§ २०९. उतरनेवाले अपूर्वकरणके कालमें सातवाँ भागमात्र उतरे हुए जीवके परभवसम्बन्धी देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति आदि नामकर्मकी प्रकृतियोंके परिणामविशेषका आलम्बन करके बन्धका प्रारम्भ हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** तत्पश्चात् हजारों स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेके साथ अपूर्णकरणके कालके संख्यात बहुभागप्रमाण कालके बीतनेपर निद्रा और प्रचलाका बन्ध प्रारम्भ करता है।**

§ २१०. उतरनेवाले अपूर्वकरणके प्रथम सातवें भागके अन्तिम समयमें परभवसम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोंके बन्ध होने लगनेपर पश्चात् फिर भी पाँच बटे सात भागको बिताकर छठवें भागके अन्तिम समयमें इन दोनों प्रकृतियोंका बन्ध प्रारम्भ हो जाता है यह इस सूत्रका समुच्चयार्थ है।

*** तत्पश्चात् हजारों स्थितिबन्धोंके बीतनेपर अपूर्वकरणके अन्तिम समयको प्राप्त होता है।**

§ २११. निद्रा, प्रचलाका बन्ध प्रारम्भ हो जानेपर वहाँसे आगे फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्धगर्भित अन्तिम सातवें भागके बीत जानेपर यह जीव अपूर्वकरणके अन्तिम समयको प्राप्त होता है यह इस सूत्रका अर्थ है। उस समय स्थितिबन्धका प्रमाण अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरोपमके भीतर कोटिलक्षपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण होता है। तथा स्थितिबन्धका अल्पबहुत्व पहलेके समान जानना चाहिये। सभी उतरनेवाले जीवोंके स्थितिघात और अनुभागघात नहीं होता है। परन्तु व्यतीत हुए स्थानमें गलितशेष आयामरूपसे गुणश्रेणि प्रत्येक समयमें असंख्यात-

*** से काले पढमसमयअधापवत्तो जादो ।**

§ २१२. तदणंतरसमए अणंतगुणहीणविसोहिपडिलंभेण अप्पमत्तगुणट्ठाणमोइण्णो, पढमसमयअधापवत्तसंजदो जादो त्ति भणिदं होइ। एवमधापवत्तकरणविसयमोइण्णस्स गुणसेढिणिक्खेवो केरिसो त्ति जादारेयस्स सिस्सस्स तण्णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** तदो पढमसमयअधापवत्तस्स अण्णो गुणसेढिणिक्खेवो पोराणगादो णिक्खेवादो संखेज्जगुणो ।**

§ २१३. चरिमसमयापुव्वकरणेण ओवट्टिपदेसग्गादो असंखेज्जगुणहीणं पदेसग्गमोकड्डियूण अधापवत्तसंजदगुणसेढिमेसो करेमाणो जो पढमसमयसुहुमसांपराइयेण णाणावरणादिकम्माणमपुव्वाणियट्टिअद्धाहिंतो विसेसाहियायामेण णिक्खित्तो गुणसेढिणिक्खेवो पोराणिओ। तत्तो संखेज्जगुणायामेण गुणसेढिविण्णासमेसो करेदि त्ति वुत्तं होइ। कुदो एवं चे ? मंदयरविसोहीहिं सव्वत्थ गुणसेढिआयामस्स विसप्पणब्भुवगमादो। संपहि अवट्ठिदायामो एसो एदस्स गुणसेढिविण्णासो त्ति पदुप्पाएमाणो

गुणी हानिरूपसे सर्वत्र प्रवृत्त रहती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

*** तदनन्तर समयमें प्रथम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरण संयत हो जाता है।**

§ २१२. तदनन्तर समयमें अनन्तगुणी हीन विशुद्धिके होनेसे अप्रमत्त गुणस्थानमें उतरकर प्रथम समयवर्ती अधऽप्रवृत्त संयत हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार अधःप्रवृत्तकरण गुणस्थानमें अवतीर्ण हुए इस जीवके गुणश्रेणिनिक्षेप किस प्रकारका होता है इस प्रकारकी जिसे शंका उत्पन्न हुई ऐसे शिष्यके प्रति उसका निर्णय करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

*** तब अधःप्रवृत्त संयतके प्रथम समयमें पुराने गुणश्रेणिनिक्षेपसे संख्यातगुणा बड़ा अन्य गुणश्रेणिनिक्षेप होता है।**

§ २१३. अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा उसके अन्तिम समयमें अपकर्षित किये गये प्रदेशपुंजसे असंख्यातगुणे हीन प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके अधःप्रवृत्तसंयत गुणश्रेणिको करता हुआ यह जीव, प्रथमसमयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक जीवने ज्ञानावरणादि कर्मोंका अपूर्ण-अनिवृत्ति कालसे विशेष अधिक आयामवाले जो पुराने गुणश्रेणिनिक्षेपकी रचना की थी, उससे संख्यातगुणे आयामवाले गुणश्रेणिकी रचना यह करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—ऐसा किस कारणसे करता है ?

समाधान—क्योंकि मन्दतर विशुद्धिके कारण सर्वत्र गुणश्रेणिआयाम उत्तरोत्तर बड़ा स्वीकार किया गया है।

अब इस जीवके यह गुणश्रेणिनिक्षेप अवस्थित आयामवाला होता है इस बातका कथन

ताव पुव्विल्लस्स गुणसेढिणिक्खेवस्स गलिदसेसायामेणाणवट्ठिदभावावहारणट्ठमुपरिम-सुत्तमाह—

*** जाव चरिमसमयअपुव्वकरणादो त्ति सेसे सेसे णिक्खेवो ।**

§ २१४. ओदरमाणसुहुमसांपराइयपढमसमयमादिं कादूण जाव चरिमसमय-अपुव्वकरणो त्ति ताव एदम्मि अंतरे जो गुणसेढिणिक्खेवो णाणावरणादिकम्माणं पवुत्तो सो गलिदसेसायामो चेव । सेसे सेसे तत्थ णिक्खेवणियमदंसणादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ । णवरि मोहणीयस्स सुहुमसांपराइयप्पहुडि केत्तियं पि कालमवट्ठिदाणवट्ठिदसरूवेण गुणसेढिणिक्खेवो होदूण तदो गलिदसेसायामेण णाणा-वरणादिकम्मेहिं सरिसायामो जादो त्ति वत्तव्वं, तिसु उद्देसेसु वड्ढियूण तत्थावट्ठिद-गुणसेढिणिक्खेवस्स पवुत्तिदंसणादो । तं कथं ? सुहुमसांपराइयद्धाए सव्वत्थावट्ठिद-गुणसेढिणिक्खेवो होयूण पुणो फद्दयगदं लोभमोकड्डमाणस्स एगवारं वड्ढियूण पुणो अवट्ठिदो जादो जाव लोभवेदगदद्धाचरिमसमओ त्ति । पुणो मायामोकड्डिदे माणस्स विदियवारं वड्ढिदूणावट्ठिदो जादो जाव सगवेदकालचरिमसमओ त्ति । तदो माणमोकड्डमाणस्स तदियवारं वड्ढियूण पुणो तत्तियमेत्तो चेव जाव सगवेद-

---

करते हुए सर्वप्रथम पहलेके गुणश्रेणिनिक्षेपके गलितशेष आयामरूपसे अवस्थितपनेका अवधारण करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अपूर्वकरणके अन्तिम समयतक उत्तरोत्तर शेष-शेषमें निक्षेप होता है ।**

§ २१४. उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके प्रथम समयसे लेकर अपूर्वकरणके अन्तिम समयतक तो इस कालके भीतर ज्ञानावरणादि कर्मोंका जो गुणश्रेणिनिक्षेप प्रवृत्त होता है वह गलितशेष आयामवाला ही होता है, क्योंकि प्रत्येक समयमें जितनी-जितनी गणश्रेणिरचना शेष रहती जाती है उसीमें निक्षेपका नियम देखा जाता है यह यहाँ इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकर्मका सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानसे लेकर कितने ही कालतक अवस्थित-अनवस्थित रूपसे गुणश्रेणिनिक्षेप होकर तत्पश्चात् गलितशेष आयामके द्वारा ज्ञाना-वरणादिक कर्मोंके सदृश आयामवाला हो जाता है ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि तीनों ही गुणस्थानोंमें बढ़कर वहाँ अवस्थित गुणश्रेणिनिक्षेपकी प्रवृत्ति देखी जाती है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—सूक्ष्मसाम्परायिकके कालमें सर्वत्र अवस्थित गुणश्रेणिनिक्षेप होकर पुनः स्पर्धकगत लोभका अपकर्षण करनेवालेके एक बार बढ़कर लोभवेदककालके अन्तिम समयतक पुनः अवस्थित हो जाता है। पुनः मायाका अपकर्षण करनेपर मानका दूसरी बार बढ़कर अपने वेदककालके अन्तिम समय तक अवस्थित हो जाता है। तदनन्तर मानका अपकर्षण करनेवालेके तीसरी बार बढ़कर अपने वेदककालके अन्तिम समयतक पुनः उतना ही हो जाता है। पुनः क्रोधसंज्वलनका अपकर्षण करनेपर चौथी बार बढ़कर वहाँसे लेकर उतनेवाले अपूर्वकरणके

गद्धाचरिमसमओ त्ति। पुणो कोहसंजलणे ओकड्डिदे चउत्थवारं वड्डियूण तत्तो प्पहुडि गलिदसेससरूवेणागदो जाव ओदमाणापुव्वकरणचरिमसमओ त्ति। संपहि एवंविह-पोराणगुणसेढिणिक्खेवमुल्लंघियूण संखेज्जगुणवड्डीए वड्डमाणो एसो पढमसमय-अधापवत्तकरणो विदियादिसमएसु अवट्ठिदायाममेव गुणसेढिणिक्खेवं रचेइ त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** जो पढमसमयअधापवत्तकरणे णिक्खेवो सो अंतोमुहुत्तिओ तत्तिओ चेव।**

§ २१५. जाव अंतोमुहुत्तं ताव णियमा एसो अंतोमुहुत्तायामो होदूणावट्ठिदो चेव होदि, तत्थ वड्ढिहाणीणं कारणाणुवलंभादो त्ति भणिदं होदि। पदेसग्गेण पुण णियमा हायमाणो गच्छदि, अणंतगुणहाणीए ओहट्टमाणपरिणामम्मि पयारंतरा-संभवादो। एवमंतोमुहुत्तकालमवहिं कादूणेदं परूविय संपहि तत्तो परं गुणसेढि-णिक्खेवो अवट्ठिदायामो भजियव्वो त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** तेण परं सिया वड्ढदि सिया हायदि सिया अवट्ठायदि।**

§ २१६. अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि अंतोमुहुत्तकालमवट्ठिदायामेण गुण-सेढिविण्णासं कादूण तत्तो परं गुणसेढिणिक्खेवायामस्स वड्ढिहाणिअवट्ठाणाणमण्ण-दरपज्जाएण परिणमदि त्ति वुत्तं होदि। एदस्स भावत्थो—सत्थाणसंजदो होदूण

अन्तिम समयतक गलितशेष आयामरूपसे होता है।

अब इस प्रकारके पुराने गुणश्रेणिनिक्षेपको उल्लंघन कर संख्यात गुणवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होता हुआ यह प्रथम समयवर्ती अपूर्वकरण जीव द्वितीयादि समयोंमें अवस्थित आयामरूप गुण-श्रेणिनिक्षेपकी ही रचना करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयमें जो निक्षेप होता है वह अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होकर उतना ही रहता है।**

§ २१५. अन्तर्मुहूर्त कालतक यह नियमसे अन्तर्मुहूर्त आयामवाला होकर अवस्थित ही रहता है, क्योंकि वहाँ वृद्धि और हानिका कारण नहीं पाया जाता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु प्रदेशपुंजकी अपेक्षा नियमसे उत्तरोत्तर घटकर कम होता जाता है, क्योंकि अनन्तगुणहानि-रूपसे घटनेवाले परिणामोंके होते हुए दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त कालकी मर्यादापूर्वक इसका कथन करके अब उससे आगे गुणश्रेणिनिक्षेप अवस्थित आयामरूप विकल्पसे होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** उससे आगे गुणश्रेणिनिक्षेप आयाम कदाचित् बढ़ता है, कदाचित् घटता है और कदाचित् अवस्थित रहता है।**

§ २१६. अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कालतक अवस्थित आयामरूप गुणश्रेणिनिक्षेप करके उससे आगे गुणश्रेणिनिक्षेपका आयाम वृद्धि, हानि और अवस्थानरूपसे परिणमता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसका भावार्थ इस प्रकार है—

पमत्तापमत्तगुणट्ठाणेसु अच्छमाणो अवट्ठिदायामं चेव गुणसेढिणिक्खेवं कुणइ। संजमासंजमं पडिवज्जमाणो संखेज्जगुणवड्ढीए वड्ढियूण गुणसेढिणिक्खेवं णिक्खिवदि। अधाणियट्टिदूण पुणो वि समयाविरोहेण उवसमसेढिं खवगसेढिं वा चडदि तो पुव्विल्लगुणसेढिसीसयादो हेट्ठा संखेज्जगुणहाणीए हाइदूण गुणसेढिणिक्खेवमेसो करेदि त्ति। एदं च सव्वं गुणसेढिणिक्खेवस्सायामं पडुच्च भणिदं। पदेसग्गं पेक्खियूण पुण वड्ढिहाणिअवट्ठाणाणं विसयविभागो जाणिय जोजेयव्वो, अंतोमुहुत्तकालमेयंतेण परिहाइदूण तत्तो परं सत्थाणसंजदभावे वट्टमाणस्स संकिलेस-विसोहिवसेण वड्ढिहाणि-अवट्ठाणाणं संभवं पडि विप्पडिसेहाभावादो।

*** पढमसमयअधापवत्तकरणे गुणसंकमो वोच्छिण्णो। सव्वकम्माण-मधापवत्तसंकमो जादो। णवरि जेसिं विज्झादसंकमो अत्थि तेसिं विज्झादसंकमो चेव।**

§ २१७. जेसिं बंधो अत्थि तेसिमधापवत्तसंकमो, जेसिं बंधो णत्थि णवुंसय-वेदादीणमप्पसत्थकम्माणं तेसिं विज्झादसंकमो एत्तो पाए पयट्टदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो।

*** उवसामगस्स पढमसमयअपुव्वकरणप्पहुडि जाव पडिवदमाण-गस्स चरिमसमयअपुव्वकरणो त्ति, तदो एत्तो संखेज्जगुणं कालं पडि-**

स्वस्थान संयत होकर प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत गुणस्थानोंमें परिवर्तन करते हुए अवस्थित आयामवाले गुणश्रेणिनिक्षेपको ही करता है। संयमासंयमको प्राप्त होता हुआ संख्यात गुणवृद्धिरूप वृद्धि करके गुणश्रेणिनिक्षेपका निक्षेपण करता है। नीचे न गिरकर फिर भी आगमानुसार उपशमश्रेणि अथवा क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है तो पहलेके गुणश्रेणिशीर्षसे नीचे संख्यात गुणहानिरूपसे घटाकर यह जीव गुणश्रेणिनिक्षेपको करता है। यह सब गुणश्रेणिनिक्षेपके आयामकी अपेक्षा कहा है। प्रदेशपुंजकी अपेक्षा तो वृद्धि, हानि और अवस्थानके विषय विभागको जानकर योजना करनी चाहिये, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त कालतक एकान्तसे घटाकर उसके बाद स्वस्थान संयत-रूपसे विद्यमान हुए जीवके संक्लेश और विशुद्धिके कारण वृद्धि, हानि और अवस्थान होनेके प्रति कोई निषेध नहीं है।

*** अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रम विच्छिन्न होकर सब कर्मोंका अतःप्रवृत्तसंक्रम होने लगता है। इतनी विशेषता है कि जिनका विध्यातसंक्रम होता है उनका विध्यातसंक्रम ही होता है।**

§ २१७. जिन कर्मोंका बन्ध होता है उनका अधःप्रवृत्त संक्रम होता है और जिन नपुंसक-वेद आदि अप्रशस्त कर्मोंका बन्ध नहीं होता उनका यहाँसे लेकर विध्यातसंक्रम प्रवृत्त होता है यह यहाँ इस सूत्रका अर्थ है।

*** चढ़नेवाले उपशामकके प्रथम समयसे लेकर गिरनेवाले उसीके अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक जो कालका योग होता है उससे संख्यातगुणे कालतक लौटा हुआ**

णियत्तो अधापवत्तकरणेण उवसमसम्मत्तद्धमणुपालेदि ।

§ २१८. एसो कसायउवसामणादो परिवदिदो उवसमसम्माइट्ठी वा होज्ज, खइयसमाइट्ठी वा, दोण्हं पि उवसमसेढिसमारोहणे विप्पडिसेहाभावादो। तत्थ उवसमसम्माइट्ठिमहिकिच्च एत्तो उवरिमा परूवणा आढविज्जदे। तं जहा—एसो कसायउवसामणादो पडिणियत्तो हेट्ठा णिवदिय पुणो वि अंतोमुहुत्तकालमुवसमसम्मत्तद्धमघापवत्तसंजदो होदूण अणुपालेदि, एवमणुपालेमाणस्स जो उवसमसम्मत्तकालो सो चडमाणोवसामगस्स अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव पडिवदमाणापुव्वकरणचरिमसमयो त्ति एदम्हादो चडमाणोदरमाणसव्वकालकलावादो संखेज्जगुणो होदि। कुदो एदमवगम्मदे ? एदम्हादो चेव सुत्तणिद्देसादो। एवमेदेण सुत्तेण उवसमसम्मत्तद्धामाहप्पं जाणाविय पुणो वि एदिस्से अद्धाए अब्भंतरे वि संभवंतविसेसपदुप्पायणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** एदिस्से उवसमसम्मत्तद्धाए अब्भंतरदो असंजमं पि गच्छेज्ज, संजमासंजमं पि गच्छेज्ज, दो वि गच्छेज्ज ।**

§ २१९. एदस्सत्थो वुच्चदे। तं जहा—एदिस्से उवसमसम्मत्तद्धाए अब्भंतरे संजमेणेव अच्छदि त्ति णत्थि णियमो, किंतु सिया असंजमं पि गच्छेज्ज, परिणाम-

---

यह जीव अधःप्रवृत्तकरणके साथ उपशमसम्यक्त्वके कालको धारण करता है ।

§ २१७. कषायकी उपशामनासे गिरा हुआ यह जीव उपशमसम्यग्दृष्टि भी हो सकता है और क्षायिकसम्यग्दृष्टि भी हो सकता है, क्योंकि दोनोंके ही उपशमश्रेणिपर आरोहण करनेमें निषेधका अभाव है। उनमेंसे उपशमसम्यग्दृष्टिको अधिकृत कर इससे आगेकी प्ररूपणा आरम्भ की जाती है। वह जैसे—कषायकी उपशामनासे लौटा हुआ यह जीव नीचे गिरकर फिर भी अन्तर्मुहूर्त कालतक अधःप्रवृत्त संयत होकर उपशमसम्यक्त्वके कालको धारण करता है। इस प्रकार धारण करनेवाले इस अधःप्रवृत्तसंयतके उपशमसम्यक्त्वका जो काल है वह चढ़नेवाले उपशामकके अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर गिरनेवाले उसीके अपूर्वकरणके अन्तिम समयतक इस चढ़ने और उतरनेमें जितना काल लगता है उस पूरे कालसे संख्यातगुणा होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रके उल्लेखसे जाना जाता है।

इस प्रकार इस सूत्र द्वारा उपशमसम्यक्त्वके कालके माहात्म्यका ज्ञान कराकर फिर भी इस कालके भीतर ही जो विशेषताएँ सम्भव हैं उनका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इस उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर वह असंयमको भी प्राप्त हो सकता है, संयमासंयमको भी प्राप्त हो सकता है और दोनोंको भी प्राप्त हो सकता है ।**

§ २१९. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—इस उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर संयमके साथ ही रहता है ऐसा नियम नहीं है। किन्तु कदाचित् असंयमको भी प्राप्त हो सकता

पच्चएण उवसमसम्मत्तसहिदासंजमपज्जायपरिणमणे विरोहाभावादो । सिया संजमासंजमं पि गच्छेज्ज, परिणामपच्चएणेव पच्चक्खाणोदयसंभवे उवसमसम्मत्तद्धाणुविद्धसंजमासंजमगुणग्गहणे विप्पडिसेहाभावादो । सिया दो वि गच्छेज्ज, परिणामवइचित्तियादो संजमासंजममसंजमं च परिवाडीए परिणामेदुमेदिस्से अद्धाये संभवो अत्थि त्ति वुत्तं होइ । तदो पुव्वमसंजमं गंतूण तत्थंतोमुहुत्तमच्छिय पच्छा संजमासंजमेण परिणमेदुमेदस्स संभवो अत्थि । अथवा पुव्वं संजमासंजमं गंतूण तत्थंतोमुहुत्तमच्छिय तदो असंजमं पि पडिवज्जिदुमेदस्स संभवो ण विप्पडिसिद्धो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो । संपहि ण केवलमेदिस्से अद्धाये अब्भंतरे एसो चेवाणंतरपरूविदो असंजमसंजमासंजमभावपरिवत्तो, किंतु अण्णो वि गुणंतरपरिणामो एत्थाविरुद्धो त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तावयारमुत्तरं भणइ—

*** छसु आवलियासु सेसासु आसाणं पि गच्छेज्ज ।**

§ २२० एसो एदमुवसमसम्मत्तगद्धावसेसं जहावुत्तेण णाएण संजमेणासंजमेण वा संजमासंजमेण वा अणुपालेमाणो एदिस्से अद्धाए बहुभागेसु झीणेसु अवसाणे एगसयमादिं कादूण जावुक्कस्सेण छआवलियाओ अत्थि त्ति एदम्हि अवत्थंतरे सिाय सासादणगुणं पि पडिवज्जेज्ज, परिणामपच्चएणाणंताणुबंधिणो उदीरेमाणस्स तदवत्थाए तब्भावगमणे विप्पडिसेहाभावादो ।

है, क्योंकि परिणामोंके निमित्तसे उपशमसम्यक्त्वके साथ असंयमपर्यायके प्राप्त होनेमें विरोधक अभाव है । कदाचित् संयमासंयमको भी प्राप्त हो सकता है, क्योंकि परिणामोंके निमित्तसे ही प्रत्याख्यानावरण कषायका उदय होनेपर उपशमसम्यक्त्वके कालसे युक्त संयमासंयमगुणके ग्रहण करनेमें कोई निषेध नहीं है । कदाचित् दोनोंको भी प्राप्त हो सकता है, क्योंकि परिणामोंकी विचित्रतावश इस कालके भीतर इसे क्रमसे संयमासंयम और असंयमरूप परिणमाना सम्भव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसलिये पहले असंयमको प्राप्त कर वहाँ अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर पीछे इसे संयमासंयमरूपसे परिणमाना सम्भव है । अथवा पहले संयमासंयमको प्राप्त कर और वहाँ अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर पश्चात् इसे असंयमको भी प्राप्त कराना सम्भव है इसमें कोई बाधा नहीं है यह इस सूत्रका भावार्थ है । अब केवल इस कालके भीतर यह अनन्तर पूर्ण कही गई असंयम और संयमासंयमभावका परिवर्तन ही होता हो ऐसा नहीं है, किन्तु यहाँपर अन्य गुणान्तररूप परिणाम भी अविरुद्ध है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलि काल शेष रहनेपर वह सासादन गुणस्थानको भी प्राप्त कर सकता है ।**

§ २२०. उपशमसम्यक्त्वके इस अवशेष कालका यथोक्त न्यायसे संयमके साथ, असंयमके साथ अथवा संयमासंयमके साथ पालन करता हुआ यह जीव इस कालके बहुभाग क्षीण हो जानेपर अन्तमें एक समयसे लेकर उत्कृष्ट छह आवलिप्रमाण काल शेष है कि इस अवस्थाके भीतर कदाचित् सासादन गुणस्थानको प्राप्त हो सकता है, क्योंकि परिणामोंके निमित्तसे अनन्तानुबन्धी प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवालेके उस अवस्थामें उस भावके प्राप्त करनेमें कोई बाधा नहीं है ।

*** आसाणं पुण गदो जदि मरदि ण सक्को णिरयगदिं तिरिक्खगदिं मणुसगदिं वा गंतुं, णियमा देवगदिं गच्छदि ।**

§ २२१. एदेण सुत्तेण एदस्स सासणगुणेण पडिवज्जणमरणपज्जायस्स णिरय-तिरिक्खमणुसगदिसमुप्पत्तिपडिसेहेण देवगदीए चेव समुप्पादो णियामिदो दट्ठव्वो । संपहि एदस्सेव फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** हंदि तिसु आउएसु एक्केण वि बद्धेण आउगेण ण सक्को कसाये उवसामेदुं ।**

§ २२२. कुदो ? देवाउअं मोत्तूण सेसाणं तिण्हमाउआणं मज्झे एक्केण वि आउएण बद्धेण-उवसमसेढिसमारोहणस्स अच्चंताभावेण पडिसिद्धत्तादो। एदस्स भावत्थो— एसो परिवदमाणगो बद्धपरभवियाउगो अबद्धपरभवियाउओ वा होज्ज । तत्थ जइ ताव अबद्धपरभवियाउओ तो एदस्स एत्थ मरणसंभवो णत्थि, आउअबंधेण विणा मरणाणुववत्तीदो । अह जइ पुव्वमेव बद्धाउगो त्ति इच्छिज्जदि तो वि ण एदस्स सासणगुणेण मरणमुवगयस्स देवगइं मोत्तूणण्णत्थ समुप्पत्तिसंभवो । किं कारणं ? देवाउअं मोत्तूण-ण्णाउएण पबद्धेण संजमासंजम-संजमंगुणपडिवत्तीए अभावेण उवसमसेढिसमारोहणस्स संभवाणुवलंभादो त्ति ।

*** परन्तु सासादनको प्राप्त हुआ यह जीव यदि मरता है तो वह नरकगति, तिर्यञ्चगति अथवा मनुष्यगतिको नहीं जा सकता, नियमसे देवगतिको ही जाता है ।**

§ २२१. इस सूत्र द्वारा सासादनगुणके साथ जिसने पर्यायको प्राप्त किया है उसके नरक, तिर्यञ्च और मनुष्यगतिमें उत्पत्तिका प्रतिषेध करके देवगतिमें ही उत्पत्तिका नियम किया गया है । अब इसी विषयको स्पष्ट करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** ऐसा नियम है कि उक्त तीन आयुओंमेंसे जिसने किसी भी एक आयुका बन्ध किया है वह कषायोंको उपशमानेके लिये समर्थ नहीं हो सकता ।**

§ २२२. क्योंकि देवायुको छोड़कर शेष तीन आयुओंमेंसे जिसने किसी भी एक आयुका बन्ध किया है उसका उपशमश्रेणिपर चढ़ना अत्यन्त असम्भव होनेसे उसका निषेध किया है। इसका भावार्थ यह है—यह उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला भी बद्धपरभवायुष्क भी हो सकता है और अबद्धपरभवायुष्क भी हो सकता है । उनमेंसे यदि वह अबद्धपरभवायुष्क है तो उसका यहाँ सासादन गुणस्थानमें मरण सम्भव नहीं है, क्योंकि आयुका बन्ध किये बिना मरण नहीं होता । और यदि पहलेसे ही बद्धायुष्क स्वीकार किया जाता है तो भी सासादनगुणके साथ मरणको प्राप्त हुए इस जीवकी देवगतिके सिवाय अन्यत्र उत्पत्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि देवायुको छोड़कर बाँधी गई अन्य आयुके साथ संयमासंयम और संयमगुणकी प्राप्तिका अभाव होनेसे उसका उपशमश्रेणिपर चढ़ना सम्भव नहीं है ।

✻ एदेण कारणेण णिरयगदितिरिक्खजोणिमणुस्सगदीओ ण गच्छदि।

§ २२३. गयत्थमेदं सुत्तं।

✻ एसा सव्वा परूवणा पुरिसवेदस्स कोहेण उवट्ठिदस्स।

§ २२४. एसा सव्वा वि अणंतरपरूवणा पुरिसवेदस्स कोहोदएण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स परूविदा दट्ठव्वा त्ति उत्तं होइ। संपहि पुरिसवेदस्स चेव माणसंजलणोदयेणुवट्ठिदस्स उवसामगस्स चडमाणोदरमाणावत्थासु जो परूवणाभेदो तंविहासणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

✻ पुरिसवेदस्स चेव माणेण उवट्ठिदस्स णाणत्तं।

§ २२५. वत्तइस्सामो त्ति वक्कसेसो एत्थ कायव्वो। सुगममण्णं—

✻ तं जहा।

§ २२६. सुगमं।

✻ जाव सत्तणोकसायाणमुवसामणा ताव णत्थि णाणत्तं।

§ २२७. चडमाणस्स ताव अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि जाव अंतरकरणं काद्ण णवुंसयइत्थिवेदोवसामणाणंतरं सत्तणोकसायाणमुवसामणा समप्पदि ताव

✻ इस कारणसे उक्त जीव नरकगति, तिर्यञ्चगति और मनुष्यगतिको नहीं जाता है।

§ २२३. यह सूत्र गतार्थ है।

✻ यह सब प्ररूपणा क्रोधके साथ उपस्थित हुए पुरुषवेदी उपशामककी है।

§ २२४. अनन्तर कही गई यह पूरी प्ररूपणा क्रोधके उदयके साथ उपस्थित हुए पुरुषवेदी उपशामककी प्ररूपित जाननी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब मानसंज्वलनके साथ उपस्थित हुए पुरुषवेदी उपशामकके ही चढ़ने और उतरनेकी अवस्थाओंमें जो प्ररूपणाभेद है उसका विशेष व्याख्यान करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

✻ मानके साथ चढ़े हुए पुरुषवेदीकी प्ररूपणामें जो भेद है उसे बतलावेंगे।

§ २२५. 'बतलावेंगे' इतना विशेष वाक्य इस सूत्रमें जोड़ना चाहिये। अन्य सब सुगम है।

✻ वह जैसे।

§ २२६. यह सूत्र सुगम है।

✻ जबतक सात नोकषायोंकी उपशामना होती है तबतक भेद नहीं है।

§ २२७. चढ़नेवाले जीवके अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर जबतक अन्तर करके नपुंसकवेद और स्त्रीवेदकी उपशामनाके अनन्तर सात नोकषायोंकी उपशामना समाप्त होती है

एदम्मि अंते कोहोदयेणोवट्ठिदउवसामगपरूवणादो माणोदयोवसामगस्स णत्थि थोवं पि परूवणाणाणत्तं, तत्थ तदणुवलंभादो त्ति भणिदं होदि। संपहि एत्तो उवरि कोह-संजलणमुवसामेमाणस्स किंचि णाणत्तमत्थि त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** उवरि माणं वेदंतो कोहमुवसामेदि।**

§ २२८. पुव्विल्लो उवसामगो कोहसंजलणमणुहवंतो तिविहं कोहमुवसामेदि, एसो पुण माणोदएण चडिदत्तादो माणं वेदेंतो तिविहं कोहं उवसामेदि त्ति एदं णाणत्तमेत्थ दट्ठव्वं।

§ २२९. संपहि दोण्हं पि उवसामगाणं कोहोवसामणद्धा सरिसी चेव होदि ण तत्थ किंचि णाणत्तमत्थि त्ति जाणावणफलमुत्तरसुत्तं—

*** जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोहस्स उवसामणद्धा तद्देही चेव माणेण वि उवट्ठिदस्स कोहस्स उवसामणद्धा।**

§ २३०. सुगमं। संपहि पढमट्ठिदिविसयभेदेसिं किंचि णाणत्तमत्थि त्ति पदु-प्पायेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** कोधस्स पढमट्ठिदी णत्थि।**

तबतक इस बीचमें क्रोधके उदयसे चढ़े हुए उपशामककी प्ररूपणासे मानके उदयसे चढ़े हुए उपशामकके थोड़ा भी प्ररूपणाभेद नहीं है, क्योंकि उस अवस्थामें वह पाया नहीं जाता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इससे आगे क्रोधसंज्वलनकी उपशामना करनेवालेकी अपेक्षा इसकी प्ररूपणामें कुछ भेद है इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** मानको वेदता हुआ यह जीव सात नोकषायोंकी उपशामनाके अनन्तर क्रोधको उपशमाता है।**

§ २२८. पहलेका उपशामक क्रोधसंज्वलनका अनुभव करता हुआ तीन प्रकारके क्रोधको उपशमाता है, परन्तु यह जीव मानके उदयसे चढ़ा हुआ होनेके कारण मानका वेदन करता हुआ तीन प्रकारके क्रोधको उपशमाता है यह भेद यहाँ जानना चाहिये।

विशेषार्थ—पहला क्रोधके उदयसे चढ़कर तीन क्रोधोंको उपशमाता था, यह मानके उदयसे चढ़कर तीन क्रोधोंको उपशमाता है, यहाँ यह भेद है।

§ २२९. अब दोनों ही उपशामकोंके क्रोधके उपशमानेका काल समान होनेसे उसमें कुछ भेद नहीं है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जितने प्रमाणवाला क्रोधसे चढ़े हुए जीवके क्रोधका उपशामना काल है उतने ही प्रमाणवाला मानसे चढ़े हुए जीवके भी क्रोधका उपशामना काल है।**

§ २३०. यह सूत्र सुगम है। अब इनकी प्रथम स्थितिके विषयमें कुछ भेद है इसका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** मानके उदयसे चढ़े हुए जीवके क्रोधकी प्रथम स्थिति नहीं होती।**

§ २३१. पुव्विल्लो अंतरं करेमाणो कोहसंजलणस्स पढमट्ठिदिमंतोमुहुत्तियं ठवेदि। एदस्स पुण कोहस्स पढमट्ठिदी णत्थि, अवेदिज्जमाणस्स तस्स पढमट्ठिदि-संबंधाभावादो। तदो अंतरकदमेत्ते चेव माणस्स पढमट्ठिदिं एसो ठवेदि त्ति घेत्तव्वं। संपहि एदस्स माणपढमट्ठिदी किंपमाणा त्ति जादारेयस्स सिस्सस्स तप्पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोधस्स च माणस्स च पढमट्ठिदी तद्देही माणेण उवट्ठिदस्स माणस्स पढमट्ठिदी।**

§ २३२. किं पुण कारणमेम्महंती माणपढमट्ठिदी एदस्स जादा त्ति णासंकणिज्जं, एत्तियमेत्तपढमट्ठिदीए विणा णवणोकसायतिविहकोहतिविहमाणाणमुवसामणकिरियाये तत्थ समाणाणुववत्तीदो। तदो माणेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स माणपढमट्ठिदी कोहेणोवट्ठिदस्स कोहमाणाणं पढमट्ठिदी सपिंडिदा जद्देही तद्देही चेव होदि त्ति घेत्तव्वं।

*** माणे उवसंते एत्तो सेसस्स उवसामेयव्वस्स मायाए लोभस्स च जो कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामणविधी सो चेव कायव्वो।**

---

§ २३१. पहलेका जीव अन्तरको करता हुआ क्रोधसंज्वलनकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम स्थिति करता है। परन्तु इसके क्रोधकी प्रथम स्थिति नहीं होती, क्योंकि यह क्रोधसंज्वलनका वेदन नहीं करता, इसलिए इसके क्रोधकी प्रथम स्थितिके सम्बन्धका अभाव है, इसलिए किये गये अन्तरके प्रमाणके अनुसार ही यह जीव मानकी प्रथम स्थितिको स्थापित करता है। अब इस जीवके मानकी प्रथम स्थिति कितने प्रमाणवाली होती है ऐसे शंकाशील शिष्यको उसके प्रमाणका निश्चय करानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

*** क्रोधसे चढ़े हुए जीवके क्रोध और मानकी जितने आयामवाली प्रथम स्थिति होती है उतने आयामवाली मानसे चढ़े हुए जीवके मानकी प्रथम स्थिति होती है।**

§ २३२. शंका—इस जीवके मानकी प्रथम स्थिति इतनी बड़ी हो गई इसका क्या कारण है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इतनी बड़ी प्रथम स्थिति हुए बिना नौ नोकषाय, तीन प्रकारके क्रोध और तीन प्रकारके मानकी उपशामनाके लिए प्रथम स्थिति और उपशामनाक्रिया इन दोनोंकी समानता नहीं बन सकती। इसलिए मानसे चढ़े हुए उपशामकके मानकी प्रथम स्थिति, क्रोधसे चढ़े हुए उपशामकके क्रोध और मानकी प्रथम स्थितिको मिलाकर जितना प्रमाण होता है, उतनी होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

*** मानके उपशान्त होनेपर आगे उपशमने योग्य माया और लोभकी उपशामना करनेवाले इस जीवके, क्रोधसे चढ़े हुए जीवके उक्त प्रकृतियोंकी जो उपशामनाविधि है, वही करनी चाहिये।**

§ २३३. माणेण उवट्ठिदस्स माणे उवसंते जादे एत्तो उवरि सेसस्स उवसामेयव्वस्स मायालोभविसयस्स च सो चेव विधी एदस्स माणेण उवट्ठिदस्स कायव्वो जो कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स पुव्वुत्तो उवसामणविहि त्ति भणिदं होदि। एवं चडमाणस्स णाणत्तगवेसणं कादूण संपहि एदस्सेव ओदरमाणावत्थाए जो विसेससंभवो तप्पदुप्पायणट्ठमुवरिमो सुत्तणिबंधो—

* **माणेण उवट्ठिदो उवसामेयूण तदा पडिवदिदूण लोभं वेदयमाणस्स जो पुव्वपरूविदो विधी सो चेव विधी कायव्वो। एवं मायं वेदेमाणस्स।**

§ २३४. माणेण उवट्ठिदो उवसामेयूण उवसंतकसायगुणट्ठाणे अंतोमुहुत्तमच्छियूण परिवदमाणगो जाव लोभं वेदयदि किट्टीगदं फद्दयगदं च जाव य मायं वेदयदि अप्पप्पणो उद्देसे ताव णत्थि किंचि णाणत्तं, तहा चेय उदयादिगुणसेढिणिक्खेवेण पुव्वुत्तावट्ठिदायामेण तदुभयमप्पणो वेदगकाले पुव्वं व वेदेदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

* **तदो माणं वेदयंतस्स णाणत्तं।**

§ २३५. सुगमं।

§ २३३. मानसे चढ़े हुए जीवके मानके उपशान्त हो जानेपर 'एत्तो' अर्थात् उसके आगे शेष माया और लोभकी उपशामना करनेवाले मानसे चढ़े हुए इस जीवके वही विधि करनी चाहिये जो क्रोधसे चढ़े हुए उपशामकके पहले उपशामनाविधि कह आये हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार चढ़नेवालेके नानापनेकी गवेषणा करके अब इसीके उतरनेकी अवस्थामें विशेष सम्भव है उसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रनिबन्ध आया है—

* **मानसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके, चारित्रमोहनीयको उपशमा कर और वहांसे गिरकर लोभका वेदन करते हुए जो पहले विधि कह आये हैं वही विधि करनी चाहिये। इसी प्रकार मायाका वेदन करनेवाले जीवके जानना चाहिये।**

§ २३४. मान कषायके साथ श्रेणिपर चढ़कर, कषायोंको उपशमा कर और उपशान्तकषाय गुणस्थानमें अन्तर्मुहूर्त रहकर गिरता हुआ यह जीव जबतक लोभका वेदन करता है तथा कृष्टिगत और स्पर्धकगत मायाका जबतक वेदन करता है तबतक अपने-अपने स्थानमें नानापन नहीं है तथा उदयादि गुणश्रेणिनिक्षेप और पूर्वोक्त अवस्थित आयामके साथ उन दोनोंका अपने-अपने वेदन करनेके कालमें पहलेके समान वेदन करता है यह सूत्रका भावार्थ है।

* **इसके बाद मानका वेदन करनेवाले जीवकी प्ररूपणामें नानापन अर्थात् कुछ भेद है।**

§ २३५. यह सूत्र सुगम है।

---

१. ता०प्रतौ भाणेण उवट्ठिदस्स माणे उवसंते जादे इत्ययं पाठः सूत्रांशरूपेण निर्दिष्टः।

*** तं जहा ।**

§ २३६. सुगमं ।

*** गुणसेढिणिक्खेवो ताव णवण्हं कसायाणं सेसाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण तुल्लो सेसे सेसे च णिक्खेवो ।**

§ २३७. कोहोदएण चडिदो पुणो ओदरमाणो माणस्स अवट्ठिदगुणसेढिमप्पणो वेदगकालादो विसेसुत्तरायामं णिक्खिवदि, कोधे ओकड्डिदे तत्थ बारसण्हं पि कसायाणं गलिदसेसायामेण णाणावरणादिकम्मेहिं सरिसपमाणगुणसेढिविण्णासदंसणादो । एत्थ पुण माणोदएण चडिय पुणो ओदरमाणो तिविहमाणोकड्डणाणंतरमेव णवण्हं पि कसायाणं णाणावरणादिकम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसायामं गलिदसेसगुणसेढिणिक्खेवं कीरमाणो अंतरमावूरेदि त्ति एदं णाणात्तमेत्थ दट्ठव्वं । जस्स कसायस्स उदएण सेढिमारुहदि तम्हि ओकड्डिदे अंतरावूरणमुदयावलियबाहिरे गलिदसेसणाणावरणादिसरिसगुणसेढिणिक्खेवो च आढविज्जदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो ।

*** कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स पुणो पडिवदमाणगस्स जद्देही माणवेदगद्धा एत्तियमेत्तेणेव कालेण माणवेदगद्धाए अधिच्छिदाए ताधे चेव माणं वेदेंतो एगसमएण तिविहं कोहमणुवसंतं करेदि ।**

*** वह जैसे ।**

§ २३६. यह सूत्र सुगम है ।

*** नौ कषायोंका गुणश्रेणिनिक्षेप शेष कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके समान होता है और प्रति समय शेष-शेषमें निक्षेप होता है ।**

§ २३७. क्रोधके उदयसे चढ़कर पुनः उतरनेवाला जीव मानकी अवस्थित गुणश्रेणिको अपने वेदन करनेके कालसे विशेष अधिक आयामवाली निक्षिप्त करता है, क्योंकि क्रोधका अपकर्षण करनेपर उसमें बारहों कषायोंकी गलित शेष आयामरूपसे ज्ञानावरणादि कर्मोंके सदृश प्रमाणवाली गुणश्रेणिकी रचना देखी जाती है । परन्तु प्रकृतमें मानके उदयसे चढ़कर पुनः उतरनेवाला जीव तीन प्रकारके मानका अपकर्षण करनेके अनन्तर ही नौ ही कषायोंके ज्ञानावरणादि कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपणके सदृश आयामवाले गलितशेष गुणश्रेणिनिक्षेपको करता हुआ अन्तरको भरता है इस प्रकार यह नानापन यहाँपर जानना चाहिये । जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उस कषायका अपकर्षण करनेपर अन्तर भरना और उदयावलिके बाहर ज्ञानावरणादि कर्मोंके समान गलित शेष गुणश्रेणिनिक्षेप इन दोनोंको आरम्भ करता है यह इस सूत्रका भावार्थ है ।

*** क्रोधसे श्रेणिपर चढ़े हुए उपशामकके पुनः गिरनेवाले उसीके जितना आयामवाला मानवेदककाल होता है उतने ही कालके द्वारा मानवेदककालके अतिक्रमण करनेपर उसी समय मानका वेदन करता हुआ एक समयके द्वारा तीन प्रकारके क्रोधको अनुपशान्त करता है ।**

§ २३८. जहा कोहेण उवट्ठिदो उवसामगो हेट्ठा परिवदमाणगो माणमोकड्डियूण पच्छा अंतोमुहुत्तेण माणवेदगद्धाए समत्ताए तिविहं कोहमोकड्डदि। एवमेसो वि माणगद्धाए तेत्तियमेत्ते चेव काले समइक्कंते तम्हि चेव उद्देसे तिविहं कोहमोकड्डियूण एक्कसमएणाणुवसंतं करेदि। किंतु पुव्विल्लो कोधं वेदेमाणो संतो तिविहं कोहमोकड्डदि। एसो वुण माणवेदगो चेव होंतो वि तिविहं कोहमोकड्डदि त्ति एदं णाणत्तमेत्थ दट्ठव्वं। जहा च कोहेण उवट्ठिदो तिविहं कोहमोकड्डियूण कोहसंजलणस्स गुणसेढिणिक्खेवमुदयादिगलिदसेसायामेण णिक्खिवदि णाणावरणादिकम्मेहिं सरिसं ण तहा एत्थ उदयादिणिक्खेवसंभवो, किंतु उदयावलियबाहिरे चेव तिण्हं कोहाणं सेसकम्मेहिं सरिसायामेण गलिदसेसेण णिक्खिवदि त्ति एदं पि णाणत्तमेत्थ णायव्वमिदि पदुप्पायेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** ताधे चेव ओकड्डियूण कोहं तिविहं पि आवलियबाहिरे गुणसेढीए इदरेसिं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसीए णिक्खिवदि तदो सेसे सेसे णिक्खिवदि।**

§ २३९. गयत्थमेदं सुत्तं।

*** एदं णाणत्तं माणेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स तस्स चेव पडिवदमाणगस्स।**

---

§ २३८. जिस प्रकार क्रोधसे चढ़ा हुआ उपशामक जीव नीचे गिरता हुआ मानका अपकर्षण करके अनन्तर पूर्व अन्तर्मुहूर्तकालके द्वारा मानवेदककालके समाप्त होनेपर तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करता है उसी प्रकार यह जीव भी अर्थात् मानके उदयसे चढ़ा हुआ जीव भी उतने ही कालमें मानवेदककालके निकल जानेपर उसी स्थानमें तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करके एक समयमें उन्हें अनुपशान्त करता है। किन्तु पहलेका जीव क्रोधका वेदन करता हुआ तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करता है। पर यह मानका ही वेदन करनेवाला होकर भी तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करता है। इस प्रकार यह नानापन यहाँ जानना चाहिये। और जिस प्रकार क्रोधसंज्वलनसे चढ़ा हुआ जीव तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करके क्रोधसंज्वलनके गुणश्रेणिनिक्षेपको उदयादि गलितशेष आयामरूपसे ज्ञानावरणादि कर्मोंके समान निक्षिप्त करता है उस प्रकार यहाँ तीन प्रकारके क्रोधोंका उदयादि गुणश्रेणिनिक्षेप सम्भव नहीं है, किन्तु उदयावलिके बाहर ही उक्त तीन कर्मोंका शेष कर्मोंके सदृश आयाम और गलितशेष रूपसे गुणश्रेणिनिक्षेप करता है। इस प्रकार यह भी यहाँपर फरक जानना चाहिये इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** उसी समय तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण करके उसे इतर कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके समान उदयावलि बाह्य गुणश्रेणिमें निक्षिप्त करता है तथा प्रत्येक समयमें शेष-शेषमें निक्षेप करता है।**

§ २३९. यह सूत्र गतार्थ है।

*** मानसे श्रेणिपर चढ़कर गिरनेवाले उसी उपशामककी प्ररूपणामें यह**

§ २४०. कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स परूवणादो माणेणोवट्ठिदस्स उवसामगस्स चडमाणोदरमाणावत्थासु एदमणंतरणिद्दिट्ठं णाणत्तमवहारेयव्वमिदि वुत्तं होइ। एदं च णाणतं वित्थररुचिसीदारजणाणुग्गहट्ठं वित्थरेण परूविदं। संपहि एवं चेव संखेवरुचिजणाणुग्गहट्ठं समासेण वत्तइस्सामो त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एवं ताव वियासेण णाणत्तं एत्तो समासणाणत्तं वत्तइस्सामो।**

§ २४१. वियासेण वित्थारेण णाणत्तमेदं परूविदमेण्हिं एदं चेव संगहियूण थोवक्खरेहिं चेव जाणावइस्सामो त्ति भणिदं होइ।

नानापन है।

§ २४०. क्रोधसे चढ़े हुए उपशाममकी प्ररूपणाकी अपेक्षा मानसे चढ़े हुए उपशामककी चढ़ने-उतरनेरूप अवस्थाओंमें यह अनन्तर कहा गया नानापन जानना चाहिये। और इस नानानपको विस्तार रुचिवाले श्रोताजनोंके अनुग्रहके लिए विस्तारसे कहा है। अब संक्षेपरुचिवाले श्रोताओंके अनुग्रहके लिए उसीको संक्षेपसे बतलावेंगे इसका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** पहले यह नानापन विस्तारसे कहा, अब संक्षेपमें इस नानापनको बतलावेंगे।**

§ २४१. 'वियासेण' अर्थात् विस्तारसे इस नानापनकी प्ररूपणा की अब इसीका संग्रह करके थोड़े अक्षरों द्वारा ही ज्ञान करायेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—नियम यह है कि जो क्रोध कषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसके क्रमसे चारों कषायोंका उदय होता है। उसके चढ़ते समय क्रोध, मान, माया और लोभ इस क्रमसे कषायोंका उदय होता है। किन्तु उतरते समय यह क्रम बदलकर लोभ, माया, मान और क्रोध इस क्रमसे उदय होता है। इसलिए अप्रमत्तसंयतसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयतकका काल पांच भागोंमें बट जाता है। उसमें भी अपूर्वकरण गुणस्थान तक चारित्रमोहनीयके किसी भी कर्मकी उपशामना नहीं होती, इसलिए यह यहाँ विवक्षित नहीं है। अब शेष रहा अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायका काल सो उसमें भी सूक्ष्मसाम्परायका काल तो मात्र सूक्ष्मलोभका है। किसी भी कषायके उदयसे जीव श्रेणिपर चढ़े उसके सूक्ष्मसाम्परायमें एकमात्र सूक्ष्म लोभका ही उदय रहता है। किन्तु अनिवृत्तिकरणके कालके चार भाग हो जाते हैं—क्रोधका काल, मानका काल, मायाका काल और बादर लोभका काल। अब क्रोधके उदयसे जो श्रेणिपर चढ़ता है उसका मात्र क्रोधके कालतक ही उदय रहता है और इस कालके भीतर वह नौ नोकषायों और अप्रत्याख्यानावरण आदि तीन क्रोधोंको उपशमाता है। इसके बाद उसके मानका वेदनकाल प्रारम्भ हो जाता है जिसके भीतर वह तीन प्रकारके मानको उपशमाता है। इसके बाद उसके मायाका वेदनकाल प्रारम्भ हो जाता है जिसके भीतर वह तीन प्रकारकी मायाको उपशमाता चौथा बादर लोभका वेदनकाल है। इसके भीतर वह अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण दो लोभोंके साथ बादर संज्वलन लोभको भी उपशमाता है। जो क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसकी अपेक्षा यह व्यवस्था है। अब मानकी अपेक्षासे श्रेणिपर चढ़नेवालेकी अपेक्षासे विचार करनेपर उक्त कालके तीन भाग हो जाते हैं। तथा मायाकी अपेक्षा विचार करनेपर उक्त कालके दो भाग होते हैं। और लोभकी अपेक्षा विचार करनेपर पूरा काल एकमात्र लोभके वेदनका होता

*** तं जहा ।**

§ २४२. सुगमं ।

है। इस प्रकार इस कालको ध्यानमें रखकर विचार करनेपर जिस नानापनकी यहाँपर प्ररूपणा की जा रही है वह समझमें आ जाती है।

उदाहरणार्थ—क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके जितना क्रोधका वेदनकाल और इसके बाद जितना मानका वेदनकाल है इन दोनोंको मिलाकर जितना काल होता है वह सब मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवका मानका वेदनकाल हो जाता है, इसलिए सिद्ध हुआ कि क्रोधके उदयसे जो श्रेणिपर चढ़ता है वह अपने उदयकालमें जिन प्रकृतियोंकी उपशमना करता है, मानके उदयसे जो श्रेणिपर चढ़ता है वह भी उन प्रकृतियोंका मानके उदयकालमें जितना क्रोधका वेदनकाल बतला आये हैं उतने ही कालके द्वारा उपशमना करता है। इस प्रकार मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके उन प्रकृतियोंकी उपशामना क्रोधके उदयकालमें न होकर मानके उदयकालमें हुई यह नानापन अर्थात् भेद यहाँ प्राप्त हो जाता है। इसी उदाहरणको ध्यानमें रखकर श्रेणिपर चढ़नेकी अपेक्षा और श्रेणिसे उतरनेकी अपेक्षा सर्वत्र विचार कर लेना चाहिये जिसका आगे चूर्णिसूत्रों और उसकी टीका द्वारा विचार किया जा रहा है।

उपशमश्रेणिपर चढ़नेकी अपेक्षा अनिवृत्तिकरणमें—

क्रोधसे श्रे० च० उपशमाई गईं प्रकृतियाँ	क्रोध क्रोधवेदनकाल नौ नोकषाय, तीन क्रोध	मान मानवेदनकाल तीन मान	माया मायावेदनकाल तीन माया	लोभ लोभवेदनकाल तीन लोभ
मानसे श्रे० च० उपशमाई गईं प्रकृतियाँ	मानवेदककाल नौ नोकषाय, तीन क्रोध	तीन मान	मायावेदनकाल तीन माया	लोभवेदककाल तीन लोभ
मायासे श्रे० च० उपशमाई गईं प्रकृतियाँ	मायावेदककाल नौ नोकषाय, तीन क्रोध	तीन मान	तीन माया	लोभ तीन लोभ
लोभसे श्रे० च० उपशमाई गईं प्रकृतियाँ	लोभवेदककाल नौ नोकषाय, तीन क्रोध	तीन मान	तीन माया	तीन लोभ

इस संदृष्टिसे यह स्पष्ट हो जाता है कि क्रोध, मान, माया और लोभके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके इनमेंसे किस कषायके उदयमें कब किन प्रकृतियोंकी उपशामना होती है। उतरनेकी अपेक्षा भी इसी न्यायसे विचार कर लेना चाहिये।

*** वह जैसे ।**

§ २४२. यह सूत्र सुगम है।

*** पुरिसवेदयस्स माणेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स अधापवत्तकरणमादिं कादूण जाव चरिमसमयपुरिसवेदो त्ति णत्थि णाणत्तं ।**

§ २४३. किं कारणमेत्थ णाणत्ताभावे च ? वुच्चदे—पुव्वविहाणेणेव अधापवत्तापुव्वकरणाणि बोलाविय तदो अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु तेणेव कमेणाइक्कंतेसु तहा चेवंतरं समाणिय णवुंसयवेदादिकमेण णोकसाये उवसामेदि त्ति तेण कारेणेण एदम्हि विसये णत्थि किंचि णाणत्तमिदि भणिदं ।

*** पढमसमयअवेदगप्पहुडि जाव कोहस्स उवसामणद्धा ताव णाणत्तं ।**

§ २४४. एवं भणिदे माणं वेदेंतो कोहमुवसामेदि त्ति एदमेत्थ णाणत्तं दट्ठव्वं । कोहस्स पढमट्ठिदी णत्थि त्ति एदं च णाणत्तमेत्थाणुगंतव्वं ।

*** माणमायालोभाणमुवसामणद्धाए णत्थि णाणत्तं ।**

§ २४५. किं कारणं ? सव्विस्से चेव परूवणाए णाणत्तेण विणा पवुत्तीए तत्थ परिप्फुडमुवलंभादो ।

*** मानके साथ श्रेणिपर चढ़े हुए पुरुषवेदी उपशामकके अधःप्रवृत्तकरणसे लेकर पुरुषवेदके अन्तिम समय तक नानापन नहीं है ।**

§ २४३. शंका—यहाँ नानात्वके अभावका क्या कारण है ?

समाधान—कहते हैं, पहलेकी विधिके अनुसार ही अधःप्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणको बिताकर पश्चात् अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभागके उसी क्रमसे व्यतीत होनेपर तथा उसी प्रकार अन्तर करणक्रियाको सम्पन्न करके नपुंसकवेद आदिके क्रमसे नोकषायोंको उपशमाता है इस कारणसे इस विषयमें कुछ भी नानापन नहीं है ऐसा सूत्रमें कहा है ।

विशेषार्थ—जैसे क्रोधसंज्वलनके उदयके साथ पुरुषवेदीके उपशमश्रेणिपर चढ़नेपर नोकषायोंकी उपशामना जिस क्रमसे होती है, मानसंज्वलनके उदयके साथ पुरुषवेदीके उपशमश्रेणिपर चढ़नेपर नोकषायोंकी उपशामना भी उसी क्रमसे होती है, इसलिए दोनोंकी यहाँ तककी प्ररूपणामें कोई अन्तर नहीं है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

*** अवेदकके प्रथम समयसे लेकर जबतक क्रोधका उपशामना काल है तबतक नानापन है ।**

§ २४४. ऐसा कहनेपर मानका वेदन करता हुआ क्रोधको उपशमाता है यह यहाँ नानापन जानना चाहिये और क्रोधकी प्रथम स्थिति नहीं होती यहाँ यह नानापन भी जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—पहला क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा था यह मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा है एक अन्तर तो यह है और जो मानके उदयसे श्रेणि चढ़ता है उसके क्रोध अनुदयप्रकृति होनेसे उसकी प्रथम स्थिति नहीं होती यह दूसरा अन्तर है ।

*** इसके मान, माया और लोभके उपशामना कालमें कोई नानापन नहीं है ।**

§ २४५. क्योंकि पूरी प्ररूपणामें नानापनके बिना वहाँ प्रवृत्ति स्पष्टरूपसे पाई जाती है ।

*** उवसंतेदाणिं णत्थि चेव णाणत्तं ।**

§ २४६. सुगमं ।

*** तस्स चेव माणेण उवट्ठियूण तदो पडिवदिदूण लोभं वेदेंतस्स णत्थि णाणत्तं ।**

§ २४७. सुगमं ।

*** मायं वेदेंतस्स णत्थि णाणत्तं ।**

§ २४८. एदं पि सुबोहं ।

*** माणं वेदयमाणस्स ताव णाणत्तं जाव कोहो ण ओकड्डिज्जदि । कोहे ओकड्डिदे[1] कोधस्स उदयादिगुणसेढी णत्थि । माणो चेव वेदिज्जदि ।**

§ २४९. कोहस्स उदयादिगुणसेढी णत्थि त्ति एदमेगणाणत्तं, माणो चेव वेदिज्जदि त्ति विदियं णाणत्तमिदि । एवमेदाणि दोण्णि णाणत्ताणि एत्थ दट्ठव्वाणि ।

विशेषार्थ—पुरुषवेद और मानसंज्वलनके उदयसे जो श्रेणिपर चढ़ता है वह उसी विधिसे मान, माया और लोभकी उतने ही कालमें उपशामना करता है जिस विधिसे पुरुषवेद और क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव जितने कालमें उनकी उपशामना करता है, इसलिए यहाँ नानात्व का निषेध किया है।

*** इनके उपशान्त होनेपर भी कोई नानापन नहीं है ।**

§ २४६. यह सूत्र सुगम है ।

*** मानकषायके साथ श्रेणिपर चढ़कर और वहांसे लौटकर लोभका वेदन करनेवाले उसी जीवके भी नानापन नहीं है ।**

§ २४७. यह सूत्र सुगम है ।

*** मायाका वेदन करनेवाले उस जीवके भी नानापन नहीं है ।**

§ २४८. यह सूत्र भी सुबोध है ।

*** मानका वेदन करनेवाले उसी जीवके तबतक नानापन है जबतक क्रोधका अपकर्षण नहीं करता है । क्रोधका अपकर्षण करनेपर क्रोधकी उदयादि गुणश्रेणि नहीं होती । यह मानका ही वेदन करता रहता है ।**

§ २४९. क्रोधकी उदयादि गुणश्रेणि नहीं होती यह एक नानापन है तथा मानका ही वेदन करता है यह दूसरा नानापन है । इस प्रकार ये दो नानापन यहाँ जानने चाहिये ।

विशेषार्थ—यह मानकषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा है, इसलिये उतरते समय तक इसके क्रमसे लोभ, माया और मानका उदय होता है, क्रोधका उदय नहीं होता, इसलिए इसके एक तो क्रोधका अपकर्षण करनेके कालमें भी क्रोधकी उदयादि गुणश्रेणि नहीं होती एक नानापन तो यह है

---

१. ता०प्रतौ कोहे ओकड्डिदे इत्यतः चेव वेदिज्जदि इति यावत् टीकायां सम्मिलतः ।

*** एदाणि दोण्णि णाणत्ताणि कोधादो ओकड्डिदादो पाये जाव अधापवत्तसंजदो जादो त्ति ।**

§ २५०. माणोदएण चडिय पुणो हेट्ठा ओदरिय जाव अधापवत्तसंजदो ण जादो ताव माणोदओ ण णस्सदि त्ति । तदो एदम्हि अवत्थाविसेसे णाणत्तमेद-मणंतरणिद्दिट्ठं दट्ठव्वं इदि वुत्तं होदि । एवं ताव वियाससमासेहिं णाणत्तमेदं फुडी-करिय संपहि मायाए उवट्ठिदस्स उवसामगस्स णाणत्तपरूवणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाढवेइ—

*** मायाए उवट्ठिदस्स उवसामगस्स केद्दही मायाए पढमट्ठिदी ।**

§ २५१. सुगमं ।

*** जाओ कोहेण उवट्ठिदस्स कोधस्स च माणस्स च मायाए च[1] पढमट्ठिदीओ ताओ तिण्णि पढमट्ठिदीओ संपिंडिदाओ मायाए उवट्ठिदस्स मायाए पढमट्ठिदी ।**

§ २५२. [2]अंतरकदमेत्ते चेव मायाए पढमट्ठिदिमेसो ट्ठवेदि । तिस्से पढमट्ठिदीए आयामो केद्दहि त्ति पुच्छिदे कोहेणोवट्ठिदस्स कोहमाणमायाणं जाओ पढमट्ठिदीओ

और दूसरे यह अन्तमें मानके वेदनकालसे लेकर उसीका वेदन करता हुआ ही श्रेणिसे उतरता है, श्रेणिमें इसके क्रोधका वेदन नहीं होता । इस प्रकार दूसरा नानापन यह है ।

*** क्रोधके अपकर्षणसे लेकर अधःप्रवृत्त संयत होनेतक संयतके ये दोनों नानापन होते हैं ।**

§ २५०. मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़कर पुनः नीचे उतरकर जबतक अधःप्रवृत्त संयत नहीं हो जाता तबतक मानका उदय नष्ट नहीं होता, इसलिये इस अवस्थाविशेषमें यह अनन्तर कहा गया नानापन जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । विस्तार और संक्षेपसे इस नानापनको स्पष्ट करके अब मायाके साथ श्रेणिपर चढ़े हुए उपशामकके नानापनके निरूपण करनेके लिए इस सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** मायासे श्रेणिपर चढ़े हुए उपशामकके मायाकी प्रथम स्थिति कितनी आयामवाली होती है ।**

§ २५१. यह सूत्र सुगम है ।

*** क्रोधसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके क्रोध, मान और मायाकी जितनी प्रथम स्थिति होती है उन तीनों प्रथम स्थितियोंको मिलाकर मायासे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके मायाकी प्रथम स्थिति होती है ।**

§ २५२. यह अन्तर किये जानेके बराबर मायाकी प्रथम स्थिति स्थापित करता है । उस प्रथम स्थितिका आयाम कितने प्रमाणवाला होता है ऐसा पूछनेपर क्रोधसे श्रेणिपर चढ़नेवाले जीवके

---

१. क०प्रतौ कोधस्स च चढमाणस्स च मायाए इति पाठः ।

२. ता०प्रतौ अंताकद इत्यतः पढमट्ठिदी इति यावत् सूत्ररूपेण समुपलभ्यते ।

ताओ तिण्णि वि संपिंडियूण गहिदमेत्ती एदस्स मायाए पढमट्ठिदी होदि त्ति णिद्दिट्ठं। किं कारणमेम्महंती पढमट्ठिदी एत्थ जादा त्ति णासंकणिज्जं, एदिस्से चेव पढमट्ठिदीए अब्भंतरे तिविहं कोहं तिविहं माणं तिविहं च मायमुवसामेमाणस्स तत्तियमेत्तपढमट्ठिदीए अविप्पडिवत्तिसिद्धत्तादो। तदो मायावेदगो चेव तिविहकोहमाणमायाओ जहाकममुवसामेदि त्ति एदं णाणत्तमेत्थ दट्ठव्वमिदि पदुप्पायणट्ठमाह—

*** तदो मायं वेदेंतो कोहं च माणं च मायं च उवसामेदि।**

§ २५३. सुगमं।

*** तदो लोभमुवसामेंतस्स णत्थि णाणत्तं।**

§ २५४. कुदो? तत्थ णाणत्तेण विणा पयदपरूवणाए पवुत्तिदंसणादो। एवं उवरिं चडियूण पुणो हेट्ठा ओदरमाणस्सेदस्स जो णाणत्तसंभवो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** मायाए उवट्ठिदो, उवसामेयूण पुणो पडिवदमाणगस्स लोभं वेदयमाणस्स णत्थि णाणत्तं।**

क्रोध, मान और मायाकी जो प्रथम स्थितियाँ हैं उन तीनोंको मिलाकर जितना आयाम होता है उतनी यहाँ मायाकी प्रथम स्थिति होती है ऐसा यहाँ जानना चाहिये।

शंका—यहाँपर इतने बड़े आयामवाली प्रथम स्थिति कैसे हो गई?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इसी प्रथम स्थितिके भीतर तीन प्रकारके क्रोध, तीन प्रकारके मान और तीन प्रकारकी मायाको उपशमानेवाले जीवके उतने आयामवाली प्रथम स्थिति बिना विवादके सिद्ध है।

इसलिये मायाका वेदन करनेवाला जीव ही तीन प्रकारके क्रोध, तीन प्रकारके मान और तीन प्रकारकी मायाको क्रमसे उपशमाता है इस प्रकार इस नानापनको यहाँ जानना चाहिये इस बातका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इसलिए मायाका वेदन करनेवाला जीव क्रोध, मान और मायाको उपशमाता है।**

§ २५३. यह सूत्र सुगम है।

विशेषार्थ—क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव केवल क्रोधको उपशमाता है, मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव क्रोध और मान इन दोको क्रमसे उपशमाता है तथा मायाके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव क्रमसे क्रोध, मान और मायाको उपशमाता है। एक तो इस प्रकार नानापन बन जाता है। दूसरे प्रथम स्थितिकी अपेक्षा भी यहाँ नानापन बन जाता है।

*** तत्पश्चात् लोभको उपशमानेवाले उसी जीवके नानापन नहीं हैं।**

§ २५४. क्योंकि वहाँ नानापनके बिना प्रकृत प्ररूपणाकी प्रवृत्ति देखी जाती है। इस प्रकार ऊपर चढ़कर पुनः नीचे उतरनेवाले इस जीवके जो नानापन सम्भव है उसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** मायाकषायसे श्रेणिपर चढ़ा। पुनः कषायोंको उपशमाकर गिरकर लोभका**

§ २५५. कुदो? सुहुमबादरलोभवेगद्धाए णाणत्तेण विणा पुव्वपरूवणाए चेव एत्थ वि पवुत्तिदंसणादो।

*** मायं वेदेंतस्स णाणत्तं। तं जहा—तिविहाए मायाए, तिविहस्स लोहस्स च गुणसेढिणिक्खेवो इदरेहिं कम्मेहिं सरिसो[1], सेसे सेसे च णिक्खेवो।**

§ २५६. कोहोदएण उवट्ठिदूण हेट्ठा ओदरमाणस्स मायाए पढमट्ठिदी सगवेद-कालादो आवलियब्भहिया चेव, एत्थ पुण तिविहाए मायाए तिविहस्स च लोहस्स गुणसेढिणिक्खेवो णाणावरणादिकम्मेहिं सरिसायामो होदूणुवरि गलिदसेसायामेण पयट्टदि त्ति, एदं णाणत्तमेत्थ दट्ठव्वं।

*** सेसे च कसाये मायं वेदंतो ओकड्डिहिदि।**

§ २५७. एदमेत्थ विदियं णाणत्तं दट्ठव्वं। संपहि एत्थतणगुणसेढिणिक्खेव-पमाणावहारणट्ठं उत्तरसुत्तमोइण्णं।

*** तत्थ गुणसेढिणिक्खेवविधिं च इदरकम्मगुणसेढिणिक्खेवेण सरिसं काहिदि।**

वेदन करनेवाले उसी जीवके नानापन नहीं है।

§ २५५. क्योंकि सूक्ष्म लोभके वेदन करनेके कालमें नानापनके बिना पहलेकी प्ररूपणाकी यहाँ भी प्रवृत्ति देखी जाती है।

विशेषार्थ—क्रोध, मान और माया इनमेंसे किसी भी कषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़े और उतरे हुए जीवकी दशवें गुणस्थानमें उनकी अपेक्षा मात्र सूक्ष्म लोभका ही उदय रहता है, इसलिये इन कषायोंकी अपेक्षा दोनों अवस्थाओंमें यहां नानापन सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** किन्तु बादमें मायाका वेदन करते हुए उसके नानापन है। वह जैसे—तीन प्रकारकी माया और तीन प्रकारके लोभका गुणश्रेणिनिक्षेप इतर कर्मोंके समान होता है और शेष-शेषमें निक्षेप होता है।**

§ २५६. क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़कर नीचे उतरनेवाले जीवकी मायाकी प्रथम स्थिति अपने वेदन करनेके कालसे मात्र एक आवली काल प्रमाण अधिक होती है, परन्तु यहाँपर तीन प्रकारकी माया और तीन प्रकारके लोभका गुणश्रेणिनिक्षेप ज्ञानावरणादि कर्मोंके सदृश आयाम-वाला होकर ऊपर गलित शेष आयामरूपसे प्रवृत्त होता है। इस प्रकार यह नानापन यहाँपर जानना चाहिये।

*** तथा शेष कषायोंको मायाका वेदन करता हुआ अपकर्षित करता है।**

§ २५७. यह यहाँ दूसरा नानापन जानना चाहिये। अब यहाँ प्रकृतमें किये जानेवाले गुणश्रेणि निक्षेपके आयामकी अवधारणा करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** और वहाँ गुणश्रेणि निक्षेपविधिको इतर कर्मोंके गुणश्रेणि निक्षेपके समान**

---

१. ता०प्रतौ सरिसो सेसे च इति पाठः।

§ २५८. कुदो ? गलिदसेसगुणसेढिविसये पयारंतरासंभवादो । संपहि लोहोदएण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स णाणत्तगवेसणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

❀ लोभेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स णाणत्तं वत्तइस्सामो ।

§ २५९. सुगमं ।

❀ तं जहा ।

§ २६०. सुगमं ।

* अंतरकदमेत्ते लोभस्स पढमट्ठिदिं करेदि । जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोहस्स पढमट्ठिदी माणस्स च पढमट्ठिदी मायाए च पढमट्ठिदी लोभस्स च सांपराइयपढमट्ठिदी तद्देही लोभस्स पढमट्ठिदी ।[1]

§ २६१. अंतरकदमेत्ते चेव सेससंजलणपरिहारेण लोहसंजलणस्स पढमट्ठिदिमेम्महंतिं एसो ठ्ठवेदि त्ति । एदं णाणत्तमेत्थ दट्ठव्वं । किं कारणमेम्महंती लोभस्स

करता है ।

§ २५८. क्योंकि गलित शेष गुणश्रेणिके विषयमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है ।

विशेषार्थ—यहाँ मायाका वेदन करनेवाला जीव उपशमश्रेणिपर चढ़नेके बाद नीचे गिरता है तब पुनः मायाका वेदन करने लगता है । तब उसके जो कार्य विशेष होते हैं उनका निर्देश करते हुए बतलाया है कि सर्व प्रथम वह तीन प्रकारकी माया और तीन प्रकारके लोभका अपकर्षण कर उनका ज्ञानावरणादि कर्मोंके समान गुणश्रेणिनिक्षेप करता है । किन्तु यह गुणश्रेणिनिक्षेप गलितशेष होनेके कारण प्रति समय जो गुणश्रेणि शेष रहती जाती है उसमें अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप करता है । तथा क्रमशः नीचे उतरकर मायाका वेदन करते हुए ही वह क्रमसे तीन मान और तीन क्रोधका भी अपकर्षण कर उनका भी गुणश्रेणिनिक्षेप शेष कर्मोंके समान करता है ।

अब लोभके उदयसे चढ़े हुए उपशामकके नानापनकी गवेषणा करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

❀ अब लोभकषायसे श्रेणिपर चढ़े हुए उपशामककी अपेक्षा नानापनको बतलावेंगे ।

§ २५९. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ २६०. यह सूत्र भी सुगम है ।

* वह अन्तर किये जानेको मर्यादा करके लोभकी प्रथम स्थितिको करता है । क्रोधकषायसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवकी जितने आयामवाली प्रथम स्थिति, मानकी प्रथम स्थिति, मायाकी प्रथम स्थिति और लोभकी तथा साम्परायसम्बन्धी प्रथम स्थिति है उतने आयामवाली प्रथम स्थिति स्थापित करता है ।

§ २६१. यह शेष संज्वलनोंके बिना लोभ संज्वलनकी अन्तर किये जानेको मर्यादा करके इतनी बड़ी प्रथम स्थितिको स्थापित करता है । यह नानापन यहाँपर जानना चाहिये ।

१. ता०प्रतौ जद्देही इत्यतः सूत्रांशः टीकायां सम्मिलितः ।

पढमट्ठिदी जादा त्ति णासंका एत्थ कायव्वा, एदिस्से चेव पढमट्ठिदीए अब्भंतरे अणियट्टिकरणविसयासेसवावारविसेसमणुणालेंतस्स एवंविहाए पढमट्ठिदीए अवस्संसंभाविदत्तादो। एत्तियं चेव चढमाणस्स णाणत्तं। एत्तो उवरि सुहुमलोभं वेदेंतस्स णत्थि किंचि णाणत्तमिदि पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** सुहुमसांपराइयं पडिवण्णस्स णत्थि णाणत्तं।**

§ २६२. सुगमं। संपहि एदस्सेव पुणो परिवदमाणावत्थाए णाणत्तगवेसणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** तस्सेव पडिवदमाणगस्स सुहुमसांपराइयं वेदेंतस्स णत्थि णाणत्तं।**

§ २६३. गयत्थमेदं सुत्तं।

*** पढमसमयबादरसांपराइयप्पहुडि णाणत्तं वत्तइस्सामो।**

§ २६४. बादरसांपराइयपविट्ठपढमसमयप्पहुडि णाणत्तमत्थि तमिदाणिं वत्तइस्सामो त्ति वुत्तं होइ।

*** तं जहा।**

§ २६५. सुगमं।

*** तिविहस्स लोहस्स गुणसेढिणिक्खेवो इदरेहिं कम्मेहिं सरिसो।**

शंका—इतनी बड़ी आयामवाली लोभकी प्रथम स्थिति किस कारणसे हो जाती है ?

समाधान—यह आशंका यहाँ नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इसी प्रथम स्थितिके भीतर अनिवृत्तिविषयक समस्त व्यापार विशेषको करनेवालेके इस प्रकारकी प्रथम स्थितिका होना अवश्यम्भावी है। चढ़नेवाले इसके इतना ही नानापन है। इससे ऊपर सूक्ष्म लोभका वेदन करनेवालेके कुछ भी नानापन नहीं है इस बातका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

*** सूक्ष्मसाम्परायको प्राप्त हुए जीवके नानापन नहीं है।**

§ २६२. यह सूत्र सुगम है। अब इसीके पुनः गिरनेकी अवस्थामें नानापनका अनुसन्धान करनेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है।

*** गिरते समय सूक्ष्मसाम्परायको वेदन करनेवाले उसीके नानापन नहीं है।**

§ २६३. यह सूत्र गतार्थ है।

*** अब बादरसाम्परायके प्रथम समयसे लेकर नानापनको बतलाते हैं।**

§ २६४. जो बादर साम्परायमें प्रविष्ट हुआ है उसके प्रथम समयसे लेकर नानापन है उसे इस समय बतलाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** वह जैसे।**

§ २६५. यह सूत्र सुगम है।

*** उसके तीन प्रकारके लोभोंका गुणश्रेणिनिक्षेप इतर कर्मोंके समान है।**

§ २६६. अणियट्टिकरणपवेसाणंतरमेव तिविहं लोभमोकड्डियूण गुणसेढिणिक्खेवं कुणमाणो इदरेहिं णाणावरणादिकम्मेहिं सरिसायामेण गुणसेढिणिक्खेवमेसो करेदि त्ति एदमेत्थ णाणत्तं दट्ठव्वं, जस्स कसायस्सोदयेण सेढिमारूढो तम्हि ओकड्डिदे णाणावरणादिकम्मेहिं सरिसगुणसेढिणिक्खेवपुरस्सरमंतरावूरणं करेदि त्ति णियमदंसणादो।

*** लोभं वेदेमाणो सेसे कसाए ओकड्डिहिदि।**

§ २६७. सुगमं।

*** गुणसेढिणिक्खेवो इदरेहिं कम्मेहिं गुणसेढिणिक्खेवेण सव्वेसिं कम्माणं सरिसो। सेसे सेसे च णिक्खिवदि।**

§ २६८. एदं पि सुगमं।

*** एदाणि णाणत्ताणि जो कोहेण उवसामेदुमुवट्ठादि तेण सह सण्णिकासिज्जमाणाणि[1]।**

§ २६९. कोहसंजलणोदएण जो उवसामेदुमुवट्ठिदो तेण सह सण्णियासं कादूणेदाणि णाणत्ताणि माणमायालोहोदयिल्लोवसामगाणं परूविदाणि त्ति वुत्तं होदि।

---

§ २६६. अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करनेके अनन्तर समयसे ही यह जीव तीन प्रकारके लोभोंका अपकर्षण करके गुणश्रेणिनिक्षेपको करता हुआ इतर ज्ञानावरणादि कर्मोंके सदृश आयामवाले गुणश्रेणिनिक्षेपको करता है। इस प्रकार यह नानापन यहाँपर जानना चाहिये, क्योंकि जिस कषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसका अपकर्षण कर ज्ञानावरणादि कर्मोंके समान गुणश्रेणिनिक्षेपपूर्वक अन्तरको भरता है ऐसा नियम देखा जाता है।

*** वह लोभका वेदन करता हुआ शेष कषायोंका अपकर्षण करता है।**

§ २६७. यह सूत्र सुगम है।

*** उसके सब कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप इतर कर्मोंके गुणश्रेणिनिक्षेपके सदृश होता है तथा वह शेष-शेषमें निक्षेप करता है।**

§ २६८. यह सूत्र भी सुगम है।

*** जो क्रोधके उदयके साथ श्रेणिपर चढ़कर कषायोंको उपशमानेके लिए उद्यत हुआ है उसके साथ सन्निकर्ष करते हुए ये नानापन जानना चाहिए।**

§ २६९. जो पुरुष क्रोधसंज्वलनके उदयसे श्रेणिपर चढ़कर कषायोंको उपशमानेके लिए उपस्थित हुआ है उसके साथ सन्निकर्ष अर्थात् मिलान करके मान, माया और लोभके उदयवाले उपशामकोंके जो नानापन प्राप्त होता है उसकी प्ररूपणा की यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—एक जीव क्रोधकषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता और उतरता है और दूसरा जीव मानकषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता और उतरता है तो उन दोनोंकी प्ररूपणामें जो भेद हो

---

१. ता०प्रतौ जो कोहेण इत्यतः सण्णिकासिज्जमाणाणि इति यावत् टीकायां सम्मिलितः।

❀ एदे पुरिसवेदेणुवट्ठिदस्स वियप्पा ।

§ २७०. पुरिसवेदोदयं धुवं कादूण चदुण्हं संजलणाणमुदयभेदमस्सियूण पुव्वुत्ता णाणत्तवियप्पा अणुमग्गिदा । एण्हिं सेसवेदोदएहिं चडिदस्स जो भेदसंभवो तमणुवण्णइस्सामो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो ।

❀ इत्थिवेदेण उवट्ठिदस्स णाणत्तं वत्तइस्सामो । तं जहा ।

§ २७१. सुगमं ।

❀ अवेदो सत्तकम्मंसे उवसामेदि । सत्तण्हं पि य उवसामणद्धा तुल्ला ।

§ २७२, पुव्विल्लो सवेदो चेव होंतो सत्तकम्मंसे उवसामेदि, विसेसाहिया च छण्णोकसायाणमुवसामणद्धादो तस्स पुरिसवेदोवसामणद्धाए समयूणदोआवलियमेत्त-णवकबंधोवसामणाकालमेत्तेण । एत्थ पुण इत्थिवेदपढमट्ठिदिं गालिय तदणंतरसमए अवगदवेदभावमुवणमिय तत्थेव पुरिसवेदस्साबंधगो होदूण तदो सत्तणोकसाये अंतो-मुहुत्तकालेण जुगवमेवमुवसामेदि त्ति एदं णाणत्तं एदेण सुत्तेण णिद्दिट्ठं । सेसं सुगमं ।

जाता है वह तो यहाँ बतलाया ही गया है । इसी प्रकार शेष दो कषायोंकी अपेक्षा भी प्ररूपणामें क्या भेद पड़ता है यह भी यहाँपर बतलाया गया है ऐसा यहाँ समझना चाहिये ।

❀ पुरुषवेदके साथ जो जीव श्रेणिपर चढ़ा है उसे माध्यम बनाकर ये विकल्प जानने चाहिये ।

§ २७०. पुरुषवेदके उदयको ध्रुव करनेके साथ चार संज्वलनोंके उदयभेदका आश्रय कर पूर्वोक्त नाना विकल्पोंका विचार किया । अब शेष वेदोंके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके जो भेद सम्भव हैं उनका वर्णन करेंगे यह इस सूत्रका भावार्थ है ।

❀ अब स्त्रीवेदके उदयसे उपशमश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके नानापनको बतलावेंगे । वह जैसे ।

§ २७१. यह सूत्र सुगम है ।

❀ यह जीव अवेदी होकर सात कर्मोंको एक साथ उपशमाता है । उसके सातों ही कर्मोंका उपशामना काल समान है ।

§ २७२. पहलेका जीव अर्थात् पुरुषवेदी जीव सवेदी होकर सात कर्मोंको उपशमाता है तथा छह नोकषायोंके उपशामना कालकी अपेक्षा उसका पुरुषवेदसम्बन्धी उपशामना काल एक समय कम दो आवलि नवकबन्ध उपशामना कालप्रमाण विशेष अधिक होता है । किन्तु यहाँपर स्त्रीवेदकी प्रथम स्थितिको गलाकर तदनन्तर समयमें अपगतवेदभावको प्राप्त होकर तथा वहींपर पुरुषवेदका अबन्धक होकर तत्पश्चात् सात नोकषायोंको अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा एक साथ ही उपशमाता है । इस प्रकार यह नानापन इस सूत्र द्वारा सूचित किया गया है । शेष कथन सुगम है ।

विशेषार्थ—पुरुषवेदी जीव सवेद भागमें ही सात नोकषायोंकी उपशामना करता है । किन्तु स्त्रीवेदी जीव अवेदी होनेके बाद सात नोकषायोंकी उपशामना करता है यह अन्तर यहाँ जानना चाहिये ।

*** एदं णाणत्तं, सेसा सव्वे वियप्पा पुरिसवेदेण सह सरिसा।**

§ २७३. एत्तियमेत्तो चेव एत्थतणो विसेसो[1]। एत्तो उवरिमा सव्वे वियप्पा जहा पुरिसवेदस्स चदुहिं कसाएहिं सह भणिदा तहा णिरवसेसा वत्तव्वा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थविणिच्छओ। एत्थ ओदरमाणावत्थाए वि थोवयरविसेससंभवो अत्थि सो जाणिय वत्तव्वो। संपहि णवुंसयवेदोदएण चडिदस्स णाणत्तपदंसणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** णवुंसयवेदेणोवट्ठिदस्स उवसामगस्स णाणत्तं वत्तइस्सामो।**

§ २७४. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ २७५. सुगमं।

*** अंतरदुसमयकदे णवुंसयवेदमुवसामेदि, जा पुरिसवेदेण उवट्ठिदस्स णवुंसयवेदस्स उवसामणद्धा तद्दही अद्धा गदा ण ताव णवुंसयवेदमुवसामेदि, तदो इत्थिवेदमुवसामेदि, णवुंसयवेदं पि उवसामेदि चेव, तदो इत्थिवेदस्स उवसामणद्धाए पुण्णाए इत्थिवेदो च णवुंसयवेदो च**

*** प्रकृतमें यह नानापन है। शेष सब विकल्प पुरुषवेदके साथ समान हैं।**

§ २७३. यहाँपर इतना ही विशेष है। उक्त विकल्पसे ऊपरके सभी विकल्प जिस प्रकार पुरुषवेदीके चार कषायोंके साथ कहे हैं उसी प्रकार विशेषता किये बिना कहने चाहिये इस प्रकार यहाँपर यह सूत्रसम्बन्धी अर्थका निर्णय है। यहाँपर उतरनेरूप अवस्थामें थोड़ा-सा विशेष सम्भव है सो उसे जानकर कहना चाहिये। तात्पर्य यह है कि यह जीव श्रेणिसे उतरते समय अवेदी रहकर ही सात नोकषायोंको अनुपशमित करता है। इतना मात्र यहाँ भेद है। अब नपुंसकवेदके उदयके साथ श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके नानापनको दिखलानेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** नपुंसकवेदके साथ श्रेणिपर चढ़े हुए उपशामकके नानापनको बतलाते हैं।**

§ २७४. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २७५. यह सूत्र सुगम है।

*** अन्तर करनेके बाद दूसरे समयमें नपुंसकवेदको उपशमाता है। जो पुरुषवेदके साथ श्रेणिपर चढ़े हुए जीवका उपशामना काल है उतने आयामवाला उपशामना काल जब तक व्यतीत नहीं होता तबतक नपुंसकवेदको नहीं उपशमाता है। तत्पश्चात् स्त्रीवेदको उपशमाता है, नपुंसकवेदको भी उपशमाता ही है। इसलिये**

---

१. ता०प्रतौ एत्तियमेत्तो इत्यतः विसेसो इति यावत् सूत्रांशरूपेणोपलभ्यते।

उसामिदा भवंति। ताधे चेव चरिमसमए सवेदो भवदि, तदो अवेदो सत्त कम्माणि उवसामेदि, तुल्ला च सत्तण्हं पि कम्माणं उवसामणा।

§ २७६. पुरिसवेदेणोवट्ठिदो पुव्वमेव णवुंसयवेदमुवसामिय तदो अंतोमुहुत्तेणित्थिवेदमुवसामेदि। एदस्स पुण अंतरकदमेत्ते चेव णवुंसयवेदस्स पढमट्ठिदिं णवुंसय-इत्थिवेदोवसामणद्धामेत्तिं ट्ठवेयूण पुव्वमेव णवुंसयवेदोवसामणमाढविय उवसामेमाणस्स जद्देही पुरिसवेदेणोवट्ठिदस्स णवुंसयवेदोवसामणद्धा तद्देही अद्धा गदा तो वि णवुंसयवेदोवसामणा ण समप्पदि। तदो इत्थिवेदोवसामणं पि तत्थाढविय दो वि उवसामेमाणस्स अप्पणो पढमट्ठिदीए चरिमसमए जम्मि इत्थिवेदोवसामणद्धा पुण्णा तम्हि णवुंसयवेदो इत्थिवेदो च दो वि जुगवमुवसामिदा भवंति त्ति। एदमेगं णाणत्तं। अवगदवेदो च संतो तत्तोप्पहुडि सत्तणोकसाये उवसामेदि। सरसी च सत्तण्हं पि कम्माणमुवसामणद्धा त्ति। एदं विदियं णाणत्तं। एवमेदाणि दोण्णि णाणत्ताणि णवुंसयवेदोदएण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स होंति त्ति सुत्तत्थसंगहो। संपहि एदं चेवत्थमुवसंहरेमाणो सुत्तरमुत्तरं भणइ—

*** एदं णाणत्तं णवुंसयवेदेण उवट्ठिदस्स। सेसा वियप्पा ते चेव कायव्वा।**

स्त्रीवेदके उपशामना कालके पूरा होनेपर स्त्रीवेद और नपुंसकवेद उपशमित हो जाते हैं। तथा उसी अन्तिम समयमें सवेदी होता है, तत्पश्चात् अवेदी होकर सात कर्मोंको उपशमाता है। सात कर्मोंका उपशामना काल समान है।

§ २७६. पुरुषवेदके साथ श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव पहले ही नपुंसकवेदको उपशमा कर तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त काल द्वारा स्त्रीवेदको उपशमाता है। परन्तु यह अर्थात् नपुंसकवेदी जीव अन्तर किये जानेको मर्यादा करके नपुंसकवेद और स्त्रीवेदके उपशामना कालप्रमाण नपुंसकवेदकी प्रथम स्थितिको स्थापित करता है जो प्रथम स्थिति, जो पहले ही नपुंसकवेदकी उपशामनाका आरम्भ कर उसकी उपशामना कर रहा है ऐसे पुरुषवेदसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके जितना आयामवाला नपुंसकवेदका उपशामना काल है उतना आयामवाले कालके बराबर है, वह काल यद्यपि व्यतीत हो गया है तो भी नपुंसकवेदकी उपशामना समाप्त नहीं होती है। तत्पश्चात् वहाँपर स्त्रीवेदकी उपशामनाको भी आरम्भ करके स्त्रीवेद और नपुंसकवेद दोनोंकी ही उपशामना करनेवाले जीवके अपनी (स्त्रीवेदसम्बन्धी) प्रथम स्थितिके अन्तिम समयमें जिसमें कि स्त्रीवेदका उपशामना काल पूर्ण होता है—उसमें 'नपुंसकवेद और स्त्रीवेद दोनों ही एक साथ उपशमित होते हैं। यह एक नानापन है। और अवगतवेदी होकर वहाँसे लेकर सात नोकषायोंको उपशमाता है। सात नोकषायोंका उपशामना काल समान हैं। यह दूसरा नानापन है। इस प्रकार नपुंसकवेदसे श्रेणिपर चढ़कर उपशामना करनेवालेके ये दो नानापन होते हैं—यहइ स सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इसी अर्थका उपसंहार करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** नपुंसकवेदसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवकी अपेक्षा यह नानापन है। शेष विकल्प वे ही (पुरुषवेदके समान ही) कहने चाहिये।**

§ २७७. सुगमं। एवमेत्तियेण पबंधेण णाणत्तगवेसणं कादूण संपहि पदपरिवूरणबीजपदालंबणेण चडमाणोदरमाणोवसामगविसयाणमेत्थोवजोगीणं पदविसेसाणमप्पाबहुअपरूवणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरमाढवेइ—

*** एत्तो पुरिसवेदेण सह कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स पढमसमयअपुव्वकरणमादिं कादूण जाव पडिवदमाणगस्स चरिमसमयअपुव्वकरणो त्ति एदिस्से अद्धाए जाणि कालसंजुत्ताणि पदाणि तेसिमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो।**

§ २७८. पुरिसवेदकोहसंजलणाणं उदएण जो सेढिमारुढो तमहिकिच्च तस्सेव पढमसमयअपुव्वकरणमादिं कादूण जाव पडिवदमाणापुव्वकरणचरिमसमयो त्ति जाणि कालसंजुत्ताणि पदाणि जहण्णुक्कस्साणुभागखंडयुक्कीरणद्धादिपडिबद्धाणि तेसिमिदाणिमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं।

*** तं जहा।**

§ २७९. सुगममेदं पयदप्पाबहुअपरूवणावसरकरणट्ठं पुच्छावक्कं।

*** सव्वत्थोवा जहण्णिया अणुभागखंडयउक्कीरणद्धा।**

§ २८०. कुदो ? णाणावरणादिकम्माणं चडमाणसुहुमसांपराइयचरिमाणुभागखंडयुक्कीरणद्धाए मोहणीयस्स वि अंतरकरणे कीरमाणे तत्थतणचरिमाणुभागखंड-

---

§ २७७. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा नानापनका अनुसन्धान करके अब पदपरिपूरणरूप बीज पदका अवलम्बन करके चढ़ते हुए और उतरते हुए उपशामकविषयक तथा यहाँ उपयोगी पदविशेषोंके अल्पबहुत्वका प्ररूपण करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** अब इससे आगे पुरुवेदके साथ संज्वलन क्रोधकषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर गिरनेवाले उसी उपशामकके अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक कालसंयुक्त अर्थात् कालकी अपेक्षा जितने पद हैं उनके अल्पबहुत्वको बतलावेंगे।**

§ २७८. पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनके उदयसे जो श्रेणिपर चढ़ा है उसे अधिकृत कर उसीके अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर गिरनेवाले उसीके अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक जघन्य और उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकउत्कीरण काल आदिसे सम्बन्ध रखनेवाले कालविशिष्ट जो पद हैं उनके अल्पबहुत्वको बतलावेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है।

*** वे जैसे।**

§ २७९. प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणाका अवसर देनेके लिये आया हुआ यह सूत्र सुगम है।

*** अनुभागकाण्डकका जघन्य उत्कीरणा काल सबसे थोड़ा है।**

§ २८०. क्योंकि श्रेणिपर चढ़नेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकके ज्ञानावरणादि कर्मोंका जो अन्तिम समयसम्बन्धी अनुभागकाण्डक उत्कीरणकाल होता है और मोहनीयकर्मका अन्तरकरण करनेपर

युक्कीरणद्धाए सव्वजहण्णभावेणेत्थ गहणादो ।

*** उक्कस्सिया अणुभागखंडयउक्कीरणद्धा विसेसाहिया ।**

§ २८१. कुदो ? सव्वकम्माणं पि चडमाणापुव्वकरणपढमाणुभागखंडयुक्कीरणद्धाए गहणादो ।

*** जहण्णिया ट्ठिदिबंधगद्धा ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धा च तुल्लाओ संखेज्जगुणाओ ।**

§ २८२. मोहणीयस्स जहण्णट्ठिदिबंधगद्धा णाम अणियट्टिकरणचरिमावत्थाए गहेयव्वा, तत्तो परं तस्स बंधवोच्छेददंसणादो । जहण्णट्ठिदिखंडयुक्कीरणद्धा पुण एत्थ णत्थि, अंतरकरणादो उवरि मोहणीयस्स ट्ठिदिघादासंभवादो । सेसकम्माणं पुण सुहुमसांपराइयचरिमावत्थाए दो वि एदाओ जहण्णद्धाओ घेत्तव्वाओ, तत्थेव तासिं जहण्णभावोवलद्धीदो । ण च एदासिं पुव्विल्लादो संखेज्जगुणत्तमसिद्धं, एगट्ठिदिखंडयुक्कीरणकालब्भंतरे सव्वजहण्णे वि संखेज्जसहस्समेत्ताणमणुभागखंडयाणमत्थित्तोवएसबलेण तस्सिद्धीदो ।

*** पडिवदमाणगस्स जहण्णिया ट्ठिदिबंधगद्धा विसेसाहिया ।**

§ २८३. एसा णाणावरणादीणमोदरमाणसुहुमसांपराइयपढमट्ठिदिबंधविसये

जो वहाँ सम्बन्धी अन्तिम अनुभागकाण्डक उत्कीरणकाल होता है उन दोनोंको यहाँ ग्रहण किया है ।

*** अनुभागकाण्डकका उत्कृष्ट उत्कीरण काल विशेष अधिक है ।**

§ २८१. क्योंकि श्रेणिपर चढ़नेवाले अपूर्वकरणके सभी कर्मोंसम्बन्धी प्रथम अनुभागकाण्डकके उत्कीरण कालका यहाँ ग्रहण किया है ।

*** जघन्य स्थितिबन्ध काल और स्थितिकाण्डक उत्कीरण काल दोनों समान होकर संख्यातगुणे हैं ।**

§ २८२. अनिवृत्तिकरणकी अन्तिम अवस्थासम्बन्धी मोहनीयके जघन्य स्थितिबन्ध कालको ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उसके आगे उसकी बन्धव्युच्छित्ति देखी जाती है । परन्तु यहाँपर मोहनीयकर्मसम्बन्धी स्थितिकाण्डकका जघन्य उत्कीरण काल नहीं होता, क्योंकि अन्तरकरण करनेके बाद आगे मोहनीयकर्मका स्थितिघात असम्भव है । सभी कर्मोंके सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थानकी अन्तिम अवस्थामें तो ये दोनों ही जघन्य ग्रहण करने चाहिये, क्योंकि वहींपर ये दोनों जघन्यरूपसे उपलब्ध होते हैं । और ये पहलेके पदसे संख्यातगुणे होते हैं यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि सबसे जघन्य एक स्थितिकाण्डकके उत्कीरण कालके भीतर भी संख्यात हजार अनुभागकाण्डकोंके उपदेशके बलसे वे संख्यातगुणे हैं यह सिद्ध होता है ।

*** श्रेणिसे गिरनेवाले जीवका जघन्य स्थितिबन्ध काल विशेष अधिक है ।**

§ २८३. उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके यह ज्ञानावरणादिसम्बन्धी प्रथम स्थितिबन्ध-

घेत्तव्वा। मोहणीयस्स पुण ओदरमाणाणियट्टिपढमट्ठिदिबंधविसये गहेयव्वा। ण च तत्तो एदिस्से विसेसाहियत्तमसिद्धं, चडमाणतदद्धाहिंतो ओदरमाणतदद्धाए संकिलेस-माहप्पेण विसेसाहियसिद्धीए बाहाणुवलंभादो। एदेण सुत्तणिद्देसेण जाणिज्जदे जहा ओदरमाणस्स सव्वावत्थासु ट्ठिदिअणुभागघादा णत्थि त्ति, जइ अत्थि तो ओदर-माणस्स ट्ठिदिबंधगद्धाए सह ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धं पि भणेज्ज। ण च एवं, तहाणु-वइट्ठत्तादो।

*** अंतरकरणद्धा विसेसाहिया।**

§ २८४. एसो अंतरफालीणमुक्कीरणकालो गहिदो। एसो चेव तत्थतणट्ठिदि-बंधट्ठिदिखंडयउक्कीरणकालो वि, तिण्हमेदेसिं समाणपरिमाणत्तोवलंभादो। ण च एदस्स पुव्विलादो विसेसाहियत्तमसिद्धं, उवरिमट्ठिदिबंधगद्धाहिंतो हेट्ठिमट्ठिदिबंध-गद्धाणं जहाकमं विसेसाहियभावसिद्धीए णिप्पडिबंधमुवलंभादो।

*** उक्कस्सिया ट्ठिदिबंधगद्धा ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धा च विसेसाहिया।**

§ २८५. कुदो? सव्वकम्माणं पि चडमाणापुव्वकरणपढमसमयाढत्तट्ठिदिबंध-ट्ठिदिखंडयुक्कीरणद्धाणं गहणादो।

*** चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स गुणसेढिणिक्खेवो संखेज्जगुणो।**

विषयक लेना चाहिये। मोहनीयकर्मका तो श्रेणिसे उतरनेवाले अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी प्रथम स्थितिबन्धविषयक लेना चाहिये। और पूर्वके स्थितिबन्ध कालसे यह विशेष अधिक है यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि चढ़नेवाले स्थितिबन्धकालसे उतरनेवाला स्थितिबन्धकाल संक्लेशके माहात्म्य-वश विशेष अधिक सिद्ध होता है इसमें कोई बाधा नहीं पाई जाती। साथ ही प्रकृत सूत्रके इस निर्देशसे इस प्रकार भी जाना जाता है कि श्रेणिसे उतरनेवालेके सब अवस्थाओंमें स्थितिघात और अनुभागघात नहीं होता, यदि होता तो उतरनेवालेके स्थितिबन्धकालके साथ स्थितिकाण्डक-उत्कीरणकाल भी कहते। परन्तु ऐसा होता नहीं है, क्योंकि उस प्रकार उसका उपदेश पाया नहीं जाता।

*** अन्तरकरणकाल विशेष अधिक है।**

§ २८४. यह अन्तरफालियोंका उत्कीरणकाल ग्रहण किया है और यही वहाँ सम्बन्धी स्थितिबन्धकाल और स्थितिकाण्डकउत्कीरणकाल भी है, क्योंकि इन तीनोंका समान परिमाण पाया जाता है। और पूर्व कालसे इसका विशेष अधिकपना असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि उपरिम स्थितिबन्धकालोंसे अधस्तन स्थितिबन्धकालोंके विशेष अधिक रूपसे सिद्ध होनेमें कोई बाधा नहीं पाई जाती है।

*** उत्कृष्ट स्थितिबन्धकाल और स्थितिकाण्डक उत्कीरणकाल विशेष अधिक हैं।**

§ २८५. क्योंकि प्रकृतमें सभी कर्मोंके चढ़नेवाले अपूर्वकरणके प्रथम समयमें आरम्भ होने-वाले स्थितिबन्धकाल और स्थितिकाण्डक उत्कीरणकालोंको ग्रहण किया है।

*** अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकका गुणश्रेणिनिक्षेप संख्यातगुणा है।**

§ २८६. तं कधं ? अपुव्वकरणपढमसमये अपुव्वाणियट्टिसुहुमद्धाहिंतो विसेसाहियभावेण जो णिक्खित्तो गुणसेढिणिक्खेवो सो गलिदसेसो सुहुमसांपराइयचरिमसमए अंतोमुहुत्तपमाणो होदूण दीसइ। एवंविहो चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स गुणसेढिणिक्खेवो पुव्विल्लुक्कस्सट्ठिदिबंधगद्धादो संखेज्जगुणो होदि त्ति घेत्तव्वं।

*** तं चेव गुणसेढिसीसयं ति भण्णदि।**

§ २८७. जमेदमणंतरपरूविदचरिमसमयसुहुमसांपराइयगुणसेढिणिक्खेवपमाणमुवसंतद्धाए संखेज्जदिभागमेत्तायामं तं चेव गुणसेढिसीसयमिदि भण्णदे। कुदो? हेट्ठिमाविसेसगलिदसेसगुणसेढिणिक्खेवस्स सीसयभावेणेदस्सावट्ठाणदंसणादो।

*** उवसंतकसायस्स गुणसेढिणिक्खेवो संखेज्जगुणो।**

§ २८८. एसो वि उवसंतद्धाए संखेज्जदिभागमेत्तं चेव, किंतु पुव्विल्लगुणसेढिसीसएण ओगाढविसयादो संखेज्जगुणं विसयमोगाहियूण ट्ठिदो तेण संखेज्जगुणो जादो।

*** पडिवदमाणयस्स सुहुमसांपराइयद्धा संखेज्जगुणा।**

§ २८९. एसा वि उवसंतकसायद्धाए संखेज्जदिभागमेत्ती चेव होदूण पुव्विल्लगुणसेढिणिक्खेवादो संखेज्जगुणा त्ति गहेयव्वा।

---

§ २८६. शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि अपूर्वकरणके प्रथम समयमें अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायके कालसे विशेष अधिकरूपसे जो गुणश्रेणिनिक्षेप निक्षिप्त होता है, गलित शेष वह गुणश्रेणिनिक्षेप सूक्ष्यसाम्परायिक जीवके अन्तिम समयमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण दिखाई देता है। अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकका इस प्रकारका गुणश्रेणिनिक्षेप पूर्वके स्थितिबन्धकालसे संख्यातगुणा होता है प्रकृतमें ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

*** वही गुणश्रेणिशीर्ष कहा जाता है।**

§ २८७. जो यह अनन्तर पूर्व अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके गुणश्रेणिनिक्षेपका प्रमाण कहा है, उपशान्तकषायके कालके संख्यातवें भागप्रमाण वही गुणश्रेणिशीर्ष कहा जाता है, क्योंकि पूर्वमें गलितशेष गुणश्रेणिनिक्षेपका जो शेष रहा उसका शीर्षरूपसे अवस्थान देखा जाता है।

*** उपशान्तकषायका गुणश्रेणिनिक्षेप संख्यातगुणा है।**

§ २८८. यह भी उपशान्त कालके संख्यातवें भागप्रमाण ही है। किन्तु पहलेके गुणश्रेणिशीर्षके द्वारा अवगाहित स्थानसे यह संख्यातगुणे स्थानको अवगाहित कर स्थित है, इसलिए संख्यातगुणा हो गया है।

*** श्रेणिसे गिरनेवालेका सूक्ष्मसाम्परायिककाल संख्यातगुणा है।**

§ २८९. यह भी उपशान्तकषायके कालसे संख्यातवें भागप्रमाण ही है ऐसा होकर भी पूर्वके गुणश्रेणिनिक्षेपसे संख्यातगुणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

❀ तस्सेव लोभस्स गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ ।

§ २९०. किं कारणं? परिवदमाणओ सुहुमसांपराइओ सगद्धादो आवलियमेत्तेणब्भहियं कादूण लोभसंजलणस्स गुणसेडिणिक्खेवं करेदि तेण कारणेणावलियमेत्तं पविसियूणेत्थ विसेसाहियत्तं जादं ।

❀ उवसामगस्स सुहुमसांपराइयद्धा किट्टीणमुवसामणद्धा सुहुमसांपराइस्स पढमट्ठिदी च तिण्णि वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ ।

§ २९१. किं कारणं? ओदरमाणद्धादो चडमाणद्धाए सव्वत्थ विसेसाहियभावेणवट्ठाणब्भुवगमादो । एत्थ विसेसपमाणमंतोमुहुत्तमिदि घेत्तव्वं ।

❀ उवसामगस्स किट्टीकरणद्धा विसेसाहिया ।

§ २९२. एसो चडमाणयस्स लोभवेदगद्धाए तिविदियभागो । ण चेदस्स सुहुमसांपराइयद्धादो विसेसाहियभावो असिद्धो, उवरिमद्धाहिंतो हेट्ठिमट्ठाद्धाणं विसेसाहियभावेणावट्ठाणदंसणादो ।

❀ पडिवदमाणगस्स बादरसांपराइयस्स लोभवेदगद्धा संखेज्जगुणा ।

§ २९३ किं कारणं? पुव्विल्लो एगतिभागमेत्तो, इमे पुण वेत्तिभागा तेण संखेज्जगुणा जादा । जइ वि एत्थत्तणविदियतिभागादो चडमाणस्स विदियतिभागो

❀ उसीके लोभका गुणश्रेणिनिक्षेप विशेष अधिक है ।

§ २९०. क्योंकि गिरनेवाला सूक्ष्मसाम्परायिक जीव अपने कालसे एक आवलिमात्र अधिक करके लोभसंज्वलनका गुणश्रेणिनिक्षेप करता है इस कारणसे यहाँ मात्र एक आवलिकालका प्रवेश कराकर यह काल विशेष अधिक हो गया है ।

❀ उपशामकका सूक्ष्मसाम्परायिककाल, कृष्टियोंके उपशमानेका काल और सूक्ष्मसाम्परायिककी प्रथम स्थिति ये तीनों समान होकर विशेष अधिक हैं ।

§ २९१. क्योंकि श्रेणिसे उतरनेवालेके कालसे चढ़नेवालेके कालका सर्वत्र विशेष अधिकरूपसे अवस्थान देखा जाता है । यहाँपर विशेष अधिकका प्रमाण अन्तर्मुहूर्तमात्र ग्रहण करना चाहिये ।

❀ उपशामकका कृष्टिकरणकाल विशेष अधिक है ।

§ २९२. यह काल चढ़नेवालेके लोभवेदककालके तीन भागोंमेंसे द्वितीय भागप्रमाण है । और यह सूक्ष्मसाम्परायिकके कालसे विशेष अधिक है यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि उपरिम कालोंसे अधस्तन कालोंका विशेष अधिकरूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

❀ गिरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकका लोभवेदककाल संख्यातगुणा है ।

§ २९३. क्योंकि पहलेका काल एक त्रिभागमात्र है और ये दो त्रिभागप्रमाण है, इस कारण से यह काल संख्यातगुणा हो गया है । यद्यपि यहाँके द्वितीय त्रिभागसे चढ़नेवालेका द्वितीय त्रिभाग

विसेसाहिओ तो वि हेट्ठिमतिभागस्स विसेसाहियत्तमस्सियूण सादिरेयदुगुणत्तमेत्थ साहेयव्वं ।

❀ तस्सेव लोभस्स तिविहस्स वि तुल्लो गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ ।

§ २९४. सगवेदगकालादो आवलियब्भहियं कादूण सेढिणिक्खेवमेत्तो कुणदि । तदो आवलियमेत्तेण विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठव्वं । एवं उवरि वि जत्थ जत्थ हेट्ठा ओदरमाणयस्स अप्पप्पणो वेदगकालस्सुवरि गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ भणिहिदि तत्थ तत्थ एसो अत्थो जोजेयव्वो ।

❀ उवसामगस्स बादरसांपराइयस्स लोभवेदगद्धा विसेसाहिया ।

§ २९५. किं कारणं ? पुव्विल्ला वि बादरलोभवेदगद्धाए वेत्तिभागा इमे वि वेत्तिभागा चेव, किंतु हेट्ठा ओदरमाणो जाव पुव्विल्लं ट्ठाणं अंतोमुहुत्तेण ण पावइ ताव मायावेदगो होदि । तेणाणियट्टिउवसामगस्स लोभवेदगद्धा चढमाणसंबंधिणी पुव्विल्लादो अंतोमुहुत्तमेत्तेण विसेसाहिया जादा ।

❀ तस्सेव पढमट्ठिदी विसेसाहिया ।

§ २९६. केत्तियमेत्तेण ? आवलियमेत्तेण । किं कारणं ? चढमाणो अणियट्टी चदुण्हं संजलणाणमप्पप्पणो वेदगकालादो उच्छिट्ठावलियमेत्तमहियं कादूण पढमट्ठिदि-

---

विशेष अधिक है तो भी अधस्तन त्रिभागके विशेष अधिकपनेका आलम्बन कर यहाँपर साधिक दुगुणपना सिद्ध करना चाहिये ।

❀ उसीके तीन प्रकारके लोभका गुणश्रेणिनिक्षेप समान होकर विशेष अधिक है।

§ २९४. अपने वेदककालसे एक आवलिप्रमाण कालको अधिक करके तत्प्रमाण श्रेणिनिक्षेप करता है, इसलिए यहाँपर एक आवलिमात्र काल अधिक जानना चाहिये । इसी प्रकार ऊपर भी जहाँ-जहाँ नीचे उतरनेवाले जीवके अपने-अपने वेदककालके ऊपर गुणश्रेणिनिक्षेपको विशेष अधिक कहेंगे वहाँ-वहाँ यह अर्थ जानना चाहिये ।

❀ उपशामक बादर साम्परायिक जीवका लोभवेदककाल विशेष अधिक है ।

§ २९५. क्योंकि पूर्वका काल भी बादर लोभवेदककालके दो तृतीय भागप्रमाण है, यह काल भी दो तृतीय भागप्रमाण ही है, किन्तु नीचे उतरनेवाला जीव जबतक पूर्वके स्थानको अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा नहीं प्राप्त होता है तब तक वह मायाका वेदक होता है, इसलिए अनिवृत्तिकरण उपशामकका चढ़नेवालेसे सम्बन्ध रखनेवाला लोभवेदककाल पूर्वके कालसे अन्तर्मुहूर्त अधिक हो गया है ।

❀ उसीकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है ।

§ २९६. शंका—कितनी अधिक है ?

समाधान—एक आवलिकाल अधिक है, क्योंकि श्रेणिपर चढ़नेवाला अनिवृत्तिकरण जीव

विण्णासं करेदि त्ति । एवमुवरि वि जत्थ जत्थ मायादीणं पढमट्ठिदी विसेसाहिया त्ति भणिहिदि तत्थ तत्थ उच्छिट्ठावलियमेत्तेण विसेसाहियत्तमवहारेयव्वं ।

❀ पडिवदमाणयस्स लोभवेदगद्धा विसेसाहिया ।

§ २९७. केत्तियमेत्तेण ? ओदरमाणयस्स किंचूणसुहुमसांपराइयद्धामेत्तेण । किं कारणं ? ओदरमाणसंबंधिसुहुमबादरलोभवेदगद्धाए संपिंडिदाए इहग्गहणादो । उवसामगस्स लोभवेदगद्धा किमेत्थेवुद्देसे विसेसाहियभावेण णिवददि आहो परिवदमाणयस्स मायामाणवेदगद्धाहिंतो उवरि णिवददि त्ति णादूण भणियव्वं, सुत्ते तण्णिद्देसदंसणादो ।

❀ पडिवदमाणगस्स मायावेदगद्धा विसेसाहिया ।

§ २९८. किं कारणं ? उवरिमअद्धाहिंतो हेट्ठिमअद्धाणं जहाकमं विसेसाहियभावेणावट्ठाणदंसणादो ।

❀ तस्सेव मायावेदगस्स छण्हं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ ।

२९९. केत्तियमेत्तेण ? आवलियमेत्तेण ।

चार संज्वलनसम्बन्धी अपने-अपने वेदककालसे उच्छिष्टावलिप्रमाणकालको अधिक करके प्रथम स्थितिकी रचना करता है। इसी प्रकार ऊपर भी जहाँ-जहाँ मायादिककी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है ऐसा कहेंगे वहां-वहां उच्छिष्टावलिमात्र काल विशेष अधिक है ऐसा निश्चय करना चाहिये।

❀ गिरनेवालेका लोभवेदककाल विशेष अधिक है ।

§ २९७. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—उतरनेवालेके कुछ कम सूक्ष्मसाम्परायिकके कालप्रमाण अधिक है, क्योंकि उतरनेवालेके सूक्ष्म और बादर लोभवेदककालको मिलाकर पूरे कालको यहाँ ग्रहण किया गया है। उपशामकका लोभ वेदककाल विशेष अधिक होकर क्या इसी स्थानमें प्राप्त होता है या गिरनेवाले जीवके माया-मानवेदककालसे ऊपर प्राप्त होता है इसे जानकर कहना चाहिये, क्योंकि सूत्रमें उसका निर्देश देखा जाता है।

❀ गिरनेवालेका मायावेदक काल विशेष अधिक है ।

§ २९८. क्योंकि उपरिम कालोंसे नीचेके कालोंका यथाक्रम विशेष अधिकरूपसे अवस्थान देखा जाता है।

❀ उसी मायावेदकके छह कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप विशेष अधिक है ।

§ २९९. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—मात्र एक आवलिकाल अधिक है।

❀ पडिवदमाणगस्स माणवेदगद्धा विसेसाहिया ।

§ ३००. सुगमं ।

❀ तस्सेव पडिवदमाणयस्स माणवेदगस्स णवण्हं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ ।

§ ३०१. केत्तियमेत्तेण ? आवलियमेत्तेण ।

❀ उवसामयस्स मायावेदगद्धा विसेसाहिया ।

§ ३०२. किं कारणं ? चढमाणसंबंधित्तेण लद्धमाहप्पत्तादो ।

❀ मायाए पढमट्ठिदी विसेसाहिया ।

§ ३०३. केत्तियमेत्तेण ? आवलियमेत्तेण ।

❀ मायाए उवसामणद्धा विसेसाहिया ।

§ ३०४. केत्तियमेत्तो विसेसो ? समयूणावलियमेत्तो । किं कारणं ? णवकबंधोवसामणापडिबद्धसमयूणावलियाए परिप्फुडमेत्थ पवेसदंसणादो ।

❀ उवसामगस्स माणवेदगद्धा विसेसाहिया ।

§ ३०५. केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तमेत्तेण ।

❀ गिरनेवालेका मानवेदक काल विशेष अधिक है ।

§ ३००. यह सूत्र सुगम है ।

❀ गिरनेवाले उसी मानवेदकके नौ कर्मोंका गुणश्रेणिनिक्षेप विशेष अधिक है ।

§ ३०१. शंका—कितना अधिक है ।

समाधान—मात्र एक आवलि काल अधिक है

❀ उपशामकका मायावेदक काल विशेष अधिक है ।

§ ३०२. क्योंकि चढ़नेवाले जीवके सम्बन्धसे यह माहात्म्य प्राप्त हुआ है ।

❀ मायाकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है ।

§ ३०३. शंका—कितनी अधिक है ।

समाधान—मात्र एक आवलिकाल अधिक है ।

❀ मायाका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।

§ ३०४. शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—विशेषका प्रमाण एक समय कम एक आवलिमात्र है ।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—नवकबन्धकी उपशामनासे सम्बन्ध रखनेवाले एक समय कम एक आवलिप्रमाण कालके इसमें स्पष्ट रूपसे प्रवेश देखा जाता है ।

❀ उपशामकका मानवेदककाल विशेष अधिक है ।

§ ३०५. शंका—कितना अधिक है ?

❀ **माणस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया ।**

§ ३०६. केत्तियमेत्तेण ? उच्छिट्ठावलियमेत्तेण ।

❀ **माणस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

§ ३०७. केत्तियमेत्तेण ? समयूणावलियमेत्तेण ।

❀ **कोहस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

§ ३०८. केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तमेत्तेण । किं कारणं ? उवरिमअद्धाहिंतो हेट्ठिमअद्धाणं तहाभावेणावट्ठाणस्स परमागमचक्खूणं सुप्पसिद्धत्तादो ।

❀ **छण्णोकसायाणमुवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

§ ३०९. केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तमेत्तेण । कुदो ? हेट्ठा समुवलद्धसरूवत्तादो ।

❀ **पुरिसवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

§ ३१०. केत्तियमेत्तेण ? समयूणदोआवलियमेत्तेण ।

❀ **इत्थिवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

समाधान—अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल अधिक है ।

❀ **मानकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है ।**

§ ३०६. शंका—कितनी अधिक है ?

समाधान—उच्छिष्टावलिमात्र अधिक है ।

❀ **मानका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३०७. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—एक समय कम एक आवलिप्रमाणकाल अधिक है ।

❀ **क्रोधका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३०८. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल अधिक है ।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—परमागम जिनके नेत्र हैं ऐसे जीवोंकी दृष्टिमें उपरिम कालोंसे अधस्तन कालोंका उस रूपसे अवस्थानका होना सुप्रसिद्ध है ।

❀ **छह नोकषायोंका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३०९. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल अधिक है, क्योंकि इस कालकी उपलब्धि नीचे होती है ।

❀ **पुरुषवेदका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३१०. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—एक समय कम दो आवलिप्रमाण काल अधिक है ।

❀ **स्त्रीवेदका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

*** णवुंसयवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

§ ३११. एदाओ दो वि अद्धाओ हेट्ठा लद्धप्पसरूवाओ तेण जहाकमं विसेसाहियाओ जादाओ ।

*** खुद्दाभवग्गहणं विसेसाहियं ।**

§ ३१२. किं खुद्दाभवग्गहणं णाम ? वुच्चदे—सव्वेहिंतो भवग्गहणेहिंतो जं खुद्दयमइदहरयं भवग्गहणं तं खुद्दाभवग्गहणमिदि भण्णदे । एदं च एगुस्सासस्स संखेज्जावलियसमूहणिप्पण्णस्स सादिरेयट्ठारसभागमेत्तं होदूण संखेज्जावलियसहस्सपमाणमिदि घेत्तव्वं । तं जहा—

तिण्णिसया छत्तीसा छासट्ठिसहस्समेव मरणाणि ।
अंतोमुहुत्तकाले तावदिया चेव खुद्दभवा ॥१॥
तिण्णिसहस्सा सत्तयसदाणि तेवत्तरिं च उस्सासा ।
एसो हवइ मुहुत्तो सव्वेसिं चेव मणुआणं ॥२॥ इदि ।

§ ३१३. एदे तिण्णिसहस्ससत्तयतेवत्तरिमेत्ते एगमुहुत्तुस्सासे ट्ठविय एगमुहुत्तब्भंतरखुद्दभवसलागाहिं पुव्वगाहाणिद्दिट्ठपमाणाहि ओवट्टिय एगुस्सासस्स सादिरेयट्ठारसभागमेत्तं खुद्दाभवग्गहणपमाणमाणेयव्वं। संपहि एवंविहे खुद्दाभवग्गहणे संखेज्जावलियाणमत्थित्तमेवमणुगंतव्वं । तं जहा—एगुस्सासकालब्भंतरे जहण्णदो वि वेसदसोल-

---

*** नपुंसकवेदका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३११. ये दोनों ही काल नीचे अपने स्वरूपका लाभ करते हैं अर्थात् उत्तरोत्तर नीचे प्राप्त होते हैं, इसलिए यथाक्रम विशेष अधिक हो गये हैं ।

*** क्षुल्लक भवग्रहण विशेष अधिक है ।**

§ ३१२. शंका—क्षुल्लकभवग्रहण किसे कहते हैं ?

समाधान—कहते हैं—सब भवग्रहणोंसे जो क्षुल्लक अर्थात् अतिह्रस्व (अल्प) भवग्रहण होता है उसे क्षुल्लकभवग्रहण कहते हैं और यह संख्यात आवलिप्रमाण कालोंके समूहसे बने हुए एक उच्छ्वासके साधिक अठारवें भागप्रमाण होकर संख्यात हजार आवलिप्रमाण होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । वह जैसे—

अन्तर्मुहूर्त कालमें छयासठ हजार तीनसौ छत्तीस ६६३३६ मरण होते हैं और उतने ही क्षुल्लकभव होते हैं ॥१॥

सभी मनुष्योंके तीन हजार सातसौ तिहत्तर ३७७३ उच्छ्वासोंका एक मुहूर्त होता है ॥२॥

§ ३१३. एक मुहूर्तके इन तीन हजार सातसौ तिहत्तर उच्छ्वासोंको स्थापित कर पहलेकी गाथामें जिनके प्रमाणका निर्देश किया गया है ऐसे एक मुहूर्तके भीतर प्राप्त क्षुल्लक भवसम्बन्धी शलाकाओंसे भाजित करनेपर एक उच्छ्वासके भीतर साधिक अठारह क्षुल्लक। भवग्रहणोंका प्रमाण ले आना चाहिये । अब इस प्रकारके क्षुल्लक भवग्रहणमें संख्यात आवलियोंका प्रमाण इस प्रकार

सुत्तरमेत्तीओ आवलियाओ त्ति जदि घेप्पइ तो खुद्दाभवग्गहणं सासणद्धादो दुगुणमेत्तमागच्छइ। ण चेदमिच्छिज्जदे, सासणद्धादो संखेज्जगुणहेट्ठिमद्धाहिंतो एदस्स बहुत्तण्णहाणुववत्तीदो, एत्थावलियगुणगारबहुत्तब्भुवगमादो। तम्हा संखेज्जसहस्सकोडाकोडिमेत्ताहिं आवलियाहिं पादेक्कमसंखेज्जसमयावच्छिण्णपमाणाहि एगो उस्सासो णिप्पज्जदि। तस्स च देसूणट्ठारसभागमेत्तमेदं खुद्दाभवग्गहणमिदि घेत्तव्वं। तम्हा णवुंसयवेदोवसामणद्धादो खुद्दाभवग्गहणं विसेसाहियमिदि सुसंबद्धं।

* उवसंतद्धा दुगुणा।

§ ३१४. किं कारणं? खुद्दाभवग्गहणपमाणं ठविय दुगुणिदे उवसंतद्धा समुप्पज्जदि त्ति एदेणेव सुत्तेण सुपरिच्छियत्तादो।

* पुरिसवेदस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया।

§ ३१५. तं जहा—पुरिसवेदपढमट्ठिदी णाम णवुंसयवेदोवसामणद्धा इत्थिवेदोवसामणद्धा छण्णोकसायोवसामणा त्ति एदासिं तिण्हमद्धाणं समूहमेत्ती होदि। एदाओ च अद्धाओ जहाकमं विसेसहीणाओ। एवं च संते एत्थतणणवुंसयवेदोवसामणद्धादो विसेसाहियभावेण परिच्छिण्णखुद्धाभवग्गहणं पेक्खियूण दुगुणपमाणादो उवसंतकसायद्धादो तिण्हमेदासिमद्धाणं समूहमेत्ती पुरिसवेदपढमट्ठिदी विसेसाहिया त्ति णत्थि संदेहो देसूणदुभागमेत्तेण। तत्तो एदिस्से विसेसाहियभावस्स परिप्फुडमुवलंभादो।

जानना चाहिये। वह जैसे—एक उच्छ्वासके कालके भीतर सबसे कम दोसौ सोलह आवलियाँ यदि ग्रहण करते हैं तो सासादन गुणस्थानके कालसे क्षुल्लक भवग्रहण दुगुणा आता है। परन्तु यह इष्ट नहीं है, क्योंकि संख्यातगुणे अधस्तन कालरूप सासादन गुणस्थानके कालसे इसका बहुतपना अन्यथा बन नहीं सकता है, क्योंकि यहाँपर आवलिके गुणकारका बहुत्व स्वीकार किया गया है। इसलिये असंख्यात समयवाली एक आवलिके प्रमाणसे युक्त ऐसी संख्यात हजार कोड़ाकोड़ीप्रमाण आवलियोंके द्वारा एक उच्छ्वास निष्पन्न होता है और उसके कुछ कम अठारहवें भागप्रमाण यह क्षुल्लक भवग्रहण है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। इसलिए नपुंसकवेदके उपशामनाकालसे क्षुल्लक भवग्रहण विशेष अधिक है इस प्रकार यह सब कथन सुसम्बद्ध है।

* उपशान्तकाल दुगुणा है।

§ ३१४. क्योंकि क्षुल्लक भवग्रहणके प्रमाणको स्थापित कर दुगुणा करनेपर उपशान्तकाल उत्पन्न होता है इस प्रकार इसी सूत्रसे अच्छी तरह ज्ञात होता है।

* पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है।

§ ३१५. वह जैसे—नपुंसकवेदका उपशामनाकाल, स्त्रीवेदका उपशामनाकाल और छह नोकषायोंकी उपशामना इन तीनोंके समूहप्रमाण पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति होती है और ये काल क्रमसे विशेष अधिक हैं और ऐसा होनेपर यहाँपर नपुंसकवेदके उपशामनाकालसे विशेष अधिकरूपसे ज्ञात क्षुल्लक भवग्रहणको देखते हुए दुगुणे प्रमाणवाले उपशान्तकषायके कालसे इन तीन कालोंके समूहप्रमाण पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है इसमें कोई सन्देह नहीं, क्योंकि

*** कोहस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया ।**

§ ३१६. केत्तियमेत्तेण ? किंचूणतिभागमेत्तेण । कुदो ? कोहोवसामणद्धाए वि एत्थ पवेसदंसणादो ।

*** मोहणीयस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया ।**

§ ३१७. केत्तियमेत्तेण ? माणमायालोभाणमुवसामणद्धामेत्तेण ।

*** पडिवदमाणगस्स जाव असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा सो कालो संखेज्जगुणो ।**

§ ३१८. किं कारणं ? हेट्ठा णिवदमाणसुहुमसांपराइयमादिं कादूण अंतरकरणुद्देसादो हेट्ठा वीरियंतरायादीणि बारसकम्माणि सव्वघादीणि कादूण पुणो वि जाव संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गच्छंति ताव एत्तियमेत्तकालं पडिवदमाणगस्स असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा भवदि तेणेसो संखेज्जगुणो जादो, अंतरकरणादिउपरिमसेसद्धाणं पेक्खियूण संखेज्जगुणस्स हेट्ठिमद्धाणस्स पहाणभावेणेत्थ विवक्खियत्तादो ।

*** उवसामगस्स असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणाकालो विसेसाहिओ ।**

उससे कुछ कम द्वितीय भागरूपसे इसकी विशेष अधिक भावको स्पष्टरूपसे उपलब्धि होती है ।

*** क्रोधकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है ।**

§ ३१६. शंका—कितनी अधिक है ?

समाधान—कुछ कम तृतीय भागप्रमाण अधिक है, क्योंकि इसमें क्रोधके उपशामनाकालका भी प्रवेश देखा जाता है ।

*** मोहनीयकर्मका उपशामनाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३१७. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—जितना मान, माया और लोभका उपशामनाकाल है उतना अधिक है ।

*** गिरनेवाले जीवके जबतक असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा होती है तबतकका वह काल संख्यातगुणा है ।**

§ ३१८. क्योंकि नीचे गिरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिक जीवसे लेकर अन्तरकरणरूप स्थानसे नीचे वीर्यान्तराय आदि बारह कर्मोंको सर्वघाति करके फिर भी जबतक संख्यात हजार स्थितिबन्ध जाते हैं तबतक अर्थात् इतने कालपर्यन्त गिरनेवालेके असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा होती है इसलिये यह काल संख्यातगुणा हो जाता है, क्योंकि अन्तरकरण आदि उपरिम समस्त कालोंको देखते हुए संख्यातगुणा अधस्तनकाल प्रधानरूपसे यहाँपर विवक्षित है ।

*** उपशामकके असंख्यात समयप्रबद्धोंका उदीरणाकाल विशेष अधिक है ।**

§ ३१९. केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तमेत्तेण। किं कारणं ? चडमाणो जम्हि असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणमाढवेइ तम्हि समंतोमुहुत्तेण पावेयूण ओदरमाणयस्स असंखेज्जलोगपडिभागिया उदीरणा पारभदि। तेणेदस्स पुव्विल्लादो विसेसाहियभावो ण विरुज्झदे।

*** पडिवदमाणयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ३२०. किं कारणं ? हेट्ठिमासेसपदाणमणियट्टिअद्धाए असंखेज्जदिभागपडिभागत्तादो।

*** उवसामगस्स अणियट्टिअद्धा विसेसाहिया।**

§ ३२१. केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तमेत्तेण।

*** पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ३२२. कुदो ? अणियट्टिपरिणामावट्ठाणकालादो अपुव्वकरणावट्ठाणकालस्स तहाभावेणावट्ठिदत्तादो।

*** उवसामगस्स अपुव्वकरणद्धा विसेसाहिया।**

§ ३२३. सुगमं।

*** पडिवदमाणगस्स उक्कस्सओ गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ।**

---

§ ३१९. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अधिक है, क्योंकि चढ़नेवाला जीव जिस स्थानमें असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणाका आरम्भ करता है उस स्थानको अन्तर्मुहूर्तकाल द्वारा प्राप्त करके उतरनेवाले जीवके असंख्यात लोकके प्रतिभागके अनुसार उदीरणा प्रारम्भ होती है, इसलिए इसका पहलेके स्थानकी अपेक्षा विशेष अधिकपना विरोधको प्राप्त नहीं होता।

*** गिरनेवाले जीवका अनिवृत्तिकरणकाल संख्यातगुणा है।**

§ ३२०. क्योंकि अधस्तन समस्त पद अनिवृत्तिकरणकालके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रतिभागके अनुसार होते हैं।

*** उपशामकका अनिवृत्तिकरणकाल विशेष अधिक है।**

§ ३२१. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—अन्तर्मुहूमात्र अधिक है।

*** गिरनेवाले जीवका अपूर्वकरणकाल संख्यातगुणा है।**

§ ३२२. क्योंकि अनिवृत्तिकरण परिणामोंके अवस्थानकालसे अपूर्वकरणका अवस्थानकाल उस रूपसे अवस्थित है।

*** उपशामक जीवका अपूर्वकरणकाल विशेष अधिक है।**

३२३. यह सूत्र सुगम है।

*** गिरनेवाले जीवका उत्कृष्ट गुणश्रेणिनिक्षेप विशेष अधिक है।**

§ ३२४. एसो ओदरमाणसुहुमसांपराइयस्स पढमसमये गहेयव्वो। ण चेदस्स पुव्विल्लादो विसेसाहियभावो असिद्धो, ओदरमाणसुहुमाणियट्टि-अपुव्वकरणद्धाहिंतो उवसंतद्धाए संखेज्जदिभागमेत्तेणब्भहियस्सेदस्स तस्सेव विसेसाहियभावसिद्धीए बाहाणुवलंभादो।

*** उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमयगुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ।**

§ ३२५. एसो वि अपुव्वाणियट्टिसुहुमद्धाहिंतो अंतोमुहुत्तेणब्भहिओ, किंतु ओदरमाणद्धाहिंतो चडमाणद्धाणं विसेसाहियत्तमस्सियूण पुव्विल्लादो एदस्स विसेसाहियभावो समत्थेयव्वो।

*** उवसामगस्स कोधवेदगद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ३२६. किं कारणं? सेढीदो हेट्ठा चेव पुव्वमंतोमुहुत्तकालमप्पमत्तभावेण वट्टमाणस्स कोधवेदगकालेण सह अपुव्वाणियट्टिकरणेसु पडिबद्धकोहोदयकालस्स विवक्खियत्तादो।

*** अधापवत्तसंजदस्स गुणसेढिणिक्खेवो संखेज्जगुणो।**

§ ३२७. किं कारणं? हेट्ठा पडिवदमाणयेण अधापवत्तसंजदपढमसमये वट्टमाणेण पुव्विल्लगुणसेढिणिक्खेवायामादो संखेज्जगुणायामेण णिक्खित्तगुणसेढिणिक्खे-

---

§ ३२४. यह उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम समयका लेना चाहिये। और इसका पूर्वके कालसे विशेष अधिकपना असिद्ध नहीं है, उतरनेवालेके सूक्ष्मसाम्पराय, अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरणके कालसे उपशान्त कालके संख्यातवें भागमात्र अधिक इसके उसीके विशेष अधिकपनेकी सिद्धिमें बाधा नहीं पाई जाती।

*** उपशामक जीवके अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणश्रेणिनिक्षेप विशेष अधिक है।**

§ ३२५. यह भी अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायके कालसे अन्तर्मुहूर्त अधिक है, किन्तु उतरनेवालेके कालसे चढ़नेवालेका काल विशेष अधिक होता है इस प्रकार इस नियमका अवलम्बन लेकर पूर्व कालकी अपेक्षा यह विशेष अधिक है इस बातका समर्थन करना चाहिये।

*** उपशामक जीवका क्रोधवेदककाल संख्यातगुणा है।**

§ ३२६. क्योंकि श्रेणिसे नीचे ही पहले अन्तर्मुहूर्तकाल तक अप्रमत्तभावसे विद्यमान हुए जीवके क्रोधवेदनकालके साथ अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें प्राप्त हुआ क्रोधका उदयकाल प्रकृतमें विवक्षित है।

*** अधःप्रवृत्तसंयतका गुणश्रेणिनिक्षेप संख्यातगुणा है।**

§ ३२७. क्योंकि जो नीचे गिरता हुआ अधःप्रवृत्तसंयतके प्रथम समयमें विद्यमान है वह पूर्वमें कहे गये गुणश्रेणिनिक्षेपके आयामसे संख्यातगुणे आयामवाले गुणश्रेणिनिक्षेपको इसलिये

वस्स सत्थाणसंजमपरिणामपाहम्मेण तहाभावसिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो ।

❀ दंसणमोहणीयस्स उवसंतद्धा संखेज्जगुणा ।

§ ३२८. सुगममेदं । सेढिसमारोहणादो पुव्वं पच्छा च सेढिविसयसयलकाल-कलावादो संखेज्जगुणं कालमुवसमसम्मत्तद्धमणुपालेदि तेणेसा संखेज्जगुणा जादा ।

*** चारित्तमोहणीयमुवसामगो अंतरं करेंतो जाओ ट्ठिदीओ उक्कीरदि ताओ ठिदीओ संखेज्जगुणाओ ।**

§ ३२९. कुदो एदासिं चरित्तमोहणीयअंतरट्ठिदीणं पुव्विल्लादो संखेज्जगुणत्तं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो । तम्हा सुत्तसिद्धमेवेदं पडिवज्जेयव्वं ।

❀ दंसणमोहणीयस्स अंतरट्ठिदीओ संखेज्जगुणाओ ।

§ ३३०. एदं पि सुत्तसिद्धमेव गहेयव्वमिदि ण एत्थ किंचि वत्तव्वमत्थि ।

*** जहण्णिया आबाहा संखेज्जगुणा ।**

§ ३३१. एसा कत्थ गहेयव्वा ? णाणावरणादिकम्माणमुवसामगस्स सुहुम-सांपराइयस्स चरिमसमये घेत्तव्वा । मोहणीयस्स पुण अणियट्टिउवसामगचरिमट्ठिदि-बंधविसये गहेयव्वा । एसा च अंतरायामादो उवरि संखेज्जगुणमद्धाणं बोलेयूण ट्ठिदा त्ति एदम्हादो चेव सुत्तादो णव्वदे ।

निक्षिप्त करता है, क्योंकि उसके स्वस्थान संयमरूप परिणामोंके माहात्म्यवश उस प्रकारसे सिद्धि होनेमें कोई बाधा नहीं पाई जाती है ।

*** दर्शनमोहनीयका उपशान्तकाल संख्यातगुणा है ।**

३२८. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि यह श्रेणि आरोहणके पूर्व और बादमें श्रेणिविषयक समस्त कालसमूहसे संख्यातगुणे कालतक उपशमसम्यक्त्वका पालन करता है, इसलिए यह काल संख्यातगुणा हो जाता है ।

*** चारित्रमोहनीयकी उपशामना करनेवाला जीव अन्तरको करता हुआ जिन स्थितियोंकी उत्कीरणा करता है वे स्थितियाँ संख्यातगुणी हैं ।**

३२९. शंका—ये चारित्रमोहनीयकी अन्तरसम्बन्धी स्थितियाँ पूर्वके कालसे संख्यातगुणी होती हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है, इसलिए इस कथनको सूत्रसिद्ध ही जानना चाहिये ।

*** दर्शनमोहनीयकी अन्तरसम्बन्धी स्थितियाँ संख्यातगुणी हैं ।**

§ ३३०. इस कथनको भी सूत्रसिद्ध ही ग्रहण करना चाहिये, इसलिये इस विषयमें कुछ भी वक्तव्य नहीं है ।

*** जघन्य आबाधा संख्यातगुणी है ।**

§ ३३१. शंका—इसे किस स्थानकी ग्रहण करना चाहिये ?

समाधान—उपशम करनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी जो आबाधा प्राप्त होती है उसे यहाँ ग्रहण करना चाहिये । यह अन्तरायामसे ऊपर

❀ उक्कस्सिया आबाहा संखेज्जगुणा।

§ ३३२. एसा सव्वकम्माणं पि ओदरमाणापुव्वकरणचरिमसमये अंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिबंधस्स तप्पाओग्गंतोमुहुत्तपमाणा गहेयव्वा।

❀ उवसामगस्स मोहणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।

§ ३३३. एसो अंतोमुहुत्तपमाणो अणियट्टिउवसामगचरिमसमये घेत्तव्वो।

❀ पडिवदमाणयस्स मोहणीयस्स जहण्णओ ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।

§ ३३४. एसो वि अंतोमुहुत्तपमाणो चेव, किंतु ओदरमाणाणियट्टिपढमसमये पुव्विल्लादो दुगुणमेत्तो भवदि तदो संखेज्जगुणो।

❀ उवसामगस्स णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं जहण्णट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।

§ ३३५. चडमाणसुहुमसांपराइयचरिमसमये एदेसिं जहण्णट्ठिदिबंधो घेत्तव्वो। कथमेदस्स पुव्विल्लादो संखेज्जगुणत्तं ? ण, मोहणीयस्सेव सेसघादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो, मरणवसेण सुट्ठु घादासंभवादो।

❀ एदेसिं चेव कम्माणं पडिवदमाणयस्स जहण्णगो ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।

संख्यातगुणे स्थानको बिताकर स्थित है, यह इसी सूत्रसे जाना जाता है।

❀ उत्कृष्ट आबाधा संख्यातगुणी है।

§ ३३२. उतरनेवाले जीवके अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें सब कर्मोंकी अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिबन्धकी तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्तप्रमाण यह लेनी चाहिये।

❀ उपशामकके मोहनीयका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।

§ ३३३. अन्तर्मुहूर्तप्रमाण यह स्थितिबन्ध अनिवृत्तिकरण उपशामकके अन्तिम समयमें लेना चाहिये।

❀ गिरनेवाले जीवके मोहनीयका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।

§ ३३४. यह भी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण ही है, किन्तु उतरनेवाले अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें प्राप्त होकर पूर्वके स्थानसे दुगुणा है, इसलिए संख्यातगुणा है।

❀ उपशामकके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।

§ ३३५. चढ़नेवाले जीवके सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें इन कर्मोंका जघन्य स्थितिबन्ध लेना चाहिये।

शंका—यह पूर्व स्थानके कालसे संख्यातगुणा कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि शेष घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध मोहनीय कर्मके समान ही है, क्योंकि मरणके कारण उसका अच्छी तरह घात नहीं होता।

❀ गिरनेवाले जीवके इन्हीं कर्मोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।

§ ३३६. कुदो ? ओदरमाणसुहुमसांपराइयपढमसमयजहण्णट्ठिदिबंधस्स तत्तो दुगुणत्तोवलंभादो ।

*** अंतोमुहुत्तो संखेज्जगुणो ।**

§ ३३७. कुदो ? समयूणमुहुत्तपमाणत्तादो । अंतदीवयभावेणहेट्ठिमासेसपदाणमंतोमुहुत्तभावपदुप्पायणट्ठमेदमेत्थ भणिदमिदि घेत्तव्वं ।

*** उवसामगस्स जहण्णगो णामागोदाणं ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।**

§ ३३८. कुदो ? सोलसमुहुत्तपमाणत्तादो ।

*** वेदणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।**

§ ३३९. सोलसमुहुत्तपमाणत्तादो पुव्विल्लादो चउवीसमुहुत्तपमाणस्सेदस्स विसेसाहियत्तसिद्धीए विसंवादाभावादो ।

*** पडिवदमाणगस्स णामागोदाणं जहण्णगो ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ ३४०. कुदो ? बत्तीसमुहुत्तपमाणत्तादो ।

*** तस्सेव वेदणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।**

§ ३४१. कुदो ? अट्ठेदालीसमुहुत्तपमाणत्तादो ।

*** उवसामगस्स मायासंजलणस्स जहण्णट्ठिदिबंधो मासो ।**

---

§ ३३६. क्योंकि उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम समयमें होनेवाला स्थितिबन्ध पूर्व स्थानके स्थितिबन्धसे दुगुणा उपलब्ध होता है ।

*** अन्तमुर्हूर्त संख्यातगुणा है ।**

§ ३३७. क्योंकि इसका प्रमाण एक समय कम एक अन्तमुर्हूर्त है। अन्तदीपकरूपसे अधस्तन समस्त पद अन्तमुर्हूर्तप्रमाण हैं इस बातका कथन करनेके लिये इस सूत्रका यहाँपर निर्देश किया है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये ।

*** उपशामक जीवके नाम और गोत्र कर्मका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।**

§ ३३८. क्योंकि उसका प्रमाण सोलह मुहूर्त है ।

*** वेदनीयकर्मका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।**

§ ३३९. पूर्वके सोलह मुहूर्तप्रमाण स्थितिबन्धसे इसके चौबीस मुहूर्तप्रमाण स्थितिबन्धके विशेष अधिकरूपसे सिद्ध होनेमें विसंवाद नहीं पाया जाता ।

*** गिरनेवाले जीवके नाम ओर गोत्रकर्मका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।**

§ ३४०. क्योंकि वह बत्तीस मुहूर्तप्रमाण है ।

*** उसीके वेदनीयकर्मका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।**

§ ३४१. क्योंकि वह अड़तालीस मुहूर्तप्रमाण है ।

*** उपशामकके मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध एक मास है ।**

❀ तस्सेव पडिवदमाणगस्स जहण्णओ ट्ठिदिबंधो वे मासा ।

❀ उवसामगस्स माणसंजलणस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो वे मासा ।

❀ पडिवदमाणयस्स तस्सेव जहण्णगो ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा ।

❀ उवसामगस्स कोहसंजलणस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा ।

❀ पडिवदमाणगस्स तस्सेव जहण्णगो ठिदिबंधो अट्ठ मासा ।

❀ उवसामगस्स पुरिसवेदस्स जहण्णगो ठिदिबंधो सोलस वस्साणि ।

❀ तस्समये चेव संजलणाणं ठिदिबंधो बत्तीस वस्साणि ।

❀ पडिवदमाणगस्स पुरिसवेदस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो बत्तीस वस्साणि ।

❀ तस्समये चेव संजलणाणं ठिदिबंधो चदुसट्ठिवस्साणि ।

§ ३४२. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । णवरि सरूवणिद्देसमुहेणेव थोवबहुत्तभेदेसिं जाणाविदमिदि घेत्तव्वं, तदवगयस्स तण्णांतरीयत्तादो ।

❀ उवसामगस्स पढमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।

§ ३४३. कुदो ? अंतरकदपढमसमए वट्टमाणस्स उवसामगस्स संखेज्जवस्ससहस्समेत्तकालाढत्तट्ठिदिबंधस्स गहणादो ।

❀ गिरनेवाले उसीके मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध दो मास है ।

❀ उपशामकके मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध दो मास है ।

❀ गिरनेवाले उसीके मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध चार मास है ।

❀ उपशामकके क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध चार मास है ।

❀ गिरनेवाले उसीके क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध आठ मास है ।

❀ उपशामकके पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध सोलह वर्ष है ।

❀ उसी समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध बत्तीस वर्ष है ।

❀ गिरनेवालेके पुरुषवेदका जघन्य स्थितिभन्ध बत्तीस वर्ष है ।

❀ उसी समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध चौंसठ वर्ष है ।

§ ३४२. ये सूत्र सुगम है । इतनी विशेषता है कि स्वरूपके निर्देशके द्वारा ही इन कर्मोंके अल्पबहुत्वका ज्ञान कराया है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि उसका ज्ञान उसका अविनाभावी है ।

❀ उपशामकके मोहनीकर्मका संख्यात वर्ष स्थितिवाला प्रथम स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है ।

§ ३४३. क्योंकि अन्तर किये जानेके प्रथम समयमें स्थित उपशामकके तत्काल आरम्भ

*** पडिवदमाणगस्स चरिमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो मोहणीयस्स ट्ठिदि-बंधो संखेज्जगुणो ।**

§ ३४४. किं कारणं ? पडिवदपाहम्मेण तस्स तहाभावसिद्धीए बाहाणुवलंभादो। जहा अइकंतसव्वसंधीसु चडमाणट्ठिदिबंधादो ओदरमाणट्ठिदिबंधो समाणविसये दुगुणो जादो ण तहा एत्थ दुगुणत्तणियमो । किंतु तप्पाओग्गसंखेज्जरूवमेत्तो गुणगारो एत्थ घेत्तव्वो। एत्तो पाये संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधसंधीए संखेज्जगुणो असंखेज्जवस्सियट्ठिदि-बंधसंधीए असंखेज्जगुणो त्ति पडिवदमाणविसयट्ठिदिबंधस्स पवुत्तिदंसणादो।

*** उवसामगस्स णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं पढमो संखेज्ज-वस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो ।**

§ ३४५. कुदो ? मोहणीयस्सेव एदेसिं सुट्ठु ट्ठिदिबंधोसरणासंभवादो ।

*** पडिवदमाणयस्स तिण्हं घादिकम्माणं चरिमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो ।**

§ ३४६. सुगमं ।

*** उवसामगस्स णामागोदवेदणीयाणं पढमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो ।**

होनेवाले संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका प्रकृतमें ग्रहण किया है।

*** गिरनेवाले जीवके मोहनीयकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण अन्तिम स्थितिवाला स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ ३४४. क्योंकि पतनके माहात्म्यवश उसके उक्त प्रकारसे सिद्ध होनेमें कोई बाधा नहीं पाई जाती। जिस प्रकार व्यतीत हुए सभी सन्धिस्थानोंमें चढ़नेवालेके स्थितिबन्धसे उतरनेवालेका स्थितिबन्ध समान स्थानमें दुगुणा हो जाता है उस प्रकार यहाँ दुगुणेपनका नियम नहीं है। किन्तु तत्प्रायोग्य संख्यात अंकप्रमाण गुणकार यहाँ ग्रहण करना चाहिये । यहाँसे लेकर संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धविषयक सन्धिमें संख्यातगुणा और असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धविषयक सन्धिमें असंख्यातगुणा गुणकार होता है, इस प्रकार गिरनेवालेके स्थितिबन्धकी प्रवृत्ति देखी जाती है।

*** उपशामक जीवके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मोंका प्रथम संख्यात वर्षकी स्थितिवाला बन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ ३४५. क्योंकि मोहनीयकर्मके समान इनके अति बड़ा स्थितिबन्धापसरण असम्भव हैं।

*** गिरनेवाले जीवके तीन घातिकर्मोंका अन्तिम संख्यात वर्षकी स्थितिवाला बन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ ३४६. यह सूत्र सुगम है।

*** उपशामक जीवके नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका प्रथम संख्यात वर्षकी स्थितिवाला बन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ ३४७. किं कारणं ? सत्तणोकसायाणमुवसामणद्धाए संखेज्जदिभागविसये एदेसिं संखेज्जवस्सियपढमट्ठिदिबंधस्स विसेसघादेण विणा समुप्पत्तिदंसणादो।

⊛ पडिवदमाणगस्स णामागोदवेदणीयाणं चरिमो संखेज्जवस्सट्ठिदिओ बंधो संखेज्जगुणो।

§ ३४८. सुगमं।

⊛ उवसामगस्स चरिमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो मोहणीयस्स असंखेज्जगुणो।

§ ३४९. किं कारणं ? अंतरकरणद्धासमकालभाविट्ठिदिबंधस्स असंखेज्जवस्ससहस्सपमाणस्स एत्थ गहणादो।

⊛ पडिवदमाणगस्स पढमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो मोहणीयस्स असंखेज्जगुणो।

§ ३५०. किं करणं ? अणंतरपरूविदविसयमंतोमुहुत्तेण पत्तस्सेव पडिवादपाहम्मेण पुव्विल्लादो असंखेज्जगुणमेत्तट्ठिदिबंधस्स पवुत्तिदंसणादो।

⊛ उवसामगस्स घादिकम्माणं चरिमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो असंखेज्जगुणो।

§ ३५१. कत्थ एसो घेत्तव्वो ? इत्थिवेदोवसामणद्धाए संखेज्जदिभागं गंतूण

---

§ ३४७. क्योंकि सात नोकषायोंके उपशामनाकालके संख्यातवें भागरूप स्थानमें इन कर्मोंके संख्यात वर्षप्रमाण प्रथम स्थितिबन्धकी विशेष घातके बिना उत्पत्ति देखी जाती है।

⊛ गिरनेवाले जीवके नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका अन्तिम संख्यात वर्षकी स्थितिवाला बन्ध संख्यातगुणा है।

§ ३४८. यह सूत्र सुगम है।

⊛ उपशामक जीवके मोहनीयकर्मका असंख्यात वर्षकी स्थितिवाला अन्तिम स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है।

§ ३४९. क्योंकि अन्तरकरणकालके समान कालमें होनेवाले असंख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्धको यहाँ ग्रहण किया है।

⊛ गिरनेवाले जीवके मोहनीयकर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है।

§ ३५०. क्योंकि अनन्तर कहे गए स्थानको अन्तर्मुहूर्तके द्वारा प्राप्त हुए जीवके ही पतनके माहात्म्यवश पूर्व स्थानसे असंज्यातगुणित स्थितिबन्धकी प्रवृत्ति देखी जाती है।

⊛ उपशामक जीवके घातिकर्मोंका अन्तिम असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है।

§ ३५१. शंका—इसे कहाँ ग्रहण करना चाहिये ?

संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधपारंभादो पुव्विल्लो एसो ट्ठिदिबंधो गहेयव्वो । सुगममण्णं ।

*** पडिवदमाणयस्स पढमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो घादिकम्माणमसंखेज्जगुणो ।**

§ ३५२. ओदरमाणयस्स अंतरपरूविदमुद्देसमंतोमुहुत्तेण अपावेयूणेसो ट्ठिदिबंधो गहेयव्वो । सेसं सुगमं ।

*** उवसामगस्स णामागोदवेदणीयाणं चरिमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो असंखेज्जगुणो ।**

§ ३५३. सत्तणोकसायाणमुवसामणद्धाए संखेज्जदिभागे जम्हि उद्देसे एदेसिं संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधपारंभो तत्तो अणंतरहेट्ठिमट्ठिदिबंधो एसो त्ति गहेयव्वो । सुगममण्णं ।

*** पडिवदमाणगस्स णामागोदवेदणीयाणं पढमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो असंखेज्जगुणो ।**

§ ३५४. एसो ओदरमाणयस्स अणंतरणिद्दिट्ठमुद्देसं थोवंतरेण ण पत्तस्स तदवत्थाए गहेयव्वो । सुगममण्णं ।

*** उवसामगस्स णामगोदाणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिओ पढमो ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो ।**

समाधान—स्त्रीवेदके उपशामनाकालका संख्यातवाँ भाग जाकर संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धके प्रारम्भ होनेके पहले इस स्थितिबन्धको ग्रहण करना चाहिये । अन्य कथन सुगम है ।

*** गिरनेवाले जीवके घातिकर्मोंका असंख्यात वर्षप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।**

§ ३५२. अनन्तर कहे गए स्थानको अन्तर्मुहूर्तकालके द्वारा नहीं प्राप्त करके उतरनेवाले जीवके इस स्थितिबन्धको ग्रहण करना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

*** उपशामक जीवके नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण अन्तिम स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।**

§ ३५३. सात नोकषायोंके उपशामनाकालके संख्यातवें भागप्रमाण कालके जानेपर जिस स्थानमें इन कर्मोंके संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका प्रारम्भ होता है उससे अनन्तर अधस्तन यह स्थितिबन्ध है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । अन्य कथन सुगम है ।

*** गिरनेवाले जीवके नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।**

§ ३५४. अनन्तर निर्दिष्ट स्थानको थोड़ेसे अन्तरके द्वारा नहीं प्राप्त हुए उतरनेवाले जीवके उस अवस्थामें इसे ग्रहण करना चाहिये । अन्य कथन सुगम है ।

*** उपशामक जीवके नाम और गोत्रकर्मका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।**

§ ३५५. एवं भणिदे जम्मि पलिदोवमट्ठिदिबंधादो संखेज्जे भागे हाइदूण पलिदो० संखे०भागिओ पढमो ट्ठिदिबंधो जादो सो गहेयव्वो ।

✱ णाणावरण-दंसणावरण-वेदणीय-अंतराइयाणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिगो पढमो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

§ ३५६. एसो वि पुव्वुत्तविसये चेव गहिदो, किंतु अप्पणो पडिभागेण विसेसाहिओ जादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? दुभागमेत्तो ।

✱ मोहणीयस्स पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिगो पढमो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

§ ३५७. एसो वि पुव्वुत्तविसए चेव गहेयव्वो । णवरि ट्ठिदिविसेसमस्सियूण विसेसाहिओ जादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? तिभागमेत्तो ।

✱ चरिमट्ठिदिखंडयं संखेज्जगुणं ।

§ ३५८. एवं भणिदे णाणावरणादिकम्माणं सुहुमसांपराइयचरिमट्ठिदिखंडयस्स गहणं कायव्वं । मोहणीयस्स पुण अंतरकरणसमकालभाविओ चरमट्ठिदिखंडओ गहेयव्वो । एसो वि पलिदोवमस्स संखेज्जभागमेत्तो चेव होदूण पुव्विल्लादो संखेज्ज-

---

§ ३५५. ऐसा कहनेपर पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धसे संख्यात बहुभागको कम कर जिस स्थानमें पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध हो जाता है उसे ग्रहण करना चाहिये ।

✱ ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तरायकर्मोंका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

§ ३५६. इसे भी पूर्वोक्त स्थानमें ही ग्रहण करना चाहिये, किन्तु अपने प्रतिभागके अनुसार विशेष अधिक हो जाता है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—विशेषका प्रमाण द्वितीय भाग है ।

✱ मोहनीयकर्मका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

§ ३५७. इसे भी पूर्वके स्थानमें ही ग्रहण करधा चाहिये । इतनी विशेषता है कि स्थितिविशेषकी अपेक्षा यह विशेष अधिक हो जाता है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—तीसरे भागप्रमाण विशेष है ।

✱ अन्तिम स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा है ।

§ ३५८. ऐसा कहनेपर सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके ज्ञानावरणादि कर्मोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण करना चाहिये । परन्तु मोहनीयकर्मके अन्तरकरणके समान कालमें होनेवाले अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण करना चाहिये । यह भी पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होकर ही

गुणो जादो। कुदो एवं णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तणिद्देसादो।

❀ **जाओ ठिदीओ परिहाइदूण पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो ताओ ठिदीओ संखेज्जगुणाओ।**

§ ३५९. एदाओ वि पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव, किंतु पुव्विल्लादो एदाओ संखेज्जगुणाओ। कुदो एदं णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो।

❀ **पलिदोवमं संखेज्जगुणं।**

§ ३६०. पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागादो पुव्विल्लादो संपुण्णपलिदोवमस्सेदस्स संखेज्जगुणत्तसिद्धीए विसंवादाभावादो।

❀ **अणियट्टिस्स पढमसमये ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।**

§ ३६१. किं कारणं? अणियट्टिकरणोवसामगस्स पढमसमए सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमेत्तट्ठिदिबंधोवलंभादो।

❀ **पडिवदमाणयस्स अणियट्टिस्स चरिमसमए ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।**

§ ३६२. सुगमं।

पूर्वके कालसे संख्यातगुणा हो जाता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—सूत्रोक्त इसी निर्देशसे जाना जाता है।

❀ **जिन स्थितियोंको कम करके पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है वे स्थितियाँ संख्यातगुणी हैं।**

§ ३५९. ये स्थितियाँ भी पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण ही हैं, किन्तु पूर्वके स्थानसे ये संख्यातगुणी हैं।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

❀ **पल्योपम संख्यातगुणा है।**

§ ३६०. पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण पूर्वके स्थानसे सम्पूर्ण पल्योपमप्रमाण इस स्थानके संख्यातगुणे सिद्ध होनेमें विसंवादका अभाव है।

❀ **अनिवृत्तिकरण जीवके प्रथम समयमें स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।**

§ ३६१. क्योंकि अनिवृत्तिकरण उपशामकके प्रथम समयमें लक्षपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण स्थितिबन्ध पाया जाता है।

❀ **गिरनेवाले अनिवृत्तिकरण जीवके अन्तिम समयमें स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।**

§ ३६२. यह सूत्र सुगम है।

*** अपुव्वकरणस्स पढमसमए ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।**

§ ३६३. कुदो ? अंतोकोडाकोडीपमाणत्तादो ।

*** पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।**

§ ३६४. को गुणगारो ? दोरूवमेत्तो तप्पाओग्गसंखेज्जरूवमेत्तो वा ।

*** पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं ।**

§ ३६५. किं कारणं ? अंतोकोडाकोडिपमाणत्ताविसेसे वि सम्माइट्ठिम्मि बंधादो संतस्स संखेज्जगुणभावेणेव सव्वद्धमवट्ठाणदंसणादो ।

*** पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमए ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं ।**

§ ३६६. एवं भणिदे हेट्ठा ओदरमाणस्स ट्ठिदिखंडयघादो णत्थि तेण अधट्ठिदीए गलिदअंतोमुहुत्तमेत्तं पविसियूण विसेसाहियमेदं जादं, समयूणापुव्वकरणद्धामेत्तीणं ट्ठिदीणमेत्थ पवेसदंसणादो ।

*** पडिवदमाणयस्स अणियट्टिस्स चरिमसमए ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं ।**

§ ३६७. केत्तियमेत्तेण ? एगट्ठिदिमेत्तेण ।

*** अपूर्वकरण जीवके प्रथम समयमें स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ ३६३. क्योंकि यह अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण है ।

*** गिरनेवाले अपूर्वकरण जीवके अन्तिम समयमें स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है ।**

§ ३६४. शंका—गुणकार क्या है ?

समाधान—दो अंकप्रमाण है अथवा तत्प्रायोग्य संख्यात अंकप्रमाण है ।

*** गिरनेवाले अपूर्वकरण जीवके अन्तिम समयमें स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है ।**

§ ३६५. क्योंकि अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाणपनेकी अपेक्षा विशेषता न होनेपर भी सम्यग्दृष्टि जीवके बन्धकी अपेक्षा सत्त्वके सर्वकालमें संख्यातगुणेरूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

*** गिरनेवाले अपूर्वकरण जीवके प्रथम समयमें स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है ।**

§ ३६६. ऐसा कहनेपर नीचे उतरनेवाले जीवके स्थितिकाण्डकघात नहीं होता, इसलिए अधःस्थितिरूपसे गलित अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितियोंको प्रवेश कराकर यह सत्त्व विशेष अधिक हो जाता है, क्योंकि इस स्थानमें एक समय कम अपूर्वकरणके कालप्रमाण स्थितियोंका प्रवेश देखा जाता है ।

*** गिरनेवाले अनिवृत्तिकरण जीवके अन्तिम समयमें स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है ।**

§ ३६७. शंका—कितना अधिक है ?

❀ उवसामगस्स अणियट्टिस्स पढमसमए ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ ३६८. किं कारणं ? अणियट्टिकरणपरिणामेहिं अपत्तघादत्तादो।

❀ उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं।

§ ३६९. केत्तीयमेत्तेण ? पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्तापुव्वकरणचरिमट्ठिदिखंडयमेत्तेण।

❀ उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमए ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ ३७०. किं कारणं ? अपुव्वकरणपढमसमयट्ठिदिसंतकम्मादो संखेज्जसहस्समेत्तेहिं ट्ठिदिखंडएहिं संखेज्जेसु भागेसु घादिदेसु लद्धमप्पसरूवं पुव्विल्लमेदं पुण अपुव्वकरणपढमसमयट्ठिदिसंतकम्ममपत्तघादं तेण संखेज्जगुणं जादं। एवमेत्तिएण पबंधेण 'दंसणचरित्तमोहे अद्धापरिमाणणिद्देसो' त्ति एदं गाहासुत्तावयवबीजपदमवलंबियूण पयदप्पाबहुअं परूविय संपहि पडिवदमाणसंबंधीणं चदुण्हं गाहासुत्ताणमणुभासणमेत्तो कायव्वमिदि पदुप्पाणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ एत्तो पडिवदमाणयस्स चत्तारि सुत्तगाहाओ अणुभासियव्वाओ।

समाधान—एक स्थितिमात्र अधिक है।

❀ उपशामक अनिवृत्तिकरण जीवके प्रथम समयमें स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ ३६८. क्योंकि अनिवृत्तिकरण परिणामोंसे उसका घात नहीं हुआ है।

❀ उपशामक अपूर्वकरण जीवके अन्तिम समयमें स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ ३६९. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें जो पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डक होता है उतना अधिक है।

❀ उपशामक अपूर्वकरण जीवके प्रथम समयमें स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ ३७०. क्योंकि अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जो स्थितिसत्कर्म होता है उसमेंसे संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके द्वारा संख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिसत्कर्मका घात हो पर अपने स्वरूपको प्राप्त हुए पूर्वके स्थानका इतना स्थितिसत्कर्म शेष रहता है, परन्तु अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जो स्थितिसत्कर्म है उसका अभी घात नहीं हुआ है, इसलिए पूर्वके स्थानसे यह संख्यातगुणा हो जाता है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा 'दंसणचरित्तमोहे अद्धापरिमाणणिद्देसो' इस प्रकार गाथासूत्रके इस पदका अवलम्बन लेकर प्रकृत अल्पबहुत्वका कथन करके अब गिरनेवाले जीवसे सम्बन्ध रखनेवाली चार गाथासूत्रोंका व्याख्यान इसके आगे करना चाहिये इस बातका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ इसके आगे गिरनेवाले जीवकी अपेक्षा चार सूत्रगाथाओंका विशेष व्याख्यान करना चाहिये।

§ ३७१. एदाओ सुत्तगाहाओ हियये कादूण सव्वा एसा पडिवदमाणयस्स परूवणा कया। संपहि तेसिं चेव चउण्हं सुत्तगाहाणमवयवत्थपरामरसमुहेण किंवा अणुभासणं कायव्वमिदि वुत्तं होदि। सो वुण गाहासुत्ताणमवयवत्थपरामरसो सुगमो त्ति ण पुणो परूविज्जदे, जाणिदजाणावणे फलविसेसाणुवलंभादो। एवमेदासु गाहासु अणुभासिदासु तदो चरित्तमोहोवसामणाए पडिबद्धाणमट्ठण्हं सुत्तगाहाणं अत्थविहासा समत्ता भवदि।

तदो उवसामणा समत्ता भवदि।

---

§ ३७१. इन सूत्रगाथाओंको हृदयमें धारण करके गिरनेवाले जीवके यह सब प्ररूपणा की। अब उन्हीं चार सूत्रगाथाओंके अंवयवार्थकी प्ररूपणाका अवसर होनेसे विशेष व्याख्यान करना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु उन गाथासूत्रोंके अवयवार्थका विशेष परामर्श सुगम है, इसलिये पुनः प्ररूपणा नहीं करते हैं, क्योंकि जाने हुएका ज्ञान करानेमें विशेष फल नहीं पाया जाता। इस प्रकार इन गाथाओंको अनुभाषित करनेपर चारित्रमोहोपशामनासे सम्बन्ध रखनेवाली आठ सूत्रगाथाओंकी अर्थविभाषा समाप्त होती है।

विशेषार्थ—'पडिवादो च कदिविधो' इत्यादि चार सूत्रगाथाएँ हैं जिनका यथावसर व्याख्यान कर आये हैं, इसलिए उनका यहाँ पुनः व्याख्यान नहीं किया गया है। वे गाथाएँ भाग १३, पृ० १९४ और १९५ पर देखनी चाहिये।

इस प्रकार चारित्रमोहउपशामक नामका चौदहवाँ अर्थाधिकार समाप्त हुआ।

सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

कसायपाहुडं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

चारित्तमोहक्खवणा णाम पंचदसमो अत्थाहियारो

—:❀:—

[चारित्तमोहक्खवणेत्ति अणियोगद्दारं]

मुणियपरमत्थवित्थरमुणिवरवीरेहिं सिद्धविज्जेहिं ।
जा संथुआ भयवदी पसियउ सुयदेवया मज्झं ॥१॥
सुसुदेवयाए भत्ती सुदोवजोगोवभाविओ सम्मं ।
आवहइ णाणसिद्धिं णाणफलं चावि णिव्वाणं ॥२॥
तो सुअदेवयमिणमो तिक्खुत्तो पणमियूण भत्तीए ।
वोच्छामि जहासुत्तं चारित्तमोहस्स खवणविहिं ॥३॥

जो सब विद्याओंमें निष्णात थे और जिन्होंने परमार्थका सांगोपांग मनन किया था उन मुनिवर वीरसेन द्वारा जिस भगवती श्रुतदेवताकी स्तुति की गई वह श्रुतदेवता मुझ (जिनसेन) पर प्रसन्न होओ ॥१॥

जो श्रुतोपयोगसे सम्यक् प्रकार भावित होकर श्रुतदेवताकी भक्तिका आह्वान करता है वह सम्यग्ज्ञानकी सिद्धिपूर्वक सम्यग्ज्ञानके फलस्वरूप निर्वाणको प्राप्त करता है ॥२॥

अतः मन, वचन और कायसे इस श्रुतदेवताको भक्तिपूर्वक प्रणाम करके सूत्रके अनुसार चारित्रमोहक्षपणा विधिको कहता हूँ ॥३॥

*** चारित्तमोहणीयस्स खवणाए अधापवत्तकरणद्धा अपुव्वकरणद्धा अणियट्टिकरणद्धा च एदाओ तिण्णि वि अद्धाओ एगसंबधाओ एगावलियाए ओट्टिदव्वाओ ।**

§ १. कसायोवसामणापरूवणाणंतरमेत्तो चारित्तमोहक्खवणाए पयदमिदि पदुप्पायणफलो 'चरित्तमोहणीयस्स खवणाए' त्ति सुत्तावयवो। सा पुण चरित्तमोहणीयस्स खवणा दंसणमोहक्खवणाविणाभाविणी तक्खयमणभिधाय खवगसेढिसमारोहणासंभवादो। सा पि दंसणमोहणीयक्खवणा अणंताणुबंधिविसंजोयणापुरस्सरा चेव, अण्णहा तप्पवुत्तीए अणुवलंभादो। तदो दोण्हमेदासिं किरियाणमेत्थ पुव्वमेव विहासा कायव्वा; परिभासत्थविहासाए विणा पयदत्थविहासाए सुसंबद्धत्ताणुववत्तीदो। तासिं च विहासा अप्पप्पणो अहियारे पुव्वमेव वित्थरेण परूविदा त्ति ण पुणो एत्थ परूविज्जदे गंथगउरवभएण। तदो तदुभयविसयं किरियाविसेसं समाणिय पुणो खवगसेढिसमारोहणट्ठं पमत्तापमत्तगुणट्ठाणेसु सादासादबंधपरावत्तसहस्साणि कादूण खवगसेढिपाओग्गविसोहीए विसुज्झयूण खवगसेढिमारुहमाणयस्स एदाओ तिण्णि अद्धाओ विसुद्धपरिणामपंतिघडिदाओ पुव्वमेव ओट्टिदव्वाओ, एदाहिं विणा खवगोवसामणादिसव्वकिरियाणं पउत्तीए असंभवादो।

*** चारित्रमोहनीयकर्मकी क्षपणामें अधःप्रवृत्तकरणकाल, अपूर्वकरणकाल और अनिवृत्तिकरणकाल इन तीनों ही कालोंकी परस्पर सम्बद्ध ऊर्ध्व एक श्रेणिरूपसे रचना करनी चाहिये ।**

§ १. कषायोंकी उपशामनाकी प्ररूपणाके अनन्तर आगे चारित्रमोहनीयक्षपणा नामक अधिकार प्रकृत है इस बातका कथन करनेके लिये 'चरित्तमोहणीयस्स खवणाए' यह सूत्र वचन आया है। परन्तु वह चारित्रमोहनीयकी क्षपणा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाकी अविनाभाविनी है, क्योंकि उसका क्षय किये विना क्षपकश्रेणिपर आरोहण करना असम्भव है और वह दर्शनमोहनीयकी क्षपणा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनापूर्वक ही होती है, अन्यथा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाप्रवृत्ति नहीं पाई जाती, इसलिये इन दोनों ही क्रियाओंकी यहाँपर पहले ही विभाषा करनी चाहिये, क्योंकि परिभाषित अर्थकी विभाषा किये बिना प्रकृत अर्थकी विभाषा सुसम्बद्ध नहीं बन सकती। किन्तु उन दोनोंकी विभाषा अपने-अपने अधिकारमें पहले ही कर आये हैं (देखो पु० १३ पृ० १ से लेकर १०३ तक तथा पृ० १९८ से लेकर २०१ तक), इसलिये ग्रन्थके बढ़ जानेके भयसे यहाँ उनकी पुनः प्ररूपणा नहीं की जाती है। अतः उन दोनोंको विषय करनेवाले क्रियाविशेषको समाप्त कर पुनः क्षपकश्रेणिपर आरोहण करनेके लिये प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत गुणस्थानोंमें साता-असाताबन्धके हजारों परावर्तन करके क्षपकश्रेणिके योग्य विशुद्धिसे विशुद्ध होकर क्षपकश्रेणिपर आरोहण करनेवाले जीवके विशुद्ध परिणामोंकी पंक्तिरूपसे घटित इन तीनों कालोंकी सर्वप्रथम रचना करनी चाहिये, क्योंकि इन परिणामोंके बिना क्षपणा और उपशमनारूप सभी क्रियाओंकी प्रवृत्ति होना असम्भव है।

§ २. तत्थ पढमा अधापवत्तकरणद्धा, विदिया अपुव्वकरणद्धा तदिया च अणियट्टिकरणद्धा त्ति । एदासिं पादेक्कमंतोमुहुत्तपमाणावच्छिण्णाणं समयभावेणेगसेढीए विरइदाणं लक्खणविहाणं जहा दंसणमोहोवसामणाए जधापवत्तादिकरणाणि णिरुंभियूण परूविदं तहा एत्थ वि परूयेमव्वं, विसेसाभावादो । णवरि हेट्ठिमासेसकिरियासु पडिबद्धअधापवत्तादिकरणद्धाहिंतो एत्थतणअधापवत्तकरणादिअद्धाओ संखेज्जगुणहीणाओ[1]; सुद्धयरपरिणामेसु खग्गधारासरिसेसु चिरकालमवट्ठाणासंभवादो । अदो चेय तत्थतणपरिणामेहिंतो एत्थतणपरिणामाणमणंतगुणत्तमवहारेयव्वं, उवसामणादिणिबंधपरिणामेहिंतो खवणाणिबंधणपरिणामाणं तहाभावसिद्धीए णिप्पडिबंधमुवलंभादो ।

§ ३. एदाओ च कधमोट्टिदव्वाओ ? 'एगसंबंधाओ' एक्केक्केण संबद्धाओ अण्णोण्णाणुलग्गाओ त्ति वुत्तं होइ । एदेण अधापवत्तकरणं समाणिय पुणो अंतोमुहुत्तं विस्समिय तदो अपुव्वकरणं ण पारभदि; किंतु अधापवत्तकरणं समाणिय से काले चेव अपुव्वकरणं च समाणिय तदणंतरोवरिमसमए चेव अणियट्टिकरणं पारभदि त्ति एसो अत्थो जाणाविदो । 'एगावलियाए' त्ति वुत्ते उड्ढमेगसेढीए ओट्टिदव्वाओ त्ति भणिदं होइ । किमट्ठमेवंविहा ट्ठवणा एत्थ कीरदि त्ति णासंकणिज्जं; एवंविहाए ठवणाए

§ २. उनमें प्रथम अधःप्रवृत्तकरणकाल है, दूसरा अपूर्वकरणकाल है और तीसरा अनिवृत्तिकरणकाल है । प्रत्येक अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कालसे युक्त तथा एक-एक समयके क्रमसे एक श्रेणिरूपसे रचित इनके लक्षणकी विधि जिस प्रकार दर्शनमोहकी उपशामना नामक अधिकारमें अधःप्रवृत्त आदि करणोंको विवक्षित कर कही गई है उसी प्रकार यहाँ प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि उक्त प्ररूपणासे इसमें कोई भेद नहीं है । इतनी विशेषता है कि अधस्तन समस्त क्रियाओंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले अधःप्रवृत्त आदि करणोंके कालसे यहाँके अधःप्रवृत्तकरण आदिके काल संख्यातगुणे हीन होते हैं, क्योंकि खड्गधाराके समान शुद्धतर परिणामोंमें चिरकाल तक अवस्थानका बनना असम्भव है । और इसीलिये वहाँके अर्थात् दर्शनमोहनीयकी उपशामना आदिमें होनेवाले परिणामोंसे यहाँके परिणामोंको अनन्तगुणा विशुद्ध जानना चाहिये, क्योंकि उपशामना आदिके निमित्तभूत परिणामोंसे क्षपणाके निमित्तभूत परिणामोंकी उस प्रकारसे सिद्धि बिना बाधाके पाई जाती है ।

§ ३. शंका—इन परिणामोंको कैसे रचे ?

समाधान—'एगसंबद्धाओ' एक-एक कालके परिणामके साथ सम्बद्ध अर्थात् परस्पर लगे हुए यह उक्त सूत्र पदका तात्पर्य है । इस सूत्रवचनद्वारा अधःप्रवृत्तकरणको समाप्त करके पुनः अन्तर्मुहूर्त कालतक विश्राम करके तत्पश्चात् अपूर्वकरणको प्रारम्भ नहीं करता है, किन्तु अधःप्रवृत्तकरणको समाप्त कर तदनन्तर समयमें ही अपूर्वकरणको आरम्भ करता है और अपूर्वकरणको समाप्त करके तदनन्तर अगले समयमें ही अनिवृत्तिकरणको आरम्भ करता है, इस प्रकार इस अर्थका ज्ञान कराया गया है । सूत्रमें आये हुए 'एगावलियाए' इस वचनके कहनेपर ऊर्ध्व एक श्रेणिरूपसे उक्त परिणामोंकी रचना करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

---

१. ता०प्रतौ असंखेज्जगुणहीणाओ इति पाठः ।

विणा बालजणाणं तव्विसयपडिबोहाणुप्पत्तीदो ।

*** तदो जाणि कम्माणि अत्थि तेसिं ट्ठिदीओ ओट्टिदव्वाओ ।**

§ ४. अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि ट्ठिदिखंडयघादं करेमाणो एदासिं ट्ठिदीण-मग्गग्गादो एवडियं भागं घेत्तूण घादेदि त्ति जाणावणणिमित्तमेत्थ णाणावरणादि-सव्वकम्माणं ट्ठिदीओ पुध पुध विरचेयव्वाओ त्ति भणिदं होइ । एत्थ 'जाणि कम्माणि अत्थि' त्ति भणंतेण पुव्वमेव खविदाणं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणंताणु-बंधीणं च एदम्मि विसये संभवाभावो सूचिदो । अण्णं च खवणं पट्ठवेमाणा तित्थ-यराहारदुगसंतकम्मिया वि अत्थि, तदसंतकम्मिया वि । तत्थ जदि तेसिं संतकम्मिओ खवणं पट्ठवेइ तो एदेसिं पि कम्माणं ट्ठिदीओ ओट्टेयव्वाओ । अण्णहा ण ओट्टेदव्वाओ त्ति जाणावणट्ठं च जेसिं कम्माणं संतमत्थि त्ति भणिदं । णवरि आउगवज्जाणं चेव

शंका—उक्त परिणामोंकी यहाँपर इस प्रकार रचना किसलिये की जाती है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इस प्रकारकी रचना किये बिना प्रकृत विषयका प्रतिबोध देना नहीं बन सकता ।

विशेषार्थ—प्रकृतमें यह बतलाया गया है कि जिसने पहले कभी अनन्तानुबन्धीकी विसं-योजनापूर्वक दर्शनमोहनीयकी क्षपणा की है वहीं संयत जीव चारित्रमोहनीयकी क्षपणा प्रारम्भ करनेका अधिकारी होता है । ऐसा करते हुए भी उसके भी अधःप्रवृत्तकरण आदि तीन प्रकारके करण परिणाम नियनसे होते हैं । लक्षण पूर्ववत् ही हैं । मात्र ये परिणाम पूर्वमें की गई उपशामना आदि क्रियाओंके कालमें होनेवाले परिणामोंसे अनन्तगुणे विशुद्धतर होते हैं । तथा पूर्वमें उप-शामना आदि क्रियाओंके करनेमें जितना काल लगता था उससे यहाँ उन करणोंमें लगनेवाला काल संख्यातगुणा हीन होता है । एक बात यहाँ यह भी स्पष्ट की गई है कि जिनके ये अधःप्रवृत्तकरण परिणाम होते हैं, उनके बाद उनसे लगकर अपूर्वकरणपरिणाम होते हैं और अन्तमें अपूर्वकरण परिणामोंसे लगकर अनिवृत्तिकरण परिणाम होते हैं । इसीका नाम ऊर्ध्व एक श्रेणिरूपसे रचता है ऐसा समझना चाहिये ।

*** इसलिए जो कर्म हैं उनकी स्थितियोंकी रचना करनी चाहिये ।**

§ ४. अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर स्थितिकाण्डकघात करनेवाला जीव इन स्थितियोंके उत्तरोत्तर अग्र-अग्रभागसे इतने भागको ग्रहण कर घातता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये यहाँपर ज्ञानावरणादि सभी कर्मोंकी स्थितियोंकी पृथक्-पृथक् रचना करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यहाँपर 'जो कर्म हैं' ऐसा कथन करते हुए चूर्णिसूत्रकारने पहले ही जिनका क्षय कर दिया है ऐसी मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्क इन प्रकृतियों की इस स्थानमें सम्भावना नहीं है यह सूचित किया है । दूसरी बात यह है कि जो चारित्र-मोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करता है वह तीर्थंकर और आहारकद्विकका सत्कर्मवाला भी होता है और उनके सत्कर्मवाला नहीं भी होता है । उनमें से यदि उनका सत्कर्मवाला क्षपणाका प्रारम्भ करता है तो इन कर्मोंकी स्थितियोंकी भी रचना करनी चाहिये, अन्यथा इनकी स्थितियोंकी रचना नहीं करनी चाहिये इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिये 'जिन कर्मोंकी सत्ता है'

कम्माणं दिट्ठीओ ओवट्टिदव्वाओ[1] । विज्जमाणसंतकम्मस्स वि मणुसाउअस्स सहावदो चेव करणपरिणामेहिं ट्ठिदि-अणुभागखंडयघादसंभवाणुवलंभादो ।

*** तेसिं चेव अणुभागफद्दयाणं जहण्णफद्दयप्पहुडि एगफद्दयआवलिया ओट्टिदव्वा ।**

§ ५. जाणि कम्माणि अत्थि त्ति पुव्वसुत्तादो अणुवट्टदे, तेणेवमहिसंबंधो कायव्वो—जाणि कम्माणि चारित्तमोहणीयपुरस्सराणि संकामणपट्ठवयम्मि अत्थि, तेसिं चेव कम्माणमणुभागफद्दयाणं जं जहण्णफद्दयं तत्तो प्पहुडि एगफद्दयावलिया ओट्टियव्वा त्ति । तत्थ जहण्णफद्दयप्पहुडि त्ति वुत्ते जहण्णफद्दयमादिं कादूणे त्ति घेत्तव्वं; पहुडिसद्दुच्चारेण सव्वत्थ विवक्खिएण सह तत्तो उवरिमाणं गहणसिद्धीए

यह वचन कहा है । इतनी विशेषता है कि आयुकर्मको छोड़कर ही कर्मोंकी स्थितियोंकी रचना करनी चाहिये, क्योंकि विद्यमान अर्थात् भुज्यमान सत्कर्मरूप मनुष्यायुका स्वभावसे ही करण-परिणामोंके द्वारा स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नहीं होता ।

विशेषार्थ—क्षपकश्रेणिपर चढ़नेवाला जीव परभवसम्बन्धी किसी भी आयुका बन्ध नहीं करता । मात्र उसके एक भुज्यमान मनुष्यायुकी सत्ता अवश्य होती है, पर उसका न तो स्थिति-काण्डकघात होता है और न ही अनुभागकाण्डकघात होता है। इसके तीर्थंकर प्रकृति और आहारक-द्विककी सत्ता किसीके होती है और किसीके नहीं होती है यह स्पष्ट ही है । जिसके होती है उसके इन प्रकृतियोंका काण्डकघात अवश्य होता है। यहाँ आहारकद्विकसे आहारक शरीर, आहारक आंगोपांग, आहारकबन्धन और आहारकसंघात इन चारोंको ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि सत्ता-की अपेक्षा इनकी पृथक्-पृथक् गणना की गई है। एक श्रेणिमें ऊर्ध्वरचना करना चाहिये इसका अर्थ है कि एक-एक समयके क्रमसे पहले अधःप्रवृत्तकरणके क्रमवृद्धिरूप परिणाम स्थापित करने चाहिये । उसके बाद उन परिणामोंसे लगकर अपूर्वकरणके क्रमिक विशुद्धिको लिये हुए परिणाम स्थापित करने चाहिये और अन्तमें अनिवृत्तिकरणके परिणाम स्थापित करने चाहिये । काण्डक-घातमें एक-एक अन्तर्मुहूर्तमें एक-एक काण्डकप्रमाण स्थितियों और अनुभागको फालिक्रमसे घटाया जाता है। एक स्थितिकाण्डकघातके कालमें हजारों अनुभागकाण्डकघात हो लेते हैं इतना यहाँ विशेष जानना चाहिये । यह अनुभागकाण्डकघात अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही होता है । स्थिति-काण्डकघात सभी प्रकृतियोंका होता है । मात्र आयुकर्म इसका अपवाद है ।

*** उन्हीं कर्मोंके अनुभागस्पर्धकोंकी जघन्य स्पर्धकसे लेकर एक स्पर्धक श्रेणि-रूपसे रचना करनी चाहिये ।**

§ ५. 'जाणि कम्माणि अत्थि' इस वचनका पूर्व सूत्रसे अनुवर्तन होता है, इसलिये ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये—संक्रामण प्रस्थापकके चारित्रमोहनीय प्रभृति जो कर्म हैं उन्हीं कर्मोंके अनुभागस्पर्धकसम्बन्धी जो जघन्य स्पर्धक है उससे लेकर एक स्पर्धकपंक्ति रचनी चाहिये । सूत्रमें 'जहण्णफद्दयप्पहुडि' ऐसा कहनेपर जघन्य स्पर्धकसे लेकर ऐसा ग्रहण करना चाहिये । प्रभृति शब्दका उच्चारण करनेसे सर्वत्र विवक्षित स्पर्धकके साथ ऊपरके स्पर्धकोंका ग्रहण होता है

---

१. ता०प्रतौ ओट्टियव्वाओ इति पाठः ।

विरोहाभावादो । एगफद्दयावलिया त्ति समासणिद्देसो एसो; तेणेवमेत्थ समासकायव्वा—फद्दयाणमावलिया फद्दयावलिया, एगा च सा फद्दयावलिया च एगफद्दयावलिया त्ति । तदो कम्मं पडि एगेगा फद्दयओली अप्पप्पणो जहण्णफद्दयप्पहुडि जाव उक्कस्सयफद्दयं ति रचेयव्वा त्ति भणिदं होदि। किं पुण कारणमेदेसिमणुभागफद्दयाणमेगावलियाए विरचणा एत्थ कीरदि त्ति णासंकणिज्जं; एदेण विण्णासेण ठिदाणमणुभागफद्दयाणमेत्तिये भागे घेत्तूण अपुव्वाणियट्टिकरणेसु अणुभागखंडयघादमाढवेदि त्ति जाणावणट्ठमेत्थ तासिं तहाविण्णासकरणादो ।

§ ६. जइ वि पसत्थाणं कम्माणं विसोहीए अणुभागघादो णत्थि त्ति, अप्पसत्थाणं चेव कम्माणमिह घादिज्जमाणाणमणुभागविण्णासविसेसो उवजुज्जंतओ; तो वि अव्वुप्पण्णजणवुप्पायणट्ठमविसेसेण सव्वेसिं चेव कम्माणमाउगवज्जाणमणुभागविण्णासो सुत्तयारेण णिद्दिट्ठो त्ति दट्ठव्वो । तत्थ अप्पसत्थाणं पयडीणं देस-सव्वघादीणमघादीणं च अप्पप्पणो जहण्णफद्दयप्पहुडि जाव दारुअसमाणाणंतिमभागविसयतप्पाओग्गुक्कस्सफद्दयं ति ताव बिट्ठाणियाणुभागविण्णासो एत्थ कायव्वो । पसत्थाणं पुण चउट्ठाणिओ अणुभागविण्णासो जहण्णफद्दयप्पहुडि जाव तप्पाओग्गुक्कस्सफद्दयं ति ताव एत्थ कायव्वो; विसोहीए सुहाणमणुभागवुड्ढिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो ।

इसमें कोई विरोध नहीं आता है। 'एगफद्दयावलिया' यह समसित पदका निर्देश है, इसलिये यहाँपर इस प्रकार समासकी योजना करनी चाहिये—स्पर्धकोंकी आवलि स्पर्धकावलि, एक जो स्पर्धकावलि एक स्पर्धकावलि। इसलिये प्रत्येक कर्मके प्रति अपने-अपने जघन्य स्पर्धकसे लेकर उत्कृष्ट स्पर्धकतक एक-एक स्पर्धकश्रेणि रचनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—इन अनुभागस्पर्धकोंकी एक श्रेणिरूपसे रचना यहाँपर किसलिये की जाती है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इस रचनारूपसे स्थित अनुभागस्पर्धकोंके इतने भागको ग्रहण कर अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें अनुभागकाण्डकघात आरम्भ करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये उनकी उस रूपसे रचना की है।

§ ६. यद्यपि विशुद्धिके कारण प्रशस्त कर्मोंका अनुभागघात नहीं होता है, इसलिए घाते जानेवाले अप्रशस्त कर्मोंके ही अनुभागका रचना विशेष उपयोगी है तो भी बालजनोंको व्युत्पन्न करनेके लिए आयुकर्मको छोड़कर सामान्यसे सभी कर्मोंके अनुभागविन्यासका सूत्रकारने निर्देश किया है ऐसा यहाँ जानना चाहिये। उनमेंसे जो देशघाति और सर्वघाति अप्रशस्त प्रकृतियाँ हैं उनके अपने-अपने जघन्य स्पर्धकसे लेकर दारुसमान अनन्तवें भागको विषय करनेवाले तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्पर्धकतक द्विस्थानीय अनुभागका विन्यास यहाँपर करना चाहिये। परन्तु प्रशस्त कर्मोंका जघन्य स्पर्धकसे लेकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्पर्धकतक चतुःस्थानीय अनुभागविन्यास यहाँपर करना चाहिये, क्योंकि विशुद्धिके बलसे शुभ प्रकृतियोंकी अनुभागवृद्धिको छोड़कर अन्य प्रकार असम्भव है।

---

१. ता०प्रतौ जणुणवुप्पायट्ठ-इति पाठः ।

*** तदो अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अप्पा इदि कट्टु इमाओ चत्तारि सुत्तगाहाओ विहासियव्वाओ ।**

§ ७. तदो ट्ठिदि-अणुभागाणं विरचणादो अणंतरमिमा परूवणा आढवेयव्वा त्ति वुत्तं होइ । तं जहा—अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि पडिसमयमणंतगुणाए विसोहीए विसुज्झमाणो ट्ठिदि-अणुभागखंडयघादेहिं विणा सगद्धाए संखेज्जसहस्समेत्ताणि ट्ठिदि-बंधोसरणाणि अप्पसत्थाणं कम्माणं पडिसमयमणंतगुणहीणमणुभागबंधं विट्ठाणियं, पसत्थाणमणंतगुणं चउट्ठाणियमणुभागबंधं च करेमाणो अधापवत्तकरणद्धाए चरिमसमयं कमेण संपत्तो ।

§ ८. ताधे अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अप्पा वट्टदि[1] त्ति कट्टु इमाओ चत्तारि सुत्तगाहाओ विहासियव्वाओ भवंति; सुत्तेण विणा पयदत्थपरूवणाए सुत्ताणु-

विशेषार्थ—यहाँपर विशुद्धिका अर्थ शुभ और शुद्ध परिणाम है । उनमेंसे शुद्धपरिणाम शुभाशुभ परिणामोंसे रहित संवर और निर्जरारूप है । जो शुभ परिणामसहित है । उसके साथ शुभ परिणामको निमित्त कर अशुभ प्रकृतियोंका तत्प्रायोग्य अपने योग्य जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट तक द्वि-स्थानीय अनुभाग होता है और शुभ प्रकृतियोंका तत्प्रायोग्य अपने जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट अनुभागतक चतुःस्थानीय अनुभाग होता है । ऐसे अनुभागसे युक्त यह जीव अगले समयमें अपूर्वकरण गुणस्थान-में प्रवेश करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि आगे अशुभ प्रकृतियोंके अनुभागमें उत्तरोत्तर हानि होती जाती है और शुभ प्रकृतियोंके अनुभागमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है । इसका मूल कारण उत्तरोत्तर हानिरूप कषायपरिणाम है । हानि होनेसे उत्तपरोत्तर शेष रहे कषायपरिणामके अनुसार लेश्यामें विशुद्धि आती जाती है । उस कारण तो शुभ कर्मोंके अनुभागमें वृद्धि होती जाती है और जो प्रत्येक समयमें कषायपरिणाममें हानि होकर शुद्धिकी प्राप्ति होती है वह संवर-निर्जराका हेतु होती है । शुभ और शुद्ध परिणामकी यह व्यवस्था दशवें गुणस्थानके अन्तिम समय तक चलती रहती है । ग्यारहवें आदि गुणस्थानोंमें कषायका सर्वथा अभाव हो जाता है, इसलिये वहाँ केवल शुद्ध परिणाम ही होता है ।

*** तत्पश्चात् अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिस समयमें आत्मा है ऐसा समझकर इन चार गाथाओंकी विभाषा करनी चाहिये ।**

§ ७. 'तदो' अर्थात् स्थिति और अनुभागका विन्यास करनेके अनन्तर यह प्ररूपणा आरम्भ करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । वह जैसे—अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी विशुद्धिके द्वारा विशुद्ध होता हुआ यह जीव स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघातके बिना अपने कालके भीतर स्थितिबन्धापसरणोंको तथा अप्रशस्त कर्मोंके प्रत्येक समयमें उत्तरोत्तर अनन्तगुणे हीन द्विस्थानीय अनुभागबन्धको और प्रशस्त कर्मोंके उत्तरोत्तर अनन्तगुणे चतुःस्थानीय अनुभागबन्धको करता हुआ क्रमसे अधःप्रवृत्तकरके अन्तिम समयको प्राप्त होता है ।

§ ८. अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें आत्मा है ऐसा समझकर उस समय इन चार सूत्र-गाथाओंकी विभाषा करनी चाहिये, क्योंकि सूत्रके बिना प्रकृत अर्थकी प्ररूपणा करनेपर सूत्रा-

[1] ता०प्रतौ वड्ढदि इति पाठः ।

सारीणमणादेयत्तप्पसंगादो। तम्हा चरित्तमोहणीयक्खवणाए पडिबद्धअट्ठावीसमूलगाहाओ[1] तत्थ ताव चउण्हं पट्ठवणमूलगाहाणमेत्थ विहासा कायव्वा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवमेदं पइण्णाय संपहि तासिं विहासणं कुणमाणो तव्विसयमेव पुच्छावक्कमाह—

* तं जहा।

§ ९. सुगममेदं पुच्छावक्कं। एवं च पुच्छाविसईकय[2]गाहासुत्तत्थविहासणे कायव्वे जहा उद्देसो तहा णिद्देसो त्ति णायमवलंबिय पढमगाहाए ताव अत्थविहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* 'संकामणपट्ठवगस्स परिणामो केरिसो भवे' त्ति[3] विहासा।

§ १०. संकामणं णाम चारित्तमोहादीणं कम्माणं खविज्जमाणाणं अण्णपयडीसु संच्छोहणं। संछोहणाए विणा खविज्जमाणाणं लोहसंजलणादीणं कथं संकामणववहारो त्ति णासंकणिज्जं; संकामणसद्दस्स खवणपज्जायवाचित्तेण तत्थावलंबणादो। संकामणस्स पट्ठवगो संकामणपट्ठवगो, कसायक्खवणाए आढवगो त्ति वुत्तं होइ। तस्स परिणामो पणिधाणविसेसो केरिसो किंपयारो भवे त्ति पुच्छा सुत्तमेदं। एदस्स णिण्णयकरणमेरिसो

नुसारी जीवोंके लिए उसके अनुपादेयपनेका प्रसंग प्राप्त होता है। इसलिये चारित्रमोहनीयकी क्षपणासे सम्बन्ध रखनेवाली अट्ठाईस मूल गाथाएँ हैं। उनमेंसे प्रकृतमें सर्वप्रथम प्रस्थापनासम्बन्धी चार मूल गाथाओंकी यहाँपर विभाषा करनी चाहिये यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार यह प्रतिज्ञा करके अब उनकी विभाषा करते हुए तद्विषयक ही पृच्छावाक्यको कहते हैं—

* वह जैसे।

§ ९. यह पृच्छावाक्य सुगम है। इस प्रकार पृच्छाके विषय किये गये गाथासूत्रके अर्थकी विभाषा करनेपर 'उद्देशके अनुसार निर्देश किया जाता है' इस न्यायका अवलम्बन लेकर सर्वप्रथम प्रथम गाथाके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* 'संक्रामणके प्रस्थापकका परिणाम कैसा होता है' इसकी विभाषा करते हैं।

§ १०. जिन चारित्रमोहनीय आदि कर्मोंका क्षपण करनेवाले हैं उनका अन्य प्रकृतियोंमें निक्षेपण करनेका नाम संक्रामण है।

शंका—क्षपित किये जानेवाले लोभसंज्वलन आदिमें संक्रामण व्यवहार कैसे होता है?

समाधान—क्योंकि गाथासूत्रमें संक्रामण शब्दका क्षपणापर्यायके वाचकरूपसे अवलम्बन लिया गया है।

संक्रामणका प्रस्थापक जीव संक्रामणप्रस्थापक अर्थात् कषायोंकी क्षपणाका आरम्भ करनेवाला होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसका परिणाम प्रणिधानविशेष कैसा अर्थात् किस प्रकारका होता है इस प्रकार यह पृच्छासूत्र है। इसका निर्णय करना कि इसका ऐसा परिणाम

१. ता०प्रतौ हा[ओ]सु इति पाठः। २. ता०प्रतौ -कयाणं गाहा -इति पाठः। ३. ता०प्रतौ भवे[दि] त्ति इति पाठः। क०प्रतौ भवदि त्ति पाठः।

परिणामो होदि त्ति परूवणं विहासा णाम । सा एण्हिं कायव्वा त्ति भणिदं होइ ।

❀ तं जहा ।

§ ११. सुगमं ।

❀ परिणामो विसुद्धो पुव्वं पि अंतोमुहुत्तप्पहुडि विसुज्झमाणो आगदो अणंतगुणाए विसोहीए ।

§ १२. विसुद्धो चेव परिणामो एदस्स होइ त्ति एदेण सुत्तावयवेण असुह-परिणामाणं वुदासं कादूण सुह-सुद्धपरिमाणं चेव एत्थ संभवो त्ति जाणाविदं । ण केवलमेदम्मि चेव अधापवत्तकरणचरिमसमए विसुद्धपरिणामो एदस्स जादो; किंतु पुव्वं पि अधापवत्तकरणपारंभादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तप्पहुडि खवगसेढिपाओग्गविसोहीए पडिसमयमणंतगुणाए विसुज्झमाणो चेव आगदो; सुहपरिणामपणालीए विणा एक्क-सराहेणेव सुविसुद्धपरिणामेण परिणमणासंभवादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो । एवमेदेण गाहापुव्वद्धेण परिणामविसेसमेदस्स णिरूविय संपहि गाहापच्छद्धमस्सियूण जोगकसायोवजोगादिविसेसमेदस्स परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

❀ जोगेत्ति विहासा ।

§ १३. सुगमं ।

होता है इसका नाम विभाषा है । वह इस समय करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ वह जैसे ।

§ ११. यह सूत्र सुगम है ।

❀ परिणाम विशुद्ध होता है तथा अन्तर्मुहूर्त पहलेसे ही अनन्तगुणी विशुद्धिके के द्वारा विशुद्ध होता हुआ आया है ।

§ १२. चारित्रमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करनेवाले जीवका परिणाम विशुद्ध ही होता है इस प्रकार इस सूत्रवचनसे अशुभ परिणामोंका व्युदास करके शुभ-शुद्ध परिणाम ही यहाँपर सम्भव है इस बातका ज्ञान कराया गया है। केवल इस अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें ही इसका विशुद्ध परिणाम हो गया है, किन्तु अधःप्रवृत्तकरणके प्रारम्भ करनेके पूर्व ही नीचे अन्तर्मुहूर्तसे लेकर क्षपकश्रेणिके योग्य विशुद्धिका आलम्बन लेकर प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी विशुद्धिसे विशुद्ध होता हुआ ही आया है, क्योंकि शुभपरिणामकी प्रणालीके बिना एक बारमें ही सुविशुद्ध परिणामरूपसे परिणमन असम्भव है इस प्रकार इस अर्थका सद्भाव यहाँपर स्वीकार किया गया है। इस प्रकार इस गाथासूत्रके पूर्वार्ध द्वारा इस जीवके परिणामविशेषका प्ररूपण करके अब गाथाके उत्तरार्धका अवलम्बन कर इस जीवके योग, कषाय और उपयोग आदि विशेषका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ योग इस पदकी विभाषा ।

§ १३. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** अण्णदरो मणजोगो, अण्णदरो वचिजोगो, ओरालियकायजोगो वा।**[1]

§ १४. एवमेसो णवविहो जोगपरिणामो एदस्स अण्णदरसरूवेण होइ; एत्तो अण्णेसिं जोगपरिणामाणमेत्थ संभवाणुवलंभादो। होउ णाम चउण्हं मणजोगाणमेत्थ संभवो; ज्झाणोवजोगाहिमुहेसु छदुमत्थेसु तदविरोहादो। कधं पुण वचिजोगभेदाणं चदुण्हमिह संभवो; उवसंहरिदासेसबहिरंगवावाराणं तप्पवुत्तिविरोहादो त्ति? ण एस दोसो; अवत्तव्वसरूवेण वचिजोगपवुत्तीए ज्झाणोवजुत्तेसु विप्पडिसेहाभावादो। एवमोरालियकायजोगस्स वि संभवो वत्तव्वो; तण्णिबंधणजीवपदेसपरिप्फंदस्स तत्थ संभवे विरोहाभावादो।

*** कसायेत्ति विहासा।**

§ १५. सुगमं।

*** अण्णदरो कसायो।**

§ १६. कोह-माण-माया-लोहाणमण्णदरो कसायपरिणामो एदस्स होइ; अणियट्टिपज्जंतेसु गुणट्ठाणेसु चउण्हमेदेसिं कसायाणं पवुत्तीए विरोहाभावादो[2]। संपहि

*** इस जीवके कोई एक मनोयोग, कोई एक वचनयोग अथवा औदारिककाययोग होता है।**

§ १४. इस प्रकार इस जीवके प्रकृतमें इन नौ प्रकारके योगपरिणामोंमेंसे कोई एक योगपरिणाम होता है।

शंका—चारों प्रकारके मनोयोगोंका यहाँ पर सम्भव होओ, क्योंकि ध्यानस्वरूप उपयोगके सन्मुख हुए छद्मस्थोंमें ध्यानके साथ मनोयोगके होनेका अविरोध है, परन्तु वचनयोगके चार भेद यहाँपर कैसे सम्भव हैं, क्योंकि जिन्होंने समस्त बाह्य व्यापार उपसंहृत कर लिया है उनके वचनयोगकी प्रवृत्ति होनेमें विरोध आता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि ध्यान में उपयुक्त हुए जीवोंमें अव्यक्त रूपसे वचनयोगकी प्रवृत्तिका निषेध नहीं है। इसी प्रकार औदारिक काययोग सम्भव है यह भी कहना चाहिये, क्योंकि औदारिककाययोगके निमित्तसे होनेवाले जीवप्रदेशोंके परिस्पन्दनके वहाँ होनेमें विरोधका अभाव है।

*** कषाय इस पदकी विभाषा।**

§ १५. यह सूत्र सुगम है।

*** कोई एक कषायपरिणाम होता है।**

§ १६. इस जीवके क्रोध, मान, माया और लोभ इनमेंसे कोई एक कषायपरिणाम होता है, क्योंकि अनिवृत्तिकरण तकके गुणस्थानोंमें इन चारों कषायोंकी प्रवृत्तिमें विरोधका अभाव है।

---

१. ता०प्रतौ वचिजोगो अण्णदरो ओरा—इति पाठः। २. ता०प्रतौ पवुत्तिविरोहाभावादो इति पाठः।

किमेदस्स कसायपरिणामो वड्ढमाणो, किं वा हायमाणो त्ति आसंकाए इदमाह—

*** किं वड्ढमाणो हायमाणो ? णियमा हायमाणो ।**

§ १७. हायमाणो चेव कसायपरिणामो एदस्स होइ; ण वड्ढमाणो । किं कारणं ? विसोहिपरिणामस्स वड्ढमाणकसाएण सह विरुद्धसहावत्तादो ।

*** उवजोगेत्ति विहासा ।**

§ १८. को उवजोगो णाम ? आत्मनोऽर्थग्रहणपरिणाम उपयोगः । सो वुण दुविहो, सागारोवजोगो अणागारोवजोगो[1] चेदि । तत्थ सागारोवजोगो मदिणाणादि-भेदेण अट्ठविहो । अणागारोवजोगो चक्खुदंसणादिभेएण चउव्विहो । एवमेदेसु उव-जोगवियप्पेसु कदरेण उवजोगेण उवजुत्तो खवगसेढिमारोहदि त्ति एदस्स णिण्णय-जणणट्ठमुवजोगेत्ति गाहावयवस्स विहासा एण्हिं कायव्वा त्ति भणिदं होदि । संपहि उवएसभेदमस्सियूण एदस्स विहासणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एक्को उवएसो णियमा सुदोवजुत्तो[2] ।**

§ १९. णियमा सुदोवजुतो होदूण खवगसेढिं चडदि त्ति । एसो ताव एक्को

अब इसके यह कषायपरिणाम क्या वर्धमान होता है या हीयमान ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** क्या वर्धमान कषायपरिणाम होता है या हीयमान ? नियमसे हीयमान कषायपरिणाम होता है ।**

§ १७. इसके हीयमान ही कषायपरिणाम होता है, वर्धमान नहीं, क्योंकि विशुद्धिरूप परिणाम वर्धमान कषायके विरुद्ध स्वभाववाला है ।

*** उपयोग इस पदकी विभाषा ।**

§ १८. शंका—उपयोग किसे कहते हैं ?

समाधान—आत्माके पदार्थको ग्रहण करनेरूप परिणामको उपयोग कहते हैं ।

वह उपयोग दो प्रकारका है—साकार उपयोग और अनाकार उपयोग । उनमेंसे साकार उपयोग मतिज्ञानादिके भेदसे आठ प्रकारका है तथा अनाकार उपयोग चक्षुदर्शन आदिके भेदसे चार प्रकारका है । इन उपयोगोंमेंसे किस उपयोगसे उपयुक्त होकर यह जीव क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है इस प्रकार इसका निर्णय करनेके लिये 'उवजोगो' गाथाके इस पदकी इस समय व्याख्या करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब उपदेशभेदका अवलम्बन लेकर इस पदकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** एक उपदेश है कि नियमसे श्रुतज्ञानसे उपयुक्त होता है ।**

§ १९. नियमसे श्रुतज्ञानसे उपयुक्त होकर क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है इस प्रकार यह एक

---

१. आ०प्रतौ –रोवजुत्तो इति पाठः । २. क०प्रतौ 'णियमा सुदोवजुत्तो होदूण खवगसेढिं चढदि' इति वाक्यं सूत्रांशरूपेण उद्धृतम् ।

उवएसो। एदस्साहिप्पायो—पुधत्तवियक्कवीचारसण्णिदपढमसुक्कज्झाणाहिमुहस्सेदस्स चोद्दस-दस-णवपुव्वधारयस्स सुदणाणोवजोगो अवस्संभावी; तदवत्थाए णिरुद्ध-बज्झिंदियपसरस्स मदियादिसेसणाणोवजोगाणमणागारोवजोगस्स च संभवाणुववत्तीदो त्ति। संपहि उवएसंतरमस्सियूणेदस्स पुणो वि उवजोगविसेसावहारणट्ठमुत्तर-सुत्तमाह—

*** एक्को उवदेसो सुदेण वा मदीए वा चक्खुदंसणेण वा अचक्खु-दंसणेण वा।**

§ २०. एदस्साहिप्पाओ वुच्चदे—अणंतरपरूविदेण णाएण जहा सुदोवजोग-स्सेत्थ संभवो तहा तक्कारणभूदमदिणाणोवजोगस्स वि संभवो ण विरुद्धो, तस्स तण्णांतरीयत्तादो। संते च मदिणाणसंभवे चक्खु-अचक्खुदंसणोवजोगाणं पि तत्थ संभवो ण विरुज्झदे; तेहि विणा मदिणाणपवुत्तीए अणुवलंभादो त्ति। मदि-सुद-चक्खु-अचक्खुदंसणोवजोगाणं व ओहि-मणपज्जवणाणोवजोगाणमोहिदंसणस्स च संभवो एत्थ किण्ण होइ त्ति णासंकणिज्जं; तहाविहसंभवस्स सुत्तेणेदेण पडिसिद्धत्तादो, एयग्गचिंताणिरोहलक्खणज्झाणपरिणामेण सह तेसिं विरुद्धसहावत्तादो वा। तम्हा पयारंतरपरिहारेण सुत्तुत्तोवजोगवियप्पा चेव एत्थ होंति त्ति णिच्छयो कायव्वो।

उपदेश है। इसका अभिप्राय—पृथक्त्ववितर्कवीचार नामक प्रथम शुक्लध्यानके अभिमुख हुए चौदह, दस और नौ पूर्वधारी इस जीवके श्रुतज्ञानोपयोगका होना अवश्यम्भावी है, क्योंकि उस अवस्थामें जिसने बाह्य इन्द्रियोंके प्रसारका निरोध कर लिया है उसके मतिज्ञान आदि शेष ज्ञानो-पयोग और अनाकार उपयोगका होना नहीं बन सकता। अब दूसरे उपदेशका आश्रय करके इस जीवके फिर भी उपयोगविशेषका अवधारण करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एक अन्य उपदेश है कि श्रुतज्ञानसे, मतिज्ञानसे, चक्षुदर्शनसे अथवा अचक्षु-दर्शनसे उपयुक्त होता है।**

§ २०. इस सूत्रके अभिप्रायका कथन करते हैं—अनन्तर कहे गये न्यायके अनुसार जिस प्रकार यहाँ श्रुतोपयोग सम्भव है उसी प्रकार उसके कारणभूत मतिज्ञानोपयोग भी सम्भव है यह विरुद्ध नहीं है, क्योंकि श्रुतज्ञान, मतिज्ञानका अविनाभावी है और मतिज्ञानके सम्भव होनेपर चक्षुदर्शनोपयोग और अचक्षुदर्शनोपयोग भी वहाँ सम्भव हैं यह भी विरुद्ध नहीं है, क्योंकि उनके बिना मतिज्ञानकी प्रवृत्ति नहीं पाई जाती।

शंका—श्रुतज्ञानोपयोग, मतिज्ञानोपयोग, चक्षुदर्शनोपयोग और अचक्षुदर्शनोपयोगके समान अवधिज्ञानोपयोग, मनःपर्ययज्ञानोपयोग और अवधिदर्शन यहाँपर क्यों सम्भव नहीं है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उस प्रकारकी सम्भावनाका इस सूत्र द्वारा निषेध कर दिया गया है अथवा एकाग्रचिन्तानिरोध लक्षण ध्यान परिणामके साथ वे विरुद्ध स्वभाववाले हैं, इसलिये प्रकारान्तरके परिहार द्वारा सूत्रमें कहे गये विकल्प ही यहाँपर सम्भव हैं ऐसा निश्चय करना चाहिये।

* लेस्सा त्ति विहासा ।

§ २१. सुगमं ।

* णियमा सुक्कलेस्सा ।

§ २२. कुदो ? लेस्संतरविसयमुल्लंघियूण सुविसुद्धसुक्कलेस्साणिबंधणमंदतमकसायोदए एदस्स वट्टमाणत्तादो । तदो चेव वड्ढमाणो एदस्स लेस्सापरिणामो, ण हायमाणो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

* णियमा वड्ढमाणलेस्सा ।

§ २३. कुदो ? कसायाणुभागफद्दएसु पडिसमयमणंतगुणहीणसरूवेण उदयमागच्छमाणेसु तज्जणिदसुहलेस्सापरिणामस्स वड्ढिं मोत्तूण हाणीए असंभवादो ।

* वेदो व[1] को भवे त्ति विहासा ।

§ २४. सुगमं ।

* अण्णदरो वेदो ।

विशेषार्थ—मतिज्ञान और श्रुतज्ञानका जोड़ा है । किन्तु ध्यानकी भूमिकामें होता तो श्रुतज्ञान ही है, पर श्रुतज्ञानके मतिज्ञानपूर्वक होनेसे प्रकृतमेंसे उपदेशान्तारके अनुसार मतिज्ञान भी स्वीकार कर लिया गया है और मतिज्ञान चक्षुदर्शनोपयोग और अचक्षुदर्शनोपयोगपूर्वक होता है, इसलिये कारणमें कार्यका उपचार करके उन्हें भी स्वीकार कर लिया गया है यह प्रकृत कथनका तात्पर्य है । प्रारम्भके दो शुक्लध्यानोंमें वितर्कका अर्थ श्रुतज्ञान है ऐसा सभी आचार्योंने भी स्वीकार किया है, इससे उक्त अर्थकी ही पुष्टि होती है । निर्विकल्प धर्मध्यानमें भी इसी न्यायसे विचार कर लेना चाहिये ।

* लेश्या इस पदकी विभाषा ।

२ . यह सूत्र सुगम है ।

* नियमसे शुक्ललेश्या होती है ।

§ २२. क्योंकि दूसरी लेश्याओंके विषयका उल्लंघन कर अत्यन्त विशुद्ध शुक्ललेश्याके कारणभूत मन्दतम कषायके उदयसे यह वर्द्धमानरूपसे होती है और इसी कारण इसका वर्धमान लेश्यापरिणाम होता है हीयमान नहीं इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* जो लेश्या नियमसे वर्धमान होती है ।

§ २३. क्योंकि कषायके अनुभागस्पर्धकोंके प्रत्येक समयमें अनन्तगुणे हीनरूपसे उदयमें आते रहनेपर उनसे उत्पन्न हुए शुभ लेश्यापरिणामकी वृद्धिको छोड़कर हानिका होना असम्भव है ।

* वेद कौन होता है इसकी विभाषा ।

§ २४. यह सूत्र सुगम है ।

* कोई एक वेद होता है ।

---

१. ता०प्रतौ य इति पाठः ।

§ २५. इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदाणमण्णदरो वेदपरिणामो एदस्स होइ, तिण्हं पि तेसिमुदएण सेढिसमारोहणे पडिसेहाभावादो। णवरि दव्वदो पुरिसवेदो चेव खवग-सेढिमारोहदि त्ति वत्तव्वं, तत्थ पयारंतरासंभवादो। एत्थ गदियादीणं पि विहासा कायव्वा, सुत्तस्सेदस्स देसामासयत्तादो। तदो पढमगाहाए अत्थविहासा समत्ता। संपहि बिदियगाहाए अत्थविहासणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

❀ 'काणि वा पुव्वबद्धाणि' त्ति विहासा।

§ २६. सुगमं।

❀ **एत्थ पयडिसंतकम्मं ट्ठिदिसंतकम्मं अणुभागसंतकम्मं पदेससंत-कम्मं च मग्गियव्वं।**

§ २७. तत्थ ताव पयडिसंतकम्ममग्गणाए दंसणमोहणीयअणंताणुबंधिचउक्क-तिण्णिआउगाणि मोत्तूण सेसाणं कम्माणं संतकम्ममत्थि त्ति वत्तव्वं। णवरि आहारसरीर-तदंगोवंगतित्थयराणि भयणिज्जाणि, तेसिं सव्वजीवेसु संभवणियमाभावादो। ट्ठिदिसंत-कम्ममग्गणाए जासिं पयडीणं पयडिसंतकम्ममत्थि तासिं आउगवज्जाणमंतोकोडा-कोडिमेत्तं ट्ठिदिसंतकम्ममिदि वत्तव्वं। अणुभागसंतकम्मं पि अप्पसत्थाणं बिट्ठाणियं पसत्थाणं चउट्ठाणियं भवदि। पदेससंतकम्मं पि सव्वेसिं कम्माणमजहण्णाणुक्कस्स-मेव होदि; पयारंतरासंभवादो।

---

§ २५. स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद इनमेंसे कोई एक वेदपरिणाम होता है, क्योंकि तीनों ही वेदोंके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करनेमें निषेध नहीं है। इतनी विशेषता है कि द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेदी ही क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है ऐसा कहना चाहिये, वहाँ अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है। यहाँपर कौन गति होती हैं आदिकी भी विभाषा कर लेना चाहिये, क्योंकि यह सूत्र देशामर्षक है। ऐसा करनेके बाद प्रथम गाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई। अब दूसरी गाथा-की अर्थविभाषा करनेके लिये आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

❀ **पूर्वबद्ध कर्म कौन हैं इस पदकी विभाषा।**

§ २६. यह सूत्र सुगम है।

❀ **यहाँ प्रकृतिसत्कर्म, स्थितिसत्कर्म, अनुभागसत्कर्म और प्रदेशसत्कर्मका अनु-सन्धान करना चाहिये।**

§ २७. प्रकृतमें सर्वप्रथम प्रकृतिसत्कर्मका अनुसन्धान करनेपर दर्शनमोहनीय तीन, अनन्ता-नुबन्धीचतुष्क और तीन आयु इन दश प्रकृतियोंको छोड़कर शेष कर्मोंकी सत्ता है ऐसा कहना चाहिये। इतनी विशेषता है कि आहारकशरीर, आहारकआंगोपांग और तीर्थंकर ये प्रकृतियाँ भजनीय हैं, क्योंकि उनके सब जीवोंमें सम्भव होनेका नियम नहीं है। स्थितिसत्कर्मका अनुसन्धान करनेपर जिन प्रकृतियोंकी सत्ता है उनकी आयुकर्मको छोड़कर अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिकी सत्ता है ऐसा कहना चाहिये। अनुभागसत्कर्म भी अप्रशस्त कर्मोंका द्विस्थानीय और प्रशस्त कर्मों-चतुस्थानीय होता है। प्रदेशसत्कर्म भी सभी कर्मोंका अजघन्य-अनुत्कृष्ट ही होता है। यहाँ अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

*** 'के वा अंसे णिबंधदि' त्ति विहासा ।**

§ २८. सुगमं ।

*** एत्थ पयडिबंधो ट्ठिदिबंधो अणुभागबंधो पदेसबंधो च मग्गियव्वो ।**

§ २९. एदस्सत्थे भण्णमाणे जहा उवसामगस्स पयदमग्गणा कया, तहा एत्थ वि कायव्वा, विसेसाभावादो ।

*** 'कदि आवलियं पविसंति' त्ति विहासा ।**

§ ३०. सुगमं ।

*** मूलपयडीओ सव्वाओ पविसंति ।**

§ ३१. कुदो ? मूलपयडीणं सव्वासिं पि एत्थुदयावलियपवेसस्स पडिबंधाभावादो ।

*** उत्तरपयडीओ वि जाओ अत्थि ताओ पविसंति ।**

§ ३२. सव्वासिमेवुत्तरपयडीणमेत्थ विज्जमाणाणमुदयाणुदयसरूवेणुदयावलियपवेसस्स पडिबंधाभावादो ।

*** 'कदिण्हं वा पवेसगो' त्ति विहासा ।**

*** किन कर्मोंको बांधता है इस पदकी विभाषा ।**

§ २८. यह सूत्र सुगम है ।

*** यहां प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्धका अनुसन्धान करना चाहिये ।**

§ २९. इसका अर्थ कहनेपर जिस प्रकार उपशामकके प्रकृत अर्थकी मार्गणा की उसी प्रकार यहाँ भी करनी चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई भेद नहीं है ।

*** कितनी प्रकृतियां उदयावलिमें प्रवेश करती हैं इस पदकी विभाषा ।**

§ ३०. यह सूत्र सुगम है ।

*** मूल प्रकृतियां सभी प्रवेश करती हैं ।**

§ ३१. क्योंकि यहाँपर सभी मूल प्रकृतियोंके उदयावलिमें प्रवेश करनेमें कोई रुकावट नहीं है ।

*** उत्तर प्रकृतियां भी जो हैं वे प्रवेश करती हैं ।**

§ ३२. उदय-अनुदयरूपसे विद्यमान सभी उत्तर प्रकृतियोंका यहाँपर उदयावलिमें प्रवेश होनेमें कोई रुकावट नहीं है ।

*** किन प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है इस पदकी विभाषा ।**

§ ३३. सुगमं । णवरि एत्थ पवेसगो त्ति वुत्ते उदीरणासरूवेणुदयावलियं पवेसो-माणो घेत्तव्वो; उदीरणोदएण पयदत्तादो ।

*** आउग-वेदणीयवज्जाणं वेदिज्जमाणाणं कम्माणं पवेसगो ।**

§ ३४ एत्थ ताव वेदिज्जमाणाणं कम्माणं णिद्देसो कीरदे । तं जहा—पंचण्हं णाणावरणीयाणं चदुण्हं दंसणावरणीयाणं णियमा वेदगो । णिद्दा-पयलाणं सिया, तासिमवत्तोदयस्स कदाइं संभवे विरोहाभावादो । सादासादाणमण्णदरस्स, चदुण्हं संजलणाणं तिण्हं वेदाणं दोण्हं जुगलाणमण्णदरस्स णियमा, भयदुगुंछाणं सिया, मणुसाउ-मणुसगइ-पंचिंदियजादि-ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीर-छण्णमण्णदरसंठाण-ओरा-लियसरीरंगोवंग-वज्जरिसहसंघडण-वण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअलहुआदि-चउक्क-दोण्ह-मण्णदरविहायगदि-तसचउक्क-थिराथिर-सुभासुभ सुभग सुस्सर[1]-दुस्सराणमेक्कदर-आदेज्ज-जसगित्ति-णिमिणुच्चागोद-पंचंतराइयाणमेसो वेदगो । एत्तो अण्णेसिमेत्थुदयासंभवादो । एदेसु सादासादवेदणीय-मणुसाउआणि मोत्तूण सेसाणमुदीरगो होदि । किमट्ठमाउअ-वेदणीयाणमेत्थ उदीरणा ण संभवइ ? ण, वेदणीयाउआणमुदीरणाए पमत्तसंजदगुण-ट्ठाणादो उवरि संभवाभावादो ।

---

§ ३३. यह सूत्र सुगम है । इतनी विशेषता है कि प्रकृतमें 'पवेसगो' ऐसा कहनेपर उदी-रणारूपसे उदयावलिमें प्रवेश करानेवालेको ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यहाँपर उदीरणारूप उदय प्रकृत है ।

*** आयुकर्म और वेदनीयकर्मके सिवाय वेदे जानेवाले कर्मोंका प्रवेशक होता है ।**

§ ३४. यहाँपर सर्वप्रथम वेदे जानेवाले कर्मोंका निर्देश करते हैं । वह जैसे—पाँच ज्ञाना-वरणीय, चार दर्शनावरणीय कर्मोंका नियमसे वेदक होता है । निद्रा और प्रचलाका कदाचित् वेदक होता हैं, क्योंकि उनका अव्यक्त उदय कदाचित् सम्भव है इसमें कोई विरोध नहीं है । साता और असातामेंसे किसी एकका, चार संज्वलनों, तीन वेदोंमेंसे किसी एकका और दो युगलोंमेंसे किसी एक युगलका नियममें वेदक होता है । भय और जुगुप्साका कदाचित् वेदक होता है । मनुष्यायु, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक-तैजस-कार्मण शरीर, छह संस्थानोंमेंसे कोई एक संस्थान, औदारिक-शरीर आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु आदि चार, दो विहायोग-तियोंमेंसे कोई एक विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुभग, सुस्वर-दुस्वर इनमेंसे कोई एक, आदेय, यशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका यह वेदक होता है, इनके सिवाय अन्य प्रकृतियोंका यहाँ उदय असम्भव है । इनमेंसे सातावेदनीय, असाता-वेदनीय और मनुष्यायुको छोड़कर शेष प्रकृतियोंका उदीरक होता है ।

शंका—यहाँपर आयुकर्म और वेदनीयकर्मकी उदीरणा किसलिये सम्भव नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वेदनीय और आयुकर्मकी उदीरणा प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे ऊपर सम्भव नहीं है ।

---

१. ता०प्रतौ सुभगदूभग सुस्सर- इति पाठः । २. ता०प्रतौ सादावेदणीय इति पाठः ।

*** 'के अंसे झीयदे पुव्वं बंधेण उदएण वा' त्ति विहासा ।**

§ ३५. सुगमं । तत्थ ताव बंधेण वोच्छिण्णपयडीणं पुव्वमेव णिद्देसं कुणमाणो उत्तरसुत्तमाह—

*** थीणगिद्धितियमसाद-मिच्छत्त-बारसकसाय-अरदि-सोग-इत्थिवेद-णवुंसयवेद-सव्वाणि चेव आउआणि परियत्तमाणियाओ णामाओ असुहाओ सव्वाओ चेव मणुसगइ-ओरालियसरीर-ओरालियसरीरंगोवंग वज्जरिसहसंघडण-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी, आदाबुज्जोव-णामाओ च सुहाओ णीचागोदं च एदाणि कम्माणि बंधेण वोच्छिण्णाणि ।**

§ ३६. एत्थ णाणावरणीयस्स पंचण्हं पि पयडीण बंधो अत्थि त्ति तत्थ एक्कस्स वि बंधवोच्छेदो ण परूविदो । दंसणावरणीयस्स थीणगिद्धितियं पुव्वमेव बंधेण वोच्छिण्णं, सासणसम्माइट्ठीदो उवरि तस्स बंधासंभवादो । वेदणीए असादस्स बंधवोच्छेदो, पमत्तगुणट्ठाणादो उवरि तस्स बंधाभावादो । मोहणीयस्स मिच्छत्त-बारस-कसाय -अरदि-सोग-इत्थि-णवुंसयवेदाणं बंधवोच्छेदो, पुव्वमेव एदेसिं हेट्ठिमगुणट्ठाणेसु जहासंभवं बंधवोच्छेददंसणादो । आउअस्स सव्वाणि चेव आउआणि बंधेण वोच्छिण्णाणि; तब्बंधविसयमुल्लंघियूणेदस्स खवगसेढिपाओग्गअधापवत्तकरणविसोहीसु वट्ट-

*** बन्ध और उदयकी अपेक्षा पहले कौन प्रकृतियां व्युच्छिन्न होती हैं इस पदकी विभाषा ।**

§ ३५. यह सूत्र सुगम है । वहाँ सर्वप्रथम बन्धसे व्युच्छिन्न होनेवाली प्रकृतियोंका निर्देश करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, अरति, शोक, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, सभी आयुकर्म, परिवर्तमान सभी अशुभ नामकर्मकी प्रकृतियां, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराच संहनन, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आतप और उद्योत ये नामकर्मकी शुभ प्रकृतियां तथा नीचगोत्र ये कर्म बन्धसे व्युच्छिन्न हो जाते हैं ।**

§ ३६. ज्ञानावरणीयकी पांचों ही प्रकृतियोंका बन्ध है, इसलिए प्रकृतमें उसकी एक भी प्रकृतिकी बन्धव्युच्छित्ति नहीं कही है । दर्शनावरणीयकी स्त्यानगृद्धि आदि तीन प्रकृतियाँ पहले ही बन्धसे व्युच्छिन्न हो गई हैं, क्योंकि सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थानके बाद उनका बन्ध नहीं होता । वेदनीयकी असाताप्रकृतिकी बन्ध व्युच्छित्ति हो गई है, क्योंकि प्रमत्तसंयत गुणस्थानके बाद उसका बन्ध नहीं होता । मोहनीयकर्मके मिथ्यात्व, बारह कषाय, अरति, शोक, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी पहले ही बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है, क्योंकि इन प्रकृतियोंकी यथासम्भव नीचेके गुणस्थानोंमें बन्ध-व्युच्छित्ति देखी जाती है । आयुकर्मकी अपेक्षा सभी आयुकर्म बन्धसे विच्छिन्न हैं, क्योंकि उनके बन्धयोग्य स्थानको उल्लंघन कर यह क्षपकश्रेणिके योग्य अधःप्रवृत्तकरणसम्बन्धी विशुद्धियोंमें

१. ता०प्रतौ ओरालियसरीर इति पाठो नास्ति ।

माणत्तादो। णामस्स सव्वाओ चेव परियत्तमाणीओ असुहपयडीओ पुव्वमेव बंधेण वोच्छिण्णाओ। ताओ कदमाओ त्ति वुत्ते णिरय-तिरिक्खगइ-चउजादि-पंचासुहसंठाण-पंचासुहसंघडण-णिरय-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वि-अप्पसत्थविहायगदि-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणसरीर-अथिरासुह-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-अजसगित्तिणामाओ, एदासिं हेट्ठिमगुणट्ठाणेसु चेव जहासंभवंबंधवोच्छेददंसणादो। ण केवलमेदाओ चेव णाम-पयडीओ बंधेण वोच्छिण्णाओ, किंतु सुभाओ वि काओ वि एत्थ बंधेण वोच्छिण्णाओ त्ति जाणावणट्ठं मणुसगदिआदीणं णामणिद्दे सो कओ। मणुसगइदुगोरालियदुगवज्जरिसह-संघडणाणमसंजदसम्माइट्ठिम्मि चेव बंधवोच्छेददंसणादो। आदावुज्जोवाणं मिच्छाइट्ठि-सासणसम्माइट्ठीसु जहाकमं वोच्छिण्णबंधत्तादो। तदो णामस्स एदाओ पयडीओ बंधेण वोच्छिण्णाओ। गोदस्स णीचागोदं बंधेण वोच्छिण्णं; सासणगुणट्ठाणे चेव तस्स बंधुवरमदंसणादो। अंतराइयस्स ण एक्कस्स वि बंधवोच्छेदो। संपहि उदय-वोच्छेदगवेसणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** थीणगिद्धितियं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-मणुसाउगवज्जाणि आउगाणि णिरयगइ-तिरिक्खगइ-देवगइपाओग्गणामाओ आहारदुगं च वज्जरिसहसंघडवज्जाणि सेसाणि संघडणाणि मणुसगइ-**

विद्यमान है। नामकर्मकी परिवर्तमान सभी अशुभ प्रकृतियाँ बन्धसे व्युच्छिन्न हैं।

शंका—वे कौन हैं ?

समाधान—ऐसा पूछनेपर कहते हैं—नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियादि चार जाति, पाँच अशुभ संस्थान, पाँच अशुभ संहनन, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारणशरीर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और अयशकीर्ति नामकर्म, क्योंकि इनकी यथासम्भव नीचेके गुणस्थानोंमें ही बन्धव्युच्छित्ति देखी जाती है।

केवल यही नामकर्मकी प्रकृतियाँ बन्धसे व्युच्छिन्न नहीं हैं, किन्तु कितनी ही शुभ प्रकृतियाँ भी यहाँपर बन्धसे व्युच्छिन्न हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये मनुष्यगति आदिका नाम निर्देश किया है, क्योंकि मनुष्यगतिद्विक, औदारिकशरीरद्विक और वज्रर्षनाराचसंहननकी असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें ही बन्धव्युच्छित्ति देखी जाती है। आतप और उद्योतकी क्रमसे मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है। इसलिये नामकर्मकी ये प्रकृतियाँ भी बन्धसे व्युच्छिन्न हैं। गोत्रकर्मका नीचगोत्र बन्धसे व्युच्छिन्न है, क्योंकि सासादनगुणस्थानमें ही उसकी व्युच्छित्ति देखी जाती है। अन्तरायकर्मकी एक भी प्रकृति बन्धसे व्युच्छिन्न नहीं है। अब उदयव्युच्छित्तिका गवेषण करनेके लिये आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, मनुष्यायुको छोड़कर तीन आयु, नरकगति, तिर्यञ्चगति और देवगति तथा ये तीनों आनुपूर्वी, आहारकद्विक, वज्रर्षभनाराचसंहननको छोड़कर शेष पांच संहनन, मनुष्यगति**

पाओग्गाणुपुव्वी अपज्जत्तणामं असुहतियं तित्थयरणामं च सिया, णीचागोदं, एदाणि कम्माणि उदएण वोच्छिण्णाणि ।

§ ३७. तं जहा—थीणगिद्धितियस्स पुव्वमेव उदओ वोच्छिण्णो; तदुदयस्स पमत्तगुणपज्जंतत्तादो । ण एत्थ णिद्दापयलाणमुदयवोच्छेदो आसंकणिज्जो; झाणीसु वि तासिमवत्तोदयस्स जाव खीणकसायदुचरिमसमयो त्ति संभवे विरोहाभावादो । सेसाणमुदयवोच्छेदो सुत्ताणुसारेण वत्तव्वो । णवरि णिरयगइ-तिरिक्खगइ-देवगइपाओग्गणामाओ त्ति वुत्ते णिरय-तिरिक्ख-देवगइ-तप्पाओग्गाणुपुव्वी-एइंदिय-विगलिंदियजादि-वेउव्वियसरीर-तदंगोवंग-आदावुज्जोव-थावर-सुहुम-साहारणसरीराणं गहणं कायव्वं; तेसिमसाहारणभावेण तिसु गदीसु जहासंभवं पडिबंधत्तदंसणादो । असुभतिगं ति वुत्ते दूभग-अणादेज्ज-अजसगित्तीणं गहणं कायव्वं । 'तित्थयरणामं च सिया' त्ति भणिदे तित्थयरणामं सिया अत्थि सिया णत्थि । जइ अत्थि णियमा उदएण वोच्छिण्णमिदि घेत्तव्वं, एदम्मि विसए तदुदयस्स अच्चंताभावेण वोच्छिण्णत्तदंसणादो । तदो सुत्तासेसपयडीणमेत्थुदयवोच्छेदो । तव्वदिरित्ताणं च उदयो त्ति सिद्धो सुत्तत्थसमुच्चओ । संपहि गाहापच्छद्धविहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** 'अंतरं वा कहिं किच्चा के के संकामगो कहिं' त्ति विहासा ।**

प्रायोग्यानुपूर्वी, अपर्याप्तनाज, अशुभत्रिक, कदाचित् तीर्थंकर नाम और नीचगोत्र ये कर्म उदयसे व्युच्छिन्न हैं ।

§ ३७. वह जैसे—स्त्यानगृद्धित्रिक पहले ही उदयसे व्युच्छिन्न हो गई हैं, क्योंकि उनका उदय प्रमत्तसंयतगुणस्थान तक होता है । यहाँपर निद्रा और प्रचलाकी उदयव्युच्छित्तिकी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि ध्यानी साधुओंके भी क्षीणकसाय गुणस्थानके द्विचरम समयतक उनके अव्यक्त उदयके होनेमें विरोधका अभाव है । शेष प्रकृतियोंकी उदयव्युच्छित्ति सूत्रके अनुसार कहनी चाहिये । इतनी विशेषता है कि णिरयगइ-तिरिक्खगइ-देवगइपाओग्गपुव्विणामाओ ऐसा कहनेपर नरकगति, तिर्यञ्चगति देवगति और इनकी आनुपूर्वीत्रिक, एकेन्द्रियजाति, विकलेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियकशरीर आंगोपांग, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणशरीर इनका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि उनका असाधारणरूपसे क्रमशः तीन गतियोंके साथ ही सम्बन्ध देखा जाता है । अशुभत्रिक ऐसा कहनेपर दुर्भग, अनादेय और अयशःकीर्तिका ग्रहण करना चाहिये । 'तित्थयरणामं च सिया' ऐसा कहनेपर तीर्थंकर नामकर्म कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो यहाँपर नियमसे उदयसे व्युच्छिन्न है ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि इस स्थानमें उसके उदयका अत्यन्त अभाव होनेसे उसकी व्युच्छित्ति देखी जाती है । इसलिए सूत्रमें कही गई समस्त प्रकृतियोंकी यहाँ उदमव्युच्छित्ति है । उनके अतिरिक्त शेष प्रकृतियोंका उदय है इस प्रकार सूत्रका समुच्चयार्थ सिद्ध हुआ । अब गाथाके उत्तरार्धकी विभाषा करनेके लिये आगेका सूत्र-प्रबन्ध आया है—

*** अन्तरको कहां करके किन-किन कर्मोंका कहां संक्रामक होगा इस पदकी विभाषा ।**

§ ३८. सुगमं ।

*** ण ताव अंतरं करेदि, पुरदो काहिदि त्ति अंतरं ।**

§ ३९. ण ताव एत्थुद्देसे अंतरं काहिदि । किं कारणं ? अंतरकरणणिबंधणाणमणियट्टिकरणपरिणामाणमेदम्मि अवत्थाविसेसे संभवाणुवलंभादो । तदो एत्तो उवरि अपुव्वकरणद्धमुल्लंघियूण अणियट्टिकरणद्धाए च संखेज्जेसु भागेसु वोलीणेसु तत्थुद्देसे पुरदो अंतरं काहिदि । तत्थेव च जहावसरं चरित्तमोहपयडीणं संकामगो भविस्सदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थणिच्छओ । एवं तदियगाहाए अत्थविहासा समत्ता । संपहि चउत्थसुत्तगाहाए विहासणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** 'किंट्ठिदियाणि कम्माणि अणुभागेसु केसु वा । ओवट्टियूण सेसाणि कं ठाणं पडिवज्जदि' त्ति विहासा ।**

§ ४०. सुगमं । संपहि एदिस्से सुत्तगाहाए अवयवत्थविहासा सुगमा त्ति तमुल्लंघियूण समुदायत्थं चेव विहासेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एदीए गाहाए ट्ठिदिघादो अणुभागघादो च सूचिदो भवदि ।**

§ ४१. किं कारणं ? कम्हि ट्ठिदिविसेसे वट्टमाणाणि कम्माणि कंडयघादेणोवट्टियूण कं ठाणमवसेसं पडिवज्जदि । केसु वा अणुभागेसु वट्टमाणाणि कम्माणि कंडय-

---

§ ३८. यह सूत्र सुगम है ।

*** यह अन्तरको नहीं करता है, आगे करेगा ।**

§ ३९. वह अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें स्थित जीव अन्तरको तो नहीं करता है, क्योंकि अन्तरकरणके कारणभूत अनिवृत्तिकरण परिणाम इस अवस्थाविशेषमें उपलब्ध नहीं होते । इसलिये इस आगेके अपूर्वकरणकालको उल्लंघन करके अनिवृत्तिकरणकालके संख्यात बहुभागके व्यतीत होनेपर उस स्थानमें आगे अन्तर करता है । तथा वहींपर अवसर आनेपर चारित्रमोहनीयकी प्रकृतियोंका संक्रामक होगा इस प्रकार यह यहाँपर उक्त सूत्रका अर्थ निश्चय है । इस प्रकार तीसरी गाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई । अब चौथी सूत्रगाथाकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** किस स्थितिवाले और किन अनुभागोंमें स्थित कर्मोंको अपवर्तना करके शेष रहे स्थिति और अनुभाग किस स्थानको प्राप्त होते हैं ।**

§ ४०. अब इस सूत्रगाथाके अवयवोंकी अर्थविभाषा सुगम है, इसलिये उसे उल्लंघन कर समुदायरूप अर्थकी ही विभाषा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस गाथा द्वारा स्थितिघात और अनुभागघात सूचित किया गया है ।**

§ ४१. क्योंकि किस स्थितिमें विद्यमान कर्म काण्डकघातके द्वारा अपवर्तित करके अवशिष्ट रहे किस स्थानको प्राप्त होते हैं । तथा किन अनुभागोंमें विद्यमान कर्म काण्डकघातके द्वारा

घादेणोवट्टिय अवसेसं कं ठाणं पडिवज्जदि त्ति पुच्छामुहेण ट्ठिदि-अणुभागघादेसु एदिस्से गाहाए पडिबद्धत्तदंसणादो। एवमेदीए गाहाए सूचिदाणं ट्ठिदि-अणुभागघादाणं पवुत्ती किमेत्थेव अधापवत्तकरणचरिमसमए होदि, आहो एत्तो उवरि पयट्टदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** तदो इमस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणे वट्टमाणस्स णत्थि ट्ठिदिघादो अणुभागघादो वा। से काले दो वि घादा पवत्तिहिंति।**

§ ४२. अधापवत्तकरणचरिमसमये वट्टमाणस्स इमस्स जीवस्स ट्ठिदि-अणुभागघादसंभवो णत्थि, किंतु अधापवत्तकरणचरिमसमयादो से काले अपुव्वकरणं पविट्ठस्स एदे दो वि घादा पवत्तिहिंति त्ति भणिदं होदि। जइ एवं, अधापवत्तकरणविसोहिपडिलंभो णिरत्थओ; तत्तो ट्ठिदि-अणुभागघादादिकज्जविसेसाणमणुवलद्धीदो[1] त्ति णासंकणिज्जं; ठिदिअणुभागघादहेदुभूदापुव्वकरणपरिणामाणमुप्पत्तीए णिमित्तभावेणेदस्स सहलत्तदंसणादो। एवमेदासु चदुसु पट्ठवणमूलगाहासु विहासिदासु तदो अधापवत्तकरणद्धा समत्ता भवदि। एवमधापवत्तकरणपरूवणं समाणिय संपहि अपुव्वकरणविसयकज्जभेदपदुप्पायणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

अपवर्तित करके अवशिष्ट रहे किस स्थानको प्राप्त होते हैं इस प्रकार पृच्छा द्वारा स्थितिघात और अनुभागघातके विषयमें यह गाथा प्रतिबद्ध देखी जाती है। इस प्रकार इस गाथा द्वारा सूचित किये गए स्थितिघात और अनुभागघातकी प्रवृत्ति क्या यहीं अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें होती है अथवा इससे आगे इसकी प्रवृत्ति होती है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

*** इसलिये अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें स्थित इस जीवके स्थितिघात और अनुभागघात नहीं होता।**

§ ४२. अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान इस जीवके स्थितिघात और अनुभागघात सम्भव नहीं है, किन्तु अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयसे अनन्तर समयमें अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके ये दोनों घात प्रवृत्त होंगे यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है।

शंका—यदि ऐसा है तो अधःप्रवृत्तकरणरूप विशुद्धिकी प्राप्ति निरर्थक है क्योंकि उस विशुद्धिसे स्थितिघात और अनुभागघात आदि कार्यविशेषोंकी उपलब्धि नहीं होती ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि स्थितिघात और अनुभागघातके हेतुभूत अपूर्वकरणके परिणामोंकी उत्पत्तिके निमित्तरूपसे इस करणकी सफलता देखी जाती है।

इस प्रकार इन चार प्रस्थापन मूलगाथाओंकी विभाषा कर देनेपर अधःप्रवृत्तकरणकाल समाप्त होता है। इस प्रकार अधःप्रवृत्तकरणकी प्ररूपणाको समाप्त करके अब अपूर्वकरणस्थानके कार्यभेदोंका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

---

१. आ०प्रतौ -मणूवलंभादो इति पाठः।

*** पढमसमयअपुव्वकरणं पविट्ठेण ट्ठिदिखंडयमागाइदं ।**

§ ४३. अधापवत्तकरणाणंतरमपुव्वकरणगुणट्ठाणमंतोमुहुत्तकालपडिबद्धं पविट्ठेण पढमसमये चेव ट्ठिदिखंडयं गहेदुमाढत्तमिदि वुत्तं होइ । किं कारणं ? अपुव्वकरण-विसोहीणं ट्ठिदि-अणुभागखंडयघादाविणाभावित्तादो । एदस्स पुण पढमट्ठिदिखंडयस्स पमाणणिण्णयमुवरि सुत्तपबद्धमेवकस्सामो । संपहि एत्थेवाणुभागखंडयं पि आढत्तमिदि जाणावणट्ठमुत्तरमुत्तमाह—

*** अणुभागखंडयं च आगाइदं ।**

§ ४४. अपुव्वकरणविसोहिपाहम्मेण ट्ठिदिखंडयाढवणसमकालमेवाणुभागखंडयं पि गहेदुमाढत्तमिदि भणिदं होदि । तं पुण किं पमाणमणुभागखंडयं, केत्ति वा कम्माणं होदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** तं पुण अप्पसत्थाणं कम्माणमणंता भागा ।**

§ ४५. तं पुण अणुभागखंडयमप्पसत्थाणं चेव कम्माणं होदि, पसत्थाणं पयडीणं विसोहीए अणुभागखंडयघादासंभवादो । होंतं पि अप्पसत्थकम्माणमणुभाग-संतकम्मस्स अणंते भागे घेत्तूण पयट्टदि, करणविसोहीहिं अणंतगुणहाणीए चेव अणुभागघादो होदि त्ति णियमदंसणादो । एत्थ पढमाणुभागखंडयमाहप्पावबोहणट्ठ-

---

*** अपूर्वकरणके प्रथम समयमें प्रविष्ट हुए जीवने स्थितिकाण्डक ग्रहण किया ।**

§ ४३. अधःप्रवृत्तकरणके अनन्तर अन्तर्मुहूर्त कालप्रमाण अपूर्वकरण गुणस्थानमें प्रविष्ट हुए जीवने प्रथम समयमें ही स्थितिकाण्डक ग्रहण करना प्रारम्भ किया यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि अपूर्वकरणसम्बन्धी विशुद्धियाँ स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघातकी अविना-भावी होती हैं । परन्तु इस प्रथम स्थितिकाण्डकके प्रमाणका निर्णय आगे सूत्रमें निबद्ध करेंगे । अब यहीं अनुभागकाण्डकको भी आरम्भ किया इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** और उसी समय अनुभागकाण्डकको ग्रहण किया ।**

§ ४४. अपूर्वकरणसम्बन्धी विशुद्धिकी प्रधानतावश स्थितिकाण्डकके ग्रहण करनेके समान-कालमें ही अनुभागकाण्डकको भी ग्रहण करनेके लिये आरम्भ किया यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है । परन्तु वह अनुभागकाण्डक कितने प्रमाणवाला होता है और किन कर्मोंका होता है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिये आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** परन्तु वह अप्रशस्त कर्मोंका होता है तथा अनुभागके अनन्त बहुभागप्रमाण होता है ।**

§ ४५. परन्तु वह अनुभागकाण्डक अप्रशस्त कर्मोंका ही होता है, क्योंकि प्रशस्त प्रकृतियों-का विशुद्धिवश अनुभागकाण्डकघात होना असम्भव है । ऐसा होकर भी अप्रशस्त कर्मोंसम्बन्धी अनुभागसत्कर्मके अनन्त बहुभागप्रमाण होकर प्रवृत्त होता है, क्योंकि करणसम्बन्धी विशुद्धियोंके कारण अनन्तगुणहानिरूपसे ही अनुभागघात होता है ऐसा नियम देखा जाता है । यहाँपर प्रथम

भेदप्पाबहुअमणुगंतव्वं। तं जहा—एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि थोवाणि। अइच्छावणा अणंतगुणा। णिक्खेवो अणंतगुणो। अणुभागखंडयदीहत्तमणंतगुणमिदि। एदमप्पाबहुअं सव्वाणुभागखंडएसु दट्ठव्वं। एवं पढमाणुभागखंडयस्स पमाणविणिण्णयं कादूण संपहि पढमट्ठिदिखंडयपमाणाणुगमं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाढवेदि—

*** कसायक्खवगस्स अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखंडयस्स पमाणाणुगमं वत्तइस्सामो।**

§ ४६. सुगममेदं पइण्णावक्कं।

*** तं जहा।**

§ ४७. सुगमं।

*** अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं थोवं। उक्कस्सयं संखेज्जगुणं। उक्कस्सयं पि पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो।**

§ ४८. एत्थ जहण्णयं संखेज्जगुणहीणट्ठिदिसंतकम्मियस्स गहेयव्वं। उक्कस्सयं पुण संखेज्जगुणट्ठिदिसंतकम्मियस्स[1] गहेयव्वं। 'उक्कस्सयं[2] पि पलिदोवमस्स

बलसे अनुभागकांडकके माहात्म्यका बोध करानेके लिये यह अल्पबहुत्व जानना चाहिये। वह जैसे—एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर स्पर्धक स्तोक हैं। उससे अतिस्थापना अनन्तगुणी है। उससे निक्षेप अनन्तगुणा है। उससे अनुभागकाण्डक अनन्तगुणा बड़ा है। यह अल्पबहुत्व सभी अनुभागकाण्डकोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार प्रथम अनुभागकाण्डकके प्रमाणका निर्णय करके अब प्रथम स्थितिकाण्डकके प्रमाणका अनुगम करते हुए आगेके सूत्रप्रवन्धको आरम्भ करते हैं—

*** कषायोंकी क्षपणा करनेवाले जीवके अपूर्वकरणमें प्रथम स्थितिकाण्डकके प्रमाणका अनुगम करेंगे।**

§ ४६. यह प्रतिज्ञावाक्य सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ ४७. यह सूत्र सुगम है।

*** अपूर्वकरणमें प्रथम जघन्य स्थितिकाण्डक सबसे स्तोक है। उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा है। जो उत्कृष्ट होकर भी पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण है।**

§ ४८. यहाँपर जघन्य स्थितिकाण्डक संख्यातगुणे हीन स्थितिसत्कर्मवालेका ग्रहण करना चाहिये, परन्तु उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक उससे संख्यातगुणे स्थितिसत्कर्मवालेका ग्रहण करना चाहिये।

---

१. आ०प्रतौ ट्ठिदिसंतकम्मं इति पाठः। २. आ०प्रतौ उक्कस्सयं पलिदो— इति पाठः।

संखेज्जदिभागो' त्ति वुत्ते जहा जहण्णयं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागपमाणमेव-मुक्कस्सयं पि दट्ठव्वं; ण तत्थ पयारंतरसंभवो त्ति वुत्तं होदि। संपहि एदस्सेवत्थस्स णिण्णयकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं।

*** जहा दंसणमोहणीयस्स उवसामणाए च दंसणमोहणीयस्स खवणाए च कसायाणमुवसामणाए च एदेसिं तिण्हमावासयाणं जाणि अपुव्वकरणाणि तेसु अपुव्वकरणेसु पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो, उक्कस्सयं सागरोवमपुधत्तं। एत्थ पुण कसायाणं खवणाए जं अपुव्वकरणं तम्हि अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं पि उक्कस्सयं पि पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो।**

§ ४९. एतदुक्तं भवति—जहा एदेसु तिसु किरियाभेदेसु किरियंतरेसु च संजमासंजम-संजमग्गहण-अणंताणुबंधिविसंजोयणभेयभिण्णेसु पयट्टमाणो अपुव्वकरणो पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णेण पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागपमाणं; उक्कस्सेण सागरोवम-पुधत्तपमाणमाढवेइ, ण तहा एत्थ संभवो; किंतु एत्थ कसायक्खवणाए अपुव्वकरणस्स पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णमुक्कस्सयं पि पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागपमाणं चेव होदूण जहण्णादो उक्कस्सयं संखेज्जगुणं होदि त्ति गहेयव्वं; दंसणमोहक्खवगेण घादिदाव-

उक्कस्सयं पि पलिदोवमस्स संखज्जदिभागो' ऐसा कहनेपर जिस प्रकार जघन्य स्थितिकाण्डक पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण है उसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक भी जानना चाहिये। वहाँ प्रकारान्तर सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इसी अर्थका निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** जिस प्रकार दर्शनमोहनीयकी उपशामनामें, दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें और कषायोंकी उपशामनामें इन तीन आवश्यकोंके जो अपूर्वकरण हैं उन अपूर्वकरणोंमें जघन्य प्रथम स्थितिकाण्डक पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक सागरोपम पृथक्त्वप्रमाण है। परन्तु यहांपर कषायोंकी क्षपणामें जो अपूर्वकरण है उस अपूर्वकरणमें प्रथम स्थितिकाण्डक जघन्य भी और उत्कृष्ट भी पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण है।**

§ ४९. इस सूत्रमें यह कहा गया है कि जिस प्रकार इन तीन क्रियाभेदोंमें तथा संयमासंयमग्रहण, संयमग्रहण और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाकी अपेक्षा भेदको प्राप्त दूसरी क्रियाओंमें प्रवृत्त होता हुआ अपूर्वकरण जीव जघन्यरूपसे पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्टरूपसे सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण प्रथम स्थितिकाण्डकको करता है, उस प्रकार यहाँ सम्भव नहीं है। किन्तु यहाँ कषायकी क्षपणामें जघन्य भी और उत्कृष्ट भी स्थितिकाण्डक पल्योपमके संख्यातवें भाग-प्रमाण होकर भी जघन्यसे उत्कृष्ट संख्यातगुणा होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि दर्शनमोहकी क्षपणा करनेवाले जीवके द्वारा घाते जानेके बाद जिसके स्थितिसत्कर्म अवशेष रहता

सेसट्ठिदिसंतकम्मस्स सव्वुक्कस्सस्स वि सागरोवमपुधत्तमेत्तट्ठिदिखंडयुप्पत्तीए णिमित्त-भूदस्स अणुवलंभादो त्ति ।

§ ५०. संपहि एत्थ जहण्णयं ट्ठिदिखंडयं कस्स होइ, उक्कस्सयं वा कस्स होदि त्ति एवंविहाए पुच्छाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

*** दो कसायक्खवगा अपुव्वकरणं समगं पविट्ठा । एक्कस्स पुण ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं, एक्कस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणहीणं । जस्स संखेज्जगुणहीणं ठिदिसंतकम्मं तस्स ट्ठिदिखंडयादो पढमादो संखेज्जगुण-ट्ठिदिसंतकम्मियस्स ठिदिखंडयं पढमं संखेज्जगुणं, विदियादो विदियं संखेज्जगुणं । एवं तदियादो तदियं । एदेण कमेण सव्वम्हि अपुव्वकरणे जाव चरिमादो ठिदिखंडयादो त्ति तदिमादो तदिमं संखेज्जगुणं ।**

है उस कषायकी क्षपणा करनेवाले जीवके सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण स्थितिकाण्डककी उत्पत्तिमें निमित्तभूत सबसे उत्कृष्ट स्थितिकाण्डककी अनुपलब्धि है ।

विशेषार्थ—ऐसा नियम है कि इस जीवके जब-जब अपूर्वकरण परिणाम होते हैं तब-तब स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात नियमसे होते हैं । ऐसे स्थान सात हैं—दर्शनमोहनीय की उपशामना, दर्शनमोहनीयकी क्षपणा, चारित्रमोहनीयकी उपशामना, संयमासंयमकी प्राप्ति, संयमकी प्राप्ति, अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना और कषायोंकी क्षपणा । इनमेंसे जो प्रारम्भके छह स्थान हैं उनमें प्रथम जघन्य स्थितिकाण्डकका प्रमाण पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका प्रमाण सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण होता है । यहाँ एक बात यह जाननी चाहिये कि जिन वेदकसम्यग्दृष्टियोंके संयमासंयम और संयमकी प्राप्ति होनेके बाद जबतक एकान्तानुवृद्धिरूप उक्त परिणाम बने रहते हैं तबतक भी स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डक-घात होते रहते हैं । संयमासंयम और संयमके विषयमें शेष कथन आगमके अनुसार जानना चाहिये ।

§ ५०. अब यहाँपर जघन्य स्थितिकाण्डक किसके होता है और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक किसके होता है इस प्रकार ऐसी पृच्छाके होनेपर निःशंक करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** कषायोंकी क्षपणाके लिये समुद्यत हुए दो जीवोंने अपूर्वकरणमें एक साथ प्रवेश किया । परन्तु उनमेंसे एकका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है और एकका स्थिति-सत्कर्म संख्यातगुणा हीन है । जिसका संख्यातगुणा हीन स्थितिसत्कर्म है उसके प्रथम स्थितिकाण्डकसे संख्यातगुणे स्थितिसत्कर्मवालेका प्रथम स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा होता है, दूसरेसे दूसरा संख्यातगुणा होता है तथा तीसरेसे तीसरा संख्यातगुणा होता है इस प्रकार उतनेवेंसे उतनेवाँ संख्यातगुणा होता है इस क्रमसे अन्तिम स्थितिकाण्डकके प्राप्त होनेतक पूरे अपूर्वकरणमें जानना चाहिये ।**

§ ५१. तं जहा—एगो पुव्वं दंसणमोहणीयं खविय पच्छा उवसमसेढिं समारूढो। अण्णो दंसणमोहणीयमक्खविय उवसमसेढिं च ट्ठिदो दोण्हमेदेसिं उवसमसेढिं चढिय ओदिण्णाणं मज्झे जो अक्खीणदंसणमोहणिज्जो सो पच्छा दंसणमोहणीयं खविय चरित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अपुव्वकरणपढमसमयम्मि ट्ठिदो। इयरो वि समयाविरोहेणागंतूण तत्थेवावट्ठिदो। तत्थ जेण पच्छा दंसणमोहणीयं खविदं तस्स ट्ठिदिसंतकम्मियरस्स ट्ठिदिसंतकम्मादो संखेज्जगुणहीणं होइ। कारणमेत्थ सुगमं। अधवा एक्को दंसणमोहणीयं खविय पुणो उवसमसेढिं चढिय तत्तो ओदरिय चरित्तमोहक्खणाए अब्भुट्ठिदो। अण्णेगो दंसणमोहणीयं खविय उवसमसेढिमचढिय[1] खवणाए अब्भुट्ठिदो। एवमब्भुट्ठिदाणं जो उवसमसेढिं चढिदूणागदो तस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणहीणं[2] होइ। इयरस्स वि ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं होदि, उवसमसेढीए अपत्तघादत्तादो। एवं होदि त्ति कादूण[3] जस्स संखेज्जगुणहीणं ट्ठिदिसंतकम्मं तस्स पढमट्ठिदिखंडयादो संखेज्जगुणट्ठिदिसंतकम्मियस्स पढमं ट्ठिदिखंडयं संखेज्जगुणं होदि; ट्ठिदिसंतकम्माणुसारेणेव ट्ठिदिखंडयाणं पि पवुत्तीए बाहाणुवलंभादो। एवं विदियादिट्ठिखंडयाणं पि वुत्ती एदेणेव कमेणाणुगंतव्वा जाव दोण्हं पि अपुव्वकरणचरिमट्ठिदिखंडयं ति। तम्हा अपुव्वकरणपढमट्ठिदिखंडयं जहण्णमुक्कस्सयं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो चेव।

§ ५१. वह जैसे—एक जीव पहले दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करके पीछे उपशमश्रेणिपर आरूढ़ हुआ। अन्य जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणा किये बिना उपशमश्रेणिपर चढ़ा। उपशमश्रेणिपर चढ़कर उतरे हुए इन दोनों जीवोंके मध्यमें जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणा नहीं करनेवाला जीव है वह बादमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत हो अपूर्वकरणके प्रथम समयमें स्थित है तथा दूसरा भी आगमके अविरोधपूर्वक आकर वहीं स्थित है। वहाँ जिसने पीछे दर्शनमोहनीयकी क्षपणा की स्थितिसत्कर्मवाले उसके स्थितिसत्कर्मसे दूसरेका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा हीन होता है। यहाँपर कारणका कथन सुगम है। अथवा एक दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करके पुनः उपशमश्रेणिपर चढ़कर और वहाँसे उतरकर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। तथा अन्य एक जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करके और उपशमश्रेणिपर न चढ़कर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत हुआ। इस प्रकार क्षपकश्रेणिपर चढ़नेके लिये उद्यत हुए इन दोनों जीवोंमेंसे जो उपशमश्रेणिपर चढ़कर आया है उसका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा हीन होता है तथा दूसरेका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा होता है। ऐसा समझकर जिसका संख्यातगुणा हीन सत्कर्म होता है उसके प्रथम स्थितिकाण्डकसे संख्यातगुणे स्थितिसत्कर्मवालेका प्रथम स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा होता है, क्योंकि स्थितिसत्कर्मके अनुसार ही स्थितिकाण्डकोंकी प्रवृत्ति भी बिना बाधाके उपलब्ध होती है। इस प्रकार दोनोंके ही अपूर्वकरणके अन्तिम स्थितिकाण्डकके प्राप्त होनेतक द्वितीयादि स्थितिकाण्डकोंकी प्रवृत्ति भी इसी क्रमसे जाननी चाहिये। इस प्रकार अपूर्वकरणके जघन्य और उत्कृष्ट दोनों ही स्थितिकाण्डक पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होते

१. ता०प्रतौ [उवसम (खवग)] सेडिं चडिय इति पाठः। २. -गुणं हीणं इति पाठः।
३. ता०प्रतौ त्ति घादं कादूण इति पाठः

जहण्णादो पुण उक्कस्सयं संखेज्जगुणं होइ त्ति सिद्धं । एवं विसेसहीणाहियट्ठिदिसंतकम्मियाणं पि दोण्हमपुव्वकरणाणं खवगाणं ठिदिखंडयाणि विसेसहीणाहियभावेणेवापुव्वकरणकालब्भंतरे पयट्टंति त्ति वत्तव्वं ।

*** एसा ट्ठिदिखंडयपरूवणा अपुव्वकरणे ।**

§ ५२. एवमेसा अणंतरपरूविदा ठिदिखंडयपरूवणा अपुव्वकरणे दट्ठव्वा, पढमट्ठिदिखंडयपमाणावहारणपसंगेण सविस्से चेवापुव्वकरणद्धाए ट्ठिदिखंडयपमाणस्स परूविदत्तादो । संपहि अपुव्वकरणपढमसमए ट्ठिदि-अणुभागखंडएहिं जह जाणि अण्णाणि वि आवासयाणि पारद्धाणि तेसिं परूवणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

*** अपुव्वकरणस्स पढमसमए जाणि आवासयाणि ताणि वत्तइस्सामो ।**

§ ५३. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ ५४. एदापि सुगमं ।

*** ठिदिखंडयमागाइदं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ।**

होते हैं । परन्तु जघन्यसे उत्कृष्ट संख्यातगुणा होता है यह सिद्ध हुआ । इस प्रकार विशेष हीन और अधिक स्थितिसत्कर्मवाले दोनों ही अपूर्वकरण क्षपक जीवोंके स्थितिकाण्डक अपूर्वकरणके कालमें विशेष हीन और अधिकरूपसे ही प्रवृत्त होते हैं ऐसा कहना चाहिये ।

विशेषार्थ—यहाँ चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवोंके अपूर्वकरण गुणस्थानमें प्रथमादि जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकोंका विचार दो प्रकारसे किया गया है । उनमेंसे जो पहला प्रकार है उसको समझनेके लिये पुस्तक १२ दर्शनमोहक्षपणा अधिकार पृ० २९ देखना चाहिये । दूसरा प्रकार सुगम है ।

*** यह स्थितिकाण्डकोंकी प्ररूपणा अपूर्वकरणमें की गई ।**

§ ५२. इस प्रकार यह अनन्तर कही गई स्थितिकाण्डकोंकी प्ररूपणा अपूर्वकरणमें जानना चाहिये, क्योंकि प्रथम स्थितिकाण्डकके अवधारणके प्रसंगसे पूरे अपूर्वकरणके कालमें स्थितिकाण्डकोंके प्रमाणका कथन कर दिया । अब अपूर्वकरके प्रथम समयमें स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकोंके साथ जो अन्य आवश्यक भी प्रारम्भ होते हैं उनका कथन करनेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जो आवश्यक होते हैं उन्हें बतलावेंगे ।**

§ ५३. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ ५४. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** पहले समयमें पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकको ग्रहण किया ।**

* **अप्पसत्थाणं कम्माणमणंताभागा अणुभागखंडयमागाइदं ।**

§ ५५. जइ वि एदाणि दो वि आवासयाणि अणंतरमेव परूविदाणि तो वि अपुव्वकरणविसयसव्वावासयपरूवणासंबंधेण पुणो वि णिद्दिट्ठाणि त्ति ण पुणरुत्तदोससंभवो ।

* **पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधेण ओसरिदो ।**

§ ५६. ट्ठिदिबंधोसरणं णाम तदियमेदमावासयं, तेण अधापवत्तकरणचरिमट्ठिदिबंधादो सव्वेसिं बज्झमाणकम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्तेणोसरियूण अण्णं ट्ठिदिबंधमेसो पढमसमयापुव्वकरणो आढवेदि त्ति घेत्तव्वं ।

* **गुणसेढी उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता [1]अपुव्वकरणद्धादो अणियट्टिकरणद्धादो च विसेसुत्तरकालो ।**

§ ५७ तम्हि चेव समए परिणामविसेसेण असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तदव्वमोकड्डियूण उदयावलियबाहिरे अपुव्वाणियट्टिकरणद्धाहिंतो विसेसुत्तरकालायामेण गुणसेढिं णिक्खिवदि त्ति चउत्थमेदमावासयं दट्ठव्वं । एत्थ विसेसाहियपमाणं सुहुमसांपराइयखीणकसायद्धाहिंतो विसेसुत्तरमिदि घेत्तव्वं । कुदो एदं णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धवक्खाणादो ४ ।

---

* **अप्रशस्त कर्मोंके अनन्त बहुभागप्रमाण अनुभागकाण्डकको ग्रहण किया ।**

§ ५५. यद्यपि इन दोनों आवश्यकोंका अनन्तर ही प्ररूपण कर आये हैं तो भी अपूर्वकरणविषयक सभी आवश्यकोंके कथन करनेके सम्बन्धसे फिर भी उनका निर्देश किया है, इसलिये पुनरुक्त दोष सम्भव नहीं है ।

* **पल्योपमके संख्यातवें भागको स्थितिबन्धमेंसे घटाता है ।**

§ ५६. स्थितिबन्धापसरण यह तीसरा आवश्यक है, इसलिये अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें सभी कर्मोंका जो स्थितिबन्ध होता है उसकी अपेक्षा पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्धको घटाकर यह अपूर्वकरणके प्रथम समयमें स्थित जीव अन्य स्थितिबन्धको आरम्भ करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये ।

* **उदयावलिके बाहर निक्षिप्त गुणश्रेणि अपूर्वकरणके कालसे और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक कालप्रमाण आयामवाली होती है ।**

§ ५७. उसी समय परिणामविशेषवश असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्यका अपकर्षण करके उदयावलिके बाहर गुणश्रेणिको निक्षिप्त करता है, जिसका आयाम अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे विशेष अधिक कालप्रमाण होता है । इस प्रकार यह चौथा आवश्यक जानना चाहिये । यहाँपर विशेष अधिकका प्रमाण सूक्ष्मसाम्पराय और क्षीणकषायके कालसे विशेष अधिक है ऐसा ग्रहण करना चाहिये ४ ।

---

१. ता०प्रतौ अपुव्व– इत्यतः विसेसुत्तरकालो इति यावत् टीकायां सम्मिलितः ।

*** जे[1] अप्पसत्थकम्मंसा ण बज्झंति तेसिं कम्माणं गुणसंकमो जादो ।**

§ ५८. पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए पदेसग्गस्स परपयडीसु संकमो गुणसंकमो त्ति भण्णदे । सो वुण अप्पसत्थाणमेव कम्माणमबज्झमाणाणं होदि, अण्णत्थ तप्पवुत्तीए असंभवादो । एवंलक्खणो गुणसंकमो पुव्वमसंतो एण्हिमपुव्वकरणपढमसमए पारद्धो त्ति भणिदं होइ ५ ।

*** तदो ट्ठिदिसंतकम्मं ट्ठिदिबंधो च सागरोवमकोडिसदसहस्सपुधत्तमंतोकोडाकोडीए । बंधादो पुण संतकम्मं संखेज्जगुणं ।**

§ ५९. अपुव्वकरणपढमसमए ट्ठिदिबंधो ट्ठिदिसंतकम्मं च सागरोवमकोडिसदसहस्सपुधत्तमंतोकोडाकोडीए वट्टदि त्ति घेत्तव्वं । णवरि ट्ठिदिबंधादो ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणमेत्तं होदि, सम्माइट्ठिबंधसंताणं तहाभावेणेव सव्वत्थावट्ठाणदंसणादो ।

*** एसा अपुव्वकरणपढमसमए परूवणा ।**

§ ६०. सुगमं ।

*** एत्तो[2] बिदियसमए णाणत्तं ।**

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सूत्रके अविरुद्ध व्याख्यानसे जाना जाता है ४ ।

*** जो अप्रशस्त कर्म नहीं बँधते हैं उन कर्मोंका गुणसंक्रम होने लगता है ।**

§ ५८. प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणे श्रेणिरूपसे प्रदेशपुंजका पर-प्रकृतियोंमें संक्रम होना गुणसंक्रम कहा जाता है । परन्तु वह नहीं बँधनेवाले अप्रशस्त कर्मोंका ही होता है, क्योंकि अन्यत्र उसकी प्रवृत्तिका होना असम्भव है । इस प्रकारके लक्षणवाला गुणसंक्रम पहले नहीं होता था, अब अपूर्वकरणके प्रथम समयमें प्रारम्भ हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ५ ।

*** वहांसे स्थितिसत्कर्म और स्थितिबन्ध कोड़ाकोड़ी सागरोपमके भीतर कोड़िलक्षपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण होने लगता है । किन्तु बन्धसे सत्कर्म संख्यातगुणा होता है ।**

§ ५९. अपूर्वकरणके प्रथम समयमें स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म कोड़ाकोड़ी सागरोपमके भीतर कोड़िलक्षपृथक्त्वसागरोपमप्रमाण होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । इतनी विशेषता है कि स्थितिबन्धसे स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवोंके बन्ध और सत्त्वका सर्वत्र उसी रूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

*** यह अपूर्वकरणके प्रथम समयमें की गई प्ररूपणा है ।**

§ ६०. यह सूत्र सुगम है ।

*** आगे दूसरे समयमें नानापनको कहते हैं ।**

---

१. ता०प्रतौ 'जे अप्पसत्थकम्मंसा' इत्यादि सूत्रं टीकायां सम्मिलितन् । २. आ०प्रतौ सूत्रमिदं टीकायां सम्मिलितम् ।

§ ६१. पढमसमयपरूवणादो विदियसमए जं णाणत्तं तमिदाणिं वत्तइस्सामो त्ति भणिदं होदि ।

❀ तं जहा ।

§ ६२. सुगमं ।

❀ गुणसेढी असंखेज्जगुणा । सेसे च णिक्खेवो । विसोही च अणंतगुणा । सेसेसु आवासयेसु णत्थि णाणत्तं ।

§ ६३. एवमेदाणि तिण्णि चेव णाणत्ताणि, अण्णेसु आवासयेसु ण किंचि णाणत्तमत्थि, तेसिं पुव्वुत्ताणं चेव विदियसमए वि पवुत्तिदंसणादो त्ति भणिदं होदि ।

❀ एवं जाव पढमाणुभागखंडयं समत्तं ति ।

§ ६४. एवमेदेणाणंतरपरूविदेण कमेण ताव णेदव्वं जाव एत्तो उवरि अंतोमुहुत्तमेत्तमद्धाणं गंतूण पढमाणुभागखंडयं णिट्ठिदं त्ति । कुदो ? एदम्मि विसये विदियसमयपरूवणाए णाणत्तेण विणा पवुत्तिदंसणादो ।

❀ तदो से काले अण्णमणुभागखंडयमागाइदं । सेसस्स अणंता भागा ।

§ ६५. पढमाणुभागखंडये अंतोमुहुत्तेण णिल्लेविदे तदणंतरसमए चेव अण्णमणुभागखंडयं घादिदसेसाणुभागस्स अणंतभागमेत्तमागाइदमिदि वुत्तं होइ । एवं

---

§ ६१. प्रथम समयकी प्ररूपणासे दूसरे समयकी प्ररूपणामें जो नानापन अर्थात् भेद है उसे इस समय कहेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ वह जैसे ।

§ ६२. यह सूत्र सुगम है ।

❀ गुणश्रेणि असंख्यातगुणी होती है और शेषमें निक्षेप होता है । विशुद्धि अनन्तगुणी होती है । शेष आवश्यकोंमें नानापन नहीं है ।

§ ६३. इस प्रकार ये तीन ही नानापन हैं, अन्य आवश्यकोंमें कुछ भी नानापन नहीं है, क्योंकि उनकी पूर्वोक्तरूपसे ही दूसरे समयमें प्रवृत्ति देखी जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ इस प्रकार प्रथम अनुभागकाण्डकके समाप्त होनेतक जानना चाहिये ।

§ ६४. इस प्रकार अनन्तर की गई इस प्ररूपणाके क्रमसे आगे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल जाकर प्रथम अनुभागकाण्डकके समाप्त होनेतक कथन करना चाहिये, क्योंकि इस कालके भीतर अन्य प्रकारके नानापनके बिना दूसरे समयकी प्ररूपणाके समान ही प्रवृत्ति देखी जाती है ।

❀ उसके बाद अगले समयमें अन्य अनुभागकाण्डकको ग्रहण करता है, जो शेष रहे अनुभागके अनन्त बहुभागप्रमाण होता है ।

§ ६५. अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा प्रथम अनुभागकाण्डकके निर्लेपित हो जानेपर तदनन्तर समयमें ही घात करनेके बाद शेष रहे अनुभागके अनन्त बहुभागप्रमाण अन्य अनुभागकाण्डकको

पढमट्ठिदिखंडयकालब्भंतरे चेव पुणो पुणो अणुभागखंडयाणि गेण्हयमाणस्स[1] संखेज्जेसु अणुभागखंडयसहस्सेसु गदेसु ताधे तदित्थाणुभागखंडएण सह पढमट्ठिदिखंडय-मपुव्वकरणस्स पढमट्ठिदिबंधो च जुगवमेदाणि णिट्ठिदाणि त्ति पदुप्पायणफलमुत्तरसुत्तं—

*** एवं संखेज्जेसु अणुभागखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभाग-खंडयं पढमट्ठिदिखंडयं च। जो च पढमसमए अपुव्वकरणे ट्ठिदिबंधो पबद्धो, एदाणि तिण्णि वि समगं णिट्ठिदाणि।**

§ ६६. गयत्थमेदं सुत्तं।

*** एवं ट्ठिदिबंधसहस्सेहिं गदेहिं अपुव्वकरणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे तदो णिद्दा-पयलाणं बंधवोच्छेदो।**

§ ६७. सुगममेदं सुत्तं। णवरि संखेज्जदिभागे गदे त्ति सामण्णेण भणिदे वि अपुव्वकरणद्धं सत्त भागे कादूण तत्थेयभागे गदे त्ति घेतव्वं, 'वक्खाणदो विसेस-पडिवत्ती होइ' त्ति णायादो।

*** ताधे चेव ताणि गुणसंकमेण संकमंति।**

ग्रहण करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार प्रथम स्थितिकाण्डकके कालके भीतर ही पुनः पुनः अनुभागकाण्डकोंको ग्रहण करनेवाले जीवके हजारों अनुभागकाण्डकोंके जानेपर उस कालमें वहाँके अनुभागकाण्डकके साथ अपूर्वकरण जीवके प्रथम स्थितिकाण्डक और प्रथम स्थिति-बन्ध ये तीनों ही एक साथ समाप्त होते हैं इस बातका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इस प्रकार संख्यात हजार अनुभागकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर अन्य अनुभाग-काण्डक, प्रथम स्थितिकाण्डक और जो अपूर्वकरणके प्रथम सययमें स्थितिबन्ध बांधा था ये तीनों ही एक साथ समाप्त हो जाते हैं।**

§ ६६. यह सूत्र गतार्थ है।

*** इस प्रकार हजारों स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेके साथ अपूर्वकरणकालके संख्यातवें भागके व्यतीत होनेपर उस समय निद्रा और प्रचलाकी बन्धव्युच्छित्ति होती है।**

§ ६७. यह सूत्र सुगम है। इतनी विशेषता है कि 'संखेज्जदिभागे गदे' ऐसा सामान्यरूपसे कहनेपर भी अपूर्वकरणके कालके सात भाग करके उनमेंसे एक भागके जानेपर ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि व्याख्यानसे विशेषकी प्रतिपत्ति होती है ऐसा न्याय है।

*** उसी समय ये दोनों प्रकृतियाँ गुणसंक्रमके द्वारा अन्य प्रकृतियोंमें संक्रमित होती हैं।**

---

१. ता०प्रतौ गेण्हिय- इति पाठः।

§ ६८. कुदो ? वोच्छिण्णबंधाणमप्पसत्थकम्माणं खवगोवसामगेसु गुणसंकमं मोत्तूण पयारंतरस्सासंभवादो ।

*** तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु परभवियणामाणं बंधवोच्छेदो जादो।**

§ ६९. अपुव्वकरणद्धाए छसु सत्तभागेसु गदेसु परभवसंबंधीणं बंधवोच्छेदो जादो त्ति भणिदं होदि । काणि ताणि परभवियणामाणि त्ति वुत्ते—देवगदि-पंचिंदिय-जादि-वेउव्वियाहारतेजाकम्मइयसरीर-समचउरससंठाण-वेउव्वियाहारसरीरंगोवंग - वण्ण-गंध रस-फास-देवगइपाओग्गाणुपुव्वि-अगुरुअलहुआदि ४– पसत्थविहायगदि-तसादि ४–थिर-सुभ-सुभग-सुस्सरादेज्ज-णिमिण-तित्थयरणामाणि । कुदो एदेसिं परभवियसण्णा ? परभवसंबंधिदेवगदीए सह बंधपाओग्गत्तादो । ण जसगित्तीए वि बंधवोच्छेदो एत्था-संकणिज्जो, परभवियणामत्ताविसेसे वि तिस्से उवरिमविसोहीहिं अविरुद्धबंधाए जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति बंधुवरमाभावादो । संपहि एत्तो उवरि वि पुव्वुत्तेणेव कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गच्छमाणेसु तदो अपुव्वकरणद्धा समप्पदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयअपुव्वकरणं पत्तो ।**

---

§ ६८. क्योंकि बन्धसे व्युच्छिन्न हुई अप्रशस्त प्रकृतियोंका क्षपकश्रेणि और उपशमश्रेणिमें गुणसंक्रमको छोड़कर दूसरा प्रकार असम्भव है ।

*** तत्पश्चात् हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर परभवसम्बन्धी नामकर्मकी प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है ।**

§ ६९. अपूर्वकरणके छह-सात भागोंके जानेपर परभवसम्बन्धी प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । वे परभवसम्बन्धी प्रकृतियाँ कौन हैं ऐसा पूछनेपर कहते हैं—देवगति, पञ्चेन्द्रिजाति, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिकशरीर आंगोपांग, आहारकशरीर आंगोपांग, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, अगुरुलघु आदि चार, प्रशस्तविहायोगति, त्रसादि चार, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थंकर ।

शंका—इनकी परभवसम्बन्धी प्रकृतियाँ यह संज्ञा किस कारण है ?

समाधान—क्योंकि ये परभवसम्बन्धी देवगतिके साथ बन्धके योग्य हैं, इसलिये इनकी उक्त संज्ञा है ।

किन्तु यहाँपर यशःकीर्तिकी बन्धव्युच्छित्तिकी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि परभव-सम्बन्धी नामकर्मकी अपेक्षा विशेषता न होनेपर भी उसका सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयतक उपरिम विशुद्धियोंके साथ बन्धका विरोध न होनेसे उसके बन्धका अभाव नहीं होता, अर्थात् दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयतक उसका बन्ध होता रहता है । अब इससे आगे भी पूर्वोक्त क्रमसे ही संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके जानेपर तब अपूर्वकरण काल समाप्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रको कहते है—

*** तत्पश्चात् हजारों स्थितिबन्धोंके जानेपर यह अपूर्वकरणके अन्तिम समयको**

§ ७०. गयत्थमेदं सुत्तं। णवरि चरिमसमयापुव्वकरणभावे वट्टमाणस्स हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं बंधवोच्छेदो जादो। तत्थेव छण्णोकसायाणमुदयवोच्छेदो वि जादो त्ति एसो अत्थो सुगमो त्ति सुत्तयारेण ण परूविदो।

*** से काले पढमसमयअणियट्टी जादो।**

§ ७१. को अणियट्टी णाम? निवृत्तिर्व्यावृत्तिः, परिणामानां विसदृशभावेण परिणतिरित्यनर्थान्तरम्। न विद्यते निवृत्तिरस्येत्यनिवृत्तिः। नानाजीवापेक्षयैकसमयिकानां जीवपरिणामानां मिथो व्यावृत्त्यभावात्प्रतिसमयमेव स्थितैकैकपरिणामोऽनिवृत्तिकरण इत्युक्तं भवति। सुगममन्यत्।

*** पढमसमयअणियट्टिस्स आवासयाणि वत्तइस्सामो।**

§ ७२. एवमणियट्टिकरणं पविट्ठस्स पढमसमए जाणि आवासयाणि संभवंति ताणि परूवइस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं।

*** तं जहा।**

§ ७३. सुगमं।

प्राप्त होता है।

§ ७०. यह सूत्र गतार्थ है। इतनी विशेषता है कि अपूर्वकरणगुणस्थानके अन्तिम समयमें स्थित हुए जीवके हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन चार प्रकृतियोंकी बन्ध व्युच्छित्ति हो जाती है। तथा वहींपर छह नोकषायोंकी भी उदयव्युच्छित्ति हो जाती है। यतः यह अर्थ सुगम है, इसलिये सूत्रकारने इसका कथन नहीं किया।

*** तदनन्तर समयमें वह प्रथम समयवर्ती अनिवृत्तिकरणसंयत हो जाता है।**

§ ७१. अनिवृत्तिका क्या अर्थ है?

समाधान—निवृत्तिका अर्थ व्यावृत्ति है। परिणामोंकी विसदृशरूपसे परिणति यह इसका तात्पर्य है। जिसके परिणामोंकी निवृत्ति अर्थात् विसदृशता नहीं पाई जाती उसका नाम अनिवृत्ति है। नाना जीवोंकी अपेक्षा एक समयवर्ती जीवपरिणामोंके परस्पर व्यावृत्तिका अभाव होनेसे प्रतिसमय होनेवाला एक-एक परिणाम अनिवृत्तिकरणसंज्ञक होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष कथन सुगम है।

*** अब प्रथम समयवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवके आवश्यक बतलावेंगे।**

§ ७२. इस प्रकार अनिवृत्तिकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके प्रथम समयमें जो आवश्यक होते हैं उन्हें बतलावेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है।

*** वे जैसे।**

§ ७३. यह सूत्र सुगम है।

*** पढमसमयअणियट्टिस्स अण्णं ट्ठिदिखंडयं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ।**

*** अण्णमणुभागखंडयं सेसस्स अणंता भागा ।**

*** अण्णो ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागेण हीणो ।**

§ ७४. एदाणि तिण्णि वि आवासयाणि ट्ठिदि-अणुभागखंडय-ट्ठिदिबंधोसरणपबद्धाणि सुगमाणि । एत्थ ट्ठिदिखंडयावासये किंचि परूवेयव्वमत्थि त्ति तप्परूवणट्ठमुत्तरं पबंधमाह—

*** पढमट्ठिदिखंडयं विसमं जहण्णयादो उक्कसयं संखेज्जभागुत्तरं ।**

§ ७५. एतदुक्तं भवति—तिकालगोयराणं सव्वेसिमणियट्टिकरणाणं समाणसमये वट्टमाणाणं सरिसपरिणामत्तादो पढमट्ठिदिखंडयं पि तेसिं सरिसमेवेत्ति णावहारेयव्वं । किंतु तत्थ जहण्णुक्कस्सवियप्पसंभवादो केसिं पि सरिसं, केसिं चि विसरिसमिदि गहेयव्वं । जहण्णादो पुण उक्कस्सयं णियमा संखेज्जभागुत्तरमेवेत्ति । कुदो वुण सरिसपरिणामेसु अणियट्टिकरणेसु पढमट्ठिदिखंडयस्स विसरिसभावसंभवो त्ति णासंकणिज्जं; सरिसपरिणामेसु वि ट्ठिदिसंतकम्मविसेसमस्सियूण तहाभावसिद्धीए

*** प्रथम समयवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवके पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण अन्य स्थितिकाण्डक होता है ।**

*** शेष रहे अनुभागके अनन्त बहुभागप्रमाण अन्य अनुभागकाण्डक होता है ।**

*** पल्योपमके संख्यातवें भागहीन अन्य स्थितिबन्ध होता है ।**

§ ७४. स्थितिकाण्डक, अनुभागकाण्डक और स्थितिबन्धापसरणसे सम्बन्ध रखनेवाले ये तीनों ही आवश्यक सुगम हैं । यहांपर स्थितिकाण्डक आवश्यकके विषयमें किंचित् प्ररूपण करने योग्य है, इसलिये उसका कथन करनेके लिये आगेके प्रवन्धको कहते हैं—

*** प्रथम स्थितिकाण्डक विषम होता है, जो जघन्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट संख्यातवें भागप्रमाण होता है ।**

§ ७५. उक्त सूत्रका यह तात्पर्य है कि समान समयमें रहनेवाले त्रिकालगोचर समस्त अनिवृत्तिकरण जीवोंके सदृश परिणाम होनेके कारण उनके प्रथम स्थितिकाण्डक भी समान ही होता है ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिये । किन्तु वहां जघन्य स्थितिकाण्डक और उत्कृष्ट स्थितिकाण्डक ये विकल्प सम्भव हैं, क्योंकि किन्हींके सदृश होता है और किन्हींके विसदृश होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । जो स्थितिकाण्डक जघन्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट संख्यातवें भागप्रमाण अधिक होता है ।

शंका—सदृश परिणामवाले अनिवृत्तिकरण जीवोंमें प्रथम स्थितिकाण्डकके विसदृशपना कैसे सम्भव है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि सदृश परिणाम होनेपर भी स्थिति-

विरोहाभावादो। तं कधं? दो जीवा समगमेव खवगसेढिमारूढा। तत्थ एक्को संखेज्जभागुत्तरट्ठिदिसंतकम्मिओ, अण्णो संखेज्जभागहीणट्ठिदिसंतकम्मिओ। तत्थ जो संखेज्जभागुत्तरट्ठिदिसंतकम्मिओ तस्स ट्ठिदिखंडयमियरस्स ट्ठिदिखंडयादो अपुव्वकरणपढमट्ठिदिखंडयप्पहुडि संखेज्जभागुत्तरमेव होदूण पयट्टमाणमणियट्टिपढमसमये वि तेणेव पडिभागेगागंइज्जदि, अपुव्वकरणघादिदावसेससंखेज्जभागुत्तरट्ठिदिसंतकम्मविसये पयट्टमाणस्स तस्स तहाभावोववत्तीदो। जइ एवं, संखेज्जगुणट्ठिदिसंतकम्मियमस्सियूण संखेज्जगुणं पि अणियट्टिणो पढमट्ठिदिखंडयमुक्कस्सयं किण्ण लब्भदे? ण, तहासंभवादो। कुदो एवं चे? अपुव्वकरणचरिमसमए घादिदावसेसस्स ट्ठिदिसंतकम्मस्स सव्वुक्कस्सस्स वि जहण्णादो एयट्ठिदिखंडयस्स संखेज्जदिभागमेत्तेणेवब्भहियभावेणावट्ठाणणियमदंसणादो। तम्हा अणियट्टिपढमसमए जहण्णयादो ट्ठिदिखंडयादो उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं संखेज्जभागुत्तरमेव, णाण्णारिसमिदि सिद्धं। एवं पढमाणुभागखंडयस्स वि विसरिसभावो समयाविरोहेणाणुगंतव्वो।

❀ पढमे ट्ठिदिखंडये हदे सव्वस्स तुल्लकाले अणियट्टिपविट्ठस्स

सत्कर्मविशेषका आश्रय कर उस तरहसे उनकी सिद्धि होनेमें विरोधका अभाव है।

शंका—वह कैसे?

समाधान—दो जीव एक साथ ही क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए। उनमेंसे एक संख्यातवें भाग अधिक स्थितिसत्कर्मवाला है और दूसरा संख्यातवें भागहीन स्थितिसत्कर्मवाला है। उनमेंसे जो संख्यातवें भाग अधिक स्थितिसत्कर्मवाला है उसका स्थितिकाण्डक दूसरेके स्थितिकाण्डकसे अपूर्वकरणके प्रथम स्थितिकाण्डकसे लेकर संख्यातवाँ भाग अधिक होकर ही प्रवृत्त होता हुआ अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें भी उसी प्रतिभागके अनुसार ही चला आता है, अपूर्वकरणके द्वारा घात करनेके बाद अवशेष रहे संख्यातवें भाग अधिक स्थितिसत्कर्मके विषयमें प्रवृत्त हुआ वह उस तरहसे बन जाता है।

शंका—यदि ऐसा है तो संख्यातगुणे स्थितिसत्कर्मवालेका आलम्बन लेकर अनिवृत्तिकरण जीवके प्रथम स्थितिकाण्डक संख्यातगुणा भी क्यों प्राप्त नहीं होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि उस तरहसे प्राप्त होना असम्भव है।

शंका—ऐसा किस कारणसे है?

समाधान—क्योंकि अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें घात करनेके बाद अवशेष रहे सबसे उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मके भी जघन्यकी अपेक्षा एक स्थितिकाण्डकके संख्यातवें भागमात्र ही अधिकरूपसे अवस्थानका नियम देखा जाता है, इसलिये अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें जघन्य स्थितिकाण्डकसे उत्कृष्ट स्थितिकांडक संख्यातवाँ भाग अधिक ही होता है, अन्य रूपमें नहीं होता यह सिद्ध हुआ। इसी प्रकार प्रथम अनुभागकाण्डकका भी विसदृशपना समयके अविरोधपूर्वक जान लेना चाहिये।

❀ प्रथम स्थितिकाण्डकके घात हो जानेपर सभी अनिवृत्तिकरण जीवोंके समान

---

१. आ०प्रतौ —भागेण घाइज्जदि इति पाठः। २. ता०प्रतौ —सेसं संखेज्ज इति पाठः।

ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं। ट्ठिदिखंडयं पि सव्वस्स अणियट्टिपविट्ठस्स विदिय-ट्ठिदिखंडयादो विदियट्ठिदिखंडयं तुल्लं। तदो प्पहुडि तदिमादो तदिमं तुल्लं।

§ ७६. एतदुक्तं भवति—पढमे ट्ठिदिखंडे णिल्लेविदे संते सव्वस्स तिकाल-गोयरस्स अणियट्टिस्स समाणे काले वट्टमाणस्स घादिदावसेसं ट्ठिदिसंतकम्मं समाणमेव होदि, समाणपरिणामेहिं घादिदूण परिसेसिदत्तादो। तदो विदियादिट्ठिदिखंडयाणं पि तव्विसयाणं समाणत्तमेव होइ, कारणे समाणे संते कज्जस्स वि तहाभावं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो त्ति। एवमणुभागखंडयस्स वि एसा सरिसभावपरिक्खा कायव्वा, विदियादिअणुभागखंडएसु णाणत्ताणुवलंभादो। एवं पढमट्ठिदिखंडयपरूवणावसरे चेव विदियादिट्ठिदिखंडयाणं पि सरिसभावं परूविय संपहि तम्हि चेवाणियट्टिपढमसमए ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्माणं पमाणावहारणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** ट्ठिदिबंधो सागरोवमसहस्सपुधत्तमंतो सदसहस्स।**

§ ७७. पुव्वं अंतोकोडाकोडिपमाणो होंतो ट्ठिदिबंधो अपुव्वकरणद्धाए संखेज्ज-सहस्समेत्तेहिं ट्ठिदिबंधोसरणेहिं सुट्ठु ओहट्टियूण अणियट्टिकरणपढमसमए सागरोवम-

---

समयमें समान स्थितिसत्कर्म होता है तथा स्थितिकाण्डक भी समान होता है। अतः अभी अनिवृत्तिकरण जीवोंके दूसरे स्थितिकाण्डकसे दूसरा स्थितिकाण्डक समान होता है तथा वहाँ लेकर उतनेवेंसे स्थितिकाण्डकसे उतनेवां स्थितिकाण्डक समान होता है।

§ ७६. इस सूत्रका यह तात्पर्य है कि प्रथम स्थितिकाण्डकके निर्लेपित हो जानेपर समान कालमें विद्यमान त्रिकालगोचर सभी अनिवृत्तिकरण जीवोंके घात करनेके बाद अवशिष्ट रहा स्थितिसत्कर्म समान ही होता है, क्योंकि वह समान परिणामोंके द्वारा घात करनेके बाद अवशिष्ट रहा है। इसलिए अनिवृत्तिकरणके समान परिणामों और समान स्थितिसत्कर्मके अनुसार द्वितीयादि स्थितिकाण्डक भी समान होते हैं, क्योंकि कारणोंके समान होनेपर कार्यका भी उक्त प्रकारको छोड़कर अन्य प्रकारसे होना असम्भव है। इसी प्रकार अनुभागकाण्डकको भी यह सदृशरूपसे होनेकी परीक्षा कर लेनी चाहिये, क्योंकि द्वितीयादि अनुभागकाण्डकोंमें विसदृशता नहीं उपलब्ध होती। इस प्रकार प्रथम स्थितिकाण्डकको प्ररूपणाके समय ही द्वितीयादि स्थितिकाण्डकोंके सदृशपनेका कथन करके अब उसी अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका निश्चय करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** स्थितिबन्ध एक लक्ष सागरोपमके भीतर सागरोपम सहस्रपृथक्त्वप्रमाण होता है।**

§ ७७. पहले स्थितिबन्ध अन्तःकोडाकोडी सागरोपमप्रमाण था, जो अपूर्वकरण कालमें संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरणोंके द्वारा बहुत अधिक घटकर अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें

---

१. ता०प्रतौ तदियादो तदियं इति पाठः। २. ता०प्रतौ पमाणे इति पाठः।

सहस्सपुधत्तमेत्तो होदूण अंतोसागरोवमसदसहस्सस्स पयट्टदि त्ति वुत्तं होदि ।

*** ट्ठिदिसंतकम्मं सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमंतोकोडीए[1] ।**

§ ७८. अंतोकोडाकोडिमेत्तं ट्ठिदिसंतकम्ममपुव्वकरणपरिणामेहिं संखेज्ज-सहस्समेत्तट्ठिदिखंडयघादेहिं घादिदं संतं सुट्ठु ओहट्टियूण अंतोकोडीए[2] सागरोवम-लक्खपुधत्तपमाणं होदूणाणियट्टिपढमसमए ट्ठिदमिदि भणिदं होदि ।

*** गुणसेढिणिक्खेवो जो अपुव्वकरणे णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे च भवदि ।**

§ ७९. अपुव्वकरणे जो गुणसेढिणिक्खेवो आढत्तो तस्स सेसे सेसे चेव अणि-यट्टिकरणे गुणसेढिणिक्खेवं कुणदि, णाण्णहा त्ति वुत्तं होदि । णवरि अपुव्वकरण-गुणसेढी तत्थ जहण्णुक्कस्सपरिणामसंभवेण जहण्णा उक्कस्सा च भवदि । अणियट्टि-गुणसेढी पुण दव्वविसेसणिरवेक्खा परिणामविसेसाणुविहाइणी खविद-गुणिदकम्मंसियेसु समाणा चेव होदूण पयट्टदि त्ति णिच्छओ कायव्वो । गुणसंकमो वि जो पुव्वपयट्टो अप्पसत्थाणं कम्माणमवज्झमाणाणं सो तहा चेव पयट्टदि त्ति वत्तव्वं ।

*** सव्वकम्माणं पि तिण्णि करणाणि वोच्छिण्णाणि । जहा—अप्प-**

सागरोपमसहस्रपृथक्त्वप्रमाण होता हुआ लक्षणसागरोपमके भीतर प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** स्थितिसत्कर्म कोड़ीप्रमाण सागरोपमके भीतर लक्षपृथक्त्वसागरोपमप्रमाण होता है ।**

§ ७८. जो स्थितिसत्कर्म पहले अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण था वह अपूर्वकरण-सम्बन्धी परिणामोंको निमित्तकर संख्यात हजारप्रमाण स्थितिकाण्डकोंके घात द्वारा घातित होकर बहुत अधिक घटकर एक कोड़ीप्रमाण सागरोपमके भीतर एकलाखपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण होकर अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अवशिष्ट रहता है यह उक्तका तात्पर्य है ।

*** अपूर्वकरणमें जो गुणश्रेणिनिक्षेप आरम्भ किया था उसके शेष-शेषमें निक्षेप होता है ।**

§ ७९. अपूर्वकरणमें जो गुणश्रेणिनिक्षेप आरम्भ किया था उसके शेष-शेषमें ही अनिवृत्ति-करण जीव गुणश्रेणिनिक्षेप करता है, अन्य प्रकारसे निक्षेप नहीं करता यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इतनी विशेषता है कि अपूर्वकरणमें जघन्य और उत्कृष्ट परिणाम सम्भव होनेसे वहाँ अपूर्व-करणगुणश्रेणि जघन्य और उत्कृष्ट होती है, परन्तु अनिवृत्तिकरणगुणश्रेणि द्रव्यविशेषकी अपेक्षा किये बिना क्षपित कर्मांशिक और गुणित कर्मांशिक जीवोंमें परिणामविशेषके अनुसार होकर ही प्रवृत्त होती है ऐसा निश्चय करना चाहिये । गुणसंक्रम भी नहीं बँधनेवाले अप्रशस्त कर्मोंका जो पहले प्रवृत्त हुआ था वह उसी प्रकारसे प्रवृत्त रहता है ऐसा कहना चाहिये ।

*** सभी कर्मोंके तीन करण भी व्युच्छिन्न हो जाते हैं । यथा—अप्रशस्त उप-**

---

१. आ०प्रतौ -मंतोकोडाकोडीए इति पाठः । २. आ०प्रतौ अंतोकोडाकोडीए इति पाठः ।

सत्थउवसामणकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं च ।

§ ८०. कुदो एदेसिं करणाणमेत्थ वोच्छिेदणियमो त्ति णासंकणिज्जं, अणियट्टि-परिणाममाहप्पेण तिण्हमेदेसिमप्पसत्थकरणाणं णिम्मूलविणासे विरोहाभावादो । तम्हा एत्तो पाए सव्वेसिं कम्माणं सव्वं पि पदेसग्गमुदयोदीरणसंकमोकड्डणापाओग्गं होदूण पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं ।

*** एदाणि सव्वाणि पढमसमयअणियट्टिस्स आवासयाणि परूविदाणि ।**

§ ८१. एदाणि अणंतरपरूविदाणि सव्वाणि आवासयाणि पढमसमयाणियट्टिकरणमहिकिच्च परूविदाणि त्ति सुत्तत्थसंगहो । एवं पढमसमयपडिबद्धाणि आवासयाणि परूविय संपहि विदियसमए एदेसु णाणत्तगवेसणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** से काले एदाणि चेव, णवरि गुणसेढी असंखेज्जगुणा । सेसे सेसे च णिक्खेवो । विसोही च अणंतगुणा ।**

§ ८२. सुगमत्तादो ण एत्थ किंचि वत्तव्वमत्थि । एवमेदाणि आवासयाणि अणुपालेमाणस्स अंतोमुहुत्तं गंतूण पढमाणुभागखंडयं णिल्लेविज्जदि । तम्मि णिल्लेविदे अण्णमणुभागखंडयं सेसाणुभागसंतकम्मस्स अणंता भागमेत्तमाढवेइ । सेसेसु आवासएसु णत्थि णाणत्तं । एवं संखेज्जसहस्समेत्तेसु अणुभागखंडएसु णिवदिदेसु

शामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण ।

§ ८०. शंका—यहाँ इन करणोंके विच्छिन्न होनेका नियम किस कारणसे है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्यों अनिवृत्तिके परिणामोंके माहात्म्यवश इन तीन अप्रशस्त करणोंके निर्मूल विनाश होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

इसलिये यहाँसे लेकर समस्त कर्मोंके सभी प्रदेशपुंज उदय, उदीरणा, संक्रम और अपकर्षणके योग्य होकर प्रवृत्त होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

*** अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें ये सब आवश्यक कहे ।**

§ ८१. अनन्तर कहे गये ये सब आवश्यक अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयको अधिकृत करके कहे यह सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है । इस प्रकार प्रथम समयसे सम्बन्ध रखनेवाले आवश्यकोंका कथन करके अब दूसरे समयमें इनमें नानापनका अनुसन्धान करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अनन्तर समयमें ये ही आवश्यक होते हैं । इतनी विशेषता है कि गुणश्रेणि असंख्यातगुणी होती है, शेष-शेषमें निक्षेप होता है तथा विशुद्धि भी अनन्तगुणी होती है ।**

§ ८२. सुगम होनेसे प्रकृतमें कुछ वक्तव्य नहीं है । इस प्रकार इन आवश्यकोंका पालन करनेवाले जीवके अन्तर्मुहूर्तकाल जाकर प्रथम अनुभागकाण्डक निर्लेपित हो जाता है । उसके निर्लेपित होनेपर शेष अनुभागसत्कर्मके अनन्त बहुभागप्रमाण अनुभागकाण्डकको आरम्भ करता है । शेष आवश्यकोंमें नानापन नहीं है । इस प्रकार संख्यात हजारप्रमाण अनुभागकाण्डकोंके

तक्काले पढमट्ठिदिखंडयं पढमो ट्ठिदिबंधो अण्णमणुभागखंडयं च जुगमेव णिट्ठिदाणि। एवमेदेण कमेण पुणो पुणो ट्ठिदि-अणुभागे घादेमाणस्स संखेज्जसहस्समेत्तेसु ट्ठिदिखंडएसु गदेसु ताधे अणियट्टिअद्धाए संखेज्जा भागा गदा होंति। संपहि तम्हि अवत्थंतरे वट्टमाणस्स ट्ठिदिबंधपरिहाणिं जहाकमं परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एवं संखेज्जेसु ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो असण्णिट्ठिदिबंधसमगो जादो।**

§ ८३. एत्थासण्णिट्ठिदिबंधो त्ति वुत्ते मोहणीयस्स सागरोवमसहस्सस्स चत्तारि सत्तभागा गहेयव्वा। णाणावरणादीणं पि अप्पप्पणो परिभागेण सागरोवमसहस्सस्स तिण्णि सत्तभागा, वेसत्तभागा च गहेयव्वा। एवंपयारेण असण्णिट्ठिदिबंधेण समगो एत्थतणट्ठिदिबंधो ट्ठिदिबंधोसरणमाहप्पेण जादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थविणिच्छओ।

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चउरिंदियट्ठिदिबंधसमगो जादो।**

§ ८४. चउरिंदियट्ठिदिबंधो त्ति वुत्ते मोहणीयादीणं सागरोवमसदस्स चत्तारि सत्तभागा तिण्णि सत्तभागा, वे सत्तभागा च जहाकमं गहेयव्वा। एवंविहेण चउरिंदियट्ठिदिबंधेण समगो एत्थतणट्ठिदिबंधो जादो त्ति भणिदं होदि।

निपतित होनेपर उसी समय प्रथम स्थितिकाण्डक, प्रथम स्थितिबन्ध और अन्य अनुभागकाण्डक एक साथ ही समाप्त होते हैं। इस प्रकार इस क्रमसे पुनः पुनः स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकका घात करनेवाले जीवके संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर उस समय अनिवृत्तिकरणके कालका संख्यात बहुभाग व्यतीत हो जाता है। अब उस दूसरी अवस्थामें विद्यमान हुए जीवके स्थितिबन्धकी हानिका क्रमानुसार कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इस प्रकार संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर तत्पश्चात् अन्य स्थितिबन्ध असंज्ञियोंके स्थितिबन्धके समान हो जाता है।**

§ ८३. यहाँपर 'असंज्ञियोंका स्थितिबन्ध' ऐसा कहनेपर मोहनीयकर्मका एक हजार सागरोपमके चार-सातभागप्रमाण ग्रहण करना चाहिये। ज्ञानावरणादि कर्मोंका भी अपने-अपने प्रतिभागके अनुसार एक हजार सागरोपमके तीन-सातभागप्रमाण और दो-सातभागप्रमाण ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकारसे असंज्ञियोंके स्थितिबन्धके समान यहांका स्थितिबन्ध स्थितिबन्धापसरणके माहात्म्यवश हो जाता है। इस प्रकार यहाँपर यह सूत्रके अर्थका निश्चय है।

*** तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर चतुरिन्द्रिय जीवोंके समान स्थितिबन्ध हो जाता है।**

§ ८४. 'चतुरिन्द्रिय जीवोंका स्थितिबन्ध' ऐसा कहनेपर मोहनीय आदि कर्मोंका सौ सागरोपमके चार-सातभाग, तीन-सातभाग और दो-सातभागप्रमाण यथा क्रमसे ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवोंके स्थितिबन्धके समान यहाँ सम्बन्धी स्थितिबन्ध हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** एवं तीइंदियसमगो वीइंदियसमगो एइंदियसमगो जादो ।**

§ ८५. सुगमं ।

*** तदो एइंदियट्ठिदिबंधसमगादो ट्ठिदिबंधादो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंध-सहस्सेसु गदेसु णामागोदाणं पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो ।**

§ ८६. सुगमं ।

*** ताधे णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं दिवड्ढ-पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो, मोहणीयस्स वे पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो ।**

§ ८७. एत्थ तेरासियकमेणेदस्स ट्ठिदिबंधस्स समुप्पायणविही दट्ठव्वो ।

*** ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं सागरोवमसदसहस्सपुधत्तं ।**

§ ८८. पुव्वं पि अणियट्टिकरणपढमसमयप्पहुडि सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमेत्त-मेव ट्ठिदिसंतकम्मं, किंतु तत्तो संखेज्जसहस्समेत्तट्ठिदिखंडयघादेहिं संखेज्जगुणहीणं होदूण अज्ज वि सागरोवमसदसहस्सपुधत्तसंखाविसये चेव वट्टदि, णो हेट्ठा त्ति जाणा-वणट्ठमेदं परूविदं ।

*** जाधे णामागोदाणं पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो ताधे अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो ।**

*** इसी प्रकार तीन इन्द्रियों जीवोंके समान, द्वीन्द्रिय जीवोंके समान और एकेन्द्रिय जीवोंके समान स्थितिबन्ध हो जाता है ।**

§ ८५. यह सूत्र सुगम है।

*** तत्पश्चात् एकेन्द्रिय जीवोंके समान स्थितिबन्धके बाद संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है ।**

§ ८६. यह सूत्र सुगम है।

*** उसी समय ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय और अन्तराय कर्मोंका डेढ़ पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है तथा मोहनीयकर्मका दो पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है ।**

§ ८७. यहाँपर त्रैराशिकक्रमसे इस स्थितिबन्धके उत्पन्न करनेकी विधि जान लेनी चाहिये।

*** उसी समय स्थितिसत्कर्म एक लाखपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण होता है ।**

§ ८८. यद्यपि पूर्वमें भी अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर एक लाखपृथक्त्व सागरोपम प्रमाण ही स्थितिसत्कर्म रहा है, किन्तु उसमेंसे संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके घात होनेसे संख्यात-गुणा हीन होकर अभी भी एक लाखपृथक्त्व सागरोपमप्रमाण संख्यारूपमें ही पाया जाता है, उससे कम नहीं इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिये यह सूत्र कहा है।

*** जिस समय नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध होता है**

* तं जहा—णामागोदाणं ठिदिबंधो थोवो। णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं ठिदिबंधो विसेसाहिओ। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।

§ ८९. सुगमो एसो अप्पाबहुअपबंधो। ण केवलमेसो चेव ठिदिबंधो एदेणप्पाबहुअविहिणा पयट्टो, किंतु अइक्कंता सव्वे वि ट्ठिदिबंधा एदेणेव कमेण पयट्टा त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

* अदिक्कंता सव्वे ट्ठिदिबंधा एदेण अप्पाबहुअविहिणा गदा।

§ ९०. तदो तेसिमंतदीवयभावेणेसो अप्पाबहुअणिद्देसो एत्थ कओ त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

* तदो णामागोदाणं पलिदोवमट्ठिदिगे बंधे[1] पुण्णे जो अण्णो ट्ठिदिबंधो सो संखेज्जगुणहीणो। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो विसेसहीणो।

§ ९१. कुदो एवमेत्थ णामागोदाणं पलिदोवमट्ठिदिबंधादो संखेज्जगुणहाणीए ट्ठिदिबंधोसरणपवुत्ती एक्कसराहेण जादा त्ति णासंकणिज्जं, सहावदो चेव एत्थ तहा-

---

उस समयके अल्पबहुत्वको कहते हैं।

* वह जैसे—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणोय, वेदनीय और अन्तरायकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

§ ८९. यह अल्पबहुत्वप्रबन्ध सुगम है। इस अल्पबहुत्वविधिसे केवल यही अल्पबहुत्व इस अल्पबहुत्वविधिसे नहीं प्रवृत्त हुआ है, किन्तु अतिकान्त सभी स्थितिबन्ध इसी क्रमसे प्रवृत्त हुए हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये इस सूत्रको कहते हैं—

* अतिक्रान्त सभी स्थितिबन्ध इसी विधिसे व्यतीत हुए हैं।

§ ९०. इसलिए उन स्थितिबन्धोंके अन्तदीपकरूपसे इस अल्पबहुत्वका निर्देश यहाँपर किया है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

* तत्पश्चात् नामकर्म और गोत्रकर्मके पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धके सम्पन्न होनेपर जो अन्य स्थितिबन्ध होता है वह संख्यातगुणा हीन होता है तथा शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध विशेष हीन होता है।

§ ९१. शंका—इस प्रकार यहाँपर नामकर्म और गोत्रकर्मके पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धसे संख्यातगुणे हीन स्थितिबन्धके अपसरणकी प्रवृत्ति एकबारमें कैसे हो जाती है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि स्वभावसे ही जीवके उस प्रकारसे

---

१. ता०प्रती –ट्ठिदिगो बंधो इति पाठः।

विहट्ठिदिबंधोसरणसत्तीए जीवस्स समुप्पत्तिदंसणादो ।

*** ताधे अप्पाबहुअं । णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो । चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो संखेज्जगुणो[1] । मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।**

§ ९२. सुगमं ।

*** एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि । तदो णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो ।**

§ ९३. सुगमं ।

*** ताधे मोहणीयस्स तिभागुत्तरपलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो ।**

§ ९४. कुदो ? तीसिगाणं पलिदोवमट्ठिदिगे बंधे जादे चालीसियस्स मोहणीयस्स तहाविहट्ठिदिबंधसिद्धीए णाइयत्तादो ।

*** तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो चदुण्हं कम्माणं संखेज्जगुणहीणो[2] ।**

§ ९५. कुदो ? पलिदोवमट्ठिदिबंधादो हेट्ठा संखेज्जगुणहाणीए चेव ट्ठिदिबंधोसरणं होदि त्ति णियमदंसणादो ।

स्थितिबन्धके अपसरणकी शक्तिकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

*** उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे थोड़ा है । चार कर्मोंका स्थितिबन्ध परस्पर तुल्य होकर संख्यातगुणा है । मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।**

§ ९२. यह सूत्र सुगम है ।

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं । तत्पश्चात् ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय और अन्तराय कर्मोंका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है ।**

§ ९३. यह सूत्र सुगम है ।

*** उसी समय मोहनीयकर्मका तीसरा भाग अधिक पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है ।**

§ ९४. क्योंकि तीसिय प्रकृतियोंके पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध हो जानेपर चालीसिय मोहनीयकर्मके उसी प्रकारसे सिद्धि न्यायप्राप्त है ।

*** तत्पश्चात् अन्य स्थितिबन्धके अनुसार चार कर्मोंका संख्यातगुणा हीन स्थितिबन्ध होता है ।**

§ ९५. क्योंकि पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्धसे नीचे संख्यातगुणी हानिरूपसे ही स्थितिबन्धका अपसरण होता है ऐसा नियम देखा जाता है ।

---

१. आ०प्रतौ असंखेज्जगुणो इति पाठः । २. क०प्रतौ संखेज्जगुणहीणं इति पाठः ।

*** ताधे अप्पाबहुअं। णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो[1]। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।**

§ ९६. सुगमं।

*** एदेण[2] कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो मोहणीयस्स पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो। सेसाणं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो।**

§ ९७. तिभागुत्तरपलिदोवमादो संखेज्जसहस्समेत्तेहिं ट्ठिदिबंधोसरणेहिं जहाकमं तिभागे परिहीणे मोहणीयस्स वि ताधे पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो संजादो त्ति वुत्तं होदि।

*** एदम्हि ट्ठिदिबंधे पुण्णे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो।**

§ ९८. सुगमं।

*** तदो सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो चेव।**

*** उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक होता है। चार कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है। मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है।**

§ ९६. यह सूत्र सुगम है।

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं। तत्पश्चात् मोहनीयकर्मका पल्योपमप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तथा शेष कर्मोंका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध होता है।**

§ ९७. तृतीय भाग अधिक पल्योपमप्रमाण मोहनीयकर्मके स्थितिबन्धमेंसे संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरणोंके द्वारा यथाक्रम तृतीय भागप्रमाण स्थितिबन्धके कम हो जानेपर उस समय मोहनीयकर्मका भी पल्योपमकी स्थितिवाला बन्ध हो जाता है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है।

*** इस स्थितिबन्धके सम्पन्न हो जानेपर पश्चात् मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होता है।**

§ ९८. यह सूत्र सुगम है।

*** तत्पश्चात् सभी कर्मोंका स्थितिबन्ध पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण ही होता है।**

---

१. ता०प्रतौ असंखेज्जगुणो इति पाठः। २. ता०प्रतौ एदेणेव इति पाठः।

§ ९९. सुगमं ।

*** ताधे वि अप्पाबहुअं। णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। णाणावरण-दंसणावरण-वेदणीय-अंतराइयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।**

§ १०० सुगममेदं पि, पुव्वपयट्टस्सेव अप्पाबहुअस्स एण्हिं पि णाणत्तेण विणा पवुत्ती होदि त्ति संभालणफलत्तादो ।

*** एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि ।**

§ १०१ सुगमं । एवमेदेण अप्पाबहुअविहिणा सव्वेसिं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिगेसु संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तदो णामागोदाणं वा पच्छिमे पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिगे ट्ठिदिबंधे दूरावकिट्ठिसण्णिदे संपत्ते तदो असंखेज्जे भागे ट्ठिदिबंधेणोसरमाणस्स जाधे णामागोदाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागिओ पढमो ट्ठिदिबंधो जादो ताधे अण्णारिसमप्पाबहुअं होदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तपबंध-मुत्तरं भणदि—

*** तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो जाधे णामागोदाणं पलिदोवमस्स असंखे-ज्जदिभागो ताधे सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ।**

---

§ ९९. यह सूत्र सुगम है।

*** उस समय भी अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अन्तराय कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है। मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है।**

§ १००. यह सूत्रप्रबन्ध भी सुगम है, क्योंकि पूर्वमें प्रवृत्त हुए अल्पबहुत्वकी ही इस समय नानापनके बिना प्रवृत्ति होती है इसकी सम्हाल करना इसका प्रयोजन है।

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं।**

§ १०१. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार इस अल्पबहुत्व विधिसे सभी कर्मोंके पल्योपमके संख्यातवें भागसम्बन्धी संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत हो जानेपर तत्पश्चात् नामकर्म और गोत्रकर्मके दूरापकृष्टि संज्ञावाले अन्तिम पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्धके सम्पन्न हो जानेपर तत्पश्चात् स्थितिबन्धापरणके असंख्यात बहुभागप्रमाण होनेपर जब नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध हो जाता है तब अन्य प्रकारका अल्पबहुत्व होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** तब अन्य स्थितिबन्ध होता है। जब नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होता है।**

§ १०२. सुगमं ।

❀ ताधे अप्पाबहुअं—णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो । चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।

§ १०३. गयत्थमेदं सुत्तं । एवमेदेण अप्पाबहुअविहिणा पुणो वि संखेज्जे-सहस्समेत्तेसु ट्ठिदिबंधेसु समइक्कंतेसु तदो णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंत-राइयाणं पि दूरावकिट्टिविसए संपत्ते तदो प्पहुडि तेसिं पि असंखेज्जे भागे ट्ठिदिबंधेणो-सरमाणस्स पढमे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागिए ठिदिबंधे जादे तत्तो पाए अण्णा-रिसमप्पाबहुअं पयट्टदि त्ति जाणावेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

❀ तदो संखेज्जेसु [1]ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तिण्हं घादिकम्माणं वेदणीयस्स च पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो ।

❀ ताधे अप्पाबहुअं—णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो । चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो ।

§ १०४. सुगमत्तादो ण एत्थ किंचि वक्खाणेयव्वमत्थि । एवमेदेणाणंतर-

---

§ १०२. यह सूत्र सुगम है ।

❀ तब अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । चार कर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है ।

§ १०३. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार इस अल्पबहुत्वविधिसे फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत हो जानेपर तत्पश्चात् ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय और अन्तराय कर्मोंके भी दूरापकृष्टि विषयक स्थितिबन्धके सम्पन्न होनेपर वहाँसे लेकर उन कर्मोंके भी स्थिति-बन्धापसरणके असंख्यात बहुभागके जानेपर जब पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थिति-बन्ध होता है तब वहाँसे लेकर अन्य प्रकारका अल्पबहुत्व प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरणोंके जानेपर तीन घातिकर्मों और वेदनीयकर्मका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है ।

❀ उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । चार कर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।

§ १०४. सुगम होनेसे यहाँपर कुछ व्याख्यान करने योग्य नहीं है । इस प्रकार अनन्तर

---

१. ता०प्रतौ असंखेज्ज- इति पाठः ।

परूविदेण अप्पाबहुअविहाणेण पुणो वि संखेज्जसहस्समेत्तेसु ट्ठिदिबंधेसु वदिक्कंतेसु मोहणीयस्स वि दूरावकिट्ठिविसये जहाकमं संपत्ते तदो प्पहुडि तस्स वि असंखेज्जे भागे ट्ठिदिबंधेणोसरमाणस्स पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागिओ पढमो ठिदिबंधो समाढत्तो त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु मोहणीयस्स वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो ।**

§ १०५. सुगमं ।

*** ताधे सव्वेसिं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो ।**

§ १०६. सुगममेदं पि सुत्तं । संपहि एत्थुद्देसे ट्ठिदिसंतकम्मं किंपमाणमिच्चासंकाए इदमाह—

*** ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं सागरोवमसहस्सपुधत्तमंतो सदसहस्सस्स ।**

§ १०७. पुव्वुत्तसंधीए सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमेत्तं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जेहिं ठिदिखंडयसहस्सेहिं कमेण परिहीयमाणमेत्थुद्देसे सागरोवमसहस्सपुधत्तमेत्तमंतो सदसहस्सस्स संजादमिदि वुत्तं होदि । णेदमेत्थासंकणिज्जं ट्ठिदिबंधपडिभागेणेव ट्ठिदिसंतकम्मं पि किण्ण ओहट्टदि त्ति । किं कारणं ? ट्ठिदिबंधादो संखेज्जगुणमेत्तस्स ट्ठिदि-

---

कहे गए इस अल्पबहुत्वविधानसे फिर भी संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके जानेपर मोहनीयकर्मका भी क्रमसे दूरोपकृष्टिविषयक स्थितिबन्धके प्राप्त होनेपर वहाँसे लेकर उसके भी स्थितिबन्धापसरणके असंख्यात बहुभागके जानेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रथम स्थितिबन्ध आरम्भ होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके व्यतीत होनेपर मोहनीयकर्मका भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।**

§ १०५. यह सूत्र सुगम है ।

*** उस समय सब कर्मोंका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है ।**

§ १०६. यह सूत्र भी सुगम है । अब इस स्थानमें स्थितिसत्कर्म किस प्रमाणवाला होता है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** उस समय स्थितिसत्कर्म एक लाख सागरोपमके भीतर एक हजार सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण होता है ।**

§ १०७. पूर्वोक्त सन्धिमें जो एक लाख सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण स्थितिसत्कर्म था वह क्रमसे संख्यात हजार स्थितिसत्कर्मोंके द्वारा घटकर इस स्थानमें एक लाख सागरोपमपृथक्त्वके भीतर एक हजार सागरोपमपृथक्त्वप्रमाण हो जाता है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है । यहाँ ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये कि स्थितिबन्धके प्रतिभागके अनुसार ही स्थितिसत्कर्म क्यों नहीं कम

संतकम्मस्स तेण सरिसमोवट्टणाए संभवाभावादो । संपहि एत्थ वि ट्ठिदिबंधप्पाबहुअमणंतरपरूविदमेव दट्ठव्वमिदि पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** जाधे पढमदाए मोहणीयस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो ताधे अप्पाबहुअं—णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो । चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो असंखेज्जगुणो । मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो ।**

§ १०८. सुगममेदं ।

*** एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि । तदो जम्हि अण्णो ट्ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो । मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो असंखेज्जगुणो ।**

§ १०९. कुदो एवमेत्थुद्देसे चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधादो असंखेज्जगुणस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधस्स तत्तो असंखेज्जगुणहाणी एक्कसराहेण जादा त्ति णासंकणिज्जं, एत्तो प्पहुडि तस्स विसेसघादवसेण तहाभावोववत्तीए विरोहाभावादो ।

होता है, क्योंकि स्थितिबन्धसे स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा होता है, इसलिये सदृश अपवर्तनाका होना सम्भव नहीं है । अब यहाँ भी स्थितिबन्धसम्बन्धी अल्पबहुत्व अनन्तरपूर्व कहा गया ही जानना चाहिये इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जिस समय प्रथम बार मोहनीयकर्मका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । चार कर्मोंका स्थितिबन्ध परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा है । मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।**

§ १०८. यह सूत्र सुगम है ।

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं । तब जहाँपर अन्य स्थितिबन्ध होता है वहाँपर एक बारमें नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध सबसे थोड़ा होता है । मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है । चार कर्मोंका स्थितिबन्ध तुल्य होकर असंख्यातगुणा होता है ।**

§ १०९. शंका—इस स्थानमें चार कर्मोंके स्थितिबन्धसे मोहनीयकर्मके असंख्यातगुणे स्थितिबन्धकी एक बारमें उन कर्मोंके स्थितिबन्धकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हानि कैसे हो गई ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि यहाँसे लेकर उसके विशेष घात होनेके कारण उस तरहसे स्थितिबन्धके बन जानेमें विरोधका अभाव है ।

*** एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि । तदो जम्हि अण्णो ट्ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो । णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो असंखेज्जगुणो ।**

§ ११०. कुदो एवमेत्थुद्देसे मोहणीयट्ठिदिबंधस्स णामागोदट्ठिदिबंधादो असंखेज्ज-गुणहाणीए सव्वत्थोवभावपरिणामो त्ति णासंका कायव्वा, अप्पसत्थयरस्स तस्स विसेस-घादवसेण तहाभावसिद्धीए विरोहाभावादो ।

*** एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि । तदो जम्हि अण्णो ट्ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो । णामा-गोदाण ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्ज-गुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो ।**

§ १११. कुदो एवमेत्थ तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधस्स वेदणीयस्स ट्ठिदि-बंधादो एक्कसराहेणासंखेज्जगुणहाणीए परिणामो त्ति णासंकियव्वं, घादिकम्माणं विसेसघादवसेण तहाभावोवत्तीए पडिबंधाभावादो ।

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं । तत्पश्चात् जिस कालमें अन्य स्थितिबन्ध होता है उस कालमें एक बारमें मोहनीयकर्मका स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक होता है । नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है । चार कर्मोंका स्थितिबन्ध परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा होता है ।**

§ ११०. शंका—इस प्रकार इस स्थानमें मोहनीयकर्मके स्थितिबन्धका नामकर्म और गोत्रकर्मके स्थितिबन्धकी अपेक्षा असंख्यात गुणहानिके द्वारा सबसे स्तोकरूपसे परिणाम किस कारणसे होता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि मोहनीयकर्म अप्रशस्ततर है, इसलिए विशेष घात होनेसे उसकी उस प्रकारकी सिद्धि होनेमें विरोधका अभाव है ।

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं । तत्पश्चात् जिस कालमें अन्य स्थितिबन्ध होता है उस कालमें एक बारमें मोहनीयकर्मका स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक होता है । नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है । तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है । वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है ।**

§ १११. शंका—इस प्रकार यहाँपर तीन घाति कर्मोंके स्थितिबन्धका वेदनीयकर्मके स्थिति-बन्धकी अपेक्षा एक बारमें असंख्यात गुणहानिरूपसे परिणाम किस कारण होता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि घातिकर्मोंके विशेष घातके कारण उस प्रकारसे व्यवस्था बननेमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है ।

*** एवं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ ११२. एत्थ वि णामागोदाणं ट्ठिदिबंधादो तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधस्स असंखेज्जगुणहीणत्ते कारणं पुव्वं व वत्तव्वं। वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो वि णामागोदाणं ठिदिबंधादो पुव्वमसंखेज्जगुणो संतो एण्हिमप्पणो ट्ठिदिपडिभागेण विसेसाहिओ जादो त्ति घेत्तव्वं। संपहि ट्ठिदिसंतकम्मस्स वि परिहाणी एदेणेव कमेण पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** एदेणेव कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि।**

*** तदो ट्ठिदिसंतकम्ममसण्णिट्ठिदिबंधेण समगं जादं।**

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चउरिंदियट्ठिदिबंधेण समगं जादं।**

*** एवं तीइंदिय-बीइंदियट्ठिदिबंधेण समगं जादं।**

*** इस प्रकार संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं। तत्पश्चात् जो अन्य स्थितिबन्ध होता है उसके अनुसार एक बारमें मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध सबसे कम होता है। तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है। नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है। वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है।**

§ ११२. यहाँपर भी तीन घातिकर्मोंके स्थितिबन्धके असंख्यातगुणे हीन होनेमें कारणका कथन पूर्ववत् करना चाहिये। वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध भी नामकर्म और गोत्रकर्मके स्थितिबन्धसे पूर्वमें असंख्यातगुणा होता हुआ इस समय अपने स्थितिप्रतिभागके अनुसार विशेष अधिक हो गया है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। अब स्थितिसत्कर्मकी हानि भी इसी क्रमसे प्रवृत्त होती है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** इसी क्रमसे संख्यात हजार स्थितिबन्ध व्यतीत हो जाते हैं।**

*** तत्पश्चात् स्थितिसत्कर्म असंज्ञी जीवोंके स्थितिबन्धके समान हो जाता है।**

*** तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिबन्धोंके जानेपर चतुरिन्द्रिय जीवोंके स्थितिबन्धके समान स्थितिसत्कर्म हो जाता है।**

*** इसी प्रकार त्रीन्द्रिय और द्वीन्द्रिय जीवोंके स्थितिबन्धके समान स्थितिसत्कर्म हो जाता है।**

* तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु एइंदियट्ठिदिबंधेण समगं ट्ठिदिसंतकम्मं जादं।

* तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु णामागोदाणं पलिदोवम-ट्ठिदिसंतकम्मं जादं।

* ताधे चदुण्हं कम्माणं दिवड्ढपलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं।

* मोहणीयस्स वि बेपलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं।

* एदम्मि ट्ठिदिखंडए उक्किण्णे णामागोदाणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागियं ट्ठिदिसंतकम्मं।

* ताधे अप्पाबहुअं—सव्वत्थोवं णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं।

* चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं संखेज्जगुणं।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं।

* एदेण कमेण ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे तदो चदुण्हं कम्माणं पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं।

* ताधे मोहणीयस्स पलिदोवमं तिभागुत्तरं ट्ठिदिसंतकम्मं।

---

* तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके जानेपर एकेन्द्रिय जीवोंके स्थितिबन्धके समान स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके जानेपर नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* उसी समय चार कर्मोंका डेढ़ पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* मोहनीयकर्मका भी दो पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* पश्चात् इस स्थितिकाण्डकके उत्कीर्ण होनेपर नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे स्तोक है।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर संख्यातगुणा है।

* मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है।

* इस क्रमसे स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके जानेपर तदनन्तर चार कर्मोंका पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* उस समय मोहनीयकर्मका तीसरा भाग अधिक पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* तदो ट्ठिदिखंडये पुण्णे चदुण्हं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं।

* ताधे अप्पाबहुअं—सव्वत्थोवं णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं।

* चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं संखेज्जगुणं।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं पलिदोवमं जादं।

* तदो ट्ठिदिखंडए पुण्णे सत्तण्हं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं।

* तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु णामागोदाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं।

* ताधे अप्पाबहुअं—सव्वत्थोवं णामागोदाणं ठिदिसंतकम्मं।

* चउण्हं कम्माणं ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं।

---

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकके पूर्ण होनेपर चार कर्मोंका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे स्तोक है।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर संख्यातगुणा है।

* मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके होनेपर मोहनीयकर्मका पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकके पूर्ण होनेपर सातों कर्मोंका पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके व्यतीत हो जानेपर नामकर्म और गोत्रकर्मका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है।

* उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे स्तोक है।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा है।

* मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा है।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण चउण्हं कम्माणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं ।

* ताधे अप्पाबहुअं—णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं ।

* चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं ।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं ।

* ताधे अप्पाबहुअं । जधा—णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं ।

* चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं ।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जगुणं ।

* एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिखंडयसहस्साणि गदाणि ।

* तदो णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं ।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

* चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं ।

---

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके होनेपर चार कर्मोंका पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है ।

* उस समय अल्पबहुत्व—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे स्तोक है ।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा है ।

* मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके होनेपर मोहनीयकर्मका भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है ।

* उस समय अल्पबहुत्व । यथा—नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे स्तोक है ।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा है ।

* मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिकाण्डक व्यतीत हो जाते हैं ।

* तत्पश्चात् नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे अल्प है ।

* मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा है ।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं ।

* णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

* चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं ।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं ।

* णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जगुणं ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

* वेदणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जगुणं ।

* णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

* वेदणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ ११३. एदेसिं सुत्ताणमत्थो जहा ट्ठिदिबंधोसरणसुत्ताणं परूविदो तहा परूवेयव्वो विसेसाभावादो ।

---

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके जानेपर एक बारमें मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे थोड़ा है ।

* नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* चार कर्मोंका स्थितिसत्कर्म परस्पर तुल्य होकर असंख्यातगुणा है ।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे अल्प है ।

* नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* वेदनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे अल्प है ।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

* वेदनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ ११३. जिस प्रकार स्थितिबन्धापसरण सूत्रोंका अर्थ कहा है उसी प्रकार इन सूत्रोंका अर्थ कहना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है ।

*** एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिखंडयसहस्साणि गदाणि ।**

*** तदो असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा ।**

§ ११४. एदेणाणंतरपरूविदेण अप्पाबहुअविहाणेण ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मेसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागिएसु सव्वेसिं कम्माणमसंखेज्जगुणहाणीए पयट्टमाणेसु तदो परिणामपाहम्मेण सव्वेसिं कम्माणं वेदिज्जमाणाणमसंखेज्जलोगपडिभागिया उदीरणा णस्सियूण असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा पारद्धा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो । एवमसंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणमेत्थाढविय पुणो वि संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु ट्ठिदिबंधोसरणसहगयेसु पादेक्कमणुभागखंडयसहस्साविणाभावीसु गदेसु तम्मि उद्देसे जो पवुत्तिविसेसो तण्णिद्देसकरणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु अट्ठण्हं कसायाणं संकामगो ।**

§ ११५. कुदो ? अप्पसत्थयराणं तेसिं पुव्वमेव खवणापवुत्तीए विसेसघादवसेण विप्पडिसेहाभावादो । एत्थ संकामगो त्ति वुत्ते अट्ठकसायाणं खवणाए पट्ठवगो जादो त्ति अत्थो घेत्तव्वो । एवमेदेसिमट्ठकसायाणं संकामणमाढविय ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण णिम्मूलमेदेसिं संकामगो जादो त्ति पदुप्पायणफलमुत्तरसुत्तं—

*** इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिकाण्डक व्यतीत हो जाते हैं ।**

*** तत्पश्चात् असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा होती है ।**

§ ११४. इस अनन्तर पूर्व कहे गये अल्पबहुत्वविधानसे सभी कर्मोंके पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके असंख्यात गुणहानिरूपसे प्रवृत्त होनेपर पश्चात् परिणामोंकी प्रधानतावश वेदे जानेवाले सभी कर्मोंकी असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागवाली उदीरणा नष्ट होकर असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणा प्रारम्भ हो जाती है इस प्रकार यह इस सूत्रका संग्रहरूप अर्थ है । इस प्रकार असंख्यात समयप्रबद्धोंकी उदीरणाको यहाँपर स्थापित करके फिर भी स्थितिबन्धापसरणके साथ संख्यात हजार स्थितिसत्कर्मोंके जानेपर तथा प्रत्येक स्थितिकाण्डकके अविनाभावी हजारों अनुभागकाण्डकोंके जानेपर उस स्थानमें जो प्रवृत्तिविशेष होता है उसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** तत्पश्चात् संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके जानेपर क्षपक जीव मध्यकी आठ कषायोंका संक्रामक होता है ।**

§ ११५. क्योंकि वे आठ कषाय अप्रशस्ततर प्रकृतियाँ हैं, इसलिए विशेष घातवश उनका पहले ही क्षपणाका प्रारम्भ होनेमें निषेध नहीं है । यहाँ सूत्रमें संक्रामक ऐसा कहनेपर क्षपणाका प्रस्थापक हो जाता है यह अर्थ ग्रहण करना चाहिये । इस प्रकार इन आठ कषायोंके संक्रामणका आरम्भ करके स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा इनका निर्मूल संक्रामक हो जाता है इस बातका कथन करनेके प्रयोजनसे आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** तदो अट्ठकसाया ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण संकामिज्जंति ।**

§ ११६. सुगमं ।

*** अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडए उक्किण्णे तेसिं संतकम्ममावलियपविट्ठं सेसं ।**

§ ११७. अट्ठकसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडए चरिमफालिसरूवेण णिल्लेविदे तेसिमावलियपविट्ठसंतकम्मस्सेव समयूणावलियमेत्तणिसेगपमाणस्स परिसेसत्तसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो । समयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ वि चरिमफालीए सह किण्णावणिज्जंते ण, आवलियपविट्ठस्स कम्मस्स खंडयघादासंभवादो ।

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं णिरयगदि-तिरक्खगदिपाओग्गणामाणं संतकम्मस्स संकामगो ।**

§ ११८. अट्ठकसाये खविय पुणो ट्ठिदिखंडयपुधत्तवावारेण अंतोमुहुत्तकालं वोलाविय तदो एदेसिं सोलसण्हं कम्माणं संकामणमाढवेदि त्ति भणिदं होदि । एत्थ 'णिरय-तिरिक्खगइपाओग्गणामाओ' त्ति वुत्ते णिरयगइ-णिरयगइपाओग्गाणुपुव्वी-तिरिक्खगइ - तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वी - एइंदिय - बीइंदिय - तीइंदिय - चउरिंदियजादि-

---

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा आठ कषायोंको संक्रान्त करता है ।**

§ ११६. यह सूत्र सुगम है ।

*** आठ कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकके उत्कीर्ण होनेपर उनका सत्कर्म आवलिप्रविष्ट शेष रहता है ।**

§ ११७. आठ कषायोंसम्बन्धी अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम फालिरूपसे निर्लेपित होनेपर जिन कर्मोंके एक समय कम एक आवलिप्रमाण निषेक अवशिष्ट रहे हैं ऐसे उन कर्मोंका आवलिप्रविष्ट सत्कर्म शेष रहता है इस प्रकार इसकी सिद्धि निर्बाधरूपसे पाई जाती है ।

शंका—एक समय कम एक आवलिप्रमाण स्थितियां भी अन्तिम फालिके साथ क्यों नहीं निर्जीर्ण होती हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि आवलिमें (उदयावलिमें) प्रविष्ट हुए कर्मका काण्डकघात होना असम्भव है ।

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि इन तीन सम्बन्धी तथा नरकगति और तिर्यञ्चगतिप्रायोग्य नामकर्मकी प्रकृतियोंसम्बन्धी सत्कर्मका क्षपक जीव संक्रामक होता है ।**

§ ११८. आठ कषायोंकी क्षपणा करके पुनः स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके व्यापार द्वारा अन्तर्मुहूर्तकाल बिताकर तत्पश्चात् इन सोलह कर्मोंके संक्रमणका आरम्भ करता है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है । यहाँपर 'नरकगति और तिर्यञ्चगतिप्रायोग्य नामकर्म' ऐसा कहनेपर नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति,

आदावुज्जोव-थावर सुहुम-साहारणणामाणं तेरसण्हं पयडीणं गहणं कायव्वं। एव-मेदेसिं विसेसघादमाढविय संकामेमाणो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेणेदेसिं णिल्लेवगो होदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरं—

* तदो खंडयपुधत्तेण अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए उक्किण्णे एदेसिं सोलसण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममावलियब्भंतरं सेसं।

§ ११९. एदेसिं कम्माणमपच्छिमट्ठिदिखंडयमागाएंतो उदयावलियबाहिरं सव्व-मागाएदूण चरिमफालिसरूवेण सजादीयाविरोहेण परपयडीसु संछुहिय विणासेदि त्ति भणिदं होदि। एवमेदाणि कम्माणि जहा णिद्दिट्ठेण कमेण खवेयूण तदो मणपज्जव-णाणावरणादीणं बारसण्हं कम्माणं देसघादिकरणमेदेण कमेण पयट्टावेदि त्ति जाणा-वणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मणपज्जवणाणावरणीय-दाणंतराइयाणं च अणुभागो बंधेण देसघादी जादो।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण ओहिणाणावरणीय-ओहिदंसणावरणीय-लाहंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी जादो।

* तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण सुदणाणावरणीय-अचक्खुदंसणावरणीय-

त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इस प्रकार नाम-कर्मकी इन तेरह प्रकृतियोंका ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार इनके विशेष घातका आरम्भ करके संक्रमण करता हुआ स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा इनका निर्लेपक होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा अन्तिम स्थितिकाण्डकके उत्कीर्ण होनेपर इन सोलह कर्मोंका स्थितिसत्कर्म आवलिप्रविष्ट शेष रहता है।

§ ११९. इन कर्मोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण करता हुआ उदयावलि बाह्य सम्पूर्ण कर्मको ग्रहण करके तथा अन्तिम फालिरूपसे अपनी जातिके अविरोधपूर्वक परप्रकृतियोंमें संक्रमित करके नष्ट करता है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है। इस प्रकार इन कर्मोंका यथा निर्दिष्ट क्रमसे क्षय करके तत्पश्चात् मनःपर्यय ज्ञानावरणादि बारह कर्मोंके देशघातिकरणके भेदसे क्रमसे प्रस्थापक होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा मनःपर्ययज्ञानावरणीय और दाना-न्तरायकर्मका अनुभाग बन्धकी अपेक्षा देशघाति हो जाता है।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा अवधिज्ञानावरणीय, अवधिदर्शना-वरणीय और लाभान्तरायकर्म बन्धकी अपेक्षा देशघाति हो जाते हैं।

* तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा श्रुतज्ञानावरणीय, अचक्षुदर्शना-

भोगंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी जादो ।

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण चक्खुदंसणावरणीयस्स अणुभागो बंधेण देसघादी जादो ।**

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण आभिणिबोहियणाणावरणीय-परिभोगंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी जादो ।**

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण वीरियंतराइयस्स अणुभागो बंधेण देसघादी जादो ।**

§ १२०. किं कारणमेदेसिं कम्माणं देसघादिकरणस्स एवंविहो कमणियमो जादो त्ति णासंकणिज्जं, अणुभागथोवबहुत्तपरिवाडिमस्सियूण तहाविहकमपवुत्तीए विरोहाभावादो ।

*** तदो ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णं ट्ठिदिखंडयमण्णमणुभागखंडयमण्णो ट्ठिदिबंधो अंतरट्ठिदीओ च उक्कीरिदुं चत्तारि वि एदाणि करणाणि समगमाढत्तो कालं कादु[1] ।**

§ १२१. तदो बारसपयडीणं देसघादिकरणादो संखेज्जसहस्समेत्तेसु ट्ठिदि-

---

वरणीय और भोगान्तराय कर्म बन्धकी अपेक्षा देशघाति हो जाते हैं ।

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा चक्षुदर्शनावरणीयका अनुभाग बन्धकी अपेक्षा देशघाति हो जाता है ।**

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा आभिनिबोधिकज्ञानावरणीय और परिभोगान्तराय कर्मोंका अनुभाग बन्धकी अपेक्षा देशघाति हो जाता है ।**

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा वीर्यान्तरायकर्मका अनुभाग बन्धकी अपेक्षा देशघाति हो जाता है ।**

§ १२०. शंका—इन कर्मोंके देशघातिकरणके इस प्रकारके क्रमका नियम किस कारणसे हो जाता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि अनुभागके अल्पबहुत्वसम्बन्धी परिपाटीका आलम्बन लेकर उस प्रकारसे उनके क्रमसे प्रवृत्ति होनेमें विरोधका अभाव है ।

*** तत्पश्चात् हजारों स्थितिकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर अन्य स्थितिकाण्डक, अन्य अनुभागकाण्डक, अन्य स्थितिबन्ध और अन्तरस्थितियोंको उत्कीरित करनेके लिये कालको मुख्य करके इन चारों ही करणोंको एक साथ आरम्भ करता है ।**

§ १२१. बारह प्रकृतियोंके देशघातिकरणके अनन्तर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके

---

१. ताडपत्रीयप्रतौ-'माढत्तो कालं कादूण' इति सूत्रांशः संलक्ष्यते । अन्यत्र लोपलभ्यते ।

खंडएसु गदेसु तदो अण्णं ट्ठिदिखंडयमण्णमणुभागखंडयमण्णं ट्ठिदिबंधमंतरट्ठिदीण-मुक्कीरणं च एदाणि चत्तारि वि करणाणि कादुं जुगवमाढत्तो त्ति वुत्तं होदि। तत्थ किमंतरकरणं णाम? अंतरं विरहो सुण्णभावो त्ति एयट्ठो। तस्स करणमंतरकरणं, हेट्ठा उवरिं च केत्तियाओ ट्ठिदीओ मोत्तूण मज्झिल्लाणं ट्ठिदीणं अंतोमुहुत्तपमाणाणं णिसेगे सुण्णत्तसंपादणमंतरकरणमिदि भणिदं होइ। तं पुण केसिं कम्माणं केत्तियं वा पढमट्ठिदिं मोत्तूण केत्तिएसु ट्ठिदिविसेसेसु कथं पयट्टदि त्ति एदस्स णिण्णयकरणट्ठ-मुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

*** चउण्हं संजलणाणं णवण्हं णोकसाय-वेदणीयाणमेदेसिं तेरसण्हं कम्माणमंतरं। सेसाणं कम्माणं णत्थि अंतरं।**

§ १२२. चदुसंजलण-णवणोकसायसण्णिदाणं तेरसण्हमेव कम्माणमेत्थ अंतरं करेदि, ण सेसाणं। कुदो? अण्णेसिं कम्माणं चरित्तमोहणीयभेदाणमेत्थासंभवादो। ण च णाणावरणादिकम्माणमंतरकरणसंभवो, मोहणीयवज्जेसु कम्मेसु अंतरकरणस्स पवुत्तिअभावादो।

*** पुरिसवेदस्स च कोहसंजलणाणं[1] च[2] पढमट्ठिदिमंतोमुहुत्तमेत्तं मोत्तूण अंतरं करेदि। सेसाणं कम्माणमावलियं मोत्तूण अंतरं करेदि।**

व्यतीत होनेपर तदनन्तर अन्य स्थितिकाण्डक, अन्य अनुभागकाण्डक, अन्य स्थितिबन्ध और अन्तर-सम्बन्धी स्थितियोंका उत्कीरण करनेके लिये इन चारों ही करणोंको करनेके लिये एक साथ आरम्भ करता है यह इस सूत्र द्वारा कहा गया है।

शंका—प्रकृतमें अन्तरकरण क्या है?

समाधान—अन्तर, विरह और शून्यभाव ये एकार्थक शब्द हैं। उसका करना अन्तरकरण है। नीचे और ऊपरकी कितनी ही स्थितियोंको छोड़कर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण मध्यकी स्थितियोंके निषेकोंके शून्यभावका सम्पादन करना अन्तरकरण है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

परन्तु वह किन कर्मोंकी कितनी प्रथम स्थितिको छोड़कर कितनी स्थितिविशेषोंमें किस प्रकार प्रवृत्त होता है इस प्रकार इस बातका निर्णय करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** चार संज्वलन और नौ नोकषायवेदनीय इन तेरह कर्मोंका अन्तर करता है, शेष कर्मोंका अन्तर नहीं करता।**

§ १२२. चार संज्वलन और नौ नोकषायवेदनीय इन तेरह कर्मोंका यहाँपर अन्तर करता है, शेष कर्मोंका नहीं, क्योंकि अन्य कर्म चारित्रमोहनीयके भेद नहीं हैं। और ज्ञानावरणादि कर्मोंका अन्तर सम्भव नहीं है, क्योंकि मोहनीयकर्मको छोड़कर शेष कर्मोंमें अन्तरकरणकी प्रवृत्तिका होना असम्भव है।

*** पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्तप्रमाण छोड़कर अन्तर करता है तथा शेष कर्मोंकी एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिको छोड़कर अन्तर**

---

१. ता०प्रतौ -वेदस्स० कोह० इति पाठः। २. आ०प्रतौ कोहस्स च इति पाठः।

§ १२३. पुरिसवेदस्स कोहसंजलणाणं सोदयाणमंतोमुहुत्तमेत्तिं पढमट्ठिदिं मोत्तूण सेसाणं च कम्माणमवेदिज्जमाणाणमावलियमेत्तिं पढमट्ठिदिमवसेसिय पुणो अंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीओ उवरिमाओ समयाविरोहेण घेत्तूण अंतरकरणमेसो करेदि त्ति सुत्तत्थणिच्छओ। एदं च पुरिसवेद-कोहोदयक्खवगमहिकिच्च परूविदं, अण्णहा पुण जस्स वेदस्स जस्स च संजलणस्स उदएण सेढिमारूढो तस्स पढमट्ठिदिमंतोमुहुत्तमेत्तिं ठविय अंतरं करेइ त्ति घेत्तव्वं। तत्थ पुरिसवेदपढमट्ठिदी णवुंसय-इत्थिवेद-छण्णोकसायक्खवणद्धामेत्ती होदूण थोवा, कोहस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया।

*** जाओ अंतरट्ठिदीओ उक्कीरंति तासिं पदेसग्गमुक्कीरमाणियासु ट्ठिदीसु ण दिज्जदि।**

§ १२४. जाओ अंतरट्ठविदाओ[1] ······ तासिं पदेसग्गमंतोमुहुत्तमेत्तफालीओ कादूण पढमफालिप्पहुडि जहाकममसंखेज्जगुणभावेणावट्ठिदाओ अंतरकरणद्धामेत्तेण कालेण उक्कीरेमाणो तं पदेसग्गमुक्कीरमाणियासु ट्ठिदीसु णियमा ण देदि, तासिं णिल्लेविज्जमाणाणं पडिग्गहसत्तीए अभावादो। एवमंतरट्ठिदिपदेसग्गस्स सत्थाणे णिसेगाभावं पदुप्पाइय[2] अणुक्कीरिज्जमाणासु तासिं पदेसग्गस्स णिसेगो एदेण कमेण

करता है।

§ १२३. उदयसहित पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनकी अन्तमुंहूर्तप्रमाण प्रथम स्थिति छोड़कर तथा अनुदयरूप शेष कर्मोंकी एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिको छोड़कर पुनः उनके ऊपरकी अन्तमुंर्तप्रमाण स्थितियोंको आगमके अविरोधपूर्वक ग्रहण करके अन्तरविधिको यह क्षपक सम्पन्न करता है यह उक्त सूत्रके अर्थका निश्चय है। किन्तु यह पुरुषवेद तथा क्रोधके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवको अधिकृत करके कहा है। अन्यथा तो जिस वेद और जिस संज्वलनके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा है उसकी प्रथम स्थिति अन्तमुंहूर्तमात्र स्थापित कर अन्तरको करता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। उनमेंसे पुरुषवेदकी प्रथम स्थिति नपुंसकवेद, स्त्रीवेद और छह नोकषायोंके क्षपणाकाल प्रमाण होकर सबसे अल्प है। क्रोधकी प्रथम स्थिति विशेष अधिक है।

*** जो अन्तरसम्बन्धी स्थितियाँ उत्कीरित की जाती हैं उनके प्रदेशपुंजको उत्कीरित की जानेवाली स्थितियोंमें नहीं देता है।**

§ १२४. जो अन्तरके लिये स्थापित की गई स्थितियां हैं उनके प्रदेशपुंजकी अन्तमुंहूर्तप्रमाण फालियाँ करके प्रथम फालिसे लेकर जो असंख्यात गुणितरूपसे अवस्थित हैं उनका अन्तरकरणकालप्रमाण कालके द्वारा उत्कीरण करता हुआ उस प्रदेशपुंजको उत्कीरण की जानेवाली स्थितियों में नियमसे नहीं देता है, क्योंकि निर्लेपन की जानेवाली उन फालियोंमें प्रतिग्रहशक्तिका अभाव है। इस प्रकार अन्तरसम्बन्धी स्थितियोंके प्रदेशपुंजकी स्वस्थानमें निषेक रचना नहीं होती इस बातका कथन करके उत्कीरित नहीं होनेवाली स्थितियोंमें उनके प्रदेशपुंजका निक्षेप इस क्रमसे होता है

---

१. ताडपत्रीयप्रतौ ········ इति चिह्नांकितो भागः त्रुटितः। ता०प्रतौ० –ट्ठविदाओ उक्कीरणद्धाओ पढमफालीओ तासिं इति पाठः। २. ता०प्रतौ परूविय पडिवग्गहसत्तीणमंतरट्ठिदीसु इति पाठः।

होदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ जासिं पयडीणं पढमट्ठिदी अत्थि तिस्से पढमट्ठिदीए जाओ संपहि ट्ठिदीओ उक्कीरंति तमुक्कीरमाणगं पदेसग्गं संछुहदि ।

§ १२५. जासिं पयडीणं वेदिज्जमाणाणं पढमट्ठिदी अत्थि तासिं तिस्से पढमट्ठिदीए उवरि अप्पणो अण्णेसिं च कम्माणमंतरट्ठिदीसु उक्कीरिज्जमाणं पदेसग्गमोकड्डणाए जहासंभवं समट्ठिदिसंकमेण च संछुहदि त्ति सुत्तत्थो ।

❀ अध जाओ बज्झंति पयडीओ तासिमाबाहमधिच्छियूण जा जहण्णिया णिसेगट्ठिदी तमादिं कादूण बज्झमाणियासु ट्ठिदीसु उक्कड्डिज्जदे ।

§ १२६. ण केवलं वेदिज्जमाणाणं पढमट्ठिदीए चेव संछुहदि, किंतु बज्झमाणचदुसंजलण-पुरिसवेदपयडीणं तक्कालियबंधस्स जा आबाहा अंतरायामादो संखेज्जगुणमद्धाणमुवरिं चडिदूण ट्ठिदा तमइच्छेयूण बंधपढमणिसेयमादिं कादूण बज्झमाणियासु ट्ठिदीसु बिदियट्ठिदीए समवट्ठिदासु तमंतरट्ठिदीसु उक्कीरिज्जमाणपदेसग्गमुक्कड्डणावसेण संछुहदि त्ति भणिदं होदि । एत्थ सेसपरूवणाए उवसामगभंगो ।

❀ संपहि अवट्ठिदअणुभागखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभाग-

ऐसा कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ जिन प्रकृतियोंकी प्रथम स्थिति है उनकी उस प्रथम स्थितिके ऊपर वर्तमानमें जो अन्य स्थितियाँ उत्कीरित की जा रही हैं उनके उस उत्कीरित किये जानेवाले प्रदेशपुंजको संक्रान्त करता है ।

§ १२५. वेदी जानेवाली जिन प्रकृतियोंकी प्रथम स्थिति है उनकी उस प्रथम स्थितिके ऊपर अपने और अन्य कर्मोंकी अन्तर स्थितियोंमें स्थित उत्कीरित किये जानेवाले प्रदेशपुंजको अपकर्षणके द्वारा तथा यथासम्भव समस्थिति संक्रमके द्वारा संक्रान्त करता है यह इस सूत्रका तात्पर्यार्थ है ।

❀ और जो प्रकृतियाँ बन्धको प्राप्त हो रही हैं उनका आबाधाको उल्लंघन करके जो जघन्य निषेक स्थिति है उससे लेकर बध्यमान स्थितियोंमें उत्कर्षित करता है ।

§ १२६. न केवल वेदी जानेवाली प्रकृतियोंकी प्रथम स्थितिमें ही संक्रान्त करता है, किन्तु बन्धको प्राप्त होनेवाली पुरुषवेद और चार संज्वलन प्रकृतियोंकी तात्कालिक बन्धकी जो आबाधा है जो कि अन्तरायामसे संख्यातगुणेआयाम ऊपर चढ़कर स्थित है उसे उल्लंघन कर बन्धस्थितिके प्रथम निषेकसे लेकर जो द्वितीय स्थितिमें स्थित है उन बँधनेवाली स्थितियोंमें अन्तरस्थितियोंके उत्कीरित किये जानेवाले उस प्रदेशपुंजको उत्कर्षणके द्वारा संक्रान्त करता है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है । यहाँ शेष प्ररूपणा उपशामकके समान है ।

❀ अब अवस्थित हजारों अनुभागकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर अन्य अनुभाग-

खंडयं जो च अंतरे उक्कीरिज्जमाणे ट्ठिदिबंधो पबद्धो जं च ट्ठिदिखंडयं जाव अंतरकरणद्धा एदाणि समगं णिट्ठाणियमाणाणि णिट्ठिदाणि ।

§ १२७. किं कारणं ? अंतरचरिमफालीए णिवदमाणाए तिण्हमेदासिमद्धाण-मणुभागखंडयसहस्सगब्भाणमक्कमेणेव परिसमत्तिदंसणादो ।

※ से काले पढमसमय-दुसमयकदं ।

§ १२८. जम्हि जम्हि समए अंतरचरिमफाली णिवदिदा, तम्हि समए अंतरं पढमसमयकदं णाम भण्णदे[1] । तदणंतरसमए पुण अंतरं दुसमयकदं णाम भवदि । तम्हि पयट्टमाणकज्जविसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

※ ताधे चेव णवुंसयवेदस्स आजुत्तकरणसंकामगो । मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो, मोहणीयस्स एगट्ठाणिया बंधोदया । जाणि कम्माणि बज्झंति तेसिं छसु आवलियासु गदासु उदीरणा । मोहणीयस्स आणुपुव्वीसंकमो । लोहसंजलणस्स असंकमो । एदाणि सत्त करणाणि अंतरदुसमयकदे आरद्धाणि ।

§ १२९. अंतरदुसमयकदावत्थाए चेव णवुंसयवेदस्स आयुत्तकरणसंकामयत्त-

---

काण्डकको तथा अन्तरको उत्कीरित करते हुए जो स्थितिबन्ध बाँधा था और जो स्थितिकाण्डक प्रारम्भ किया था वे तीनों ही अन्तरकरण कालके समाप्त होनेतक समाप्त होते हुए एक साथ समाप्त हो जाते हैं ।

§ १२७. क्योंकि अन्तरकी अन्तिम फालिके पतन होते समय हजारों अनुभागकाण्डकगर्भ इन तीनों ही कालोंकी एक साथ समाप्ति देखी जाती है ।

※ तदनन्तर समयमें अन्तर प्रथम समयकृत और द्विसमयकृत होता है ।

§ १२८. जिस-जिस समयमें अन्तरकी अन्तिम फालि पतित होती है उस समयमें अन्तर प्रथम समयकृत कहलाता है । परन्तु तदनन्तर समयमें अन्तर द्विसमयकृत होता है । उस समय प्रारम्भ होनेवाले कार्यविशेषका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

※ उसी समय नपुंसकवेदका आयुक्तकरण संक्रामक होता है । मोहनीयकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है । मोहनीयका एक स्थानीय बन्ध और उदय होता है । जो कर्म बँधते हैं उनकी छह आवलिकाल जानेपर उदीरणा होती है । मोहनीयका आनुपूर्वीसंक्रम होने लगता है तथा लोभसंज्वलनका असंक्रामक होता है । ये सात करण अन्तरके द्विसमयकृत होनेपर अर्थात् अन्तरकरणके अनन्तर समयमें प्रारम्भ हो जाते हैं ।

§ १२९. अन्तरके द्विसमयकृत अवस्थामें ही नपुंसकवेदके आयुक्तकरण संक्रामकपनेसे लेकर

---

१. ता०प्रतौ भवदि इति पाठः ।

मादिं कादूण सत्तण्णमेदेसिं करणाणमाढवगो जादो त्ति भणिदं होदि। तत्थ णवुंसयवेदस्स आजुत्तकरणसंकामगो त्ति भणिदे णवुंसयवेदस्स खवणाए अब्भुज्जदो होदूण पयट्टो त्ति भणिदं होदि। सेसकरणाणं पि अत्थो जहा उवसामगस्स परूविदो तहा चेव वत्तव्वो, विसेसाभावादो।

*** तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु णवुंसयवेदो संकामिज्जमाणो संकामिदो।**

§ १३०. एवं णवुंसयवेदस्स भरेण खवणमाढविय संकामेमाणस्स संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु तदो णवुंसयवेदो चरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिसरूवेण सव्वसंकमेण पुरिसवेदस्सुवरि संकामिदो त्ति भणिदं होदि। एवं णवुंसयवेदं संछुहिय पुणो वि पवड्ढमाणझाणपरिणामो तदणंतरमित्थिवेदस्स खवणमाढवेदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** तदो से काले इत्थिवेदस्स पढमसमयसंकामगो।**

§ १३१. णवुंसयवेदक्खवणाणंतरमित्थिवेदं चेव खवेदि, ण सेसकम्माणि त्ति कुदो एस णियमो? ण, अप्पसत्थपरिवाडीए कम्मक्खवणमाढवेंतस्स तदविरोहादो।

इन सात करणोंका आरम्भ हो जाता है यह कहा गया है। उनमेंसे 'नपुंसकवेदका आयुक्तकरण संक्रामक' ऐसा कहनेपर नपुंसकवेदकी क्षपणाके लिए उद्यत होकर प्रवृत्त होता है यह कहा गया है। शेष करणोंका अर्थ भी जैसा उपशामकके कहा गया है उसी प्रकार कहना चाहिये उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

*** तदनन्तर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके जानेपर नपुंसकवेद संक्रामित होता हुआ संक्रमित कर दिया जाता है।**

§ १३०. इस प्रकार नपुंसकवेदके भरपूर क्षपणाका आरम्भ कर संक्रमण कराते हुए संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर तत्पश्चात् नपुंसकवेद अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिरूपसे सर्वसंक्रमण द्वारा पुरुषवेदके ऊपर संक्रमित कर दिया जाता है यह उक्त कथनका मथितार्थ है। इस प्रकार नपुंसकवेदकी क्षपणा कर फिर भी वृद्धिको प्राप्त होता हुआ ध्यान परिणाम तदनन्तर स्त्रीवेदकी क्षपणाका आरम्भ करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** तत्पश्चात् अनन्तर समयमें स्त्रीवेदका संक्रामक होता है।**

§ १३१. नपुंसकवेदकी क्षपणाके अनन्तर स्त्रीवेदकी ही क्षपणा करता है शेष कर्मोंकी नहीं यह नियम किस कारणसे है?

समाधान—नहीं, क्योंकि अप्रशस्ततर प्रकृतियोंकी परिपाटीके अनुसार कर्मोंकी क्षपणा करानेवाले जीवके उसके वैसा होनेमें विरोधका अभाव है।

---

१. ता०प्रतौ एवं इति पाठो नास्ति।

*** ताधे अण्णं ट्ठिदिखंडयमण्णमणुभागखंडयमण्णो ट्ठिदिबंधो च आरद्धाणि।**

§ १३२. पुव्विल्लट्ठिदि-अणुभागखंडय-ट्ठिदिबंधाणं हेट्ठिमसमये जुगवमेव परिसमत्तिवसेण इत्थिवेदपढमसमयसंकामएण एदाणि ट्ठिदिखंडयादीणि तिण्णि वि जुगवमाढत्ताणि त्ति भणिदं होदि। एवमेत्तो प्पहुडि आजुत्तकिरियाए इत्थिवेदं खवेमाणस्स तक्खवणद्धाए संखेज्जदिभागे ट्ठिदिखंडयपुधत्तवावारेण समइक्कंते तम्मि उद्देसे जो पवुत्तिविसेसो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण इत्थिवेदक्खवणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं तिण्हं घादिकम्माणं संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो।**

§ १३३. पुव्वमेदेसिं कम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जवस्सिओ होदूणासंखेज्जगुणहाणीए पयट्टमाणो एत्थुद्देसे संखेज्जवस्ससहस्सपमाणो जादो त्ति भणिदं होइ। एवमेत्थुद्देसे संखेज्जवस्सियमेदेसिं ट्ठिदिबंधं कादूण उवरि चडमाणस्स संखेज्जसहस्समेत्तठिदिखंडयवावारेण इत्थिवेदक्खवणाए सेसा संखेज्जा भागा गदा ताधे इत्थिवेदस्स चरिमट्ठिदिखंडयमागाएमाणो एदेण कमेणागाएदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** उस समय अन्य स्थितिकाण्डक, अन्य अनुभागकाण्डक और अन्य स्थितिबन्ध आरम्भ करता है।**

§ १३२. पूर्वके स्थितिकाण्डक, अनुभागकाण्डक और स्थितिबन्धके अधस्तन समयमें एक साथ ही समाप्त हो जानेके कारण स्त्रीवेदका प्रथम समयवर्ती संक्रामक जीव इन तीनों ही स्थितिकाण्डक आदिको एक साथ आरम्भ करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार यहाँसे लेकर आयुक्तकरण क्रियाके द्वारा स्त्रीवेदकी क्षपणा करनेवाले जीवके उसकी क्षपणा करते हुए स्थितिकाण्डक व्यापारके द्वारा संख्यातवें भाग कालके व्यतीत होतेपर उस स्थानमें जो प्रवृत्तिविशेष होता है उसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा स्त्रीवेदकी क्षपणाके द्वारा संख्यातवें भाग कालके व्यतीत होनेपर ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन तीन घातिकर्मोंका संख्यात वर्षका स्थितिवाला बन्ध होता है।**

§ १३३. पहले इन कर्मोंका स्थितिबन्ध असंख्यातवर्षकी स्थितिवाला होकर असंख्यात गुणहानि द्वारा प्रवृत्त होता हुआ इस स्थानमें संख्यात हजार वर्षप्रमाण हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इस स्थानमें इन कर्मोंका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध करके ऊपर चढ़नेवाले जीवके संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके व्यापार द्वारा स्त्रीवेदकी क्षपणाके शेष संख्यात बहुभाग जब व्यतीत हो जाते हैं उस समय स्त्रीवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण इत्थिवेदस्स जं ट्ठिदिसंतकम्मं तं सव्वमागाइदं।**

§ १३४. गयत्थमेदं सुत्तं। ताधे पुण सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिखंडयमागाएंतो कधमागाएदि त्ति आसंकाए इदमाह—

*** सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मस्स असंखेज्जा भागा आगाइदा।**

§ १३५. सेसाणं कम्माणं पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तट्ठिदिसंतकम्मस्स संखेज्जदिभागं परिसेसिय बहुभागा तक्कालमागाइदा त्ति सुत्तत्थो।

*** तम्हि ट्ठिदिखंडए पुण्णे इत्थिवेदो संछुब्भमाणो संछुद्धो।**

§ १३६. इत्थिवेदचरिमफालीए विदियट्ठिदिसंठिदाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागाइदाए पुरिसवेदस्सुवरि संछुद्धाए तक्कालमित्थिवेदसंतकम्मस्स णिल्लेवाणोवलंभादो। संपहि तक्काले चेव मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं घादिदावसेसं संखेज्जवस्ससहस्सपमाणं होदूण चिट्ठदि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** ताधे चेव मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्साणि।**

करता हुआ इस क्रमसे ग्रहण करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके द्वारा स्त्रीवेदका जो स्थितिसत्कर्म है वह सब क्षपणाके लिए ग्रहण कर लिया जाता है।**

§ १३४. यह सूत्र गतार्थ है।

परन्तु उसी समय शेष कर्मोंके स्थितिकाण्डकको ग्रहण करता हुआ कैसे ग्रहण करता है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं।

*** शेष कर्मोंसम्बन्धी स्थितिसत्कर्मके असंख्यात बहुभागको ग्रहण करता है।**

§ १३५. शेष कर्मोंके पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्मके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्मको छोड़कर शेष बहुभागप्रमाण स्थितिसत्कर्मको उस समय ग्रहण करता है यह इस सूत्रका अर्थ है।

*** उस स्थितिकाण्डकके सम्पन्न होनेपर स्त्रीवेद संक्रमित होता हुआ संक्रान्त हो जाता है।**

§ १३६. द्वितीय स्थितिमें स्थित पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिके पुरुषवेदके ऊपर संक्रान्त होनेपर तत्काल स्त्रीवेद सत्कर्मका अभाव उपलब्ध होता है। अब उसी समय मोहनीयकर्मका घात करनेके बाद अवशिष्ट रहा स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता हुआ स्थित रहता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** उसी समय मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है।**

§ १३७. गयत्थमेदं सुत्तं। सेसाणं पुण अज्ज वि ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो चेव होदि त्ति घेत्तव्वं।

*** से काले सत्तण्हं णोकसायाणं पढमसमयसंकामगो।**

§ १३८. इत्थिवेदक्खवणाणंतरं हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा-पुरिसवेदाणमाउत्तकिरियाए खवणमाढविय तेसिं पढमसमयसंकामगो जादो त्ति भणिदं होदि। संपहि तक्काले सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिबंधप्पाबहुअं केरिसं होदि त्ति जादारेयस्स सिस्सस्स णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** सत्तण्हं णोकसायाणं पढमसमयसंकामगस्स ट्ठिदिबंधो मोहणीयस्स थोवो।**

*** णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।**

*** णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो।**

*** वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।**

§ १३९. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि एदम्मि चेव णिरुद्धसमए सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मविसयथोवबहुत्तगवेसणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

*** ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं मोहणीयस्स थोवं।**

---

§ १३७. यह सूत्र गतार्थ है। परन्तु शेष कर्मोंका स्थितिसत्कर्म अभी भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

*** तदनन्तर समयमें सात नोकषायोंका प्रथम समयवर्ती संक्रामक होता है।**

§ १३८. स्त्रीवेदकी क्षपणाके अनन्तर हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदके आयुक्त क्रियाके द्वारा क्षपणाका आरम्भ करके उनका प्रथम समयवर्ती संक्रामक हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब उस समय सभी कर्मोंके स्थितिबन्धका अल्पबहुत्व किस प्रकारका होता है ऐसी आशंका जिस शिष्यके हुई है उसे निःशंक करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** सात नोकषायोंके प्रथम समयवर्ती संक्रामकके मोहनीयकर्मका स्थितिबन्ध सबसे अल्प होता है।**

*** ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायकर्मका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है।**

*** नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा होता है।**

*** वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध विशेष अधिक होता है।**

§ १३९. यह सूत्र गतार्थ है। अब इसी विवक्षित समयमें सभी कर्मोंके स्थितिसत्कर्मविषयक अल्पबहुत्वकी मार्गणा करनेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** उस समय मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म सबसे अल्प है।**

*** तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।**

*** णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।**

*** वेदणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं ।**

§ १४०. मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मे संखेज्जवस्सिये जादे वि जाव तिण्हं घादिकम्माणं संखेज्जवस्सियं ट्ठिदिसंतकम्मं ण जायदे ताव पुव्वुत्तेणेव कमेण ट्ठिदिसंतकम्मप्पाबहुअं पयट्टदि[1], णाण्णहा त्ति भणिदं होदि । एवं सत्तणोकसायसंकामयस्स पढमसमए ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्माणमप्पाबहुअपवुत्तिकमं परूविय संपहि तस्सेव पढमट्ठिदिखंडए णिल्लेविदे मोहणीयादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं घादिदावसेसं कधमवचिट्ठदि त्ति एदस्स णिण्णयकरणट्ठमिदमाह—

*** पढमट्ठिदिखंडए पुण्णे मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणहीणं ।**

*** सेसाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणहीणं ।**

§ १४१. गयत्थमेदं सुत्तं । संपहि एदस्सेव पढमट्ठिदिबंधे पुण्णे अण्णो ट्ठिदिबंधो पयट्टमाणो मोहणीयादिकम्माणं कधं पयट्टदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिद्धारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।**

*** नामकर्म और गोत्रकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।**

*** वेदनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है ।**

§ १४०. मोहनीयकर्मके स्थितिसत्कर्मके संख्यात वर्षप्रमाण हो जानेपर भी जबतक तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण नहीं हो जाता तबतक पूर्वोक्त क्रमसे ही स्थितिसत्कर्मविषयक अल्पबहुत्व प्रवृत्त रहता है, अन्य प्रकारसे नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार सात नोकषायोंके संक्रामकके प्रथम समयमें स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके अल्पबहुत्वके प्रवृत्तिक्रमका कथन करके अब उसीके प्रथम स्थितिकाण्डकके निर्लेपित होनेपर मोहनीय आदि कर्मोंका घात करनेके बाद अवशिष्ट रहा स्थितिसत्कर्म किस प्रकारका अवशिष्ट रहता है इस बातका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** प्रथम स्थितिकाण्डकके सम्पन्न होनेपर मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा हीन होता है ।**

*** शेष कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा हीन होता है ।**

§ १४१. यह सूत्र गतार्थ है । अब इसीके प्रथम स्थितिबन्धके सम्पन्न होनेपर प्रवृत्त होता हुआ अन्य स्थितिबन्ध मोहनीय आदि कर्मोंका किस प्रकारका होता है इस अर्थविशेषका निर्धारण करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

---

१. ता०प्रतौ 'पयट्टदि त्ति' इति पाठः ।

*** ट्ठिदिबंधो णामा-गोद-वेदणीयाणं असंखेज्जगुणहीणो ।**

*** घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो ।**

§ १४२. सुगमं ।

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण गदे सत्तण्हं णोकसायाणं खवणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे णामा-गोद-वेदणीयाणं संखेज्जाणि वस्साणि ट्ठिदिबंधो ।**

§ १४३. जाव एद्दूरं ताव असंखेज्जवस्सिओ होदूणागच्छमाणो णामा-गोद-वेदणीयाणं ट्ठिदिबंधो एदम्मि उद्देसे संखेज्जवस्ससहस्सपमाणो जादो त्ति भणिदं होइ । एवमेत्थुद्देसे सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिबंधो जहाकमं संखेज्जवस्सिओ जादो । संपहि एत्तो प्पहुडि ट्ठिदिखंडयपुधत्तेसु बहुएसु गदेसु सत्तणोकसायक्खवणद्धाए संखेज्जा भागा गदा होंति । ताधे तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं पुव्वमसंखेज्जवस्सियं होदूण गच्छमाणं विसेसघादवसेण संखेज्जवस्सियं संजादमिदि पदुप्पाएमाणो सुत्तरमुत्तरं भणइ—

*** तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे सत्तण्हं णोकसायाणं खवणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णाणावरण-दंसणावरण अंतराइयाणं संखेज्जवस्सट्ठिदिसंतकम्मं जादं ।**

§ १४४. गयत्थमेदं सुत्तं । णवरि एत्थ ट्ठिदिखंडयपुधत्तणिद्देसो जेण वइपुल्ल-

---

*** नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा हीन होता है ।**

*** घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हीन होता है ।**

§ १४२. यह सूत्र सुगम है ।

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके जानेपर सात नोकषायोंके क्षपणाकालके संख्यातवें भागके जानेपर नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।**

§ १४३. जबतक इतनी दूर जाते हैं तबतक नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होकर आता हुआ इस स्थानमें संख्यात हजार वर्षप्रमाण हो जाता है । अब यहाँसे लेकर बहुत स्थितिकाण्डकोंके जानेपर सात नोकषायोंके क्षपणाकालके संख्यात बहुभाग व्यतीत हो जाते हैं तब तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म पहले असंख्यात वर्षप्रमाण होकर आता हुआ विशेष घातके कारण संख्यात वर्षप्रमाण हो जाता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** तत्पश्चात् स्थितिकाण्डकपृथक्त्वके जानेपर सात नोकषायोंके क्षपणाकालके संख्यात बहुभाग जानेपर ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्म हो जाता है ।**

§ १४४. यह सूत्र गतार्थ है । इतनी विशेषता है कि यहाँपर स्थितिकाण्डकपृथक्त्वका

वाचओ तेण ट्ठिदिखंडयपुधत्ताणं बहुवाणं गहणं कायव्वं, अण्णहा सत्तणोकसाय-क्खवणकालब्भंतरे संखेज्जसहस्समेत्ताणं[1] ट्ठिदिखंडयाणमणुप्पत्तिप्पसंगादो। एवमेदम्मि विसये तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मे संखेज्जवस्सपमाणत्तेण परिणदे एत्तो प्पहुडि घादिकम्माणं सव्वेसिमेव ट्ठिदिबंधो ट्ठिदिखंडयं च संखेज्जगुणहाणीए चेव पयट्टदि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ तदो पाए घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधे ट्ठिदिखंडए च पुण्णे पुण्णे ट्ठिदि-बंध-ट्ठिदिसंतकम्माणि संखेज्जगुणहीणाणि।

§ १४५. संखेज्जवस्सिये ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मे च जादे तव्विसयाणं ट्ठिदि-बंधोसरणट्ठिदिखंडयाणं च संखेज्जगुणहाणीए चेव पवुत्ती होइ, णाण्णहा त्ति वुत्तं होइ। एवं घादिकम्मावेक्खाए परूविदं। अघादिकम्माणं पुण ट्ठिदिबंधो चेव संखेज्ज-गुणहीणो होदूण पयट्टदि, ण ट्ठिदिसंतकम्ममिदि जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ णामा-गो-दवेदणीयाणं पुण्णे ट्ठिदिखंडए असंखेज्जगुणहीणं[2] ट्ठिदि-संतकम्मं।

❀ एदेसिं चेव ट्ठिदिबंधे पुण्णे अण्णो ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो।

निर्देश यतः वैपुल्यवाची है अतः बहुत स्थितिकाण्डकोंको ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा सात नोकषायोंके क्षपणाकालके भीतर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंकी अनुत्पत्तिका प्रसंग प्राप्त होता है। इस प्रकार इस स्थानमें तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाणरूपसे परिणत होनेपर यहाँसे लेकर सभी घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिकाण्डक संख्यात गुणहानिरूपसे ही प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ यहाँसे लेकर घातिकर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिकाण्डकके पुनः पुनः पूर्ण होनेपर स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणे हीन होते हैं।

§ १४५. संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके हो जानेपर तद्विषयक स्थिति-बन्धापसरण और स्थितिकाण्डकोंकी संख्यात गुणहानिरूपसे ही प्रवृत्ति होती है, अन्य प्रकारसे नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह घातिकर्मोंकी अपेक्षा कथन किया। परन्तु अघातिकर्मोंका तो स्थितिबन्ध ही संख्यातगुणा हीन होकर प्रवृत्त होता है, स्थितिसत्कर्म नहीं इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मके स्थितिकाण्डकके पूर्ण होनेपर स्थितिसत्कर्म असंख्यातगुणा हीन होता है।

❀ इन्हीं कर्मोंका स्थितिबन्ध पूर्ण होनेपर अन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हीन होता है।

१. ता०प्रतौ संखेज्जवस्ससहस्समेत्ताणं इति पाठः। २. आ०प्रतौ -हीणाओ इति पाठः।

§ १४६. सुगमं ।

*** एदेण कमेण ताव जाव सत्तण्हं णोकसायाणं संकामयस्स चरिम-ट्ठिदिबंधो त्ति ।**

§ १४७. एदम्मि अवत्थंतरे ट्ठिदिबंधोसरण-ट्ठिदिखंडयपरूवणाए अणंतरपरूविदो चेव कमो, ण एत्थ किंचि णाणत्तमत्थि त्ति भणिदं होइ । संपहि सत्तण्हं णोकसायाणं संकामयस्स चरिमसमए ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह--

*** सत्तण्हं णोकसायाणं संकामयस्स चरिमो ट्ठिदिबंधो पुरिसवेदस्स अट्ठ वस्साणि ।**

§ १४८. संखेज्जवस्ससहस्सियादो पुव्वणिरुद्धट्ठिदिबंधादो जहाकममसंखेज्ज-गुणहाणीए (?)परिहाइदूण एदम्मि उद्देसे अट्ठवस्सपमाणो पुरिसवेदस्स ट्ठिदिबंधो जादो त्ति भणिदं होदि ।

*** संजलणाणं सोलस वस्साणि ।**

§ १४९. सुगममेदं ।

*** सेसाणं कम्माणं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ट्ठिदिबंधो ।**

§ १५०. सुगममेदं पि सुत्तं ।

---

§ १४६. यह सूत्र सुगम है ।

*** इस क्रमसे तबतक जाता है जब जाकर सात नोकषायोंके संक्रामकका अन्तिम स्थितिबन्ध प्राप्त होता है ।**

§ १४७. इस अवस्थाके मध्यमें स्थितिबन्धापसरण और स्थितिकाण्डकोंकी प्ररूपणाका क्रम अनन्तर प्ररूपित ही है, इस विषयमें यहाँ कुछ भी नानापन नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब सात नोकषायोंके संक्रामकके अन्तिम समयमें स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** सात नोकषायोंके संक्रामकके पुरुषवेदका अन्तिम स्थितिबन्ध आठ वर्षप्रमाण होता है ।**

§ १४८. पूर्वमें निरुद्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्धसे यथाक्रम असंख्यात गुणहानि द्वारा घटाकर इस स्थानमें पुरुषवेदका स्थितिबन्ध आठ वर्षप्रमाण हो जाता है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है ।

*** संज्वलन कर्मोंका सोलह वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।**

§ १४९. यह सूत्र सुगम है ।

*** शेष कर्मोंका संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है ।**

§ १५०. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** ट्ठिदिसंतकम्मं पुण घादिकम्माणं चदुण्हं वि संखेज्जाणि वस्स-सहस्साणि ।**

*** णामा-गोद-वेदणीयाणमसंखेज्जाणि वस्साणि ।**

§ १५१. सुगमं । एवमेदम्मि संधिविसए ट्ठिदिबंधादीणं पमाणं जाणाविय संपहि अइक्कंतत्थविसयं किंचि परामरसं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** अंतरादो दुसमयकदादो पाये छण्णोकसाए कोधे संछुहदि ण अण्णम्हि कम्हि वि ।**

§ १५२. अंतरकरणाणंतरमेवाणुपुव्वीसंकमस्स पारंभे जादे तदो प्पहुडि छण्णोकसाए पुरिसवेदमुल्लंघियूण कोहसंजलणे चेव संछुहदि । पुरिसवेदं पि सेसकसाय-परिहारेण णियमा कोहसंजलणे संछुहदि । एवं कोहसंजलणाणं पि जहाणुपुव्वीए संकमपवुत्ती दट्ठव्वा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो ।

*** पुरिसवेदस्स दोआवलियासु पढमट्ठिदीए सेसासु आगाल-पडिआगालो वोच्छिण्णो । पढमट्ठिदीदो चेव उदीरणा ।**

§ १५३. पढम-विदियट्ठिदीणमुक्कड्डणोकड्डणवसेण परोप्परं विसयसंकमो आगाल-पडिआगालो त्ति भण्णदे । सो पुरिसवेदपढमट्ठिदीए आवलिय-पडिआवलियमेत्तसेसाए

*** परन्तु चारों ही घातिकर्मोंका संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्म होता है ।**

*** नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्म होता है ।**

§ १५१. यह सूत्र सुगम है । इस प्रकार इस सन्धिमें स्थितिबन्धादिकके प्रमाणका ज्ञान कराकर अब व्यतीत हुए अर्थके विषयमें कुछ परामर्श करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** द्विसमयकृत अन्तरसे अर्थात् अन्तरकरणके तदनन्तर समयसे लेकर छह नोकषाय क्रोधमें संक्रमित होते हैं, अन्य किसीमें नहीं ।**

§ १५२. अन्तरकरणके अनन्तर ही आनुपूर्वी संक्रमका प्रारम्भ हो जानेपर वहाँसे लेकर छह नोकषाय पुरुषवेदको उल्लंघन कर क्रोधसंज्वलनमें ही संक्रमित होते हैं । पुरुषवेद भी शेष कषायोंका परित्याग कर नियमसे क्रोधसंज्वलनमें संक्रमित होता है । इसी प्रकार क्रोधसंज्वलनकी भी आनुपूर्वीके अनुसार संक्रमकी प्रवृत्ति जान लेनी चाहिये यह सूत्रका भावार्थ है ।

*** पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिमें दो आवलिकालके शेष रहनेपर आगाल-प्रत्यागाल व्युच्छिन्न हो जाते हैं । प्रथम स्थितिमेंसे ही उदीरणा होती है ।**

§ १५३. प्रथम और द्वितीय स्थितिके उत्कर्षण और अपकर्षणके कारण परस्पर कर्मपुंजके संक्रमको आगाल-प्रत्यागाल कहते हैं । सो वह पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके आवलि और प्रत्यावलि

उप्पादाणुच्छेदेण वोच्छिण्णो त्ति भणिदं होदि।

*** समयाहियाए आवलियाए सेसाए जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा ।**

§ १५४. सुगमं ।

*** तदो चरिमसमयसवेदो जादो ।**

§ १५५. सुबोधं ।

*** ताधे छण्णोकसाया संछुद्धा ।**

§ १५६. तदवत्थाए छण्णोकसायाणं चरिमफाली संखेज्जवस्ससहस्सायामा सव्वसंकमेण संछुद्धा त्ति वुत्तं होइ। ताधे पुण पुरिसवेदस्स केत्तियं संछुद्धं केत्तियं वा सेसमत्थि त्ति आसंकाए इदमाह—

*** पुरिसवेदस्स जाओ दो आवलियाओ समयूणाओ एत्तिगा समयपबद्धा विदियट्ठिदीए अत्थि उदयट्ठिदी च अत्थि। सेसं पुरिसवेदस्स संतकम्मं सव्वं संछुद्धं ।**

§ १५७. समयूणदोआवलियमेत्तणवकबंधे असंखेज्जसमयपबद्धपमाणमुदयट्ठिदिं च मोत्तूण सेसासेसपुरिसवेदसंतकम्मं चरिमसमयसवेदेण कोहसंजलणस्सुवरि सव्वसंकमेण संछुद्धमिदि एसो एदस्स सुत्तस्स समुच्चयत्थो ।

मात्र शेष रहनेपर उत्पादानुच्छेदके न्यायानुसार विच्छिन्न हो जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** एक समय अधिक एक आवलि शेष रहनेपर जघन्य स्थितिउदीरणा होती है।**

§ १५४. यह सूत्र सुगम है ।

*** तत्पश्चात् क्षपक जीव अन्तिम समयवर्ती सवेदी हो जाता है ।**

§ १५५. यह सूत्र सुबोध है।

*** उस समय छह नोकषाय संक्रान्त हो जाते हैं ।**

§ १५६. उस अवस्थामें छह नोकषायोंकी संख्यात हजार वर्षप्रमाण आयामवाली अन्तिम फालि सर्व संक्रमण द्वारा संक्रमित हो जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसी समय पुरुषवेदका कितना प्रदेशपुंज संक्रान्त होता है और कितना शेष रहता है ऐसी आशंका होनेपर यह सूत्र कहते हैं—

*** पुरुषवेदकी जो एक समय कम दो आवलियाँ हैं इतने समयप्रबद्ध द्वितीय स्थितिमें शेष है और उदयस्थिति है। पुरुषवेदका शेष समस्त सत्कर्म संक्रान्त हो जाता है।**

§ १५७. एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवक समयप्रबद्ध और असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण उदयस्थितिको छोड़कर शेष समस्त पुरुषवेदसम्बन्धी सत्कर्म चरमसमयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा क्रोधसंज्वलनके ऊपर सर्वसंक्रमरूपसे संक्रान्त कर दिया जाता है यह इस सूत्रका समु-

*** से काले अस्सकण्णकरणं पवत्तिहिदि ।**

§ १५८. तदणंतरसमए अवगदवेदो होदूण कोहसंजलणक्खवणमाढवेंतो अस्सकण्णकरणं णाम करणविसेसमेसो पवत्तिहिदि, सत्तणोकसायक्खवणाणंतरमेदस्स जहावसरपत्तत्तादो त्ति वुत्तं होइ ।

*** अस्सकण्णकरणं ताव थवणिज्जं, इमो ताव सुत्तफासो ।**

§ १५९. जहावसरपत्तमवि अस्सकण्णकरणं ताव थवणिज्जं कादूण हेट्ठिमासेसत्थविसये णिच्छयुप्पायणट्ठमेत्थुद्देसे इमो ताव गाहासुत्ताणमणुवादो कायव्वो त्ति भणिदं होदि । एसो च सुत्तफासो हेट्ठा कदमम्मि अवत्थंतरे पयट्टमाणस्स जीवस्स कायव्वो त्ति आसंकाए तव्विसयणिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** अंतरदुसमयकदमादिं कादूण जाव छण्णोकसायाणं चरिमसमयसंकामगो त्ति एदिस्से अद्धाए अप्पा त्ति कट्टु सुत्तं ।**

§ १६०. अंतरदुचरिमफालिं संकामिय से काले णवुंसयवेदस्स आजुत्तकरणसंकामणमाढविय ट्ठिदस्स जीवस्स अंतरदुसमयकदावत्था णाम भवदि । तमादिं कादूण जाव चरिमसमयछण्णोकसायसंकामगो त्ति एदम्मि अवत्थाविसेसे 'अप्पा वट्टदि' त्ति

च्चयार्थ है ।

*** तदनन्तर समयमें अश्वकर्णकरणकालमें प्रवृत्त होगा ।**

§ १५८. तदनन्तर समयमें अपगतवेदी होकर क्रोधसंज्वलनकी क्षपणाका आरम्भ करता हुआ अश्वकर्णकरण संज्ञावाले करणविशेषमें यह प्रवृत्त होगा, क्योंकि सात नोकषायोंकी क्षपणाके अनन्तर यह अवसर प्राप्त है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** तो भी अश्वकर्णकरणको स्थगित करके सर्वप्रथम इस सूत्रगाथाका स्पर्श करते हैं ।**

§ १५९. यद्यपि अश्वकर्णकरण यथावसर प्राप्त है तो भी उसे स्थगित करके अधस्तन समस्त अर्थके विषयमें निश्चय करनेके लिये इस स्थानमें सर्वप्रथम गाथासूत्रोंका यह अनुवाद करना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । और यह सूत्रस्पर्श नीचे (पूर्वमें) किस अवस्थाविशेषमें प्रवृत्त होनेवाले जीवके करना चाहिये ऐसी आशंका होनेपर उस विषयका निर्देश करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** द्विसमयकृत अन्तरसे लेकर छह नोकषायोंके संक्रमके अन्तिम समयतक इस कालमें आत्मा है एतद्विषयक सूत्र कहते हैं ।**

§ १६० अन्तरसम्बन्धी द्विचरम फालिको संक्रमित करके तदनन्तर समयमें नपुंसकवेदके आयुक्तकरण संक्रमका आरम्भ करके स्थित हुए जीवके अन्तरद्विसमयकृत अवस्था कहलाती है । उससे लेकर अन्तिम समयवर्ती छह नोकषायोंके संक्रामक जीवके प्राप्त होनेतक इस अवस्था-

णिरुंमणं कादूण तत्थेदं सुत्तमणुगंतव्वमिदि वुत्तं होदि। संपहि एत्थ पडिबद्धगाहा-सुत्ताणं पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** तत्थ सत्त मूलगाहाओ।**

§ १६१. तम्हि अणंतरणिद्दिट्ठविसये पडिबद्धाओ सत्त मूलगाहाओ भवंति त्ति भणिदं होइ। तत्थ मूलगाहाओ णाम सुत्तगाहाओ पुच्छामेत्तेण सूचिदाणेगत्थाओ। भासगाहाओ सव्वपेक्खाओ त्ति घेत्तव्वं। संपहि तासिं जहाकमं समुक्कित्तणं कुणमाणो पढमगाहासुत्तस्सेव ताव सरूवणिद्देसं कुणइ—

(७१) संकामयपट्ठवगस्स किंट्ठिदियाणि पुव्वबद्धाणि।
केसु व अणुभागेसु य संकंतं वा असंकंतं ॥१२४॥

§ १६२. अंतरकरणं समाणिय जहाकमं णोकसायक्खवणमाढवेंतो संकामण-पट्ठवगो णाम। तस्स तदवत्थाए पडिबद्धाओ पुव्वुत्तसत्तमूलगाहाणं मज्झे चत्तारि मूलगाहाओ। तासु पढमा एसा मूलगाहा। संपहि एदिस्से अत्थविवरणं कस्सामो। तं जहा—'संकामयपट्ठवगस्स' णवुंसयवेदादिकम्माणं क्खवणमाढवेंतस्स 'पुव्वबद्धाणि कम्माणि किंट्ठिदियाणि' किंपमाणाए ट्ठिदीए वट्टंति, किमेदेसिं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्ज-वस्सियमसंखेज्जवस्सियं वा होदि त्ति पुच्छिदं होदि। एवमेसो गाहापुव्वद्धो ट्ठिदि-संतकम्मपमाणमुवेक्खदे। 'केसु व अणुभागेसु य' एसो गाहासुत्तविदियावयवो।

विशेषमें आत्मा है इसे विवक्षित कर वहाँ यह सूत्र जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब प्रकृत विषयसे सम्बन्ध रखनेवाले गाथासूत्रोंके प्रमाणकी अवधारणा करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस विषयमें सात मूलगाथाएँ हैं।**

§ १६१. अनन्तर निर्दिष्ट इस विषयमें सम्बद्ध सात मूलगाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ मूलगाथाओंसे तात्पर्य सूत्रगाथाओंसे है जो मात्र पृच्छा द्वारा सूचित होनेवाले अनेक अर्थवाली हैं। भाष्यगाथाएँ सव्यपेक्ष होती हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। अब उनका क्रमसे समुत्कीर्तन करते हुए सर्वप्रथम गाथासूत्रके स्वरूपका निर्देश करते हैं—

(७१) संक्रमण प्रस्थापक जीवके पूर्वबद्ध कर्म किस स्थितिवाले और किन अनुभागोंमें विद्यमान हैं। कौन कर्म संक्रान्त हैं और कौन कर्म असंक्रान्त हैं ॥१२४॥

§ १६२. अन्तरकरण समाप्त करके यथाक्रम नोकषायोंकी क्षपणाका आरम्भ करनेवाला जीव संक्रामणप्रस्थापक कहलाता है। उसके उस अवस्थासे सम्बन्ध रखनेवाली पूर्वोक्त सात सूत्रगाथाओंमें चार मूलगाथाएँ हैं। उनमेंसे यह प्रथम मूलगाथा है। अब इसके अर्थका व्याख्यान करेंगे। वह जैसे—संक्रामणप्रस्थापक अर्थात् नपुंसकवेद आदि कर्मोंकी क्षपणाका आरम्भ करने-वाले जीवके पूर्वबद्ध कर्म किस स्थितिवाले अर्थात् किस प्रमाणवाली स्थितिमें रहते हैं। क्या इनका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है या असंख्यात वर्षप्रमाण होता है यह पृच्छा की गई है। इस प्रकार यह गाथासूत्रका पूर्वार्ध स्थितिसत्कर्मके प्रमाणकी अपेक्षा करता है। 'केसु व अणुभागेसु

तस्सेव संकामणपट्ठवगस्स सुहासुहाणं कम्माणमणुभागसंतकम्मपमाणावहारणे पडिबद्धो, संकामयपट्ठवगस्स पुव्वबद्धाणि कम्माणि केरिसेसु अणुभागेसु पयट्टंति त्ति सुत्तत्थ-संबंधावलंबणादो। 'संकंतं वा असंकंतं' इदि एसो सुत्तस्स तदियावयवो तस्सेव संका-मणपट्ठवगस्स पुव्वमेव खविदाखविदकम्माणं परूवणमुवेक्खदे, संकंतं खविदं, असंकंत-मक्खविदमिदि सुत्तत्थावलंबणादो। अंतरकरणसमत्तीदो विदियसमयम्हि संकामण-पट्ठवगभावेण वट्टमाणस्स पुव्वबद्धाणं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममणुभागसंतकम्मं वा किंपमाणं होइ। तत्थेव वट्टमाणस्स पुव्वमेव खीणमक्खीणं वा कं कम्मं होदि त्ति एसो एदस्स गाहासुत्तस्स समुदायत्थो। एवमेदीए सुत्तगाहाए पुच्छिदत्थाणं णिण्णय-करणट्ठमेत्थ पंच भासगाहाओ होंति त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** एदिस्से पंचभासगाहाओ[1]।**

§ १६३. **एदिस्से अणंतरणिद्दिट्ठाए पढममूलगाहाए पंच भासगाहाओ होंति त्ति भणिदं होइ। भासगाहाओ त्ति वा वक्खाणगाहाओ त्ति वा विवरणगाहाओ त्ति वा एयट्ठो। संपहि ताओ कदमाओ त्ति आसंकिय पुच्छावक्कमाह—**

*** तं जहा।**

§ १६४. **सुगमं।**

य' यह गाथासूत्रका दूसरा अवयव है जो उसी संक्रामणप्रस्थापकके शुभ और अशुभ कर्मोंके अनुभागसत्कर्मके प्रमाणके अवधारणमें प्रतिबद्ध है। इसप्रकार प्रकृतमें सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध-सम्बन्धी अवलम्बन लिया है। 'संकंतं वा असंकंतं' यह गाथासूत्रका तीसरा अवयव है जो उसी संक्रामणप्रस्थापकके पहले ही क्षपित हुए और क्षपित नहीं हुए कर्मोंकी प्ररूपणाकी अपेक्षा करता है। संक्रान्तका अर्थ क्षपित है। असंक्रान्तका अर्थ अक्षपित है इस प्रकार इस सूत्रवचनका अर्थके साथ अवलम्बन लिया है। अन्तरकरणकी समाप्तिके बाद दूसरे समयमें संक्रामणप्रस्थापकरूपसे विद्यमान जीवके पूर्वबद्ध कर्मोंका स्थितिसत्कर्म और अनुभागसत्कर्मका कितना प्रमाण है तथा वहीं विद्यमान रहे जोवके पहले ही क्षीण हुआ और क्षीण नहीं हुआ कौन कर्म है यह इस गाथा-सूत्रका समुदायार्थ है। इस प्रकार इस सूत्रगाथा द्वारा पूछे गये अर्थोंका निर्णय करनेके लिये इस विषयमें पाँच भाष्य गाथाएँ हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

*** इस सूत्रगाथाकी पाँच भाष्यगाथाएँ हैं।**

§ १६३. यह अनन्तरपूर्व कही गई प्रथम मूल गाथाकी पाँच भाष्यगाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। भाष्यगाथा, व्याख्यानगाथा और विवरणगाथा ये तीनों एकार्थक शब्द हैं। प्रकृतमें वे कौन-सी हैं ऐसी आशंका करके पृच्छावाक्य कहते हैं—

*** वह जैसे।**

§ १६४. यह सूत्र भी सुगम है।

---

१. ता०प्रतौ पंच [भास] गाहाओ इति पाठः।

*** भासगाहाओ परूविज्जंतीओ चेव भणिदं होंति, गंथगउरवपरिहरणट्ठं ।**

§ १६५ ताओ भासगाहाओ पादेक्कं विहासिज्जमाणाओ चेव समुक्कित्तिज्जंति, सव्वासिमेक्कवारेणेव समुक्कित्तणं कादूण पुणो वि पादेक्कमुच्चारिय अत्थपरूवणे कीरमाणे गंथगउरवप्पसंगादो । तदो मूलगाथमेगं चेव पढममुच्चारिय पुणो तप्पडिबद्धाणं भासगाहाणं समुक्कित्तणमत्थविहासणं च एक्कदो भणामो त्ति एसो एदस्स भावत्थो । एवमुवरि वि भासगाहाणमेसो उच्चारणाविही जहावसरमणुगंतव्वो । संपहि जहापइण्णमेव भासगाहाणं विहासणं कुणमाणो पढमभासगाहाए ताव विसयविभागपदंसणमुहेण समुक्कित्तणट्ठमिदमाह—

*** मोहणीयस्स अंतरदुसमयकदे संकामगपट्ठवगो होदि । एत्थ सुत्तं ।**

§ १६६. अंतरकरणं समाणिय विदियसमए वट्टमाणो मोहणीयस्स संकामणपट्ठवगो णाम होदि । तत्थेदमुवरिमं गाहासुत्तं पडिबद्धमिदि वुत्तं होइ । अंतरकरणादो पुव्वं पि चरित्तमोहणीयस्स संकामगपट्ठवगो चेव, अण्णहा अट्ठण्हं कसायाणं तत्तो हेट्ठा खवणाणुववत्तीदो । तहा च संते अंतरदुसमयकदे तदो प्पहुडि मोहणीयस्स संकामणपट्ठवगो होदि त्ति णेदं घडदे ? ण एस दोसो, हेट्ठा खविदाणमट्ठण्हं कसायाणं मोहणीयस्स सव्वदव्वस्साणंतिमभागत्तेण पाहण्णियाणुवलंभादो, तेसिं खवणाए अंतर-

---

*** ग्रन्थके गौरवका परिहार करनेके लिये भाष्यगाथाएँ ही प्ररूपणा करनेवाली होती हैं यह प्रकृतमें कहा गया है ।**

§ १६५. पृथक्-पृथक् व्याख्यान करती हुई उन भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना करते हैं । सभी गाथाओंकी एक बारमें ही समुत्कीर्तना करके पुनरपि प्रत्येकका उच्चारणा करके अर्थकी प्ररूपणा करनेपर ग्रन्थके गौरवका प्रसंग आता है, इसलिए एक मूलगाथाका ही सर्वप्रथम उच्चारण करके पुनः उससे सम्बन्ध रखनेवाली भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना और अर्थसम्बन्धी व्याख्यानको एक साथ करते हैं यह इसका भावार्थ है । इसी प्रकार ऊपर भी भाष्यगाथाओंकी यह उच्चारणाविधि यथावसर जानना चाहिये । अब प्रतिज्ञानुसार ही भाष्यगाथाओंका व्याख्यान करते हुए सर्वप्रथम भाष्यगाथाके विषयविभागको दिखलानेकी प्रमुखतासे समुत्कीर्तना करनेके लिये यह सूत्र कहते हैं—

*** द्विसमयकृत अन्तर होनेपर मोहनीयकर्मके संक्रामणका प्रस्थापक होता है ।**

§ १६६. अन्तरकरण समाप्त करके दूसरे समयमें विद्यमान जीव मोहनीयकर्मका संक्रामण-प्रस्थापक कहलाता है । उस विषयमें यह गाथासूत्र सम्बद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—अन्तरकरणके पहले भी चारित्रमोहनीयका संक्रामणप्रस्थापक ही है, अन्यथा आठ कषायोंकी उससे पूर्व क्षपणा नहीं बन सकती । और ऐसा होनेपर अन्तरकरण करनेके दूसरे समयसे लेकर मोहनीयकर्मका संक्रामण प्रस्थापक होता है यह घटित नहीं होता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि नीचे अर्थात् पूर्वमें क्षपित हुए आठ कषायोंका द्रव्य मोहनीयकर्मके समस्त द्रव्यके अनन्तवें भागप्रमाण होनेसे उसकी प्रधानता नहीं है, दूसरे

करणादिपयत्तविसेसाभावादो च। तम्हा अंतरकरणं कादूण भरेण मोहणीयं खवेमाणो चेव संकामणपट्ठवगो होदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

(७२) संकामगपट्ठवगस्स मोहणीयस्स दो पुण ट्ठिदीओ
किंचूणियं मुहुत्तं णियमा से अंतरं होइ ॥१२५॥

§ १६७. एसा पढमभासगाहा मूलगाहाए कदमम्मि अत्थविसेसे पडिबद्धा त्ति पुच्छिदे मूलगाहापुव्वद्धणिबद्धट्ठिदिसंतकम्ममग्गणाए पडिबद्धा। तं जहा—एत्थ गाहापुव्वद्धे मोहणीयस्स जो संकामगभावपट्ठवगो तस्स अंतरकदबिदियसमए वट्टमाणस्स पढम-बिदियट्ठिदिभेदेण दो ट्ठिदीओ होंति त्ति संबंधो कायव्वो। एदेण सामण्णवयणेण णाणावरणादिकम्माणं पि दोण्हं ट्ठिदीणं संभवप्पसंगे मोहणीयसद्दस्स पुणो वि आवित्तीए संबंधं कादूण मोहणीयस्सेव दो ट्ठिदीओ होंति, ण सेसाणं कम्माणमिदि वक्खाणं कायव्वं। एवं च दोण्हं ट्ठिदीणं संभवे तासिमंतरपमाणावहारणट्ठं 'किंचूणयं मुहुत्तं' इच्चादि गाहापच्छद्धणिद्देसो। णियमा णिच्छयेण से एदस्स मोहणीयस्स अंतरट्ठिदिपमाणं किंचूणगं मुहुत्तमंतोमुहुत्तपमाणं होइ त्ति भणिदं होइ। संपहि एदिस्से गाहाए सेसावयवा सुगमा त्ति कादूण किंचूणयं मुहुत्तमिदि एदस्सेव सुत्तावयवस्स विवरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

उनकी क्षपणामें अन्तरकरण आदिरूप प्रयत्नविशेषका अभाव है। इसलिए अन्तरकरण करके पूरे भर अर्थात् वेगके साथ मोहनीयकी क्षपणा करनेवाला ही संक्रामणप्रस्थापक होता है यह इसका भावार्थ है।

(७२) संक्रामणप्रस्थापकके मोहनीयकर्मकी दो स्थितियां होती हैं। उन दोनोंके होनेपर मोहनीयका अन्तर नियमसे कुछ कम मुहूर्तप्रमाण होता है ॥१२५॥

§ १६७. यह प्रथम भाष्यगाथा मूलगाथाके किस अर्थविशेषमें सम्बद्ध है ऐसा पूछनेपर कहते हैं—मूलगाथाके पूर्वार्धमें निबद्ध स्थितिसत्कर्मकी मार्गणामें प्रतिबद्ध है। वह जैसे—यहाँपर गाथाके पूर्वार्धमें बतलाया है कि मोहनीयकर्मका जो संक्रामकभावका प्रस्थापक है अन्तरकृत द्वितीय समयसे विद्यमान उसके प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थितिके भेदसे दो स्थितियाँ होती हैं ऐसा यहाँ सम्बन्ध करना चाहिये। इस सामान्य वचनसे ज्ञानावरणादि कर्मोंकी भी दो स्थितियोंकी सम्भावनाका प्रसंग प्राप्त होनेपर मोहनीय शब्दका पुनः आवृत्ति द्वारा सम्बन्ध करके मोहनीयकर्मकी ही दो स्थितियाँ होती हैं, शेष कर्मोंकी नहीं ऐसा व्याख्यान करना चाहिये। और इस प्रकार दो स्थितियोंके सम्भव होनेपर उनके अन्तरके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये 'किंचूणयं मुहुत्तं' इत्यादिरूपसे गाथाके उत्तरार्धका निर्देश किया है। 'णियमा से' निश्चयसे 'से' अर्थात् इस मोहनीयकर्मके अन्तर स्थितिका प्रमाण 'किंचूणगं मुहुत्तं' अर्थात् अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस गाथाके शेष अवयववचन सुगम हैं ऐसा समझकर 'किंचूणयं मुहुत्तं' सूत्रके इस अवयवका ही विवरण करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** किंचूणगं मुहुत्तं ति अंतोमुहुत्तं ति णादव्वं ।**

§ १६८. किंचूणगं मुहुत्तमिदि एदस्स पदस्स अत्थो अंतोमुहुत्तमिदि णिच्छेयव्वो त्ति सुत्तत्थो । एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासं संक्खेवेण समाणिय संपहि विदिय-भासगाहाए विसयविभागजाणावणपुरस्सरमवयारं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** अंतरदुसमयकदादो आवलियं समयूणमधिच्छियूण इमा गाहा ।**

§ १६९. पुव्विल्लगाहा जम्हि समये पदिदा तत्तो पुणो वि समयूणावलियमेत्त-कालमइच्छियूण आवेदिज्जमाणाणमेक्कारसपयडीणं समयूणावलियमेत्तपढमट्ठिदिं पालिय वेदिज्जमाणाणमण्णदरवेदसंजलणपयडीणमंतोमुहुत्तमेत्तपढमट्ठिदिं धरेयूणा-वट्ठिदस्स तम्हि अवत्थाविसेसे एसा विदियभासगाहा पडिबद्धा त्ति वुत्तं होइ । संपहि का सा विदियभासगाहा त्ति आसंकाए पुच्छावक्कमाह—

*** यथा ।**

§ १७०. तं जहा त्ति पुच्छाणिद्देसो एसो ।

(७३) झीणट्ठिदिकम्मंसे जे वेदयदे दु दोसु वि ट्ठिदीसु ।
जे चावि ण वेदयदे विदियाए ते दु बोद्धव्वा ॥१२६॥

*** कुछ कम मुहूर्तका अर्थ अन्तर्मुहूर्त है ऐसा जानना चाहिये ।**

§ १६८. 'किंचूणगं मुहुत्तं' इस पदका अर्थ अन्तर्मुहूर्त है ऐसा निश्चय करना चाहिये यह इस सूत्रका अर्थ है । इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाके अर्थका संक्षेपमें व्याख्यान करके अब दूसरी भाष्यगाथाके विषयविभागका ज्ञान करानेके साथ उसका अवतार करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जिस समय अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न हुई है उससे अगले समयसे लेकर एक समय कम एक आवलिप्रमाण काल उल्लंघन कर यह भाष्यगाथा आई है ।**

§ १६९. पूर्वकी गाथा जिस स्थानमें समाप्त होती है उस स्थानसे पुनरपि एक समय कम एक आवलिप्रमाण काल उल्लंघन कर नहीं वेदे जानेवाली ग्यारह प्रकृतियोंकी एक समय कम एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिका पालन कर वेदी जानेवाली अन्यतर वेद और संज्वलन प्रकृतियोंकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम स्थितिको धारण करके अवस्थित हुए जीवके उस अवस्थाविशेषमें यह दूसरी गाथा प्रतिबद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब वह दूसरी भाष्यगाथा कौन-सी है ऐसी आशंका होनेपर पृच्छावाक्यको कहते हैं—

*** यथा ।**

§ १७०. 'वह जैसे' इस प्रकार यह पृच्छाका निर्देश करनेवाला सूत्र है ।

(७३) जो क्षीण (परिक्षीण) स्थितिवाले कर्मपुंजको वेदता है वे दोनों ही स्थितियोंमें होते हैं । किन्तु जो उक्त कर्मपुंजको नहीं वेदता है वे मात्र द्वितीय स्थितिमें ही जानने चाहिये ॥१२६॥

§ १७१. एदिस्से गाहाए अत्थो वुच्चदे। तं जहा—'झीणट्ठिदिकम्मंसे' एवं भणिदे परिक्खीणट्ठिदियाणि कम्माणि त्ति भणिदं होदि। एदं च पदं सोदयाणमणुदयाणं च अंतरदुसमकदादो पाये समयूणावलियमेत्तीणं ट्ठिदीणं परिक्खयमुवेक्खदे। तदो अंतरट्ठिदीओ णिल्लेविय पुणो समयूणावलियमेत्तीओ वेदिज्जमाणावेदिज्जमाणाणं पढमट्ठिदीओ गालिय जो ट्ठिदो जीवो सो तदवत्थाए जे कम्मंसे झीणट्ठिदिविसेसिदे अणुभवदि ते तस्स दोसु वि ट्ठिदीसु दट्ठव्वा, तेसिमंतोमुहुत्तमेत्तीए पढमट्ठिदीए ताधे णिव्वाहमुवलंभादो।

§ १७२. अधवा झीणट्ठिदिकम्मंसे संजादे त्ति सत्तमीणिद्देसो एसो, तेण अवेदिज्जमाणाणमेक्कारसण्हं पयडीणं समयूणावलियमेत्तपढमट्ठिदीए झीणाए तदो जाणि कम्माणि वेदयदि ताणि तस्स दोसु वि ट्ठिदीसु दट्ठव्वाणि त्ति सुत्तत्थसंबंधो। 'जे चावि ण वेदयदे' एवं भणिदे जे पुण कम्मंसे ण वेदयदि ते तस्स विदियट्ठिदीए चेव होंति त्ति बोद्धव्वा, तेसिं पढमट्ठिदीए गलिदत्तादो त्ति भणिदं होइ। तदो एसा वि गाहा मूलगाहापुव्वद्धणिबद्धमेव किंचि अत्थविसेसं जाणावेदि त्ति णिच्छेयव्वं।

§ १७३. अधवा पढमभासगाहाए पुव्वद्धम्मि मोहणीयस्स दो ट्ठिदीओ होंति त्ति सामण्णेण परूविदं। उदयाणुदयपयडीणं पढमट्ठिदिविसओ जो भेदो सो ण परूविदो। एदीए पुण गाहाए सो चेव अत्थो विसेसियूण भणिदो त्ति दट्ठव्वो।

---

§ १७१. अब इस गाथाका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—'झीणट्ठिदिकम्मंसे' ऐसा कहनेपर जिनकी स्थिति क्षीण हो गई है ऐसे कर्म लेने चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और यह पद उदयसहित और अनुदयसहित कर्मोंके अन्तर करनेके अगले समयसे लेकर एक समय कम एक आवलिप्रमाण स्थितियोंके क्षयकी अपेक्षासे निबद्ध हुआ है, इसलिए अन्तर स्थितियोंका निर्लेपन करके पुनः वेदे जानेवाले और नहीं वेदे जानेवाले कर्मोंके एक समय कम एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितियोंको गलाकर जो जीव स्थित है वह उस अवस्थामें झीन स्थितिवाले जिन कर्मपुंजोंको अनुभवता है वे उस जीवके दोनों ही स्थितियोंमें जानने चाहिये, क्योंकि उस समय उनकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम स्थिति निर्बाधरूपसे पाई जाती है।

§ १७२. अथवा कर्मोंके झीन स्थितिवाले हो जानेपर, यहाँ यह सप्तमी विभक्तिका निर्देश है इसलिये नहीं वेदे जानेवाली ग्यारह प्रकृतियोंकी एक समय कम एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिके झीण हो जानेपर तत्पश्चात् यह जीव जिन कर्मोंको वेदता है वे उस जीवके दोनों ही स्थितियोंमें जानने चाहिये ऐसा यहाँ इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध करना चाहिये और 'जे चावि ण वेदवदे' ऐसा कहनेपर जिन कर्मोंको नहीं वेदता है वे उसके द्वितीय स्थितिमें ही होते हैं ऐसा जानना चाहिये, क्योंकि वे प्रथम स्थितिरूपसे गल गये हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिये यह गाथा भी मूल गाथामें निबद्ध किंचित् अर्थविशेषका ही ज्ञान कराती है ऐसा निश्चय करना चाहिये।

§ १७३. अथवा प्रथम भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें मोहनीयकर्मकी दो स्थितियाँ होती हैं ऐसा सामान्यसे कहा गया है। किन्तु उदय और अनुदयरूप प्रकृतियोंका प्रथम स्थितिसम्बन्धी जो भेद है वह नहीं कहा गया है। परन्तु इस गाथा द्वारा वही अर्थ विशेषरूपसे कहा गया है ऐसा

§ १७४. एवमेदाहिं दोहिं भासगाहाहिं मूलगाहापुव्वद्धसूचिदत्थविसेसं विहासिय संपहि तत्थ मुत्तकंठमुवइट्ठट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठं 'केसु व अणुभागेसु य' एदेण मूलगाहाविदियावयवेण समुद्दिट्ठाणुभागसंतपमाणावहारणट्ठं च तदियभासगाहाए अवयारं कुणमाणो इदमाह—

*** एत्तो ट्ठिदिसंतकम्मे च अणुभागसंतकम्मे च तदियगाहा कायव्वा ।**

§ १७५. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ १७६. सुगमं ।

(७४) संमाकमगपट्ठवगस्स पुव्वबद्धाणि मज्झिमट्ठिदीसु ।
साद-सुहणाम-गोदा तहाणुभागेसु दुक्कस्सा ।।१२७।।

जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—अन्तरकरणक्रिया सम्पन्न करते समय मोहनीयकर्मकी नौ नोकषाय और चार संज्वलन इन तेरह प्रकृतियोंकी दो स्थितियाँ हो जाती हैं । अन्तरके पूर्वकी स्थितिका नाम प्रथम स्थिति कहलाता है और अन्तरसे ऊपरकी स्थितिका नाम द्वितीय स्थिति कहलाता है । जो जीव किसी एक वेद और किसी एक संज्वलन कषायके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसके उन दोनों प्रकृतियोंकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है और शेष ग्यारह कर्मोंकी प्रथम स्थिति एक आवलिप्रमाण होती है । अब जिसने एक आवलिप्रमाण दोनोंकी प्रथम स्थितिको गला लिया है उसके गलनेके बाद ग्यारह प्रकृतियोंकी प्रथम स्थितिका तो अभाव हो जाता है और वेदे जानेवाले कर्मोंकी एक आवलि कम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथम स्थिति उस समय अवशिष्ट रहती है । द्वितीय स्थिति दोनों प्रकारके कर्मोंकी पाई जाती है ऐसा इस भाष्यगाथा द्वारा सूचित किया गया है ।

§ १७४. इस प्रकार इन दोनों भाष्यगाथाओं द्वारा मूलगाथाके पूर्वार्ध द्वारा सूचित किये गये अर्थविशेषका व्याख्यान करके अब वहाँ मुक्तकण्ठसे उपदेशे गये स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये 'केसु व अणुभागेसु य' इस मूलगाथाके द्वितीय पाद द्वारा कहे गये अनुभागसत्कर्मका अवधारण करनेके लिये तीसरी भाष्यगाथाका अवगाहन करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इससे आगे स्थितिसत्कर्म और अनुभागसत्कर्मके विषयमें तीसरी भाष्यगाथा करनी चाहिये ।**

§ १७५. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ १७६. यह सूत्र भी सुगम है ।

(७४) संक्रामकप्रस्थापक जीवके पूर्वबद्ध कर्म मध्यम स्थितियोंमें होते हैं तथा सातावेदनीय, शुभनाम और गोत्रकर्म उत्कृष्ट अनुभागवाले होते हैं ।।१२७।।

§ १७७. एदिस्से गाहाए पुव्वद्धेण संकामणपट्ठवगस्स सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं परूविदं, जहण्णुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मपरिहारेण मज्झिमट्ठिदीसु अजहण्णाणुक्कस्ससण्णिदासु तदवट्ठाणपरूवणादो। पच्छद्धेण वि अणुभागसंतकम्मपमाणपरूवणा कदा। साद-सुभ-णाम-गोदाणमादेसुक्कसाणुभागसंतकम्मपदुप्पायणदुवारेण सव्वासिं सुभासुभाणं कम्माणमणुभागसंतकम्मपमाणावहारणादो। एसो एदिस्से गाहाए समुदायत्थो। संपहि एदिस्से गाहाए अवयवत्थपरूवणट्ठमुवरिमं चुण्णिसुत्तपबंधमाह—

*** मज्झिमट्ठिदीसु त्ति अणुक्कस्स-अजहण्णट्ठिदीसु त्ति भणिदं होदि।**

§ १७८. एदेण सुत्तेण गाहापुव्वद्धो विहासिदो होदि। सेसाणं पदाणं सुबोहत्ताहिप्पायेण 'मज्झिमट्ठिदीसु' त्ति एदस्सेव पदस्स अत्थपरूवणादो। तदो सव्वेसिं कम्माणमंतरदुसमयकदावत्थाए असंखेज्जवस्सपमाणो अजहण्णाणुक्कसो ट्ठिदिसंतकम्मवियप्पो पुव्वुत्तेण अप्पाबहुअविहाणेण होदि त्ति घेतव्वो। संपहि गाहापच्छद्धविहासणट्ठमिदमाह—

*** साद-सुभ-णाम-गोदा तहाणुभागेसु दुक्कसा त्ति। ण च एदे ओघुक्कस्सा, तस्समयपाओग्गउक्कस्सगा एदे अणुभागेण।**

---

§ १७७. इस गाथाके पूर्वार्ध द्वारा संक्रामणप्रस्थापकके सभी कर्मोंके स्थितिसत्कर्मका प्रमाण कहा गया है, क्योंकि जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मके निषेधपूर्वक अजघन्य-अनुत्कृष्ट संज्ञावाली मध्यम स्थितियोंमें उसके अवस्थानकी प्ररूपणा की गई है। उत्तरार्ध द्वारा भी अनुभागसत्कर्मके प्रमाणकी प्ररूपणा की गई है, क्योंकि उसमें सातावेदनीय, शुभनाम और गोत्रकर्म इनके आदेश उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मके कथन द्वारा सभी शुभाशुभ कर्मोंके अनुभागसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण किया गया है यह इस गाथाका समुदायरूप अर्थ है। अब इस गाथाके अवयवोंके अर्थका कथन करनेके लिये आगेके चूर्णिसूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** भाष्यगाथामें मध्यम स्थितियोंमें ऐसा कहनेपर उससे अनुत्कृष्ट-अजघन्य स्थितियोंमें ऐसा जानना चाहिये।**

§ १७८. इस सूत्र द्वारा गाथाके पूर्वार्धका व्याख्यान किया गया है। शेष पद सुबोध हैं इस अभिप्रायसे मात्र 'मज्झिमट्ठिदीसु' इस पदका अर्थ कहा है। इसलिये सभी कर्मोंकी अन्तर क्रिया सम्पन्न होनेके दूसरे समयमें असंख्यात वर्षप्रमाण अजघन्य-अनुत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मरूप विकल्प पूर्वोक्त अल्पबहुत्वविधानके अनुसार होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। अब गाथाके उत्तरार्धका व्याख्यान करनेके लिए इस सूत्रवचनको कहते हैं—

*** सातावेदनीय, शुभनाम और गोत्रकर्म ये अनुभागोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट होते हैं। किन्तु ये ओघसे उत्कृष्ट नहीं होते, मात्र उस समयके योग्य अनुभागकी अपेक्षा उत्कृष्ट होते हैं।**

§ १७९. एदेण गाहापच्छद्धेण सादादीणं सुहपयडीणमुक्कस्सो अणुभागो होदि त्ति सामण्णेण णिद्दिट्ठो। सो वुण उक्कस्साणुभागो कदमो घेत्तव्वो ? किमोघुक्कस्सो, आहो आदेसुक्कस्सो त्ति आसंकाए तदादेसुक्कस्सत्तविहासणट्ठमिदं वुत्तं 'ण च एदे ओघुक्कस्सा' इच्चादि। एतदुक्तं भवति—विसोहीए सुहपयडीणमणुभागो उक्कस्सो होदि। किंतु सादावेदणीय-उच्चागोद-जसगित्तिणामाणमेत्थ ओघुक्कस्सओ अणुभागो ण होदि, चरिमसमयसुहुमसांपराइयविसोहीए तेसिमणुभागस्स सव्वुक्कस्सभावदंसणादो। तदो अणियट्टिपरिणामेहि एदेहिमणुभागो तक्कालपाओग्गउक्कस्सओ गहेयव्वो, णाण्णो त्ति। एसो च विसेसो गाहासुत्तट्ठिएण 'तु'सद्देण सूचिदो त्ति घेत्तव्वो। अण्णं च 'तु'सद्देणेव सुहणामंतब्भूदाणं देवगदिआदीणमणुभागस्स ओघादेसुक्कस्सभावेण भयणिज्जत्तं वक्खाणेयव्वं, तेसिमणुभागस्स अपुव्वकरणादिहेट्ठिमविसोहिणिबंधणस्स ओघादेसुक्कस्सभावेण पवुत्तीए एत्थ पडिसेहाभावादो। सादावेदणीय-जसगित्ति-उच्चागोदाणि चेव पुण पधाणाणि कादूण चुण्णिसुत्तयारेणादेसुक्कस्सत्तमेत्थावहारिदं, ण च सव्वसुहपयडिविसयमिदि ण किंचि विरुद्धं। एसो सुहपयडीणमुक्कस्साणुभागणिद्देसो देसामासओ, तेण असुहपयडीणं पि तव्विरुद्धसहावाणमणुक्कस्सो अणुभागो वेट्ठाणिओ होदि त्ति वक्खाणेयव्वं, विसोहिपरिणामेहिं घादिदावसेसस्स तासिमणुभागस्स एदम्मि विसये पयारंतरासंभवादो। एवं तदिय-

§ १७९. इस गाथाके उत्तरार्ध द्वारा साता आदि शुभ प्रकृतियोंका उत्कृट अनुभाग होता है यह सामान्यसे कहा गया है। परन्तु वह उत्कृष्ट अनुभाग कौन-सा लेना चाहिये—क्या ओघ उत्कृष्ट या आदेश उत्कृष्ट ऐसी आशंका होनेपर उस समय आदेश उत्कृष्टका विधान यह सूत्र करता है—'ये अनुभाग ओघ उत्कृष्ट नहीं होते हैं इत्यादि।' इसका यह तात्पर्य है कि विशुद्धिके द्वारा शुभ प्रकृतियोंका अनुभाग उत्कृष्ट होता है। किन्तु सातावेदनीय, उच्चगोत्र और यशःकीर्त्ति-नाम इन कर्मोंका यहाँपर ओघ उत्कृष्ट अनुभाग नहीं होता, क्योंकि सूक्ष्मसाम्परायसम्बन्धी अन्तिम विशुद्धिके द्वारा उनका अनुभाग सबसे उत्कृष्ट देखा जाता है, इसलिए अनिवृत्तिकरणके परिणामोंके द्वारा इनके अनुभागको तत्कालके योग्य उत्कृष्ट ग्रहण करना चाहिये, अन्य नहीं इस प्रकार यह विशेष गाथासूत्रमें स्थित 'तु' शब्दसे सूचित होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। इसके अतिरिक्त 'तु' शब्दसे ही शुभनामके अन्तर्भूत देवगति आदिके अनुभागका ओघ उत्कृष्ट और आदेश उत्कृष्टरूपसे भजनीयपनेका व्याख्यान करना चाहिये, क्योंकि उनका अनुभाग अपूर्वकरणादि अधस्तन विशुद्धि निमित्तिक होनेसे उसके ओघ-आदेश उत्कृष्टरूपसे प्रवृत्ति होनेमें निषेधका अभाव है। परन्तु चूर्णिसूत्रकारने सातावेदनीय, यशःकीर्त्ति और उच्चगोत्रको ही प्रधान करके यहाँपर आदेश उत्कृष्टका अवधारण किया है। और यह सर्व शुभप्रकृतिविषयक है इसमें कुछ विरुद्ध नहीं है। और यह शुभ प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागका निर्देश देशामर्षक है, इसलिये उनके विरुद्ध स्वभाववाली अशुभ प्रकृतियोंका अनुभाग भी द्विस्थानीय होता है ऐसा व्याख्यान करना चाहिये, क्योंकि विशुद्धिरूप परिणामोंके द्वारा घात करनेके बाद अवशिष्ट रहे उनके अनुभागका इस स्थानमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। इस प्रकार तीसरी गाथाकी अर्थ-

भासगाहाए अत्थविहासा समत्ता । संपहि 'संकंतं वा असंकंतं' इदि मूलगाहाचरिमपदमस्सियूण संकामणपट्ठवगस्स तदवत्थाए संछुद्धासंछुद्धपयडीओ परूवेमाणो चउत्थभासगाहामवयारेदि——

(७५) अध थीणगिद्धिकम्मं णिद्दाणिद्दा य पयलपयला य ।
तह णिरय-तिरियणामा झीणा संछोहणादीसु ॥१२८॥

§ १८०. एसा चउत्थी गाहा । एदीए संकामणपट्ठवएण जाणि कम्माणि पुव्वमेव संछुद्धाणि जाणि च ण संछुद्धाणि तेसिं पमाणपरिच्छेदं काद्रूण णिद्देसो कदो, संछुद्धपयडिणिद्देसेणेवासंछुद्धपयडीणं पि णिच्छयोववत्तीदो । तं जहा—'अथ थीणगिद्धिकम्मं' इच्चादिणा गाहापुव्वद्धेण णिद्दाणिद्दा-पयलापयला थीणगिद्धि त्ति एदासिं तिण्हं पयडीणं पुव्वमेव संछुद्धाणं णामणिद्देसो कओ । 'तह णिरय-तिरियणामा' इच्चेदेण वि गाहापच्छद्धावयवेण णिरय-तिरिक्खगइसहगयाणं तेरसण्हं णामपयडीणं थीणगिद्धितिएण सह संछुद्धाणं णामणिद्देसो कओ दट्ठव्वो, णिरय-तिरियणामणिद्देसस्स णिरय-तिरिक्खगइसहचरिदासेसणामपयडीणमुवलक्खणभावेण पवुत्तिअब्भुवगमादो । तदो एदाओ सोलसपयडीओ संकामयपट्ठवयेण पुव्वमेव हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोसरियूण सव्वसंकमेण संछुद्धा त्ति एसो एत्थ गाहासुत्तत्थसमुच्चओ । तासिं

विभाषा समाप्त हुई । अब 'संकंतं वा असंकंतं' इस प्रकार मूल गाथाके अन्तिम पदका आश्रय करके संक्रामणप्रस्थापकके उस अवस्थामें निर्जरित हुई और नहीं निर्जरित हुई प्रकृतियोंकी प्ररूपणा करते हुए चौथी भाष्यगाथाका अवतार करते हैं—

(७५) मध्यकी आठ कषायोंके साथ स्त्यानगृद्धिकर्म, निद्रानिद्रा और प्रचलाप्रचला तथा नरकगति और तिर्यञ्चगति नामकर्म सहगत प्रकृतियाँ परप्रकृति संक्रमण आदिमें संक्रमित हो गई हैं ॥१२८॥

§ १८०. यह चौथी भाष्यगाथा है । इस गाथा द्वारा संक्रामणप्रस्थापक जीवने जिन कर्मोंका पहले ही क्षय किया है और जिन कर्मोंका क्षय नहीं किया है उनके प्रमाणका परिच्छेद करके नामनिर्देश किया है, क्योंकि क्षय की गई प्रकृतियोंका निर्देश करनेसे ही नहीं क्षय हुई प्रकृतियोंका भी निश्चय हो जाता है । वह जैसे—'अथ थीणगिद्धिकम्मं' इत्यादि गाथाके पूर्वार्द्ध द्वारा पहले ही क्षयको प्राप्त हुई निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धि इन प्रकृतियोंका नामनिर्देश किया गया है । 'तह णिरयतिरिक्खणामा' इस गाथाके उत्तरार्द्ध द्वारा भी स्त्यानगृद्धित्रिकके साथ क्षयको प्राप्त हुई नरकगति और तिर्यञ्चगतिके साथ प्रतिबद्ध तेरह नामकर्मकी प्रकृतियोंका नामनिर्देश किया गया जानना चाहिये, क्योंकि नरकगति और तिर्यञ्चगति नामकर्मके निर्देशसे नरकगति और तिर्यञ्चगतिके साथ सहचरित अशेष नामकर्मकी प्रकृतियोंके उपलक्षणरूपसे प्रवृत्ति स्वीकार की गई है । इसलिये संक्रामक प्रस्थापकने इन सोलह प्रकृतियोंका पहले ही अन्तर्मुहूर्तके नीचे उतरकर सर्वसंक्रमके द्वारा क्षय किया है यह यहाँ गाथासूत्रका समुदायार्थ है और उनका

च संछोहणमेवं पयट्टमिदि जाणावणट्ठं गाहासुत्तस्स चरिमावयवणिद्देसो 'झीणा संछोहणादीसु' त्ति। संछोहणा णाम परपयडिसंकमो सव्वसंकमपज्जवसाणो। आदि-सद्देण ट्ठिदि-अणुभागखंडय-गुणसेढिणिज्जराणं गहणं कायव्वं। तदो एदेसु किरिया-विसेसेसु कम्मक्खवणणिमित्तभूदेसु पयट्टेण संकामयपट्ठवयेण पुव्वमेव खविज्जमाणा खीणा त्ति वुत्तं होइ। ण केवलमेदाओ चेव सोलस पयडीओ झीणाओ, किंतु अट्ठ कसाया वि। ण च तेसिं गाहासुत्तेणासंगहो आसंकियव्वो, 'अध' सद्देणाणुत्त-समुच्चयट्ठेण तेसिं पि संगहदंसणादो। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं चुण्णिसुत्तमाह—

*** एदाणि कम्माणि पुव्वमेव झीणाणि। एदेणेव सूचिदा अट्ठ वि कसाया पुव्वमेव खविदा त्ति।**

§ १८१. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं चउत्थभासगाहाए विवरणं कादूण संपहि 'संकंतं वा असंकंतं' इदि एदं चेव मूलगाहाचरिमावयवमवलंबणं कादूण छसु कम्मेसु संछुद्धेसु सव्वेसिं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठं पंचमगाहासुत्तमवयारिज्जदे—

(७६) संकंतम्हि य णियमा णामा-गोदाणि वेदणीयं च।
वस्सेसु असंखेज्जेसु सेसगा होंति संखेज्जे ॥१२९॥

संक्रमण इस प्रकार प्रवृत्त है इस बातका ज्ञान करानेके लिये गाथासूत्रके 'झीणा संछोहणादिसु' इस प्रकार अन्तिम चरणका निर्देश किया है। 'संछोहणा'का अर्थ जिसके अन्तमें सर्वसंक्रम है ऐसा परप्रकृतिसंक्रम है। 'आदि' शब्दसे स्थितिकाण्डक, अनुभागकाण्डक और गुणश्रेणिनिर्जराका ग्रहण करना चाहिये। इसलिये कर्मकी क्षपणाकी निमित्तभूत इन क्रियाविशेषोंमें प्रवृत्त हुए संक्रामकप्रस्थापकने पहले ही क्षपित होनेवाली प्रकृतियोंका पहले ही क्षय किया। केवल ये सोलह प्रकृतियाँ ही क्षय नहीं हुईं, किन्तु आठ कषाय भी क्षयको प्राप्त हुए। गाथासूत्र द्वारा उनका संग्रह नहीं किया गया ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि अनुक्त समुच्चय करनेवाले 'अथ' पद द्वारा उनका भी संग्रह देखा जाता है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके चूर्णिसूत्र-को कहते है—

*** ये कर्म पहले ही क्षय हो गये हैं। तथा इसीसे सूचित हुए आठ कषाय भी पहले ही क्षयको प्राप्त हो गये हैं।**

§ १८१. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार चौथी भाष्यगाथाका विवरण करके अब 'संकंतं वा असंकंतं' इस प्रकार मूल गाथाके इसी अन्तिम चरणका अवलम्बन करके छह कर्मोंके संक्रमित हो जानेपर सभी कर्मोंके स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये पाँचवें गाथासूत्रका अवतार करते हैं—

(७६) छह कर्मोंके संक्रान्त होनेपर उसी समय नाम, गोत्र और वेदनीयकर्म असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्ममें प्रवृत्त होते हैं तथा शेष कर्म संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्ममें प्रवृत्त होते हैं ॥१२९॥

§ १८२. एसा पंचमी भासगाहा। एदीए छसु कम्मेसु संछुद्धेसु तम्मि समये सव्वकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं परूविदं। तं जहा—'संकंतम्हि य णियमा' एवं भणिदे णोकसायछक्कम्मि पुरिसवेदचिराणसंतकम्मेण सह संछुद्धम्मि 'णियमा' णिच्छयेण 'णामा-गोदाणि वेदणीयं च' एदाणि तिण्णि वि अघादिकम्माणि 'वस्सेसु असंखेज्जेसु' असंखेज्जवस्सपमाणेसु अप्पप्पणो ट्ठिदिसंतकम्मेसु पयट्टदि त्ति घेत्तव्वाणि। 'सेसगा होंति संखेज्जे' एवं भणिदे सेसकम्माणि णाणावरणादीणि चत्तारि वि णियमा संखेज्जवस्सपमाणे ट्ठिदिसंतकम्मे चिट्ठंति त्ति घेत्तव्वं। संपहि एवंविहो एदिस्से गाहाए अवयवत्थपरामरसो सुगमो त्ति समुदायत्थमेव विहासेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एसा गाहा छसु कम्मेसु पढमसमयसंकंतेसु तम्हि समये ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं भणइ—**

§ १८३. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं संकामणपट्ठवगस्स चउण्हं मूलगाहाणं मज्झे पढममूलगाहाए सभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता। संपहि विदियमूलगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एत्तो विदिया मूलगाहा।**

§ १८४. सुगमं।

*** तं जहा।**

---

§ १८२. यह पाँचवीं भाष्यगाथा है। इन छह कर्मोंके संक्रान्त होनेपर उसी समय सब कर्मोंके स्थितिसत्कर्मका प्रमाण कहा है—'संकंतम्हि य णियमा' ऐसा कहनेपर छह नोकषायोंका पुरुषवेदके चिरकालीन सत्कर्मके साथ संक्रान्त होनेपर 'णियमा' निश्चयसे 'णामा-गोद-वेदणीयं च' नाम, गोत्र और वेदनीय ये तीन अघाति कर्म 'वस्सेसु असंखेज्जेसु' असंख्यात वर्षप्रमाण अपने-अपने स्थितिसत्कर्ममें प्रवृत्त होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये। 'सेसगा होंति संखेज्जे' ऐसा कहने पर शेष ज्ञानावरणादि चारों ही कर्म नियमसे संख्यात वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्ममें स्थित रहते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये। अब इस गाथाके अवयवोंका इस प्रकार अर्थपरामर्श सुगम है, इसलिये समुदायार्थकी ही विभाषा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** यह गाथा छह कर्मोंके प्रथम समय संक्रान्त होनेपर उसी समय स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका कथन करती है।**

§ १८३. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार संक्रामणप्रस्थापकके चार मूल गाथाओंके मध्यमें स्थित भाष्यगाथाओंके साथ प्रथम मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई। अब दूसरी मूल गाथाकी अवसर प्राप्त अर्थविभाषा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** यह दूसरी मूल गाथा है।**

§ १८४. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ १८५. एदं पि सुगमं ।

(७७) संकामगपट्ठवगो के बंधदि के व वेदयदि अंसे ।
संकामेदि व के के केसु असंकामगो होइ ॥१३०॥

§ १८६. एसा विदियमूलगाहा संकामणपट्ठवगस्स अंतरदुसमयकदावत्थाए वट्टमाणस्स बंधोदयसंकमाणं पयडिट्ठिदिअणुभागविसयाणं परूवणट्ठमागया । तत्थ 'संकामगपट्ठवगो के बंधदि' त्ति एत्थ पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणं बंधमग्गणा णाम पढमो अत्थो णिबद्धो । 'के व वेदयदि' इदि एदम्मि वि विदियावयवे तेसिं चेव उदयमग्गणासण्णिदो विदिओ अत्थो णिबद्धो । 'संकामेदि य के के' एदम्मि गाहा-पच्छद्धे पयडिआदीणं संकमपरूवणा णाम तदिओ अत्थो णिबद्धो त्ति । एवमेदम्मि गाहासुत्ते तिण्णि अत्था णिबद्धा । संपहि एवंविहमेदस्स गाहासुत्तस्स समुदायत्थं विहासेमाणो चुण्णिसुत्तयारो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एदिस्से तिण्णि अत्था ।**

§ १८७. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ १८८. सुगमं ।

*** के बंधदि त्ति पढमो अत्थो ।**

---

§ १८५. यह सूत्र भी सुगम है ।

(७७) संक्रामणप्रस्थापक किस कर्मपुंजको बाँधता है, किस कर्मपुंजको वेदता है। किस-किस कर्मपुंजको संक्रमाता है और किस कर्मपुंजका असंक्रामक होता है ॥१३०॥

§ १८६. यह दूसरी मूल गाथा अन्तर द्विसमयकृत अवस्थामें विद्यमान संक्रामक-प्रस्थापकके प्रकृति, स्थिति और अनुभागविषयक बन्ध, उदय और सत्कर्मके कथनके लिये आई है। वहाँ 'संकामगपट्ठवगो के बंधदि' इस प्रकार इस चरणमें प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके बन्ध-सम्बन्धी मार्गणा नामक प्रथम अर्थाधिकार निबद्ध है, 'के व वेदयदि अंसे' इस प्रकार इस दूसरे चरणमें भी उन्हींका उदयमार्गणानामक दूसरा अर्थाधिकार निबद्ध है। 'संकामेदि य के के' इस गाथाके उत्तरार्धमें प्रकृति आदिके संक्रामणप्ररूपणा नामक तीसरा अर्थाधिकार निबद्ध है। इस प्रकार इस गाथासूत्रमें तीन अर्थाधिकार निबद्ध हैं। अब इस प्रकार इस गाथासूत्रके समुच्चयार्थका व्याख्यान करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इस गाथासूत्रके तीन अधिकार हैं ।**

§ १८७. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ १८८. यह सूत्र सुगम है ।

*** किन कर्मपुंजोंको बांधता है यह प्रथम अर्थ है ।**

§ १८९. 'के बंधदि' त्ति एदम्मि बीजपदे बंधमग्गणासण्णिदो पढमो अत्थो पडिबद्धो त्ति भणिदं होइ—

*** के व वेदयदि त्ति विदिओ अत्थो ।**

§ १९०. 'के व वेदयदि' त्ति एदम्मि गाहासुत्तविदियावयवे उदयमग्गणासण्णिदो विदिओ अत्थो णिबद्धो त्ति भणिदं होइ ।

*** पच्छिमद्धे तदिओ अत्थो ।**

§ १९१. गाहापच्छद्धे पयडिआदीणं संकमगवेसणसण्णिदो तदिओ अत्थो पडिबद्धो त्ति वुत्तं होइ । एत्थ के अंसे बंधदि, के अंसे वेदयदि, के वा अंसे संकामेदि त्ति अंससद्दो पादेक्कमहिसंबंधणिज्जो । 'संकामयपट्ठवगो' त्ति एसो च सुत्तावयवो सव्वेसिमत्थाणं साहारणभावेण जोजेयव्वो । एवमेदेसु तिसु अत्थेसु पडिबद्धत्तमेदिस्से गाहाए परूविय संपहि कदमम्मि अत्थे केत्तियाओ भासगाहाओ णिबद्धाओ त्ति सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** पढमे अत्थे तिण्णि भासगाहाओ ।**

§ १९२. पढमे अत्थे पडिबद्धाओ उवरि भणिस्समाणाओ तिण्णि भासगाहाओ होंति त्ति भणिदं होइ—

---

§ १८९. 'के बंधदि' इस बीजपदमें बन्धमार्गणा संज्ञक प्रथम अर्थ प्रतिबद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** किन कर्मपुंजोंको वेदता है यह दूसरा अर्थ है ।**

§ १९०. 'के व वेदयदि' गाथासूत्रके इस दूसरे अवयवमें उदय मार्गणासंज्ञक दूसरा अर्थ निबद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** गाथासूत्रके उत्तरार्धमें तीसरा अर्थ निबद्ध है ।**

§ १९१. गाथाके उत्तरार्धमें प्रकृति आदिके संक्रमकी गवेषणा संज्ञावाला तीसरा अर्थ प्रतिबद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । प्रकृतमें 'के अंसे बंधदि, के अंसे वेदयदि, के वा अंसे संकामेदि' इस प्रकार प्रत्येक पदके साथ 'अंश' शब्दका सम्बन्ध करना चाहिये । तथा सूत्रके संकामयपट्ठवगो' इस अवयवकी सभी अर्थोंके साथ साधारणरूपसे योजना करनी चाहिये । इस प्रकार इन तीन अर्थोंमें यह गाथासूत्र प्रतिबद्ध है इस प्रकार इस गाथासूत्रकी प्ररूपणा करके अब किस अर्थमें कितनी भाष्यगाथाएँ निबद्ध हैं इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** प्रथम अर्थमें तीन भाष्यगाथाएँ आई हैं ।**

§ १९२. प्रथम अर्थमें आगे कही जानेवाली तीन भाष्यगाथाएँ प्रतिबद्ध हैं यह उक्त कथन-

*** विदिये अत्थे बे भासगाहाओ ।**

§ १९३. विदिए अत्थे पडिबद्धाओ बे भासगाहाओ उवरि भणिस्समाणाओ होंति त्ति वुत्तं होइ ।

*** तदिये अत्थे छब्भासगाहाओ ।**

§ १९४. तदिये अत्थे पडिबद्धाओ उवरि भणिस्समाणाओ छब्भासगाहाओ होंति त्ति भणिदं होइ । एवमेदाओ एक्कारस भासगाहाओ विदियमूलगाहाए पडिबद्धाओ त्ति एसो एदेसिं तिण्हं सुत्ताणं समुदायत्थो । मूलगाहाए बीजपदभावेण सूचिदत्थाणं विवरणे पयट्टाओ भासगाहाओ, तासिं विहासिज्जमाणस्स अत्थविसेसस्स आधारभावेण ट्ठिदा मूलगाहा त्ति सव्वत्थ वत्तव्वं । संपहि 'जहा उद्देसो तहा णिद्देसो' त्ति णायमवलंबिय पढमस्स ताव अत्थस्स तिण्हं भासगाहाणं समुक्कित्तणं विहासणं च कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो इदमाह—

*** पढमस्स अत्थस्स तिण्हं भासगाहाणं समुक्कित्तणं विहासणं च एक्कदो वत्तइस्सामो ।**

§ १९५. समुक्कित्तणं णाम उच्चारणं विहासणं णाम विवरणं । तदो तिण्हं

का तात्पर्य है ।

*** दूसरे अर्थमें दो भाष्यगाथाएँ आई हैं ।**

§ १९३. दूसरे अर्थमें आगे कही जानेवाली दो भाष्यगाथाएँ प्रतिबद्ध हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** तीसरे अर्थमें छह भाष्यगाएँ आई हैं ।**

§ १९४. तीसरे अर्थमें आगे कही जानेवाली छह भाष्यगाथाएँ प्रतिबद्ध हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार ये ग्यारह भाष्यगाथाएँ दूसरी मूल गाथामें प्रतिबद्ध हैं इस प्रकार यह तीन सूत्रगाथाओंका समुदायार्थ है । मूल गाथा द्वारा बीजपदरूपसे सूचित हुए अर्थोंका विशेष व्याख्यान करनेमें जो प्रवृत्त होती हैं उन्हें भाष्यागाथा कहते हैं तथा उनके माध्यमसे व्याख्यान किये जानेवाले अर्थविशेषके आधारभावसे जो गाथाएँ स्थित हैं उन्हें मूल गाथा कहते हैं ऐसा सर्वत्र कथन करना चाहिये । अब 'उद्देश्यके अनुसार निर्देश किया जाता है' इस न्यायका अवलम्बन लेकर सर्वप्रथम प्रथम अर्थसम्बन्धी तीन भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना और विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार इस सूत्रको कहते हैं—

*** प्रथम अर्थसम्बन्धी तीन भाष्यकथाओंकी समुत्कीर्तना और विभाषाको एक साथ बतलावेंगे ।**

§ १९५. समुत्कीर्तनाका अर्थ उच्चारणा है । विभाषाका अर्थ विवरणविशेष—व्याख्यान

भासगाहाणमुच्चारणं वक्खाणं च जुगवमेव वत्तइस्सामो, गंथगउरवपरिहारट्ठमिदि एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो।।

❀ तं जहा ।

§ १९६. सुगमं ।

(७८) वस्ससदसहस्साइं ट्ठिदिसंखाए दु मोहणीयं तु ।
बंधदि च सदसहस्सेसु असंखेज्जेसु सेसाणि ।।१३१।।

§ १९७. एसा पढमस्स अत्थस्स पढमभासगाहा अंतरदुसमयकदावत्थाए वट्ट-माणस्स संकामणपट्ठवगस्स मोहादिकम्माणं ट्ठिदिबंधपमाणं जाणावेदि । तं कधं ? 'वस्ससदसहस्साइं' एवं भणिदे संखेज्जवस्ससदसहस्समेत्तट्ठिदिसंखाए मोहणीयकम्मं बंधदि' त्ति एदेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधपमाणं परूविदं । अंतरकरणे कदे संखेज्ज-वस्सिओ चेव मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो होदि त्ति णियमदंसणादो । 'बंधदि य सहस्सेसु' एवं भणिदे सेसाणि णाणावरणादिकम्माणि असंखेज्जेसु वस्ससहस्सेसु ट्ठिदिसंखाए वट्टमाणाणि बंधदि त्ति तेसिमसंखेज्जवस्ससहस्सियट्ठिदिबंधपवुत्ती तदवत्थाए परूविदा दट्ठव्वा, ताधे तत्थ पयारंतरासंभवादो ।

§ १९८. एत्थ गाहापुव्वद्धे दोण्हं 'तु' सद्दाणं णिद्देसो पादपूरणट्ठो, अणुत्त-

---

करना है। अतः तीनों भाष्यगाथाओंकी उच्चारणा और व्याख्यानको ग्रन्थकी गुरुताका परिहार करनेके लिये एक साथ ही बतलावेंगे यह यहाँ इस सूत्रके अर्थका आशय है।

❀ वह जैसे ।

§ १९६. यह सूत्र सुगम है।

(७८) स्थितिबन्धकी परिगणनाकी अपेक्षा यह जीव मोहनीय कर्मको संख्यात लक्षवर्षप्रमाण बांधता है और शेष कर्मोंको असंख्यात लक्षवर्षप्रमाण बांधता है ।।१३१।।

§ १९७. यह प्रथम अर्थसम्बन्धी प्रथम भाष्यगाथा अन्तरकरण क्रिया किये जानेके दूसरे समयमें विद्यमान हुए संक्रामकप्रस्थापकके मोहनीय आदि कर्मोंसम्बन्धी स्थितिबन्धके प्रमाणका ज्ञान कराती है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि 'वस्ससदसहस्साइं' ऐसा कहनेपर स्थितिबन्धकी संख्याकी अपेक्षा मोहनीयकर्मको लक्षवर्षप्रमाण बांधता है इस प्रकार इस वचन द्वारा मोहनीयकर्मके स्थितिबन्धकी प्ररूपणा की है, क्योंकि अन्तरकरण करनेपर मोहनीयकर्मका संख्यात वर्षप्रमाण ही स्थितिबन्ध होता है ऐसा नियम देखा जाता है। 'बंधदि य सदसहस्सेसु' ऐसा कहनेपर ज्ञानावरणादि शेष कर्म स्थितिबन्धकी संख्याकी अपेक्षा असंख्यात वर्षप्रमाण होकर ही बँधते हैं इस प्रकार उस अवस्थामें उन कर्मोंके स्थितिबन्धकी प्रवृति असंख्यात हजार वर्षप्रमाण कही गई जाननी चाहिये, क्योंकि उस समय उन कर्मोंके स्थितिबन्धके होनेमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

§ १९८. यहाँ भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें जो दो बार 'तु' शब्द आया है सो वह पादपूरणके

समुच्चयट्ठो वा, ट्ठिदिबंधप्पाबहुआदीणमेत्थाणुत्ताणं समुच्चयफलत्तादो। संपहि एवं विहमेदिस्से गाहाए समुदायत्थं परूवेमाणो विहासासुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एसा गाहा अंतरदुसमयकदे ट्ठिदिबंधपमाण भणइ।**

§ १९९. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि तस्सेव पयडिबंधविसेसावहारणट्ठं विदियभासगाहाए अवयारो—

(७९) भय-सोगमरदि-रदिगं हस्स-दुगुंछा-णवुंसगित्थीओ।
असादं णीचागोदं अजसं सारीरगं णामं ॥१३२॥

§ २००. एसा विदियभासगाहा पयडिबंधपरूवणावसरे अबज्झमाणपयडीणं बंधपडिसेहो भणइ, सव्वेसिं परूवणाणं सपडिवक्खाणं चेव णिण्णयहेउत्तादो। तत्थ गाहापुव्वद्धेण अट्ठण्हं णोकसायपयडीणमेत्थ बंधपडिसेहो णिद्दिट्ठो। हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणमित्थि-णवुंसयवेदाणं च हेट्ठा चेव अप्पप्पणो उद्देसे वोच्छिण्ण-बंधाणमेदम्मि विसये बंधाणुवलंभादो। मिच्छत्ताणंताणुबंधिआदीणं पि पयडीणं एत्थ बंधो णत्थि, तेसिं पि णिद्देसो किमट्ठं ण कीरदे? ण, णिम्मूलीकयसंताणं तेसिं बंधाभावस्साणुत्तसिद्धत्तादो।

लिये आया है, क्योंकि प्रकृतमें उन शब्दोंके प्रयोजनका फल अनुक्त स्थितिबन्धसम्बन्धी अल्पबहुत्व आदिका समुच्चय करना है। अब इस प्रकार इस गाथाके समुदायरूप अर्थका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** यह भाष्यगाथा अन्तरकरण क्रिया किये जानेके दूसरे समयमें स्थितिबन्धके प्रमाणका कथन करती है।**

§ १९९. यह सूत्र गतार्थ है। अब उसी जीवके प्रकृतिबन्धविशेषका अवधारण करनेके लिये दूसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हैं—

(७९) भय, शोक, अरति, रति, हास्य, जुगुप्सा, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, असातावेदनीय, नीचगोत्र, अयशःकीर्ति और शरीरनामकर्मसम्बन्धी प्रकृतियोंको नहीं बांधता है ॥१३२॥

§ २००. यह दूसरी भाष्यगाथा प्रकृतिबन्धकी प्ररूपणाके अवसरपर नहीं बँधनेवाली प्रकृतियोंके बन्धके निषेधका कथन करती है, क्योंकि सभी प्ररूपणाओंका हेतु सप्रतिपक्षका निर्णय कराना है। वहाँ गाथाके पूर्वार्ध द्वारा आठ नोकषायप्रकृतियोंका यहाँ बन्ध होनेका निषेध जानना चाहिये, क्योंकि हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद और नपुंसकवेद इनकी पहले ही अपने-अपने स्थानमें बन्धव्युच्छित्ति हो जानेसे यहाँपर उनके बन्धका निषेध किया है। मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी आदि प्रकृतियोंका भी यहांपर बन्ध नहीं होता।

शंका—यदि ऐसा हैं तो उनका भी निर्देश क्यों नहीं किया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि उनका सत्त्व निर्मूल कर दिया गया है, इसलिये प्रकृतमें उनके बन्धका अभाव अनुक्तसिद्ध है।

§ २०१. तदो संजलण-पुरिसवेदे मोत्तूण सेसासेसमोहपयडी ण बंधदि त्ति एसो गाहापुव्वद्धे अत्थसमुच्चओ। तहा गाहापच्छद्धे वि असादावेदणीय-णीचागोद-अजसगित्तीओ सरीरेण सह बंधमागच्छमाणीओ सुहणामाओ च ण बंधदि त्ति एदेण सादावेदणीय-जसणित्ति-उच्चागोदाणि मोत्तूण सेसाणमघादिपयडीणं पसत्थापसत्थाणं बंधपडिसेहो समुद्दिट्ठो; अजसगित्तिणिद्देसेण सव्वेसिमसुहणामाणं पडिसेहसिद्धीदो। सारीरगणामणिद्देसेण च वेउव्वियसरीरादीणं सव्वेसिमेव सुहणामाणं जसगित्तिवज्जाणं बंधपडिसेहावलंबणादो। तदो जसगित्तिवज्जाओ सव्वाओ चेव णामपयडीओ सुहासुहाओ सरीरबंधसहगयत्तेण सारीरग-णामववएसारिहाओ असादावेदणीय-णीचागोदाणि च एसो ण बंधदि त्ति गाहापच्छद्धे समुच्चयत्थो। उवरिमगाहासुत्ते 'अबंधगो' इदि पडिसेहणिद्देसो अत्थि, सो एत्थ वि सिंहावलोयणण्णाएणाहिसंबंधणिज्जो; दोण्हं पि गाहासुत्ताणमवयवभावेण तस्स तत्थ णिद्देसादो। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठं चुण्णिसुत्तयारो इदमाह—

* एदाणि णियमा ण बंधइ।

§ २०२. गाहासुत्तणिद्दिट्ठसव्वकम्माणि मणेणावहारिय एदाणि णियमा ण बंधदि त्ति भणिदं। सेसं सुगमं।

---

§ २०१. इसलिये संज्वलन कषाय और पुरुषवेदको छोड़कर शेष समस्त मोहनीय प्रकृतियाँ यहाँ नहीं बँधती है यह गाथाके पूर्वार्धका समुच्चयार्थ है। उसी प्रकार गाथाके उत्तरार्धमें भी बतलाया है कि असातावेदनीय, नीचगोत्र, अयशःकीर्ति और शरीर नामकर्मके साथ बन्धको प्राप्त होनेवाली नामकर्मसम्बन्धी शुभ प्रकृतियाँ यहाँ नहीं बँधती हैं। इस प्रकार इस कथन द्वारा सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रको छोड़कर अघातिकर्मसम्बन्धी शेष प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति निर्दिष्ट की गई है, क्योंकि अयशःकीर्तिका निर्देश किये जानेसे सभी अशुभ नामकर्म प्रकृतियोंका प्रतिषेध सिद्ध है और शरीर नामकर्मका निर्देश करनेसे यशःकीर्तिको छोड़कर वैक्रियिक शरीर आदि सभी शुभ प्रकृतियोंके बन्धका निषेध स्वीकार किया है। इसलिये यशःकीर्तिको छोड़कर जो शरीर नामकर्मके साथ प्राप्त हैं ऐसी नामकर्मसम्धी सभी शुभ और अशुभ प्रकृतियोंको तथा असातावेदनीय और नीचगोत्रको यह जीव नहीं बाँधता है इस प्रकार यह गाथाके उत्तरार्धका समुच्चयरूप अर्थ है। आगेके गाथासूत्रमें 'अबंधगो' इस वचन द्वारा बन्धके निषेधका निर्देश किया है, अतः सिंहके अवलोकन न्यायके अनुसार उसका यहाँ भी सम्बन्ध कर लेना चाहिये, क्योंकि दोनों ही गाथासूत्रोंके अवयवरूपसे उक्त पदका वहाँ निर्देश किया है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रकार इस सूत्रवचनको कहते हैं—

* उक्त गाथासूत्रमें निर्दिष्ट की गई इन प्रकृतियोंको नियमसे नहीं बांधता है।

§ २०२. गाथासूत्रमें निर्दिष्ट सब कर्मोंको मनसे अवधारण कर इन कर्मोंको नियमसे नहीं बाँधता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ—प्रकृत भाष्यगाथामें असातावेदनीय, नीचगोत्र और अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका नाम लेकर इनका अबन्धक कहा है। इससे स्पष्ट है कि आगे इन तीनों प्रकृतियोंकी प्रतिपक्ष-

§ २०३. संपहि अण्णाओ वि जाओ अबज्झमाणपयडीओ एत्थ संगहियाओ तासिं णिद्देसकरणट्ठमबज्झमाणाणुभागविसेसपरूवणट्ठं च तदियभासगाहाए अवयारो—

(८०) सव्वावरणीयाणं जेसिं ओवट्टणा दु णिद्दाए।
पयलायुगस्स य तहा अबंधगो बंधगो सेसे ॥१३३॥

§ २०४. एत्थ ताव गाहापच्छद्धमवलंबिय अबज्झमाणसेसपयडीणमणुगमं कस्सामो। णिद्दा-पयलाणमाउगस्स च सव्वस्स णियमा अबंधगो, तेसिमेदम्मि विसये बंधासंभवादो। 'बंधगो सेसे' एवं भणिदे पुव्विल्लगाहासुत्ते एत्थ य जाओ अबज्झमाणपयडीओ णिद्दिट्ठाओ ताओ मोत्तूण सेसाओ पंचणाणावरणीय-चउदंसणावरणीय-सादावेदणीय-चदुसंजलण-पुरिसवेद-जसगित्ति-उच्चागोद-पंचंतराइयपयडीओ एसो बंधदि त्ति सुत्तत्थ संगहो।

§ २०५. संपहि गाहापुव्वद्धमस्सियूण अबज्झमाणाणुभागविसेसाणुगमं कस्सामो, तत्तो चेव बज्झमाणाणुभागविसयणिण्णयसिद्धीदो। तं जहा—एत्थ[1] ताव एवं पदसंबंधो—

भूत सातावेदनीय, उच्चगोत्र और यशःकीर्तिका तथा चार संज्वलन और पुरुषवेदका अपने-अपने योग्य स्थान तक नियमसे बन्ध होता रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ यह शंका की जा सकती है कि चार संज्वलन और पुरुषवेदका आगे भी अपने-अपने योग्य स्थान तक बन्ध होता रहता है यह कैसे समझा जाय? समाधान यह है कि भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें मोहनीय कर्मकी जिन प्रकृतियोंको गिनाया है उनमें इन पाँच प्रकृतियोंको सम्मिलित नहीं किया है। इससे ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यहाँसे लेकर आगे भी इन प्रकृतियोंका बन्ध होता रहता है।

§ २०३. अब अन्य भी अबध्यमान जिन प्रकृतियोंका यहाँ संग्रह किया गया है उनका निर्देश करनेके लिए तथा अबध्यमान अनुभागविशेषके कथनके लिये तीसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हैं—

(८०) जिन कर्मोंकी अपवर्तना होती है उनके सर्वावरणीय स्पर्धकोंका तथा निद्रा, प्रचला और आयुकर्मका अबन्धक होता है। तथा इनके सिवाय शेष कर्मोंका बन्धक होता है ॥१३३॥

§ २०४. यहाँ सर्वप्रथम गाथाके उत्तरार्धका अवलम्बन करके अबध्यमान शेष प्रकृतियोंका अनुगम करेंगे। निद्रा, प्रचला और सब आयुओंका नियमसे अबन्धक होता है, क्योंकि उनका इस स्थानमें बन्ध सम्भव नहीं है। 'बंधगो सेसे' ऐसा कहनेपर पूर्वके गाथासूत्रमें यहाँपर जिन अबध्यमान प्रकृतियोंका निर्देश किया है उनको छोड़कर शेष पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इन प्रकृतियोंको यह जीव बाँधता है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

§ २०५. अब गाथाके पूर्वार्धका अवलम्बन लेकर अबध्यमान अनुभागविशेषका अनुगम करेंगे, क्योंकि उसीसे बध्यमान अनुभागके विषयके निर्णयकी सिद्धि होती है। वह जैसे—यहाँ

---

१. ता०प्रतौ तत्थ इति पाठः।

जेसिं कम्माणमोवट्टणा अत्थि तेसिं सव्वावरणीयाणमणुभागफद्दयाणमेसो णियमा अबंधगो त्ति एदस्स भावत्थो। जेसिं कम्माणं खओवसमलद्धिसंभवादो देसघादि-सरूवेणाणुभागस्स ओवट्टणा संभवइ, तेसिं सव्वघादिसरूवाणमणुभागफद्दयाणमबंधगो, किंतु देसघादिसरूवेणेव तेसिं बंधगो होदि त्ति। केसिं च कम्माणं देसघादिसरूवेण ओवट्टणा संभवदि त्ति चे? णाणावरणीयचउक्क-दंसणावरणीयतिय-पंचंतराइयाणि त्ति एदेसिं लद्धिकम्मंसाणं देसघादिसरूवेणोवट्टणासंभवो। तदो एदेसिमणुभाग-बंधमेत्तो हेट्ठा अंतोमुहुत्तप्पहुडि देसघादिविट्ठाणियसरूवेण बंधमाणो एत्थ वि तहा चेव बंधदि, ण सव्वघादिसरूवेणेत्ति एसो एत्थ गाहापुव्वद्धेसु अत्थसंगहो।

§ २०६. मोहणीयस्स वि चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं सव्व-देसघादिफद्दयसंभवे देसघादिसरूवेणेव संजदासंजदप्पहुडि बंधमाणो एत्थुद्देसे देसघादि-एयट्ठाणियसरूवेण बंधइ त्ति घेत्तव्वं, एदेसिं पि ओवट्टणसंभवं पडि भेदभावादो। जेसिं पुण ओवट्टणाए णत्थि संभवो तेसिं केवलणाण-दंसणावरणीयाणं सव्वघादीणं चेव बंधगो होदि त्ति एसो वि अत्थो एत्थेव णिलीणो वक्खाणेयव्वो, तेसु पयारंतरासंभवादो। अघादि-पयडीणं पुण साद-जसगित्ति-उच्चागोदाणं चउट्ठाणिओ तप्पाओग्गउक्कसओ अणुभाग-बंधो होइ त्ति एसो वि अत्थो एत्थेवंतब्भूदो दट्ठव्वो, सुत्तस्सेदस्स देसामासयभावेण

सर्वप्रथम इस प्रकार पदसम्बन्ध करना चाहिये—जिन कर्मोंकी अपवर्तना होती है उनके सर्वा-वरणीय अनुभागस्पर्धकोंका यह नियमसे अबन्धक है यह इसका भावार्थ है। जिन कर्मोंकी क्षयोपशम लब्धि सम्भव होनेसे देशघातिस्वरूपसे अनुभागकी अपवर्तना सम्भव है उनके सर्वघातिस्वरूप अनुभागस्पर्धकोंका अबन्धक है, किन्तु देशघातिस्वरूपसे ही उन कर्मोंका बन्ध होता है।

शंका—किन कर्मोंकी देशघातिरूपसे अपवर्तना सम्भव है ?

समाधान—ज्ञानावरणचतुष्क, दर्शनावरण तीन और पाँच अन्तराय लब्धिकर्मांश संज्ञावाले इन कर्मोंकी देशघातिरूपसे अपवर्तना सम्भव है। इसलिए इन कर्मोंके अनुभागबन्धको यहाँसे अन्तर्मुहूर्त पूर्वसे लेकर देशघाति द्विस्थानीयरूपसे बाँधता हुआ यहाँ भी उसी रूपसे बाँधता है, सर्वघातिस्वरूपसे नहीं बाँधता यह यहाँ गाथाके पूर्वार्धमें सूत्रका अर्थसमुच्चय है।

§ २०६. मोहनीय कर्मसम्बन्धी चार संज्वलन और पुरुषवेदके सर्व-घाति और देश-घाति स्पर्धक सम्भव होनेपर संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर देशघातिरूपसे बन्ध करता हुआ इस स्थानमें देशघाति-एकस्थानीयरूपसे बन्ध करता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि इनकी भी अपवर्तना सम्भव है इस अपेक्षा पूर्वोक्त प्रकृतियोंसे इनमें कोई भेद नहीं है। परन्तु जिन प्रकृतियोंकी अपवर्तना सम्भव नहीं है उन केवलज्ञानावरण और केवल-दर्शनावरणका सर्वघातिरूपसे ही बन्धक होता है इस प्रकार यह अर्थ भी इसीमें गर्भित है ऐसा व्याख्यान करना चाहिये, क्योंकि उन प्रकृतियोंमें अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है। परन्तु साता-वेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्र इन अघाति प्रकृतियोंका चतुःस्थानीय तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है इस प्रकार यह अर्थ भी इसीमें अन्तर्भूत जानना चाहिये, क्योंकि इस सूत्रकी

पयट्टत्तादो। संपहि एवंविहमेदस्स गाहापुव्वद्धस्स अत्थविसेसं विहासेमाणो सुत्तपबंध-मुत्तरं भणइ—

*** 'जेसिमोवट्टणा' त्ति का सण्णा ?**

§ २०७. जेसिं कम्माणमोवट्टणा अत्थि तेसिं सव्वघादीणमबंधगो त्ति भणिदं। तत्थ जेसिमोवट्टणा त्ति का एसा सण्णा ? ण एदिस्से अत्थविसेसो सम्भमवगम्मइ त्ति पुच्छा एदेण कदा होइ।

*** जेसिं कम्माणं देसघादिफद्दयाणि अत्थि तेसिं कम्माणमोवट्टणा अत्थि त्ति सण्णा।**

§ २०८. जेसिं कम्माणमणुभागस्स देसघादिफद्दयाणि संभवंति तेसिं कम्माण-मोवट्टणा अत्थि त्ति एसा सण्णा एत्थ णादव्वा त्ति वुत्तं होइ, देसघादिसरूवेणो-वट्टणाए तत्थ संभवदंसणादो। तम्हा एवंविहं सण्णाविसेसमस्सियूण पयदगाहा-पुव्वद्धे सुत्तत्थविहासा एवमणुगंतव्वा त्ति जाणावेमाणो इदमाह—

*** एदीए सण्णाए सव्वावरणीयाणं जेसिमोवट्टणा त्ति एदस्स पदस्स विहासा।**

§ २०९. सुगमं।

देशामर्षकरूपसे प्रवृत्ति हुई है। अब इस गाथाके पूर्वार्धके इस प्रकारके अर्थविशेषकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** जिन कर्मोंकी अपवर्तना होती है उनकी क्या संज्ञा है ?**

§ २०७. जिन कर्मोंकी अपवर्तना होती है उनका सर्वघातिरूपसे अबन्धक है यह उक्त कथन का तात्पर्य है। अतः प्रकृतमें जिन कर्मोंकी अपवर्तना होती है उनकीं यह संज्ञा क्या है ? इसका विशेष अर्थ सम्यक् प्रकारसे ज्ञात नहीं है इस प्रकार इस सूत्र द्वारा पृच्छा की गई है।

*** जिन कर्मोंके देशघातिस्पर्धक हैं उन कर्मोंकी अपवर्तना यह संज्ञा है।**

§ २०८. जिन कर्मोंके अनुभागके देशघातिस्पर्धक सम्भव हैं उन कर्मोंकी अपवर्तना होती है इस प्रकार यह संज्ञा यहाँ जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि उनकी देशघातिरूपसे अपवर्तना सम्भव दिखलाई देती है, इसलिये इस प्रकारकी संज्ञाविशेषका अवलम्बन लेकर प्रकृत गाथाके पूर्वार्धमें सूत्रके अर्थका व्याख्यान इस प्रकार जानना चाहिये ऐसा जनाते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इस संज्ञाके अनुसार जिनके सर्वघाति स्पर्धकोंकी अपवर्तना होती है उनके इस पदकी विभाषा की गई है।**

§ २०९. यह सूत्र सुगम है।

*** तं जहा ।**

§ २१०. सुगमं ।

*** जेसिं कम्माणं देसघादिफद्दयाणि अत्थि ताणि कम्माणि सव्वघादीणि ण बंधदि, देसघादीणि बंधदि ।**

§ २११. कुदो ? पुव्वमेव तेसिं देसघादिबंधस्स पारद्धत्तादो ।

*** तं जहा ।**

§ २१२. काणि ताणि कम्माणि जेसिमोवट्टणासंभवे देसघादिबंधणियमो त्ति पुच्छिदं होइ । संपहि एवं पुच्छाविसईकयाणं तेसिं कम्माणं णामणिद्देसं कादूण तत्थ देसघादिबंधावहारणट्ठमिदमाह—

*** णाणावरणं चउव्विहं दंसणावरणं तिविहं अंतराइयं पंचविहं एदाणि कम्माणि देसघादीणि बंधदि ।**

२१३. एदाणि कम्माणि पुव्वमेव अंतोमुहुत्तादो आढत्ता देसघादीणि चेव बंधदि । णो सव्वघादीणि त्ति सुत्तत्थसमुच्चओ । एवं गाहापुव्वद्धविहासणं कादूण गाहापच्छद्धविहासा पयडिबंधविसेसपडिबद्धा सुगमा त्ति तमपरूविय पयदत्थमुवसंहरेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** वह जैसे ।**

§ २१०. यह सूत्र सुगम है ।

*** जिन कर्मोंके देशघातिस्पर्धक होते हैं, उन कर्मोंके सर्वघातिस्पर्धक नहीं बांधता है, देशघातिस्पर्धक बांधता है ।**

§ २११. क्योंकि पहले ही उनका देशघातिरूप बन्ध प्रारम्भ हो गया है ।

*** वह जैसे ।**

§ २१२. वे कर्म कौन हैं जिनकी अपवर्तना सम्भव होनेपर देशघातिरूप बन्धका नियम बन जाता है यह पृच्छा की गई है । अब इस प्रकारकी पृच्छाके विषय किये गये उन कर्मोंका नामनिर्देश करके उनके देशघातिरूप बन्धका अवधारण करनेके लिये इस सूत्रको कहते हैं—

*** चार ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण और पांच अन्तराय इन कर्मोंको देशघातिरूप बांधता है ।**

§ २१३. इन कर्मोंको अन्तर्मुहूर्त पहलेसे ही ग्रहण करके देशघातिरूप ही बाँधता है, सर्वघातिरूप नहीं बाँधता यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है । इस प्रकार गाथाके पूर्वार्धकी विभाषा करके गाथाके उत्तरार्धकी विभाषा प्रकृतिबन्धविशेषसे सम्बन्ध रखती है और सुगम है इसलिये उसकी प्ररूपणा न करके प्रकृत अर्थका उपसंहार करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* एत्तिगे मूलगाहाए पढमो अत्थो समत्तो भवदि ।

§ २१४. एत्तिगे अत्थे तीहिं भासगाहाहि विहासिदे विदियमूलगाहाए पढमो अत्थो विहासिदो भवदि, पयडि-ट्ठिदि-अणुभागबंधेसु मग्गिदेसु पदेसबंधस्स विहायेण गयत्थत्तादो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो । संपहि विदियत्थपडिबद्धाणं दोण्हं भासगाहाणं जहाकममत्थविहासणं कुणमाणो तासिं समुक्कित्तणं विहासणं च एक्कदो भणइ, अण्णहा गंथगउरवप्पसंगादो ।

(८१) णिद्दा य णीचगोदं पयला णियमा अगि त्ति णामं च ।
छच्चेय णोकसाया अंसेसु अवेदगो होदि ॥१३४॥

§ २१५. एसा पढमभासगाहा 'के व वेदयदि अंसेसु' त्ति एदं मूलगाहाविदियावयवमस्सियूण संकामयपट्ठवयेणावेदिज्जमाणपयडीणं परूवणट्ठमोइण्णा । तं जहा—'णिद्दा य' एवं भणिदे णिद्दाणिद्दाए गहणं कायव्वं, णामेगदेसणिद्देसेण समुदायसण्णाए उवलक्खणादो । एत्थतण 'च' सद्देणावुत्तसमुच्चयट्ठेण थीणगिद्धीए वि गहणं कायव्वं । एवं पयलाणिद्देसेण वि पचलापचलाए संगहो दट्ठव्वो । तदो णिद्दाणिद्दा-पचलापचला-थीणगिद्धि त्ति एदासिं पयडीणं णीचागोद-अजसगित्तिणामाणं छण्णोकसायाणं च एदेसिं कम्माणमेसो णियमा अवेदगो त्ति सुत्तत्थ-

---

* इतने अर्थका व्याख्यान करनेपर मूलगाथाका प्रथम अर्थ समाप्त होता है ।

§ २१४. तीन भाष्यगाथाओं द्वारा इतने अर्थका व्याख्यान करनेपर दूसरी मूलगाथाका प्रथम अर्थ व्याख्यात हो जाता है । इसप्रकार प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धकी मार्गणा करनेपर प्रदेशबन्धका व्याख्यान शास्त्रोक्तरूपसे गतार्थ हो जाता है यह इस सूत्रका भावार्थ है । अब द्वितीय अर्थसे सम्बन्ध रखनेवाली दो भाष्यगाथाओंकी क्रमसे अर्थविभाषा करते हुए उनकी समुत्कीर्तना और विभाषा एक साथ करते हैं, अन्यथा ग्रन्थकी गुरुताका प्रसंग प्राप्त होता है ।

(८१) निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, नीचगोत्र, अयशःकीर्ति और छह नोकषाय इन कर्मोंका सब अंशोंमें नियमसे अवेदक होता है ॥१३४॥

§ २१५. यह प्रथम भाष्यगाथा मूलगाथाके 'के व वेदयदि अंसेसु' इस दूसरे अंशका अवलम्बन लेकर संक्रामक प्रस्थापकके द्वारा नहीं वेदे जानेवाली प्रकृतियोंकी प्ररूपणा करनेके लिए आई है । वह जैसे—'णिद्दा य' ऐसा कहनेपर निद्रानिद्राका ग्रहण करना चाहिये, नामके एकदेशका निर्देश करनेपर उपलक्षणसे समुदायरूप संज्ञाका ग्रहण हो जाता है । अनुक्तका समुच्चय करनेवाले यहाँ आये हुए 'च' पद द्वारा स्त्यानगृद्धिका ग्रहण करना चाहिये । इसी प्रकार प्रचला शब्दके निर्देश द्वारा भी प्रचलाप्रचलाका संग्रह करना चाहिये । इसलिए निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धि इन प्रकृतियोंका तथा नीचगोत्र, अयशःकीर्तिनाम और छह नोकषाय इन कर्मोंका नियमसे अवेदक होता है यह इस सूत्रका समुच्चयार्थ है, क्योंकि इनकी पूर्वमें ही अपने-अपने

समुच्चओ, एदेसिं हेट्ठा चेव अप्पप्पणो पाओग्गविसये वोच्छिण्णोदयाणमेत्थुदय-संभवाभावादो ।

§ २१६. णवरि णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं हेट्ठा चेव संतुच्छेदो जादो त्ति ण तेसिमेत्थुदयवोच्छेदणिद्देसो सफलो, सुत्ते तेसिं णामणिद्देसस्स परिप्फुडमदंसणादो च । तदो णिद्दा त्ति वुत्ते णिद्दाए चेव गहणं कायव्वं, पचला त्ति णिद्देसेण पचलाए चेव गहणं कायव्वं, दोण्हमेदेसिं कम्माणमेसो अवेदगो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थो घेत्तव्वो । कधं पुण खीणकसायदुचरिमसमए वोच्छिज्जमाणोदयाणमेदासिमेत्थुदयाभावो वोत्तुं सक्किज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, पुव्वुत्तरावत्थासु अव्वत्तसरूवेण विज्जमाणोदयाणं पि तासिमेदम्मि मज्झिमावत्थाए झाणोवजोगविसेसेण पडिहयसत्तीणमुदयाभावब्भुवगमे विरोहाभावादो । अधवा खवगसेढीए सव्वत्थ णिद्दा-पयलाणमुदयो णत्थि चेवेत्ति घेत्तव्वं; झाणोवजुत्तेसु तदुदयपवुत्तीए संभवाभावादो । एवमेदे कम्मंसे सव्वेसु अंसेसु पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसभेदभिण्णेसुवट्टमाणे णियमा एसो ण वेदेदि त्ति सिद्धं ।

§ २१७. एत्थ अजसगित्तिणाममुवलक्खणं कादूण अवेदिज्जमाणणामपयडीओ सव्वाओ चेव पसत्थापसत्थसरूवाओ घेत्तव्वाओ; मणुसगदि-पंचिंदियजादिआदितीस-पयडीओ मोत्तूण सेसाणमेत्थुदयादंसणादो । संपहि एवंविहमेदस्स गाहासुत्तस्स अत्थं विहासिदुकामो सुत्तमुत्तरं भणइ—

योग्य स्थानमें उदयव्युच्छित्ति हो जानेसे यहाँ इनका उदय सम्भव नहीं है ।

§ २१६. इतनी विशेषता है कि निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिकी पूर्वमें ही सत्त्वव्युच्छित्ति हो जाती है, इसलिये उनकी यहाँ उदयव्युच्छित्तिका निर्देश सफल नहीं है, और सूत्रमें उनका नामनिर्देश स्पष्टरूपसे नहीं दिखलाई देता । इसलिये सूत्रमें 'णिद्दा' ऐसा कहनेपर निद्राका ही ग्रहण करना चाहिये तथा 'पचला' ऐसा निर्देश करनेसे प्रचलाका ही ग्रहण करना चाहिये, अतः इन दोनों कर्मोंका यह जीव अवेदक है यह यहाँ इस सूत्रके अर्थका ग्रहण करना चाहिये ।

शंका—यदि ऐसा है तो क्षीणकषायके द्विचरम समयमें व्युच्छिन्न होनेवाले इन कर्मोंका यहाँ उदयाभाव कैसे कहा जा सकता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि पूर्व अवस्थामें और उत्तर अवस्थामें जिनका अव्यक्तरूपसे उदय हो रहा है और जिनकी ध्यानस्वरूप उपयोगविशेषके कारण शक्ति क्षीण हो गई है ऐसे उन कर्मोंका इस मध्यकी अवस्थामें उदयाभाव स्वीकार करनेमें विरोधका अभाव है । अथवा क्षपकश्रेणिमें सर्वत्र निद्रा और प्रचलाका उदय नहीं ही है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि ध्यानमें उपयुक्त हुए जीवोंमें उन कर्मोंकी उदयप्रवृत्ति सम्भव नहीं है । इस प्रकार इन कर्मोंके प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशभेदसे भेदरूप सभी अंशोंमें विद्यमान रहते हुए उनका यह जीव नियमसे वेदन नहीं करता यह सिद्ध होता है ।

§ २१७. यहाँपर अयशःकीर्ति नामकर्मको उपलक्षण करके नहीं वेदी जानेवाली सभी प्रशस्त और अप्रशस्तरूप नामकर्मकी प्रकृतियोंको ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति आदि तीस प्रकृतियोंको छोड़कर शेष प्रकृतियोंका यहाँ उदय नहीं देखा जाता । अब इस

*** एदाणि कम्माणि सव्वत्थ णियमा ण वेदेदि ।**

§ २१८. एदाणि अणंतरणिद्दिट्ठाणि कम्माणि संकामणपट्ठवगो अप्पणो सव्वावत्थासु णियमा ण वेदेदि त्ति गाहासुत्तस्स समुदायत्थो एदेण सुत्तेण विहासिदो होइ ।

*** एस अत्थो एदिस्से गाहाए ।**

§ २१९. सुगममेदं पयदगाहासुत्तत्थस्स उवसंहारवक्कं । एवं विदियमूलगाहाए विदियत्थम्मि पडिबद्धपढमभासगाहमस्सियूणावेदिज्जमाणपयडिणिद्देसं कादूण संपहि तत्थेव विदियभासगाहमस्सियूण वेदिज्जमाणपयडीणं वेदिज्जमाणाणुभागेण सह णिद्देसं कुणमाणो इदमाह—

(८२) वेदे च वेदणीये सव्वावरणे तहा कसाये च ।
भयणिज्जो वेदेंतो अभज्जगो सेसगो होदि ॥१३५॥

§ २२०. एदिस्से गाहाए अत्थो वुच्चदे । तं जहा—वेदे च' एवं भणिदे तिण्हं वेदाणमण्णदरोदएण भजियव्वो त्ति अत्थो घेत्तव्वो; पुरिसवेदादीणमण्णदरो-

---

प्रकार इस गाथासूत्रके अर्थकी विभाषाकी इच्छासे आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इन कर्मोंको सर्वत्र नियमसे नहीं वेदता है ।**

§ २१८. अनन्तर पूर्व निर्दिष्ट किये गये इन कर्मोंको संक्रामणप्रस्थापक जोव अपनी सभी अवस्थाओंमें नियमसे नहीं वेदता है इस प्रकार इस सूत्र द्वारा गाथासूत्रका समुच्चयरूप अर्थ कहा गया है ।

विशेषार्थ—मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिकशरीरबन्धन, छह संस्थानोंमेंसे कोई एक संस्थान, औदारिकशरीर आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णादि चार, अगुरुलघु, उपघात, परघात, विहायोगतिमेंसे कोई एक त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, कोई एक स्वर, आदेय, यशःकीर्ति, उच्छ्वास, निर्माण ये ३० प्रकृतियाँ हैं जिनका उदय और उदीरणा संक्रामकप्रस्थापकके नियमसे होती है ऐसा यहाँ समझना चाहिये ।

*** यह इस भाष्यगाथाका अर्थ है ।**

§ २१९. प्रकृत भाष्यगाथासूत्रके अर्थका यह उपसंहार वाक्य सुगम है । इस प्रकार दूसरी मूलगाथाके दूसरे अर्थसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रथम भाष्यगाथाका आलम्बन लेकर वेदी जानेवाली प्रकृतियोंका निर्देश करके अब उसी अर्थमें दूसरी भाष्यगाथाका आलम्बन लेकर वेदी जानेवाली प्रकृतियोंका वेदे जानेवाले अनुभागके साथ निर्देश करते हुए इस भाष्यगाथाको कहते हैं—

(८२) उक्त जीव वेदोंको, वेदनीयकर्मको, आभिनिबोधिक आदि सर्वावरण कर्मोंको और कषायोंको वेदता हुआ भजनीय है तथा इन कर्मोंके अतिरिक्त शेष कर्मोंका वेदन करता हुआ अभजनीय है ॥१३४॥

§ २२०. अब इस भाष्यगाथाका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—'वेदे च' ऐसा कहनेपर तीन वेदोंमेंसे अन्यतर वेदके उदयकी अपेक्षा भजनीय है यह अर्थ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि पुरुषवेद

दएण सेढिसमारोहणे विरोहाभावादो। 'वेदणीये' एवं भणिदे वेदणीयम्मि सादासादाणमण्णदरोदएण भजियव्वो त्ति वुत्तं होइ। 'सव्वावरणे' त्ति वुत्ते आभिणिबोहियणाणावरणादीणं जेसिं सव्वघादिफद्दयाणि देसघादिफद्दयाणि च अत्थि ते वेदेमाणो भयणिज्जो, सिया सव्वघादिं वा वेदेदि, सिया देसघादिं वा एदेसिमणुभागं वा वेदेदि त्ति। किं कारणं? तेसिमुक्कस्सखओवसमेण[1] परिणदम्मि णियमा देसघादिअणुभागोदयदंसणादो, अण्णत्थ सव्वघादिअणुभागोदयदंसणादो। सेसं जाणिय जोजेयव्वं। जेसिं पुण देसघादिफद्दयाणि णत्थि तेसिं सव्वघादीणं चेव वेदगो होदि त्ति णिच्छेयव्वं, तत्थ भयणासंभवादो। ण च एसो अत्थो सुत्ते णत्थि, 'अभज्जगो सेसगो होदि' त्ति चरिमावयवेण परिप्फुडमेव तण्णिद्देसदंसणादो।

§ २२१. 'कसाए च भयणिज्जो वेदेंतो' त्ति भणिदे चदुण्हं संजलणकसायाणमण्णदरस्स उदएण भजियव्वो त्ति सुत्तत्थो, चदुण्हमेदेसिमण्णदरोदयेण सेढिसमारोहणे पडिसेहाभावादो। 'अभज्जगो सेसगो' एवं भणिदे वुत्तसेसाणं पयडीणमणुभागाणं

आदिमेंसे किसी एक वेदके उदयसे श्रेणिका आरोहण करनेमें विरोधका अभाव है। 'वेदणीये' ऐसा कहनेपर वेदनीयके साता और असातामेंसे कोई एक उदयकी अपेक्षा भजनीय है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'सव्वावरणे' ऐसा कहनेपर आभिनिबोधिक आदि जिन कर्मोंके सर्वघातिस्पर्धक हैं और देशघातिस्पर्धक हैं उनका वेदन करता हुआ भजनीय है. कदाचित् सर्वघातिस्पर्धकोंका वेदन करता है और कदाचित् देशघातिस्पर्धकोंका वेदन करता है, क्योंकि उनके उत्कृष्ट क्षयोपशमरूपसे परिणत होनेपर नियमसे देशघाति अनुभागका उदय देखा जाता है तथा अन्य अवस्थामें सर्वघाति अनुभागका उदय देखा जाता है। शेष जानकर योजना करनी चाहिये। परन्तु जिन कर्मोंके देशघाति स्पर्धक नहीं होते उनके सर्वघाति स्पर्धकोंका ही वेदक होता है ऐसा निश्चय करना चाहिये, क्योंकि उक्त कर्मोंके उदयमें भजनीयपना सम्भव नहीं है। यदि कहा जाय कि यह अर्थ सूत्रमें निबद्ध नहीं है तो ऐसा कहना भी योग्य नहीं है, क्योंकि 'अभज्जगो सेसगो होइ' इस अन्तिम पद द्वारा स्पष्टरूपसे उक्त कथनका निर्देश देखा जाता है।

विशेषार्थ—आभिनिबोधिक आदि चार ज्ञानावरणोंमेंमें जहाँ जिस कर्मका उत्कृष्ट क्षयोपशम होता है वहाँ पर उस-उस कर्मसम्बन्धी देशघाति स्पर्धकोंका ही उदय रहता है और जहाँ विवक्षित कर्मका उत्कृष्ट क्षयोपशम नहीं होता वहाँपर उस कर्मके देशघातिस्पर्धकोंके उदयके साथ सर्वघाति स्पर्धकोंका भी उदय रहता है, क्योंकि विवक्षित क्षयोपशमसम्बन्धी सर्वघाती स्पर्धकोंको छोड़कर उसके अन्य अविवक्षित क्षयोपशम ज्ञानोंसम्बन्धी सर्वघाती स्पर्धकोंका उदय बना रहता है। यह 'सव्वावरणे भयणिज्जो' इस भाष्यगाथाके अंशका तात्पर्य है। शेष कथन सुगम है।

§ २२१. 'कसाये च भयणिज्जो वेदेंतो' ऐसा कहनेपर चार संज्वलनोंमेंसे अन्यतरके उदयसे भजनीय है यह इस सूत्रका अर्थ है, क्योंकि इन चारोंमेंसे किसी एकके उदयसे श्रेणिका आरोहण करनेमें कोई निषेध नहीं है। 'अभज्जगो सेसगो' ऐसा कहनेपर उक्त शेष प्रकृतियोंका और उनके

---

१. आ० ताप्रत्योः -मुक्कसओ खओवसमेण इति पाठः।

च वेदगत्तेण भयणिज्जो, जेसिं वेदगो तेसिं वेदगो चेव। जेसिं च ण वेदगो तेसिमवेदगो चेवेत्ति, तत्थ भयणाए संभवाणुवलंभादो। णवरि णामपयडीसु संठाणादीणं केसिं पि उदएण भयणिज्जत्तमत्थि तेसिं पि 'च' सद्देण संगहो कायव्वो। एत्थेव विदिय 'च' सद्देण ट्ठिदिउदओ पदेसुदओ च वेदिज्जमाणसव्वपयडीणमजहण्णाणुक्कस्ससरूवो उदीरणसहगओ गहेयव्वो।

§ २२२. संपहि एवंविहभेदस्स गाहासुत्तस्स अत्थं विहासेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** विहासा।**

§ २२३. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ २२४. सुगमं।

*** वेदे च ताव तिण्हं वेदाणमण्णदरं वेदेज्ज।**

§ २२५. सुगमं।

*** वेदणीये सादं वा असादं वा।**

अनुभागोंका वेदकपनेसे भजनीय नहीं है, क्योंकि जिनका वेदक है उनका वेदक ही है और जिनका वेदक नहीं है उनका अवेदक ही है, इसलिये शेष प्रकृतियोंके वेदन करनेमें भजनीयपना सम्भव नहीं है। इतनी विशेषता है कि नामकर्मकी प्रकृतियोंमेंसे संस्थान आदि किन्हीं प्रकृतियोंके उदयसे भजनीयपना भी है, इसलिये उनका भाष्यगाथामें आये हुए 'च' पद द्वारा संग्रह कर लेना चाहिये। तथा यहीं आये हुए दूसरे 'च' पद द्वारा वेदी जानेवाली सब प्रकृतियोंके स्थिति उदय और प्रदेश-उदयको उदीरणाके साथ अजघन्य-अनुत्कृष्टरूपसे ग्रहण करना चाहिये।

विशेषार्थ—इस जीवके छह संस्थानोंमेंसे किसी एक संस्थान, दो विहायोगतियोंमेंसे किसी एक विहायोगति और दो स्वरोंमेंसे किसी एक स्वरका उदय और उदीरणा सम्भव है, इसलिये इस अपेक्षासे यहाँ २४ भंग हो जाते हैं। शेष कथन सुगम है।

§ २२२. अब इस गाथासूत्रकी इस प्रकार विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ २२३. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २२४. यह सूत्र सुगम है।

*** सर्व प्रथम 'वेदे च' पदकी विभाषा—तीनों वेदोंमेंसे किसी एक वेदका वेदन करता है।**

§ २२५. यह सूत्र सुगम है।

*** 'वेदणीये' इस पदकी विभाषा—सातावेदनीयका वेदन करता है अथवा**

§ २२६. सुगमं ।

*** सव्वावरणे आभिणिबोहियणाणावरणादीणमणुभागं सव्वघादिं वा देसघादिं वा ।**

§ २२७. आभिणिबोहिय-सुदणाणावरणीयाणं सव्वेसु जीवेसु खओवसमलद्धिजुत्तेसु देसघादिमणुभागं मोत्तूण सव्वघादिअणुभागस्स उदओ कथं लब्भदि त्ति णासंकणिज्जं, तेसिमुत्तरुत्तरपयडीसु केसिं पि सव्वघादिउदयसंभवमस्सियूण तहाभावसिद्धीदो । एवमोहि-मणपज्जवणाणावरणीयाणं पि देस-सव्वघादित्तेण भयणिज्जत्तं जोजेयव्वं । णवरि तेसिमुत्तरुत्तरपयडिविवक्खाए विणा वि सव्वघादित्तमुवलब्भदे, सव्वेसु जीवेसु तेसिं खओवसमणियमाभावादो । अंतराइयपयडीणं पि एसो अत्थो जाणिय वत्तव्वो ।

*** कसाये चउण्हं कसायाणमण्दरं ।**

असातावेदनीयका वेदन करता है ।

§ २२६. यह सूत्र सुगम है ।

*** 'सव्वावरणे' इस पदकी विभाषा—आभिनिबोधिक ज्ञानावरणादिके सर्वघाति अनुभागका वेदन करता है अथवा देशघाति अनुभागका वेदन करता है ।**

§ २२७. शंका—सब जीवोंके आभिनिबोधिक ज्ञानावरण और श्रुतज्ञानावरणकी क्षयोपशम लब्धिसे संयुक्त होनेपर देशघाति अनुभागको छोड़कर सर्वघाति अनुभागका उदय कैसे सम्भव है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उन जीवोंके उत्तरोत्तर प्रकृतियोंमेंसे किन्हीं प्रकृतियोंके सर्वघाति अनुभागका उदय सम्भव है इस अपेक्षा उक्त भावकी सिद्धि होती है ।

इसी प्रकार अवधिज्ञानावरण और मनःपर्ययज्ञानावरणके भी देशघाति और सर्वघातिपनेसे भजनीयताकी योजना करनी चाहिये । इतनी विशेषता है कि उनके उत्तरोत्तर प्रकृतियोंकी विवक्षा के बिना भी सर्वघातिपना उपलब्ध होता है, क्योंकि सब जीवोंमें उनके क्षवोपशमका नियम नहीं उपलब्ध होता । अन्तराय प्रकृतियोंका भी यह अर्थ जानकर कहना चाहिये ।

विशेषार्थ—आभिनिबोधिक ज्ञानावरण और श्रुतज्ञानावरणके उत्तर भेदोंमेंसे प्रारम्भकी एकसे लेकर जितनी अवान्तर प्रकृतियोंका क्षयोपशम होता है उनसे आगेकी प्रकृतिवोंके सर्वघाति स्पर्धकोंका नियमसे उदय बना रहता है । पाँच अन्तराय कर्मोंके विषयमें भी इसीप्रकार जान लेना चाहिये । किन्तु अवधिज्ञानावरण और मनःपर्ययज्ञानावरणका क्षयोपशम जिन जीवोंके नहीं पाया जाता है उनके उत्तरोत्तर प्रकृतियोंकी दिवक्षा किये बिना ही पूरे सर्वघाति स्पर्धकोंका उदय बना रहना सम्भव है । मात्र जिन जीवोंके इन कर्मोंका जितने अंशमें क्षयोपशम होता है उनके उससे आगेके इन कर्मोंके सर्वघाति अनुभागका उदय बना रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** 'कसाये' इस पदकी विभाषा—चार संज्वलन कषायोंमेंसे किसी एकका वेदन करता है ।**

§ २२८. वेदेज्जेत्ति सव्वत्थ अहियारसंबंधो कायव्वो। सेसं सुगमं। एवमेदेसिं भयणिज्जत्तं परूविय संपहि एदं चेव भयणिज्जत्तमुवसंहारमुहेण फुडीकरेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एवं भजिदव्वो वेदे च वेदणीये सव्वावरणे कसाये च।**

§ २२९. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमेदीए मग्गणाए समत्ताए तदो बिदियमूलगाहाए विदियो अत्थो दोसु भासगाहासु पडिबद्धो समप्पदि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** विदियाए मूलगाहाए विदियो अत्थो समत्तो भवदि।**

§ २३०. सुगमं। संपहि मूलगाहापच्छद्धमवलंबिय तदियमत्थं विहासिदुकामो तत्थ ताव छण्हं भासगाहाणमत्थित्तपरूवणट्ठमाह—

*** तदिये अत्थे छब्भासगाहाओ।**

§ २३१. सुगममेदं। एवमेत्थ छण्हं भासगाहाणमत्थित्तं पइण्णाय ताओ जहाकमं विहासेमाणो पढमगाहाए ताव अवयारं कुणइ—

(८३) सव्वस्स मोहणीयस्स आणुपुव्वी य संकमो होदि।
लोभकसाये णियमा असंकमो होइ णायव्वो ॥१३६॥

---

§ २२८. 'वेदेज्ज' इस पदका सर्वत्र अधिकारके अनुसार सम्बन्ध करना चाहिये। शेष कथन सुगम है। इस प्रकार इन कर्मोंके भजनीयपनेका कथन करके अब इसी भजनीयपनेका उपसंहार करनेके साथ उसे स्पष्ट करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस प्रकार वेदोंको, वेदनीयके दोनों भेदोंको, सर्वावरण कर्मोंको और कषायोंको भजनीय करना चाहिये।**

§ २२९. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार इस मार्गणाके समाप्त होनेपर दूसरी मूल गाथाका दो भाष्यगाथाओंसे सम्बन्ध रखनेवाला दूसरा अर्थ समाप्त होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस प्रकार दूसरी मूलगाथाका दूसरा अर्थ समाप्त होता है।**

§ २३०. यह सूत्र सुगम है। अब मूलगाथाके उत्तरार्धका अवलम्बन करके तीसरे अर्थको विभाषा करनेकी इच्छासे सर्वप्रथम छह भाष्यगाथाओंके अस्तित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** तीसरे अर्थमें छह भाष्यगाथाएँ हैं।**

§ २३१. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार यहाँपर छह भाष्यगाथाओंके अस्तित्वकी प्रतिज्ञा करके उनका मसे व्याख्यान करते हुए प्रथम भाष्यगाथाका अवतार करते हैं—

(८३) यहाँसे लेकर सम्पूर्ण मोहनीय कर्मका आनुपूर्वी संक्रम होता है तथा

§ २३२. एसा पढमगाहा संकामयपट्ठवगस्स अंतरदुसमयकदावत्थाए वट्टमाणस्स आणुपुव्वीसंकमं लोभस्सासंकमं च परूवेइ। संपहि एदिस्से गाहाए अवयवत्थपरूवणा सुगमा त्ति समुदायत्थमेव विहासेमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह--

*** विभासा।**

§ २३३. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ २३४. सुगमं।

*** अंतरदुसमयकदप्पहुडि मोहणीयस्स आणुपुव्वीसंकमो।**

§ २३५. सुगमं।

*** आणुपुव्वीसंकमो णाम किं?**

§ २३६. सुगमं।

*** कोह-माण-माया-लोभा एसा परिवाडी आणुपुव्वीसंकमो णाम।**

§ २३७. एदीए पयडिपरिवाडीए जो संकमो पडिलोमसंकमविरहलक्खणो तस्स आणुपुव्वीसंकमसण्णा त्ति भणिदं होइ। एसा परिवाडी गाहासुत्तेणेदेणाणुवइट्ठा कथं जाणिज्जदि त्ति आसंकाए इदमाह—

लोभ कषायका नियमसे संक्रम नहीं होता ऐसा जानना चाहिये ॥१३६॥

§ २३२. अन्तर करनेके बाद दूसरे समयमें विद्यमान संक्रामक प्रस्थापकके यह प्रथम भाष्य गाथा आनुपूर्वी संक्रमका और लोभकषायके असंक्रमका कथन करती है। अब इस गाथाके अवयवों-की अर्थप्ररूपणा सुगम है, इसलिये समुच्चयरूप अर्थकी ही विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्ध-को कहते हैं—

*** उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा।**

§ २३३. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

२३४. यह सूत्र सुगम है।

*** अन्तर कर लेनेके दूसरे समयसे लेकर मोहनीय कर्मका आनुपूर्वी संक्रम होता है।**

§ २३५. यह सूत्र सुगम है।

*** आनुपूर्वी संक्रम क्या है।**

§ २३६. यह सूत्र सुगम है।

*** क्रोध, मान, माया और लोभ यह परिपाटी आनुपूर्वी संक्रम है।**

§ २३७. प्रकृतियोंकी इस परिपाटीके अनुसार प्रतिलोम संक्रमके अभाव लक्षणवाला जो संक्रम होता है उसकी आनुपूर्वी संक्रम संज्ञा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह गाथासूत्र द्वारा

*** एस अत्थो चउत्थीए भासगाहाए भणिहिदि ।**

§ २३८. जो एसो पढममासगाहाए णिबद्धो अत्थो आणुपुव्वीसंकमसण्णिदो सो विदिय-तदियगाहासु किंचि परूविज्जमाणो चेव चउत्थभासगाहाए पबंधेण परूविहिदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो । एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता ।

*** एत्तो विदियभासगाहा ।**

§ २३९. सुगमं ।

(८४) संकामगो च कोधं माणं मायं तहेव लोभं च ।
सव्वं जहाणुपुव्वी वेदादी संछुहदि कम्मं ॥१३७॥

§ २४०. एदीए गाहाए तेरसण्हं पयडीणमाणुपुव्वीसंकमेण सह खवणाए परिवाडी जाणाविदा । तं कधं ? 'संकामगो च' एवं भणिदे तेरस पयडीओ संकामेमाणो एदीए परिवाडीए संकामेदि त्ति वुत्तं होइ । 'वेदादि' त्ति वुत्ते णवुंसयवेदमादिं कादूण जहाणुपुव्वीए इत्थीवेद-छण्णोकसाय-पुरिसवेदे संछुहिदूण तदो कसाये च कोह-माण-माया-लोभपरिवाडीए संछुहदि त्ति भणिदं होदि । 'संछुहदि' त्ति वुत्ते परपयडीसु संकामेमाणो खवेदि त्ति अत्थो घेत्तव्वो । तदो णवुंसयवेदमित्थिवेदं च जहाकमं पुरिसवेदे संछुहिय तदो छण्णोकसाय-पुरिसवेदे कोहसंजलणम्मि संछुहिय तं पुण

नहीं कही गई परिपाटी कैसे जानी जाती है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** यह अर्थ चौथी भाष्यगाथामें कहेंगे ।**

§ २३८. जो यह आनुपूर्वी संक्रम संज्ञावाला अर्थ प्रथम भाष्यगाथामें निबद्ध है उसका दूसरी और तीसरी भाष्यगाथामें भी किंचित् कथन करते हुए चौथी भाष्यगाथामें विस्तारके साथ कहेंगे यह यहाँ इस सूत्रके अर्थका आशय है । इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थप्ररूपणा समाप्त हुई ।

*** अब इसके आगे दूसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हैं ।**

§ २३९. यह सूत्र सुगम है ।

(८४) संक्रामकप्रस्थापक जीव तीनों वेदोंसे लेकर छह नोकषाय सहित क्रोध, मान, माया तथा लोभ इन सब कर्मोंका आनुपूर्वीसे संक्रम करता है ॥१३७॥

§ २४०. इस भाष्यगाथामें तेरह प्रकृतियोंके आनुपूर्वी संक्रमके साथ क्षपणाकी परिपाटीका ज्ञान कराया गया है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—'संकामगो' ऐसा कहने पर तेरह प्रकृतियोंका संक्रम करता हुआ इस परिपाटीसे संक्रम करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । 'वेदादी' ऐसा कहनेपर नपुंसकवेदसे लेकर आनुपूर्वीसे स्त्रीवेद, छह नोकषाय और पुरुषवेदका संक्रमण करके तत्पश्चात् क्रोध, मान, माया और लोभकषायका संक्रम करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । 'संछुहदि' ऐसा कहनेपर पर-प्रकृतियोंमें संक्रम करता हुआ क्षपणा करता है यह अर्थग्रहण करना चाहिये । इसलिए नपुंसकवेद और स्त्रीवेदको क्रमसे पुरुषवेदमें संक्रमित करके पश्चात् छह नोकषाय और पुरुषवेदको क्रोध संज्वलन-

माणसंजलणम्मि संछुहियूण तं च मायासंजलणे संकामिय पुणो तं पि लोहसंजलणे पक्खविय लोहसंजलणमप्पणो चेव सरूवेण खवेदि त्ति एसो एदिस्से गाहाए समुदायत्थो। संपहि एदिस्से गाहाए सेसावयवा सुगमा त्ति काद्रूण 'वेदादि' त्ति एदस्स चेव पदस्स किंचि विवरणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** वेदादि त्ति विहासा।**

§ २४१. सुगमं।

*** णवुंसयवेदादी संछुहदि त्ति अत्थो।**

§ २४२. णवुंसयवेदमादिं काद्रूण जहाकमं तेरस पयडीओ खवेदि त्ति एवंविहो जो अत्थो सो 'वेदादि' त्ति एदेण सुत्तपदेण जाणाविदो त्ति भणिदं होइ। सेसं सुगमं। संपहि पढम-विदियभासगाहाहिं सामण्णेण णिद्दिट्ठस्साणुपुव्वीसंकमस्स विसेसियूण परूवणट्ठमुवरिमदोभासगाहाओ भणिदाओ। तं जहा—

(८५) संछुहदि पुरिसवेदे इत्थीवेदं णवुंसयं चेव।
सत्तेव णोकसाये णियमा कोहम्हि संछुहदि ॥१३८॥

§ २४३. एदीए तदियभासगाहाए णवण्हं णोकसायाणमेदीए परिवाडीए संछोहगो होदि त्ति जाणाविदं। इत्थि-णवुंसयवेदाणं पुरिसवेदे चेव णियमा संछोहणा, सत्तणोकसायाणं च णियमा कोहसंजलणे चेव संछोहणा त्ति एदस्सत्थस्स परिप्फुडमेव

में संक्रमित कर, तथा उसको मानसंज्वलनमें संक्रमित कर और उसे मायासंज्वलनमें संक्रमित कर पुनः उसे भी लोभसंज्वलनमें प्रक्षिप्त कर लोभसंज्वलनका अपने स्वरूपसे ही क्षय करता है इस प्रकार यह इस गाथाका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस गाथाके शेष पद सुगम है ऐसा करके 'वेदादी' इस पदका ही किंचित् विवरण करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** 'वेदादी' इस पदकी विभाषा करते हैं।**

§ २४१. यह सूत्र सुगम है।

*** नपुंसकवेदसे लेकर संक्रान्त करता है यह इस पदका अर्थ है।**

§ २४२. नपुंसकवेदसे लेकर क्रमसे तेरह प्रकृतियोंकी क्षपणा करता है इस प्रकार जो अर्थ है उसका 'वदादी' इस सूत्र पद द्वारा ज्ञान कराया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष कथन सुगम है। अब प्रथम और दूसरी भाष्यगाथाओं द्वारा सामान्यसे निर्दिष्ट हुए आनुपूर्वी संक्रमको विशेष करके कथन करनेके लिये आगेकी दो भाष्यगाथाओंका कथन किया है। वह जैसे—

(८५) स्त्रीवेद और नपुंसकवेदको पुरुषवेदमें ही संक्रमित करता है तथा सात नोकषायोंको नियमसे क्रोधसंज्वलनमें संक्रमित करता है ॥१३८॥

§ २४३. इस तीसरी भाष्यगाथामें नौ नोकषायोंका इस परिपाटीसे संक्रामक होता है यह ज्ञान कराया गया है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका पुरुषवेदमें ही नियमसे संक्रम होता है। और सात नोकषायोंका नियमसे क्रोधसंज्वलनमें ही संक्रम होता है इस प्रकार गाथाके पूर्वार्ध और

गाहापुव्व-पच्छद्धेसु णिबद्धस्स समुवलद्धीदो। संपहि एवंविहभेदस्स गाहासुत्तस्स अत्थं विहासेमाणो चुण्णिसुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एदिस्से तदियाए गाहाए विहासा।**

§ २४४. सुगमं।

*** जहा।**

§ २४५. सुगमं।

*** इत्थीवेदं णवुंसयवेदं च पुरिसवेदे संछुहदि, ण अण्णत्थ।**

§ २४६. सुगमं।

*** सत्त णोकसाये कोधे संछुहदि, ण अण्णत्थ।**

§ २४७. सुगममेदं पि सुत्तं।

(८६) कोहं च छुहइ माणे माणं मायाए णियमसा छुहइ।
मायं च छुहइ लोहे पडिलोमो संकमो णत्थि ॥१३९॥

§ २४८. **एदीए चउत्थभासगाहाए कसायाणमाणुपुव्वीसंकमो पुव्विल्लगाहाए असंगहिदो परूविदो त्ति दट्ठव्वो। एत्थ 'पडिलोमो संकमो णत्थि' त्ति वुत्ते णवुंसय-**

उत्तरार्धमें निबद्ध हुए इस अर्थकी स्पष्टरूपसे उपलब्धि होती है। अब इस प्रकार इस गाथा-सूत्रके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके चूर्णिसूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अब इस तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ २४४. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २४५. यह सूत्र सुगम है।

*** स्त्रीवेद और नपुंसकवेदको पुरुषवेदमें संक्रमित करता है, अन्यत्र नहीं।**

§ २४६. यह सूत्र सुगम है।

*** सात नोकषायोंको क्रोधसंज्वलनमें संक्रमित करता है, अन्यत्र नहीं।**

§ २४७. यह सूत्र भी सुगम है।

(८६) संज्वलत क्रोधको नियमसे संज्वलनमानमें संक्रमित करता है, संज्वलन-मानको नियमसे संज्वलन मायामें संक्रमित करता है और संज्वलन मायाको संज्वलन लोभमें संक्रमित करता है। उक्त १३ प्रकृतियोंका प्रतिलोम संक्रम नहीं होता ॥१३९॥

§ २४८. कषायोंके आनुपूर्वी संक्रमको पहलेकी भाष्यगाथामें संग्रह नहीं किया था उसका इस चौथी भाष्यगाथामें प्ररूपण किया ऐसा जानना चाहिये। यहाँपर 'पडिलोमो

वेदादि जो पुव्वाणुपुव्वीविसओ कमो परूविदो, एदेणेव कमेण संकमो होइ, पडिलोमेण पच्छाणुपुव्वीए संकमो णत्थि त्ति एसो अत्थो जाणाविदो। संपहि सुगमत्तादो वक्खाण-समाणाए एदिस्से गाहाए विवरणंतरं णाढवेयव्वं, किंतु गाहाबंधो चेव एदिस्से विहासा त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एदिस्से सुत्तपबंधो चेव विहासा।**

§ २४९. एतदुक्तं भवति—विहासा हि णाम कीरदे णिगूढत्थस्स सुत्तस्स अत्थणिण्णयकरणट्ठं। जत्थ पुण सुत्तबंधो चेव परिप्फुडत्थेहिं पबंधेहिं णिबद्धो तत्थ सो चेव सुत्तबंधो वक्खाणसरिसत्तादो सुगमो त्ति ण तत्थ वक्खाणंतरमाढवेयव्वं, सुगमत्थविहासाए गंथगउरवं मोत्तूण फलविसेसाणुवलंभादो त्ति। एवमेत्तिएण पबंधेण चउण्हं भासगाहाणमाणुपुव्वीसंकमविसयाणं विहासणं कादूण संपहि मूलगाहाए तदियत्थविसये चेव अण्णं पि किंचि विसेसंतरं जाणावेमाणो गाहासुत्तमुत्तरं भणइ—

(८७) जो जम्हि संछुहंतो णियमा बंधसरिसम्हि संछुहइ।
बंधेण हीणदरगे अहिए वा संकमो णत्थि ॥१४०॥

§ २५०. एसा पंचमी भासगाहा बज्झमाणपयडीसु संकामिज्जमाणाणं बज्झ-

संकमो णत्थि' ऐसा कहनेपर नपुंसकवेदसे लेकर पूर्वानुपूर्वी विषयक क्रम कहा गया है। इसी क्रमसे संक्रम होता है, प्रतिलोम अर्थात् पश्चादानुपूर्वी क्रमसे संक्रम नहीं होता इस प्रकार इस अर्थका ज्ञान कराया है। अब सुगम होनेसे इस गाथाका विवरण व्याख्यानके समान ही है, अतः इसका अलगसे विवरण आरम्भ नहीं किया गया है किन्तु गाथाकी रचना ही इसकी विभाषा है इस बातका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इस भाष्यगाथाका सूत्रप्रबन्ध ही विभाषा है।**

§ २४९. उक्त सूत्रका यह आशय है कि अत्यन्त गूढ़ अर्थवाले सूत्रके अर्थका निर्णय करनेके लिए विभाषा की जाती है। किन्तु जहाँपर सूत्रप्रबन्ध ही स्पष्ट अर्थप्रबन्धरूपसे निबद्ध है वहाँ वही सूत्रप्रबन्ध व्याख्यानके समान होनेसे सुगम है इसलिए वहाँ व्याख्यानान्तर आरम्भ नहीं किया गया है, क्योंकि सुगम अर्थकी विभाषा करनेपर ग्रन्थकी गुरुताको छोड़कर फलविशेष नहीं पाया जाता। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा आनुपूर्वी संक्रमकी विषयभूत चार भाष्य-गाथाओंकी विभाषा करके अब मूलगाथाके तीसरे अर्थके विषयमें ही और भी कुछ अन्य विशेषता-का ज्ञान कराते हुए आगेके गाथासूत्रको कहते हैं—

(८७) जो जीव जिस बध्यमान कर्ममें संक्रम करता है वह नियमसे बन्ध-प्रकृतिमें ही संक्रम करता है, तथा बन्धसे हीनतर बन्धस्थितियोंमें भी संक्रम करता है किन्तु बन्धसे अधिक सत्त्व स्थितिवाली प्रकृतिमें संक्रम नहीं करता ॥१४०॥

§ २५०. यह पाँचवीं भाष्यगाथा बध्यमान प्रकृतियोंमें संक्रमित होनेवाली बँधनेवाली और

माणाबज्झमाणपयडीणमेदेण सरूवेण संकमो होदि त्ति इममत्थविसेसं सत्थाणे उक्कड्डणविहिं च जाणावेइ। तं कधं? जो जीवो संसारावत्थाए वा खवगसेढीए वा वट्टमाणो जम्हि बज्झमाणपयडीए जं पदेसग्गमुक्कड्डियूण संछुहदि सो तम्हि चेव तं पदेसग्गमुक्कड्डिज्जमाणं कधं संछुहदि, किमविसेसेण सव्वासु ट्ठिदीसु, आहो अत्थि को विसेसो त्ति पुच्छाए णियमा बंधसरिसम्हि संछुहदि त्ति वुत्तं। एत्थ बंधग्गहणेण संपहिबंधस्स अग्गट्ठिदी घेत्तव्वा, ट्ठिदिबंधं पडि तिस्से चेव पहाणत्तदंसणादो। तेण बंधगट्ठिदीए सरिसपमाणेण णिरुद्धपदेसग्गमुक्कड्डियूण संछुहदि त्ति भणिदं होइ। एदमुक्कड्डणासंकमं पहाणं कादूण भणिदं।

§ २५१. ण केवलं बंधट्ठिदीए चेव सरिसं कादूणुक्कड्डदि, किंतु 'बंधेण हीणदरगे' एवं भणिदे बंधगट्ठिदीदो समयूणादिहेट्ठिमबंधगट्ठिदीसु वि आबाहाबाहिरएसु हेट्ठिमपदेसग्गं सत्थाणादो परत्थाणादो च उक्कड्डियूण संछुहदि त्ति वुत्तं होइ। 'अहिगे वा संकमो णत्थि' एवं भणिदे बंधगट्ठिदीदो उवरिमासु संतट्ठिदीसु उक्कड्डणासंकमो णत्थि त्ति अत्थो गहेयव्वो। एत्थतण 'वा' सद्दो समुच्चयट्ठो, तेण बंधादो हीणदरगे वि कहिं पि ट्ठिदिविसेसे उक्कड्डणासंकमो णत्थि त्ति वत्तव्वं, आबाहब्भंतरट्ठिदीसु बंधपढमणिसेगादो हीणदरियासु उक्कड्डणासंकमस्स अच्चंताभावेण पडिसिद्धत्तादो। तदो आबाहमुल्लंघियूण बंधपढमणिसेगमादिं कादूण जाव णवकबंधचरिमट्ठिदि त्ति एदेसु

नहीं बँधनेवाली प्रकृतियोंका इस रूपसे संक्रम होता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका और स्वस्थानमें उत्कर्षणविधिका ज्ञान कराती है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—जो जीव संसार अवस्थामें अथवा क्षपकश्रेणिमें विद्यमान होकर जिस बध्यमान प्रकृतिमें जिस प्रदेशपुंजको उत्कर्षण करके निक्षिप्त करता है वह उस बध्यमान प्रकृतिमें उत्कर्षित होनेवाले उस प्रदेशपुंजको कैसे निक्षिप्त करता है, क्या सामान्यरूपसे सब स्थितियोंमें निक्षिप्त करता है या कोई विशेषता है ऐसी पृच्छा होनेपर नियमसे बन्धके समान स्थितियोंमें निक्षिप्त करता है यह कहा गया है। यहाँ बन्धपदके ग्रहण करनेसे वर्तमान बन्धकी अग्र स्थिति ग्रहण करनी चाहिये, क्योंकि स्थितिबन्धकी अपेक्षा उसीकी प्रधानता देखी जाती है। इसलिये बन्धस्थितिके सदृश प्रमाणरूपसे विवक्षित प्रदेशपुंजको उत्कर्षित करके निक्षिप्त करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह उत्कर्षण संक्रमको प्रधान करके कहा है।

§ २५१. केवल बन्धस्थितिको ही सदृश करके उत्कर्षण करता है ऐसा नहीं है, किन्तु 'बंधेण हीणदरगे' ऐसा कहनेपर बन्धस्थितिसे आबाधाबाह्य एक समय हीन आदि अधस्तन बन्धस्थितियोंमें भी स्वस्थान प्रकृतिमेंसे और परस्थान प्रकृतिमेंसे अधस्तन प्रदेशपुंजका उत्कर्षण करके निक्षिप्त करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'अहिगे वा संकमो णत्थि' ऐसा कहनेपर बन्धस्थितिसे उपरिम सत्त्वस्थितियोंमें उत्कर्षण संक्रम नहीं होता यह अर्थ यहाँ ग्रहण करना चाहिये। यहाँ गाथामें आया हुआ 'वा' शब्द समुच्चयरूप अर्थमें आया है, इससे बन्धसे हीनतर स्थितिविशेषमें भी कहींपर उत्कर्षण संक्रम नहीं होता ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि बन्धके प्रथम

ट्ठिदिविसेसेसु उक्कड्डणाए णत्थि पडिसेहो, तत्तो उवरिमासु आबाहब्भंतरट्ठिदीसु च उक्कड्डणासंकमो णत्थि त्ति एसो एत्थ गाहासुत्तस्स समुदायत्थो। परपयडिसंकमो पुण समट्ठिदीए पयट्टमाणो बज्झमाणपयडीए उदयावलियबाहिरट्ठिदिमादिं कादूण जाव चरिमट्ठिदि त्ति बंधगट्ठिदीदो उवरिमासु ट्ठिदीसु वि ण पडिसिद्धो, तस्स बज्झमाणपयडीए बज्झमाणाबज्झमाणट्ठिदीसु उदयावलियबाहिरासु सव्वासु पयडीसु पडिबद्धत्तादो[1]। सुत्तेणाणुवइट्ठमेदं कधं णव्वदे ? ण, 'अहिए वा संकमो णत्थि' त्ति एत्थतण 'वा' सद्देण पयदत्थस्स संगहादो।

§ २५२. संपहि परपयडिसंकमो समट्ठिदीए पयट्टमाणो बंधगट्ठिदीदो हेट्ठिमोवरिमासेसट्ठिदीसु समयाविरोहेण पयट्टदि त्ति एदस्स णिदरिसणं। तं जहा—सादादिपयडीओ बंधमाणस्स असादादिट्ठिदिसंतमप्पणो उक्कस्सट्ठिदिबंधादो किंचूणो होदि। पुणो बज्झमाणसादट्ठिदीए अंतोकोडाकोडिप्पहुडि जावुक्कस्सेण पण्णारससागरोवमकोडाकोडिपमाणाए उवरि असादट्ठिदिं संकमेमाणो बंधट्ठिदीसु वि संकामेदि, बंधादो उवरिमट्ठिदीसु वि समयाविरोहेण संकामेदि, अण्णहा आवलियूण-तीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तसादुक्कस्सट्ठिदीए असंभवप्पसंगादो। एवं सामण्णेण संसारावत्थाए णिरुद्धपयडीणं ट्ठिदिबंधस्सुवरि इदरपयडीओ संकामिज्जंति। एवं खवगसेढीए वि बज्झमाणाबज्झमाणपयडीओ जहासंभवं संकामेमाणो बज्झमाणपयडीणं पच्चग्गबंधग-

निषेकसे हीनतर आबाधाके भीतरकी स्थितियोंमें उत्कर्षण संक्रमका अत्यन्त अभाव होनेसे वह निषिद्ध है। इस कारण स्थितिबन्धसे उपरिम सत्त्वस्थितियोंमें और आबाधाके भीतरकी स्थितियोंमें उत्कर्षणसंक्रम नहीं होता यह यहाँ गाथासूत्रका समुदायरूप अर्थ है। परन्तु पर-प्रकृतिसंक्रम समान स्थितिमें प्रवृत्त होता हुआ बध्यमान प्रकृतिकी उदयावलि बाह्य स्थितिसे लेकर अन्तिम स्थिततक बन्धस्थितिसे उपरिम स्थितियोंमें भी निषिद्ध नहीं है, क्योंकि उसका बध्यमान प्रकृतिकी अपेक्षा उदयावलि बाह्य बध्यमान और अबध्यमान सब स्थितियोंमें होनेका निषेध नहीं है।

शंका—सूत्रमें तो इसका निर्देश नहीं किया है फिर यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि 'अहिये वा संकमो णत्थि' इस प्रकार इस वचनमें आये हुए 'वा' पदसे प्रकृत अर्थका संग्रह हो जाता है।

§ २५२. अब पर-प्रकृतिसंक्रम समान स्थितिमें प्रवृत्त होता हुआ बन्धस्थितिसे अधस्तन और उपरिम समस्त स्थितियोंमें आगमके अविरोधपूर्वक प्रवृत्त होता है इसका उदाहरण, वह जैसे—साता आदि प्रकृतियोंका बन्ध करनेवाले जीवके, असाता आदि प्रकृतियोंका स्थितिसत्त्व, अपने उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे कुछ कम होता है। पुनः अन्तःकोड़ाकोड़ीसे लेकर उत्कृष्टरूपसे पन्द्रह कोड़ाकोड़ीप्रमाण बँधनेवाले सातावेदनीयकी स्थितिके ऊपर असातावेदनीयकी स्थितिको संक्रमाता हुआ बन्धस्थितियोंमें भी संक्रम करता है और बन्धसे उपरिम स्थितियोंमें भी आगमके अविरोधपूर्वक संक्रम करता है, अन्यथा सातावेदनीयकी एक आवलिकम तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिके असम्भव होनेका प्रसंग प्राप्त होता है। इस प्रकार सामान्यसे संसार अवस्थामें विवक्षित प्रकृतियोंके स्थितिबन्धके ऊपर इतर प्रकृतियोंको संक्रमाता है। इसी प्रकार क्षपकश्रेणिमें

१. ता०प्रतौ सव्वासु पडिबद्धत्तादो इति पाठः।

ट्ठिदीदो हेट्ठिमोवरिमट्ठिदीसु समट्ठिदीए संकामेदि त्ति घेत्तव्वं। संपहि एवंविहमेदस्स गाहासुत्तस्स अत्थं विहासेमाणो चुण्णिसुत्तयारो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** विहासा।**

§ २५३. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ २५४. सुगमं।

*** जो जं पयडिं संछुहदि णियमा बज्झमाणीए ट्ठिदीए संछुहदि।**

भी बध्यमान और अबध्यमान प्रकृतियोंको यथासम्भव संक्रमाता हुआ बध्यमान प्रकृतियोंके वर्तमान बन्धस्थितिसे अधस्तन और उपरिम स्थितियोंमें समान स्थितिके अनुसार संक्रमाता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँपर उत्कर्षण और संक्रमका खुलासा करनेके प्रसंगसे सर्वप्रथम उत्कर्षणके विषयमें इस प्रकार खुलासा किया है—(१) चाहे बध्यमान प्रकृति हो या अबध्यमान उसका तत्काल बँधनेवाले समान जातीय कर्ममें उत्कर्षण होता हुआ जितना नया बन्ध हो उसकी अग्र-स्थिति तक ही हो सकता है, आगे नहीं। यह गाथामें आये हुए 'बन्धसरिसम्हि' पदसे स्पष्ट होता है। (२) यदि बध्यमान या अबध्यमान प्रकृतिकी वर्तमान स्थिति योग्यता तत्काल बँधनेवाले कर्मके स्थितिबन्धसे कम हो तो उसका तत्काल बँधनेवाले कर्ममें वहीं तक उत्कर्षण होगा जितनी उत्कर्षित होनेवाले उन कर्मोंकी वह योग्यता हो यह गाथामें आये हुए 'हीणदरगे' इस पदका आशय है। उत्कर्षित होनेवाला पूरा द्रव्य तत्काल बन्धकी मात्र अग्र स्थितिमें ही निक्षिप्त नहीं होता है किन्तु बन्धस्थितिकी आबाधासे ऊपर प्रथम निषेकसे लेकर उसका निक्षेप होता है यह भी उक्त सूत्रवचनका तात्पर्य है। (३) वर्तमान समयमें होनेवाला स्थितिबन्ध कम हो और उसकी सत्त्वस्थिति अधिक हो तो बन्धस्थितिसे ऊपरकी सत्त्वस्थितिमें उत्कर्षण नहीं होता यह गाथासूत्रके 'अहिगे वा संकमो णत्थि' इस अंशसे ज्ञात होता है। (४) जिस समय जितना स्थिति-बन्ध हो उससे उपरिम सत्त्वस्थितियोंमें उत्कर्षण होकर निक्षेप नहीं होता और न ही आबाधाके भीतर ही यह पूरे कथनका तात्पर्य है। (५) पर-प्रकृतिसंक्रमके लिए यह नियम है कि उदयावलिके भीतरके निषेकोंमें परप्रकृतिसंक्रम नहीं होता। (६) यदि बन्ध कम स्थितिवाला हो रहा हो और सत्त्वस्थिति अधिक हो तो भी उदयावलिके बाहर उसमें सर्वत्र परप्रकृति संक्रम होनेमें कोई बाधा नहीं आती। इतना अवश्य है कि परप्रकृति संक्रम बध्यमान और अबध्यमान सजातीय सभी प्रकृतियोंका बध्यमान सभी प्रकृतियोंकी उदयावलि बाह्य सभी स्थितियोंमें होता है यह सूत्रगाथामें आये हुए 'वा' पदसे ज्ञात होता है। शेष कथन सुगम है।

*** उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा।**

§ २५३. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २५४. यह सूत्र भी सुगम है।

*** जो जीव जिस प्रकृतिको संक्रमित करता है वह नियमसे बध्यमान स्थितिमें ही संक्रमित करता है।**

§ २५५. एदेण सुत्तेण गाहापुव्वद्धमस्सियूण उकड्डणासंकमस्स पच्चग्गबंधस्स अग्गट्ठिदी मज्जादाभावेण णिद्दिट्ठा।

*** एसा पुरिमद्धस्स विहासा।**

§ २५६. सुगमं।

*** पच्छिमद्धस्स विहासा।**

§ २५७. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ २५८. सुगमं।

*** जं बंधदि ट्ठिदिं तिस्से वा तत्तो हीणाए वा संछुहदि।**

§ २५९. एदेण सुत्तेण 'बंधेण हीणदरगे' इच्चेदं सुत्तावयवमस्सियूण गाहा-पुव्वद्धवट्ठिदत्थसंभालणपुरस्सरं बंधगट्ठिदीदो हेट्ठिमासु वि आबाहाबाहिरट्ठिदीसु उक्कड्डणासंकमस्स पवुत्तिविसेसो जाणाविदो। सेसं सुगमं।

*** अबज्झमाणासु ट्ठिदीसु ण उक्कड्डिज्जदि।**

§ २६०. एदेण सुत्तेण 'अहिए वा संकमो णत्थि' त्ति एदं गाहासुत्तस्स चरिमा-वयवमस्सियूण बंधगट्ठिदीदो उवरिमासु अबज्झमाणट्ठिदीसु हेट्ठिमासु च 'वा' सद्दसूचि-

---

§ २५५. इस सूत्र द्वारा गाथासूत्रके पूर्वार्धका आलम्बन लेकर उत्कर्षण संक्रमकी अपेआ नवीन बन्धकी अग्रस्थिति मर्यादारूपसे निर्दिष्ट की गई है।

*** यह गाथासूत्रके पूर्वार्धकी विभाषा है।**

§ २५६. यह सूत्र सुगम है।

*** अब उत्तरार्धका विभाषा करते हैं।**

§ २५७. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २५८. यह सूत्र सुगम है।

*** जिस स्थितिको बाँधता है उसमें अथवा उससे हीन स्थितिमें संक्रमित करता है।**

§ २५९. इस सूत्र द्वारा 'बंधेण हीणदरगे' इस प्रकार सूत्रके इस अवयवका आलम्बन लेकर गाथाके पूर्वार्धमें अवस्थित अर्थकी सँम्हाल करनेके साथ बन्धस्थितिसे अबाधाबाह्य अधस्तन स्थितियोंमें भी उत्कर्षण संक्रमकी प्रवृत्तिविशेषका ज्ञान कराया गया है। शेष कथन सुगम है।

*** मात्र अबध्यमान स्थितियोंमें उत्कर्षण करके निक्षित नहीं करता है।**

§ २६०. इस सूत्र द्वारा 'अहियं वा संकमो णत्थि' इस प्रकार गाथासूत्रके इस अन्तिम अवयवका आलम्बन लेकर बन्धस्थितिसे ऊपरकी अबध्यमान स्थितियोंमें और 'वा' शब्द

दासु आबाहब्भंतरट्ठिदीसु उक्कड्डणासंकमस्स पडिसेहो कदो दट्ठव्वो ।

*** समट्ठिदिगं तु संकामेज्ज ।**

§ २६१. एवं भणिदे जं परपयडिसंकमेण संकामिज्जदि पदेसग्गं तं बज्झमाणपयडीणं बज्झमाणाबज्झमाणट्ठिदीसु उदयावलियं मोत्तूण सव्वत्थ समट्ठिदीए संकामिज्जदि त्ति एसो अत्थो जाणाविदो । एवं पंचमीए भासगाहाए विहासा समत्ता ।

(८८) संकामगपट्ठवगो माणकसायस्स वेदगो कोधं ।
संछुहदि अवेदेंतो माणकसाये कमो सेसे ॥१४१॥

§ २६२. एसा छट्ठभासगाहा संकमणपट्ठवगसंबंधेण पुरदो भविस्समाणमत्थविसेसं संकमणाविसयं जाणावेदि त्ति । तं जहा—'संकामगपट्ठवगो' एवं भणिदे जो एसो संकामगपट्ठवगो अंतरदुसमयकदावत्थाए वट्टमाणओ सो चेव जहावुत्तपरिवाडीए णवणोकसाए संछुहिय तदो अस्सकण्णकरणादिकिरियाओ जहावसरमेव कादूण कोहसंजलणचिराणसंतकम्मं सव्वसंकमेण संछुहिय जाधे माणकसायस्स संकामणपट्ठवगो जादो ताधे कोहसंजलणदुसमयूणदोआवलियमेत्तणवकबंधसरूवं माणसंजलणम्मि संछुहमाणो कोधमवेदेंतो माणवेदगो चेव होदूण संछुहइ, माणवेदगद्धाए दुसमयूणदो-

द्वारा सूचित होनेवाली नीचेकी अबाधाके भीतरकी स्थितियोंमें उत्कर्षण करके निक्षिप्त करनेका निषेध किया गया जानना चाहिये ।

*** किन्तु समान स्थितिगत द्रव्यका संक्रम करता है ।**

§ २६१. ऐसा कहनेपर जिस प्रदेशपुंजका परप्रकृतिसंक्रमके द्वारा संक्रम कराया जाता है उसे बध्यमान प्रकृतियोंकी बध्यमान और अबध्यमान स्थितियोंमें उदयावलिको छोड़कर सर्वत्र समान स्थितिमें संक्रमित करता है इस प्रकार इस अर्थका ज्ञान कराया गया है । इस प्रकार पाँचवीं भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त हुई ।

(८८) मान कषायका वेदक संक्रामकप्रस्थापक जीव क्रोधसंज्वलनका वेदन नहीं करते हुए उसे मान कषायमें संक्रमित करता है । शेष संज्वलन कषायोंमें भी यही क्रम है ॥१४१॥

§ २६२. यह छटी भाष्यगाथा संक्रमणप्रस्थापकके सम्बन्धसे आगे कहे जानेवाले संक्रमणविषयक अर्थविशेषका ज्ञान कराती है । वह जैसे—संकामगपट्ठवगो' ऐसा कहनेपर जो यह अन्तर द्विसमयकृत अवस्थामें विद्यमान संक्रामकप्रस्थापक जीव है वही यथोक्त परिपाटीसे नौ नोकषायोंका संक्रम करके तत्पश्चात् अश्वकर्णकरण आदि क्रियाओंको यथावसर करके क्रोधसंज्वलनके पुराने सत्कर्मका सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रम करके जब मान कषायका संक्रामणप्रस्थापक हो जाता है तब क्रोधसंज्वलनके दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्धको मानसंज्वलनमें संक्रमित करता है । उस समय यह जीव क्रोधसंज्वलनका नहीं वेदन करते हुए और मानसंज्वलनका ही वेदक होकर संक्रमित करता है, क्योंकि मानवेदक कालके दो समय कम दो आवलिप्रमाण कालके भीतर

आवलियमेत्तकालब्भंतरे तहा चेव तप्पवुत्तिदंसणादो। 'माणकसाये कमो सेसे' एवं भणिदे माणकसायसंकामणपट्ठवगस्स संधीए जहा एसो णवकबंधसमयपबद्धाणं संकामणक्कमो परूविदो एवं सेसकसायाणं पि संकामणपट्ठवगस्स संधीए परूवेयव्वो त्ति वुत्तं होइ। तदो माणं वेदेंतो कोहसंजलणस्स दुसमयूणदोआवलियमेत्तणवकबंधं संकामेदि, मायं वेदेंतो माणसंजलणस्स णवकबंधं संकामेदि, लोभं च वेदेमाणो मायासंजलणस्स णवकबंधं संकामेदि त्ति एसो एदस्स गाहासुत्तस्स समुदायत्थो। संपहि एदिस्से छट्ठभासगाहाए विहासणट्ठमिदमाह—

* विहासा।

§ २६३. सुगमं।

* जहा।

§ २६४. सुगमं।

*** माणकसायस्स संकामगपट्ठवगो माणं चेव वेदेंतो कोहस्स जे दोआवलियबंधा दुसमयूणा ते माणे संछुहदि।**

§ २६५. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमेदाहिं एक्कारसभासगाहाहिं तिसु अत्थेसु पडिबद्धाहिं विदियमूलगाहाविहासं समाणिय पयदत्थमुवसंहरेमाणो इदमाह—

उसी प्रकार उसकी प्रवृत्ति देखी जाती है। माणकसाये कमो सेसे' ऐसा कहनेपर मानकषायके संक्रामणप्रस्थापकके सन्धिकालमें जिस प्रकार यह नवकबन्धके समयप्रबद्धोंके संक्रामणका क्रम कहा है इसी प्रकार शेष कषायोंके भी संक्रामणप्रस्थापकके सन्धिकालमें प्ररूपण करना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिए मानका वेदन करते हुए क्रोधसंज्वलनके दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्धको मानसंज्वलनमें संक्रमित करता है। मायाका वेदन करते हुए मानसंज्पलनके नवकबन्धको मायामें संक्रमित करता है, तथा लोभका वेदन करनेवाला जीव मायासंज्वलनके नवकबन्धको लोभ संज्वलनमें संक्रमित करता है इस प्रकार गाथासूत्रका यह समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस छटी भाष्यगाथाकी विभाषा करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अब उक्त गाथासूत्रकी विभाषा करते हैं।

§ २६३. यह सूत्र सुगम है।

* जैसे।

§ २६४. यह सूत्र सुगम है।

*** मानकषायका संक्रामकप्रस्थापक जीव मानकषायका ही वेदन करते हुए क्रोधसंज्वलनके जो दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध हैं उन्हें मानसंज्वलनमें संक्रमित करता है।**

§ २६५. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार तीन अर्थोंमें प्रतिबद्ध इन ग्यारह भाष्यगाथाओं द्वारा दूसरी मूलगाथाकी विभाषा समाप्त करके प्रकृत अर्थका उपसंहार करते हुए आगेके इस सूत्रको कहते हैं—

*** विदियमूलगाहा त्ति विहासिदा समत्ता भवदि । एत्तो तदियमूलगाहा ।**

§ २६६. एत्तो उवरि तदियमूलगाहा विहासियव्वा त्ति वुत्तं होइ ।

*** जहा ।**

§ २६७. तं जहा त्ति भणिदं होदि । एवं च पुच्छाविमईकयाए तदियमूलगाहाए एसो अवयारो—

(८९) बंधो व संकमो वा उदयो वा तह पदेस-अणुभागे ।
अधिगो समो व हीणो गुणेण किं वा विसेसेण ॥१४२॥

§ २६८. एसा तदियमूलगाहा बंधसंकमोदयाणमणुभागपदेसविसयाणं संकामणपट्ठवयम्मि थोवबहुत्तगवेसणट्ठमोइण्णा । तं कधं ? 'बंधो वा संकमो वा' बंधो संकमो उदयो वा मोहादिकम्मेसु पयट्टमाणो 'पदेस-अणुभागे' पदेसाणुभागविसयो किं समो वा हीणो वा अहियो वा होदि त्ति एसा पढमा पुच्छा । एदिस्से भावत्थो—किमणुभागबंधविसयबंधसंकमोदया अण्णोण्णं पेक्खियूण सरिसा विसरिसा वा, विसरिसा वि होंता किमण्णदरं पेक्खियूण सेसा अहिया हीणा वा होंति । एवं पदेस-

---

*** दूसरी मूलगाथाकी विभाषा समाप्त होती है । इससे आगे तीसरी मूलगाथा है ।**

§ २६६. इससे आगे तीसरी मूलगाथाकी विभाषा करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** जैसे ।**

§ २६७. 'वह जैसे' यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार पृच्छाकी विषय की गई तीसरी मूलगाथाका अवतार करते हैं—

(८९) संक्रामक प्रस्थापक जीवके प्रदेश और अनुभाग विषयक बन्ध, संक्रम क्या और उदय अधिक होते हैं, क्या समान होते हैं या क्या हीन होते हैं । तथा प्रदेश और अनुभागविषयक ये बन्ध, संक्रम और उदय परस्पर गुणकाररूपसे क्या अधिक या हीन होते हैं अथवा संख्यात, असंख्यात और अनन्तभागप्रमाण विशेषरूपसे हीन या अधिक होते हैं ॥१४२॥

§ २६८. यह तीसरी मूलगाथा संक्रामणप्रस्थापक जीवके अनुभाग और प्रदेशविषयक बन्ध, संक्रम और उदयके अल्पबहुत्वका अनुसन्धान करनेके लिये आई है, वह कैसे ? मोहादि कर्मोंमें प्रवृत्त होता हुआ 'पदेस-अणुभागे' प्रदेश और अनुभागविषयक 'बंधो वा संकमो वा' बन्ध, संक्रम और उदय क्या समान है या हीन है या अधिक है इस प्रकार यह पहली पृच्छा है ? इसका भावार्थ— क्या अनुभागबन्धविषयक बन्ध, संक्रम और उदय परस्परकी अपेक्षा सदृश होते हैं या विदृश ? विदृश होते हुए क्या किसी एककी अपेक्षा विशेष अधिक होते हैं या विशेष हीन होते

विसयाणं पि बंधसंकमोदयाणं पुच्छा कायव्वा त्ति। संपहि हीणाहियभावे वि संते तत्थ किं गुणेण हीणाहियभावो, आहो विसेसेणेति जाणावणट्ठं विदियो पुच्छाणिद्देसो 'गुणेण किं वा विसेसेणेत्ति। एतदुक्तं भवति—पदेसाणुभागविसया बंधोदयसंकमा किमण्णोण्णं पेक्खियूण जहासंभवं संखेज्जासंखेज्जाणंतगुणेण अहिया हीणा वा होंति, आहो संखेज्जासंखेज्जाणंतभागेण हीणा अहिया वा होंति त्ति। तदो एवंविहत्थपरूवणाए पुच्छामुहेण एसा तदियमूलगाहा णिबद्धा त्ति सिद्धं। एत्थ वा सद्दा समुच्चयट्ठा पाद-पूरणट्ठा वा दट्ठव्वा। संपहि एवंविहत्थपडिबद्धाए एदिस्से तदियमूलगाहाए विहासणट्ठं तत्थ इमाओ चत्तारि भासगाहाओ होंति, अण्णहा मूलगाहासूचिदत्थाणं फुडीकरणो-वायाभावादो त्ति जाणावणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** एदिस्से चत्तारि भासगाहाओ।**

§ २६९. एदिस्से तदियमूलगाहाए विहासणट्ठमेत्थ चत्तारि भासगाहाओ होंति त्ति भणिदं होदि।

*** भासगाहा समुक्कित्तणा। समुक्कित्तिदाए व अत्थविभासं भणिस्सामो।**

§ २७०. भासगाहाणं पादेक्कमुच्चारणं काढूण तदत्थविभासाए कीरमाणाए

हैं? इसी प्रकार प्रदेशविषयक बन्ध, संक्रम और उदयके विषयमें भी पृच्छा करनी चाहिये? अब हीनाधिक भावके होनेपर भी प्रकृतमें गुणकाररूपसे हीनाधिकभाव होता है या विशेषरूपसे हीनाधिकभाव होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'गुणेण किं वा विसेसेण' इस प्रकार दूसरी पृच्छाका निर्देश किया गया है। उक्त कथनका तात्पर्य यह है कि प्रदेश और अनुभागविषयक बन्ध, उदय और संक्रम परस्पर देखते हुए यथासम्भव क्या संख्यात, असंख्यात और अनन्तगुणे अधिक या हीन होते हैं। अथवा संख्यात, असंख्यात और अनन्तभाग हीन या अधिक होते हैं? इसलिए इस प्रकारके अर्थकी प्ररूपणाको लक्ष्य कर पृच्छामुखसे यह तीसरी मूलगाथा निबद्ध हुई है यह सिद्ध होता है। यहाँ मूलगाथामें निबद्ध 'वा' शब्द समुच्चयरूप या पादपूर्तिके लिये जानना चाहिये। अब इस प्रकारकी अर्थकी प्ररूपणासे सम्बन्ध रखनेवाली इस तीसरी मूलगाथाकी विभाषा करनेके लिये उस विषयमें ये चार भाष्यगाथाएँ होती हैं, अन्यथा मूलगाथाके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थोंका स्पष्टीकरण करनेका अन्य कोई उपाय नहीं पाया जाता। इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इस तीसरी मूलगाथाकी चार भाष्यगाथाएँ हैं।**

§ २६९. इस तीसरी मूलगाथाकी विभाषा करनेके लिए चार भाष्यगाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** भाष्यगाथाओंके उच्चारणका नाम उनकी समुत्कीर्तना है। इस प्रकार समुत्कीर्तना करनेपर उन भाष्यगाथाओंके अर्थका क्रमसे विशेष व्याख्यान करेंगे।**

§ २७०. भाष्यगाथाओंमेंसे प्रत्येकका उच्चारण करके उनके अर्थकी विभाषा करनेपर

तासिं समुदायसमुक्कित्तणा वि समुक्कित्तिदा चेव होइ। तदो तासिं समुदायसमुक्कित्तणं मोत्तूण पादेक्कमुच्चारणं कुणमाणो चेव अत्थविहासणं कस्सामो त्ति भणिदं होइ। अधवा एदासिं भासगाहाणं समुक्कित्तणा असीदिसदगाहाणं मज्झे गाहासुत्तयारेण समुक्कित्तिदा चेव, किं कारणमेदिस्से मूलगाहाए चउण्हं भासगाहाणं तत्थंतब्भूदत्त-[1] दंसणादो। तदो तासिं समुदायसमुक्कित्तणाए विणा पादेक्कमुच्चारणापुरस्सरमत्थ-विहासणमेत्थ कस्सामो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो।

* तं जहा।

§ २७१. सुगमं। एवं पुच्छाविसईकयाणं चउण्हं भासगाहाणं जहाकमं समुक्कित्तणमत्थविहासणं च कुणमाणो इदमाह—

(९०) बंधेण होइ उदओ अहिओ उदएण संकमो अहिओ।
गुणसेढि अणंतगुणा बोद्धव्वा होइ अणुभागे ॥१४३॥

§ २७२. एसा पढमभासगाहा अणुभागविसयाणं बंधोदयसंकमाणं थोवबहुत्तं परूवेदि। तं कधं? अणुभागविसओ बंधो थोवो, बंधादो उदओ अहिओ, उदयादो संकमो अहिओ होदि। सो च अहियभावो अणंतगुणाए सेढीए होदि, णाण्णहा त्ति जाणावणट्ठं 'गुणसेढि अणंतगुणा' त्ति भणिदं होदि, बंधादीणं गुणगारसेढी

उनके समुदायकी समुत्कीर्तना भी समुत्कीर्तित हो जाती है। इसलिये उनके समुदायकी समुत्कीर्तनाको छोड़कर प्रत्येकका उच्चारण करते हुए ही अर्थकी विभाषा करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अथवा इन भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना एकसौ अस्सी गाथाओंके मध्य गाथासूत्रकारने कही ही है, क्योंकि इस मूलगाथाकी चार भाष्यगाथाओंका उन गाथाओंमें अन्तर्भाव देखा जाता है, इसलिए उनका समुदायरूप समुत्कीर्तनाके बिना ही प्रत्येकके उच्चारणपूर्वक अर्थकी विभाषा यहाँपर करेंगे इस प्रकार यह उक्त सूत्रके अर्थका तात्पर्य है।

* वह जैसे।

§ २७१. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार पृच्छाकी विषय की गईं चार भाष्यगाथाओंका क्रमसे समुत्कीर्तन और अर्थकी विभाषा करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

(९७) अनुभागविषयक बन्धसे उदय अधिक होता है और उदयसे संक्रम अधिक होता है। यहाँ अधिकका प्रमाण अनन्तगुणित श्रेणिरूप जानना चाहिये ॥१४३॥

§ २७२. यह प्रथम भाष्यगाथा अनुभागविषयक बन्ध, उदय और संक्रमके अल्पबहुत्वका कथन करती है।

शंका—वह कैसे?

समाधान—अनुभागविषयक बन्ध सबसे स्तोक होता है। बन्धसे उदय अधिक होता है और उदयसे संक्रम अधिक होता है। तथा वह अधिकपना अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे होता है, अन्य प्रकारसे नहीं होता इस बातका ज्ञान करानेके लिये 'गुणसेढि अणंतगुणा' यह कहा है।

१. प्रतिषु तत्थ तब्भूदत्त —इति पाठः।

पयारंतरपरिहारेणाणंतगुणा चेव होइ त्ति भणिदं होदि। एत्थ 'अणुभागे' त्ति णिद्देसो एदस्स थोवबहुत्तस्स तव्विसयत्तजाणावणफलो त्ति णिच्छेयव्वो। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासिदुकामो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

*** विहासा।**

§ २७३. सुगमं।

*** अणुभागेण बंधो थोवो।**

§ २७४. कुदो? पच्चग्गबंधसरूवत्तादो।

*** उदओ अणंतगुणो।**

§ २७५. कुदो? चिराणसंताणुभागसरूवत्तादो।

*** संकमो अणंतगुणो।**

२७६. किं कारणं? अणुभागसंतकम्ममुदए णिवदमाणं अणंतगुणहीणं होदूण णिवददि। संकमो पुण चिराणसंतकम्मं तदवत्थं चेव होदूण परपयडीए संकमदि, तेण कारणेणाणंतगुणो संकमो जादो। घादिकम्मविवक्खाए एदमप्पाबहुअं भणिदं, अघादिकम्माणं पि जाणिदूण वत्तव्वं। एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता।

*** विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।**

बन्धादिककी गुणकारश्रेणि अन्य प्रकारसे न होकर अनन्तगुणी ही होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। सूत्रमें 'अणुभागे' इस पदका निर्देश इस अल्पबहुत्वके उसके विषयका ज्ञान करानेके प्रयोजनसे किया गया है ऐसा निश्चय करना चाहिये। अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करनेकी इच्छासे चूर्णिसूत्रकार आगे विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

*** अब भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ २७३. यह सूत्र सुगम है।

*** अनुभागकी अपेक्षा बन्ध सबसे स्तोक होता है।**

§ २७४. क्योंकि यह तत्काल होनेवाले बन्धस्वरूप है।

*** बन्धसे उदय अनन्तगुणा होता है।**

§ २७५. क्योंकि यह चिरकालीन अनुभागस्वरूप है।

*** उदयसे संक्रम अनन्तगुणा होता है।**

§ २७६. क्योंकि अनुभागसत्कर्म उदयमें प्राप्त होता हुआ अनन्तगुणा हीन होकर ही प्राप्त होता है, परन्तु संक्रम चिरकालीनसत्कर्म तदवस्थ होकर ही परप्रकृतिरूपसे संक्रमित होता है, इस कारण संक्रम अनन्तगुणा हो जाता है। यहाँ घातिकर्मोंकी विवक्षामें यह अल्पबहुत्व कहा है। तथा अघातिकर्मोंका जानकर कहना चाहिये। इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई।

*** अब दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ २७७. सुगममेदं ।

(९१) बंधेण होइ उदओ अहिओ उदएण संकमो अहिओ ।
गुणसेढी असंखेज्जा च पदेसग्गेण बोद्धव्वा ॥१४४॥

§ २७८. एदीए विदियभासगाहाए पदेसविसयाणं बंधादीणं थोवबहुत्तमुवइट्ठं दट्ठव्वं । बंधादो उदयस्स उदयादो संकमस्स असंखेज्जगुणाए सेढीए अहियभावस्स मुत्तकंठमेत्थुवएसदंसणादो । एत्थ पच्छद्धे एवं पदसंबंधो कायव्वो—पदेसग्गेण विसेसिदाणं बंधादिपदाणं गुणसेढी असंखेज्जगुणा चेव बोद्धव्वा, पयदविसये पयारंतरासंभवादो त्ति । एत्थ 'गुणसेढि' त्ति वुत्ते गुणगारपंती गहेयव्वा । संपहि एदिस्से गाहाए विहासणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** विहासा ।**

§ २७९. सुगमं ।

*** जहा ।**

§ २८०. सुगमं ।

*** पदेसग्गेण बंधो थोवो । उदयो असंखेज्जगुणो । संकमो असंखेज्जगुणो ।**

---

§ २७७. यह सूत्र सुगम है ।

(९१) प्रदेशपुंजकी अपेक्षा बन्धसे उदय अधिक होता है और उदयसे संक्रम अधिक होता है, अतः प्रकृतमें गुणश्रेणि असंख्यातगुणी जाननी चाहिये ॥१४४॥

§ २७८. इस दूसरी भाष्यगाथा द्वारा प्रदेशविषयक बन्धादिके अल्पबहुत्वको उपदिष्ट जानना चाहिये, क्योंकि बन्धसे उदय और उदयसे संक्रम असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे अधिक होता है इसका मुक्तकण्ठ प्रकृतमें उपदेश देखा जाता है । यहाँ उत्तरार्धमें इस प्रकार पदसम्बन्ध करना चाहिये—प्रदेशपुंजकी अपेक्षा विशेषताको प्राप्त बन्धादिक पदोंकी गुणश्रेणि असंख्यातगुणी ही जाननी चाहिये । यहाँपर 'गुणसेढि' ऐसा कहनेपर गुणकारपंक्ति ग्रहण करनी चाहिये । अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करनेके लिये इस सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।**

§ २७९. यह सूत्र सुगम है ।

*** जैसे ।**

§ २८०. यह सूत्र सुगम है ।

*** प्रदेशपुंजकी अपेक्षा बन्ध सबसे स्तोक होता है । बन्धसे उदय असंख्यातगुणा होता है और उदयसे संक्रम असंख्यातगुणा होता है ।**

§ २८१. पदेसग्गेण णिहालिज्जमाणे बंधोदयसंकमाणं समाणकालभावीणं थोव-बहुत्तमेवं[1] होदि त्ति वुत्तं होदि। तत्थ बंधो थोवो त्ति वुत्ते पुरिसवेदादिसु जस्स वा तस्स वा बज्झमाणस्स कम्मस्स णवकबंधो एगसमयपबद्धमेत्तो होदूण थोवो त्ति घेत्तव्वो। 'उदओ असंखेज्जगुणो' एवं भणिदे वेदिज्जमाणस्स जस्स वा तस्स वा आउगवज्जस्स कम्मस्स उदओ गुणसेढीगोवुच्छामाहप्पेणासंखेज्जसमयपबद्धमेत्तो होदूणासंखेज्जगुणो जादो। 'संकमो असंखेज्जगुणो' एवं भणिदे जेसिं गुणसंकमो अत्थि तेसिं गुणसंकमदव्वं जेसिं च अधापवत्तसंकमो तेसिमधापवत्तसंकमदव्वमसंखेज्ज-समयपबद्धपमाणं होदूण पुव्विल्लादो उदयदव्वादो असंखेज्जगुणमिदि घेत्तव्वं। होदु णाम जेसिं गुणसंकमो अत्थि तेसिं गुणसंकमदव्वमुदयादो असंखेज्जगुणमिदि गुण-संकमभागहारादो ओकड्डुक्कड्डणभागहारस्सासंखेज्जगुणत्तमस्सियूण तत्थ तहाभाव-सिद्धीए विसंवादाभावादो। अधापवत्तसंकमदव्वस्स पुण उदयगदगुणसेढीगोवुच्छ-दव्वादो असंखेज्जगुणत्तणिद्देसो ण घडदे, सव्वत्थोकड्डुक्कड्डणभागहारादो अधापवत्त-भागहारस्सासंखेज्जगुणत्तदंसणादो त्ति? एत्थ परिहारो उच्चदे—ण ओकड्डिदसव्वदव्वं गुणसेढीए चेव णिवददि, तदसंखेज्जदिभागस्सेव तत्थ णिक्खेवदंसणादो। तदो तब्भाग-हारपाहम्मेण उदयादो संकमदव्वस्सासंखेज्जगुणत्तमेदं ण विरुज्झदि त्ति घेत्तव्वं।

§ २८१. प्रदेशपुंजकी अपेक्षा देखनेपर समान कालभावी बन्ध, उदय और संक्रमका अल्प-बहुत्व इस प्रकार होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। सूत्रमें 'बंधो थोवो' ऐसा कहनेपर पुरुष-वेद आदिमेंसे जिस किसी बँधनेवाले कर्मका एक समयप्रबद्धप्रमाण नवकबन्ध होकर स्तोक होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। 'उदओ असंखेज्जगुणो' ऐसा कहनेपर वेदे जानेवाले आयुकर्मको छोड़कर जिस किसी कर्मका उदय गुणश्रेणिगोपुच्छाके माहात्म्यवश असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होकर असंख्यातगुणा हो गया है। 'संकमो असंखेज्जगुणो' ऐसा कहनेपर जिन कर्मोंका गुणसंक्रम होता है उनका संक्रमद्रव्य और जिन कर्मोंका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है उनका अधःप्रवृत्तसंक्रमद्रव्य असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होकर पूर्वके उदयद्रव्यसे असंख्यातगुणा होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

शंका—जिन कर्मोंका गुणसंक्रम होता है उनका गुणसंक्रमद्रव्य उदयद्रव्यकी अपेक्षा असं-ख्यातगुणा होओ, क्योंकि गुणसंक्रमभागहारसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार असंख्यातगुणा है, अतः उसका आलम्बन लेकर वहाँ उस प्रकारकी सिद्धि होनेमें विसंवाद नहीं पाया जाता, परन्तु उदय-प्राप्त गुणश्रेणिगोपुच्छाके द्रव्यसे अधःप्रवृत्तसंक्रमद्रव्य असंख्यातगुणा है यह निर्देश घटित नहीं होता, क्योंकि सर्वत्र अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे अधःप्रवृत्त भागहार असंख्यातगुणा देखा जाता है?

समाधान—यहाँ इस शंकाका परिहार करते हैं, ऐसा नियम है कि अपकर्षित सम्पूर्ण द्रव्य गुणश्रेणिमें ही निक्षिप्त नहीं होता है क्योंकि उसके असंख्यातवें भागका ही गुणश्रेणिमें निक्षेप देखा जाता है, इसलिये उस भागहारकी प्रधानतावश उदयसे संक्रमद्रव्य असंख्यातगुणा है इस प्रकार यह कथन विरुद्ध नहीं है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

१. प्रतिषु -मेव इति पाठः।

§ २८२. एवं विदियभासगाहाए अत्थविहासं समाणिय संपहि तदियभासगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं समुक्कित्तणं च कुणमाणो उत्तरं सुत्तपबंधमाह—

*** तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ २८३. सुगमं ।

(९२) उदओ च अणंतगुणो संपहिबंधेण होइ अणुभागे ।
से काले उदयादो संपहिबंधो अणंतगुणो ॥१४५॥

§ २८४. एसा तदियभासगाहा बंधोदयपदाणमणुभागविसयाणं कालेण विसेसियूण थोवबहुत्तपरूवणट्ठमोइण्णा । तं जहा—'उदओ च अणंतगुणो' एवं भणिदे वट्टमाणसमयपबद्धादो वट्टमाणसमये उदओ अणंतगुणो त्ति दट्ठव्वो । किं कारणं ? चिराणसंतसरूवत्तादो । जइ वि एसो अत्थो पुव्विल्लभासगाहादो चेव अवगओ तो वि एदस्साणुवादं कादूण तदणंतरसमयबंधोदयाणमेदेण सह सण्णियासकरणट्ठमेसो गाहापुव्वद्धो भणिदो । 'से काले उदयादो' एवं भणिदे णिरुद्धसमयादो तदणंतरोवरिमसमए जो उदओ अणुभागविसओ तत्तो एसो संपहियसमयपबद्धो अणंतगुणो त्ति दट्ठव्वो । कुदो एवं चे ? समए समए अणुभागोदयस्स विसोहिपाहम्मेणाणंतगुण-

§ २८२. इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब तीसरी भाष्यगाथाकी अवसरके अनुसार प्राप्त हुई अर्थविभाषा और समुत्कीर्तना करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अब तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।**

§ २८३. यह सूत्र सुगम है ।

(९२) अनुभागकी अपेक्षा वर्तमानकालीन बन्धसे वर्तमानकालीन उदय अनन्तगुणा होता है । तथा तदनन्तर समयमें होनेवाले उदयसे वर्तमान समयमें होनेवाला बन्ध अनन्तगुणा होता है ॥१४५॥

§ २८४. यह तीसरी भाष्यगाथा कालको विशेषण करके अनुभागविषयक बन्ध और उदयपदोंके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए अवतरित हुई है । वह जैसे—'उदओ अणंतगुणो' ऐसा कहनेपर वर्तमान समयमें होनेवाले बन्धसे वर्तमान समयमें होनेवाला उदय अनन्तगुणा है ऐसा जानना चाहिये, क्योंकि उदय चिरकालीन सत्कर्मस्वरूप है । यद्यपि इस अर्थका पूर्वोक्त भाष्यगाथासे ही ज्ञान हो जाता है तो भी इस अर्थका अनुवाद करके तदनन्तर समयमें होनेवाले बन्ध और उदयके साथ इसका सन्निकर्ष करनेके लिये इस गाथाके पूर्वार्धको कहा है । 'से काले उदयादो' ऐसा कहनेपर विवक्षित समयसे तदनन्तर आगेके समयमें जो अनुभागविषयक उदय होता है उससे यह वर्तमान समयमें होनेवाला बन्ध अनन्तगुणा है ऐसा जानना चाहिये ।

शंका—ऐसा किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि समय-समयमें अनुभागका उदय विशुद्धिकी प्रधानतावश अनन्तगुणी

१. ता०प्रतौ -पबंधोदयाणमेसो इति पाठः ।

हाणीए ओवट्टिज्जमाणस्स तहाभावोववत्तीए। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठं विहासागंथमुत्तरं भणइ—

*** विहासा।**

§ २८५. सुगमं।

*** जहा।**

§ २८६. सुगमं।

*** से काले अणुभागबंधो थोवो। से काले चेव उदओ अणंतगुणो। अस्सिं समए बंधो अणंतगुणो। अस्सिं चेव समए उदओ अणंतगुणो।**

§ २८७. गाहासुत्तेण पुव्वाणुपुव्वीए जो अत्थो णिद्दिट्ठो सो चेव सुहग्गहणट्ठं पच्छाणुपुव्वीए विहासिदो। सुगममण्णं। एवं तदियभासगाहाए अत्थपरूवणा समत्ता। संपहि अणुभाग-पदेसविसयाणमुदयाणं कालभेदमस्सियूण थोवबहुत्तपरूवणट्ठं चउत्थ-भासगाहाए अवयारं कुणमाणो इदमाह—

*** चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ २८८. सुगमं।

हानिरूपसे अपवर्तित हो जाता है, इसलिये वह उस प्रकारसे बन जाता है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिये आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

*** अब उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ २८५. यह सूत्र सुगम है।

*** जैसे।**

§ २८६. यह सूत्र सुगम है।

*** वर्तमान समयसे अनन्तर समयमें होनेवाला अनुभागबन्ध सबसे स्तोक है। उससे अनन्तर समयमें ही होनेवाला उदय अनन्तगुणा है। उससे इस समयमें होनेवाला अनुभागबन्ध अनन्तगुणा है। उससे इसी समयमें होनेवाला अनुभागउदय अनन्तगुणा है।**

§ २८७. उक्त गाथा द्वारा पूर्वानुपूर्वीसे जो अर्थ निर्दिष्ट किया गया है उसी अर्थका सुखपूर्वक ग्रहण करनेके लिए पश्चादानुपूर्वीसे विभाषा की गई है। शेष कथन सुगम है। इस प्रकार तीसरी भाष्यगाथाकी अर्थप्ररूपणा समाप्त हुई। अब अनुभाग और प्रदेशविषयक उदयके कालभेदके आलम्बनसे अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिये चौथी भाष्यगाथाका अवतार करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** अब चौथी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ २८८. यह सूत्र सुगम है।

(९३) गुणसेढी अणंतगुणेणूणाए वेदगो दु अणुभागे।
गणणादियंतसेढी पदेस-अग्गेण बोद्धव्वा ॥१४६॥

§ २८९. एत्थ गाहापुव्वद्धे पदसंबंधो एवं कायव्वो—'अणंतगुणेणूणाए गुणसेढीए अणुभागस्स एसो समयं पडि वेदगो होदि त्ति। एत्थ अणुभागे त्ति सत्तमीणिद्देसो विसयलक्खणो दट्ठव्वो, छट्ठीए वा अत्थे एसो सप्तमीणिद्देसो त्ति घेत्तव्वो। तदो समए समए अणंतगुणहीणमणंतगुणहीणमप्पसत्थकम्माणमणुभागमेसो वेदयदि त्ति गाहापुव्वद्ध समुदायत्थो। संपहि गाहापच्छद्धमस्सियूण पदेसुदयस्स समयं पडि पवुत्तिकमो वुच्चदे। तं जहा—'गणणादियंतसेढी' एवं भणिदे असंखेज्जगुणाए सेढीए पदेसग्गमेसो समयं पडि वेदेदि त्ति भणिदं होइ। किं कारणं? असंखेज्जगुणकमेण ट्ठिदगुणसेढिगोवुच्छाओ वेदेमाणस्स पयारंतरासंभवादो। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाह—

*** विहासा।**

§ २९०. सुगमं।

*** जहा।**

§ २९१. सुगमं।

*** अस्सिं समये अणुभागुदयो बहुगो। से काले अणंतगुणहीणो।**

---

(९३) यह संक्रामक प्रस्थापक जीव अनन्तगुणहीन गुणश्रेणिरूपसे अनुभागका वेदक होता है। तथा असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे यह प्रदेशपुंजका वेदक जानना चाहिये ॥१४६॥

§ २८९. यहाँ गाथाके पूर्वार्धका इसप्रकार पदसम्बन्ध करना चाहिये—अनन्तगुणी हीन गुणश्रेणिरूपसे अनुभागका यह प्रत्येक समयमें वेदक होता है। यहाँपर 'अणुभागे' इस पदमें विषयलक्षण सप्तमी विभक्तिका निर्देश जानना चाहिये। अथवा छटी विभक्तिके अर्थमें यह सप्तमी विभक्तिका निर्देश ग्रहण करना चाहिये। इसलिए अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागका प्रत्येक समयमें अनन्तगुणे हीन रूपसे यह जीव वेदन करता है यह गाथाके पूर्वार्धका समुच्चयरूप अर्थ है। अब गाथाके उत्तरार्धका आलम्बन लेकर प्रत्येक समयमें प्रदेश-उदयके प्रवृत्तिक्रमको कहते हैं। वह जैसे—'गणणादियंतसेढी' ऐसा कहनेपर असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे प्रदेशपुंजको यह जीव प्रत्येक समयमें वेदता है, क्योंकि असंख्यात गुणितक्रमसे स्थित हुई गुणश्रेणिगोपुच्छाओंका वेदन करनेवाले जीवके प्रकारान्तरसे वेदन होना असम्भव है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिये आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

*** अब उक्त गाथासूत्रकी विभाषा करते हैं।**

§ २९०. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २९१. यह सूत्र सुगम है।

*** इस समय अनुभागका उदय बहुत होता है। तदनन्तर समयमें अनन्तगुणा**

एवं सव्पत्थ। पदेसुदयो अस्सिं समये थोवो। से काले असंखेज्जगुणो। एवं सव्वत्थ।

§ २९२. दोण्हमेदेसिं सुत्ताणमत्थो सुगमो। एवं तदियमूलगाहमवलंबिय चदुहिं भासगाहाहिं बंधोदयसंकमाणमणुभाग-पदेसविसयाणं परत्थाणप्पाबहूअं सत्थाणप्पाबहुअं च अणुमग्गियूण संपहि पुणो वि सत्थाणप्पाबहुअस्स फुडीकरणट्ठं चउत्थमूलगाहाए समोदारो कीरदे—

* एत्तो चउत्थी मूलगाहा।

§ २९३. सुगमं।

* तं जहा।

§ २९४. सुगमं।

(९४) बंधो व संकमो वा उदओ वा किं सगे सगे ट्ठाणे।
से काले से काले अधिओ हीणो समो वा पि ॥१४७॥

§ २९५. एसा चउत्थी मूलगाहा बंधोदयसंकमाणमणुभाग-पदेसविसयाणं सत्थाणप्पाबहुअपरूवणट्ठमोइण्णा। तं कधं? संपहियसमयबंधसंकमोदयेहिंतो से काले

हीन होता है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये। इस समय प्रदेश-उदय सबसे स्तोक होता है। तदनन्तर समयमें असंख्यातगुणा होता है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये।

§ २९२. इन दोनों चूर्णिसूत्रोंका अर्थ सुगम है। इस प्रकार इस तीसरी मूलगाथाका अवलम्बन लेकर चार भाष्यगाथाओं द्वारा अनुभाग और प्रदेशविषयक बन्ध, उदय और संक्रमके परस्थान अल्पबहुत्व और स्वस्थान अल्पबहुत्वका अनुन्धान करके अब फिर भी स्वस्थान अल्पबहुत्वको स्पष्ट करनेके लिए चौथी मूल गाथाका अवतार करते हैं—

* अब चौथी मूलगाथाका अवतार करते हैं।

§ २९३. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ २९४. यह सूत्र सुगम है।

(९४) वर्तमान समयकी अपेक्षा उत्तरोत्तर तदनन्तर-तदनन्तर समयमें होनेवाला बन्ध, संक्रम और उदय अपने-अपने स्थानमें स्वस्थानकी अपेक्षा क्या अधिक होता है, हीन होता है या समान होता है ॥१४७॥

§ २९५. यह चौथी मूलगाथा अनुभाग और प्रदेशविषय बन्ध, उदब और संक्रमके स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिये आयी है।

शंका—वह कैसे?

समाधान—वर्तमान समयमें होनेवाले बन्ध, संक्रम और उदयकी अपेक्षा तदनन्तर समयमें

'बंधो वा संकमो वा उदओ वा सगे सगे ट्ठाणे' सत्थाणे कधं पयट्टदि ? किमहिओ होदूण पयट्टदि, आहो हीणो होदूण, किं वा समो होदूण पयट्टदि त्ति पुच्छादुवारेणेसा गाहा बंधादिपदाणं से काले भेदमस्सियूण सत्थाणप्पाबहुअं परूवेदि ।

§ २९६. एत्थ पुव्वसुत्तादो पदेसाणुभागग्गहणमणुवट्टावेयव्वं । 'गुणेण किं वा विसेसेणेत्ति' एसो वि अहियारसंबंधो एत्थ दट्ठव्वो । तेण बंधादो बंधो, संकमादो संकमो, उदयादो उदओ सण्णियासिज्जमाणो णिरुद्धसमयादो से काले अणुभागविसये किं छवड्ढि-हाणीहिं अहिओ हीणो समो वा होदि ? पदेसविसये च किं चउव्विहाए वड्ढीए हाणीए अहिओ हीणो समो वा होदि त्ति एसो एत्थ गाहासुत्तस्स समुदायत्थो । संपहि एदिस्से मूलगाहाए तीहिं भासगाहाहिं विवरणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* एदिस्से गाहाए तिण्णि भासगाहाओ ।

§ २९७. सुगमं ।

* तासिं समुक्कित्तणा तहेव विहासा च ।

§ २९८. सुगमं ।

* जहा ।

होनेवाले बन्ध, संक्रम और उदय स्वक-स्वक स्थानमें अर्थात् स्वस्थानमें कैसे प्रवृत्त होता है ? क्या अधिक होकर प्रवृत्त होता है, या क्या हीन होकर प्रवृत्त होता है ? या क्या समान होकर प्रवृत्त होता है इस प्रकार पृच्छा द्वारा यह गाथा बन्धादिक पदोंके तदनन्तर समयमें भेदका आलम्बन लेकर अर्थात् पृथक्-पृथक् स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन करती है ।

§ २९६. यहाँपर पूर्व सूत्रसे प्रदेश और अनुभाग पदको ग्रहण कर उनका अनुवर्तन करना चाहिये । 'गुणेण किं वा विसेसेण' इस प्रकार अधिकारवश इसका भी सम्बन्ध जान लेना चाहिये । इसलिये विवक्षित समयसे तदनन्तर समयमें बन्धके साथ बन्धका, संक्रमके साथ संक्रमका और उदयके साथ उदयका सन्निकर्ष होता हुआ अनुभागके विषयमें छह वृद्धियों और छह हानियों-की अपेक्षा क्या अधिक होता है, क्या हीन होता है या क्या समान होता है । तथा प्रदेशोंके विषयमें चार वृद्धियों और चार हानियोंकी अपेक्षा प्रत्येक क्या अधिक होता है क्या हीन होता है या क्या समान होता है इस प्रकार यहाँपर यह गाथासूत्रका समुदायरूप अर्थ है । अब इस मूलगाथा-का तीन भाष्यगाथाओंके द्वारा विवरण प्रस्तुत करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* इस मूलगाथाकी तीन भाष्यगाथाएँ हैं ।

§ २९७. यह सूत्र सुगम है ।

* अब इन भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना तथा उसी प्रकार विभाषा करते हैं ।

§ २९८. यह सूत्र सुगम है ।

* जैसे ।

२९९ सुगमं ।

(९५) बंधोदएहिं णियमा अणुभागो होदि णंतगुणहीणो ।
से काले से काले भज्जो पुण संकमो होदि ॥१४८॥

§ ३००. एसा पढमभासगाहा अणुभागविसयाणं बंधोदयसंकमाणं कालविसेसिदसत्थाणप्पाबहुअं वण्णेदि। तं कधं ? 'बंधोदएहिं०' एवं भणिदे बंधोदएहिं ताव 'णियमा' णिच्छएण अणुभागो से कालमाविओ अणंतगुणहीणो होदि त्ति पदसंबंधो । संपहियकालविसयादो अणुभागबंधादो से काले विसओ अणुभागबंधो विसोहिपाहम्मेणाणंतगुणहीणो होदि । एवमुदओ वि दट्ठव्वो त्ति भणिदं होदि । 'भज्जो पुण संकमो होइ' एवं भणिदे अणुभागसंकमो पुण अणंतगुणहीणत्तेण भयणिज्जो होइ । किं कारणं ? जाव अणुभागखंडयं ण पादेदि ताव अवट्ठिदो चेव संकमो भवदि । अणुभागखंडए पुण पदिदे अणुभागसंकमो अणंतगुणहीणो जायदि त्ति तत्थ परिप्फुडमेव भयणिज्जत्तदंसणादो । संपहि एदस्सेवत्थस्स परिप्फुडीकरणट्ठमुवरिमो विहासागंथो समोइण्णो—

*** विहासा ।**

§ ३०१. सुगमं ।

*** जहा ।**[1]

§ २९९. यह सूत्र सुगम है ।

(९५) बन्ध और उदयकी अपेक्षा अनुभाग तदनन्तर तदनन्तर समयमें नियमसे अनन्तगुणा हीन होता है, परन्तु संक्रम भजनीय है ॥१४८॥

§ ३००. यह प्रथम भाष्यगाथा काल विशेषणसे युक्त अनुभागविषयक बन्ध, उदय और संक्रमके अल्पबहुत्वका प्रतिपादन करती है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—'बंधोदएहिं०' ऐसा कहनेपर बन्ध और उदयकी अपेक्षा तो 'णियमा' अर्थात् निश्चयसे तदनन्तर कालभावी अनुभाग अनन्तगुणा हीन होता है इस प्रकार पदसम्बन्ध है। साम्प्रतिक कालविषयक अनुभागबन्धसे तदनन्तर कालको विषय करनेवाला अनुभागबन्ध विशुद्धिकी प्रधानतावश अनन्तगुणा हीन होता है । इसी प्रकार उदय भी जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । 'भज्जो पुण संकमो होइ' ऐसा कहनेपर अनुभागसंक्रम अनन्तगुणे हीनपनेसे भजनीय है, क्योंकि जबतक अनुभागकाण्डकका पतन नहीं कर लेता है तबतक संक्रम अवस्थित ही होता है । परन्तु अनुभागकाण्डकका पतन होनेपर अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा हीन हो जाता है, इसलिए उसमें भजनीयपना स्पष्ट रूपसे देखा जाता है । अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिये आगेका विभाषा ग्रन्थ अवतरित हुआ है ।

*** अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।**

§ ३०१. यह सूत्र सुगम है ।

---

१. ता०प्रतौ 'जहा' इदं सूत्रं 'सुगमं' इयं टीका च द्वौ नोपलभ्येते ।

§ ३०२. सुगमं ।

❀ अस्सिं समए अणुभागबंधो बहुओ । से काले अणंतगुणहीणो । एवं समए समए अणंतगुणहीणो ।

§ ३०३. अस्मिन्समये साम्प्रतिकसमय इत्यर्थः । से काले तदणंतरभाविसमय इत्यर्थः । सुगममन्यत् ।

❀ एवमुदओ वि कायव्वो ।

§ ३०४. तं जहा—अस्सिं समए अणुभागउदओ बहुओ । से काले अणंतगुणहीणो त्ति । जइ वि एसो उदयविसयो अप्पाबहुअणिद्देसो तदियमूलगाहाए चउत्थभासगाहापुव्वद्धविहासावसरे परूविदो तो वि मंदबुद्धीणं सुहावबोहणट्ठं णिद्दिट्ठो त्ति ण एत्थ पुणरुत्तदोसासंका कायव्वा ।

❀ संकमो जाव अणुभागखंडयमुक्कीरेदि ताव तत्तिगो तत्तिगो अणुभागसंकमो । अण्णम्हि अणुभागखंडए आढत्ते अणंतगुणहीणो अणुभागसंकमो ।

§ ३०५. गयत्थमेदं सुत्तं । एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता ।

❀ एत्तो विदियाए गाहाए समुक्कित्तणा ।

❀ जैसे ।

§ ३०२. यह सूत्र सुगम है ।

❀ इस समयमें अनुभागबन्ध बहुत होता है । तदनन्तर समयमें अनन्तगुणा हीन होता है । इस प्रकार समय-समयमें उत्तरोत्तर अनन्तगुणा हीन होता है ।

§ ३०३. 'अस्मिन् समये' का अर्थ है साम्प्रतिक समयमें 'से काले' का अर्थ है तदनन्तर भावी समयमें । शेष कथन सुगम है ।

❀ इसी प्रकार अनुभागउदयका भी कथन करना चाहिये ।

§ ३०४. वह जैसे—इस समय अनुभागउदय बहुत होता है । तदनन्तर समयमें अनन्तगुणा हीन होता है । यद्यपि यह उदयविषयक अल्पबहुत्वका निर्देश तीसरी मूलगाथाकी चौथी भाष्यगाथाके पूर्वार्धकी विभाषाके अवसरपर कर आये हैं तो भी मन्दबुद्धिजनोंको सुखपूर्वक ज्ञान करानेके लिये फिर भी इसका निर्देश किया है, इसलिये यहाँ पुनरुक्त दोषकी आशंका नहीं करनी चाहिये ।

❀ संक्रमके विषयमें यह व्यवस्था है कि जबतक अनुभागकाण्डकका उत्कीरण करता है तबतक उतना-उतना ही अनुभागसंक्रम होता है । परन्तु अन्य अनुभागकाण्डकका आरम्भ करनेपर अनन्तगुणा हीन अनुभागसंक्रम होता है ।

§ ३०५. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई ।

❀ इससे आगे दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा करते हैं ।

§ ३०६. सुगमं ।

(९६) गुणसेढि असंखेज्जा च पदेसग्गेण संकमो उदओ ।
से काले से काले भज्जो बंधो पदेसग्गे ॥१४९॥

§ ३०७. एदीए विदियगाहाए पदेसविसयाणमुदयसंकमबंधाणं सत्थाणप्पाबहुअणिद्देसो कदो । तं जहा—'गुणसेढि असंखेज्जा च' एवं भणिदे पदेसग्गेण णिहालिज्जमाणे संकमो उदओ च णियमा असंखेज्जाए सेढीए पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं, संपहियकालभाविसंकमोदएहिंतो से कालविसयसंकमोदयाणं गुणसंकमगुणसेढिपाहम्मेणासंखेज्जगुणत्तसिद्धीए णिप्पडिबंधमुवलंभादो । एत्थ गुणसंकमविवक्खाए संकमो असंखेज्जगुणो णिद्दिट्ठो । अधापवत्तसंकमे पुण अवलंबिज्जमाणे असंखेज्जगुणो ण होदि, विसेसाहिओ वा विसेसहीणो वा होदि, तत्थ पयारंतरासंभवादो । 'से काले से काले' एवं भणिदे वीप्सानिर्देशोऽयं द्रष्टव्यः । अधवा एक्को से कालणिद्देसो गाहापुव्वद्धणिद्दिट्ठाणमुदयसंकमाणं विसेसणभावेण संबंधणिज्जो, अण्णो पच्छद्धणिद्दिट्ठस्स बंधस्स विसेसणभावेण जोजेयव्वो । 'भज्जो बंधो पदेसग्गे' एवं भणिदे पदेसग्गविसओ बंधो चउव्विहवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणेहिं भजियव्वो त्ति भणिदं होइ, जोगवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणवसेण पदेसबंधस्स तहाभावसिद्धीए विरोहाभावादो । संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरो विहासागंथो—

---

§ ३०६. यह सूत्र सुगम है ।

(९६) प्रदेशपुंजकी अपेक्षा संक्रम और उदय तदनन्तर तदनन्तर समयमें असंख्यातगुणित श्रेणिरूप होते हैं । किन्तु प्रदेशपुंजका आश्रय कर बन्ध भजनीय है ॥१४९॥

§ ३०७. इस दूसरी भाष्यगाथा द्वारा प्रदेशविषयक उदय, संक्रम और बन्धके स्वस्थान अल्पबहुत्वका निर्देश किया है । वह जैसे—'गुणसेढि असंखेज्जा च' ऐसा कहनेपर प्रदेशपुंजकी अपेक्षा देखनेपर संक्रम और उदय नियमसे असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्रवृत्त होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि साम्प्रतिक कालमें होनेवाले संक्रम और उदयसे तदनन्तर कालमें होनेवाले संक्रम और उदयकी, गुणसंक्रम ओर गुणश्रेणिकी प्रधानतावश असंख्यातगुणे रूपसे, सिद्धि बिना बाधाके उपलब्ध होती है । यहाँपर गुणसंक्रमकी विवक्षामें संक्रम असंख्यातगुणा निर्दिष्ट किया है । परन्तु अधःप्रवृत्त संक्रमका अवलम्बन करनेपर संक्रम असंख्यातगुणा नहीं होता, किन्तु विशेष अधिक या विशेष हीन होता है, क्योंकि इस विषयमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है । 'से काले से काले' ऐसा कहनेपर यह वीप्सानिर्देश जानना चाहिये । अथवा एक 'से काले' पदके निर्देशका सम्बन्ध गाथाके पूर्वार्धमें निर्दिष्ट किये गये उदय और संक्रमके साथ विशेषणरूपसे करना चाहिये तथा दूसरे 'से काले' पदको उत्तरार्धमें निर्दिष्ट किये गये बन्ध पदके साथ विशेषणरूपसे युक्त करना चाहिये । 'भज्जो बंधो पदेसग्गे' ऐसा कहनेपर प्रदेशपुंजविषयक बन्ध चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थानकी अपेक्षा भजनीय है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि योगकी वृद्धि, हानि और अवस्थानवश प्रदेशबन्धकी उक्त प्रकारसे सिद्धि होनेमें विरोधका अभाव

*** विहासा ।**

§ ३०८. सुगमं ।

*** पदेसुदओ अस्सिं समए थोवो । से काले असंखेज्जगुणो । एवं सव्वत्थ ।**

*** जहा उदओ तहा संकमो वि कायव्वो ।**

§ ३०९. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

*** पदेसबंधो चउव्विहाए वड्ढीए चउव्विहाए हाणीए अवट्ठाणे च भजियव्वो ।**

§ ३१०. कुदो ? जोगवसेण तत्थ तहाभावोववत्तीदो । एवं विदियभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता ।

*** एत्तो तदियाए गाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ ३११. सुगमं ।

(९७) गुणदो अणंतगुणहीणं वेदयदि णियमसा दु अणुभागे ।
अहिया च पदेसग्गे गुणेण गणणादियंतेण ॥१५०॥

है । अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेका विभाषाग्रन्थ अवतरित हुआ है—

*** अब दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।**

§ ३०८. यह सूत्र सुगम है ।

*** प्रदेश उदय इस समयमें सबसे स्तोक होता है । तदनन्तर समयमें असंख्यातगुणा होता है । इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये ।**

*** जैसी प्रदेश उदयकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार प्रदेशसंक्रमकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।**

§ ३०९. ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

*** प्रदेशबन्ध चार प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थानकी अपेक्षा भजनीय है ।**

§ ३१०. क्योंकि योगके कारण प्रदेशबन्धमें उक्त प्रकारसे व्यवस्था बन जाती है । इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई ।

*** इससे आगे तीसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा करते हैं ।**

§ ३११. यह सूत्र सुगम है ।

(९७) यह प्रस्थापक संक्रामक जीव प्रति समय नियमसे अनन्तगुणे हीन अनुभागका वेदन करता है तथा असंख्यातगुणे अधिक प्रदेशपुंजका वेदन करता है ॥१५०॥

§ ३१२. एसा तदियभासगाहा समयं पडि अणुभाग-पदेसोदयाणं पवुत्तिकमं जाणावेदि। एदिस्से अत्थपरूवणा सुगमा। जइवि एसो अत्थो पुव्विल्लदोभासगाहाहिं चेव गहिओ तो वि मंदबुद्धीणं सुहग्गहणट्ठं पुणो वि भणिदो त्ति ण एत्थ पुणरुत्त-दोसासंका कायव्वा। अदो चेय एदिस्से अत्थविहासा तव्विहाए चेव विहासिदा त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एदिस्से अत्थो पुव्वभणिदो।**[1]

§ ३१३. एदिस्से गाहाए अत्थो पुव्विल्लदोभासगाहासु विहासिज्जमाणासु भणिदो, तदो ण एत्थ विहासिज्जदि त्ति भणिदं होदि। अधवा तदियमूलगाहाए चउत्थभासगाहत्थविहासाए चेव एदिस्से अत्थो विहासिदो, दोण्हमेदासिं गाहाणमत्थ-भेदाणुवलंभादो। जइ एवं, एसा गाहा णाढवेयव्वा त्ति णासंकणिज्जं, पुव्वमेव दत्तुत्तरत्तादो। एवं संकामणपट्ठवगस्स चउण्हं मूलगाहाणमत्थविहासा समत्ता। एत्तो तस्सेव ट्ठिदि-अणुभागाणमोवट्टणाए पडिबद्धाणं तिण्हं मूलगाहाणमत्थविहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एत्तो पंचमी मूलगाहा। तिस्से समुक्कित्तणा।**

§ ३१४. सुगमं।

---

§ ३१२. यह तीसरी गाथा अनुभाग उदय और प्रदेशउदयके प्रवृत्तक्रमका ज्ञान कराती है। इसकी अर्थप्ररूपणा सुगम है। यद्यपि इस अर्थको पहलीकी दो गाथाओं द्वारा ही स्वीकार कर लिया गया है तो भी मन्दबुद्धि जनोंको सुखपूर्वक ज्ञान करानेके लिये फिर भी कहा है, इसलिए यहाँपर पुनरुक्त दोषकी आशंका नहीं करनी चाहिये और इसीलिये उस प्रकारसे इसकी अर्थ-विभाषा की गई है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस भाष्यगाथाका अर्थ पहले ही कह आये हैं।**

§ ३१३. पहलेकी दो भाष्यगाथाओंकी विभाषा करते हुए इस भाष्यगाथाका अर्थ कह आये हैं, इसलिए यहाँपर उसकी विभाषा नहीं की जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अथवा तीसरी मूलगाथाकी चौथी भाष्यगाथा द्वारा विभाषा करते समय ही इसका अर्थ कह आये हैं, क्योंकि इन दोनों गाथाओंमें अर्थभेद नहीं पाया जाता।

शंका—यदि ऐसा है तो इस गाथाको आरम्भ नहीं करना चाहिये?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसका पहले ही उत्तर दे आये हैं।

इस प्रकार संक्रामणप्रस्थापकके चार मूलगाथाओंकी अर्थविभाषा समाप्त हुई। इससे आगे उसी जीवके स्थिति और अनुभागकी अपवर्तनासे सम्बन्ध रखनेवाली तीन मूलगाथाओंकी अर्थ-विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इससे आगे पाँचवीं मूलगाथा है। उसकी समुत्कीर्तना करते हैं—**

§ ३१४. यह सूत्र सुगम है।

---

१. ता०प्रतौ पुव्वं भणिदो इति पाठः।

* जहा ।

§ ३१५. सुगमं ।

(९८) किं अंतरं करेंतो वड्ढदि हायदि ट्ठिदी य अणुभागे ।
णिरुवक्कमा च वड्ढी हाणी वा केच्चिरं कालं ॥१५१॥

§ ३१६. एसा ओवट्टणमूलगाहाणं पढमा संकामयपडिबद्धसत्तमूलगाहाणमादीदो प्पहुडि पंचमी सुत्तगाहा किमट्ठमोइण्णा त्ति पुच्छिदे—अंतरदुसमयकदावत्थमादिं कादूण जाव छण्णोकसायक्खवणद्धाए चरिमसमओ त्ति एदम्मि अवत्थंतरे वट्टमाणस्स खवगस्स ट्ठिदि-अणुभागविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणं पवुत्तिक्कमजाणावणट्ठं, पुणो ओकड्डिदाणमुक्कड्डिदाणं च पदेसाणं णिरुवक्कमसरूवेणावट्ठाणकालपमाणावहारणट्ठं च समोइण्णा । तं कधं ? 'किं अंतरं करेंतो' एवं भणिदे केत्तियमेत्तमइच्छावणं करेमाणो ट्ठिदि-अणुभागे वड्ढदि हायदि वा, किं ताव णिरुद्धट्ठिदि-पदेसग्गमोकड्डमाणो उक्कड्डमाणो वा एगट्ठिदिमेत्तमंतरं कादूण हेट्ठिमोवरिमासेसट्ठिदीसु ओकड्डिदुमुक्कड्डिदुं च लहदि, आहो अत्थि को वि अइच्छावणाणियमो त्ति भणिदं होदि । एवमणुभाग-विसयाणं पि ओकड्डुक्कड्डणाणं पुच्छा कायव्वा । ण केवलं खवगसेढीए चेव पयद-

---

* जैसे ।

§ ३१५. यह सूत्र सुगम है ।

(९८) कितने अन्तरको करता हुआ यह जीव स्थिति और अनुभागको बढ़ाता अथवा घटाता है अथवा अन्तरको करता हुआ यह जीव स्थिति और अनुभागको किस प्रकार घटाता और बढ़ाता है । तथा उत्कर्षित अथवा अपकर्षित हुए प्रदेशपुंज निरूप-क्रम होकर कितने कालतक अवस्थित रहते हैं ॥१५१॥

§ ३१६. अपवर्तनासम्बन्धी मूलगाथाओंमें यह प्रथम मूलगाथा है जो संक्रामकप्रस्थापकसे सम्बन्ध रखनेवाली सात मूलगाथाओंमें प्रारम्भसे लेकर पाँचवीं सूत्रगाथा है सो यह किसलिए अवतीर्ण हुई है ऐसा पूँछनेपर कहते हैं कि अन्तर करनेके दूसरे समयसे लेकर छह नोकषायोंके क्षपणाके अन्तिम समयतक इस अवस्थाके भीतर विद्यमान हुए क्षपकके स्थिति और अनुभाग-विषयक अपकर्षण और उत्कर्षणकी प्रवृत्तिके क्रमका ज्ञान करानेके लिये तथा अपकर्षित और उत्कर्षित हुए प्रदेशोंके निरुपक्रमरूपसे अवस्थानकालके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये अवतीर्ण हुई है ।

शंका—वह कैसे ।

समाधान—'किं अंतरं करेंतो' ऐसा कहनेपर कितने प्रमाणमें अतिस्थापनाको करता हुआ स्थिति और अनुभागको बढ़ाता अथवा घटाता है । क्या विवक्षित प्रदेशपुंजको अपकर्षित अथवा उत्कर्षित करता हुआ एक स्थितिमात्र अन्तर करके नीचेकी और ऊपरकी समस्त स्थितियोंमें अपकर्षण और उत्कर्षण प्राप्त करता है या कोई अतिस्थापनाका नियम है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसी प्रकार अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके सम्बन्धमें पृच्छा करनी

विचारो, किं तु संसारावत्थाए वि ओकड्डुक्कडणाणं पवुत्तिक्कमो जहण्णुक्कस्सा-इच्छावणाणिक्खेवपडिबद्धो अणुमग्गियव्वो त्ति एसो गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थविणिच्छओ।

§ ३१७. अहवा 'किं अंतरं करेंतो' एवं भणिदे अंतरकरणं करेमाणो एसो अंतरकरणावत्थाए तत्तो पुव्वुत्तरावत्थासु च ट्ठिदि-अणुभागे कधमुक्कड्डदि ओकड्डदि वा त्ति सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो। 'वड्ढदि' त्ति वुत्ते उक्कड्डदि त्ति घेत्तव्वं। 'हायदि' त्ति वुत्ते ओकड्डदि त्ति गहेयव्वं। 'णिरुवक्कमा च वड्ढी' एवं भणिदे ओकड्डिदमुक्कड्डिदं वा पदेसग्गं णिरुवक्कमं होदूण केवचिरं कालमवचिट्ठदे, किमोकड्डिदुक्कड्डिदाणंतर-समये चेव पुणो वि ओकड्डुक्कड्डण-परपयडिसंकमादिकिरियाणं पाओग्गं होदि, आहो ण होदि त्ति भणिदं होदि। ण केवलमोकड्डुक्कड्डणाणमेव एसो पुच्छाणिद्देसो, किं तु परपयडिसंकमस्स वि दट्ठव्वो, परपयडीसु संकंतं पदेसग्गं कियच्चिरं कालं णिरुवक्कमं होदूण चिट्ठदि त्ति एदस्स वि अत्थस्स उवरि सुत्तणिबद्धपरूवणोवलंभादो। कधं पुण मूलगाहाए असंतो एसो अत्थो जाणिज्जदे? ण, गाहासुत्तस्सेदस्स देसामासयभावेण तहाविहत्थसंगहे विरोहाभावादो। अधवा 'णिरुवक्कमा च' एत्थतण 'च' सद्देणाणुत्त-समुच्चयट्ठेण परपयडिसंकमो गहेयव्वो।

चाहिए। प्रकृत विचारणा केवल क्षपकश्रेणिके सम्बन्धमें ही नहीं है, किन्तु संसार अवस्थामें भी जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना तथा निक्षेपसे सम्बन्ध रखनेवाले अपकर्षण और उत्कर्षणके प्रवृत्तिक्रमकी मार्गणा कर लेनी चाहिए इस प्रकार उक्त मूलगाथाके पूर्वार्धसम्बन्धी सूत्रके अर्थका निर्णय है।

§ ३१७. अथवा 'किं अंतरं करेंतो' ऐसा कहनेपर अन्तरकरण करता हुआ यह जीव अन्तरकरणकी अवस्थामें तथा उससे पहलेकी और आगेकी अवस्थाओंमें स्थिति और अनुभागको कैसे उत्कर्षित करता है या अपकर्षित करता है ऐसा इस सूत्रके अर्थका सम्बन्ध करना चाहिए। 'वड्ढदि' ऐसा कहनेपर उत्कर्षित करता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। तथा 'हायदि' ऐसा कहने पर अपकर्षित करता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। 'णिरुवक्कमा च वड्ढी' ऐसा कहनेपर अपकर्षित अथवा उत्कर्षित किया गया प्रदेशपुंज निरुपक्रम होकर कितने कालतक अवस्थित रहता है? क्या अपकर्षित और उत्कर्षित करनेके अनन्तर समयमें ही फिर भी अपकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृतिसंक्रम आदि क्रियाओंके योग्य होता है या नहीं होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। केवल अपकर्षण और उत्कर्षणके सम्बन्धमें ही यह पृच्छाका निर्देश नहीं किया गया है, किन्तु परप्रकृतिसंक्रमके विषयमें भी जानना चाहिये। परप्रकृतियोंमें संक्रान्त हुआ प्रदेशपुंज कितने कालतक निरुपक्रम होकर स्थित रहता है इस प्रकार इस अर्थकी भी आगे सूत्रमें निबद्ध की गई प्ररूपणासे उपलब्धि होती है।

शंका—मूलगाथामें नहीं उपलब्ध हुआ यह अर्थ कैसे जाना जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि इस गाथासूत्रके देशामर्षकरूपसे उक्त प्रकारके अर्थके संग्रह करनेमें कोई विरोध नहीं है। अथवा 'णिरुवक्कमा च' यहाँ आये हुए अनुक्तका समुच्चय करनेवाले

१. ता०प्रतौ ओकड्डिदमुक्कड्डिदुं इति पाठः।

§ ३१८. संपहि एवंविहत्थपडिबद्धस्सेदस्स गाहासुत्तस्स पुच्छामेत्तेणेव सूचिदासेसपयदत्थवित्थरस विहासाए कीरमाणाए तत्थ तिण्णि भासगाहाओ अत्थि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एत्थ तिण्णि भासगाहाओ ।**

§ ३१९. सुगमं ।

*** तासिं समुक्कित्तणं विहासणं च वत्तइस्सामो । तं जहा ।**

§ ३२०. सुगममेदं भासगाहाणमवयारावेक्खं पुच्छावक्कं ।

*** पढमाए गाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ ३२१. सुगमं ।

(९९) ओवट्टणा जहण्णा आवलिया ऊणिया तिभागेण ।
एसा ट्ठिदीसु जहण्णा तहाणुभागेसणंतेसु ॥१५२॥

§ ३२२. एसा पढमभासगाहा मूलगाहापुव्वद्धपडिबद्धाणं ट्ठिदिअणुभागविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणं जहण्णुक्कस्साइच्छावणाणिक्खेवपमाणावहारणट्ठमोइण्णा, ओकड्डणाविसयजहण्णाइच्छावणाणिद्देसमुहेण सेसासेसपरूवणाए देसामासयभावेणेदिस्से पवुत्तिदंसणादो । तं जहा—'ओवट्टणा जहण्णा' एवं भणिदे ट्ठिदि-

---

'च' शब्द द्वारा परप्रकृतिसंक्रमको ग्रहण कर लेना चाहिये ।

§ ३१८. अब इस प्रकारके अर्थसे सम्बन्ध रखनेवाले तथा पृच्छा मात्रसे ही अशेष अर्थोंके विस्तारको सूचित करनेवाले इस गाथासूत्रकी विभाषा करनेपर उस विषयमें तीन भाष्यगाथाएँ हैं इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** प्रकृत गाथासूत्रके विषयमें तीन भाष्यगाथाएँ हैं ।**

§ ३१९. यह सूत्र सुगम है ।

*** अब उनकी समुत्कीर्तना और विभाषाको बतलावेंगे । वह जैसे ।**

§ ३२०. भाष्यगाथाओंके अवतारकी अपेक्षा रखनेवाला यह पृच्छावाक्य सुगम है ।

*** अब प्रथम भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।**

§ ३२१. यह सूत्र सुगम है ।

(९९) तीसरे भागसे हीन एक आवलिप्रमाण जघन्य अपवर्तना होती है । यह सब स्थितियोंमें जघन्य अपवर्तना है । तथा अनुभाग विषयक जघन्य अपवर्तना अनन्त स्पर्धकोंमें जाननी चाहिये ॥१५२॥

§ ३२२. यह प्रथम भाष्यगाथा मूलगाथाके पूर्वार्धसे सम्बन्ध रखनेवाले स्थिति और अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेपके प्रमाणके अवधारण करनेके लिए आई है, क्योंकि अपकर्षणाविषयक जघन्य अतिस्थापनाके निर्देश

मोकड्डेमाणो जहण्णदो वि आवलियाए बे-त्तिभागमेत्तमइच्छावियूण णिक्खिवदि त्ति भणिदं होदि। 'एसा ट्ठिदीसु जहण्णा' एवं भणिदे ठिदिविसया एसा जहण्णा-इच्छावणा ओकड्डणाविसये घेत्तव्वा त्ति वुत्तं होइ। 'तहाणुभागेसणंतेसु' एवं भणिदे अणुभागविसया ओवट्टणा जहण्णे वि अणंतेसु फद्दएसु पडिबद्धा जाव अणंताणि फद्दयाणि णाधिच्छाविदाणि ताव अणुभागविसया ओकड्डणा ण पयट्टदि त्ति वुत्तं होइ। एत्थ विसेसणिण्णयं पुरदो कस्सामो। संपहि एदीए गाहाए सूचिदाणमत्थाणं विवरणं करेमाणो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुत्तरमाढवेइ—

*** विहासा।**

§ ३२३. सुगमं।

*** जा समयाहिया आवलिया उदयादो एवमादिट्ठिदी ओकड्डिज्जदि समयूणाए आवलियाए बे-त्तिभागे एत्तिगे अइच्छावेदूण णिक्खवदि। णिक्खेवो समयूणाए आवलियाए तिभागो समयुत्तरो।**

§ ३२४. एदेण सुत्तेण ट्ठिदिविसयाए ओकड्डणाए जहण्णाइच्छावणा-णिक्खेवाणं पमाणपरिच्छेदो कदो दट्ठव्वो। तं कधं? उदयादो प्पहुडि समयाहियावलियाए जा

द्वारा शेष समस्त प्ररूपणामें देशामर्षकरूपसे इस भाष्यगाथाकी प्रवृत्ति देखी जाती है। वह जैसे— 'ओवट्टणा जहण्णा' ऐसा कहनेपर स्थितिका अपकर्षण करता हुआ जघन्यरूपसे भी आवलिके दो-तीन भागमात्र स्थितिको अतिस्थापित करके निक्षेप करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'एसा ट्ठिदिसु जहण्णा' ऐसा कहनेपर स्थितिविषयक यह जघन्य अतिस्थापना अपवर्तनाके विषयमें ग्रहण करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तहाणुभागेसणंतेसु' ऐसा कहनेपर अपवर्तना-विषयक जघन्य अपवर्तना अनन्त स्पर्धकोंमें प्रतिबद्ध होकर भी जबतक अनन्त स्पर्धक अति-स्थापित नहीं होते हैं तबतक अनुभागविषयक अपवर्तना नहीं प्रवृत्त होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर विशेष निर्णय आगे करेंगे। अब इस गाथा द्वारा सूचित हुए अर्थोंका विवरण करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

*** अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ३२३. यह सूत्र सुगम है।

*** उदयसे लेकर एक समय अधिक आवलिकी जो आदि स्थिति अपकर्षित की जाती है उसे एक समय कम आवलिके दो-तीन भागरूप इतनी स्थितिको अति-स्थापित कर निक्षिप्त करता है, अतः एक समय कम एक आवलिके एक समय अधिक त्रिभागप्रमाण निक्षेप होता है।**

§ ३२४. इस सूत्र द्वारा स्थितिविषयक अपकर्षणकी जघन्य अतिस्थाना और जघन्य निक्षेपके प्रमाणकी मर्यादा की गई जानना चाहिये।

शंका—वह कैसे?

ट्ठिदी समवट्ठिदा तिस्से ओकड्डिज्जमाणियाए किमइच्छावणापमाणं, किं वा णिक्खेव-पमाणमिदि वुत्ते 'समयूणाए आवलियाए वे-त्तिभागे एत्तिगे अइच्छावेदूण' इच्चादि वुत्तं, आवलियं समयूणं कादूण पुणो तिहिं रूवेहिं भागे[1] हिदे तत्थ वे-त्तिभागा एदिस्से जहण्णाइच्छावणापमाणं, हेट्ठिमतिभागो च पुव्वमवणिदेगरूवेण सह जहण्णणिक्खेव-पमाणं होदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। संपहि एत्तो उवरिमाणंतरट्ठिदीए ओक-ड्डिज्जमाणाए अइच्छावणाणिक्खेवपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** तदो जा अणंतरउवरिमट्ठिदी तिस्से णिक्खेवो तत्तिगो चेव, अइच्छावणा समयाहिया।**

§ ३२५. कुदो ? उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदीए एत्थाइच्छावणाभावेण पवेस-दंसणादो। तदो जहण्णाइच्छावणादो समयुत्तरा एदिस्से उदयावलियबाहिरविदिय-ट्ठिदीए अइच्छावणा होदि। णिक्खेवो पुण जहण्णओ चेवेत्ति एसो एत्थ सुत्तत्थ-संगहो। एत्तो उवरिमट्ठिदीसु वि जहण्णणिक्खेवमवट्ठिदं कादूण अइच्छावणा चेव समयुत्तरकमेण वड्ढावेयव्वा जाव समयाहियतिभागपवेसेण संपुण्णावलियमेत्ता णिव्वा-घादविसया उक्कस्साइच्छावणा जादा त्ति। तत्तो परमइच्छावणमावलियमेत्तमवट्ठिदं कादूण णिक्खेवो चेव समयुत्तरादिकमेण वड्ढावेयव्वो जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो

समाधान—उदयसे लेकर एक समय अधिक आवलिप्रमाण जो स्थिति अवस्थित है उसका अवकर्षण करनेपर अतिस्थापनाका प्रमाण क्या है और निक्षेपका प्रमाण क्या है ऐसा कहनेपर 'एक समय कम आवलिके दो-त्रिभाग इतनी स्थितिको अतिस्थापित कर' इत्यादि कहा है, क्योंकि आवलिमें एक समय कम कर पुनः तीनका भाग देनेपर वहाँ दो-त्रिभाग जघन्य अति-स्थापनाका प्रमाण होता है और पहले निकाले गये एक रूपके साथ अधस्तन त्रिभाग जघन्य निक्षेपका प्रमाण होता है इस प्रकार यहाँ सूत्रार्थ समुच्चय है। अब इससे उपरिम अनन्तर स्थितिका अपकर्षण करनेपर अतिस्थापना और निक्षेपके प्रमाणका निश्चय करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** उससे जो अनन्तर उपरिम स्थिति है उसका निक्षेप उतना ही होता है मात्र अतिस्थापना एक समय अधिक होती है।**

§ ३२५. क्योंकि उदयावलिके बाहरकी अनन्तर स्थितिका भी यहाँपर अतिस्थापनारूपसे प्रवेश देखा जाता है, इसलिए जघन्य अतिस्थापनासे इस उदयावलिके बाहरकी द्वितीय स्थिति-की एक समय अधिक अतिस्थापना होती है। परन्तु निक्षेप जघन्य ही होता है इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रार्थसंग्रह है। अब इससे आगे उपरिम स्थितियोंमें भी जघन्य निक्षेपको अवस्थित करके एक समय अधिक त्रिभागके प्रवेश द्वारा पूरी एक आवलिके प्राप्त होनेतक अतिस्थापना ही समयाधिकके क्रमसे बढ़ानी चाहिये। इस प्रकार यह निर्व्याघातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना हो जाती है। उससे आगे अतिस्थापनाको आवलिप्रमाण अतिस्थापित करके उत्कृष्ट निक्षेपके

१. ता०प्रतौ (स) रूवेहिं, आ०प्रतौ सरूवेहिं इति पाठः।

जादो त्ति। संपहि एवंविहस्स अत्थविसेसस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तदुयमाह—

✻ एवं ताव अइच्छावणा वड्ढदि जाव आवलिया अधिच्छावणा जादा त्ति।

§ ३२६. सुगमं।

✻ तेण परमधिच्छावणा आवलिया, णिक्खेवो वड्ढदि।

§ ३२७. सुगमं। संपहि एत्थुक्कस्सणिक्खेवपमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

✻ उक्कस्सओ णिक्खेवो कम्मट्ठिदी दोहिं आवलियाहिं समयाहियाहिं ऊणिगा।

§ ३२८. एवं भणिदे कसायाणमुक्कस्सट्ठिदिं चालीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तं बंधियूण पुणो बंधावलियमेत्तकाले जाव वोलेदि ताव उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्ममावलियूणं भवदि। तदो से काले बंधावलियवदिक्कंतमग्गट्ठिदिमोकड्डियूण अग्गट्ठिदिं मोत्तूण तत्तो हेट्ठा आवलियमेत्तमइच्छाविय हेट्ठिमट्ठिदीसु जाव उदयट्ठिदि त्ति ताव णिक्खिवदि, तेण बंधावलियाए अइच्छावणावलियाए अग्गट्ठिदीए च ऊणिया कम्मट्ठिदी उक्कस्सणिक्खेवपमाणं होदि त्ति घेत्तव्वं। णेदमेत्थासंकणिज्जं खवगसेढिविसयाए परूवणाए

प्राप्त होनेतक निक्षेपको ही उत्तरोत्तर एक-एक समय अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिये। अब इस प्रकारके अर्थविशेषको स्पष्ट करनेके लिये आगेके दो सूत्रोंको कहते हैं—

✻ इस प्रकार तबतक अतिस्थापना बढ़ती जाती है जब जाकर वह अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण हो जाती है।

§ ३२६. यह सूत्र सुगम है।

✻ इससे आगे अतिस्थापना तो एक आवलिप्रमाण ही रहती है, परन्तु निक्षेप बढ़ता जाता है।

§ ३२७. यह सूत्र सुगम है। अब यहाँ उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

✻ उत्कृष्ट निक्षेप एक समय अधिक दो आवलियोंसे हीन कर्मस्थितिप्रमाण होता है।

§ ३२८. इस सूत्रके इस प्रकार कहनेपर कषायोंकी उत्कृष्ट स्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण बाँधकर पुनः जबतक बन्धावलिप्रमाण काल व्यतीत होता है तबतक उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म एक आवलि कम हो जाता है। तत्पश्चात् तदनन्तर समयमें बन्धावलिके व्यतीत होनेके बाद अग्रस्थितिका अपकर्षण करके उस अग्रस्थितिको छोड़कर उससे नीचे एक आवलिप्रमाण स्थितिको अतिस्थापित करके उदयस्थितिके प्राप्त होनेतक नीचेकी सभी स्थितियोंमें निक्षिप्त करता है। इसलिए बन्धावलि, अतिस्थापनावलि और अग्रस्थितिसे हीन कर्मस्थिति उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। यहाँपर ऐसी आशंका नहीं

कीरमाणाए संसारावत्थाए उक्कस्सणिक्खेवपमाणाणुगमो एसो असंबद्धो त्ति ? किं कारणं ? ओकड्डणसंबंधेण पसंगागदाए तप्परूवणाए दोसाणुवलंभादो ।

§ ३२९. संपहि एवमवहारिदपमाणाणं जहण्णुक्कस्साइच्छावणाणिक्खेवाणं

करनी चाहिये कि क्षपश्रेणिविषयक प्ररूपणाके करनेपर यहाँ संसार अवस्थाविषयक यह उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका अनुगम असम्बद्ध है, क्योंकि अपकर्षणके सम्बन्धवश प्रसंगसे प्राप्त अपकर्षण-विषयक उत्कृष्ट निक्षेपकी प्ररूपणा करनेमें कोई दोष नहीं पाया जाता ।

विशेषार्थ—कल्पनामें एक आवलिका प्रमाण १६ तथा चारित्रमोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति-का प्रमाण ६५५३६ ।

जब उदयावलिसे ऊपरके प्रथम निषेकके प्रदेशपुंजका अपकर्षण होता है तब नियमानुसार एक समय कम एक आवलि १५ के त्रिभाग ५ कम दो त्रिभाग १० प्रमाण ऊपरकी स्थितिको अतिस्थापित कर प्रारम्भके १ समय अधिक त्रिभाग प्रमाण १ + ५ = ६ स्थितिमें उक्त १७वें समयके द्रव्यका निक्षेप होता है । इस प्रकार प्रथम उदयनिषेकसे लेकर छठवें निषेक तकके ६ निषेक निक्षेपरूप प्राप्त होते हैं और ७वें निषेकसे लेकर १६वें तकके १० निषेक अतिस्थापना-रूप प्राप्त होते हैं । तत्पश्चात् आगे-आगेके निषेकके द्रव्यका अपकर्षण करनेपर अतिस्थापनामें एक-एक निषेककी वृद्धि तबतक होती जाती है जबतक एक आवलि १६ प्रमाण अतिस्थापना नहीं प्राप्त हो जाती । यहांतक निक्षेपका प्रमाण प्रारम्भके प्रथम निषेकसे लेकर छटवें निषेक तक ६ निषेक इतना ही रहता है । तथा अतिस्थापना ७वें निषेकसे क्रमसे बढ़कर २२वें निषेक तक एक आवलि १६ निषेकप्रमाण हो जाती है । तत्पश्चात् उत्कृष्ट निक्षेपके प्राप्त होनेतक अतिस्थापनाका प्रमाण सर्वत्र एक आवलि १६ निषेकप्रमाण ही रहता है । मात्र उत्कृष्ट निक्षेप बन्धावलि १६, अतिस्थापना-वलि १६ और अग्र (अन्तिम) स्थिति १ कुल मिलाकर ३३ निषेकोंसे हीन उत्कृष्ट स्थिति ६५५०३ निषेकप्रमाण हो जाता है । यहां नये कर्मका बन्ध होनेपर बन्धावलि कालतक वह नया बन्ध तदवस्थ रहा, इसलिए एक आवलि यह कम हो गई तथा बन्धावलिके बाद अन्तिम अग्रस्थितिके द्रव्यका अप-कर्षण हुआ, इसलिए अपकर्षित द्रव्यका उसी अग्रस्थितिमें निक्षेप होना सम्भव नहीं, इसलिए एक निषेक यह कम हो गया । तथा अग्रस्थितिके नीचे एक आवलिप्रमाण निषेक अतिस्थापनारूप हैं, अतः अपकर्षित द्रव्यका उनमें निक्षेप होना सम्भव नहीं, इसलिये एक आवलिप्रमाण निषेक ये कम हो गये । इस प्रकार कुल मिलाकर उत्कृष्ट स्थितिमेंसे बन्धावलि, अतिस्थापनावलि और अग्रस्थिति कुल ३३ निषेकोंको कम करनेपर उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण कल्पनामें ६५५०३ निषेक इतना प्राप्त होता है । यहां बन्धके बाद १७वें समयमें अपकर्षण हुआ है, इसलिए तो बन्धावलि सम्बन्धी प्रारम्भके १६ निषेक ये कम हो गये । तथा ६५५३६वें निषेकके द्रव्यका अपकर्षण हुआ है, इसलिए अन्तका एक यह निषेक कम हो गया । तथा ६५५२०वें निषेकसे लेकर ६५५३५ तकके १६ निषेक अतिस्थापनारूप हैं, इसलिए १६ निषेक ये कम हो गये । इस प्रकार ६५५३६ मेंसे ३३ निषेक घटकर कुल १७वें निषेकसे लेकर ६५५१९ तकके ६५५०३ निषेकोंमें अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप हुआ यह सिद्ध होता है । यहाँ प्रकरण चारित्रमोहनीयका है, क्योंकि चारित्रमोहनीयकी क्षपणाका निर्देश किया जा रहा है, अतः धवलाकारने संसारअवस्थाकी मुख्यतासे चारित्रमोहनीय-सम्बन्धी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा ही यह अपकर्षणसम्बन्धी नियमका निर्देश किया है । यह अव्याघातविषयक अपकर्षणसम्बन्धी कथन है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिये ।

§ ३२९. अब इस प्रकार जिनके प्रमाणका ज्ञान करा दिया गया है ऐसे इन जघन्य और

पमाणविसए पुणो वि णिण्णयकरणट्ठमुवरिममप्पाबहुअपबंधमाढवेइ—

*** जहण्णओ णिक्खेवो थोवो ।**

§ ३३०. किं कारणं ? समयूणावलियतिभागस्स समयाहियस्स गहणादो । तस्स पमाणं संदिट्ठीए एत्तियमिदि घेत्तव्वं ६ ।

*** जहण्णिया अइच्छावणा समयूणाए आवलियाए वे-त्तिभागा विसेसाहिया ।**

§ ३३१. जहण्णाइच्छावणा समयूणावलियवे-त्तिभागपमाणा होदूण समया-हियतिभागादो पुव्विल्लादो विसेसाहिया त्ति भणिदं होदि । तत्तो दुरूवूणदुगुणपमाण-त्तादो । तिस्से पमाणं संदिट्ठीए एत्तियमेत्तमिदि घेत्तव्वं १० ।

*** उक्कस्सिया अइच्छावणा विसेसाहिया ।**

§ ३३२. कुदो ? संपुण्णावलियपमाणत्तादो १६ ।

*** उक्कस्सओ णिक्खेवो असंखेज्जगुणो ।**

§ ३३३. कुदो ? समयाहियदोआवलियूणकम्मट्ठिदिपमाणत्तादो । एवमेदीए पढमभासगाहाए मूलगाहापुव्वद्धो विहासिदो होदि । णवरि अणुभागविसयोकड्डणाए

उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेपके प्रमाणके विषयमें फिर भी निर्णय करनेके लिये आगेके अल्प-बहुत्वप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** जघन्य निक्षेप सबसे अल्प है ।**

§ ३३०. क्योंकि एक समय कम आवलिके तीन भाग करके एक समय अधिक उस त्रिभागको निक्षेपरूपमें ग्रहण किया है । उसका प्रमाण अंकसंदृष्टिसे इतना अर्थात् ६ ग्रहण करना चाहिये ।

*** जघन्य अतिस्थापना एक समय कम आवलिके दो त्रिभागप्रमाण होकर विशेषाधिक है ।**

§ ३३१. जघन्य अतिस्थापना एक समय कम एक आवलिके दो-त्रिभागप्रमाण होकर एक समय अधिक त्रिभागप्रमाण पूर्वोक्त जघन्य निक्षेपसे विशेष अधिक है यह उक्त कथनका तात्पर्य, क्योंकि यह जघन्य अतिस्थापना जघन्य निक्षेपसे दो कम द्विगुणप्रमाण है । उसका प्रमाण संदृष्टिकी अपेक्षा इतना अर्थात् १० ग्रहण करना चाहिये ।

*** उत्कृष्ट अतिस्थापना विशेष अधिक है ।**

§ ३३२. क्योंकि यह सम्पूर्ण एक आवलिप्रमाण है । जिसका प्रमाण अंक संदृष्टिकी अपेक्षा १६ है ।

*** उत्कृष्ट निक्षेप असंख्यातगुणा है ।**

§ ३३३. क्योंकि यह एक समय अधिक दो आवलिसे हीन उत्कृष्ट कर्मस्थितिप्रमाण है । इस प्रकार इस प्रथम भाष्यगाथा द्वारा मूलगाथाके पूर्वार्धकी विभाषा सम्पन्न होती है । इतनी

जहण्णुक्कस्साइच्छावणाणिक्खेवपमाणाणुगमो ट्ठिदि-अणुभागाणमुक्कड्डणाविसय-जहण्णुक्कस्साइच्छावणाणिक्खेवविचारो च उवरिममूलगाहासु पबंधेण परूविज्जिहिदि त्ति चुण्णिसुत्तयारेणेत्थ ण परूविदो। संपहि 'णिरुवक्कमा च वड्ढी' इच्चेदस्स मूलगाहापच्छद्धस्स विवरणट्ठं विदियभासगाहाए अवयारं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ विदियाए गाहाए समुक्कित्तणा।

§ ३३४. सुगमं।

❀ जहा।

§ ३३५. सुगमं।

(१००) संकामेदुक्कड्डदि जे अंसे ते अवट्ठिदा होंति।
आवलियं से काले तेण परं होंति भजियव्वा ॥१५३॥

§ ३३६. एसा विदियभासगाहा परपयडीसु संकामिदपदेसग्गस्स ट्ठिदि-अणुभागेहिं उक्कड्डिदस्स च आवलियमेत्तकालं णिरुवक्कमभावेणावट्ठाणं होदि त्ति इममत्थविसेसं जाणावेइ। तं जहा—'संकामेदुक्कड्डदि' एवं भणिदे संकामेदि वा उक्कड्डेदि वा जे कम्मपदेसे ते आवलियमेत्तकालमवट्ठिदा होंति, आवलियमेत्तकालं किरियंतरपरिणामेण विणा जहा जत्थ णिक्खित्ता तहा चेव तत्थ णिच्चलभावेणावचिट्ठंति त्ति

विशेषता है कि अनुभागविषयक अपकर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेपके प्रमाणका अनुगम तथा स्थिति और अनुभागसम्बन्धी उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेपका विचार आगे मूल गाथाओंमें विस्तारसे कहेंगे, इसलिए चूर्णिसूत्रकारने यहाँ उनकी प्ररूपणा नहीं की है। अब 'णिरुवक्कमा च वड्ढी' इस प्रकार मूलगाथाके इस उत्तरार्धका व्याख्यान करनेके लिये दूसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ अब दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ ३३४. यह सूत्र सुगम है।

❀ जैसे।

§ ३३५. यह सूत्र सुगम है।

(१००) जो कर्मपुंज संक्रमित होता है और उत्कर्षित होता है वह एक आवलिप्रमाण कालतक अवस्थित रहता है। तदनन्तर समयमें वहाँसे लेकर वह संक्रमित और उत्कर्षित होनेवाला कर्मपुंज भजनीय है ॥१५३॥

§ ३३६. यह दूसरी भाष्यगाथा परप्रकृतियोंमें संक्रमित होनेवाले प्रदेशपुंजका और स्थिति तथा अनुभागरूपसे उत्कर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजका एक आवलि कालतक निरुपक्रमरूपसे अवस्थान होता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान कराती है। वह जैसे—'संकामेदुक्कड्डदि' इस प्रकार कहनेपर जिन कर्मप्रदेशोंको संक्रमित करता है अथवा उत्कर्षित करता है वे एक आवलिप्रमाण कालतक अवस्थित रहते हैं। एक आवलिप्रमाण कालतक दूसरी प्रकारकी क्रियारूपसे परिणमन

वुत्तं होइ । 'से काले' तदणंतरसमयप्पहुडि 'तेण परं' तत्तो उवरि 'होंति भजियव्वा' भयणिज्जा भवंति । संकमावलियमेत्तकाले वदिक्कंते तत्तो परं संकामिदा उक्कड्डिदा च जे कम्मंसा ते वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणादिकिरियाहिं भयणिज्जा होंति, तत्तो परं तप्पवुत्तीए पडिसेहाभावादो त्ति वुत्तं होदि । संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थविसेसं विहासेमाणो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

*** विहासा ।**

§ ३३७. सुगमं ।

*** जं पदेसग्गं परपयडीए संकामिज्जदि ट्ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा उक्कड्डिज्जदि तं पदेसग्गमावलियं ण सक्कं ओकड्डिदुं वा उक्कड्डिदुं वा संकामेदुं वा ।**

§ ३३८. जं पदेसग्गं परपयडीए संकामिज्जदि तमावलियमेत्तकालं ण सक्कमोकड्डिदुमुक्कड्डिदुं संकामेदुं वा । जं च पदेसग्गमुक्कड्डिज्जदि ट्ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा तं पि आवलियमेत्तकालं ण सक्कमोकड्डिदुमुक्कड्डिदुं संकामेदुं वा त्ति पादेक्कमहिसंबंधं कादूण सुत्तत्थपरूवणा एत्थ कायव्वा । सुगममण्णं । एदेण सुत्तेण गाहा-

---

किये बिना जो जहाँ जिस प्रकार निक्षिप्त हुए हैं वहीं उसी प्रकार निश्चलरूपसे अवस्थित रहते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'से काले' अर्थात् तदनन्तर समयसे लेकर 'तेण परं' अर्थात् उस समयके बाद वे भजियव्वा अर्थात् भजनीय हैं। तात्पर्य यह है कि संक्रमणावलिप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर उसके बाद जो कर्मपुंज संक्रमित या उत्कर्षित हुए हैं वे वृद्धि, हानि और अवस्थान आदि क्रियारूपसे भजनीय होते हैं, क्योंकि उसके बाद उनकी क्रियान्तररूपसे प्रवृत्ति होनेमें प्रतिषेधका अभाव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस प्रकार इस गाथाके अर्थविशेषकी विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

*** अब उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ३३७. यह सूत्र सुगम है।

*** जो प्रदेशपुंज परप्रकृतिरूपसे संक्रमित किया जाता है या स्थिति और अनुभागके द्वारा उत्कर्षित किया जाता है वह प्रदेशपुंज एक आवलि कालतक अपअपकर्षित करनेके लिए, उत्कर्षित करनेके लिये या संक्रमित करनेके लिए शक्य नहीं है।**

§ ३३८. जो प्रदेशपुंज परप्रकृतिरूपसे संक्रमित किया जाता है वह एक आवलिप्रमाण कालतक अपकर्षित करनेके लिए, उत्कर्षित करनेके लिये या संक्रमित करनेके लिये शक्य नहीं है और जो प्रदेशपुंज स्थिति और अनुभागके द्वारा उत्कर्षित किया जाता है वह भी एक आवलिप्रमाण कालतक अपकर्षित करनेके लिये, उत्कर्षित करनेके लिये अथवा संक्रमित करनेके लिये शक्य नहीं है, इस प्रकार प्रत्येकके साथ सम्बन्ध करके यहाँपर सूत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये।

पुव्वद्धो चेव विहासिदो। गाहापच्छद्धविहासा एदेणेव गयत्था त्ति णाढत्ता, आवलियमेत्तकालं णिरुवक्कमभावे परूविदे तत्तो परमोकड्डणादिकिरियाहिं भयणिज्जभावस्स मंदबुद्धीणं पि सुहावगम्मत्तादो। एवं विदियभासगाहाए विवरणं कादूण संपहि तदियभासगाहाए अवयारं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ ३३९. सुगमं।

(१०१) ओकड्डुदि जे अंसे से काले ते च होंति भजियव्वा।
वड्ढीए अवट्ठाणे हाणीए संकमे उदए ॥१५४॥

§ ३४०. एदीए भासगाहाए जहा उक्कड्डिदपरमाणूणं परपयडीसु संकामिदपरमाणूणं च आवलियमेत्तकालं णिरुवक्कमभावेणावट्ठाणणियमो, ण एवमोकड्डिदपदेसग्गस्स, किंतु ओकड्डिदविदियसमए चेव पुणो वि ओकड्डिदुमुक्कड्डिदुमण्णपयडिं संकामेदुमुदीरेदुं च संभवो अत्थि त्ति एसो अत्थविसेसो जाणाविदो। तं जहा—'ओकड्डदि जे अंसे' एवं भणिदे जाणि कम्माणि ट्ठिदि-अणुभागेहिं ओकड्डदि ताणि से काले चेव वड्ढि-हाणि-अवट्ठाण-संकमोदीरणाहिं भजियव्वाणि त्ति वुत्तं होइ। एदस्स भावत्थो—ओकड्डिदपदेसग्गं[1] किंचि तदणंतरसमए चेव पुणो उक्कड्डिज्जदि,

अन्य कथन सुगम है। इस सूत्र द्वारा गाथाके पूर्वार्धकी ही विभाषा की गई है। गाथाके उत्तरार्धकी विभाषा इसी सूत्रसे ही गतार्थ है, इसलिये उसकी प्ररूपणा अलगसे आरम्भ नहीं की है, क्योंकि एक आवलिप्रमाण कालतक संक्रमित या उत्कर्षित द्रव्यके निरुपक्रमरूपसे प्ररूपित करनेपर उसके बाद अपकर्षणादि क्रिया भजनीय है इसका मन्दबुद्धि जीव भी सुखपूर्वक ज्ञान कर लेते हैं। इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाका विवरण करके अब तीसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ आगे तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ ३३९. यह सूत्र सुगम है।

(१०१) स्थिति और अनुभागके द्वारा जो कर्मपुंज अपकर्षित किये जाते हैं वे तदनन्तर समयमें वृद्धि, अवस्थान, हानि, संक्रम और उदयके विषयमें भजनीय हैं॥१५४॥

§ ३४०. जिस प्रकार उत्कर्षित हुए परमाणुओंके और संक्रमित हुए परमाणुओंके एक आवलिप्रमाण कालतक निरुपक्रमरूपसे अवस्थानका नियम है उस प्रकारका नियम अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजका नहीं है, किन्तु अपकर्षित होनेके दूसरे समयमें ही फिर भी उनका अपकर्षण होना, उत्कर्षण होना, परप्रकृतियोंमें संक्रमित होना और उदीरणा होना सम्भव है इस अर्थविशेषका इस गाथा द्वारा ज्ञान कराया गया है। वह जैसे—'ओकड्डदि जे अंसे' ऐसा कहनेपर जो कर्म स्थिति और अनुभागके द्वारा अपकर्षित होते हैं वे कर्म तदनन्तर समयमें ही वृद्धि, हानि, अवस्थान, संक्रम और उदीरणाके द्वारा भजनीय हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसका यह

1. ता०प्रतौ -पदेसग्गस्स इति पाठः।

किंचि ण उक्कड्डिज्जदि त्ति एवं वड्ढीए भजिदव्वं, अवट्ठाणे वि ओकड्डिदपदेसग्गं किंचि सत्थाणे चेव अच्छदि, किंचि अण्णं किरियं गच्छदि त्ति भयणिज्जं। एवमोकड्डणाए संकमोदएहिं भयणिज्जत्तं जोजेयव्वं, ओकड्डिदविदियसमए चेव पुणो वि ओकड्डणादीणं पवुत्तीए बाहाणुवलंभादो त्ति। संपहि एदस्स चेव अत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमविहासागंथमोदारइस्सामो—

❀ विहासा।

§ ३४१. सुगमं।

❀ ट्ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा पदेसग्गमोकड्डिज्जदि तं पदेसग्गं से काले चेव ओकड्डिज्जेज्ज वा उक्कड्डिज्जेज्ज वा संकामिज्जेज्ज वा उदीरिज्जेज्ज वा।

§ ३४२. गयत्थमेदं सुत्तं। णवरि 'ट्ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा' त्ति वुत्त कम्मपदेसाणमोकड्डणा ट्ठिदि-अणुभागमुहेणेव होइ, णाण्णहा त्ति एसो अत्थविसेसो जाणाविदो। एवमेत्तिएण पबंधेण तीहिं भासगाहाहिं पंचमीए मूलगाहाए अत्थविहासं समाणिय संपहि छट्ठीए मूलगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

भावार्थ है—अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजका कुछ भाग तदनन्तर समयमें पुनः उत्कर्षित हो जाता है, कुछ भाग उत्कर्षित नहीं होता ऐसा वृद्धिके विषयमें कहना चाहिये। अवस्थानके विषयमें भी कुछ भाग स्वस्थानमें ही अवस्थित रहता है तथा कुछ अन्य क्रियाको प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार यह भजनीय है। इसी प्रकार अपकर्षण, संक्रम और उदयकी अपेक्षा भजनीयपनेकी योजना कर लेनी चाहिये, क्योंकि अपकर्षित होनेके दूसरे समयमें ही फिर अपकर्षण आदिकी प्रवृत्ति होनेमें कोई बाधा उपलब्ध नहीं होती। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिये आगेके विभाषाग्रन्थका अवतार करते हैं—

❀ अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ३४१. यह सूत्र सुगम है।

❀ स्थितियोंके द्वारा अथवा अनुभागोंके द्वारा जिस प्रदेशपुंजका अपकर्षण किया जाता है उस प्रदेशपुंजका अनन्तर समयमें ही अपकर्षण किया जा सकता है या उत्कर्षण किया जा सकता है, या संक्रमण किया जा सकता है या उदीरणा की जा सकती है।

§ ३४२. यह सूत्र गतार्थ है। इतनी विशेषता है कि 'ट्ठिदीहि वा अणुभागेहि वा' ऐसा कहनेपर कर्मप्रदेशोंकी अपकर्षणा स्थिति और अनुभागमुखसे ही होती है, अन्य प्रकारसे नहीं, इस प्रकार उक्त पदों द्वारा इस अर्थका ज्ञान कराया गया है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा तीन भाष्यगाथाओंका अवलम्बन लेकर पाँचवीं मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त कर अब छटी मूलगाथाके अवसर प्राप्त विभाषाको करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** एत्तो छट्ठीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ ३४३. ओवट्टणविदियमूलगाहा चेव संकामणपवट्ठगस्स चदुहिं मूलगाहाहिं सह जोइज्जमाणा छट्ठी मूलगाहा त्ति भण्णदे। तिस्से समुक्कित्तणा इदाणिं कीरदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो ।

*** तं जहा ।**

§ ३४४. सुगमं ।

(१०२) एक्कं च ट्ठिदिविसेसं तु ट्ठिदिविसेसेसु कदिसु वड्ढेदि ।
हरसेदि कदिसु एगं तहाणभागेसु बोद्धव्वं ॥१५५॥

§ ३४५. एसा छट्ठी मूलगाहा ट्ठिदि-अणुभागविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणं जहण्णुक्कस्सणिक्खेवपमाणावहारणट्ठमोइण्णा । ण च एसो अत्थो पुव्विल्लमूलगाहा-पुव्वद्धे चेव पडिबद्धो त्ति एदिस्से णिप्फलत्तमासंकणिज्जं, पुव्विल्लगाहापुव्वद्धे तेसिमइच्छावणापरूवणाए चेव पहाणभावेण पडिबद्धत्तोवलंभादो । संपहि एदस्स गाहासुत्तस्स किंचि अवयवत्थपरामरसं कस्सामो । तं जहा—'एक्कं च ट्ठिदिविसेसं तु' एवं भणिदे एक्कं ट्ठिदिविसेसमुक्कड्डेमाणो कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु वड्ढेदि, किमेक्किस्से,

---

*** अब आगे छटी मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।**

§ ३४३. संक्रामणप्रस्थापकके चार मूलगाथाओंके साथ की गई अपवर्तनसम्बन्धी दूसरी मूलगाथा ही छटी मूलगाथा कही जाती है। उसकी समुत्कीर्तना इस समय करते हैं इस प्रकार यह यहाँ इस सूत्रके अर्थका तात्पर्य है ।

*** वह जैसे ।**

§ ३४४. यह सूत्र सुगम है ।

(१०२) एक स्थितिविशेषको कितने स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता है तथा एक स्थितिविशेषका कितने स्थितिविशेषोंमें घटाता है। इसी प्रकार अनुभागोंके विषयमें भी जानना चाहिये ॥१५५॥

§ ३४५. यह छटी मूलगाथा स्थिति और अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये अवतीर्ण हुई है। यह अर्थ पिछली मूलगाथाके पूर्वार्धमें ही निबद्ध है, इसलिये यहाँ इसकी निष्फलताकी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि पिछली गाथाके पूर्वार्धमें उन उत्कर्षण और अपकर्षणविषयक अतिस्थापनाकी प्ररूपणा ही प्रधानरूपसे निबद्ध उपलब्ध होती है। अब इस गाथासूत्रके अवयवोंके अर्थका किंचित् परामर्श करेंगे। वह जैसे—'एक्कं च ट्ठिदिविसेसं तु' ऐसा कहनेपर एक स्थितिविशेषको उत्कर्षित करता हुआ उसे कितने स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता है, क्या एक स्थितिविशेषमें बढ़ाता है या दो

आहो दोसु, एवं गंतूण किं संखेज्जेसु असंखेज्जेसु वा त्ति पुच्छिदं होदि। एदेण ट्ठिदिउक्कड्डणाविसये जहण्णुक्कस्सणिक्खेवाणं पमाणविसयं पुच्छा कया दट्ठव्वा। एत्थ एत्थतण 'च' सद्द 'तु' सद्देहिं उक्कड्डणाविसयजहण्णुक्कस्साइच्छावणाणं पि संगहो कायव्वो।

§ ३४६ 'हरस्सेदि कदिसु एगं' एवं भणिदे कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु एगं ट्ठिदिविसेसमोकड्डियूण संछुहदि त्ति पुच्छाणिद्देसो कदो होदि। तदो ओकड्डणादिविसयजहण्णुक्कस्सणिक्खेवपमाणावहारणे एसो सुत्तावयवो पुच्छादुवारेण पडिबद्धो त्ति णिच्छयो कायव्वो। 'तहाणुभागेसु बोद्धव्वं' इच्चेदेण वि चरिमावयवेण अणुभागविसयाणमोकड्डणुक्कड्डणाणं जहण्णुक्कस्सणिक्खेवविसयो पुच्छाणिद्देसो जहण्णुक्कस्साइच्छावणपमाणसहगओ णिबद्धो त्ति घेत्तव्वं। एवं च पुच्छामुहेणेदेसु अत्थविसेसेसु पडिबद्धाए एदिस्से मूलगाहाए अत्थविहासणट्ठमेया भासगाहा होदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ एदिस्से एक्का भासगाहा। तिस्से समुक्कित्तणा च विहासा च कायव्वा।

§ ३४७ सुगमं। संपहि का सा एक्का भाससाहा त्ति आसंकाए पुच्छावक्कमाह--

---

स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता है, इस प्रकार बढ़ाते हुए क्या संख्यात स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता है या असंख्यात स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता है ऐसी उक्त गाथासूत्र वचन द्वारा पृच्छा की गई है। इसप्रकार इस गाथा द्वारा स्थितिउत्कर्षणविषयक जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपोंके प्रमाणके विषयमें पृच्छा की गई जाननी चाहिये। यहाँ गाथासूत्रमें आये हुए 'च' शब्द और 'तु' शब्दसे उत्कर्षणविषयक जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापनाका भी संग्रह करना चाहिये।

§ ३४६. 'हरस्सेदि कदिसु एगं' ऐसा कहनेपर कितने स्थितिविशेषोंमें एक स्थितिविशेषको अपकर्षित कर निक्षिप्त करता है इस प्रकार यह पृच्छाका निर्देश किया गया है। इसलिये अपकर्षण आदि विषयक जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणके अवधारण करनेमें यह सूत्रवचन पृच्छा द्वारा निबद्ध है ऐसा निश्चय करना चाहिये। 'तहाणुभागेसु बोधव्वं' इस अन्तिम वचन द्वारा भी अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपके विषयमें पृच्छाका निर्देश जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापनाके साथ निबद्ध है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार पृच्छा द्वारा इन अर्थविशेषोंमें निबद्ध हुई इस मूलगाथाके अर्थकी विभाषा करनेके लिये एक भाष्यगाथा आई है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ इस मूलगाथाकी एक भाष्यगाथा है। उसकी समुत्कीर्तना और विभाषा करनी चाहिये।

§ ३४७. यह सूत्र सुगम है। अब वह एक भाष्यगाथा क्या है ऐसी आशंका होनेपर आगेके

*** तं जहा ।**

§ ३४८. सुगमं ।

(१०३) एक्कं च ट्ठिदिविसेसं तु असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु ।
वड्ढेदि हरस्सेदि च तहाणुभागेसणंतेसु ॥१५६॥

§ ३४९. एदीए भासगाहाए पुव्विल्लपुच्छाणं सव्वासिमेव णिण्णयविहाणं कदं दट्ठव्वं । तं जहा—'एक्कं च ट्ठिदिविसेसं' एवं भणिदे एगं ट्ठिदिविसेसमुक्कड्डेमाणो णियमा असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु वड्ढेदि त्ति । एदेण जहण्णदो वि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव उक्कड्डणाए णिक्खेवविसओ होदि, णो हेट्ठा त्ति जाणाविदं । तहा एक्कं च ट्ठिदिविसेसमोकड्डेमाणो णियमा असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु रहस्सेदि, णो हेट्ठा त्ति एदेण वि विदिएण सुत्तावयवेण जहण्णदो वि ओकड्डणाए आवलियतिभागमेत्तेण णिक्खेवेण होदव्वमिदि जाणाविदं । 'तहाणुभागेसणंतेसु' एवं भणिदे एगमणुभागफद्दयवग्गणमुक्कड्डेमाणो ओकड्डेमाणो च णियमा अणंतेसु चेवाणुभागफद्दएसु वड्ढदि हस्सेदि चेत्ति भणिदं होदि । एदेण अणुभागविसयाण-मोकड्डुक्कड्डणाणं जहण्णुक्कस्सणिक्खेवपमाणावहारणं कयं । संपहि एवमेदेसु अत्थविसेसेसु पडिबद्धाए एदिस्से भासगाहाए ट्ठिदिविसयमुक्कड्डणं चेव पहाणभावेण

पृच्छावाक्यको कहते हैं ।

*** वह जैसे ।**

§ ३४८. यह सूत्र सुगम है ।

(१०३) एक स्थितिविशेषको असंख्यात स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता और घटाता है । तथा एक स्पर्धकविषयक वर्गणाको अनन्त अनुभागविषयक स्पर्धकोंमें बढ़ाता और घटाता है ॥१५६॥

§ ३४९. इस भाष्यगाथा द्वारा पहलेकी सभी पृच्छाओंके निर्णयका विधान किया गया जानना चाहिये । वह जैसे—'एकं च ट्ठिदिविसेसं' ऐसा कहनेपर एक स्थितिविशेषका उत्कर्षण करता हुआ नियमसे उसे असंख्यात स्थितिविशेषोंमें बढ़ाता है । जघन्यरूपसे भी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही उत्कर्षणमें निक्षेपका विषय होता है, कम नहीं यह इस सूत्र द्वारा जताया गया है । तथा एक स्थितिविशेषको अपकर्षित करता हुआ उसे नियमसे असंख्यात स्थितिविशेषोंमें घटाता है, इससे कम नहीं, इस प्रकार इस दूसरे सूत्रपाद द्वारा भी अपकर्षणमें एक आवलिका त्रिभागमात्र निक्षेप होना चाहिये यह ज्ञान कराया गया है । 'तहाणुभागेसणंतेसु' ऐसा कहनेपर एक स्पर्धककी वर्गणाको उत्कर्षित और अपकर्षित करता हुआ उसे नियमसे अनन्त अनुभाग-स्पर्धकोंमें बढ़ाता और घटाता है यह कहा गया है । इस वचन द्वारा अनुभाग-विषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका अवधारण किया गया है । अब इस प्रकार इन अर्थविशेषोंमें निबद्ध हुई इस भाष्यगाथाके स्थितिविषयक उत्कर्षणको

घेत्तूण सेसाणं देसामासयभावेण विहासणं कुणमाणो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

* विहासा ।

§ ३५०. सुगमं ।

* जहा ।

३५१. सुगमं ।

* ट्ठिदिसंतकम्मस्स अग्गट्ठिदीदो समयुत्तरट्ठिदिं बंधमाणो तं ट्ठिदिसंतकम्मअग्गट्ठिदिं ण उक्कड्डदि ।

§ ३५२. एसा उक्कड्डणाए अट्ठपदपरूवणा खवगस्स उक्कड्डणापरूवणावसरे तप्पसंगेणेव संसारावत्थाए वि परूवेदुमाढत्ता, अण्णहा खवगसेढीए संतकम्मादो अब्भहियट्ठिदिबंधस्स सव्वकालमसंभवेण पयदपरूवणाए अणुववत्तीदो । संपहि एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—ट्ठिदिसंतकम्मस्स अग्गट्ठिदीदो समयुत्तरट्ठिदिं बंधमाणो तं ट्ठिदिसंतकम्मस्स अग्गट्ठिदिमुक्कड्डियूण संपहि बज्झमाणाए एगट्ठिदीए उवरि ण संछुहदि । किं कारणं ? अइच्छावणाणिक्खेवाणमेत्थासंभवेण उक्कड्डणाए पवुत्तिविरोहादो । एवं वि समयुत्तरादिट्ठिदिबंधेसु वि वट्टमाणो संतकम्मअग्गट्ठिदिं ण उक्कड्डदि चेवेत्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

ही प्रधानरूपसे ग्रहण कर शेषकी देशामर्षकरूपसे विभाषा करते हुए आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ३५०. यह सूत्र सुगम है ।

* जैसे ।

§ ३५१. यह सूत्र सुगम है ।

* स्थितिसत्कर्मकी अग्रस्थितिसे एक समय अधिक स्थितिको बाँधता हुआ स्थितिसत्कर्मकी उस अग्रथितिको उत्कर्षित नहीं करता है ।

§ ३५२. यह उत्कर्षण विषयक अर्थपदकी प्ररूपणा क्षपकके उत्कर्षणकी प्ररूपणा करते समय उस प्रसंगसे संसार अवस्थामें भी प्ररूपित करनेके लिये आरम्भ हुई है, अन्यथा क्षपकश्रेणिमें सत्कर्मसे अधिक स्थितिबन्ध सदा ही असम्भव होनेसे प्रकृत प्ररूपणा नहीं बन सकती है। अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—स्थितिसत्कर्मकी अग्रस्थितिसे एक समय अधिक स्थितिको बाँधता हुआ स्थितिसत्कर्मकी उस अग्रस्थितिको उत्कर्षित करके वर्तमानमें बँधनेवाली सत्कर्मसे एक समय अधिक स्थितिमें निक्षिप्त नहीं करता है, क्योंकि यहाँपर अतिस्थापना और निक्षेप असम्भव होनेसे उत्कर्षणकी प्रवृत्ति होनेमें विरोध है। इसी प्रकार दो समय अधिक आदि स्थितिबन्धोंमें भी विद्यमान जीव सत्कर्मकी अग्रस्थितिको उत्कर्षित नहीं ही करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ दुसमयुत्तरट्ठिदिं बंधमाणो वि ण उक्कड्डदि ।

§ ३५३. सुगमं । एत्थ वि कारणं, अणंतरणिद्दिट्ठत्तादो ।

*** एवं गंतूण आवलियुत्तरट्ठिदिं बंधमाणो ण उक्कड्डदि ।**

§ ३५४. एवं तिसमयुत्तरादिकमेण गंतूण जइ वि संतकम्मअग्गट्ठिदीदो आवलियुत्तरट्ठिदिं बंधदि तो वि ण तत्थ णिरुद्धसंतकम्मअग्गट्ठिदिमुक्कड्डदि त्ति वुत्तं होइ । किं कारणं ? एत्थ जहण्णाइच्छावणासंभवे वि णिक्खेवविसयासंभवेणुक्कड्डणपवुत्तीए पडिसिद्धत्तादो । पुणो केत्तियमेत्तं वड्ढियूण बंधमाणस्स उक्कड्डणाए संभवो त्ति आसंकाए इदमाह—

❀ जइ संतकम्मअग्गट्ठिदीदो बज्झमाणिया ट्ठिदी अदिरित्ता आवलिए आवलियाए असंखेज्जदिभागेण च तदो सो संतकम्मअग्गट्ठिदिं सक्को उक्कड्डिदुं ।

§ ३५५. कुदो ? तहा वड्ढियूण बंधमाणस्स आवलियमेत्तजहण्णाइच्छावणमुल्लंघियूण तदसंखेज्जदिभागमेत्तजहण्णणिक्खेवविसये उक्कड्डणपवुत्तीए पडिसेहाभावादो । संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमिदमाह—

*** दो समय अधिक स्थितिको बाँधता हुआ भी स्थितिसत्कर्मकी अग्र स्थितिको उत्कर्षित नहीं करता है ।**

§ ३५३. यहाँ भी कारणका कथन सुगम है, क्योंकि उसका पहले ही निर्देश कर आये हैं ।

❀ इस प्रकार आगे जाकर एक आवलि अधिक स्थितिको बाँधता हुआ स्थितिसत्कर्मकी अग्र स्थितिको उत्कर्षित नहीं करता है ।

§ ३५४. इस प्रकार तीन समय अधिक आदिके क्रमसे आगे जाकर यद्यपि सत्कर्मकी अग्रस्थितिसे एक आवलिप्रमाण अधिक स्थितिको बाँधता है तो भी वहाँ विवक्षित सत्कर्मकी अग्रस्थितिको उत्कर्षित नहीं करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यहाँपर जघन्य अतिस्थापनाके सम्भव होनेपर भी निक्षेपकी विषयभूत बन्धस्थितिके असम्भव होनेसे उत्कर्षणकी प्रवृत्ति निषिद्ध है । पुनः कितनी स्थितिको बढ़ाकर बाँधनेवालेके उत्कर्षण सम्भव है ऐसी आशंका होनेपर आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ यदि सत्कर्मकी अग्रस्थितिसे उस समय बँधनेवाली स्थिति एक आवलि और एक आवलिका असंख्यातवाँ भाग अधिक होती है तो वह उस सत्कर्मकी अग्र स्थितिको उत्कर्षित कर सकता है ।

§ ३५५. क्योंकि उक्त प्रकारसे बढ़ाकर बन्ध करनेवाले जीवके आवलिप्रमाण जघन्य अतिस्थापनाको उल्लंघन कर उसके असंख्यातवें भागप्रमाण निक्षेपमें उत्कर्षणकी प्रवृत्ति होनेमें प्रतिषेधका अभाव है । अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

* तं पुण उक्कड्डियूण आवलियमधिच्छावेयूण आवलियाए असंखे-ज्जदिभागे णिक्खिवदि।

§ ३५६. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमेदेण सुत्तेण जहण्णाइच्छावणाए सह जहण्ण-णिक्खेवपमाणावहारणं कादूण संपहि एत्तो प्पहुडि अइच्छावणा आवलियमेत्ता चेव अवट्ठिदा होइ। णिक्खेवो पुण समयुत्तरादिकमेण वड्डमाणो गच्छइ जाव उक्कस्स-णिक्खेवो त्ति इममत्थविसेसं परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* णिक्खेवो आवलियाए असंखेज्जदिभागमादिं कादूण समयुत्तराए वड्ढीए णिरंतरं जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति सव्वाणि ट्ठाणाणि अत्थि।

§ ३५७. जहण्णणिक्खेवमादिं कादूण जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति एदाणि णिक्खेवट्ठाणाणि णिरंतरं समयुत्तरवड्ढीए लब्भंति त्ति भणिदं होदि। एत्थ संतकम्म-अग्गट्ठिदीए णिरुद्धाए ओघुक्कस्सओ णिक्खेवो ण लब्भदि त्ति तत्तो हेट्ठा ओसरियूण उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदीए वट्टमाणस्स पदेसग्गस्स उक्कस्सओ णिक्खेवो घेत्तव्वो। तम्हि उक्कड्डिज्जमाणे ओघुक्कस्सणिक्खेवसंभवदंसणादो। सो वुण ओघुक्कस्सओ णिक्खेवो किंपमाणो त्ति आसंकाए तप्पमाणावहारणट्ठमाह—

* उक्कस्सओ पुण णिक्खेवो केत्तिओ।

---

* और इस प्रकार सत्कर्मकी उस अग्रस्थितिको उत्कर्षित कर उसे, एक आवलि-प्रमाण बन्धस्थितिको अतिस्थापित कर, आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण बन्धस्थिति-में निक्षिप्त करता है।

§ ३५६. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा जघन्य अतिस्थापनाके साथ जघन्य निक्षेपके प्रमाणका अवधारण करके अब इससे आगे अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण ही अवस्थित रहती है। किन्तु निक्षेप उत्तरोत्तर एक समय अधिकके क्रमसे वृद्धिगत होता हुआ उत्कृष्ट निक्षेपके प्राप्त होनेतक बढ़ता जाता है। इस प्रकार इस अर्थविशेषकी प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* उक्त निक्षेप आवलिके असंख्यातवें भागसे लेकर उत्तरोत्तर एक समय अधिक वृद्धिके क्रमसे उत्कृष्ट निक्षेप सर्व स्थानगत होनेतक बढ़ता जाता है।

§ ३५७. जघन्य निक्षेपसे लेकर उत्कृष्ट निक्षेपके प्राप्त होनेतक ये निक्षेपस्थान निरन्तर एक-एक समय अधिकके क्रमसे प्राप्त होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर सत्कर्मकी अग्र स्थितिके विवक्षित होनेपर ओघ उत्कृष्ट निक्षेप नहीं प्राप्त होता, इसलिए अग्रस्थितिसे नीचे उतरकर उदयावलिके बाहरकी अनन्तर स्थितिमें विद्यमान प्रदेशपुंजकी अपेक्षा उत्कृष्ट निक्षेप ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि उस स्थितिका उत्कर्षण करनेपर ओघ उत्कृष्ट निक्षेप सम्भव देखा जाता है। उस ओघ उत्कृष्टका निक्षेपका प्रमाण क्या है ऐसी आशंका होनेपर उसके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

* पुनः उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण कितना है।

§ ३५८. सुगमं ।

*** कसायाणं ताव उक्कड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए उक्कस्सगं णिक्खेवं वत्तइस्सामो ।**

§ ३५९. सव्वेसिं कम्माणमप्पप्पणो उक्कस्सट्ठिदिबंधकाले उक्कस्सओ णिक्खेवो समयाविरोहेण संभवइ, किंतूदाहरणट्ठं कसायाणमेव ताव उक्कस्सणिक्खेवपमाणमिह वत्तइस्सामो त्ति एसो सुत्तत्थो ।

*** चत्तालीसं सागरोवमकोडाकोडीओ चदुहिं वस्ससहस्सेहिं आवलियाए समयुत्तराए च ऊणियाओ एसो उक्कस्सगो णिक्खेवो ।**

§ ३६०. तं जहा—कसायाणमुक्कस्सट्ठिदिं बंधियूण बंधावलियाइक्कंतसमए चेव तं पदेसग्गमोकड्डियूण हेट्ठा णिक्खिवदि । एवं णिक्खिवमाणेण उदयावलियबाहिरविदियट्ठिदीए णिक्खित्तपदेसग्गमाइट्ठं । पुणो तं पदेसग्गं से काले बज्झमाणुक्कस्सट्ठिदीए चालीससागरोवमकोडाकोडिपमाणाए उवरिं उक्कड्डमाणो चत्तारि वाससहस्समेत्तमुक्कस्साबाहमुल्लंघियूण उवरिमासु चेव णिसेगट्ठिदीसु णिक्खिवदि त्ति उक्कस्सियाए आबाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी उक्कड्डणाउक्कस्सणिक्खेवो होदि । णवरि

---

§ ३५८. यह सूत्र सुगम है ।

*** यहाँ सर्वप्रथम कषायोंकी उत्कर्षित की जानेवाली स्थितिका उत्कृष्ट निक्षेप कहेंगे ।**

§ ३५९. सभी कर्मोंका अपना-अपना उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होते समय समयके अविरोधसे उत्कृष्ट निक्षेप सम्भव है । किन्तु उदाहरणस्वरूप प्रकरणके अनुसार कषायोंके ही उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये यहाँ बतलावेंगे यह इस सूत्रका अर्थ है ।

विशेषार्थ—विवक्षित कर्मसम्बन्धी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके समय उस कर्मकी सभी सत्त्वस्थितियोंका उत्कृष्ट निक्षेप प्राप्त होना सम्भव नहीं है, क्योंकि जिस कर्मके जिस सत्कर्ममें जितनी शक्ति स्थिति होती है वहींतक उसका उत्कर्षण हो सकता है यह समझकर ही जयधवलाकारने अपने कथनमें 'समयाविरोहेण' इस पदका निर्देश किया है ।

*** चार हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलिसे हीन चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण यह उत्कृष्ट निक्षेप होता है ।**

§ ३६०. वह जैसे—कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधकर बन्धावलिके व्यतीत होनेके समयमें ही उस बन्धस्थितिके प्रदेशपुंजका अपकर्षण कर नीचे निक्षिप्त करता है । इस प्रकार निक्षिप्त करनेसे उदयावलिके बाहर द्वितीय स्थितिमें निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुंज विवक्षित है । पुनः उस प्रदेशपुंजको अपकर्षण करनेके अनन्तर समयमें बँधनेवाली चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिके ऊपर उत्कर्षण करता हुआ चार हजार वर्षप्रमाण उत्कृष्ट आबाधाको उल्लंघन कर आबाधासे ऊपरकी निषेक स्थितियोंमें ही निक्षिप्त करता है, इसलिए उत्कृष्ट

समयाहियबंधावलियाए च एसा उक्कस्सिया कम्मट्ठिदी ऊणिया कायव्वा, णिरुद्ध-समयपबद्धसत्तिट्ठिदीए समयाहियबंधावलियमेत्तकालस्स हेट्ठा चेव गलिदत्तादो। तदो सिद्धमुक्कस्साबाहाए चत्तारिवस्ससहस्समेत्ताए समयाहियबंधावलियाए च ऊणिया कसायाणमुक्कस्सकम्मट्ठिदी तेसिमुक्कस्सणिक्खेवपमाणं होदि त्ति। सेसाणमणुक्कस्स-णिक्खेवट्ठाणाणमुप्पायणविही जाणिय कायव्वा।

आबाधासे हीन जो कर्मस्थिति है उतना उत्कर्षणसम्बन्धी उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण होता है। इतनी विशेषता है कि इस उत्कृष्ट कर्मस्थितिमेंसे एक समय अधिक एक आवलि कम कर देनी चाहिये क्योंकि विवक्षित समयप्रबद्धकी शक्तिस्थितिका एक समय अधिक बन्धावलिप्रमाण काल नीचे ही अर्थात् उत्कर्षण करनेके पूर्व ही गल गया है। इसलिए उत्कृष्ट आबाधा चार हजार वर्ष और एक समय अधिक एक आवलि इनसे हीन कषायोंकी उत्कृष्ट कर्मस्थिति कषायोंके उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण होता है। शेष अनुत्कृष्ट निक्षेपोंकी उत्पादन विधि जानकर करनी चाहिये।

विशेषार्थ—उक्त उदाहरण द्वारा कषायोंकी उत्कृष्ट बन्धस्थितिको विवक्षित कर उत्कर्षण की अपेक्षा उत्कृष्ट अतिस्थापना और उत्कृष्ट निक्षेप कैसे प्राप्त होते हैं इन्हें यहाँ स्पष्ट करके बतलाया गया है। समझो किसी जीवने कषायोंकी ४० कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट-स्थितिकाबन्ध किया। तदनन्तर बन्धावलिके बाद प्रथम समयमें उत्कृष्ट स्थितिके अन्तिम निषेक-सम्बन्धी परमाणुपुंजका अपकर्षण कर अतिस्थापनावलिके बाद उसे उससे नीचेकी सब स्थितियों में निक्षिप्त किया। तदनन्तर उदयावलिके बादकी प्रथम स्थितिके उदयावलिमें प्रविष्ट हो जानेपर उसके बादकी द्वितीय स्थितिके अपकर्षित हुए परमाणुपुंजका तत्काल बँधनेवाली कषाय-की उत्कृष्ट स्थितिमें उत्कर्षण करता हुआ उस नये बन्धके उत्कृष्ट आबाधा कालको छोड़कर ऊपर एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण अन्तकी स्थितियोंको छोड़कर मध्यकी शेष सब स्थितियोंमें निक्षिप्त किया। यहाँ एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण अन्तकी स्थितियोंमें उस उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप इसलिये नहीं होता, क्योंकि उस परमाणुपुंजकी उस समय उससे हीन ही शक्तिस्थिति अवशिष्ट रही है। इस समूचे कथनका सार यह है—

(१) जिस तत्काल बँधनेवाले नये उत्कृष्ट बन्धमें यह उत्कर्षण हुआ है उसका उत्कृष्ट आबाधा काल चार हजार वर्षप्रमाण है और आबाधाके भीतर उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप नहीं होता, इसलिए तत्काल बँधनेवाली कषायकी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे प्रारम्भके चार हजार वर्ष तो ये कम हो गये। अतः एक तो इन्हें अतिस्थापनारूपसे स्वीकार कर उत्कर्षित किये जानेवाले द्रव्यका आबाधाके भीतर निक्षेप नहीं करता।

(२) इसके बाद आबाधाके चार हजार वर्षको छोड़कर आबाधाके ऊपरकी प्रथम निषेक स्थितिसे लेकर आगम परिपाटीके अनुसार अन्तकी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण निषेक स्थितियोंको छोड़कर शेष सब निषेक स्थितियोंमें उत्कर्षित द्रव्यको निक्षिप्त करता है। इस प्रकार यहाँ निक्षेपका प्रमाण एक समय एक आवलि अधिक उत्कृष्ट आबाधा कालसे कम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है।

(३) आबाधा कालके भीतर उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप होता नहीं, इसलिए तो उत्कृष्ट निक्षेपमेंसे उत्कृष्ट आबाधाको कम कराया गया है एक आवलिपूर्व जिस कर्मका उत्कृष्ट स्थिति-

§ ३६१. एवमुक्कस्सणिक्खेवपमाणावहारणं काढूण संपहि अइच्छावणाए एयवियप्पत्तपडिसेहदुवारेण तत्थ संभवंताणं वियप्पाणं परूवणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** जाओ आबाहाए उवरि ट्ठिदीओ तासिमुक्कड्डिज्जमाणीणमइच्छावणा सव्वत्थ आवलिया।**

§ ३६२. आबाहादो उवरिमाओ जाओ ट्ठिदीओ तासिमुक्कड्डिज्जमाणाणमइच्छावणा जहण्णिया उक्कस्सिया च आवलियपमाणा चेव होदि, तत्थ पयारंतरासंभवादो त्ति वुत्तं होइ।

§ ३६३. जाओ पुण आबाहाए अब्भंतरिमाओ संतकम्मट्ठिदीओ तासिमुक्कड्डणाए अइच्छावणावुड्ढी एवमणुगंतव्वा त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** जाओ आबाहाए हेट्ठा संतकम्मट्ठिदीओ तासिमुक्कड्डिज्जमाणीण-**

बन्ध किया था उसकी अग्र स्थितिका एक आवलि कालके बाद अपकर्षण होकर उसका निक्षेप उदय समयसे होकर तदनन्तर उदयावलिके बाहरकी द्वितीय स्थितिका उत्कर्षण होनेपर अन्तमें एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण निषेकको छोड़कर आबाधाके ऊपरकी शेष सब स्थितियोंमें उसका निक्षेप होता है, इसलिये निक्षेपमेंसे उत्कृष्ट आबाधाके साथ एक समय अधिक एक आवलि काल कम कराया गया है।

इस प्रकार उत्कर्षणकी अपेक्षा उत्कृष्ट अतिस्थापनाके साथ उत्कृष्ट निक्षेप कैसे बनता है इसका यहाँ आगमानुसार खुलासा किया। शेष कथन सुगम है।

*** जो आबाधाके ऊपरकी स्थितियाँ हैं उत्कर्षणको प्राप्त हुई उनकी अतिस्थापना सर्वत्र एक आवलिप्रमाण होती है।**

§ ३६१. इस प्रकार उत्कृष्ट निक्षेपके प्रमाणका निश्चय करके अब अतिस्थापना एक प्रकारकी होती है इसके प्रतिषेध द्वारा उसमें सम्भव भेदोंका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र-प्रबन्ध आया है—

§ ३६२. आबाधाकी उपरितन जो स्थितियाँ हैं उत्कर्षणको प्राप्त हुई उनकी जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण ही होती है, क्योंकि वहाँ कोई दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—उत्कर्षणकी अपेक्षा सोपक्रम और निरुपक्रमके भेदसे स्थिति भी दो प्रकारकी होती है। चाहे इन दोनोंमेंसे किसी भी प्रकारकी स्थिति क्यों न हो, यदि वे तत्काल बन्धको प्राप्त होनेवाले कर्मकी जितनी आबाधा प्राप्त हो उससे अधिक स्थितिवाली हैं तो उनका विवक्षित बन्धमें उत्कर्षण होते समय अतिस्थापना सर्वत्र एक आवलिप्रमाण ही प्राप्त होती है। इस अतिस्थापनामें जघन्य और उत्कृष्टका भेद नहीं है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

§ ३६३. किन्तु जो आबाधाके भीतर सत्कर्मस्थितियाँ हैं उनकी उत्कर्षणविषयक अतिस्थापनाकी वृद्धि इस प्रकार जाननी चाहिये इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जो आबाधाके नीचे (भीतर) सत्कर्म स्थितियाँ हैं उत्कर्षणको प्राप्त हुई**

मइच्छावणा किस्से वि ट्ठिदीए आवलिया, किस्से वि ट्ठिदीए समयुत्तरा, किस्से वि ट्ठिदीए विसमयुत्तरा, किस्से वि ट्ठिदीए तिसमयुत्तरा, एवं णिरंतरमइच्छावणाट्ठाणाणि जाव उक्कस्सिया अइच्छावणा त्ति ।

§ ३६४. आबाहब्भंतरसमयाहियचरिमावलियमेत्तीणं ट्ठिदीणमावलियमेत्ता चेव अइच्छावणा होदि । तत्तो हेट्ठिमाणं ट्ठिदीणं समयुत्तरकमेण पच्छाणुपुव्वीए जहाकम-मइच्छावणावुड्ढी दट्ठव्वा जाव उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदीए सव्वुक्कस्सियाए अइच्छावणा होदूण पज्जवसिदा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो ।

उनकी अतिस्थापना किसी स्थितिकी एक आवलिप्रमाण, किसी भी स्थितिकी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण, किसी भी स्थितिकी दो समय अधिक एक आवलिप्रमाण तथा किसी भी स्थितिका तीन समय अधिक एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना होती है, इस प्रकार उत्कृष्ट अतिस्थापनाके प्राप्त होनेतक अन्तरके बिना ये अतिस्थापनाके सब स्थान जानने चाहिये ।

§ ३६४. आबाधाके भीतर एक समय अधिक अन्तिम आवलिप्रमाण स्थितियोंकी एक आवलिप्रमाण ही अतिस्थापना होती है । परन्तु उससे नीचेकी स्थितियोंकी एक एक समय अधिकके क्रमसे पश्चादानुपूर्वीसे यथाक्रम अतिस्थापनाकी वृद्धि तबतक जाननी चाहिये जब जाकर उदयावलिके बाहरकी अनन्तर स्थितिकी सर्वोत्कृष्ट अतिस्थापना होकर वह पर्यवसानको प्राप्त हो जाती है । इस प्रकार यह इस सूत्रका प्रकृतमें समुच्चयरूप अर्थ है ।

विशेषार्थ—इस बातका तो पहले ही स्पष्टीकरण कर आये हैं कि आबाधाके ऊपर जितनी सत्त्वस्थितियाँ होती हैं उनका उत्कर्षण होनेपर सर्वत्र एक आवलिप्रमाण ही अतिस्थापना प्राप्त होती है । मात्र आबाधाके भीतर जो सत्त्वस्थितियाँ होती हैं उनकी अतिस्थापनाके प्राप्त होनेका क्रम क्या है इसी बातका यहाँ समाधान किया गया है । खुलासा इस प्रकार है—यह तो पहले ही स्पष्ट कर आये हैं कि उत्कर्षित द्रव्यका आबाधाके भीतर निक्षेप नहीं होता । अतः आबाधाके भीतर प्राप्त हुई अधिकसे अधिक किस सत्त्वस्थिति लेकर उसका उत्कर्षण करनेपर अतिस्थापना एक आवलिसे लेकर कितनी प्राप्त होती है इसी बातका उत्तर देते हुए यह बतलाया गया है कि जिस स्थानपर तत्काल बँधनेवाले कर्मकी आबाधा समाप्त होती है उससे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थान नीचे जाकर जो सत्त्व स्थिति अवस्थित है उससे लेकर स्थितिके विवक्षित परमाणुपुंजका उत्कर्षण करनेपर पूरी एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना होकर आबाधाके ऊपर प्रथम व द्वितीय आदि निषेकसे लेकर क्रमसे उस उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप होता है । इससे आगे सर्वत्र अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण ही प्राप्त होगी यह स्पष्ट है । मात्र पश्चादानुपूर्वीसे विचार करनेपर अतिस्थापनाके प्रमाणमें एक समय, दो समय आदिकी वृद्धि होती जाती है । समझो जहाँ उत्कृष्ट आबाधा समाप्त हुई उससे दो समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थान नीचे जाकर जो सत्त्वस्थिति है उसके विवक्षित परमाणुपुंजका उत्कर्षण करनेपर अतिस्थापना एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण प्राप्त होगी । उस सत्त्वस्थितिसे एक समय नीचे जाकर उसके विवक्षित परमाणुपुंजका उत्कर्षण करनेपर अतिस्थापना दो समय अधिक एक आवलिप्रमाण प्राप्त होगी । इसी प्रकार आबाधाके भीतर क्रमसे जितने-जितने स्थान नीचे

§ ३६५. संपहि एत्थ उक्कस्साइच्छावणापमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** उक्कस्सिया पुण अइच्छावणा केत्तिया ?**

§ ३६६. सुगमं ।

*** जा जस्स उक्कस्सिया आबाहा सा उक्कस्सिया आबाहा समयाहियावलियूणाए उक्कस्सिया अइच्छावणा ।**

§ ३६७. जस्स जीवस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स जा उक्कस्सिया आबाहा तस्स सा उक्कस्सिया आबाहा समयाहियावलियूणा उक्कस्सिया अइच्छावणा होइ, उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदीए उक्कड्डिज्जमाणाए तदुवलंभादो ।

§ ३६८. एवमेत्तिएण पबंधेण ट्ठिदिउक्कड्डणाविसयाणं जहण्णुक्कस्सणिक्खे-

---

जाते जायेंगे उसी क्रमसे अतिस्थापनामें एक-एक समयकी वृद्धि होती जायगी । अब इस अतिस्थापनाकी वृद्धिका अन्त कहाँपर होता है उसे ही आगे स्पष्ट किया जा रहा है ।

§ ३६५. अब उत्कृष्ट अतिस्थापनाके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** परन्तु उत्कृष्ट अतिस्थापना कितनी होती है ?**

§ ३६६. यह सूत्र सुगम है ।

*** जो जिस कर्मकी उत्कृष्ट आबाधा है एक समय अधिक एक आवलि कम वह उत्कृष्ट आबाधा उस कर्मकी उत्कृष्ट अतिस्थापना होती है ।**

§ ३६७. उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जिस जीवकी तत्सम्बन्धी जो उत्कृष्ट आबाधा होती है उसकी वह उत्कृष्ट आबाधा एक समय अधिक एक आवलि कम होकर उत्कृष्ट अतिस्थापना होती है, क्योंकि उदयावलिके बाहरकी अनन्तर स्थितिका उत्कर्षण करनेपर वह प्राप्त होती है ।

विशेषार्थ—समझो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि किसी जीवने उत्कृष्ट संक्लेशके परवश होकर चारित्रमोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कर उसकी चार हजार वर्षप्रमाण उत्कृष्ट आबाधा प्राप्त की । तदनन्तर बन्धावलिके बाद उसके अन्तिम निषेकके कुछ परमाणुपुंजका अपकर्षण कर उदय समयसे निक्षिप्त किया । तदनन्तर अगले समयमें उदयावलिके उपरितन निषेकमें निक्षिप्त हुए उस परमाणुपुंजका उत्कर्षण कर आबाधाके ऊपर आगेकी स्थितियोंमें निक्षिप्त किया तो इस प्रकार उस उत्कर्षित द्रव्यकी उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय अधिक एक आवलि कम उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण प्राप्त हो जाती है ऐसा यहाँ समझना चाहिए । इसी प्रकार ज्ञानावरणादि अन्य छह कर्मोंकी और दर्शनमोहनीयकी भी अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिको ध्यानमें रखकर उत्कृष्ट अतिस्थापना प्राप्त कर लेनी चाहिये । इस सम्बन्धमें विशेष स्पष्टीकरण पहले ही कर आये हैं ।

§ ३६८. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा स्थिति उत्कर्षणविषयक जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेप

वाइच्छावणाणं पमाणावहारणं कादूण ओकड्डणविसयाणं च तेसिं सुगमत्ताहिप्पाएण परूवणमकाऊण संपहि एदेसिं चेव पदाणमोकड्डणविसयाणं थोवबहुत्तजाणावणट्ठ-मुवरिमं पबंधमाह—

*** उक्कड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए जहण्णगो णिक्खेवो थोवो ।**

§ ३६९. किं कारणं ? आवलियाए असंखेज्जदिभागपमाणत्तादो ।

*** ओकड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए जहण्णगो णिक्खेवो असंखेज्जगुणो ।**

§ ३७०. किं कारणं ? आवलियतिभागपमाणत्तादो ।

*** ओकड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए जहण्णिया अधिच्छावणा थोवूणा दुगुणा ।**

§ ३७१. कुदो ? समयूणावलियाए वेत्तिभागपमाणत्तादो, पुव्विल्लो समयूणा-वलियाए तिभागो समयुत्तरो । एदे वुण समयूणावलियाए वेत्तिभागा तेणेसा जहण्णाइच्छावणा दुरूवूणदुगुणा होदूण विसेसाहिया जादा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो ।

*** ओकड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए उक्कस्सिया अइच्छावणा णिव्वाघादेण**

तथा अतिस्थापनाके प्रमाणका अवधारण करके अब अपकर्षणविषयक उनका सुगमतारूप अभिप्रायसे प्ररूपणा नहीं करके अब उत्कर्षण और अपकर्षणविषयक इन्हीं पदोंके अल्पबहुत्वका ज्ञान करानेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** उत्कर्षित की जानेवाली स्थितिका जघन्य निक्षेप सबसे थोड़ा है ।**

§ ३६९. क्योंकि वह आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

*** उससे अपकर्षित की जानेवाली स्थितिका जघन्य निक्षेप असंख्यातगुणा है ।**

§ ३७०. क्योंकि वह आवलिके त्रिभागप्रमाण है ।

विशेषार्थ—एक समय कम एक आवलिके तीन भाग करे । पुनः एक त्रिभागमें एक मिला दे । इतना अपकर्षित की जानेवाली स्थितिके जघन्य निक्षेपका प्रमाण होता है जो उत्कर्षित की जानेवाली स्थितिके जघन्य निक्षेप आवलिके असंख्यातवें भागसे नियमसे असंख्यातगुणा होता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये ।

*** उससे अपकर्षित की जानेवाली स्थितिकी जघन्य अतिस्थापना कुछ कम दूनी है ।**

§ ३७१. क्योंकि वह एक समय कम एक आवलिके दो-तीन भागप्रमाण है । यतः अनन्तर पूर्व कहा गया निक्षेप एक समय कम एक आवलिके समयाधिक त्रिभागप्रमाण है और यह काल एक समय कम एक आवलिके दो-तीन भागप्रमाण है, इसलिए यह जघन्य अतिस्थापना दो कम दूनी होकर पूर्वोक्तसे विशेष अधिक हो गई है यह इस सूत्रका भावार्थ है ।

*** उससे अपकर्षित की जानेवाली स्थितिकी उत्कृष्ट अतिस्थापना तथा निर्व्या-**

उक्कड्डिज्जमाणाए ट्ठिदीए जहण्णिया अइच्छावणा च तुल्लाओ विसेसाहियाओ।

§ ३७२. केत्तियमेत्तो विसेसो ? समयूणावलियाए तिभागो समयाहियमेत्तो। किं कारणं ? पुव्विल्लवेत्तिभागेसु तेत्तियमेत्ते पक्खित्ते संपुण्णावलियमेत्ताए णिव्वाघादविसयोकड्डणुक्कस्साइच्छावणाए उक्कड्डणाविसयणिव्वाघाद-जहण्णाइच्छावणाए च समुप्पत्तिदंसणादो।

❋ आवलिया तत्तिया चेव।

§ ३७३. सुगमं।

❋ उक्कड्डणा उक्कस्सिया अधिच्छावणा संखेज्जगुणा।

§ ३७४. किं कारणं ? समयाहियावलियूणुक्कस्साबाहपमाणत्तादो।

घातरूपसे उत्कर्षित की जानेवाली स्थितिकी जघन्य अतिस्थापना तुल्य होकर विशेष अधिक है।

§ ३७२. शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—एक समय कम आवलिका एक समय अधिक त्रिभागप्रमाण विशेषका प्रमाण है, क्योंकि पहलेके दो त्रिभागोंमें (एक समय कम आवलिके दो-त्रिभागोंमें) उतना अर्थात् एक समय कम आवलिके एक समय अधिक त्रिभागके मिलानेपर सम्पूर्ण आवलिप्रमाण निर्व्याघातविषयक अपकर्षणकी उत्कृष्ट अतिस्थापनाकी तथा उत्कर्षणविषयक निर्व्याघात जघन्य अतिस्थापनाकी उत्पत्ति देखी जाती है।

विशेषार्थ—उत्कर्षणकी व्याघ्यातरूप जघन्य अतिस्थापना एक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय कम आवलिप्रमाण होती है। इसमें एक समय मिलानेपर उत्कर्षणकी निर्व्याघातरूप जघन्य अतिस्थापना प्रारम्भ होती है, इसलिए सूत्रमें उत्कर्षणकी जघन्य अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण सिद्ध करनेके पहले निर्व्याघ्यात यह विशेषण लगाया है। शेष कथन सुगम है।

❋ आवलिका प्रमाण भी उतना ही है।

§ ३७३. यह सूत्र सुगम है।

❋ उससे उत्कर्षणविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना संख्यातगुणी है।

§ ३७४. क्योंकि वह एक समय अधिक एक आवलिसे कम उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण है।

विशेषार्थ—किसी संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवने उत्कृष्ट संक्लेशसे चारित्रमोहनीय कर्मका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया। तदनन्तर बन्धावलिके बाद अनन्तर समयमें उसने अग्रस्थितिके विवक्षित परमाणुपुंजका अपकर्षण कर उदयावलिके बादकी प्रथम स्थितिसे उसे निक्षिप्त किया। तदनन्तर अगले समयमें उदयावलिके अनन्तर समयमें निक्षिप्त हुए उक्त परमाणुपुंजके उदयावलिमें प्रविष्ट हो जानेपर उसके बादके समयमें निक्षिप्त हुए उक्त परमाणुपुंजको उत्कर्षित कर उसे आबाधाके ऊपर निक्षिप्त करनेपर उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय अधिक एक आवलिसे कम उत्कृष्ट आबाधा प्रमाण प्राप्त होती है, इसीलिए उसे एक आवलिसे संख्यातगुणी कहा है, क्योंकि उक्त आबाधा संख्यात आवलिप्रमाण होती है।

*** ओकड्डणादो वाघादेण उक्कस्सिया अधिच्छावणा असंखेज्जगुणा।**

§ ३७५ कुदो ? समयूणुक्कस्सट्ठिदिखंडयपमाणत्तादो।

*** उक्कड्डणाद उक्कस्सगो णिक्खेवो विसेसाहिओ।**

§ ३७६. केत्तियमेत्तेण ? अंतोकोडाकोडिमेत्तेण। किं कारणं ? समयाहिया-वलियसहिदुक्कस्साबाहाए परिहीणचत्तालीस-सागरोवमकोडाकोडिमेत्तुक्कस्सट्ठिदीए एत्थुक्कस्सणिक्खेवभावेण विवक्खियत्तादो।

*** उससे व्याघातकी अपेक्षा अपकर्षणकी उत्कृष्ट अतिस्थापना असंख्यात-गुणी है।**

§ ३७५. क्योंकि यह एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकप्रमाण होती है।

विशेषार्थ—जिस कर्मकी जितनी उत्कृष्ट कर्मस्थिति होती है उसकी अपेक्षा अपकर्षणकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकप्रमाण व्याघ्यातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना होती है जो स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय अग्र स्थितिकी प्राप्त होती है। खुलासा इस प्रकार हैं—समझो किसी संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवने चारित्रमोहनीय कर्मका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध किया। पश्चात् बन्धावलिके बाद अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण स्थितिको छोड़कर उसने शेष स्थितिका काण्डकघात करनेके लिये आरम्भ करते हुए अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उसकी फालियाँ करके प्रत्येक समयमें एक-एक फालिका पतन प्रारम्भ किया। ऐसा करते हुए जबतक उपान्त्य फालिका पतन नहीं होता तबतक प्रत्येक फालिके पतनके समय निर्व्याघातरूप एक आवलिप्रमाण ही अतिस्थापना प्राप्त होती है, क्योंकि प्रत्येक फालिके उपरितन परमाणुपुंजका नीचे एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनाको छोड़कर शेष स्थितिमें उसका निक्षेप होता रहता है, इसलिए इसे निर्व्याघात अतिस्थापना ही समझनी चाहिये। मात्र अन्तिम फालिका जब काण्डकघातके अन्तिम समयमें पतन होता है तब उक्त फालिकी उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय कम एक काण्डकप्रमाण प्राप्त होती है, क्योंकि इस फालिकी अग्र स्थितिका पतन उसके नीचे उससे कम उस विवक्षित काण्डकके नीचेकी किसी भी स्थितिमें न होकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण स्थितिमें होता है, इसलिए यह व्याघातविषयक उत्कृष्ट अतिस्थापना जाननी चाहिये। तथा इस अग्र स्थितिसे नीचेके निषेकका पतन होनेपर इसकी अतिस्थापना दो समय कम उत्कृष्ट काण्डक-प्रमाण प्राप्त होती है। यह भी व्याघात विषयक अतिस्थापना है। किन्तु इसमें एक समय कम हो जानेसे यह मध्यम अतिस्थापना कही जायगी। इसी प्रकार आगे-आगे अतिस्थापनामें एक-एक समय कम होते हुए जहाँ जाकर एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना प्राप्त होती है वहाँ तक व्याघातविषयक अतिस्थापना जाननी चाहिये। यह इसका जघन्य भेद है। प्रसंगसे इतना विशेष जानना चाहिये।

*** उससे उत्कर्षणकी अपेक्षा उत्कृष्ट निक्षेप विशेष अधिक है।**

§ ३७६. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण अधिक है, क्योंकि एक समय और एक आवलि अधिक उत्कृष्ट आबाधासे हीन चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट स्थिति यहाँ उत्कृष्ट निक्षेप-रूपसे विवक्षित है।

❀ ओकड्डुणादो उक्कस्सगो णिक्खेवो विसेसाहिओ ।

§ ३७७. केत्तियमेत्तो विसेसो ? संखेज्जावलियमेत्तो । किं कारणं ? आवलियूणुक्कस्साबाहाए एत्थ पवेसदंसणादो ।

❀ उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ ३७८. केत्तियमेत्तेण ? समयाहियदोआवलियमेत्तेण । किं कारणं ? समयाहियाइच्छावणावलियाए सह बंधावलियाए वि एत्थ पवेसदंसणादो । संपहि एदस्सेव विसेसपमाणस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ दोआवलियाओ समयुत्तराओ विसेसो ।

§ ३७९. गयत्थमेदं सुत्तं ।

§ ३८०. एवमेत्तिएण पबंधेण ओवट्टणविदियमूलगाहाए अत्थविहासा समत्ता ।

विशेषार्थ—उत्कर्षणकी अपेक्षा उत्कृष्ट अतिस्थापनाका प्रमाण बतला आये हैं। चारित्रमोहनीयके उत्कृष्ट स्थितिबन्ध चालीस कोड़ाकोड़ी सागरोपममेंसे उतना कम कर देनेपर उत्कर्षण की अपेक्षा उत्कृष्ट निक्षेपका उक्त प्रमाण प्राप्त होता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये ।

❀ उससे अपकर्षणकी अपेक्षा उत्कृष्ट निक्षेप विशेष अधिक है ।

§ ३७७. शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—संख्यात आवलि विशेषका प्रमाण है, क्योंकि एक आवलि कम उत्कृष्ट आबाधा का इसमें प्रवेश देखा जाता है ।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट स्थिति बन्ध होनेपर बन्धावलिके बाद उसकी अग्र स्थितिका अपकर्षण करनेपर यह निक्षेप प्राप्त होता है, इसलिए इसे उत्कर्षणकी अपेक्षा प्राप्त हुए पूर्वोक्त उत्कृष्ट निक्षेपसे विशेष अधिक कहा है जो एक आवलि कम उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण प्राप्त होता है ।

❀ उससे उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ ३७८. शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—एक समय अधिक दो आवलिप्रमाण अधिक है, क्योंकि एक समय अधिक अतिस्थापनावलिके साथ बन्धावलिका भी इसमें प्रवेश देखा जाता है। अब इसी विशेष प्रमाणका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ वह विशेष एक समय अधिक दो आवलिप्रमाण है ।

§ ३७९. यह सूत्र गतार्थ है ।

विशेषार्थ—अग्रस्थितिका अपकर्षण हुआ, इसलिए एक समय तो यह कम हो गया । अग्रस्थितिके नीचे एक आवलि अतिस्थापनामें गई, इसलिए एक आवलि यह कम हो गई, तथा यह बन्धावलिके बाद अपकर्षण हुआ, इसलिए उत्कृष्ट स्थितिमेंसे एक आवलि और कम हो गई। इसलिये इस कमको पूर्वोक्त निक्षेपमें मिला देनेपर उत्कृष्ट सत्कर्मको इतना अधिक कहा है ।

§ ३८०. इस प्रकार इतने प्रबन्धके द्वारा अपवर्तनाविषयक मूल गाथाकी अर्थविभाषा

णवरि 'तहाणुभागेसणंतेसु' त्ति एसो भासगाहाए चरिमावयवो अणुभागविसयओकड्डुक्कड्डणाणं जहण्णुक्कस्सणिक्खेवपमाणावहारणे पडिबद्धो सुगमो त्ति चुणिसुत्तयारेण तव्विहासा णाढत्ता, उवरि मूलगाहाए पडिबद्धविदियभासगाहाए अणुभागविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणं जहण्णुक्कस्साइच्छावणाणिक्खेवेहिं विसेसियूण परूवणोवलंभादो च। तम्हा तत्थेव तस्स वित्थारपरूवणं कस्सामो त्ति एदेणाहिप्पाएण एत्थाणुभागविसया पयदपरूवणा णाढत्ता त्ति घेत्तव्वं।

*** एत्तो सत्तमी मूलगाहा।**

§ ३८१. सुगमं। णवरि एसा जइ वि ओवट्टणाए तदिया मूलगाहा तो वि संकामणपट्ठवगस्स चउहिं मूलगाहाहिं सह जोइज्जमाणा सत्तमी मूलगाहा त्ति णिद्दिट्ठा। का पुण ओवट्टणा णाम ? ट्ठिदि-अणुभागदुवारेण कम्मपदेसाणमोकड्डणा उक्कड्डणासहभाविणी ओवट्टणा त्ति भण्णदे। तदो तव्विसयजहण्णुक्कस्साइच्छावण-णिक्खेवादिपरूवणाए णिबद्धत्तादो एदाओ तिण्णि मूलगाहाओ ओवट्टणाए पडिबद्धाओ त्ति भणिदाओ। तम्हा संकामणपट्ठवगविवक्खाए सत्तमी मूलगाहा एण्हिमवयारिज्जदि त्ति सुसंबद्धं।

समाप्त हुई। इतनी विशेषता है कि 'तहाणुभागेसणंतेसु' इस प्रकार अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपप्रमाणके अवधारणासे सम्बन्ध रखनेवाला यह भाष्यगाथाका अन्तिम अवयव सुगम होनेसे चूर्णिसूत्रकारने तद्विषयक विभाषा आरम्भ नहीं की, क्योंकि उपरिम मूल गाथासे प्रतिबद्ध दूसरी भाष्यगाथामें अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणसम्बन्धी जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेपसे विशेषित प्ररूपणा पाई जाती है, इसलिये वहीं उसकी विस्तारसे प्ररूपणा करेंगे, इसलिए इस अभिप्रायसे यहाँ अनुभागविषयक प्ररूपणा आरम्भ नहीं की गई ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

*** अब आगे सातवीं मूलगाथा आरम्भ होती है।**

§ ३८१. यह मूल सूत्रगाथा सुगम है। इतनी विशेषता है कि यह यद्यपि अपवर्तनाविषयक तीसरी मूल गाथा है तो भी संक्रामकप्रस्थापकसम्बन्धी चार मूल गाथाओंके साथ गिनती करनेपर यह सातवीं मूलगाथा है ऐसा निर्देश किया गया है।

शंका—अपवर्तना किसे कहते हैं ?

समाधान—स्थिति और अनुभागरूपसे उत्कर्षणके साथ होनेवाले कर्मप्रदेशोंके अपकर्षणको अपवर्तना कहते हैं।

इसलिए तद्विषयक जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेप आदिकी प्ररूपणामें निबद्ध होनेसे ये तीन मूलगाथाएँ अपवर्तनाके कथनके साथ प्रतिबद्ध हैं ऐसा यहाँ कहा है। इस कारण संक्रामण प्रस्थापककी विवक्षामें सातवीं मूलगाथा इस समय अवतरित की जाती है इस प्रकार यह सब कथन सुसम्बद्ध है।

*** तं जहा ।**

§ ३८२. सुगममेदं पयदगाहासुत्तावयारावेक्खं पुच्छावक्कं ।

(१०४) ट्ठिदि-अणुभागे अंसे के के वड्ढदि के व हरस्सेदि ।
केसु अवट्ठाणं वा गुणेण किं वा विसेसेण ॥१५७॥

§ ३८३. एसा सत्तमी मूलगाहा ट्ठिदि-अणुभागविसयाणं चेव ओकड्डणुक्कड्डणाणं किंचि अत्थपदपरूवणट्ठमोइण्णा । जइ एवं, णाढवेदव्वमिदं गाहासुत्तं, पुव्विल्लदोमूलगाहाहिं चेव ओकड्डणुक्कड्डणविसयाए जहण्णुक्कस्सणिक्खेवाइच्छावणादिपरूवणाए पवंचिदत्तादो ? ण एस दोसो, पुव्विल्लदोमूलगाहाहिं परूविदजहण्णुक्कस्सणिक्खेवाइच्छावणादिविसेसाणमोकड्डुक्कड्डणाणं पुणो वि विसेसियूणेत्थ परूवणोवलंभादो । संपहि एदिस्से गाहाए किंचि अवयवत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा— 'ट्ठिदिअणुभागे अंसे' एवं भणिदे ट्ठिदिअणुभागविसेसिदे कम्मपदेसे 'के के वड्ढदि' किमविसेसेण सव्वे चेव, आहो बंधसरिसे हीणे अहिए वा त्ति एसो पढमो पुच्छाणिद्देसो । 'के व हरस्सेदि' त्ति एत्थ वि तहा चेव ओकड्डणाए पुच्छाणुगमो कायव्वो ।

*** वह जैसे ।**

§ ३८२. प्रकृत गाथा सूत्रके अवतारसे सम्बन्ध रखनेवाला यह पृच्छावाक्य सुगम है ।

*** स्थित और अनुभागविषयक किन-किन कर्मप्रदेशोंको बढ़ाता अथवा घटाता है, अथवा किन कर्मप्रदेशोंमें अवस्थान होता है । तथा यह वृद्धि, हानि और अवस्थान गुणकाररूपसे होता है या विशेषरूपसे होता है ॥१५७॥**

§ ३८३. यह सातवीं मूलगाथा स्थिति और अनुभागविषयक ही अपकर्षण और उत्कर्षणसम्बन्धी किंचित् अर्थपदकी प्ररूपणाके लिए अवतीर्ण हुई है ।

शंका—यदि ऐसा है तो इस गाथासूत्रको आरम्भ नहीं करना चाहिये, क्योंकि पूर्वकी दो मूलगाथाओंके द्वारा ही अपकर्षण और उत्कर्षणविषयक जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेप और अतिस्थापना आदिकी प्ररूपणा विस्तारसे कर आये हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि पहलेकी दो गाथाओं द्वारा प्ररूपित जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेप और अतिस्थापना आदि विशिष्ट अपकर्षण और उत्कर्षणकी फिर भी विशेषरूपसे यहाँ प्ररूपणा पाई जाती है ।

अब इस गाथाकी अवयवसम्बन्धी किंचित् अर्थकी प्ररूपणा करते हैं । वह जैसे—'ट्ठिदि-अणुभागे अंसे' ऐसा कहनेपर स्थिति और अनुभागसे युक्त कर्मप्रदेश कौन-कौन बढ़ते हैं, क्या सामान्यरूपसे सभी कर्मप्रदेश बढ़ते हैं या बन्धके समान, बन्धसे हीन या बन्धसे अधिक स्थिति और अनुभागवाले कर्मप्रदेश बढ़ते हैं यह प्रथम पृच्छाका निर्देश है । 'के वा हरस्सेदि' इस प्रकार यहाँपर भी उसी प्रकार अपकर्षणविषयक पृच्छाका अनुगम करना चाहिये । इस प्रकार गाथाके पूर्वार्द्धमें

एवमेदाहिं दोहि पुच्छाहिं गाहापुव्वद्धणिबद्धाहिं ओकड्डुक्कड्डुणाणं पवुत्तिविसेसो ट्ठिदिअणुभागविसओ पुच्छिदो होदि ।

§ ३८४. 'केसु अवट्ठाणं वा' एदेण वि गाहावयवेण केसु ट्ठिदिअणुभागविसेसेसु वड्ढि-हाणीहिं विणा अवट्ठाणं होदि त्ति पुच्छादुवारेण ओकड्डुक्कड्डुणाणमप्पाओग्गभावेणावट्ठिदाणं ट्ठिदि-अणुभागाणं संभवासंभवविसया परूवणा सूचिदा दट्ठव्वा । 'गुणेण किं वा विसेसेणे'त्ति एदेण वि चरिमसुत्तावयवेण वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणविसेसिदाणं थोवबहुत्तविसओ पुच्छाणिद्देसो कओ । संपहि एवंविहत्थपडिबद्धाए एदिस्से सत्तमीए मूलगाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो तत्थ ताव चउण्हं भासगाहाणमत्थित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** एदिस्से चत्तारि भासगाहाओ ।**

§ ३८५. सुगमं ।

*** तासिं समुक्कित्तणा च विहासा च ।**

§ ३८६. तासिं भासगाहाणं समुक्कित्तणापुरस्सरमत्थविहासा कायव्वा त्ति भणिदं होइ । तत्थ ताव पढमाए भासगाहाए समुक्कित्तणं कुणमाणो इदमाह—

*** पढमभासगाहाए समुक्कित्तणा ।**

निबद्ध इन दो पृच्छाओंके द्वारा अपकर्षण और उत्कर्षणविषयक स्थिति अनुभागसम्बन्धी प्रवृत्ति विशेषकी पृच्छा की गई है ।

§ ३८४. 'केसु अवट्ठाणं वा' गाथाके इस अवयव द्वारा किन स्थिति और अनुभागविषयक विशेषोंमें वृद्धि और हानिके बिना अवस्थान होता है इस प्रकार इस पृच्छा द्वारा अपकर्षण और उत्कर्षणके अयोग्यरूपसे अवस्थित स्थिति और अनुभागकी सम्भावना और असम्भावनाविषयक प्ररूपणा सूचित की गई जानना चाहिये । तथा 'गुणेण किं वा विसेसेण' इस प्रकार सूत्रके इस अन्तिम अवयवके द्वारा भी वृद्धि, हानि और अवस्थान विशिष्ट प्रदेशोंके अल्पबहुत्वविषयक पृच्छाका निर्देश किया गया है । अब इस प्रकारके अर्थमें निबद्ध इस सातवीं मूलगाथाकी अर्थविभाषा करते हुए प्रकृतमें सर्वप्रथम चार भाष्यगाथाओंके अस्तित्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इसकी चार भाष्यगाथाएं हैं ।**

§ ३८५. यह सूत्र सुगम है ।

*** अब उनकी समुत्कीर्तना और विभाषा करते हैं ।**

§ ३८६. उन भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तनापूर्वक अर्थविभाषा करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उनमेंसे सर्वप्रथम प्रथम भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हुए इस सूत्रवचनको कहते हैं—

*** उनमेंसे प्रथम भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना इस प्रकार है ।**

§ ३८७. सुगमं ।

(१०५) ओवट्टेदि ट्ठिदिं पुण अधिगं हीणं च बंधसमगं वा ।
उक्कड्डदि बंधसमं हीणं अधिगं ण वड्ढेदि ॥१५८॥

§ ३८८. एदिस्से पढमभासगाहाएद्धे पुव्वण वि ट्ठिदिओकड्डणाए पवुत्तिकमो जाणाविदो । पच्छद्धेण वि ट्ठिदिउक्कड्डणाए पवुत्तविसेसो परूविदो दट्ठव्वो । तं कधं ? 'ओवट्टेदि ट्ठिदिं पुण' एवं भणिदे ट्ठिदिमोकड्डमाणो बंधसममेव कादूणोकड्डदि त्ति णत्थि णियमो, किंतु बंधेण सरिसं वा हीणं वा अहियं वा कादूणोकड्डदि त्ति एसो अत्थविसेसो जाणाविदो ? तेण उवरिमाओ इच्छिदणिसेगट्ठिदीओ ओकड्डमाणो बंधग्ग-ट्ठिदीए सरिसं पि कादूणोकड्डिदुं लहदि त्ति बंधग्गट्ठिदीदो हेट्ठिमबज्झमाणाबज्झमाण-णिसेगट्ठिदिसरूवेण वि ओकड्डिदुं लहदि । पुणो बंधग्गट्ठिदीदो उवरिमसंतट्ठिदिसरूवेण च समयाविरोहेणोकड्डिदुं लहदि त्ति एसो गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसमुच्चओ । अधवा बंधादो उवरिमअहियसंतकम्मं वि हेट्ठा समयाविरोहेणोकड्डदि, हीणं पि बंधपढमणिसेयादो हेट्ठिमआबाहब्भंतरट्ठिदिसंतकम्मं पि ओकड्डदि । तहा बंधपढमणिसेगमादिं कादूण

---

§ ३८७. यह सूत्र सुगम है ।

(१०५) स्थितिका अपकर्षण करता हुआ बन्धसे अधिक स्थितिका भी अपकर्षण करता है, बन्धसे हीन स्थितिका भी अपकर्षण करता है और बन्धके समान स्थितिका भी अपकर्षण करता है । तथा स्थितिका उत्कर्षण करता हुआ बन्धके समान स्थिति-का भी अपकर्षण करता है और बन्धसे हीन स्थितिका भी उत्कर्षण करता है, मात्र बन्धसे अधिक स्थितिका उत्कर्षण नहीं करता ॥१५८॥

§ ३८८. इस प्रथम भाष्यगाथाके पूर्वार्धके द्वारा स्थिति अपकर्षणकी प्रवृत्तिके क्रमका ज्ञान कराया गया है । तथा उत्तरार्धके द्वारा स्थितिउत्कर्षणके प्रवृत्तिविशेषकी प्ररूपणा जाननी चाहिये ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—'ओवट्टेदि ट्ठिदिं पुण' ऐसा कहनेपर स्थितिका अपकर्षण करता हुआ बन्धके समान करके ही स्थितिको अपकर्षित करता है ऐसा कोई नियम नहीं है । किन्तु बन्धके समान, हीन या अधिक करके भी स्थितिका अपकर्षण करता है इस अर्थविशेषका ज्ञान कराया गया है । इसलिये उपरिम इच्छित निषेक-स्थितियोंका अपकर्षण करता हुआ तत्काल बन्धकी अग्रस्थितिके समान सत्त्वस्थितिको करके भी उसका अपकर्षण करता है, तत्काल बन्धकी अग्रस्थितिसे अधस्तन बन्ध्यमान और अवध्यमान निषेकस्थितिस्वरूपसे भी उनका अपकर्षण करता है । तथा तत्काल बन्धकी अग्रस्थितिसे उपरिम जो सत्कर्मकी स्थिति है उस रूपसे भी आगमके अविरोधपूर्वक उसका अपकर्षण करता है । इस प्रकार यह गाथाके पूर्वार्धमें निबद्ध सूत्रके अर्थका समुच्चय है । अथवा तत्काल बन्धसे ऊपर जो अधिक सत्कर्म है उसका नीचे आगमके अविरोधपूर्वक अपकर्षण करता है, तथा जो नीचे आबाधाके भीतरका स्थितिसत्कर्म तत्काल बन्धके प्रथम निषेकसे हीनस्थितिवाला

जाव बंधग्गट्ठिदीए समाणं होदूण ट्ठिदिबंधसरिससंतट्ठिदीओ वि ओकड्डदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो।

§ ३८९. 'उक्कड्डदि बंधसमं' एवं भणिदे ट्ठिदिमुक्कड्डेमाणो बंधग्गट्ठिदिसमाणं कादूण उक्कड्डदि, तत्तो हीणबंधग्गट्ठिदिसमाणं पि कादूण उक्कड्डदि, बंधादो पुण उवरिम-अहियट्ठिदिसंतकम्मसमाणं कादूण णियमा ण उक्कड्डदि, बंधे उक्कड्डणा-णियमदंसणादो। अधवा बंधसरिसट्ठिदीओ वि बंधसममुक्कड्डदि, बंधादो हीणट्ठिदीओ वि आबाहब्भंतरिमाओ बंधसरूवेणुक्कड्डदि, बंधादो उवरिमसंतट्ठिदीओ णियमा ण उक्कड्डदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो, 'बंधसमं हीणं च उक्कड्डदि', अहियं पुण ण उक्कड्डदि त्ति सुत्ते पदसंबंधावलंबणादो।

§ ३९०. संपहि एवंविहमेदिस्से पढमभासगाहाए अत्थं विहासेमाणो विहासा-गंधसुत्तरमाह—

है उसका भी अपकर्षण करता है तथा जो सत्कर्म तत्काल बन्धके प्रथम निषेकसे लेकर तत्काल बन्धकी अग्रस्थितिके समान है उस स्थितिबन्धके सदृश सत्कर्म स्थितियोंका भी अपकर्षण करता है इस प्रकार यह यहाँ सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

विशेषार्थ—स्थिति अपकर्षणके लिये सामान्य नियम यह है कि उदयावलिके भीतरकी सत्त्वस्थितियोंका अपकर्षण नहीं होता तथा तत्काल बन्धस्थितियोंका बन्धावलि काल जानेतक अपकर्षण नहीं होता। इन दो नियमोंको छोड़कर जो भी कर्म हैं वे तत्काल बन्धकी अग्रस्थितिसे हीन स्थितिवाले हों, समान स्थितिवाले हों या अधिक स्थितिवाले हों तो उनका समयके अविरोध-पूर्वक अपकर्षण हो सकता है यह विवक्षित गाथासूत्र 'ओकड्डेदि ट्ठिदिं पुण' इत्यादि गाथाके पूर्वार्धका समुच्चयरूप एक अर्थ है। दूसरा अर्थ करते हुए तत्काल बन्धस्थितिसे नीचेकी सत्कर्म स्थितिको बतलाते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि 'यदि सत्कर्मकी स्थिति तत्काल बन्धकी आबाधा से भी कम शेष रही हो तो भी उसका अपकर्षण होना सम्भव है। यह उक्त गाथासूत्रके पूर्वार्धमें निबद्ध अर्थका खुलासा है। यहाँ समयके अविरोधपूर्वक इसका अन्वय अपकर्षणसम्बन्धी सब विकल्पोंको स्पष्ट करते हुए कर ले इतना यहाँ विशेष जानना चाहिये।

§ ३८९. 'उक्कड्डदिबंध समं' ऐसा कहनेपर स्थितिका उत्कर्षण करते हुए नवीन स्थिति बन्धकी अग्रस्थितिको समान करके उत्कर्षण करता है। उससे हीन नवीन स्थितिबन्धकी अग्रस्थितिको समान करके भी उत्कर्षण करता है, परन्तु नवीन बन्धसे उपरिम अधिक स्थितिसत्कर्मको समान करके नियमसे उत्कर्षण नहीं करता, क्योंकि नवीन बन्धके भीतर उत्कर्षणका नियम देखा जाता है। अथवा नवीन बन्धके सदृश स्थितियोंको भी नवीन बन्धके समान करके उत्कर्षित करता है तथा नवीन बन्धसे हीन आबाधा कालके भीतरकी सत्कर्म स्थितियोंको नवीन बन्धस्वरूपसे उत्कर्षित करता है, मात्र नवीन बन्धसे उपरिम सत्कर्म स्थितियोंको नियमसे उत्कर्षित नहीं करता है यह यहाँ इस मूलगाथा सूत्रका समुच्चयार्थ है, क्योंकि 'बंधसमं हीणं च उक्कड्डदि, अहियं पुण ण उक्कड्डदि' इस प्रकार इस सूत्रमें स्थित पदोंका अवलम्बन लिया गया है।

§ ३९०. अब इस प्रकार इस प्रथम भाष्यगाथाके अर्थका खुलासा करते हुए आगे विभाषा-ग्रन्थको कहते हैं—

*** विहासा ।**

§ ३९१ सुगमं ।

*** जा ट्ठिदी ओकड्डिज्जदि सा ट्ठिदी बज्झमाणियादो अधिगा वा हीणा वा तुल्ला वा ।**

§ ३९२. सुगमं ।

*** उक्कड्डिज्जमाणिया ट्ठिदी बज्झमाणिगादो ट्ठिदीदो तुल्ला हीणा वा, अहिया णत्थि ।**

§ ३९३. गयत्थमेदं सुत्तं ।

§ ३९४. एवं ताव पढमभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि विदिय-भासगाहाए विहासणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** एत्तो विदियभासगाहा ।**

§ ३९५. सुगमं ।

*** यह प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा है ।**

§ ३९१. यह सूत्र सुगम है ।

*** जो स्थिति अपकर्षित की जाती है वह स्थिति बध्यमान स्थितिसे अधिक, हीन या समान होती है ।**

§ ३९२. यह सूत्र सुगम है ।

*** किन्तु उत्कर्षित की जानेवाली स्थिति बध्यमान स्थितिसे तुल्य या हीन होती है, अधिक नहीं होती ।**

§ ३९३. यह सूत्र गतार्थ है ।

विशेषार्थ—जो कर्म एक आवलिके पूर्व बाँधा हो उसका उत्कर्षण हो सकता है, क्योंकि एक तो जितना भी नया बन्ध हुआ हो उसका बन्धावलि जाने तक उत्कर्षण नहीं होता। दूसरे उदयावलिके भीतर जो भी कर्म अवस्थित है उसका भी उत्कर्षण नहीं होता। इसके अतिरिक्त शेष कर्मोका आगमके अविरोधपूर्वक उत्कर्षण हो सकता है। यहाँ जो बध्यमान कर्मसे हीन स्थितिवाला सत्कर्म है या समान स्थितिवाला सत्कर्म है उसका बध्यमान कर्ममें उत्कर्षणका जो विधान किया है सो उसका भाव यह है कि बध्यमान कर्म जिस स्थितिका उत्कर्षण हो उससे कमसे कम इतना अधिक तो होना ही चाहिये जिससे उत्कर्षणके लिए बध्यमान कर्ममें जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपकी प्राप्ति हो जाय ।

§ ३९४. इस प्रकार सर्वप्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब दूसरी भाष्य-गाथाकी विभाषा करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार होता है—

*** यह दूसरी भाष्यगाथा है ।**

§ ३९५. यह सूत्र सुगम है ।

*** जहा ।**

§ ३९६. सुगमं ।

(१०६) सव्वे वि य अणुभागे ओकड्डुदि जे ण आवलियपविट्ठे ।
उक्कड्डुदि बंधसमं णिरुवक्कमं होदि आवलिया ॥१५९॥

§ ३९७. एदीए विदियभासगाहाए अणुभागविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणं पवुत्तिविसेसो जाणाविदो । तं जहा—'सव्वे वि य' एवं भणिदे सव्वे चेव अणुभागे ओकड्डदि, बंधसरिसाणं तत्तो अब्भहियाणं च सव्वेसिमेवाणुभागफद्दयाणं सव्वासु ट्ठिदीसु वट्टमाणाणमोकड्डणापवुत्तीए पडिसेहाभावादो । एत्थतणसव्वग्गहणेण आदीदो प्पहुडि जहण्णाइच्छावणाणिक्खेवमेत्तफद्दयाणं पि ओकड्डणाइप्पसंगो त्ति णासंकणिज्जं, उदयावलियबाहिरासेसट्ठिदीओ ओकड्डेमाणस्स तद्दुवारेण सव्वेसिमणुभागफद्दयाणं पि ओकड्डणा जादा त्ति एदेणाहिप्पाएणेदस्स परूविदत्तादो । एदेण सामण्णणिद्देसेण आवलियपविट्ठाणं पि अणुभागफद्दयाणमोकड्डणाइप्पसंगे तण्णिवारणट्ठमिदं वुत्तं 'जे ण आवलियपविट्ठे त्ति' जे पुण आवलियपविट्ठा अणुभागा ते ण ओकड्डदि, तत्तो वदिरित्ताणि चेव सव्वाणुभागफद्दयाणि ओकड्डदि त्ति वुत्तं होइ ।

*** वह जैसे ।**

---

§ ३९६. यह सूत्र सुगम है ।

(१०६) जो अनुभाग आवलि (उदयावलि) में प्रविष्ट नहीं हुआ है ऐसे सभी प्रकारके अनुभागोंका अपकर्षण करता है तथा बन्ध सदृश अनुभागका उत्कर्षण करता है । मात्र एक आवलि (बन्धावलि) निरुपक्रम होती है ॥१५९॥

§ ३९७. इस दूसरी भाष्यगाथा द्वारा अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणकी प्रवृत्ति-विशेषका ज्ञान कराया गया है । वह जैसे—'सव्वे वि य' ऐसा कहनेपर सभी अनुभागोंका अपकर्षण करता है, क्योंकि जो सभी स्थितियोंमें विद्यमान हैं ऐसे बन्धके सदृश और उससे अधिक सभी अनुभागसम्बन्धी स्पर्द्धकोंके अपकर्षणविषयक प्रवृत्ति होनेमें प्रतिषेधका अभाव है ।

शंका—इस वचनमें जो 'सर्व' पदको ग्रहण किया है उसके अनुसार आदिके स्पर्धकसे लेकर जघन्य अतिस्थापना और निक्षेपरूप स्पर्धकोंके अपकर्षणका प्रसंग आता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उदयावलिके बाहर स्थित समस्त स्थितियोंका अपकर्षण करनेवालेके इस द्वारा सभी अनुभागस्पर्धकोंका भी अपकर्षण होता है इस प्रकार इस अभिप्रायसे 'सभी अनुभागस्पर्धकोंका अपकर्षण होता है' ऐसा प्ररूपण किया है ।

यद्यपि 'सव्वे वि य अणुभागे' यह सामान्य निर्देश है, इसलिए इस द्वारा आवलि (उदयावलि) प्रविष्ट अनुभागस्पर्धकोंका भी अपकर्षणसम्बन्धी अतिप्रसंग प्राप्त होता है, इसलिए उसका निवारण करनेके लिए 'जे ण आवलियपविट्ठे' यह वचन कहा है । इसलिये यह अर्थ हुआ कि जो अनुभागस्पर्धक आवलि (उदयावलि) प्रविष्ट हैं उनका अपकर्षण नहीं करता है । किन्तु उनसे

§ ३९८. 'उक्कड्डदि बंधसमं' एवं भणिदे अणुभागफद्दयाणि उक्कड्डेमाणो बंधसममेव णियमा उक्कड्डदि बंधादो अधियफद्दयसरूवेण उक्कड्डणापवुत्तीए अच्चंताभावेण पडिसिद्धत्तादो। एत्थ वि जे ण आवलियपविट्ठे त्ति अहियारसंबंधो कायव्वो।

§ ३९९. 'णिरुवक्कमं होदि आवलिया' एवं भणिदे बंधावलिया ओकड्डणुक्कड्डणाहिं विणा णिरुवक्कमा होदूण णिव्वाघादसरूवेणेव चिट्ठदि त्ति वुत्तं होइ। अहवा 'णिरुवक्कमं होदि आवलिया' एवं भणिदे ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा उक्कड्डिदपदेसग्गमावलियमेत्तं कालं किरियंतरपरिणामेण विणा चिट्ठदि त्ति एसो अत्थो एदस्स सुत्तावयवस्स घेत्तव्वो। एसो अत्थो पुव्वमेव पंचमीए मूलगाहाए विदियभासगाहासंबंधेण विहासिदो चेव, तदो णिरत्थयमिदं सुत्तमिदि चे? ण, पुव्वुत्तस्सेवत्थस्स पुणो वि मंदमेहाविजणाणुग्गहट्ठं संभालणे दोसाभावादो। संपहि एवंविहमेदस्स गाहासुत्तस्स अत्थं विहासिदुकामो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

*** विहासा।**

§ ४००. सुगमं।

*** एदिस्से गाहाए अण्णो बंधाणुलोमेण अत्थो, अण्णो सब्भावदो।**

अतिरिक्त सभी अनुभागस्पर्धकोंका अपकर्षण करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ३९८. 'उक्कड्डदि बंधसमं' ऐसा कहनेपर अनुभागस्पर्धकोंका उत्कर्षण करता हुआ बन्धके सदृश स्पर्धकोंका ही नियमसे उत्कर्षण करता है, क्योंकि बन्धसे अधिक (शक्तिवाले) जो स्पर्धक हैं उनकी उत्कर्षणरूप प्रवृत्तिका अत्यन्त अभाव होनेसे वह प्रतिषिद्ध है। यहाँपर भी 'जे ण आवलियपविट्ठे' इस वचनका अधिकारवश सम्बन्ध करना चाहिये।

§ ३९९. 'णिरुवक्कमं होइ आवलिया' ऐसा कहनेपर बन्धावलि अपकर्षण-उत्कर्षणके बिना निरुपक्रम होकर निर्व्याघातरूपसे अवस्थित रहती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अथवा 'णिरुपक्कमं होई आवलिया' ऐसा कहनेपर स्थितियोंकी अपेक्षा अथवा अनुभागोंकी अपेक्षा उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाला प्रदेशपुंज एक आवलि कालतक दूसरी क्रिया किये बिना स्थित रहता है यह अर्थ इस सूत्रवचनका ग्रहण करना चाहिये।

शंका—इस अर्थका पहले ही पाँचवीं मूलगाथाकी दूसरी भाष्यगाथाके सम्बन्धसे व्याख्यान कर ही आये हैं, इसलिये यह सूत्र निरर्थक है?

समाधान—नहीं, क्योंकि मन्दबुद्धि व्यक्तियोंका अनुग्रह करनेके लिये पूर्वोक्त अर्थकी ही फिर भी सम्हाल करनेमें कोई दोष नहीं है।

अब इस प्रकार इस गाथासूत्रके अर्थकी विशेष व्याख्या करनेकी इच्छासे आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

*** अब उक्त गाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ४००. यह सूत्र सुगम है।

*** इस गाथाका बन्धानुलोमकी अपेक्षा अन्य अर्थ है और सद्भावकी अपेक्षा**

§ ४०१. एतदुक्तं भवति--एदिस्से भासगाहाए बंधाणुलोमेण णिहालिज्जमाणे अण्णारिसो अत्थो थूलसरूवो अण्णारिसो च सब्भावदो णिरूविज्जमाणे सुहुमत्थो अत्थावत्तिगम्मो त्ति ।

§ ४०२. एवं च उहयत्थसंभवे तत्थ ताव बंधाणुलोममेदिस्से अत्थविहासणं पढमं कस्सामो णि जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरमाह—

*** बंधाणुलोम ताव वत्तइस्सामो ।**

§ ४०३. गाहासुत्तपबंधाणुसारेण जहसुदत्थपरूवणा बंधाणुलोमं णाम । तमेव ताव पुव्वं वत्तइस्सामो त्ति भणिदं होइ ।

अन्य अर्थ है ।

§ ४०१. इसका यह तात्पर्य है—इस भाष्यगाथाको बन्धानुलोमसे देखनेपर स्थूलस्वरूप अन्य प्रकारका अर्थ होता है और सद्भावरूपसे देखनेपर अर्थापत्तिगम्य सूक्ष्मरूप अन्य अर्थ होता है।

विशेषार्थ--प्रकृतमें अनुभागके अपकर्षण और उत्कर्षणकी दृष्टिसे चूर्णिसूत्रकारने दो प्रकारकी प्ररूपणाका निर्देश किया है। पहली प्ररूपणा स्थितिको माध्यम बनाकर अनुभागके अपकर्षण और उत्कर्षणसे सम्बन्ध रखती है और दूसरी प्ररूपणा सीधे अनुभागके उत्कर्षण और अपकर्षणसम्बन्धी नियमोंको ध्यानमें रखकर की गई है। इस दूसरी प्ररूपणामें स्थितिको माध्यम नहीं बनाया गया है। इनमेंसे प्रथम प्ररूपणाका नाम बन्धानुलोम प्ररूपणा है, क्योंकि इसमें गाथासूत्रमें निबद्ध पदोंकी की गई रचनाकी मुख्यता है उसके अनुसार यह प्ररूपणा की गई है, इसलिये इसे बन्धानुलोम कहकर स्थूल प्ररूपणा कहा गया है। अनुभागविषयक अपकर्षणके नियमोंको थोड़ी देरके लिए यदि गौण भी कर दिया जाय तो भी उत्कर्षणको लक्ष्यमें रखकर गाथासूत्रके उत्तरार्धमें जो व्यवस्था की गई है वह पर्याप्त नहीं है, क्योंकि उससे उत्कर्षणके आवश्यक नियमोंपर बहुत ही कम प्रकाश पड़ता है। यह एक ऐसा कारण है जिससे इसे स्थूलप्ररूपणा कहना उपयुक्त है। सद्भावका अर्थ प्रकृतमें यथार्थ है। अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षण किस विधि या नियमोंके आधारपर होता है उनको लक्ष्यमें रखकर जो प्ररूपणा प्रकृतमें की गई है इसका नाम सद्भावप्ररूपणा है। यत: यह अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणके नियमोंको ध्यानमें रखकर की गई है, इसलिए यह सूक्ष्म है ऐसा यहाँ समझना चाहिये। गाथासूत्रमें जो 'बन्धसमं' पद आया है उसका प्रकृतमें ऐसा आशय लेना चाहिये कि जिस प्रकृतिका नवीन बन्ध जितनी स्थितिको लिये हुए होता है वहींतक उस समय उस प्रकृतिका उत्कर्षण हो सकता है। उसे उल्लंघन कर उत्कर्षण नहीं होता।

§ ४०२. इस प्रकार प्रकृतमें दोनों प्रकारके अर्थ सम्भव होनेपर उनमेंसे सर्वप्रथम इस सूत्रगाथासम्बन्धी बन्धानुलोम अर्थकी विभाषा करते हैं इस प्रकार इस अर्थका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं--

*** सर्वप्रथम बन्धानुलोम अर्थको बतलावेंगे ।**

§ ४०३. गाथासूत्रके प्रबन्ध अर्थात् रचना को लक्ष्य कर श्रुतके अनुसार प्ररूपणाका नाम बन्धानुलोम प्ररूपणा है। उसीको सर्वप्रथम बतलावेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

※ उदयावलियपविट्ठे अणुभागे मोत्तूण सेसे सव्वे चेव अणुभागे ओकड्डदि, एवं चेव उक्कड्डदि।

§ ४०४. एसो बंधाणुसारिओ अत्थो, 'सव्वे वि य अणुभागे' इच्चेदम्मि गाहासुत्ते एवंविहस्स अत्थविसेसस्स सद्दारूढस्स परिप्फुडमुवलंभादो। एसो च थूलत्थो, ट्ठिदिदुवारेण उदयावलियबाहिरासेसट्ठिदीसु ट्ठिदाणमणुभागफद्दयाणं सव्वेसिमेवोकड्डुक्कड्डणाणं संभवपदुप्पायणादो। ण च परमत्थदो एस संभवो अत्थि, अणुभागविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणं जहण्णाइच्छावणाणिक्खेवमेत्तफद्दयाणि मोत्तूण सेसफद्दयेसु चेव पवुत्तिदंसणादो। तदो एवंविहस्स विसेसस्साणुवदेसादो बंधाणुसारिओ एसो अत्थो थूलसरूवो त्ति सिद्धं। एवं च थूलत्थं परूवेमाणस्स गाहासुत्तयारस्साहिप्पायो ट्ठिदीओ अस्सियूण समत्थेयव्वो। तं कथं? उदयावलियप्पहुडि सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु सव्वाणि अणुभागफद्दयाणि अत्थि, तदो तासु ट्ठिदीसु ओकड्डिज्जमाणासु उक्कड्डिजमाणासु च तत्थ ट्ठिदाणुभागफद्दयाणि सव्वाणि चेव ओकड्डिदाणि उक्कड्डिदाणि च भवंति, तासु ट्ठिदपरमाणूहिंतो पुधभूदाणमणुभागफद्दयाणमणुवलंभादो त्ति। एदेणाहिप्पाएण उदयावलियपविट्ठाणुभागे मोत्तूण सव्वे चेव अणुभागा ट्ठिदिदुवारेण ओकड्डिज्जंति उक्कड्डिज्जंति चेदि भणिदं।

§ ४०५. एवं ताव बंधाणुसारेण थूलत्थविहासणं कादूण संपहि गाहासुत्तस्से-

---

※ उदयावलिमें प्रविष्ट हुए अनुभागको छोड़कर शेष सभी प्रकारके अनुभागका अपकर्षण करता है और इसी प्रकार उत्कर्षण करता है।

§ ४०४. यह बन्ध (गाथासूत्रके प्रबन्ध) के अनुसार अर्थ है। क्योंकि 'सव्वे वि य अणुभागे' इत्यादि उक्त गाथासूत्रमें शब्दारूढ़ (शब्दोंके अनुसार किया जानेवाला) अर्थविशेष स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है। किन्तु यह स्थूल अर्थ है, क्योंकि इसमें स्थिति द्वारा उदयावलिके बाहर सम्पूर्ण स्थितियोंमें स्थित सभी अनुभागके स्पर्धकोंविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणकी सम्भावनाका कथन किया गया है। किन्तु परमार्थसे यह सम्भव नहीं है, क्योंकि अनुभागविषयक अपकर्षण और उत्कर्षणकी जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण स्पर्धकोंको छोड़कर शेष स्पर्धकोंमें ही उनकी प्रवृत्ति देखी जाती है। इसलिए इस प्रकारके विशेषका सूत्रगाथामें उपदेश न होनेके कारण बन्धानुसार यह अर्थ स्थूलस्वरूप है यह सिद्ध होता है। इस प्रकार स्थूल अर्थका प्ररूपण करनेवाले गाथा सूत्रकारके अभिप्रायका स्थितियोंका आलम्बन लेकर समर्थन करना चाहिये।

शंका—वह कैसे?

समाधान—उदयावलिसे लेकर सब स्थितिविशेषोंमें सभी अनुभागसम्बन्धी स्पर्धक हैं, इसलिए उन स्थितियोंका अपकर्षण और उत्कर्षण करनेपर उनमें स्थित सभी अनुभागस्पर्धक अपकर्षित और उत्कर्षित होते हैं, क्योंकि उन स्थितियोंमें स्थित परमाणुओंसे पृथक् अनुभागस्पर्धक नहीं पाये जाते। इस प्रकार इस अभिप्रायसे उदयावलिमें प्रविष्ट हुए अनुभागको छोड़कर सभी अनुभाग स्थिति द्वारा अपकर्षित होते हैं और उत्कर्षित होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४०५. इस प्रकार सर्वप्रथम बन्धानुसार स्थूल अर्थकी विभाषा करके अब इस गाथासूत्रके

दस्स सब्भावत्थं विहासेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

❀ सब्भावसण्णं वत्तइस्सामो ।

§ ४०६. ट्ठिदिविवक्खमकादूण अणुभागं चेव पहाणभावेण घेत्तूण तव्विसयाण-मोकड्डुक्कड्डणाणं पवुत्तिक्कमणिरूवणं सब्भावसण्णा णाम । तमिदाणिं वत्तइस्सामो त्ति वुत्तं होइ ।

* तं जहा ।

§ ४०७ सुगमं ।

* पढमफद्दयप्पहुडि अणंताणि फद्दयाणि ण ओकड्डिज्जंति ।

§ ४०८. किं कारणं ? तेसिमइच्छावणणिक्खेवविसयासंभवादो ।

❀ ताणि केत्तियाणि ।

§ ४०९. सुगमं ।

❀ जत्तियाणि जहण्णअधिच्छावणफद्दयाणि जहण्णणिक्खेवफद्दयाणि च तत्तियाणि ।

* तदो एत्तियमेत्तियाणि फद्दयाणि अधिच्छिदूण तं फद्दयमोक-ड्डिज्जदि ।

❀ एवं जाव चरिमफद्दयं ति ओकड्डदि अणंताणि फद्दयाणि ।

§ ४१०. एदेसिं सुत्ताणमवयवत्थपरूवणा सुगमा, तम्हा आदीदो प्पहुडि

सद्भाव अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अब सद्भाव संज्ञावाले अर्थको बतलावेंगे ।

§ ४०६. स्थितिकी विवक्षा न करके अनुभागको ही प्रधानरूपसे ग्रहण कर तद्विषयक अपकर्षण और उत्कर्षणकी प्रवृत्ति क्रमकी प्ररूपणा करना सद्भावसंज्ञक प्ररूपणा है । उसे इस समय बतलावेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* वह जैसे ।

§ ४०७. यह सूत्र सुगम है ।

* प्रथम स्पर्धकसे लेकर अनन्त स्पर्धक अपकर्षित नहीं किये जाते हैं ।

§ ४०८. क्योंकि उनके अतिस्थापना और निक्षेप असम्भव हैं ।

* वे कितने हैं ।

§ ४०९. यह सूत्र सुगम है ।

❀ वे जितने जघन्य अतिस्थापनास्पर्धक हैं और जितने जघन्य निक्षेपस्पर्धक हैं उतने हैं ।

❀ इसलिये एतावन्मात्र स्पर्धकोंको अतिस्थापित कर ऊपरके उस स्पर्धकको अपकर्षित करता है ।

❀ इस प्रकार अन्तिम स्पर्धकतक अनन्त स्पर्धकोंको अपकर्षित करता है ।

§ ४१०. इन सूत्रोंके अवयवोंसम्बन्धी अर्थकी प्ररूपणा सुगम है, इसलिये आदि स्पर्धकसे

जहण्णाइच्छावणाणिक्खेवमेत्तफद्दयाणि उल्लंघिदूण तदुवरिमफद्दयप्पहुडि जाव उक्कस्स-फद्दयमिदि ताव एदेसिमणंताणं फद्दयाणमोकड्डणा होदि त्ति एसो अणुभागोकड्डणाए सब्भावत्थो दट्ठव्वो ।

§ ४११. संपहि उक्कड्डणाए वि सब्भावत्थपदुप्पायणट्ठमिदमाह—

*** चरिमफद्दयं ण उक्कड्डदि । एवमणंताणि फद्दयाणि चरिमफद्दयादो ओसक्किदूण तं फद्दयमुक्कड्डदि ।**

§ ४१२. चरिमफद्दयादो जहण्णाइच्छावणाणिक्खेवमेत्तफद्दयाणि हेट्ठा ओसरि-दूण ट्ठिदफद्दयमादिं कादूण हेट्ठिमासेसफद्दयाणि उक्कड्डिज्जंति त्ति भणिदं होदि ।

लेकर जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण स्पर्धकोंको उल्लंघन कर उनसे ऊपरके स्पर्धकसे लेकर उत्कृष्ट स्पर्धक तकके इन अनन्त स्पर्धकोंका अपकर्षण होता है इस प्रकार यह अनुभागविषयक अपकर्षणमें सद्भावरूप अर्थ जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—प्रकृतमें जिन स्पर्धकोंमें अपकर्षित द्रव्यका पतन होता है उनकी निक्षेप संज्ञा है और निक्षेपके ऊपरके जिन स्पर्धकोंमें अपकर्षित स्पर्धकका पतन नहीं होता उनकी अतिस्थापना संज्ञा है । इससे स्पष्ट है कि उसी स्पर्धकका अपकर्षण होना सम्भव है जिसके नीचे कमसे कम जघन्य अतिस्थापनारूप स्पर्धक होकर उनके भी नीचे जघन्य निक्षेपरूप स्पर्धक होते हैं । अनुभाग-विषयक अपकर्षणकी यह तथ्यपूर्ण प्ररूपणा है, इसीलिये इसे सूक्ष्म सद्भावप्ररूपणा कहा गया है ऐसा यहाँ समझना चाहिये ।

§ ४११. अब उत्कर्षणविषयक भी सद्भाव अर्थकी प्ररूपणा करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** अन्तिम स्पर्धक उत्कर्षित नहीं किया जाता । इस प्रकार उस स्पर्धकसे अनन्त स्पर्धक नीचे उतरकर जो स्पर्धक अवस्थित है वह स्पर्धक उत्कर्षित किया जाता है ।**

§ ४१२. अन्तिम स्पर्धकसे जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण स्पर्धक नीचे उतरकर स्थित हुए स्पर्धकको आदि कर नीचेके स्पर्धक उत्कर्षित किये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—जो अन्तिम स्पर्धक है उस सहित उसके नीचे अनन्त स्पर्धक निक्षेपरूप होते हैं जिनमें उत्कर्षित स्पर्धकका निक्षेप होता है । तथा उन निक्षेपरूप स्पर्धकोंके नीचे उनसे लगकर अनन्त स्पर्धक अतिस्थापनारूप होते हैं जिनमें उत्कर्षित स्पर्धकका निक्षेप नहीं होता । इसके बाद उन अतिस्थापनारूप स्पर्धकोंके नीचे उनसे लगकर वह स्पर्धक होता है जिसका उत्कर्षण विवक्षित है । इसी प्रकार उस स्पर्धकके नीचे उस कर्मसम्बन्धी और अनन्त स्पर्धक हैं उनके विषयमें भी यही व्यवस्था जाननी चाहिये । इतनी विशेषता है कि एक तो उदयावलिके भीतर स्थित हुए स्पर्धकोंका उत्कर्षण नहीं होता । तथा जिस नवीन बन्धमें उत्कर्षण होता है उसकी आबाधाप्रमाण स्थितिमें उन उत्कर्षित स्पर्धकोंका निक्षेप नहीं होता । इसी प्रकार तत्काल बन्धको प्राप्त हुए कर्मस्पर्धक बन्धावलि कालतक उत्कर्षण और अपकर्षण दोनोंके अयोग्य होते हैं ।

§ ४१३. संपहि अणुभागोकड्डुक्कड्डणाविसयजहण्णुक्कस्साइच्छावणाणिक्खेवादिपदाणमप्पाबहुअं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** उक्कड्डणादो ओकड्डणादो च जहण्णगो णिक्खेवो थोवो।**

§ ४१४. सुगमं।

*** जहण्णिया अधिच्छावणा ओकड्डणादो च उक्कड्डणादो च तुल्ला अणंतगुणा।**

§ ४१५. सुगमं।

*** वाघादेण ओकड्डणादो उक्कस्सिया अधिच्छावणा अणंतगुणा।**

§ ४१६. किं कारणं? चरिमेगवग्गणाए ऊणुक्कस्साणुभागखंडयपमाणत्तादो। कत्थेदं घेप्पदे? संसारावत्थाए उक्कस्साणुभागं बंधियूण पडिभग्गो होदूण विसोहिमावूरिय सव्वुक्कस्समणुभागखंडयं घादेमाणस्स घेत्तव्वं।

*** अणुभागखंडयमेगाए वग्गणाए अदिरित्तं।**

§ ४१७. कुदो? चरिमवग्गणाए वि एत्थ पवेसदंसणादो।

बन्धावलि कालके बाद सत्त्वस्पर्धकोंके सिवाय नवीन बन्धका आबाधाके भीतर अपकर्षण होकर वहाँसे उन नवीन बन्ध अपकर्षित स्पर्धकोंका भी यथानियम उत्कर्षण होना सम्भव है। इस प्रकार यह अनुभाग उत्कर्षणविषयक सामान्य प्ररूपणा है। इस सूत्र गाथामें व्याघातविषयक प्ररूपणाका निर्देश नहीं किया गया है इतना यहाँ विशेष जानना।

§ ४१३. अब अनुभागसम्बन्धी अपकर्षण और उत्कर्षणविषयक जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना और निक्षेप आदि पदोंके अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** उत्कर्षण और अपकर्षणकी अपेक्षा जघन्य निक्षेप सबसे स्तोक है।**

§ ४१४. यह सूत्र सुगम है।

*** इससे अपकर्षण और उत्कर्षणकी अपेक्षा दोनोंकी जघन्य अतिस्थापना तुल्य होकर अनन्तगुणी है।**

§ ४१५. यह सूत्र सुगम है।

*** इससे व्याघातकी अपेक्षा अपकर्षणसम्बन्धी उत्कृष्ट अतिस्थापना अनन्तगुणी है।**

§ ४१६. शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि यह अन्तिम एक वर्गणासे ऊन उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकप्रमाण है।

शंका—कहाँपर इसकी प्राप्ति होती है?

समाधान—संसार अवस्थामें उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध कर तदनन्तर प्रतिभग्न होकर तथा विशुद्धिको पूरा कर सबसे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकका घात करनेवालेके इसे ग्रहण करना चाहिये।

*** अनुभागकाण्डक एक वर्गणासे अधिक होता है।**

§ ४१७. क्योंकि अन्तिम वर्गणाका अनुभागकाण्डकमें प्रवेश देखा जाता है।

*** उक्कस्सयमणुभागसंतकम्मं बंधो च विसेसाहिओ ।**

§ ४१८. केत्तयमेत्तो विसेसो ? अणुभागखंडयादो हेट्ठिमाणंतिमभागमेत्तो । तदो एवंविहेण अप्पाबहुअविहाणेण परिच्छिण्णपमाणजहण्णाइच्छावणणिक्खेवमेत्त-फद्दयाणि मोत्तूण आवलियपविट्ठसव्वफद्दयाणि च मोत्तूण सेसासेसफद्दयाणि ओकड्डदि उक्कड्डदि चेदि एसो गाहासुत्तस्स भावत्थो ।

§ ४१९. एवं विदियभासगाहाए अत्थविहासं समाणिय संपहि तदियभास-गाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एत्तो तदियभासगाहाए समुक्कित्तणा विहासा च ।**

§ ४२०. सुगमं ।

(१०७) वड्ढीदु होदि हाणी अधिगा हाणीदु तह अवट्ठाणं ।
गुणसेढि असंखेज्जा च पदेसग्गेण बोद्धव्वा ॥१६०॥

*** इससे उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म और बन्ध विशेष अधिक है ।**

§ ४१८. विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—अनुभागकाण्डकसे नीचेके अनन्तवें भागप्रमाण विशेषका प्रमाण है ।

इसलिये इस प्रकारके अल्पबहुत्वके विधानके अनुसार परिच्छिन्न प्रमाणवाले जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण स्पर्धकोंको छोड़कर तथा आवलिके भीतर प्रविष्ट हुए सब स्पर्धकोंको छोड़कर शेष सब स्पर्धकोंको अपकर्षित करता है और उत्कर्षित करता है यह इस गाथा सूत्रका भावार्थ है ।

विशेषार्थ—उदयावलिमें प्रविष्ट हुए स्पर्धकोंका न तो अपकर्षण ही होता हैं और न उत्कर्षण ही, इसलिए इस कामके लिए एक तो इनको छोड़ देना चाहिये । दूसरे आदिके अनुभाग-स्पर्धकसे लेकर जितने स्पर्धक क्रमसे जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनारूप हैं उन्हें छोड़ देना चाहिये । उनके ऊपरके सभी स्पर्धकोंका अपकर्षण हो सकता है । तथा इसी प्रकार अन्तिम स्पर्धकसे लेकर जितने स्पर्धक जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनारूप हैं उन्हें छोड़कर तथा नीचे एक आवलिके भीतर प्रविष्ट हुए स्पर्धकोंको छोड़कर इनसे ऊपरके सभी स्पर्धकोंका उत्कर्षण हो सकता है । यहाँ व्याघातविषयक उत्कर्षणकी प्ररूपणामें जो विशेषता है उसे अलगसे जान लेना चाहिये ।

§ ४१९. इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करके अब तीसरी भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** आगे तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना और विभाषा करते हैं ।**

§ ४२०. यह सूत्र सुगम है ।

(१०७) वृद्धिसे हानि अधिक होती है तथा हानिसे अवस्थान अधिक होता है । यह अधिकका प्रमाण उत्तरोत्तर प्रदेशपुंजकी अपेक्षा असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे जानना चाहिये ॥१६०॥

§ ४२१. एसा तदियभासगाहा 'गुणेण किं वा विसेसेण' इत्ति एदं मूलगाहाचरिमावयवमस्सियूण खवगोवसामणविसयाणमोकड्डुक्कड्डणाणमवट्ठाणसहगदाणमप्पाबहुअपरूवणट्ठमोइण्णा। तं कधं? 'वड्ढीदु होइ हाणी' एवं भणिदे वड्ढी णाम उक्कड्डणा, तत्तो हाणी ओकड्डणा बहुगी होदि त्ति भणिदं होदि। 'हाणीदु तह अवट्ठाणं' एवं भणिदे ओकड्डुणादो ओकड्डुक्कड्डुणाहि विणा सत्थाणे चेवावट्ठिदं पदेसग्गमब्भहियं होदि। होंतं पि 'किं गुणेण आहो विसेसेण' त्ति पुच्छिदे गुणेणेत्ति जाणावणट्ठमिदं वुच्चदे—'गुणसेढि असंखेज्जा' असंखेज्जगुणाए सेडीए हाणीए[1] अवट्ठाणाणं पदेसग्गं जहाकममब्भहियं होइ त्ति भणिदं होदि।

§ ४२२. एदस्स भावत्थो—खवगोवसामगेसु जस्स वा तस्स वा ट्ठिदिविसेसस्स उक्कड्डिज्जमाणं पदेसग्गं थोवं, ओकड्डिज्जमाणं पदेसग्गमसंखेज्जगुणं, विसोहिपाहम्मादो। ओकड्डुक्कड्डुणाहि[2] विणा सत्थाणे चेवावचिट्ठमाणं पदेसग्गमसंखेज्जगुणं होदि त्ति। किं कारणं? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागेण गहिदएगट्ठिदिपदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागमुक्कड्डिदि, सेसे असंखेज्जे भागे ओकड्डुदि। पुणो सत्थाणे ट्ठिदअसंखेज्जा भागा अवट्ठाणसण्णिदा असंखेज्जगुणा भवंति। एवं णाणा-

§ ४२१. यह तीसरी भाष्यगाथा मूलगाथाके 'गुणेण किं वा विसेसेण' इस अन्तिम चरणका अवलम्बन लेकर क्षपक और उपशमश्रेणिविषयक अवस्थानके साथ प्राप्त हुए अपकर्षण और उत्कर्षणके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—'वड्ढीदु होइ हाणी' ऐसा कहनेपर वृद्धिका नाम उत्कर्षण है। उससे हानि अर्थात् अपकर्षण बहुत होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'हाणीदु तह अवट्ठाणं' ऐसा कहने पर अपकर्षणसे अपकर्षण और उत्कर्षणके बिना स्वस्थानमें ही अवस्थित प्रदेशपुंज अधिक होता है। ऐसा होते हुए भी 'किं गुणेण आहो विसेसेण' ऐसा पूछनेपर 'गुणेण' इस बातका ज्ञान करानेके लिये यह कहा है—'गुणसेढि असंखेज्जा' असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे हानि और अवस्थानके प्रदेशपुंज यथाक्रम अधिक-अधिक होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४२२. इसका भावार्थ—क्षपक और उपशमक जीवोंमें जिस किसी स्थितिविशेषका उत्कर्षित होनेवाला प्रदेशपुंज सबसे थोड़ा है। उससे अपकर्षित होनेवाला प्रदेशपुंज विशुद्धिकी प्रधानतावश असंख्यातगुणा होता है। उससे अपकर्षण-उत्कर्षणके बिना स्वस्थानमें ही अवस्थित रहनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होता है, क्योंकि पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रतिभागके द्वारा ग्रहण किया गया एक स्थितिविषयक प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागको उत्कर्षित करता है तथा शेष असंख्यात बहुभागको अपकर्षित करता है। पुनः उससे स्वस्थानमें स्थित असंख्यात बहुभागप्रमाण अवस्थानसंज्ञक प्रदेशपुंज असंख्यातगुणे होते हैं। इसी प्रकार नाना स्थितियोंकी

१. आ०प्रत्योः हाणी च इति पाठः। २. ता०प्रतौ ओकड्डुक्कड्डणादीहि इति पाठः।

ट्ठिदीणं पि णेदव्वं। एदं च खवगोवसमसेढीसु भणिदअक्खवगाणुवसामगेसु अण्णहा भवदि। तस्स णिण्णयमुवरि चुण्णिसुत्तसंबंधेण कस्सामो।

§ ४२३. संपहि एवंविहमेदिस्से भासगाहाए अत्थं विहासेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ--

❀ विहासा।

§ ४२४. सुगमं।

❀ जं पदेसग्गमुक्कड्डिज्जदि सा वड्ढि त्ति सण्णा। जमोकड्डिज्जदि सा हाणि त्ति सण्णा। जं ण ओकड्डिज्जदि पदेसग्गं तमवट्ठाणं ति सण्णा।

§ ४२५. ट्ठिदीहिं अणुभागेहिं वा उक्कड्डिज्जमाणपदेसग्गस्स वड्ढि त्ति सण्णा।

अपेक्षा भी जानना चाहिये। यह क्षपक और उपशमश्रेणिमें कहा गया है। अक्षपक और अनुपशम जीवोंमें यह अल्पबहुत्वसम्बन्धी प्ररूपणा अन्य प्रकार होती है। उसका निर्णय ऊपर चूर्णिसूत्रके सम्बन्धसे करेंगे।

विशेषार्थ—क्षपकश्रेणि और उपशमश्रेणिमें आयुकर्मको छोड़कर सत्तारूपमें अवस्थित चाहे एक स्थितिगत प्रदेशपुंज हो और चाहे अनेक स्थितिगत प्रदेशपुंज हो उसमें पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रदेशपुंजका उत्कर्षण होता है और उसके असंख्यात बहुभागप्रमाण प्रदेशपुंजका अपकर्षण होता है। इन दोनोंमें इस प्रकारके अल्पबहुत्वके प्राप्त करनेका मूल कारण प्रत्येक समयमें वृद्धिको प्राप्त होनेवाला विशुद्धिविशेष है। परन्तु एक स्थितिगत या नाना स्थितिगत प्रदेशपुंजमें पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आया है उससे उस एक या नाना स्थितियोंमें अवशिष्ट प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होता है। यही कारण है कि प्रकृतमें अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजसे स्थितिसत्त्वकी अपेक्षा उनमें अवस्थित रहनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा स्वीकार किया है।

§ ४२३. अब इस भाष्यगाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ अब उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ४२४. यह सूत्र सुगम है।

❀ जो प्रदेशपुंज उत्कर्षित किया जाता है उसकी वृद्धि यह संज्ञा है। जो प्रदेशपुंज अपकर्षित किया जाता है उसकी हानि यह संज्ञा है। तथा जो प्रदेशपुंज न अपकर्षित किया जाता है और न उत्कर्षित किया जाता है उसकी अवस्थान संज्ञा है।

§ ४२५. स्थितियोंकी अपेक्षा और अनुभागोंकी अपेक्षा उत्कर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजकी

ओकड्डिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स हाणि त्ति सण्णा । ओकड्डुक्कड्डुणाहि विणा सत्थाणावट्ठिदस्स पदेसग्गस्स अवट्ठाणसण्णा त्ति भणिदं होइ—

*** एदीए सण्णाए एक्कं ट्ठिदिं वा पडुच्च सव्वाओ वा ट्ठिदीओ पडुच्च अप्पाबहुअं ।**

§ ४२६. एदीए अणंतरपरूविदाए सण्णाए परिच्छिण्णसरूवाणं वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं णाणेगट्ठिदीओ अस्सिदूण थोवबहुत्तमिदाणिं कस्सामो त्ति भणिदं होदि, णाणेगट्ठिदिविसये पयदप्पाबहुआलावस्स णाणत्ताणुवलंभादो ।

*** तं जहा ।**

§ ४२७. सुगमं ।

*** वड्ढी थोवा । हाणी असंखेज्जगुणा । अवट्ठाणमसंखेज्जगुणं ।**

§ ४२८. गयत्थमेदं सुत्तं । एवं खवगोवसामगे पडुच्च णाणेगट्ठिदिविसयभेदमप्पाबहुअं परूविय संपहि अक्खवगाणुवसामगेसु पयदप्पाबहुअपवुत्ती कधं होदि त्ति आसंकाए सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** अक्खवगाणुवसामगस्स पुण सव्वाओ ट्ठिदीओ एगट्ठिदिं वा**

वृद्धि यह संज्ञा है तथा अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजकी हानि यह संज्ञा है । तथा अपकर्षण और उत्कर्षणके बिना स्वस्थानमें अवस्थित प्रदेशपुंजकी अवस्थान संज्ञा है यह उक्त सूत्रवचनका तात्पर्य है ।

*** इस संज्ञाके अनुसार एक स्थितिको आश्रय कर अथवा सर्व स्थितियोंको आश्रय कर अल्पबहुत्व कहते हैं ।**

§ ४२६. अनन्तर प्ररूपित इस संज्ञाके अनुसार परिच्छिन्न स्वरूपवाले वृद्धि, हानि और अवस्थानकी एक स्थिति या नाना स्थितियोंको आश्रय कर इस समय अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि नाना स्थिति और एक स्थितिके विषयमें प्रकृत अल्पबहुत्वका नानापन नहीं पाया जाता है ।

*** वह जैसे ।**

§ ४२७. यह सूत्र सुगम है ।

*** वृद्धि सबसे स्तोक है । उससे हानि असंख्यातगुणी है और उससे अवस्थान असंख्यातगुणा है ।**

§ ४२८. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार क्षपक और उपशामककी अपेक्षा नाना और एक स्थितिविषयक इस अल्पबहुत्वका कथन करके अब अक्षपक और अनुपशामकोंमें प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्रवृत्ति कैसे होती है ऐसी आशंका होनेपर आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** किन्तु अक्षपक और अनुपशामकके तो सभी स्थितियोंकी अपेक्षा और एक**

पडुच्च वड्ढीदो हाणी तुल्ला वा विसेसाहिया वा विसेसहीणा वा अवट्ठाण-मसंखेज्जगुणं ।

§ ४२९. एतदुक्तं भवति—मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदो त्ति ताव एदेसिं सव्वेसिं पि णाणेगट्ठिदीओ पडुच्च पयदप्पाबहुए कीरमाणे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तभागहारेण गहिदपदेसग्गस्स जइ मज्झिमपरिणामो कारणं भवदि, तो हेट्ठोवरि णिसिंचमाणमोकड्डुक्कड्डुणादव्वं सरिसं चेव होदि, तत्थ विसरिसत्ते कारणाणुवलंभादो । अध विसोहिपरिणामो भवदि तो हेट्ठा ओकड्डिज्जमाणदव्वं बहुगं होदि, उवरि उक्कड्डिज्जमाणदव्वं थोवं होइ । जइ पुण संकिलेसपरिणामो भवदि तो उवरि णिसिंचमाणदव्वं बहुअं होदि, हेट्ठा ओकड्डिज्जमाणं थोवं भवदि, तेण वड्ढीदो हाणी सरिसा वा विसेसाहिया वा विसेसहीणा वा होदूण लब्भइ । हाणीदो वि वड्ढी एवं चेव होदूण लब्भदि । एत्थ वड्ढि-हाणीणं हीणाहियपमाणमसंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होइ त्ति घेत्तव्वं ? वड्ढि-हाणीहिंतो पुण अवट्ठाणं णियमा असंखेज्जगुणं चेव होदि, तत्थ पयारंतरासंभवादो । करणाहिमुहस्स पुण उक्कड्डुणादो ओकड्डुणा असंखेज्जगुणा त्ति दट्ठव्वा, तत्थ पयारंतरासंभवादो । एवं तदियभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता ।

स्थितिकी अपेक्षा वृद्धिसे हानि तुल्य भी है, विशेष अधिक भी है और विशेष हीन भी है, किन्तु अवस्थान असंख्यातगुणा है ।

§ ४२९. इसका यह तात्पर्य है कि मिथ्यादृष्टियोंसे लेकर अप्रमत्तसंयत जीवोंतक तो इन सभी जीवोंके नाना स्थितियों अथवा एक स्थितिको आलम्बन कर प्रकृत अल्पबहुत्वके करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भागहारके द्वारा ग्रहण किये गए प्रदेशपुंजका यदि मध्यम परिणाम कारण है तो नीचे और ऊपर सिंचित होनेवाला अपकर्षण और उत्कर्षणका द्रव्य सदृश ही होता है, क्योंकि उसमें विसदृशताका कारण नहीं पाया जाता । यदि विशुद्धिरूप परिणाम होता है तो नीचे अपकर्षित होनेवाला द्रव्य बहुत बड़ा होता है और ऊपर उत्कर्षित होनेवाला द्रव्य थोड़ा होता है । परन्तु यदि संक्लेशपरिणाम होता है तो ऊपर सिंचित होनेवाला द्रव्य बहुत होता है और नीचे अपकर्षित होनेवाला द्रव्य स्तोक होता है, इसलिए उक्त गुणस्थानोंमें वृद्धिकी अपेक्षा हानि सदृश, विशेष अधिक या विशेष हीन होकर प्राप्त होती है । तथा हानिकी अपेक्षा वृद्धि भी इसी प्रकार होकर प्राप्त होती है । यहाँपर वृद्धि और हानिका हीनाधिकप्रमाण असंख्यातवें भागमात्र ही होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये । परन्तु उक्त गुणस्थानमें वृद्धि और हानिकी अपेक्षा अवस्थान नियमसे असंख्यातगुणा ही होता है, क्योंकि उसमें अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है । किन्तु करणोंके अभिमुख हुए जीवके तो उत्कर्षणसे अपकर्षण असंख्यातगुणा होता है यह जानना चाहिये, उसमें अन्य कोई प्रकार असम्भव है । इस प्रकार तीसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई ।

विशेषार्थ—चौथे, पाँचवें और सातवें गुणस्थानके सन्मुख हुए जीवके विशुद्धिमें वृद्धि होनेसे सर्वत्र वृद्धिरूप विशुद्धिको लिये हुए विशुद्ध परिणाम ही होता है, इसलिए वहाँ स्थिति और

§ ४३०. संपहि चउत्थभासगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं कुणमाणो इदमाह—

❀ एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ ४३१. सुगमं ।

(१०८) ओवट्टणमुव्वट्टण किट्टीवज्जेसु होदि कम्मेसु ।
ओवट्टणा च णियमा किट्टीकरणम्हि बोद्धव्वा ॥१६१॥

§ ४३२. तीहिं भासगाहाहिं मूलगाहापुव्व-पच्छद्धेसु विहासिदेसु पुणो किमट्ठमेसा चउत्थी भासगाहा समोइण्णा ? एदम्मि विसये ओकड्डुक्कड्डुणाओ दो वि पयट्टंति । एदम्मि च विसये उक्कड्डुणापरिहारेणोकड्डणा चेव पयट्टदि त्ति एवंविहस्स विसयविभागस्स परूवणट्ठमेसा चउत्थी भासगाहा समोइण्णा ।

§ ४३३. तं जहा—'ओवट्टणमुव्वट्टण' एवं भणिदे ओकड्डुक्कड्डुणाओ दो वि अण्णोण्णसहगदाओ किट्टीवज्जेसु चेव कम्मेसु होंति त्ति दट्ठव्वाओ, किट्टीकरणद्धादो हेट्ठा चेव दोण्हमेदेसिं करणाणमण्णोण्णसहगयाणं पवुत्तिणियमदंसणादो । 'ओवट्टणा य णियमा' एवं भणिदे ओकड्डणा चेव किट्टीकरणावत्थाए भवदि, उक्कड्डणा णत्थि

अनुभागकी अपेक्षा प्रदेशपुंजका उक्त प्रकार अल्पबहुत्व बन जाता है। परन्तु श्रेणिके नीचे सर्वत्र विशुद्धि संक्लेशकी अपेक्षा घोलमान मध्यम परिणाम होता है, इसलिए उत्कर्षण और अपकर्षणमें सदृशता बनी रहती है। शेष कथन सुगम है।

§ ४३०. अब चौथी भाष्यगाथाकी यथावसर प्राप्त अर्थविभाषा करते हुए यह कहते हैं—

❀ यह चौथी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना है ।

§ ४३१. यह सूत्र सुगम है ।

(१०८) कृष्टिकरणसे रहित कर्मोंमें अपवर्तना और उद्वर्तना दोनों होते हैं । किन्तु कृष्टिकरणमें नियमसे मात्र अपवर्तना जाननी चाहिये ॥१६१॥

§ ४३२. शंका—तीन भाष्यगाथाओंके द्वारा मूलगाथाके पूर्वार्ध और उत्तरार्धकी विभाषा कर देनेपर पुनः यह चौथी भाष्यगाथा किसलिए अवतीर्ण हुई है ?

समाधान—इस विषयमें अपकर्षण और उत्कर्षण दोनों ही प्रवृत्त होते हैं और इस विषयमें उत्कर्षणको छोड़कर मात्र अपकर्षण ही प्रवृत्त होता है इस प्रकार इस प्रकारके विषयविभागकी प्ररूपणा करनेके लिए यह चौथी भाष्यगाथा अवतीर्ण हुई है ।

§ ४३३. वह जैसे 'ओवट्टणउव्वट्टण' ऐसा कहनेपर अपकर्षण और उत्कर्षण दोनों ही कृष्टिरहित कर्मोंमें परस्पर एक साथ ही प्रवृत्त होते हैं ऐसा जानना चाहिये, क्योंकि कृष्टिकरणके कालके नीचे ही परस्पर एक साथ प्रवृत्त इन दोनों करणोंकी प्रवृत्तिका नियम देखा जाता है। 'ओवट्टणा य णियमा' ऐसा कहनेपर कृष्टिकरण अवस्थामें मात्र अपकर्षण

त्ति घेत्तव्वं, किट्टीकरणप्पहुडि उवरि सव्वत्थ मोहणीयविसये उक्कड्डणापरिहारेणोकड्डणाए चेव पवुत्ती होदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो। एदं खवगसेढिमस्सियूण मोहणीयस्स परूविदं। उवसमसेढीए वि एसो चेव अत्थो जोजेयव्वो। णवरि ओदरमाणयस्स सुहुमसांपराइयस्स पढमसमयप्पहुडि जाव अणियट्टिपढमसमयो त्ति ताव मोहणीयस्स ओकड्डणा चेव भवदि। पुणो अणियट्टिपढमसमयप्पहुडि हेट्ठा सव्वत्थ ओकड्डणा उक्कड्डणा च दो वि होंति त्ति वत्तव्वं।

§ ४३४. एवंविहो च एदिस्से गाहाए अत्थो सुगमो त्ति भण्णमाणो चुण्णिसुत्तयारो इदमाह—

करण ही होता है, उत्कर्षणकरण नहीं होता ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि कृष्टिकरणसे लेकर ऊपर सर्वत्र मोहनीयकर्ममें उत्कर्षणको छोड़कर अपकर्षणकी ही प्रवृत्ति होती है यह इसका भावार्थ है। क्षपकश्रेणिकी अपेक्षा मोहनीय कर्मकी यह प्ररूपणा कही है। उपशमश्रेणिमें भी इसी अर्थकी योजना कर लेनी चाहिये। इतनी विशेषता है कि उतरनेवाले सूक्ष्मसाम्परायिकसे लेकर अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयतक तो मोहनीय कर्मका अपकर्षण ही होता है और वहाँसे लेकर नीचे सर्वत्र अपकर्षण और उत्कर्षण दोनों ही होते हैं ऐसा कहना चाहिये।

विशेषार्थ—जिस समय अश्वकर्णकरण क्रिया सम्पन्न होती है उसके बाद यह जीव क्रोध, मान, माया और लोभसंज्वलनका कृष्टिकारक होता है और कृष्टिकरणके कालमें यह जीव इन कर्मोंकी सत्त्वस्थितिका अपनी-अपनी बन्धस्थितिमें उत्कर्षण नहीं करता यही तथ्य यहाँ उक्त भाष्यगाथाके 'ओवट्टणा य णियमा' इस तीसरे चरण द्वारा स्पष्ट किया गया है। इस तथ्यको विशेषरूपसे समझनेके लिए १६४ क्रमांकवाली 'किट्टी करेदि णियमा' इत्यादि भाष्यगाथाके चूर्णिसूत्र और उसकी जयधवला टीकापर दृष्टिपात करना चाहिये, क्योंकि उक्त गाथाकी व्याख्या करते हुए जो विशेष खुलासा किया गया है वह हृदयंगम करने लायक है। आशय यह है कि क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवका पतन नहीं होता, इसलिए उसके मात्र कृष्टिकरणके प्रथम समयसे अपकर्षणकरणकी ही प्रवृत्ति होती है, उत्कर्षणकरणकी नहीं। यही बात उपशमश्रेणिपर चढ़नेवालेके भी जाननी चाहिये। मात्र उपशमश्रेणिसे पतन होनेपर जिस समय यह जीव सूक्ष्मसाम्परायमें प्रवेश कर कषायसहित होता है उसी समयसे इसके अपकर्षकरण और उत्कर्षणकरणकी प्रवृत्ति प्रारम्भ हो जाती है। अब प्रश्न यह है कि सूक्ष्मसाम्परायमें तो संज्वलन कषायका बन्ध होता नहीं। ऐसी अवस्थामें वहाँ उत्कर्षणकरणकी प्रवृत्ति कैसे हो सकती है? समाधान यह है कि उतरनेवाले उक्त जीवके कार्यरूपमें तो उत्कर्षणकरणकी प्रवृत्ति अनिवृत्तिकरणमें ही होती है, क्योंकि वहीं यथासम्भव मोहनीय कर्मका बन्ध होना पुनः प्रारम्भ होता है। यहाँ सूक्ष्मसाम्परायमें उतरनेवाले जीवके जो मोहनीयकर्मके उत्कर्षणकरणका निर्देश किया गया है सो वह शक्तिकी अपेक्षा ही जानना चाहिये। कृष्टिकरणके कालमें संज्वलन कषायके उत्कर्षणका जो निषेध किया गया है सो उसका आशय यह है कि उक्त कर्मकी द्वितीय स्थितिके स्थिति-अनुभागका मात्र अपकर्षण ही होता है। तथा प्रथम स्थितिमें तो दो आवलिप्रमाण काल शेष रहनेपर ही आगाल-प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है। उसके पहले तक इन दोनोंका सद्भाव बना रहता है।

§ ४३४. इस गाथाका इस प्रकारका अर्थ सुगम है ऐसा कथन करते हुए चूर्णिसूत्रकार इस सूत्रको कहते हैं—

*** एदिस्से गाहाए अत्थविहासा कायव्वा ।**

§ ४३५. एदिस्से भासगाहाए अत्थविहासा वक्खाणाइरिएहिं एत्थ कायव्वा, सुगमत्तादो त्ति भणिदं होदि । एवमेदम्मि गाहासुत्ते विहासिदे तदो संकामणपट्ठवगस्स सत्तण्हं मूलगाहाणमत्थविहासा समत्ता भवदि । एवं हेट्ठिमासेसत्थपडिबद्धाणं सत्तण्हं-मेदासिं मूलगाहाणमत्थविहासणं समाणिय संपहि जहावसरपत्तमस्सकण्णकरणं विहासेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं आढवेइ—

*** सत्तसु मूलगाहासु विहासिदासु तदो अस्सकण्णकरणस्स परूवणा ।**

§ ४३६. पुव्वमस्सकण्णकरणं थवणिज्जं कादूण सत्तण्हं सुत्तगाहाणमत्थो विहासिदो । तदो तासु विहासिय समत्तासु एण्हिमस्सकण्णकरणस्स परूवणा अहिकीरदि त्ति भणिदं होइ । तत्थ ताव पज्जायसद्दणिद्देसमुहेण अस्सकण्णकरणस्स लक्खणं जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** अस्सकण्णकरणेत्ति वा आदोलकरणेत्ति वा ओवट्टणउव्वट्टणकरणेत्ति वा तिण्णि णामाणि अस्सकण्णकरणस्स ।**

§ ४३७. तत्थ अस्सकण्णकरणमिदि वुत्ते अश्वस्य कर्णः अश्वकर्णः अश्वकर्ण-

---

*** इस भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा करनी चाहिये ।**

§ ४३५. इस भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा व्याख्यानाचार्यको यहाँपर करनी चाहिये, क्योंकि वह सुगम है यह उक्त चूर्णिसूत्रका तात्पर्य है । इस प्रकार इस गाथा सूत्रकी विभाषा करनेके बाद संक्रामणप्रस्थापकसम्बन्धी सात मूल गाथाओंकी अर्थविभाषा समाप्त होती है । इस प्रकार नीचेके (पूर्वके) सम्पूर्ण अर्थसे सम्बन्ध रखनेवाली इन सात मूल गाथाओंके अर्थकी विभाषा समाप्त करके अब यथावसर प्राप्त अश्वकर्णकरणकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** अब सात मूल गाथाओंकी विभाषा करनेके बाद अश्वकर्णकरणकी प्ररूपणा करते हैं ।**

§ ४३६. पहले अश्वकर्णकरणको स्थगित करके सात सूत्रगाथाओंके अर्थकी विभाषा की । अब उनकी विभाषा समाप्त होनेपर इस समय अश्वकर्णकरणकी प्ररूपणाको अधिकृत करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उसमें सर्वप्रथम पर्यायवाची शब्दोंके निर्देश द्वारा अश्वकर्णकरणके लक्षणको जताते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अश्वकर्णकरणके अश्वकर्णकरण, आदोलकरण अथवा अपवर्तना-उद्वर्तनाकरण ये तीन नाम हैं ।**

§ ४३७. उनमेंसे अश्वकर्णकरण ऐसा कहनेपर उसका अर्थ होता है अश्वका कर्ण अश्वकर्ण ।

वत्करणमश्वकर्णकरणम् । यथाश्वः अग्रात् प्रभृत्यामूलात् क्रमेण हीयमानस्वरूपो दृश्यते, तथेदमपि करणं क्रोधसंज्वलनात्प्रभृत्यालोभसंज्वलनाद्यथाक्रममनंतगुणहीनानुभाग-स्पर्धकसंस्थानव्यवस्थाकारणमश्वकर्णकरणमिति लक्ष्यते । संपहि आदोलकरणसण्णाए अत्थो वुच्चदे—आदोलं णाम हिंदोलं । आदोलमिव करणमादोलकरणं । यथा हिंदोलत्थंभस्स वरत्ताए च अंतराले त्तिकोणं होदूण कण्णायारेण दीसइ एवमेत्थ वि कोहादिसंजलणाणमणुभागसण्णिवेसो कमेण हीयमाणो दीसइ त्ति एदेण कारणेण अस्स-कण्णकरणस्स आदोलकरणसण्णा जादा । एवमोवट्टणमुव्वट्टणकरणे त्ति एसो वि पज्जायसद्दो अणुगयट्ठो दट्ठव्वो कोहादिसंजलणाणमणुभागविण्णासस्स हाणि-वड्ढि-सरूवेणावट्ठाणं पेक्खियूण तत्थ ओवट्टणुव्वट्टणसण्णाए पुव्वाइरिएहिं पयट्टाविदत्तादो । संपहि एवंविहमस्सकण्णकरणं कदमम्मि अवत्थंतरे एसो आढवेदि त्ति एदिस्से पुच्छाए णिरारेगीकरणट्ठमिदमाह—

*** छसु कम्मेसु संछुद्धेसु से काले पढमसमयअवेदो, ताधे चेव पढमसमयअस्सकण्णकरणकारगो ।**

§ ४३८. छस्सु कम्मेसु पुरिसवेदचिराणसंतकम्मेण सह कोहसंजलणे सव्व-संकमेण संछुद्धेसु तदो से काले पढमसमयअवेदभावे वट्टमाणो ताधे चेव पढमसमय-अस्सकण्णकरणकारगो णाम होदि । तत्तो पाए कोहादि-संजलणाणमस्सकण्णाकारेणाणु-भागसंतकम्मस्स कंडयघादवसेण करेदुमाढत्तत्तादो । संपहि तदवत्थाए कोहादिसंजल-

---

अश्वकर्णके समान जो करण वह अश्वकर्णकरण है । जिस प्रकार अश्व आगेसे लेकर अर्थात् मूलसे लेकर क्रमसे घटता हुआ दिखाई देता है उसी प्रकार यह करण भी क्रोधसंज्वलनसे लेकर लोभसंज्व-लनतक क्रमसे अनन्तगुणे हीन अनुभागके आकाररूपसे व्यवस्थाका कारण होकर अश्वकर्णकरण इस नामसे लक्षित होता है । अब आदोलकरण संज्ञाका अर्थ कहते हैं—आदोल नाम हिंडोलाका है । आदोलके समान करणका नाम आदोलकरण है । जिस प्रकार हिंडोलेके खम्भे और रस्सी अन्त-रालमें त्रिकोण होकर कर्णरेखाके आकाररूपसे दिखाई देते हैं उसी प्रकार यहाँपर भी क्रोधादि कषायोंके अनुभागका सन्निवेश क्रमसे हीयमान दिखाई देता है । इस कारण अश्वकर्णकरणकी आदोलकरण संज्ञा हो गई है । इसी प्रकार अपवर्तना-उद्वर्तनाकरण यह पर्यायवाची शब्द भी अनुगत अर्थवाला जानना चाहिये, क्योंकि क्रोधादि संज्वलनोंके अनुभागका विन्यास हानि-वृद्धि-रूपसे अवस्थित देखकर उसकी पूर्वाचार्योंने अपवर्तना-उद्वर्तना संज्ञा प्रवर्तित की है । अब इस प्रकारका यह अश्वकर्णकरण किस दूसरी अवस्थाके होनेपर आरम्भ होता है इस प्रकारकी पृच्छाके होनेपर निःशंक करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** छह नोकषाय कर्मोंके संक्रमित होनेपर तदनन्तर समयमें प्रथम समयवर्ती अपगतवेदी होकर उसी समय ही प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणकारक होता है ।**

§ ४३८. पुरुषवेदके चिरकालीन सत्कर्मके साथ छह नोकषाय कर्मोंके सर्व संक्रमणके द्वारा क्रोधसंज्वलनमें संक्रान्त हो जानेपर इसके बाद तदनन्तर समयमें प्रथम समयसम्बन्धी अवेदक भावमें विद्यमान यह जीव उसी समय प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणकारक नामवाला होता है, क्योंकि वहाँसे लेकर क्रोधादि संज्वलनोंका अश्वकर्णके आकाररूपसे जो अनुभागसत्कर्म है उसका

णाणं ट्ठिदिसंतकम्मं ट्ठिदिसंतकम्मं ट्ठिदिबंधो च कथं पयट्टदि त्ति एवंविहाए आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं संजलणाणं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ट्ठिदिबंधो सोलस वस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि।**

§ ४३९. पुव्वं पि सत्तणोकसायखवणद्धाए सव्वत्थ संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जवस्ससहस्सपमाणं चेव, किंतु एदम्मि अवत्थंतरे संखेज्जेहिं ट्ठिदिखंडयसहस्सेहिं संखेज्जगुणहाणीए सुट्ठु ओवट्टिदूण तत्तो संखेज्जगुणहीणं होदूण संखेज्जवस्ससहस्स पमाणमेदेसिं ट्ठिदिसंतकम्मं जादं। ट्ठिदिबंधो वि अंतरदुसमयकदमादिं कादूण संखेज्जवस्सिओ होदूणागच्छमाणो छण्णोकसायक्खवगचरिमसमये संजलणाणं संपुण्णसोलसवस्सपमाणो होदूण एण्हिमंतोमुहुत्तूणसोलसवस्समेत्तो जादो। एत्तोप्पहुडि संजलणाणं ट्ठिदिबंधोसरणस्स अंतोमुहुत्तपमाणेण पवुत्तिदंसणादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ।

§ ४४०. तिण्हं घादिकम्माणमेत्थ ट्ठिदिबंधो ट्ठिदिसंतकम्मं च संखेज्जवस्ससहस्साणि। णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि त्ति पुव्वुत्तो चेव अत्थो एत्थ वि अणुगंतव्वो, तत्थ पयारंतरासंभवादो। एवं पढमसमयअस्सकण्णकरणकारगस्स संजलणाणं ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्माणं पमाणविणिण्णयं कादूण संपहि तत्थेव तेसिमणुभागसंतकम्म-

---

काण्डकघात करनेके लिए आरम्भ करता है। अब उस अवस्थामें क्रोधादि संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म और स्थितिबन्ध किस प्रकार प्रवृत्त होता है इस प्रकार ऐसी आशंकाका निराकरण करनेके लिये आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** उस समय संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है तथा स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम सोलह वर्षप्रमाण होता है।**

§ ४३९. यद्यपि पहले भी सात नोकषायोंकी क्षपणाके समय सर्वत्र संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण ही होता है, किन्तु इस दूसरी अवस्थामें संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके घात द्वारा संख्यातगुणा हीन अच्छी तरह कम होकर उससे इनका स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा हीन होकर संख्यात हजार वर्षप्रमाण हो जाता है। स्थितिबन्ध भी अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके दूसरे समयसे लेकर संख्यात वर्षप्रमाण होकर आता हुआ छह नोकषायोंकी क्षपणाके समय संज्वलनोंका सम्पूर्ण सोलह वर्षप्रमाण होकर इस समय अन्तर्मुहूर्त कम सोलह वर्षप्रमाण हो गया है, क्योंकि यहाँसे लेकर संज्वलनोंके स्थितिबन्धापसरणकी अन्तर्मुहूर्तप्रमाणरूपसे प्रवृत्ति देखी जाती है इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

§ ४४०. तीन घाति कर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म यहाँपर संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है तथा नाम, गोत्र और वेदनीयका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण और स्थितिसत्कर्म असंख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है इस प्रकार यह पूर्वोक्त अर्थ यहाँ भी जानना चाहिये, क्योंकि इन कर्मोंके विषयमें दूसरा कोई प्रकार सम्भव नहीं है। इस प्रकार अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें संज्वलनोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका निर्णय करके

पमाणावहारणट्ठं सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** अणुभागसंतकम्मं सह आगाइदेण माणे थोवं, कोहे विसेसाहियं, मायाए विसेसाहियं, लोभे विसेसाहियं।**

§ ४४१. एत्थ सह आगाइदेणेत्ति वुत्ते अस्सकण्णकरणमाढवेंतेण जमणुभागखंडयमागाइदं तेण सह तक्कालभावियस्स अणुभागसंतकम्मस्स एदमप्पाबहुअं कीरदि त्ति भणिदं होदि। एत्थ विसेसाहियपमाणमणंताणि फद्दयाणि। एदं च अप्पाबहुअमंतदीवयभावेण परूविदं। एत्तो हेट्ठा सव्वत्थेव संजलणाणमणुभागसंतकम्मस्स एदेणेवप्पाबहुअविहिणा पवुत्तिदंसणादो। एवमागाइदेण सह पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयस्स अणुभागसंतकम्मविसयमप्पाबहुअं परूविय संपहि अणुभागबंधो वि तक्कालभाविओ संजलणाणमेदेणेव थोवबहुत्तविहाणेण पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुवरिमं सुत्तमाह—

*** बंधो वि एवमेव।**

§ ४४२. अणुभागबंधो वि एदेणेव अप्पाबहुअविहिणा पयट्टदि त्ति भणिदं होइ। संपहि तत्थेव अस्सकण्णकरणकारगस्स पढमसमए खंडयसरूवेणागाइदो अणुभागो कोहादिसंजलणेसु कधं पयट्टदि त्ति एदस्स णिण्णयविहाणट्ठमुवरिमप्पाबहुअपयारमाह—

*** अणुभागखंडयं पुण जमागाइदं तस्स अणुभागखंडयस्स फद्द-**

अब वहींपर उनके अनुभाग सत्कर्मके अवधारण करनेके लिये आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** उक्त जीवने जो अनुभागसत्कर्म आरम्भ किया वह मानमें सबसे थोड़ा होता है, क्रोधमें उससे विशेष अधिक होता है, मायामें उससे विशेष अधिक होता है और लोभमें उससे विशेष अधिक होता है।**

§ ४४१. यहाँपर 'सह आगाइदेण' ऐसा कहनेपर अश्वकर्णकरणको आरम्भ करनेवाले जीवने जिस अनुभागकाण्डकको आरम्भ किया वह उसके साथ तत्काल होनेवाले अनुभागसत्कर्मके इस अल्पबहुत्वको करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर विशेषाधिकका प्रमाण अनन्त-स्पर्धक होता है, और यह अल्पबहुत्व अन्तदीपकभावसे कहा गया है, क्योंकि इससे पूर्व सर्वत्र संज्वलनोंके अनुभागसत्कर्मकी इसी अल्पबहुत्वविधिसे प्रवृत्ति देखी जाती है। इस प्रकार आरम्भ करनेके साथ अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें अनुभागसत्कर्मविषयक अल्पबहुत्वका कथन करके अब संज्वलनोंका तत्काल होनेवाला अनुभागबन्ध भी इसी अल्पबहुत्वविधिसे प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** बन्ध भी इसी विधिसे प्रवृत्त होता है।**

§ ४४२. संज्वलनोंका अनुभागबन्ध भी इसी अल्पबहुत्वविधिसे प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब वहीं अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें काण्डकरूपसे आरम्भ होनेवाला अणुभाग क्रोधादि संज्वलनोंमें किस रूपसे प्रवृत्त होता है इस प्रकार इस बातका निर्णय करनेके लिये आगेके अल्पबहुत्वके प्रकारको कहते हैं—

*** परन्तु जो अनुभागकाण्डक आरम्भ किया जाता है उस अनुभागकाण्डकके**

याणि कोधे थोवाणि, माणे फद्दयाणि विसेसाहियाणि, मायाए फद्दयाणि विसेसाहियाणि, लोभे फद्दयाणि विसेसाहियाणि।

§ ४४३. एत्तो हेट्ठिमासेसाणुभागखंडएसु माणे फद्दयाणि थोवाणि होदूण कोह-माया-लोभेसु[1] जहाकमं विसेसाहियकमेण पयट्टाणि, संताणुसारेणेव तत्थाणुभागखंडयप्पाबहुअपवुत्तिदंसणादो। एण्हिं पुण खंडयमागाएंतो कोहे थोवाणि फद्दयाणि सगसंतकम्मस्साणंतभागमेत्ताणि गेण्हइ। एवं माणादीणं पि विसेसाहियकमेण खंडयमागाएदि। किं कारणं? अण्णहा घादिदसेसाणुभागस्स लोभादिपरिवाडीए अस्सकण्णायारेणावट्ठाणाणुववत्तीदो। अथवा अपुव्वफद्दयादिविहाणेण उवरि खविज्जमाणे जस्साणुभागसंतकम्मं मंदोदयं होदूण पच्छा खविज्जदि तस्साणुभागसंतकम्मं बहुअं घादेदि त्ति घेत्तव्वं।

§ ४४४. संपहि आगाइदसेसाणुभागस्स कोहादिसंजलणेसु कधमवट्ठाणं होदि त्ति एदस्स फुडीकरणट्ठं तदियमप्पाबहुअपयारं भणइ—

⁂ आगाइदसेसाणि पुण फद्दयाणि लोभे थोवाणि, मायाए अणंत-

स्पर्धक क्रोधमें सबसे थोड़े होते हैं, मानमें स्पर्धक विशेष अधिक होते हैं, मायामें स्पर्धक विशेष अधिक होते हैं और लोभमें स्पर्धक विशेष अधिक होते हैं।

§ ४४३. इससे पूर्वके समस्त अनुभागकाण्डकोंमें मानमें स्पर्धक कम होकर क्रोध, माया और लोभमें क्रमसे विशेष अधिकरूपसे प्रवृत्त रहते हैं, क्योंकि सत्त्वके अनुसार ही वहाँ अल्पबहुत्वसम्बन्धी प्रवृत्ति देखी जाती है। परन्तु यहाँपर काण्डकको आरम्भ करता हुआ क्रोधमें अपने सत्कर्मके अनन्तवें भागप्रमाण सबसे थोड़े स्पर्धक ग्रहण करता है। इसी प्रकार मानादिकमें भी विशेष अधिक क्रमसे काण्डकको आरम्भ करता है, क्योंकि अन्यथा घात करनेके बाद शेष रहे अनुभागका लोभादिकी परिपाटीके अनुसार अश्वकर्णके आकाररूपसे अवस्थान नहीं बन सकता है। अथवा अपूर्व स्पर्धक आदिकी विधिसे आगे क्षपित किये जानेपर जिसका अनुभागसत्कर्म मन्दोदयरूप होकर पीछे क्षपित किया जाता है उसके बहुत अनुभागसत्कर्मका घात करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ क्रोधसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव विवक्षित है। इसके पूर्व चारों संज्वलनोंका अनुभागसत्कर्म मान, क्रोध आदि क्रमसे उत्तरोत्तर अधिक होता है। परन्तु यह जीव घातके लिए अपने-अपने जिस अनुभागकाण्डकको आरम्भ करता है उसका प्रमाण क्रोध, मान, माया और लोभके क्रमसे उत्तरोत्तर अधिक-अधिक होता है। कारणका निर्देश टीकाकारने किया ही है।

§ ४४४. अब आरम्भ किये गये काण्डकघातसे शेष बचे हुए अनुभागका क्रोधादि संज्वलनोंमें किस प्रकार अवस्थान होता है इस प्रकार इस बातको स्पष्ट करनेके लिये अल्पबहुत्वके तीसरे प्रकारको कहते हैं—

⁂ परन्तु आरम्भ किये गये काण्डकघातोंसे शेष रहे स्पर्धक लोभमें सबसे थोड़े

---

१. ता० कोहमाणमायालोहेसु इति पाठः।

गुणाणि, माणे अणंतगुणाणि, कोधे अणंतगुणाणि।

§ ४४५. खंडयादो हेट्ठा उव्वराविज्जमाणमणुभागसंतकम्ममेदेणप्पाबहुअविहाणेण चिट्ठदि त्ति वुत्तं होइ। संपहि अणुभागखंडयमागाएंतो सव्वेसिं विसेसाहियकमेणागाएदि, तेणागाइदसेसाणुभागो लोभादो पहुडि पच्छाणुपुव्वीए विसेसाहिओ अहोदूण कधमणंतगुणो जादो त्ति एवंविहासंकाए णिरारेगीकरणट्ठमिमा परूवणा कीरदे। तं जहा—माणाणुभागसंतकम्मादो कोहाणुभागसंतकम्मं विसेसाहियं होदि। केत्तियमेत्तेण? पयडिविसेसेणाणंतिमभागमेत्तेण। एवं होदि त्ति कादूण माणसंतकम्मादो अब्भहियं होदूण ट्ठिदकोहाणुभागमवणेयूण पुध ट्ठविदे कोह-माणखंडयाणि दो वि सरिसाणि भवंति। हेट्ठिमाणुभागसंतकम्मं पि दोसु वि सरिसं होदूण चिट्ठदि। किं कारणं? सरिसाणि चेव खंडयाणि गहिदाणि त्ति बुद्धीए विवक्खियत्तादो। संपहि सेसहेट्ठिममाणसंतकम्ममणंतखंडं कादूण तत्थेगखंडं मोत्तूण पुणो अणंते भागे खंडएण सह गेण्हदि। इमे च अणंता भागा सयलसंतकम्मस्स अणंतिमभागपमाणा होदूण माणादो उवरि विसेसाहियपुव्वत्तण्णिदकोहाणुभागसंतकम्मफद्दएहिंतो अणंतगुणा भवंति। एवं माणसंतकम्मादो मायासंतकम्मस्स अहियाणुभागमवणिय सेसादो

होते हैं, मायामें उनसे अनन्तगुणे होते हैं, मानमें उनसे अनन्तगुणे होते हैं और क्रोधमें उनसे अनन्तगुणे होते हैं।

§ ४४५. काण्डकघातसे नीचे जो अनुभागसत्कर्म शेष बचता है वह इस अल्पबहुत्वविधिसे स्थित रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य हैं। अब अनुभागकाण्डकघातको आरम्भ करता हुआ सबको विशेष अधिक क्रमसे आरम्भ करता है, इसलिए आरम्भ किये गये अनुभागकाण्डकघातसे शेष रहा अनुभाग लोभसे लेकर पश्चादानुपूर्वीके अनुसार विशेष अधिक न होकर अनन्तगुणा कैसे हो गया इस तरह इस प्रकारकी आशंकाके होनेपर निःशंक करनेके लिये आगेकी इस प्ररूपणाको करते हैं। वह जैसे—मानसंज्वलनके अनुभागसत्कर्मसे क्रोधसंज्वलनका अनुभागसत्कर्म विशेष अधिक होता है।

शंका—कितना मात्र अधिक होता है।

समाधान—प्रकृति विशेषकी अपेक्षा अनन्तवाँ भागमात्र अधिक होता है।

इस प्रकार होता है ऐसा करके मानसत्कर्मसे अधिक होकर स्थित जो क्रोधका अनुभाग है उसे घटाकर पृथक् स्थापित करनेपर क्रोध और मानके दोनों ही काण्डक सदृश होते हैं। अधस्तन अनुभागसत्कर्म भी दोनोंमें ही सदृशरूपसे स्थित रहता है, क्योंकि प्रकृतमें बुद्धिसे विवक्षित कर काण्डकोंको सदृश ही ग्रहण किया गया है। अब काण्डकसे नीचे जो मानका सत्कर्म शेष बचा है उसके अनन्त खण्ड करके पुनः उनमेंसे एक खंडको छोड़कर पुनः अनन्त बहुभागको काण्डकके साथ ग्रहण करता है। और मानसंज्वलनके ये अनन्त बहुभाग समस्त सत्कर्मके अनन्तवें भागप्रमाण होकर जो पहले क्रोधअनुभागके स्पर्धकसत्कर्म मानसे ऊपर विशेष अधिक कह आये हैं वे अनन्तगुणे होते हैं। इसी प्रकार मानसत्कर्मसे मायासत्कर्मके अधिक अनुभागको निकालकर जो

माणकंडयपमाणेण मायाखंडए बुद्धीए गहिदे दोण्हं पि खंडयपमाणं गहिदसेसपमाणं च सरिसं होदूण चिट्ठदि। पुणो एत्थ हेट्ठिममायासंतकम्ममणंते भागे कादूण तत्थ एगभागं मोत्तूण सेसे अणंते भागे ओसरिदूण मायाकंडएण सह आगाएदि। एवं लोभस्स वि वत्तव्वं। तदो पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयस्स आगाइदसेसफद्दयाणि लोभे थोवाणि, मायाए अणंतगुणाणि, माणे अणंतगुणाणि, कोहे अणंतगुणाणि त्ति भणिदाणि। एत्थ चउण्हं संजलणाणं पुव्वसंतकम्मफद्दयसंदिट्ठी कोहादिपरिवाडीए एसा घेत्तव्वा— ।९६।९५।९७।९८।। तेसिं चेव आगाइदफद्दयसंदिट्ठी ।६४।७९।८९।९४।। तेसिं चेव कोहादीणमागाइदसेसफद्दयसंदिट्ठी एसा ।३२।१६।८।४।। एदीए संदिट्ठीए तिण्हमेदेसि मप्पाबहुआणं फुडीकरणं कायव्वं।

मायाका शेष प्रमाण बचा है उसमेंसे उसी मायाके काण्डकको मानके काण्डकके बराबर बुद्धिसे ग्रहण करनेपर दोनों ही काण्डकोंका प्रमाण और मायासत्कर्मका काण्डकरूपसे ग्रहण करनेके बाद शेषप्रमाण मानके सत्कर्मके सदृश होकर प्राप्त होता है। पुनः यहाँपर काण्डकके नीचे माया सत्कर्मके अनन्त भाग करके उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेष अनन्त बहुभागको पृथक् करके मायाकाण्डकके साथ ग्रहण करता है। इसी प्रकार लोभसंज्वलनका भी कथन करना चाहिये। इस प्रकार अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें काण्डकरूपसे ग्रहण करनेके बाद जो स्पर्धक शेष बचते हैं वे लोभमें सबसे थोड़े होते हैं, मायामें अनन्तगुणे होते हैं, मानमें अनन्तगुणे होते हैं और और क्रोधमें अनन्तगुणे होते हैं ऐसा कहा है। यहाँपर चारों संज्वलनोंके अश्वकर्णकरणके पहले सत्कर्मस्पर्धकोंकी संदृष्टि क्रोधादि परिपाटीके अनुसार यह ग्रहण करनी चाहिए—

	क्रोध	मान	माया	लोभ
अश्वकर्णकरणके पूर्वकी सत्कर्मस्पर्धकोंकी संदृष्टि	९६	९५	९७	९८
उन्हींके ग्रहण किये गये स्पर्धकोंकी संदृष्टि	६४	७९	८९	९४
ग्रहण करनेके बाद शेष बचे स्पर्धकोंकी संदृष्टि	३२	१६	८	४

इस संदृष्टिके द्वारा इन तीनों अल्पबहुत्वोंका स्पष्टीकरण करना चाहिये।

विशेषार्थ—अश्वकर्णकरणको सम्पन्न करनेके पहले लोभका अनुभागसत्कर्म सबसे अधिक था। अंक संदृष्टिसे उसका प्रमाण ९८ लिया है। उससे अनन्तवाँ भागकम मायाका अनुभागसत्कर्म था। अंक सदृष्टिसे उसका प्रमाण ९७ लिया है। यहाँ अनन्तवें भागका प्रमाण संदृष्टिकी अपेक्षा १ अंक स्वीकार करके १ कम किया गया है। उससे अनन्तवाँ भागकम क्रोधका अनुभागसत्कर्म है जो अंक संदृष्टिसे ९६ स्वीकर किया गया है और उससे अनन्तवाँ भागकम लोभका अनुभागसत्कर्म है जो अंकसंदृष्टिसे ९५ स्वीकार किया गया है। यहाँ क्रोध, माया और लोभका जितना अधिक सत्कर्म है उसको अलग करनेपर चारोंका अनुभागसत्कर्म क्रमसे इस प्रकार प्राप्त होता है—

$\overset{१}{९५}$ ९५ $\overset{२}{९५}$ $\overset{३}{९५}$ । पुनः बुद्धिसे इनके समान काण्डक ग्रहण करनेपर यह स्थिति बनती है—

*** एसा परूवणा पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयस्स ।**

§ ४४६. सुगममेदं पुव्वुत्तत्थोवसंहारवक्कं ।

*** तम्मि चेव पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि णाम करेदि ।**

§ ४४७. तम्मि चेव अस्सकण्णकारयस्स पढमसमए चदुण्हं संजलणाणमपुव्वफद्दयाणि कादुमाढवेदि त्ति भणिदं होइ । काणि अपुव्वफद्दयाणि णाम ? संसारावत्थाए पुव्वमलद्धप्पसरूवाणि खवगसेढीए चेव अस्सकण्णकरणद्धाए समुवलब्भमाणसरूवाणि पुव्वफद्दएहिंतो अणंतगुणहाणीए ओवट्टिज्जमाणसहावाणि जाणि फद्दयाणि ताणि अपुव्वफद्दयाणि त्ति भणंते । जइ एवं, पुव्वफद्दएहिंतो अणंतगुणहाणीए ओवट्टिज्जमाणस्सविसेसाणमेदेसिं किट्टिसण्णा किण्ण कीरदि त्ति ? णासंकणिज्जं, किट्टीलक्खणपरिहारेण फद्दयलक्खणे समवट्टिदाणमेदेसिं फद्दयववएससिद्धीए णायोववण्णत्तादो । तं कधं ? अविभागपडिच्छेदुत्तरकमेण जत्थ वड्ढि-हाणिसंभवो ताणि

१	×	२	३
६३	६३	६३	६३
३२	३२	३२	३२

। यहाँ उक्त काण्डकोंके नीचे मान, माया और लोभका जो अधस्तन अनुभागसत्कर्म बचा है उसके बहुभागसत्कर्म १६, २४ और २८ को भी उक्त काण्डकोंमें मिला देनेपर क्रमसे क्रोधादि चारोंके काण्डकोंका मिलाकर यह प्रमाण प्राप्त होता है—६४ ७९ ८९ ९४ है । पुनः इन काण्डकोंका अश्वकर्णकरणके द्वारा पतन होनेपर उसके प्रथम समयमें क्रोधादि चारोंका अनुभागसत्कर्म क्रमसे ३२ १६ ८ ४ रह जाता है यह जयधवला टीका और उसमें निर्दिष्ट संदृष्टिका आशय है ।

*** यह प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणकारककी प्ररूपणा है ।**

§ ४४६. पूर्वोक्त अर्थका उपसंहार करनेवाला यह वचन सुगम है ।

*** उसी प्रथम समयमें अपूर्व स्पर्धकोंको करता है ।**

§ ४४७. उसी अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें चारों संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धक करनेके लिये आरम्भ करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—अपूर्वस्पर्धक किन्हें कहते हैं ?

समाधान—पहले संसार अवस्थामें जिनका स्वरूप उपलब्ध नहीं हुआ है, क्षपकश्रेणिमें ही अश्वकर्णकरणके कालमें जिनका स्वरूप उपलब्ध होता है और जो स्पर्धक पूर्व स्पर्धकोंमेंसे अनन्तगुणी हानिके द्वारा अपवर्त्यमान स्वभाववाले हैं उनको अपूर्वस्पर्धक कहते हैं ।

शंका—यदि ऐसा है तो पूर्व स्पर्द्धकोंमेंसे अनन्तगुणी हानिके द्वारा अपवर्त्यमान अनुभागविशेषवाले इन स्पर्धकोंकी कृष्टिसंज्ञा क्यों नहीं की जाती है ।

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि कृष्टिके लक्षणसे रहित तथा स्पर्धकके लक्षणसे युक्त इनके स्पर्धक व्यपदेशकी सिद्धि न्यायसे बन जाती है ।

शंका—वह कैसे ?

फद्दयाणि। ण च किट्टीगदस्साणुभागस्स कमवड्ढि-हाणिसंभवो अत्थि, तत्थाणंतगुणवड्ढि-हाणीओ मोत्तूणाविभागपडिच्छेदुत्तरकमवड्ढि-हाणीणमणुवलंभादो। तम्हा पुव्वफद्दयाणुभागादो अणंतगुणहीणसत्तिसमण्णिदाणि किट्टिअणुभागादो च अणंतगुणसत्तिसंजुत्ताणि होदूण जाणि कमवड्ढिहाणिलक्खणोवलक्खियाणि तेसिमपुव्वफद्दयसण्णा त्ति सिद्धं।

§ ४४८ संपहि एवं लक्खणाणमपुव्वफद्दयाणमस्सकण्णकरणपढमसमयादो आढविय परूवणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** तेसिं परूवणं वत्तइस्सामो।**

§ ४४९. सुगममेदं पयदपरूवणाविसयं पइण्णावक्कं।

*** तं जहा।**

§ ४५०. सुगममेदं पि पुच्छावक्कं। संपहि अपुव्वफद्दयाणं परूवणं कुणमाणो पुव्वं ताव पुव्वफद्दयाणमवट्ठाणक्कमजाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ, तेसिमवट्ठाणक्कमे

समाधान—जहाँ अविभागप्रतिच्छेदके उत्तर क्रमसे वृद्धि और हानि सम्भव है वे स्पर्धक हैं। परन्तु कृष्टिगत अनुभागमें क्रमवृद्धि और क्रमहानि सम्भव नहीं हैं, क्योंकि उनमें अनन्तगुणवृद्धि और अनन्तगुणहानिको छोड़कर अविभागप्रतिच्छेदके उत्तरक्रमसे वृद्धि और हानि नहीं उपलब्ध होती। इसलिए पूर्व स्पर्धकोंसे अनन्तगुणी हीन शक्तिसे युक्त और कृष्टिके अनुभागसे अनन्तगुणी शक्तिसे युक्त होकर जो क्रमवृद्धि और क्रमहानिरूप लक्षणसे उपलक्षित होते हैं उनकी अपूर्व स्पर्धक संज्ञा है यह सिद्ध हुआ।

विशेषार्थ—अनुभागशक्तिके समान अविभागप्रतिच्छेदोंको धरनेवाले प्रत्येक परमाणुका नाम वर्ग है। और ऐसे अनन्त परमाणुओंके समुदायका नाम एक वर्गणा है। पुनः एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदको धरनेवाले अनन्तपरमाणुओंका नाम दूसरी वर्गणा है। इस प्रकार एक-एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदके क्रमसे अनन्त वर्गणाएँ मिलकर एक स्पर्धक कहलाती हैं। अनुलोम क्रमसे देखनेपर इसमें अविभागप्रतिच्छेदके उत्तरक्रमसे वृद्धि दिखाई देती है और विलोमक्रमसे देखनेपर इसमें अविभागप्रतिच्छेद उत्तरक्रमसे हानि दिखाई देती है। यह स्पर्धकका लक्षण है। कृष्टियोंमें यह लक्षण घटित नहीं होता, क्योंकि उनमें एक कृष्टिसे दूसरी कृष्टिमें फलदानशक्तिकी अनन्तगुणी हानि देखी जाती है। शेष कथन सुगम है।

§ ४४८. अब इस प्रकारके लक्षणवाले अपूर्व स्पर्धकोंको अश्वकर्णकरणके प्रथम समयसे आरम्भ करता है, अतः उनकी प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अब उनकी प्ररूपणाको बतलावेंगे।**

§ ४४९. प्रकृत प्ररूपणाको विषय करनेवाला यह प्रतिज्ञावाक्य सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ ४५०. यह पृच्छावाक्य भी सुगम है। अब अपूर्व स्पर्धकोंकी प्ररूपणा करते हुए सर्वप्रथम पूर्व स्पर्धकोंके अवस्थान क्रमका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं, क्योंकि उनके

अणवगए तत्तो हेट्ठा समुप्पज्जमाणाणं अपुव्वफद्दयाणं जाणावणोवायाभावादो ।

*** सव्वस्स अक्खवगस्स सव्वकम्माणं देसघादिफद्दयाणमादि-वग्गणा तुल्ला । सव्वघादीणं पि मोत्तूण मिच्छत्तं सेसाणं कम्माणं सव्वघादीणमादिवग्गणा तुल्ला । एदाणि पुव्वफद्दयाणि णाम ।**

§ ४५१. एदेण सुत्तेण सव्वेसिं कम्माणं पुव्वफद्दयाणि एदेण सरूवेणा-वट्ठिदाणि त्ति जाणाविदं । तं जहा—कम्माणि दुविहाणि—देसघादीणि सव्वघादीणि च । तत्थ देसघादीणं सव्वेसिं पि देसघादिफद्दयाणमादिवग्गणा सरिसी चेव होदि, लदासमाणजहण्णफद्दयप्पहुडि तेसिं सव्वेसिं पि अणुभागविण्णासदंसणादो । सव्व-घादीणं पि मिच्छत्तवज्जाणं कम्माणमादिवग्गणा तुल्ला चेव होदि, दारुअसमाणाणं-तिमभागे देसघादिफद्दएसु णिट्ठिदेसु तदणंतरसव्वघादिजहण्णफद्दयप्पहुडि तेसिं सव्वेसिं पि अणुभागविण्णासस्सावट्ठाणदंसणादो । मिच्छत्तस्स पुण आदिवग्गणा सेससव्वघादीणमादिवग्गणाए सरिसी ण होदि । किं कारणमिदि चे ? वुच्चदे—सम्मत्तस्स उक्कस्सदेसघादिफद्दयं जम्मि समत्तं तत्तो उवरिमाणंतरसव्वघादिजहण्ण-फद्दयप्पहुडि सम्मामिच्छत्तस्स अणुभागविण्णासो पारभदि । तदो सम्मामिच्छत्तस्स पढमफद्दयआदिवग्गणा सेसाणं सव्वघादीणमादिवग्गणाए सरिसी भवदि । एवं होदूण

अवस्थान क्रमका ज्ञान न होनेपर उनसे नीचे उत्पन्न होनेवाले अपूर्व स्पर्धकोंको जाननेका अन्य कोई उपाय नहीं है ।

*** सभी अक्षपकोंके सभी कर्मोंसम्बन्धी देशघाति स्पर्धकोंकी आदि वर्गणा तुल्य होती है । सर्वघातियोंमें भी मिथ्यात्वको छोड़कर शेष सर्वघाति कर्मोंकी आदि वर्गणा तुल्य होती है । ये पूर्व स्पर्धक हैं ।**

§ ४५१. इस सूत्र द्वारा सभी कर्मोंके पूर्व स्पर्धक इस स्वरूपसे अवस्थित हैं इस बातका ज्ञान कराया गया है । वह जैसे—कर्म दो प्रकारके हैं—देशघाति और सर्वघाति । उनमेंसे सभी देशघाति कर्मोंमें भी देशघाति स्पर्धकोंकी आदि वर्गणा सदृश ही होती है, क्योंकि लता समान जघन्य स्पर्धकसे लेकर उन सभीका अनुभागविन्यास देखा जाता है । तथा मिथ्यात्वको छोड़कर सर्वघाति कर्मोंकी भी आदिवर्गणा सदृश ही होती है, क्योंकि दारुसमान अनन्तवें भागमें देश-घातिस्पर्धकोंके समाप्त होनेपर उसके बाद सर्वघाति जघन्य स्पर्धकसे लेकर उन सभीके अनुभाग-विन्यासका अवस्थान देखा जाता है । परन्तु मिथ्यात्व कर्मकी आदिवर्गणा शेष सर्वघाति कर्मोंकी आदिवर्गणाके सदृश नहीं होती ।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—कहते हैं—सम्यक्त्वका उत्कृष्ट देशघातिस्पर्धक जहाँ समाप्त होता है उससे ऊपर अगले सर्वघाति जघन्य स्पर्धकसे लेकर सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुभागरचना प्रारम्भ होती है, इसलिए सम्यग्मिथ्यात्वकी पहली आदिवर्गणा शेष सर्वघाति कर्मोंकी आदिवर्गणाके सदृश होती

पुणो सव्वघादिजहण्णफद्दयमादिं कादूणाणंताणि फद्दयाणि उवरि गंतूण तत्थ सम्मामिच्छत्तफद्दयाणि समप्पंति, दारुअसमाणाणंतिमभागविसए चेव तेसिं सव्वघादिसरूवेण पारंभपज्जवसाणदंसणादो। तदो सम्मामिच्छत्तचरिमफद्दयस्सुवरिमतदणंतरफद्दयमादिं कादूण मिच्छत्तस्साणुभागविण्णासो होइ जाव पज्जवसाणफद्दये त्ति। तम्हा मिच्छत्तं मोत्तूण सेसाणं सव्वघादीणमादिवग्गणाओ सरिसीओ त्ति णिद्दिट्ठं।

§ ४५२. एवमवट्ठिदेसु पुव्वफद्दएसु तत्थ चदुण्हं संजलणाणं पुव्वफद्दएहिंतो पदेसग्गमोकड्डियूण तेसिं चेव सव्वजहण्णपुव्वफद्दयाणि वग्गणाहिंतो हेट्ठा अणंतिमभागे अणंताणि अपुव्वफद्दयाणि एसो पढमसमयअस्सकण्णकरणकारगो णिव्वत्तेदुमाढवेदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो। संपहि एदस्सेव फुडीकरणट्ठमिदमाह—

*** तदो चदुण्हं संजलणाणमपुव्वफद्दयाइं णाम करेदि।**

§ ४५३. तदो पुव्वफद्दयाणं सव्वजहण्णफद्दयस्स आदिवग्गणादो हेट्ठा पदेसग्गमणंतगुणहीणाणुभागसरूवेणोकड्डियूण चदुण्हं संजलणाणमपुव्वफद्दयाणि करेदि त्ति भणिदं होदि।

*** ताणि कधं करेदि ?**

§ ४५४. ताणि अपुव्वफद्दयाणि करेमाणो कधं णाम पुव्वफद्दएहिंतो

है। इस प्रकार होकर पुनः सर्वघाति जघन्य स्पर्धकसे लेकर अनन्त स्पर्धक ऊपर जाकर वहाँ सम्यग्मिथ्यात्वके स्पर्धक समाप्त होते हैं, क्योंकि दारुसमान अनन्तवें भागमें ही उनकी सर्वघातिरूपसे आदि और समाप्ति देखी जाती है। उसके बाद सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम स्पर्धकसे उपरिम प्रथम स्पर्धकसे लेकर अन्तिम स्पर्धकके प्राप्त होनेतक मिथ्यात्वके अनुभागकी रचना होती है, इसलिये मिथ्यात्वको छोड़कर शेष सर्वघाति स्पर्धकोंकी आदिवर्गणा सदृश होती है यह निर्देश किया गया है।

§ ४५२. इस प्रकार पूर्वस्पर्धकोंके अवस्थित रहते हुए वहाँ चार संज्वलनोंके पूर्वस्पर्धकमेंसे प्रदेशपुंजको अपकर्षित कर पूर्वस्पर्धकोंकी सबसे जघन्य वर्गणासे नीचे उनके अनन्तवें भागप्रमाण अपूर्वस्पर्धकोंकी यह प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणको करनेवाला जीव रचना करनेके लिए आरम्भ करता है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** उनमेंसे चार संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धकोंको करता है।**

§ ४५३. तदो अर्थात् पूर्वस्पर्धकोंके सबसे जघन्य स्पर्धककी आदिवर्गणासे नीचे प्रदेशाग्रको अनन्तगुणे हीन अनुभागरूपसे अपकर्षित कर चार संज्वलनोंके अपूर्वस्पर्धकोंको करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** उनको कैसे करता है ?**

§ ४५४. उन अपूर्वस्पर्धकोंको करनेवाला जीव पूर्वस्पर्धकोंमेंसे प्रदेशाग्रके कितने भागको

पदेसग्गस्स कइत्थं भागमोकड्डियूण पुव्वफद्दयाणुभागस्स कइत्थए भागे किंपमाणाणि ताणि णिव्वत्तेदि त्ति पुच्छिदं होदि। एवं पुच्छाविसईकयाणं तेसिं लोभादिसंजलणेसु जहाकमं परूवणं कुणमाणो उत्तरं पबंधमाह—

❀ लोभस्स ताव, लोहसंजलणस्स पुव्वफद्दएहिंतो पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागं घेत्तूण पढमस्स देसघादिफद्दयस्स हेट्ठा अणंतभागे अण्णाणि अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तयदि।

§ ४५५. चदुण्हं कसायाणमक्कमेणेसो पढमसमयअवेदो अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तेदि। किंतु तेसिं सव्वेसिं जुगवं वोत्तुमसक्कियत्तादो लोभस्स ताव अपुव्वफद्दय-करणविहाणं वत्तइस्सामो त्ति जाणावणट्ठं 'लोभस्स तावेत्ति' भणिदं। ताणि च करेमाणो एदेण विहाणेण करेदि त्ति जाणावणट्ठं सेससुत्तावयवणिद्देसो। तं कधं? लोभसंजलणस्स पुव्वफद्दएहिंतो अपुव्वफद्दयकरणट्ठं पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभाग-मोकड्डदि, दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धाणं पुव्वफद्दएसु जहापविभागमवट्ठिदाण-मोकड्डुक्कड्डणभागहारपडिभागेणासंखेज्जदिभागमोकड्डियूण गेण्हदि त्ति भणिदं होदि। तं च पदेसग्गं घेत्तूण पुव्वफद्दयाणं पढमस्स देसघादिफद्दयस्स हेट्ठा अणंतगुणहाणीए ओवट्टियूण तदणंतिमभागे अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तेदि। पढमस्स

अपकर्षित कर पूर्व स्पर्धकसम्बन्धी अनुभागके कितने भागमें कितने प्रमाणमें उन अपूर्वस्पर्धकोंकी रचना कैसे करता है यह उक्त सूत्र द्वारा पृच्छा की गई है। इस प्रकार पृच्छाके विषयरूपसे स्वीकृत उनकी लोभादि संज्वलनोंमें क्रमसे प्ररूपणा करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

❀ लोभसंज्वलनकी अपेक्षा सर्वप्रथम कहते हैं—लोभसंज्वलनके पूर्व स्पर्धकोंमें-से प्रदेशाग्रके असंख्यातवें भागको ग्रहण कर प्रथम देशघादि स्पर्धकके नीचे अनन्तवें भागमें अन्य अपूर्व स्पर्धकोंको करता है।

§ ४५५. यह प्रथम समयवर्ती अवेदक क्षपक जीव यद्यपि चारों कषायोंके अक्रमसे अपूर्व-स्पर्धकोंकी रचना करता है। किन्तु उन सबका एक साथ कथन करना अशक्य है, इसलिये सर्वप्रथम लोभसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंके विधानको बतलावेंगे इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'लोभस्स ताव' यह वचन कहा है। उन अपूर्व स्पर्धकोंको करता हुआ इस विधिसे करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए शेष सूत्रवचनोंका निर्देश किया है।

शंका—वह कैसे?

समाधान—लोभसंज्वलनके पूर्व स्पर्धकोंमेंसे अपूर्व स्पर्धकोंको करनेके लिए प्रदेशाग्रके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करता है, क्योंकि डेढ़ गुणहानिप्रमाण जो समयप्रबद्ध पूर्वस्पर्धकोंमें अपने विभागके अनुसार अवस्थित हैं उनमें अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारका भाग देनेपर जो असंख्यातवाँ भाग लब्ध आवे उतनेको अपकर्षित कर ग्रहण करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और उस प्रदेशपुंजको ग्रहण कर पूर्वस्पर्धकोंके देशघातिस्पर्धकके नीचे अनन्त गुणहानिद्वारा

देसघादिफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदाणमणंतिमभागमेत्ता चेव सव्व-पच्छिमापुव्वफद्दयचरिमवग्गणाविभागपडिच्छेदा होंति, तेण तदणंतिमभागे णिव्वत्तेदि त्ति भणिदं। संपहि एवंविहाणेण णिव्वत्तिज्जमाणाणि अपुव्वफद्दयाणि केत्तियाणि होंति त्ति आसंकाए तप्पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** ताणि पगणणादो अणंताणि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाण-मसंखेज्जदिभागो, एत्तियमेत्ताणि ताणि अपुव्वफद्दयाणि।**

§ ४५६. एदेण संखेज्जासंखेज्जपडिसेहमुहेण तेसिमभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणं[1] सिद्धाणंतभागपमाणत्तमवहारिदं दट्ठव्वं। तं कथं? ताणि अपुव्वफद्दयाणि पगण-णादो अणंताणि होंति। होंताणि वि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभाग-मेत्ताणि चेव भवंति। पुव्वफद्दयाणमादिवग्गणा एगेगवग्गणविसेसेण हीयमाणा जम्मि उद्देसे दुगुणहीणा होदि तमद्धाणमेगं गुणहाणिट्ठाणंतरं णाम। एदं च अभवसिद्धिएहि अणंतगुणसिद्धाणमणंतभागमेत्तफद्दयाणि गंतूण होइ। संपहि एवंविहस्स पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्स अब्भंतरे जत्तियाणि फद्दयाणि अत्थि तेसि-मसंखेज्जदिभागमेत्ताणि एदाणि अपुव्वफद्दयाणि दट्ठव्वाणि, ओकड्डुक्कड्डणभागहारादो असंखेज्जगुणेण भागहारेण पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दएसु ओवट्टिदेसु एदेसिं पमाणा-

---

अपवर्तित करके उक्त पूर्वस्पर्धकके अनन्तवें भागमें अपूर्वस्पर्धकोंकी रचना करता है। प्रथम देशघातिस्पर्धककी आदिवर्गणाके जितने अविभागप्रतिच्छेद हैं उनके अनन्तवें भागप्रमाण ही सबसे अन्तिम अपूर्वस्पर्धकको अन्तिम वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद होते हैं, इसलिए उनके अनन्तवें भागमें अपूर्वस्पर्धकोंकी रचना करता है यह कहा है। अब इस प्रकार रचे जानेवाले अपूर्वस्पर्धक कितने होते हैं ऐसी आशंका होनेपर उनके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** वे अपूर्व स्पर्धक प्रगणनासे अनन्त होकर भी प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर-प्रमाण स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं।**

§ ४५६. इस सूत्र द्वारा संख्यात और असंख्यातका प्रतिषेध करके वे अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण होते हैं ऐसा जानना चाहिये।

शंका—वह कैसे?

समाधान—वे अपूर्वस्पर्धक प्रगणनाकी अपेक्षा अनन्त होते हैं। इतना होते हुए भी प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होते हैं।

पूर्वस्पर्धकोंकी आदिवर्गणा एक-एक वर्गणाविशेषसे हीन होती हुई जिस स्थानपर द्विगुणहीन (आधी) होती है उस स्थानका नाम एक गुणहानिस्थानान्तर है। यह अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण स्पर्धक जाकर प्राप्त होता है। अब इस प्रकारके प्रदेशगुणहानि-स्थानान्तरके भीतर जितने स्पर्धक होते हैं उनके असंख्यातवें भागप्रमाण ये अपूर्वस्पर्धक जानने चाहिये, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असंख्यातगुणे भागहारके द्वारा प्रदेशगुणहानि

---

१. ता०आ० प्रत्योः अणंतगुणं इति पाठः।

गमणदंसणादो। एवमेदेसिं पमाणपरूवणं कादूण संपहि एदेसिं चेव सरूवविसेसावहारणट्ठमविभागपडिच्छेदप्पाबहुअं परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** पढमसमए जाणि अपुव्वफद्दयाणि तत्थ पढमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं थोवं।**

§ ४५७. पढमसमए णिव्वत्तिदाणमपुव्वफद्दयाणं मज्झे जं पढमं फद्दयं तदादिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदसमूहो सव्वजीवेहिंतो अणंतगुणपमाणो होदूण उवरिमपदावेक्खाए थोवो त्ति भणिदं होइ ?

*** विदियस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदमणंतभागुत्तरं।**

§ ४५८. एत्थेवं सुत्तत्थपरूवणा कायव्वा—अणंता भागा अणंता भागा अणंतभागेहिं उत्तरमणंतभागुत्तरं अणंतभागब्भहियमिदि वुत्तं होइ। पढमस्स फद्दयस्स सरिसधणियसव्वपरमाणूणमविभागपडिच्छेदसमूहमेगपुंजं कादूण तत्तो विदियफद्दयादिवग्गणाए सरिसधणियसव्वाविभागपडिच्छेदसमूहो किंचूणदुगुणपमाणत्तादो अणंतभागुत्तरो होदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो।

§ ४५९. संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणं वत्तइस्सामो। तं जहा—पढमफद्दयस्स आदिवग्गणायामादो विदियफद्दयादिवग्गणायामो विसेसहीणो होदि,

---

स्थानान्तरसम्बन्धी स्पर्धकोंके भाजित करनेपर इनके प्रमाणका आगमन देखा जाता है। इस प्रकार इनके प्रमाणका कथन करके अब इनके ही स्वरूपविशेषका अवधारण करनेके लिए अविभागप्रतिच्छेदोंके अल्पबहुत्वका प्ररूपण करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न होते हैं उनमेंसे प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाका अविभागप्रतिच्छेदपुंज सबसे स्तोक है।**

§ ४५७. प्रथम समयमें निष्पन्न हुए अपूर्वस्पर्धकोंमें जो प्रथम स्पर्धक है उसकी आदिवर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदका समूह सब जीवोंसे अनन्तगुणा होकर उपरिमपदकी अपेक्षा सबसे थोड़ा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** दूसरे स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद अनन्तवें भागप्रमाण अधिक हैं।**

§ ४५८. यहाँ इस प्रकार सूत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये—अनन्तबहुभाग अनन्तबहुभाग इस प्रकार अनन्तबहुभागसे उत्तर अनन्तभागोत्तर कहलाता है। अनन्तभाग अधिक हैं यह इसका तात्पर्य है, क्योंकि प्रथम स्पर्धकके सदृश धनवाले परमाणुओंके अविभागप्रतिच्छेदोंके समूहको एक पुंज करके उससे दूसरे स्पर्धककी आदिवर्गणाके सदृश धनवाले सब परमाणुओंका अविभागप्रतिच्छेदसमूह कुछ कम दूने प्रमाणवाला होनेसे अनन्तभागोत्तर है यह यहाँपर सूत्रका समुच्चय रूप अर्थ है।

§ ४५९. अब इसी अर्थका स्पष्टीकरण बतलावेंगे। वह जैसे—प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाके आयामसे दूसरे स्पर्धककी आदि वर्गणाका आयाम विशेष हीन होता है, क्योंकि एक स्पर्धककी

एगफद्दयवग्गणसलागमेत्ताणं वग्गणविसेसाणं तत्थ हीणत्तदंसणादो। पुणो पढमफद्दयादिवग्गणाए एगपरमाणुधरिदाविभागपलिच्छेदेहिंतो विदियफद्दयादिवग्गणाए एगपरमाणुधरिदाविभागपडिच्छेदकलावो दुगुणो होदि, फद्दयं पडि आदिवग्गणाणमादिफद्दयादिवग्गणादो दुगुणतिगुणादिकमेणाविभागपलिच्छेदवड्ढिदंसणादो। एवं होदि त्ति कादूण जइ पढमफद्दयादिवग्गणायामो विदियफद्दयादिवग्गणायामो च सरिसो चेव होज्ज, तो तदविभागपडिच्छेदसमुदायादो एत्थतणाविभागपडिच्छेदसमूहो दुगुणमेत्तो जायेज्ज। ण च एवं, तत्तो एदस्स पुव्वुत्तपमाणेण विसेसहीणत्तदंसणादो। तम्हा दुगुणाविभागपडिच्छेदकलावोवचिदं विदियफद्दयादिवग्गणायामं मज्झे वे फालीओ कादूण तत्थेगफालीदो एयफद्दयवग्गणसलागमेत्तवग्गणाविसेसे घेत्तूण इयरफालीए सीसम्मि संधिदे पढमफद्दयादिवग्गणाए एसा फाली सरिसी जादा। पुणो सेसफालीए अणंता भागा अवसेसा अत्थि, दुगुणिदफद्दयवग्गणसलागमेत्ताणं वग्गणविसेसाणमेत्थ हीणत्तदंसणादो। तदो सिद्धं पढमफद्दयादिवग्गणादो विदियफद्दयादिवग्गणा अविभागपलिच्छेदग्गेण अणंता भागुत्तरा होदि त्ति। सुत्ते अणंतभागुत्तरे त्ति दीहणिद्देसाभावे कधमेसो अत्थो विण्णादुं सक्किज्जदि त्ति णासंकणिज्जं, समासवसेण तत्थ दीहणिद्देसाभावे वि तदत्थोवलद्धीदो। एवमेदस्साणंता

जितनी वर्गणाशलाकाएँ होती हैं उतने वर्गणाविशेषोंकी उनमें हानि देखी जाती है। पुनः प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाके एक परमाणुमें जितने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं उनसे दूसरी स्पर्धककी आदिबर्गणामें एक परमाणुमें अविभागप्रतिच्छेदोंका समूह दूना होता है, क्योंकि प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंसे द्वितीयादि प्रत्येक स्पर्धककी आदिवर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंके क्रमसे दुगुणे, तिगुणे आदिरूपसे अविभागप्रतिच्छेदोंकी वृद्धि देखी जाती हैं। इस प्रकार वृद्धि होती है ऐसा करके यदि प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाका आयाम और दूसरे स्पर्धककी आदिवर्गणाका आयाम सदृश ही होवे तो उसके अविभागप्रतिच्छेदोंके समूहसे यहाँके अविभागप्रतिच्छेदोंका समूह दुगुणे प्रमाणवाला होजावे। परन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि उससे यह पूर्वोक्त प्रमाणसे विशेष हीन देखा जाता है। इसलिये अविभागप्रतिच्छेदके समूहसे उपचित दूसरे स्पर्धककी आदिवर्गणाके आयामको बीचमें दो फालियाँ करके उनमेंसे एक फालिमेंसे एक स्पर्धककी जितनी वर्गणाशलाकाएँ हैं उतने वर्गणाविशेषोंको ग्रहण करके दूसरी फालिके शीर्षमें मिला देनेपर यह फालि प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाके सदृश हो जाती है। पुनः शेष फालिके अनन्त बहुभाग अविशेष हैं, क्योंकि स्पर्धकसम्बन्धी द्विगुणित वर्गणाशलाकाप्रमाण वर्गणाविशेषोंकी यहाँ हीनता देखी जाती है, इसलिए सिद्ध हुआ कि प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणासे दूसरे स्पर्धककी आदिवर्गणा अविभागप्रतिच्छेदसमूहकी अपेक्षा अनन्त बहुभाग अधिक होती है।

शंका--सूत्रमें 'अणंतभागुत्तरे' इसमें अणंताभागुत्तरे इस प्रकार दीर्घ पदका निर्देश नहीं होनेपर यह अर्थ जानना कैसे शक्य है ?

समाधान--ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि समासके बलसे उक्त पदमें दीर्घ निर्देशका अभाव होनेपर भी उस अर्थकी उपलब्धि हो जाती है।

भागुत्तरत्तं परूविय एत्तो तदियादिफद्दयाणमादिवग्गणाओ अणंतरहेट्ठिमफद्दयादिवग्गणाहिंतो कदिभागुत्तरा होंति त्ति एदस्स णिद्धारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ एवमणंतराणंतरेण गंतूण दुचरिमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदादो चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणा विसेसाहिया अणंतभागेण ।

§ ४६०. एत्थ ताव एवमणंतराणंतरेण गंतूणे त्ति एदं सुत्तावयवमस्सियूण सुत्तसूचिदं किंचि अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—विदियफद्दयादिवग्गणादो तदियफद्दयादिवग्गणा किंचूणदुभागुत्तरा भवदि, एगेगपरमाणुधरिदाविभागपडिच्छेदसमूहस्स दुभागुत्तरत्ते संते तदादिवग्गणायामादो एत्थतणादिवग्गणायमस्स एगफद्दयवग्गणसलागमेत्तवग्गणविसेसेहिं परिहीणत्तदंसणादो । एत्थ तदियफद्दयादिवग्गणायामं तिण्णि फालिओ कादूण तत्थेगफालीदो दुगुणिदफद्दयवग्गणसलागमेत्ते विसेसे घेत्तूण सेसदोफालिसीसेसु संधिय किंचूणदुभागब्भहियत्तं दरिसेयव्वं ।

§ ४६१. संपहि तदियफद्दयादिवग्गणादो चउत्थफद्दयादिवग्गणा किंचूणतिभागुत्तरा होइ । एवं पंचमादिफद्दयादिवग्गणाओ वि किंचूणचउब्भागुत्तरादिकमेण जहाकमं णेदव्वाओ जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तफद्दयाणं चरिमफद्दयादिवग्गणा

इस प्रकार इस स्पर्धकके अविभागप्रतिच्छेद अतन्तबहुभाग अधिक होते हैं इस बातकी प्ररूपणा करके आगे तृतीय आदि स्पर्धकोंकी आदि-वर्गणाएँ अनन्तर अधस्तन आदि-वर्गणाओंसे कितने भाग अधिक होती हैं इस प्रकार इस बातका निर्धारण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ इस प्रकार अनन्तर तदनन्तररूपसे आगे जाकर द्विचरम स्पर्धककी आदि-वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदोंसे अन्तिम अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा अनन्तवें भागप्रमाण विशेष अधिक होती है ।

§ ४६०. सर्वप्रथम यहाँपर इस प्रकार अनन्तर अनन्तररूपसे आगे जाकर इस सूत्रके अवयवके आश्रयसे सूत्र द्वारा सूचित होनेवाले किंचिन्मात्र अर्थकी प्ररूपणा करेंगे । वह जैसे—दूसरे स्पर्धककी आदि-वर्गणासे तीसरे स्पर्धककी आदि-वर्गणा कुछ कम दो भाग अधिक होती है, क्योंकि एक-एक परमाणुमें प्राप्त अविभागप्रतिच्छेद समूहके दो भाग अधिक होनेपर उस स्पर्धककी आदि-वर्गणाके आयामसे यहाँ सम्बन्धी आदि-वर्गणाका आयाम एक स्पर्धककी जितनी वर्गणाशलाकाएँ हैं उतने वर्गणाविशेषोंसे हीन देखा जाता है । यहाँ तीसरे स्पर्धककी आदि-वर्गणाके आयामकी तीन फालियाँ करके यहाँ एक फालिसे दुगुणे स्पर्धक वर्गणाशलाकाप्रमाण विशेषोंको ग्रहण कर शेष दो फालियोंके अग्रभागमें मिला देनेपर कुछ कम दो भाग अधिक दिखलाना चाहिये ।

§ ४६१. अब तीसरे स्पर्धककी आदिवर्गणासे चौथे स्पर्धककी आदिवर्गणा कुछ कम तीन भाग अधिक होती है । इसी प्रकार पञ्चम आदि स्पर्धकोंकी आदिवर्गणाएँ भी कुछ कम चार

तदणंतरहेट्ठिमफद्दयादिवग्गणादो उक्कस्ससंखेज्जभागुत्तरा होदूण संखेज्जभागुत्तरवड्ढीए पज्जवसाणं पत्ता त्ति।

§ ४६२. संपहि एत्तो उवरि जहाकममसंखेज्जभागुत्तरवड्ढीए णेदव्वं जाव आदीदो प्पहुडि जहण्णपरित्ताणंतमेत्तफद्दयाणं चरिमफद्दयस्सादिवग्गणा तदणंतरहेट्ठिमफद्दयादिवग्गणादो उक्कस्सासंखेज्जासंखेज्जभागुत्तरा होदूण असंखेज्जदिभागवड्ढीए पज्जवसाणं पत्ता त्ति।

§ ४६३. संपहि एत्तो उवरि अणंतभागवड्ढीए अणंताणि फद्दयाणि णेदव्वाणि जाव अपुव्वाणं चरिमफद्दयं ति, सव्वत्थ रूवूणचडिदद्धाणेण हेट्ठिमफद्दयादिवग्गणाए भाजिदाए तत्थ किंचूणेगभागमेत्तेण विसेसाहियत्तं दट्ठव्वं। एदं च सव्वं मणेणावहारिय 'एवमणंतराणंतरेण गंतूणेत्ति' वुत्तं। एवमेदीए संखेज्जासंखेज्जाणंतभागपरिवड्ढीए समयाविरोहेण गंतूणेत्ति वुत्तं होइ।

§ ४६४. एत्थेव चरिमवियप्पस्स परूवणट्ठमुवरिमो सुत्तावयवो—'दुचरिमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए' इच्चादिओ। एत्थाणंतभागेणेत्ति वुत्ते अपुव्वफद्दयसलागाहिं रूवूणाहिं दुचरिमफद्दयादिवग्गणं भागं घेत्तूण भागलद्धेण 'किंचूणेण विसेसाहियत्तं दट्ठव्वं। एवमणंतराणंतरादो अपुव्वफद्दयादिवग्गणाणमविभागपडिच्छेदप्पाबहुअं

भाग आदिके क्रमसे जघन्य परीतासंख्यातप्रमाण स्पर्धकोंमेंसे अन्तिम स्पर्धककी आदिवर्गणा तदनन्तर अधस्तन स्पर्धक वर्गणासे उत्कृष्ट संख्यात भाग अधिक होकर संख्यात भागवृद्धिके अन्तको प्राप्त होती है।

§ ४६२. अब यहाँसे आगे क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि द्वारा तबतक ले जाना चाहिये जब जाकर आदिसे लेकर जघन्य परीतानन्तप्रमाण स्पर्धकोंमें अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणा तदनन्तर अधस्तन स्पर्धककी आदि-वर्गणासे उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात भागप्रमाण अधिक होकर असंख्यातभागवृद्धिके अन्तको प्राप्त होती है।

§ ४६३. अब यहाँसे आगे अनन्तभागवृद्धिके द्वारा अनन्त स्पर्धकोंको अपूर्व स्पर्धकोंसम्बन्धी अन्तिम स्तर्धकके प्राप्त होनेतक ले जाना चाहिये, क्योंकि सर्वत्र एक कम जितने स्थान आगे गये हों उनसे अधस्तन स्पर्धककी आदि वर्गणाके भाजित करनेपर उसमें कुछ कम एक भागरूपसे विशेषाधिकपना जानना चाहिये। इस सब बातको मनसे विचारकर सूत्रमें 'एवमणंतराणंतरेण गंतूण' यह वचन कहा है। इस प्रकार इस संख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और अनन्तभागवृद्धिरूपसे समयके अविरोधपूर्वक ले जाकर जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४६४. अब यहींपर अन्तिम विकल्पका कथन करनेके लिये आगेका 'दुचरिमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए' इत्यादि सूत्रवचन आया है। यहाँपर 'अणंतभागेण' ऐसा कहनेपर एक कम अपूर्वस्पर्धककी शलाकाओंसे द्विचरिम स्पर्धककी आदिवर्गणाको भाजित कर जो भाग लब्ध आवे उससे कुछ कम विशेष अधिक जानना चाहिये। इस प्रकार अनन्तर तदनन्तरके क्रमसे अपूर्व-

परूविय संपहि तत्थेव पढमफद्दयादिवग्गणादो चरिमफद्दयादिवग्गणाविभागपडिच्छेदग्ग-मेवदिगुणमिदि जाणावट्ठमप्पाबहुअमाह—

जाणि पढमसमये अपुव्वफद्दयाणि णिवत्तिदाणि तत्थ पढमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणा थोवा ।

§ ४६५. सुगमं ।

*** चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणा अणंतगुणा ।**

§ ४६६. कुदो ? पढमादो अपुव्वफद्दयादो अणंताणि फद्दयाणि अभवसिद्धिएहिं अणंतगुणसिद्धाणंतभागमेत्ताणि गंतूणेदिस्से समुप्पत्तिदंसणादो । एत्थ गुणगारो फद्दयसलागमेत्तो, एगपरमाणुविवक्खाए तदविरोहादो । सरिसधणियविवक्खाए पुण एसो चेव गुणगारो किंचूणो त्ति वत्तव्वं ।

*** पुव्वफद्दयस्सादिवग्गणा अणंतगुणा ।**

§ ४६७. पुव्वफद्दयाणं सव्वजहण्णदेसघादिफद्दयादिवग्गणादो अणंतगुण-हाणीए ओवट्टियूण अपुव्वफद्दयाणं णिव्वत्तिदत्तादो । संपहि जहा लोभसंजलणमहि-किच्च एसा अपुव्वफद्दयपरूवणा पढमसमयअवेदस्स परूविदा एवं कोह-माण-मायाणं पि परूवेयव्वा त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

स्पर्धकोंकी आदि-वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेदोंके अल्पबहुत्वका कथन करके अब वहींपर प्रथम स्पर्धककी आदि-वर्गणासे अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभाग प्रतिच्छेदपुंज इतने गुणे होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए अल्पबहुत्वको कहते हैं—

*** जो प्रथम समयमें अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न होते हैं उनमेंसे प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणा सबसे स्तोक है ।**

§ ४६५ यह सूत्र गतार्थ है ।

*** उससे अन्तिम अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा अनन्तगुणी है ।**

§ ४६६. क्योंकि प्रथम अपूर्वस्पर्धकसे अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भाग-प्रमाण अपूर्वस्पर्धक आगे जाकर इसकी उत्पत्ति देखी जाती है । यहाँ उक्त स्पर्धकोंकी जितनी शलाकाएँ हैं तत्प्रमाण गुणकार है । कारण कि एक परमाणुकी विवक्षा करनेपर उसमें कोई विरोध नहीं है । किन्तु सदृश धनकी विवक्षा करनेपर तो यही गुणकार कुछ कम कहना चाहिये ।

*** उससे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा अनन्तगुणी है ।**

§ ४६७. क्योंकि पूर्वस्पर्धकोंके सबसे जघन्य देशघाति स्पर्धककी आदि वर्गणासे अनन्त-गुणहानि द्वारा भाजित कर अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना हुई है । अब प्रथम समयवर्ती अवेदकके जिस प्रकार लोभसंज्वलनको अधिकृत कर अपूर्व स्पर्धकोंकी यह प्ररूपणा की है उसी प्रकार क्रोध, मान और मायाकी भी प्ररूपणा करनी चाहिये इसी बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ जहा लोभस्स अपुव्वफद्दयाणि परूविदाणि पढमसमए, तहा तहा मायाए माणस्स कोधस्स वरूवेयव्वाणि ।

§ ४६८. कुदो ? मायादिसंजलणाणं पि पुव्वफद्दएहिंतो पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागमोकड्डियूण पढमस्स देसघादिफद्दयस्स हेट्ठा अणंतिमभागे अणंताणि अपुव्व· फद्दयाणि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागपमाणाणि अणंतरोवणिधाए अणंताभागुत्तरादिकमेण वड्ढिदादिवग्गणाविभागपडिच्छेदग्गाणि, परंपरोवणिधाए च पढमफद्दयादिवग्गणाविभागपडिच्छेदग्गादो अणंतगुणवड्ढिदचरिमफद्दयादिवग्गणा विभागपडिच्छेदग्गाणि णिव्वत्तेदि त्ति एदेण मेदाभावादो ।

§ ४६९. एत्थ पुरिसवेदस्स वि णवकबंधाणुभागसंभवे तस्सापुव्वफद्दयविहाणं णत्थि त्ति घेत्तव्वं, चदुण्हं संजलणाणमेवापुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तेदि त्ति सुत्ते विसेसिदूण परूविदत्तादो । ण च पुरिसवेदणवकबंधाणुभागस्स खंडयघादादिसंभवो वि एत्थत्थि, केवलं बंधावलियादिक्कंतकमेण तदणुभागस्स समयूणदोआवलियमेत्तकालेण संछोहणं मोत्तूण तत्थ किरियंतराणुवलंभादो । संपहि चउण्हं संजलणाणमपुव्वफद्दयाणि किं सरिसपमाणाणि आहो विसरिसपमाणाणि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमप्पाबहुअ-सुत्तमाह—

*** जिस प्रकार अवेदकके प्रथम समयमें लोभके अपूर्व स्पर्धकोंकी प्ररूपणा की उसी प्रकार माया, मान और क्रोधकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।**

§ ४६८. क्योंकि माया, आदि संज्वलनोंके भी पूर्व स्पर्धकोंमेंसे प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण कर प्रथम देशघाति स्पर्धकके नीचे अनन्तवें भागमें अनन्त अपूर्व स्पर्धकोंको रचता है, जो प्रदेशगुणहानि स्थानान्तर (एक गुणहानि) के असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं तथा जो अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्त बहुभाग अधिक अनन्त बहुभाग अधिकके क्रमसे वृद्धिको प्राप्त हुई आदि-वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदरूप होते हैं और परम्परोपनिधाकी अपेक्षा जो प्रथम स्पर्धककी आदि-वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदपुंजसे अनन्त गुणरूपसे वृद्धिको प्राप्त हुए अन्तिम स्पर्धककी आदि-वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदपुंजरूप होते हैं। इस प्रकार इस कथनकी अपेक्षा उनमें कोई भेद नहीं पाया जाता है ।

§ ४६९. यहाँपर पुरुषवेदके भी नवकबन्धके अनुभागके सम्भव होनेपर उसके अपूर्व स्पर्धकोंका विधान नहीं है ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि चारों संज्वलनोंके ही अपूर्व स्पर्धकोंको रचता है ऐसा सूत्रमें विशेषरूपसे कथन किया गया है । और पुरुषवेदके नवकबन्धके अनुभागका काण्डकघात आदि भी यहाँपर सम्भव नहीं है, केवल बन्धावलिके अतिक्रान्त होनेके क्रमसे पुरुष-वेदके अनुभागकी एक समय कम दो आवलिप्रमाण कालके द्वारा निर्जराको छोड़कर उसमें अन्य कोई क्रिया नहीं पाई जाती है । अब चारों संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धक क्या सदृशप्रमाणवाले होते हैं या विसदृशप्रमाणवाले होते हैं ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए अल्पबहुत्वसूत्रको कहते हैं—

*** पढमसमए जाणि अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तिदाणि तत्थ कोधस्स थोवाणि। माणस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। मायाए अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। लोभस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि।**

§ ४७०. जइ वि चदुण्हं पि संजलणाणमेगगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जभागमेत्ताणि चेवापुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तेदि तो वि ण ताणि सव्वसंजलणेसु समखंडाणि, किंतु कोहादिसंजलणेसु एदेणप्पाबहुअविहिणा पयट्टंति त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। एवमेदेसिं विसेसाहियभावं पदुप्पाइय संपहि एत्थेव विसेसाहियपमाणावहारणट्ठमुवरिमं सुत्तावयवमाह—

*** विसेसो अणंतभागो।**

§ ४७१. जो पुव्वसुत्ते णिद्दिट्ठो अपुव्वफद्दयाणं विसेसो सो संखेज्जदिभागो असंखेज्जदिभागो वा ण होइ, किंतु अणंतभागो त्ति घेत्तव्वो। कोहसंजलणस्सापुव्वफद्दयाणि तप्पाओग्गाणंतरूवेहिं खंडिय तत्थेयखंडमेत्तेण तत्तो माणसंजलणाणमपुव्व फद्दयाणमहियत्तदंसणादो। एवं माण-माया-संजलणाणमपुव्वफद्दयवग्गणणाए विसेसाहियत्तमणुगंतव्वं। एत्थ कोहादिसंजलणाणमपुव्वफद्दयपमाणं संदिट्ठीए एत्तियमिदि घेत्तव्वं १६, २०, २४, २८।

*** प्रथम समयमें जो अपूर्वस्पर्धक निष्पन्न किये जाते हैं उनमें क्रोधके सबसे थोड़े होते हैं, मानके अपूर्वस्पर्धक विशेष अधिक होते हैं, मायाके अपूर्वस्पर्धक विशेष अधिक होते हैं और लोभके अपूर्वस्पर्धक विशेष अधिक होते हैं।**

§ ४७०. यद्यपि यह जीव चारों ही स्पर्धकोंके एक गुणहानि स्थानान्तरप्रमाण स्पर्धककोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ही अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है तो भी वे सब संज्वलनोंमें समान खण्डरूप नहीं होते हैं, किन्तु क्रोधादि संज्वलनोंमें इस अल्पबहुत्वविधिसे प्रवृत्त होते हैं इस प्रकार यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इस प्रकार इनके विशेष अधिकपनेका कथन करके अब यहींपर उनके विशेष अधिक प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगे उक्त सूत्र—अवयवको कहते हैं—

*** उक्त अल्पबहुत्वमें विशेषका प्रमाण अनन्तवाँ भाग है।**

§ ४७१. जो पूर्व सूत्रमें अपूर्व स्पर्धकोंमें विशेषका निर्देश किया है वह संख्यातवें भागप्रमाण और असंख्यातवें भागप्रमाण नहीं होता, किन्तु अनन्तवें भागप्रमाण ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि क्रोधसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंको तत्प्रायोग्य अनन्तसे भाजित कर लब्ध एक भागप्रमाण मानसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धक उनसे अधिक देखे जाते हैं। इसी प्रकार मान और माया संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धकोंकी शलाकाओंसे क्रमसे माया और लोभसंज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धककी गणना विशेष अधिकरूपसे जाननी चाहिये। यहाँपर क्रोधादि संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धकोंका प्रमाण अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा क्रमसे इतना ग्रहण करना चाहिये—१६, २०, २४, २८।

§ ४७२. संपहि कोहादिसंजलणाणं जाणि अपुव्वफद्दयाणि तेसिमादिफद्दयाण-मादिवग्गणाओ किमण्णोण्णं सरिसीओ आहो विसरिसीओ त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिण्णयविहाणट्ठं तेसिं चेव चरिमफद्दयादिवग्गणाणं सरिसासरिसभावगवेसणट्ठं च उवरिमप्पाबहुअसुत्तमाह—

*** तेसिं चेव पढमसमए णिव्वत्तिदाणमपुव्वफद्दयाणं लोभस्स आदि-वग्गणाए अविभागपलिच्छेदग्गं थोवं। मायाए आदिवग्गणाए अविभाग-पडिच्छेदग्गं विसेसाहियं। कोहस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं विसेसाहियं। एवं चदुण्हं पि कसायाणं जाणि अपुव्वफद्दयाणि, तत्थ चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं चदुण्हं पि कसायाणं तुल्लमणंतगुणं।**

§ ४७३. एत्थ ताव एदेण सुत्तेण परूविदप्पाबहुअविसये सिस्साणं सुहावबोह-जणणट्ठं कोहादिसंजलणपडिबद्धाणमपुव्वफद्दयादिवग्गणाणमेसो संदिट्ठिविण्णासो १०५, ८४, ७०, ६०। एदाओ लोभादिपरिवाडीए जहाकममणंतभागब्भहियाओ दट्ठव्वाओ। एवमेदाओ परिवाडीए ठविय अप्पप्पणो अपुव्वफद्दयसलागाहिं गुणिदे

---

§ ४७२. अब क्रोधादि संज्वलनोंके जो अपूर्व स्पर्धक हैं उनके आदि स्पर्धकोंकी आदिवर्गणाएँ क्या परस्पर सदृश होती हैं या विसदृश इस प्रकार इस अर्थविशेषका निर्णय करनेके लिए उन्हींके अन्तिम स्पर्धकोंकी आदि-वर्गणाओंके सदृशपने और विसदृशपनेका अनुसन्धान करनेके लिए आगेके अल्पबहुत्वसूत्रको कहते हैं—

*** उन्हीं चारों संज्वलनोंके प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न किये जाते हैं, उनमेंसे लोभकी आदि वर्गणाका अविभागप्रतिच्छेदपुंज सबसे थोड़ा होता है। उससे मायाकी आदि वर्गणाका अविभागप्रतिच्छेदपुंज विशेष अधिक होता है। उससे मानकी आदि वर्गणाका अविभागप्रतिच्छेदपुंज विशेष अधिक होता है और उससे क्रोधकी आदि वर्गणाका अविभागप्रतिच्छेदपुंज विशेष अधिक होता है। इस प्रकार चारों ही कषायोंके जो अपूर्व स्पर्धक निष्पन्न किये जाते हैं उनमेंसे अन्तिम अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाका अविभागप्रतिच्छेदपुंज चारों ही कषायोंका समान होनेके साथ (प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेदपुंजसे) अनन्तगुणा होता है।**

§ ४७३. यहाँपर सर्वप्रथम इस सूत्रके द्वारा प्ररूपित अल्पबहुत्वके विषयमें शिष्योंको सुख-पूर्वक ज्ञान उत्पन्न करनेके लिये क्रोधादि संज्वलनोसे प्रतिबद्ध अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी आदि वर्गणाओंका यह संदृष्टि विन्यास है—

क्रोध	मान	माया	लोभ
१०५	८४	७०	६०

। ये लोभसे लेकर परिपाटी क्रमसे अनन्तवें भाग अधिक जानने चाहिये। इस प्रकार परिपाटी क्रमसे स्थापित करके अपनी-अपनी अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी शलाकाओंसे गुणित करनेपर भी सभी संज्वलनोंके अन्तिम

सव्वेसिं पि चरिमापुव्वफद्दयादिवग्गणाओ अण्णोण्णं पेक्खियूण सरिसपमाणाओ समुप्पज्जंति, पढमफद्दयादिवग्गणाहिंतो विदियादिफद्दयाणमादिवग्गणासु दुगुण-तिगुणादिकमेण गच्छमाणासु चरिमफद्दयादिवग्गणाए फद्दयसलागमेत्तगुणगारसिद्धीए परिप्फुडमुवलंभादो। एवमप्पप्पणो फद्दयसलागाहिं पढमफद्दयादिवग्गणं गुणिय समुप्पाइदचरिमफद्दयादिवग्गणपमाणमेदं संदिट्ठीए दट्ठव्वं १६८०।

§ ४७४. अथवा लोहादिसंजलणाणमपुव्वफद्दयसलागाओ एदाओ १०५, ८४, ७०, ६०। तेसिं चेवादिवग्गणाओ १६, २०, २४, २८। एदाओ त्ति घेत्तूण पयदत्थसमत्थणा कायव्वा।

स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाऐं परस्पर देखते हुए सदृशप्रमाणमें उत्पन्न होती हैं, क्योंकि प्रथम स्पर्धककी आदिवर्गणाओंसे दूसरे आदि स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाऐं दुगुणे, तिगुणे आदि क्रमसे जाती हुईं अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणाके गुणकारकी सिद्धि जितनी स्पर्धकशलाकाऐं हैं तत्प्रमाण स्पष्टरूपसे उपलब्ध होती है। इस प्रकार अपने-अपने स्पर्धकोंकी शलाकाओंसे प्रथम स्पधंककी आदिवर्गणाको गुणित कर उत्पन्न की गई अन्तिम स्पर्धकसम्बन्धी आदि वर्गणाओंका प्रमाण संदृष्टिकी अपेक्षा इतना जानना चाहिये—१६८०।

§ ४७४. अथवा लोभादि संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धकोंकी शलाकाऐं ये हैं—

	लोभ	माया	माया	क्रोध
अपूर्व स्पर्धक	१०५	८४	७०	६०

उन्हींकी आदि वर्गणाऐं ये हैं—

लोभ	माया	मान	क्रोध
१६	२०	२४	२८

। इस प्रकार इनको ग्रहण कर प्रकृत अर्थका समर्थन करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ चारों संज्वलनोंके अन्तिम स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद परस्पर समान होते हैं इस तथ्यको दो प्रकारसे स्पष्ट किया गया है। प्रथम प्रकारमें चारों संज्वलनोंके प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद क्रोधादि क्रमसे १०५, ८४, ७०, ६० स्वीकार कर उन्हें किये गये हैं। तथा इस प्रकारके अनुसार भी क्रोधादि चारोंके अन्तिम स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद समानरूपसे १६८० स्वीकार किये गए हैं। इस तथ्यको ध्यानमें रखकर क्रोधादि चारों संज्वलनोंकी स्पर्धक शलाकाऐं क्रमसे १६, २०, २४ और २८ स्वीकर करना न्याय्यप्राप्त है। तदनुसार जो विधि सम्पन्न होती है वह इस प्रकार प्राप्त होती है—

	क्रोध	मान	माया	लोभ
आदि वर्गणाके अविभाग प्रतिच्छेद	१०५	८४	७०	६०
अपूर्व स्पर्धक शलाकाऐं	×१६	२०	२४	२८
अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणाओंके अविभाग०	१६८०	१६८०	१६८०	१६८०

दूसरे प्रकारके अनुसार गणित इस प्रकार प्राप्त होती है—

	लोभ	माया	मान	क्रोध
लोभादि संज्वलनके अपूर्व स्पर्धक	६०	७०	८४	१०५
आदि वर्गणाके अविभागप्रतिच्छेद	×२८	२४	२०	१६
अन्तिम स्पर्धकके आदि वर्गणाके अविभागप्रति०	१६८०	१६८०	१६८०	१६८०

§ ४७५. संपहिं चउण्हं पि कसायाणं चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणा तुल्ला त्ति जं सुत्ते वुत्तं तमंतदीवयंत्तेण हेट्ठा वि अणंतेसु उद्देसेसु अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाओ सरिसीओ अत्थि त्ति घेत्तव्वाओ। तं जहा—संदिट्ठीए ताव कोहादिवग्गणापमाणमेदं ठविय |१०५| माणादिवग्गणाए |८४| एदीए सोहिदाए सुद्धसेसपमाणमेत्तियं होदि |२१| एदं च माणादिवग्गणाए चदुहिं रूवेहिं ओवट्टिदाए आगच्छदि |४| एदं च विसेसागमणणिमित्तभागहारं दुरूवाहियमेत्तमुवरिं चढिदूणावट्ठिदमाणसंजलणापुव्वफद्दयादिवग्गणाभागहारमेत्तं चेव अद्धाणमुवरि गंतूण ट्ठिदिकोहसंजलणापुव्वफद्दयादिवग्गणा च सरिसी होदि, परिप्फुडमेव तत्थ तहाभावोवलंभादो। एवं माण-मायाणं माया-लोभाणं च आदिवग्गणाओ अस्सिदूण तेसिं चडिदद्धाणं साहेयव्वं। तत्थ कोहसंजलणस्स चडिदद्धाणमेदं ४। माणसंजलणस्स चडिदद्धाणमेदं ५। मायासंजलणस्स चडिदद्धाणमेत्तियं होदि ६। लोहसंजलणस्स चडिदद्धाणमेत्तियमिदि घेत्तव्वं ७। एवमेदेहिं चडिदद्धाणेहिं उवलक्खियाणं कोहादिसंजलणपडिबद्धाणमपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाओ पढमवारं सरिसीओ जादाओ।

तात्पर्य यह है कि क्षपक अवेदकके प्रथम समयमें पूर्व स्पर्धकोंसे नीचे जो अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना होती है, उनमेंसे प्रथम स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाके जो अविभागप्रतिच्छेद रचे जाते हैं वे क्रोधादिसंज्वलनोंके उत्तरोत्तर अनन्तवें भागहीन अनन्तवें भागहीन प्राप्त होते हैं यह उक्त दोनों गणित पद्धतियोंसे सिद्ध किया गया है।

§ ४७५. अब चारों ही कषायोंके अन्तिम अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा समान होती है ऐसा जो सूत्रमें कहा है वह अन्तदीपकरूपसे नीचे भी अनन्त स्थानोंमें अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाएँ सदृश होती हैं यह ग्रहण करना चाहिये। वह जैसे—संदृष्टिकी अपेक्षा सर्वप्रथम क्रोधकी आदि वर्गणाके इस प्रमाणको १०५ स्थापित कर इसमेंसे मानकी आदि वर्गणा ८४ को घटा देनेपर जो शेष रहता है उसका प्रमाण इतना होता है—२१। १०५ − ८४ = २१ और यह मानसंज्वलनकी आदि वर्गणामें चारका भाग देनेपर आता है—८४ ÷ ४ = २१। और यह ४ विशेषप्रमाण लानेके लिए भागहार है। अत: इससे एक अधिक स्थान ऊपर जाकर जो मानसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा स्थित है और वह उक्त भागहारप्रमाण ही स्थान ऊपर जाकर जो क्रोधसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा है वह समान है, क्योंकि स्पष्टरूपसे वहाँ पर उस प्रकारकी उपलब्धि होती है। इसी प्रकार मान-माया तथा माया-लोभकी आदि वर्गणाओंका आश्रय करके कितने स्थान ऊपर चढ़कर उनकी आदि वर्गणाएं परस्परमें समान होती हैं इस प्रयोजनसे ऊपर चढ़कर प्राप्त हुए स्थानोंको साध लेना चाहिये। वहाँ क्रोधसंज्वलनका ऊपर चढ़कर प्राप्त हुआ स्थान यह है—४। मानसंज्वलनका ऊपर चढ़कर प्राप्त हुआ स्थान इतनेवाँ है—५। मायासंज्वलनका ऊपर चढ़कर प्राप्त हुआ स्थान इतनेवाँ होता है ६। तथा लोभसंज्वलनका ऊपर चढ़कर इतनेवाँ स्थान ग्रहण करना चाहिये ७। इस प्रकार इतने ऊपर चढ़कर प्राप्त हुए स्थानोंसे उपलक्षित क्रोध, आदि संज्वलनोंसे प्रतिबद्ध अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाएँ प्रथम बार सदृश हो जाती हैं।

§ ४७६. तत्तो उवरि पुणो वि एत्तियमेत्तमद्धाणमुवरि गंतूण विदियवारं सरिसीओ होंति ।

§ ४७७. एवमप्पप्पणो चडिदद्धाणपमाणमेगखंडयं कादूण णेदव्वं जाव दुचरिमखंडयमेत्तद्धाणं गंतूण सव्वेसिमादिवग्गणाओ सरिसीओ जादाओ त्ति । तत्तो परमप्पप्पणो चरिमखंडयमेत्तद्धाणं गंतूण चरिमापुव्वफद्दयादिवग्गणाओ सरिसीओ समुप्पज्जंति त्ति घेत्तव्वं ।

विशेषार्थ—अंक संदृष्टिकी अपेक्षा क्रोध आदि चारों प्रथम स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाओंका क्रमसे प्रमाण यह है—१०५, ८४, ७०, ६० । यहाँ क्रोधसे मानकी प्रथम वर्गणामें २१ का अन्तर है । यथा—१०५ – ८४ = २१ । यहाँ ४ का मानकी प्रथम वर्गणा ८४ में भाग देनेपर भी २१ लब्ध आते हैं । अतः यह चार विशेषका प्रमाण लानेके लिए भागहार है यह निश्चित होता है । अब यह जो भागहार ४ है इसमें एक और मिला देनेपर ५ होते हैं । अतः मानके प्रथम स्पर्धकसे ५ स्थान ऊपर जाकर पाँचवें स्पर्धककी आदि वर्गणा लें और विशेषका प्रमाण लानेके लिए जो ४ भागहार कहा है उतने स्थान क्रोधके प्रथम स्पर्धकसे ऊपर जाकर जो चौथा स्पर्धककी आदि वर्गणा है उसे ले लें तो इन दोनों वर्गणाओंका प्रमाण समान होगा । यथा—

क्रोधके प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणा १०५ × ४ = ४२०
मानके प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणा ८४ × ५ = ४२०

इसी प्रकार उक्त विधिको ध्यानमें रखकर मान-माया तथा माया-लोभके कितने स्थान ऊपर चढ़कर वहाँ प्राप्त हुए स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाएँ समान होती हैं इसे स्पष्ट कर लेना चाहिये । इसके लिये मान संज्वलनके चढ़े हुए स्थानोंको लानेके अभिप्रायसे विशेषको लानेके लिये भागहार ४ में १ मिलाया था । उसी प्रकार यहाँ मानसंज्वलनके चढ़े हुए स्थान ५ में १ मिलाकर मायासंज्वलनके चढ़े हुए स्थान ६ और उसमें भी १ मिला देनेपर लोभसंज्वलनके ऊपर चढ़े हुए स्थान ७ ले आना चाहिये । इस प्रकार मायाके ६ और लोभके ७ स्थान ऊपर चढ़कर ६वें और ७वें स्पर्धककी आदि वर्गणाका प्रमाण भी उतना ही होता है । यथा—

मानके प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणा ८४ × ५ = ४२०
मायाके ,, ,, ,, ७० × ६ = ४२०
लोभके ,, ,, ,, ६० × ७ = ४२०

§ ४७६. उससे ऊपर पुनरपि इतने स्थान जाकर दूसरी बार वहाँ प्राप्त स्पर्धकोंकी वर्गणाएँ सदृश होती हैं । यथा—

क्रोधके दूसरी बार प्राप्त प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणा १०५ × (४ + ४) ८ = ८४०
मानके ,, ,, ,, ,, ८४ × (५ + ५) १० = ८४०
मायाके ,, ,, ,, ,, ७० × (६ + ६) १२ = ८४०
लोभके ,, ,, ,, ,, ६० × (७ + ७) १४ = ८४०

§ ४७७. इस प्रकार अपने-अपने चढ़े हुए स्थानोंके प्रमाणको एक काण्डक करके द्विचरम काण्डकप्रमाण स्थान जाकर सबकी आदि वर्गणाएँ सदृश हो जाती हैं यहाँतक ले जाना चाहिये, उससे आगे अपने-अपने अन्तिम काण्डकप्रमाण स्थान जाकर अन्तिम अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाएँ सदृश उत्पन्न होती हैं यह ग्रहण करना चाहिये । यथा—

§ ४७८. एत्थ अप्पप्पणो खंडयद्धाणेण सग-सगअपुव्वफद्दयसलागाओ ओवट्टिय खंडयसलागाओ समुप्पाएयव्वाओ। संदिट्ठीए तासिं पमाणमेदं ४। तदो खंडयसलागमेत्तद्धाणेसु अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाओ सरिसीओ होंति त्ति घेत्तव्वं।

§ ४७९. एवमेदं परूविय संपहि अपुव्वफद्दयाणं पमाणागमणट्ठमेयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्स ठविदभागहारपमाणमेत्तियमिदि जाणावणट्ठमुवरिमप्पाबहुअसुत्तं भणइ—

* **पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयस्स जं पदेसग्गमोकड्डिज्जदि तेण कम्मस्स अवहारकालो थोवो। अपुव्वफद्दएहिं पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्स अवहारकालो असंखेज्जगुणो। पलिदोवमवग्गमूलमसंखेज्जगुणं।**

क्रोधके उपान्त्य स्पर्धककी आदि वर्गणा	१०५ × (४ + ४ + ४) १२ = १२६०
मानके ,, ,, ,,	८४ × (५ + ५ + ५) १५ = १२६०
मायाके ,, ,, ,,	७० × (६ + ६ + ६) १८ = १२६०
लोभके ,, ,, ,,	६० × (७ + ७ + ७) २१ = १२६०

उक्त कषायोंके अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणाएँ इस प्रकार होंगी—

क्रोधके अन्तिम स्पर्धककी आदि वर्गणा	१०५ × (४ + ४ + ४ + ४) १६ = १६८०
मानके ,, ,, ,,	८४ × (५ + ५ + ५ + ५) २० = १६८०
मायाके ,, ,, ,,	७० × (६ + ६ + ६ + ६) २४ = १६८०
लोभके ,, ,, ,,	६० × (७ + ७ + ७ + ७) २८ = १६८०

§ ४७८. यहाँपर अपने-अपने काण्डकप्रमाण स्थानसे अपने-अपने अपूर्व स्पर्धकोंकी शलाकाओंको भाजित कर काण्डकप्रमाण शलाकाएँ उत्पन्न करनी चाहिये। अंक संदृष्टिमें उनका प्रमाण ४ है। इसलिये काण्डकोंकी शलाकाप्रमाण स्थानोंमें अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाएँ सदृश होती हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहां अंक संदृष्टिमें क्रोधादि प्रत्येकके सब काण्डकोंकी संख्या ४ है। अतः उसे अपने-अपने पूर्वोक्त अपूर्व स्पर्धकोंकी शलाकाओंसे गुणित करनेपर क्रोध संज्वलनकी ४ × ४ = १६, मानसंज्वलनकी ४ × ५ = २०, मायासंज्वलनकी ४ × ६ = २४ और लोभसंज्वलनकी ४ × ७ = २८ शलाकाएँ उत्पन्न होती हैं और अपने-अपने इन अपूर्व स्पर्धकोंकी उक्त संख्या १६, २०, २४ और २८ में प्रत्येक कषायके एक काण्डकके प्रमाण अर्थात् उसके अपूर्व स्पर्धकोंकी संख्याका भाग देनेपर प्रत्येक कषायके काण्डकोंका प्रमाण ४ आता है यह निश्चित होता है। इससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि जैसे पहली और दूसरी बार अपने-अपने विवक्षित स्थान जानेपर चारों कषायोंके अन्तिम आदि स्पर्धककी आदि वर्गणा समान होती है वैसे ही उपान्त्य और अन्त्य स्पर्धककी आदि वर्गणा भी समान घटित कर लेनी चाहिये।

§ ४७९. इस प्रकार इसका कथन करके अब अपूर्व स्पर्धकोंका प्रमाण लानेके लिये एक प्रदेशगुणहानि स्थानान्तरके स्थापित किये गए भागहारका प्रमाण इतना है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके अल्पबहुत्व सूत्रको कहते हैं—

* **प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणकारकके जो प्रदेशपुंज अपकर्षित किया जाता है उससे कर्मका अवहार काल स्तोक है। उससे अपूर्व स्पर्धकोंकी अपेक्षा प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका अवहार काल असंख्यातगुणा है। तथा उससे पल्योपमका**

§ ४८०. एदेण सुत्तेण ओकड्डुक्कड्डुणभागहारादो असंखेज्जगुणेण पलिदोवम-पढमवग्गमूलादो च असंखेज्जगुणहीणेण पलिदोवमअसंखेज्जभागेण एयपदेसगुण-हाणिट्ठाणंतरफद्दएसु ओवट्टिदेसु जं भागलद्धं तत्तियमेत्ताणि कोहादिसंजलणाण-मपुव्वफद्दयाणि होंति त्ति एसो अत्थविसेसो जाणाविदो। तं जहा—'पढमसमयअस्स-कण्णकरणकारयस्स' एवं भणिदे पढमसमयअस्सकण्णकरणकारओ जं पदेसग्गमोकड्डदि तेण पमाणेण कम्मे अवहिरिज्जमाणे जो अवहारकालो ओकड्डुक्कड्डुणभागहारसण्णिदो सो उवरिमपदावेक्खाए थोवो त्ति भणिदं होदि। एदम्हादो पुण अपुव्वफद्दएहिं पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्स जो अवहारकालो सो असंखेज्जगुणो। तं कधं ? एयपदेस-गुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि ठविय पुणो तत्तो अपुव्वफद्दयपमाणमेगवारमवहरेयव्वं, एगा च अवहारसलागा ठवेयव्वा। एवं पुणो पुणो अवहिरिज्जमाणे ओकड्डुक्कड्डुण-भागहारादो असंखेज्जगुणो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो लब्भइ। तदो एसो अवहारकालो पुव्विल्लादो असंखेज्जगुणो त्ति णिद्दिट्ठो। एसो पुण पलिदोवमपढम-वग्गमूलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो त्ति जाणावणट्ठं पलिदोवमवग्गमूलमसंखेज्जगुणमिदि भणिदं। तदो सिद्धमेवमेदेण[1] भागहारेण एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दएसु ओवट्टिदेसु भागलद्धमेत्ताणि अपुव्वफद्दयाणि कोहादिसंजलणाणं णिवत्तेदि त्ति। एदं च अप्पा-

प्रथम वर्गमूल असंख्यातगुणा है।

§ ४८०. इस सूत्र द्वारा अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असंख्यातगुणा और पल्योपमके प्रथम वर्गमूलसे असंख्यातगुणा हीन जो पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है उससे एक गुणहानि-स्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोंके भाजित करनेपर जो भाग लब्ध आता है उतने क्रोधादि संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धक होते हैं इस अर्थविशेषका ज्ञान कराया गया है। यथा—'प्रथम समयवर्ती अश्वकर्ण-करणकारकके' ऐसा कहनेपर प्रथम समयमें अश्वकर्णकरणकारक जिस प्रदेशपुंजका अपकर्षण करता है उस प्रमाणसे कर्मके अपहृत करनेपर जो अपकर्षण-उत्कर्षण अवहार काल संज्ञावाला अवहारकाल प्राप्त होता है वह उपरिम पदोंकी अपेक्षा स्तोक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तथा इससे अपूर्व स्पर्धकोंकी अपेक्षा प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका जो अवहार काल है वह असंख्यातगुणा है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—एक प्रदेशगुणहानि स्थानान्तरके स्पर्धकोंको स्थापित कर पुनः उससे अपूर्व स्पर्धकके प्रमाणको एक बार अपहृत करना चाहिये और एक अवहार काल शलाका स्थापित करनो चाहिये। इस प्रकार पुनः पुनः अपहृत करनेपर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असंख्यातगुणा पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग प्राप्त होता है। इसलिये यह अवहार काल पूर्वके अवहार कालसे असंख्यातगुणा है यह निर्दिष्ट किया है। परन्तु यह पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असंख्यातवें भागप्रमाण है इस बातका ज्ञान करानेके लिये पल्योपमका प्रथम वर्गमूल उससे असंख्यातगुणा है यह कहा है। इसलिए यह सिद्ध हुआ कि इस भागहारसे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोंके भाजित करनेपर जो भाग लब्ध आवे उतने क्रोधादि संज्वलनोंके अपूर्व स्पर्धकोंको वह

१. ता०प्रतौ तेण इति पाठः।

बहुअमुवरि भणिस्समाणणिसेगपरूवणाए वि साहणभूदमिदि दट्ठव्वं। तं कधं—

§ ४८१. ओकड्डुक्कड्डणभागहारादो एसो अपुव्वफद्दयागमणणिमित्तं गुणहाणीए ठविदभागहारो जेण कारणेणासंखेज्जगुणो तेणोकड्डिदव्वादो पदेसपिंडमिच्छिदपमाणं घेत्तूण पुव्वफद्दयादिवग्गणाए सह जहा एयगोवुच्छा होदि तहा णिक्खेवदि त्ति घडदे। जइ पुण ओकड्डणभागहारादो एसो भागहारो असंखेज्जगुणहीणो होज्ज तो पुव्वफद्दयादिवग्गणाए सह एयगोवुच्छासेढीए अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तेदि त्ति ण वोत्तुं सक्किज्जदे, ओकड्डिदसयलदव्वे वि अपुव्वफद्दयमद्धाणेण ओवट्टिदे पुव्वफद्दयादिवग्गणाए असंखेज्जदिभागस्सेवापुव्वफद्दयेगवग्गणदव्वस्स समुप्पत्तिदंसणादो। एदस्सोवट्टणं ठविय सिस्साणमेत्थ पयदत्थविसये पडिबोहो समुप्पायेयव्वो। संपहि एदं चेव अवहारकालप्पाबहुअं साहणं कादूण पुव्वापुव्वफद्दएसु तक्कालोकड्डिदव्वस्स णिसेगविण्णासक्कमपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** पढमसमये णिव्वत्तिज्जमाणगेसु अपुव्वफद्दएसु पुव्वफद्दएहिंतो ओकड्डियूण पदेसग्गमपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए बहुअं देदि। विदियाए वग्गणाए विसेसहीणं देदि। एवमणंतराणंतरेण गंतूण चरिमाए अपुव्वफद्दयवग्गणाए विसेसहीणं देदि।**

प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणकारक रचता है। और यह अल्पबहुत्व आगे कहे जानेवाले निषेकप्ररूपणामें भी साधनभूत है ऐसा यहाँ जानना चाहिये।

§ ४८१. अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे, अपूर्व स्पर्धकोंको लानेके लिये गुणहानिका स्थापित किया गया यह भागहार जिस कारण असंख्यातगुणा है इसलिए अपकर्षित किये गए द्रव्यसे प्रदेशपिण्डसम्बन्धी इच्छित प्रमाणको ग्रहण कर पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके साथ जिस प्रकार एक गोपुच्छा होती है उस प्रकार निक्षिप्त होता है यह घटित हो जाता है। यदि पुनः अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे यह भागहार असंख्यातगुणहीन होवे तो पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके साथ एक गोपुच्छाश्रेणिरूपसे अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है यह नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अपकर्षित किये गए समस्त द्रव्यके भी अपूर्व स्पर्धकके अध्वानसे भाजित करनेपर पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके असंख्यातवें भागप्रमाण ही अपूर्व स्पर्धकके एक वर्गणाप्रमाण द्रव्यकी उत्पत्ति देखी जाती है। अतः इसके अपवर्तनको स्थापित कर यहाँपर प्रकृत अर्थके विषयमें शिष्योंको प्रतिबोधित करना चाहिये। अब इसी अवहारकालसम्बन्धी अल्पबहुत्वको साधन करके पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमेंसे तत्काल अपकर्षित किये गए द्रव्यके निषेकोंकी रचनाके क्रमका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** प्रथम समयमें रचे जानेवाले अपूर्व स्पर्धकोंमें, पूर्व स्पर्धकोंमेंसे अपकर्षित करके अपूर्व स्पर्धकोंसम्बन्धी आदि वर्गणामें बहुत प्रदेशपुंजको देता है। दूसरी वर्गणामें विशेष हीन देता है। इस प्रकार अनन्तर तदनन्तर क्रमसे जाकर अपूर्व स्पर्धककी अन्तिम वर्गणामें विशेष हीन देता है।**

§ ४८२. एत्थ अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए पदेसग्गं बहुअं देदि त्ति वुत्ते पुव्वफद्दयादिवग्गणदव्वमेत्तं पुणो अपुव्वफद्दयवग्गणसलागमेत्तवग्गणविसेसेहिं समहियं कादूण णिक्खिवदि त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा पुव्वापुव्वफद्दएसु एयगोवुच्छासेढीए अणुप्पत्तीदो। एत्तो विदियादिवग्गणासु दोगुणहाणिपडिभागियमेगेगवग्गणविसेसमणंतराणंतरादो हीणं कादूण णेदव्वं जाव अपुव्वफद्दयाणं चरिमवग्गणा त्ति। एवं कदे अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए णिसित्तपदेसग्गादो तेसिं चेव चरिमवग्गणाए णिवदिदपदेसग्गं चडिदद्धाणमेत्तवग्गणविसेसेहिं परिहीणं होदि। होंतं पि आदिवग्गणाए असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव परिहीणमिदि घेत्तव्वं, अपुव्वफद्दयद्धाणस्स एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरस्सासंखेज्जभागपमाणत्तादो। तदो अपुव्वफद्दयवग्गणासु अणंतरोवणिधाए विसेसहीणमणंतभागेण परंपरोवणिधाए च आदिवग्गणादो चरिमवग्गणाए असंखेज्जदिभागहीणं णिक्खिवदि त्ति घेत्तव्वं। संपहि अपुव्वफद्दयाणं चरिमवग्गणाए णिसित्तपदेसग्गादो पुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए णिसिंचमाणं पदेसग्गस्सासंखेज्जगुणहीणं होदि। तत्तो परमणंतरोवणिधाए अणंतभागहीणं कादूण णिसिंचदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** तदो चरिमादो अपुव्वफद्दयवग्गणादो पढमस्स पुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए असंखेज्जगुणहीणं देदि। तदो विदियाए पुव्वफद्दयवग्गणाए**

§ ४८२. यहाँ अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें बहुत प्रदेशपुंजको देता है ऐसा कहनेपर पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाके प्रमाणको अपूर्व स्पर्धकोंके वर्गणाशलाकाप्रमाण वर्गणाविशेषोंसे अधिक करके निक्षिप्त करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें एक गोपुच्छाश्रेणिकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। इससे आगे द्वितीय आदि वर्गणाओंमें दो गुणहानिप्रमाण प्रतिभागके अनुसार एक-एक वर्गणाविशेषको अनन्तर तदनन्तर क्रमसे हीन करके अपूर्व स्पर्धकोंकी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होनेतक ले जाना चाहिये। ऐसा करनेपर अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे उन्हींकी अन्तिम वर्गणामें निक्षिप्त प्रदेशपुंज जितने स्थान आगे गये हैं उतने वर्गणाविशेषोंसे हीन होता है। ऐसा होता हुआ भी आदि वर्गणासे असंख्यातवें भागप्रमाण ही हीन होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि वह अपूर्व स्पर्धकस्थानसम्बन्धी एक गुणहानिस्थानान्तरके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है। इसलिए अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाओंमें उत्तरोत्तर अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है और परम्परोपनिधाकी अपेक्षा आदिवर्गणासे अन्तिम वर्गणामें असंख्यातवें भागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। तथा अपूर्व स्पर्धकोंकी अन्तिम वर्गणाएँ निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे पूर्वस्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन होता है। उससे आगे पूर्व स्पर्धकोंकी द्वितीयादि वर्गणाओंमें परम्परोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तभाग हीन करके प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** उसके बाद अपूर्व स्पर्धककी अन्तिम वर्गणासे प्रथम पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें असंख्यातगुणा हीन प्रदेशपुंज देता है। उससे पूर्व स्पर्धककी दूसरी वर्गणामें**

विसेसहीणं देदि । सेसासु सव्वासु पुव्वफद्दयवग्गणासु विसेसहीणं देदि ।

§ ४८३. एत्थ ताव पुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए णिवदमाणदव्वस्सासंखेज्ज-गुणहीणत्ते कारणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—अपुव्वफद्दयाणं चरिमवग्गणाए णिवदिद-दव्वं पुव्वफद्दयादिवग्गणादो एयवग्गणविसेसमेत्तेणब्भहियं होइ । संपहि पुव्वफद्दयादि-वग्गणाए णिवदमाणं दव्वं तत्थ पुव्वावट्ठिददव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होदि, ओक-ड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जेसु भागेसु गदेसु दिवड्ढ[1]गुणहाणीए ओवट्टिदेसु सादिरेयओकड्डु-क्कड्डणभागहारेणादिवग्गणाए खंडिदाए तत्थेयखंडमेत्तस्सेव दव्वस्सागमणदंसणादो ।

§ ४८४. संपहि एदस्सेवत्थस्स खेत्तविण्णासमुहेण फुडीकरणं कस्सामो । तं जहा—पुव्वफद्दयादिवग्गणपमाणेण सयलदव्वे कीरमाणे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तीओ आदिवग्गणाओ होंति त्ति तासिं खेत्तविण्णासो एवं ठवेयव्वो—

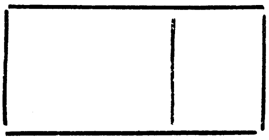

एवमादिवग्गणविक्खंभेण दिवड्ढगुणहाणिआयामेण च खेत्तमेदं ठविय पुणो विक्खंभेण ओकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तीओ फालीओ कायव्वाओ । एवं कादूण तत्थ रूवूणोकड्डु-क्कड्डणभागहारमेत्तीओ फालीओ कायव्वाओ । एवं कादूण तत्थ रूवूणोकड्डुक्कड्डण-

विशेष हीन प्रदेशपुंज देता है । इस प्रकार पूर्व स्पर्धककी शेष सब वर्गणाओंमें उत्तरोत्तर विशेष हीन विशेष हीन प्रदेशपुंज देता है ।

§ ४८३. यहाँ सर्वप्रथम पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यात-गुणा हीन होता है इसके कारणका कथन करेंगे । यथा—अपूर्व स्पर्धकोंकी अन्तिम वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाला द्रव्य पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणासे एक वर्गणा विशेषमात्र अधिक होता है । तथा पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाला द्रव्य वहाँ पूर्व अवस्थित द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है, क्योंकि डेढ़ गुणहानिसे भाजित अपकर्षित समस्त द्रव्यसम्बन्धी असंख्यात बहुभागके व्यतीत होनेपर साधिक अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा आदि वर्गणाके खण्डित करनेपर वहाँ एक भागमात्र द्रव्यका ही आगमन देखा जाता है ।

§ ४८४. अब इसी अर्थको क्षेत्रविन्यास द्वारा स्पष्ट करेंगे । वह जैसे—पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके प्रमाणसे समस्त द्रव्यके करनेपर डेढ़ गुणहानिप्रमाण आदि वर्गणाएँ उत्पन्न होती हैं, इसलिये उनके क्षेत्रकी रचना इस प्रकार स्थापित करनी चाहिये—

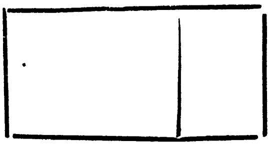

इस प्रकार आदि वर्गणाके विष्कम्भरूप और डेढ़ गुणहानिके आयामरूप इस क्षेत्रको स्थापित करके पुनः विष्कम्भकी ओरसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण फालियाँ करनी चाहिये । इस प्रकार करके उनमेंसे एक कम भागहारप्रमाण फालियोंको वहीं स्थापित करके तथा शेष रही

१. आ०प्रतौ भागेसु दिवड्ढ– इति पाठः ।

भागहारमेत्तफालीओ तत्थेव ट्ठविय एगफालिं घेत्तूण पुध ट्ठविदे तमवणिदफालिपमाण-मपुव्वफद्दयाणि करेमाणेणोकड्डिदसयलसव्वमेत्तं होदि।

§ ४८५. पुणो एस फाली आयामेण अपुव्वफद्दयागमणट्ठं गुणहाणीए जो भागहारो ओकड्डुक्कड्डुणभागहारादो असंखेज्जगुणो तेण दुभागब्भहियेण खंडेयव्वा। एवं खंडिदे तत्थेगेगखंडायामो अपुव्वफद्दयद्धाणमेत्तो होदि। तत्थ रूवूणोकड्डुक्कड्डुण-भागहारमेत्तेसु खंडेसु पुव्विल्लखेत्तस्स हेट्ठा समयाविरोहेण संधिदेसु पुव्वफद्दयादि-वग्गणाए सह अपुव्वफद्दयसयलवग्गणाओ सरिसपमाणेण समुप्पण्णाओ। णवरि एत्थ अपुव्वफद्दयवग्गणद्धाणसंकलणमेत्तवग्गणविसेसेहिं विणा गोवुच्छायारो ण समुप्पज्जदि त्ति तेत्तियमेत्तं पि दव्वमवसेसखंडेहिंतो घेत्तूण समयाविरोहेणेत्थ पक्खिवियव्वं। एदं पुण संकलणदव्वमप्पहाणं, एयखंडदव्वस्सासंखेज्जदिभागपमाणत्तादो। पुणो रूवूणो-कड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तखंडेहिं परिहीणदिवड्ढभागहारमेत्तसेसखंडाणि सव्वाणि पुव्वा-पुव्वफद्दएसु विहंजियूण पदंति त्ति घेत्तव्वं। तं कधं? सेसखंडेसु एयखंडपमाणं घेत्तूण पुणो पुव्वुत्तमेयपदेसगुहाणिट्ठाणंतरभागहारं दुभागब्भहियं रूवाहियं विरलेयूण समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स अपुव्वफद्दयायामो पावदि। तत्थेयरूवधरिदफालिं घेत्तूण अपुव्वफद्दयसयलखंडाणं फासे ढोएयव्वं। पुणो सेससव्वरूवधरिदबहुखंडाणि

एक फालिको ग्रहण करके पृथक् स्थापित करनेपर उस पृथक् निकालकर रखी गई फालिका जितना प्रमाण है उतने अपूर्व स्पर्धक करनेपर अपकर्षित किये गये द्रव्यका प्रमाण होता है।

§ ४८५. पुनः इस फालिको, आयामकी ओरसे अपूर्व स्पर्धकोंको लानेके लिये गुणहानिका अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असंख्यातगुणा जो भागहार है द्वितीय भाग अधिक उससे, भाजित करना चाहिये। इस प्रकार भाजित करनेपर वहाँ एक-एक खण्डका आयाम अपूर्व स्पर्धकोंके अध्वानप्रमाण होता है। वहाँ एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण खण्डोंमें पूर्वके क्षेत्रके नीचे आगमके अविरोधपूर्वक जोड़ देनेपर पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके साथ अपूर्व स्पर्धककी समस्त वर्गणाएँ सदृश प्रमाणरूपसे उत्पन्न हो जाती हैं। इतनी विशेषता है कि ऐसा करनेपर अपूर्व स्पर्धककी वर्गणाओंका जो अध्वान है उसके संकलनप्रमाण वर्गणाविशेषोंके बिना गोपुच्छाकार नहीं उत्पन्न होता है, इसलिए तत्प्रमाण द्रव्यको शेष खण्डोंमेंसे ग्रहण करके आगमके अविरोधपूर्वक इसमें मिला देना चाहिये। परन्तु यह संकलनरूप द्रव्य अप्रधान है, क्योंकि यह एक खण्डप्रमाण द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पुनः एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार-प्रमाण खण्डोंसे रहित डेढ़ भागहारप्रमाण शेष सब खण्ड पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें विभक्त होकर पतित होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—शेष खण्डोंमेंसे एक खण्डके प्रमाणको ग्रहण करके पुनः द्वितीय भाग अधिक एक प्रदेशगुणहानि स्थानान्तरभागहारको रूपाधिक करनेके बाद उसे विरलन करके तथा सदृश खण्ड करके देयरूपसे देनेपर एक-एक रूपके प्रति अपूर्व स्पर्धकोंका आयाम प्राप्त होता है। उसमेंसे एक रूपके प्रति प्राप्त फालिको ग्रहण कर उसे अपूर्व स्पर्धकके समस्त खण्डोंके पासमें लाकर स्थापित करना चाहिये। पुनः शेष सब रूपोंके प्रति प्राप्त बहुत खण्ड पूर्व स्पर्धकोंमें पतित

पुव्वफद्दएसु णिवदंति। एवं चेव सेसासेसखंडाणि वि पुव्वापुव्वफद्दएसु विहंजियूण दादव्वाणि। एवं दिण्णे पुव्वफद्दयादिवग्गणाए लद्धवियलखंडाणि सव्वाणि घेत्तूणेय-सयलखंडपमाणं णत्थि, किंचूणेगसयलखंडमेत्तस्सेव तस्स समुवलंभादो।

§ ४८६. संपहि केत्तियमेत्तदव्वेण एयसयलखंडपमाणं पावदि त्ति पुच्छिदे ओकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तवियलखंडाणि जइ अत्थि तो एयसयलखंडपमाणं पावदि। ण च एत्तियमेत्तदव्वमत्थि, हेट्ठिमभागहारादो उवरिमखंडसलागगुणगारस्स ओकड्डु-क्कड्डणभागहारमेत्तरूवेहिं परिहीणत्तदंसणादो। तम्हा किंचूणेगखंडमेत्तमेव पुव्वफद्द-यादिवग्गणाए लद्धदव्वमिदि सिद्धं।

§ ४८७. संपहि अपुव्वफद्दएहिं केत्तियमेत्तदव्वं लद्धमिदि भणिदे रूवूणोकड्डु-क्कड्डणभागहारमेत्तसयलखंडाणि पुणो किंचूणेयखंडपमाणं च लद्धं होदि। तदो अपुव्व-फद्दयचरिमवग्गणाए णिसित्तपदेसादो पुव्वफद्दयादिवग्गणाए णिसित्तपदेसग्गमसंखेज्ज-गुणहीणं। केत्तिओ एत्थ गुणगारो त्ति भणिदे ओकड्डुक्कड्डणभागहारो सादिरेओ भवदि। एदेण कारणेण पढमस्स पुव्वफद्दयस्सादिवग्गणाए असंखेज्जगुणहीणं पदेसग्गं णिक्खिवियूण तदो विदियाए पुव्वफद्दयवग्गणाए विसेसहीणं देदि अणंत-भागेण, सेसासु वि सव्वासु पुव्वफद्दयवग्गणासु अणंतरोवणिधाए विसेसहीणं चेव विसेसहीणं। पुव्वफद्दयाणं जहण्णफद्दयमादिं कादूण जहण्णाइच्छावणमेत्तफद्दयाणि

होते हैं। और इसी प्रकार शेष समस्त खण्ड भी पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें विभक्त करके दे देने चाहिये। इस प्रकार देनेपर पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें प्राप्त हुए सभी विकल खण्डोंको ग्रहण कर एक सकल खण्डका प्रमाण नहीं होता, क्योंकि कुछ कम एक सकल खण्डप्रमाण ही उसका उपलब्ध होता है।

§ ४८६. अब कियत्प्रमाण द्रव्यसे एक सकल खण्डका प्रमाण प्राप्त होता है ऐसा पूछनेपर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण विकल खण्ड यदि होते हैं तो एक सकल खण्डका प्रमाण प्राप्त होता है। परन्तु इतना द्रव्य नहीं है, क्योंकि अधस्तन भागहारसे उपरिम खण्ड शलाकाओंका गुणकार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण रूपोंसे परिहीन देखा जाता है। इसलिए पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके कुछ कम एक खण्डप्रमाण ही लब्ध द्रव्य होता है यह सिद्ध हुआ।

§ ४८७. अब अपूर्व स्पर्धकोंसे कियत्-प्रमाण द्रव्य लब्ध होता है ऐसा कहनेपर एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण सकल खण्ड और कुछ कम एक खण्डप्रमाण द्रव्य लब्ध होता है इसलिए अपूर्व स्पर्धककी अन्तिम वर्गणामें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें निक्षिप्त हुआ प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन होता है। यहाँ गुणकारका कितना प्रमाण है? कहते हैं कि वह साधिक अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारप्रमाण है। इस कारणसे प्रथम पूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें असंख्यातगुणा हीन प्रदेशपुंज निक्षिप्त करके उससे पूर्व स्पर्धककी दूसरी वर्गणामें अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन देता है। आगे पूर्व स्पर्धककी शेष सब वर्गणाओंमें अनन्तरोपनिधासे विशेष हीन-विशेष हीन ही देता है।

शंका—पूर्व स्पर्धकोंके जघन्य स्पर्धकसे लेकर जघन्य अतिस्थापनाप्रमाण स्पर्धकोंको

मोत्तूण तत्तो उवरिमफद्दयाणं चेव पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डियूणापुव्व-फद्दयाणि णिव्वत्तेदि त्ति के वि भणंति, तण्ण घडदे, तहा इच्छिज्जमाणे अपुव्व-फद्दएसु णिवदमाणदव्वस्स सयलदव्वस्साणंतिमभागत्तेण पुव्वापुव्वफद्दएसु एय-गोवुच्छाणुप्पत्तीदो। कुदो एवमिदि चे ? जहण्णाइच्छावणब्भंतरे अणंताणं गुणहाणीण-मत्थित्तोवलंभेण तत्तो उवरि दव्वस्स सयलदव्वाणंतिमभागत्तदंसणादो। ण च एवंविहं दव्वमोकड्डियूण पुव्वापुव्वफद्दएसु एगगोवुच्छायारेण णिक्खिविदुं संभवो अत्थि, तहाणुवलंभादो। तम्हा अविसेसेण सव्वाणि पुव्वफद्दयाणि ओकड्डियूण समया-विरोहेणापुव्वफद्दयाणि करेदि त्ति घेत्तव्वं। कधं पुण हेट्ठा सव्वत्थ अणुभागोकड्डणा अइच्छावणणियमाविणाभाविणी एत्थुद्देसे अण्णहा पयट्टदि त्ति णासंकणिज्जं, सहावदो चेव एदम्मि विसये तहाविहणियमपरिच्चाएण ओकड्डणाए पवुत्तिअब्भुवगमादो। अहवा पुव्वफद्दयादिवग्गणादो हेट्ठा अणंताणं फद्दयाण विसयमुल्लंधियूण तदणंतिमभागे अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तेमाणस्स तेत्तियमेत्ताणं फद्दयाणं सरूवेणापरिणमिय तत्तो हेट्ठिमाणुभागसरूवेण परिणमणं चेवाइच्छावणमिदि एत्थ गहेयव्वं, अण्णहा पुव्वुत्त-दोसप्पसंगादो। एवमेत्तिएण पबंधेण अस्सकण्णकरणकारयस्स पढमसमए पुव्वापुव्व-

---

छोड़कर उनसे उपरिम स्पर्धकोंसम्बन्धी ही प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण कर अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं ?

समाधान—किन्तु उनका यह कथन घटित नहीं होता, क्योंकि इसे स्वीकार करनेपर अपूर्व स्पर्धकोंमें पतित होनेवाले द्रव्यके समस्त द्रव्यके अनन्तवें भागप्रमाण होनेसे पूर्व और अपूर्व स्पर्धकों की एक गोपुच्छा नहीं बन सकती।

शंका—किस कारणसे ऐसा है ?

समाधान—क्योंकि जघन्य अतिस्थापनाके भीतर अनन्त गुणहानियोंके अस्तित्वकी उपलब्धि होनेके कारण उससे ऊपर जितना द्रव्य बचता है वह समस्त द्रव्यके अनन्तवें भागप्रमाण ही देखा जाता है। परन्तु इस प्रकारके द्रव्यका अपकर्षण करके पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें एक गोपुच्छा-रूपसे निक्षिप्त करना सम्भव नहीं है, क्योंकि वैसा उपलब्ध नहीं होता। इसलिये अविशेषरूपसे सभी पूर्व स्पर्धकोंका अपकर्षण करके समयके अविरोधपूर्वक अपूर्व स्पर्धकोंको करता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

शंका—यदि पूर्वोक्त कथन नहीं माना जाय तो नीचे सर्वत्र जिसका अतिस्थापनाके साथ नियमसे अविनाभाव सम्बन्ध है ऐसी यह अनुभाग-अपकर्षणा इस स्थानपर कैसे प्रवृत्त होती है ?

समाधान—स्वभावसे ही इस स्थानपर उस प्रकारके नियमके परित्यागपूर्वक अपकर्षणकी प्रवृत्ति स्वीकार की गई है। अथवा पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणासे नीचे अनन्त स्पर्धकोंके विषयको उल्लंघन कर उनके अनन्तवें भागमें अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करते हुए तावन्मात्र स्पर्धकों-का, स्वरूपसे परिणमन न करके उससे नीचेके अनुभागरूपसे परिणमना ही अतिस्थापना है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा पूर्वोक्त दोषका प्रसंग प्राप्त होता है।

इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें पूर्व और अपूर्व

फद्दएसु दिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि तत्थेव दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** तम्हि चेव पढमसमए जं दिस्सदि पदेसग्गं तमपुव्वफद्दयाणं पढमाए वग्गणाए बहुअं। पुव्वफद्दयआदिवग्गणाए विसेसहीणं।**

§ ४८८. एत्थ सेढिपरूवणा दुविहा—अणंतरोवणिधा परंपरोवणिधा चेदि। तत्थाणंतरोवणिधा सुगमा त्ति तप्परिहारेण परंपरोवणिधा एदेण सुत्तेण णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा। तं जहा—अपुव्वफद्दयादिवग्गणाए दिस्समाणपदेसग्गादो पुव्वफद्दयादिवग्गणाए दिस्समाणपदेसग्गं विसेसहीणं चेव होदि। किं कारणं? एयगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं चेव तत्तो उवरि चडिदूणेदिस्से समवट्ठाणदंसणादो। एत्थ विसेसहीणपमाणमादिवग्गणाए असंखेज्जदिभागमेत्तमिदि गहेयव्वं, चडिदद्धाणमेत्ताणं चेव वग्गविसेसाणमेत्थ परिहाणिदंसणादो।

§ ४८९. ण केवलं पुव्वफद्दयादिवग्गणाए चेव दिस्समाणपदेसग्गमसंखेज्जभागहीणं, किंतु अपुव्वफद्दएसु वि आदीदो प्पहुडि जाव अणंताणि फद्दयाणि सयलापुव्वफद्दयद्धाणस्सासंखेज्जदिभागमेत्ताणि गच्छंति ताव अणंतभागहाणी होदूण तत्तो परमुवरिमसव्वद्धाणे सव्वद्धासंखेज्जभागहाणीए दिस्समाणपदेसग्गमवचिट्ठदि त्ति दट्ठव्वं। एसा च सव्वा पुव्वापुव्वफद्दएसु दिज्जमाण-दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणा

स्पर्धकोंमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब वहींपर दृश्यमान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** अब उसी अश्वकर्णकरणसम्बन्धी कालके प्रथम समयमें जो प्रदेशपुंज दिखाई देता है वह अपूर्व स्पर्धकोंकी प्रथम वर्गणामें बहुत होता है। उससे पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें विशेषहीन होता है।**

§ ४८८. प्रकृतमें श्रेणिप्ररूपणा दो प्रकारकी है—अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा। उनमेंसे अनन्तरोपनिधा सुगम है, इसलिए उसको छोड़कर इस सूत्र द्वारा परम्परोपनिधा निर्दिष्ट की गई जाननी चाहिये। वह जैसे—अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें दिखाई देनेवाले प्रदेशपुंजसे पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें दिखाई देनेवाला प्रदेशपुंज विशेष हीन ही है, क्योंकि एक गुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण जो स्थान है उससे ऊपर चढ़कर इसका अवस्थान देखा जाता है। यहाँपर विशेष हीनका प्रमाण आदि वर्गणाके असंख्यातवें भागमात्र है ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि जितना अध्वान ऊपर गये हैं मात्र उतना वर्गणाविशेषोंकी इस स्थानमें हानि देखी जाती है।

§ ४८९. केवल पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें ही दिखलाई देनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातवें भागहीन है, किन्तु अपूर्व स्पर्धकोंमें भी आदिसे लेकर जहाँतक समस्त अपूर्व स्पर्धक अध्वानके असंख्यातवें भागप्रमाण अनन्त स्पर्धक प्राप्त होते हैं वहाँतक अनन्त भागहानि होती है। तथा वहाँसे आगे उपरिम सर्व अध्वानमें सर्वदा असंख्यात भागहानिरूपसे दिखलाई देनेवाला प्रदेशपुंज अवस्थित रहता है ऐसा यहाँ जानना चाहिये। पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें यह सब दीयमान और

लोहसंजलणमहिकिच्च परूविदा, चउण्हं संजलणाणमक्कमेण भणणोवायाभावादो। तदो मायादिसंजलणेसु वि एसा चेव सेढिपरूवणा णिरवयवमणुगंतव्वा, विसेसाभावादो त्ति पदुप्पाएमाणो इदमाह—

*** जहा लोहस्स तहा मायाए माणस्स कोहस्स च।**

§ ४९० गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि तम्हि चेव अस्सकण्णकरणद्धापढमसमये चउण्हं संजलणाणमणुभागोदयो एदेण सरूवेण पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** उदयपरूवणा।**

§ ४९१. सुगमं।

*** जहा।**

§ ४९२. सुगमं।

*** पढमसमए चेव अपुव्वफद्दयाणि उदिण्णाणि अणुदिण्णाणि च। पुव्वफद्दयाणं पि आदीदो अणंतभागो उदिण्णो च अणुदिण्णो च। उवरि अणंता भागा अणुदिण्णा।**

§ ४९३. एदेण सुत्तेण लदासमाणाणंतिमभागपडिबद्धपुव्वफद्दयसरूवेण पुणो

दिखलाई देनेवाली प्रदेशपुंजसम्बन्धी श्रेणिप्ररूपणा लोभसंज्वलनको अधिकृत करके कही गई है, क्योंकि चारों संज्वलनोंके एक साथ कथन करनेका कोई उपाय नहीं पाया जाता। इसलिये मायादि संज्वलनोंकी भी यही श्रेणिप्ररूपणा पूरी जाननी चाहिये, क्योंकि इससे उसमें कोई विशेषता नहीं है इस बातका कथन करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** जिस प्रकार लोभसंज्वलनकी श्रेणिप्ररूपणा कही है उसी प्रकार माया, मान और क्रोधसंज्वलनकी जाननी चाहिये।**

§ ४९०. यह सूत्र गतार्थ है। अब उसी अश्वकर्णकरणका प्रथम समयमें चारों संज्वलनोंके अनुभागोदय इस रूपसे प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** अब उसी अश्वकर्णकरणकालके प्रथम समयमें चारों संज्वलनोंकी उदय प्ररूपणा करते हैं।**

§ ४९१. यह सूत्र सुगम है।

*** जैसे।**

§ ४९२. यह सूत्र भी सुगम है।

*** अश्वकर्णकरणकालके प्रथम समयमें ही अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण भी पाये जाते हैं और अनुदीर्ण भी पाये जाते हैं। तथा पूर्व स्पर्धकोंका भी आदिसे लेकर अनन्तवाँ भाग उदीर्ण भी पाया जाता है और अनुदीर्ण भी पाया जाता है। उससे आगे अनन्त अनुभाग बहुभाग अनुदीर्ण ही रहता है।**

§ ४९३. लताके समान अनन्तवें भागप्रमाण संज्वलनोंके अनुभागकी पूर्व स्पर्धकरूपसे तथा

तत्तो हेट्ठिमसव्वपुव्वफद्दयसरूवेण च संजलणाणमुदयपवुत्ती होदि, णोवरिमफद्दयसरूवेणेत्ति एसो अत्थविसेसो जाणाविदो। तं जहा—'अपुव्वफद्दयाणि उदिण्णाणि च अणुदिण्णाणि च एवं भणिदे अपुव्वफद्दयसरूवेण तक्कालमेव परिणममाणाणुभागसंतकम्मादो पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागमोकड्डियूणुदीरेमाणस्स उदयट्ठिदिअब्भंतरे सव्वेसिमपुव्वफद्दयाणं सरूवेणाणुभागसंतकम्ममुवलब्भदे। एवमुवलब्भमाणे सव्वाणि चेव अपुव्वफद्दयाणि उदिण्णाणि होंति। णवरि अपुव्वफद्दयसरूवेण परिणदसंतकम्मं णिरवसेसमुदयं णागयं। किं कारणं? अपुव्वफद्दयसरिसधणियपरमाणुसु फद्दयं पडि समवट्ठिदेसु तत्थ केत्तियाणं पि उदये संजादे वि सेसा तहा चेव चिट्ठंति, तेण कारणेणापुव्वफद्दयाणि सव्वाणि उदिण्णाणि च अणुदिण्णाणि चेदि भणिदं। एवं चेव पुव्वफद्दयाणं पि आदीदो प्पहुडि अणंतिमभागस्स उदिण्णाणुदिण्णत्तं वत्तव्वं, तेसिं पि सरिसधणियमुहेणोदिण्णाणं सेसतज्जातीयसरूवेणाणुदिण्णभावसिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो। लदासमाणपुव्वफद्दयाणमणंतिमभागादो उवरिमा पुण अणंता भागा णियमा अणुदिण्णा, तेसिं सव्वेसिं पि सगसरूवेणुदयपवेसाणुवलंभादो। एवमुदयपरूवणं कादूण संपहि तत्थेव चउण्हं संजलणाणमणुभागबंधो कधं पयट्टदि त्ति एवंविहासंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** बंधेण णिव्वत्तिज्जंति अपुव्वफद्दयं पढममादिं कादूण जाव लदा-**

उससे नीचेके समस्त अनुभागकी अपूर्व स्पर्धकरूपसे उदयप्रवृत्ति होती है, उपरिम स्पर्धकरूपसे नहीं इस अर्थविशेषका इस सूत्र द्वारा ज्ञान कराया गया है। वह जैसे—अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण भी होते हैं और अनुदीर्ण भी होते हैं ऐसा कहनेपर अपूर्व स्पर्धकरूपसे तत्काल ही परिणमन करनेवाले अनुभाग सत्कर्ममेंसे जिस प्रदेशपुंजका असंख्यातवाँ भाग अपकर्षित होकर उदीरित होता है उसकी उदय स्थितिके भीतर सभी अपूर्व स्पर्धकोंका स्वरूपसे अनुभाग सत्कर्म पाया जाता है। इस प्रकार पाये जानेपर भी वे सभी अपूर्व स्पर्धक उदीर्ण होते हैं। इतनी विशेषता है कि अपूर्व स्पर्धकरूपसे परिणत हुआ सत्कर्म पूराका पूरा उदयमें नहीं आया है, क्योंकि अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी सदृश धनवाले परमाणुओंके स्पर्धकरूपसे अवस्थित होनेपर उनमेंसे कितने ही परमाणुओंका उदय होनेपर भी शेष उसी प्रकार अवस्थित रहते हैं। इस कारण अपूर्व स्पर्धक सभी उदीर्ण भी होते हैं और अनुदीर्ण भी रहते हैं ऐसा कहा है। इसी प्रकार पूर्व स्पर्धकोंके भी आदिसे लेकर अनन्तवें भागप्रमाण स्पर्धक उदीर्ण भी होते हैं और अनुदीर्ण भी रहते हैं ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि उनमेंसे भी सदृश धनरूपसे कितने ही उदीर्ण होते हैं और शेष तज्जातीयरूपसे अनुदीर्ण रहते हैं इसकी सिद्धिमें कोई निषेध नहीं पाया जाता। परन्तु लतासमान पूर्व स्पर्द्धकोंके अनन्तवें भागसे उपरिम अनन्त बहुभागप्रमाण स्पर्धक नियमसे अनुदीर्ण रहते हैं, क्योंकि उनका अपने स्वरूपसे उदयमें प्रविष्ट होना नहीं पाया जाता। इस प्रकार उदयकी प्ररूपणा करके अब वहींपर चारों संज्वलनोंका अनुभागबन्ध कैसे प्रवृत्त होता है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिये आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** प्रथम अपूर्व स्पर्धकसे लेकर लता समान स्पर्धकोंके अनन्तवें भाग तक**

समाणफद्दयाणमणंतभागो त्ति ।

§ ४९४. पुव्वं पि संजलणाणमणुभागबंधो पुव्वफद्दयसरूवो होदूण लदासमाण-फद्दयाणमणंतिमभागसरूवेण पयट्टमाणो एण्हिं तत्तो अणंतगुणहाणीए सुट्ठु ओहट्टि-यूण अपुव्वफद्दयाणं पढमफद्दयप्पहुडि जाव लदासमाणफद्दयाणमणंतिमभागो त्ति एदेसिं फद्दयाणं सरूवेण पयट्टदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ । णवरि पुव्व-परूविदोदयफद्दएहिंतो एदाणि बंधफद्दयाणि अणंतगुणहीणाणि त्ति घेत्तव्वाणि, बंधोदयाणमेत्थतणाणमेयट्ठाणियत्ताविसेसे वि संपहि बंधादो उदयो अणंतगुणो त्ति तेसिं तहाभावोववत्तीदो । एसा च सव्वा परूवणा अस्सकण्णकरणकारयस्स पढमसमय-महिकिच्च परूविदा त्ति जाणावणट्ठमुत्तरं सुत्तमाह—

*** एसा सव्वा परूवणा पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयस्स ।**

§ ४९५. एसा अणंतरादिक्कंतसव्वपरूवणा पढमसमयअस्सकण्णकरणकारयमहि-किच्च परूविदा त्ति भणिदं होदि । एवमेत्तिएण पबंधेण पढमसमयविसयं परूवणं समाणिय संपहि विदियसमयपडिबद्धं परूवणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

*** एत्तो विदियसमए तं चेव ट्ठिदिखंडयं, तं चेव अणुभागखंडयं, सो चेव ट्ठिदिबंधो ।**

स्पर्धक बन्धरूपसे निष्पन्न होते हैं ।

§ ४९४. पहले भी संज्वलनोंका अनुभागबन्ध पूर्व स्पर्धकरूप होकर लतासमान स्पर्धकोंके अनन्तवें भागरूपसे प्रवृत्त होता रहा अब इस समय उससे अनन्तगुणहानिरूपसे अच्छी तरह घटकर अपूर्व स्पर्धकोंके प्रथम स्पर्धकसे लेकर लता समान स्पर्धकोंके अनन्तवें भागके प्राप्त होनेतक इन स्पर्धकरूपसे प्रवृत्त होता है इस प्रकार यह यहाँ सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है इतनी विशेषता है कि पूर्वमें कहे गये उदयरूप स्पर्धकोंसे ये बन्धरूप स्पर्धक अनन्तगुणे हीन होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यहाँ सम्बन्धी बन्ध और उदय एक स्थानीय रूपसे उनमें कोई विशेषता न होनेपर भी इस समय बन्धसे उदय अनन्तगुणा है, इसलिए उन दोनोंकी उसरूपसे उपपत्ति बन जाती है । यह समस्त प्ररूपणा अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयका आलम्बन लेकर कही गई है इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** यह सब प्ररूपणा अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयकी की गई है ।**

§ ४९५. अनन्तर पूर्व व्यतीत हुई यह सब प्ररूपणा प्रथम समयवर्ती अश्वकर्णकरणकारकका आलम्बन लेकर कही गई है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा प्रथम समयके विषयका कथन समाप्त करके अब दूसरे समयसे सम्बन्ध रखनेवाली प्ररूपणाको करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** इससे आगे दूसरे समयमें वही स्थितिकाण्डक होता है, वही अनुभाग-काण्डक होता है और वही स्थितिबन्ध होता है ।**

§ ४९६. विदियसमए ट्ठिदि-अणुभागखंडएसु ट्ठिदिबंधोसरणे च णत्थि किंचि णाणत्तं, पढमसमयाढत्ताणं चेव तेसिमण्णहाभावेण विणा ताधे वि पवुत्तिदंसणादो।

*** अणुभागबंधो अणंतगुणहीणो ।**

§ ४९७. पडिसमयमणंतगुणवड्ढीए विसोहीसु वड्ढमाणासु अप्पसत्थाणं कम्माणमणुभागबंधस्स खवगसेढीए सव्वद्धाणंतगुणहाणिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। एवमणुभागोदयस्स वि वत्तव्वं, विसेसाभावादो ।

*** गुणसेढी असंखेज्जगुणा ।**

§ ४९८. कुदो? विसोहीसु वड्ढमाणियासु पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेडीए पदेसग्गमोकड्डियूण गुणसेढिणिक्खेवं कुणमाणस्स तदविरोहादो ।

*** अपुव्वफद्दयाणि जाणि पढमसमए णिव्वत्तिदाणि विदियसमये ताणि च णिव्वत्तयदि अण्णाणि च अपुव्वाणि तदो असंखेज्जगुणहीणाणि ।**

§ ४९९. पढमसमये जाणि अपुव्वफद्दयाणि एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागपरिमाणाणि णिव्वत्तिदाणि ताणि पुणो वि सरिसघणियसुहेण णिव्वत्तेमाणो चेव तदो हेट्ठा अण्णाणि वि अपुव्वफद्दयाणि तत्तो असंखेज्जगुणहीण-

---

§ ४९६. अश्वकर्णकरणकारकके दूसरे समयमें स्थितिकाण्डक, अनुभागकाण्डक और स्थितिबन्धापसरणमें कुछ भी भेद नहीं है, क्योंकि प्रथम समयमें आरम्भ किये गये उन तीनोंकी अन्यथाभावके बिना उसी रूपसे उस समय भी प्रवृत्ति देखी जाती है।

*** अनुभागबन्ध अनन्तगुणा हीन होता है ।**

§ ४९७. क्योंकि क्षपकश्रेणिमें प्रत्येक समयमें विशुद्धियाँ अनन्तगुणवृद्धिरूपसे वृद्धिगत होती रहती हैं, इसलिए वहाँ अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागबन्धके सर्वकालमें अनन्तगुणहानिको छोड़कर अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है। इसी प्रकार अनुभाग-उदयका भी कथन करना चाहिये, क्योंकि बन्धसे उदयमें अन्य किसी विशेषका अभाव है।

*** तथा गुणश्रेणि असंख्यातगुणी होती है ।**

§ ४९८. क्योंकि विशुद्धियोंकी वृद्धि होते रहनेपर प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके गुणश्रेणिनिक्षेप करनेवाले जीवके उक्त प्रकारसे गुणश्रेणिके होनेमें विरोधका अभाव है।

*** प्रथम समयमें जिन अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना की थी, दूसरे समयमें उनकी भी रचना करता है और उनसे असंख्यातगुणे हीन अन्य अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है ।**

§ ४९९. प्रथम समयमें एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके असंख्यातवें भागप्रमाण जिन अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना की थी उन्हें फिर भी सदृश धनरूपसे रचता हुआ ही उनसे नीचे उनके असंख्यातगुणे हीन अन्य भी अपूर्व स्पर्धकोंकी दूसरे समयमें रचना करता है यह उक्त कथनका

पमाणाणि विदियसमए णिव्वत्तेदि त्ति भणिदं होदि । होदु णामेदं, अण्णाणि अपुव्व-फद्दयाणि तदो हेट्ठा असंखेज्जगुणहीणाणि णिव्वत्तेदि त्ति, विरोहाभावादो । किंतु ताणि च णिव्वत्तेदि त्ति णेदं घडदे, पढमसमए चेव णिप्पण्णाणं तेसिं पुणो णिप्पा-यणविरोहादो ? ण एस दोसो, णिप्पण्णाणं पि तेसिं सरिसधणियमुहेण पुणो णिप्पायणे विरोहाभावादो ।

§ ५००. एवं च ताणि णिव्वत्तेमाणस्स तत्थ दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरू-वणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** विदियसमये अपुव्वफद्दएसु पदेसग्गस्स दिज्जमाणयस्स सेढि-परूवणं वत्तइस्सामो ।**

§ ५०१. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ ५०२. सुगमं ।

तात्पर्य है ।

शंका—यह बात होओ कि प्रथम समयमें रचे गये अपूर्व स्पर्धकोंसे नीचे उनसे असंख्यात-गुणे हीन अन्य अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है, क्योंकि इसमें किसी भी प्रकारके विरोधका अभाव है । किन्तु जो प्रथम समयमें रचे गये उन्हींको पुन: रचता है यह बात घटित नहीं होती, क्योंकि जो प्रथम समयमें ही रचे गये उनकी पुनः रचना करनेमें विरोध आता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जो प्रथम समयमें रचे गये उनका सदृश धन-स्वरूपसे पुन:निष्पन्न करनेमें विरोधका अभाव है ।

विशेषार्थ—यद्यपि प्रथम समयमें रचे गये स्पर्धकोंसे दूसरे समयमें नये स्पर्धक ही रचे जाते हैं, परन्तु दूसरे समयमें रचे गये जो स्पर्धक प्रथम समयमें रचे गये स्पर्धकोंके समान सदृश धनवाले होते हैं उनको लक्ष्यमें लेकर यह कहा गया है कि जो प्रथम समयमें रचे गये हैं उनको दूसरे समयमें भी रचता है। इसलिए उक्त कथनमें कोई विरोध नहीं आता । शेष कथन सुगम है ।

§ ५००. इस प्रकार उन्हींको रचना करनेवाले जीवके वहाँपर दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** अब दूसरे समयमें अपूर्व स्पर्धकोंमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा बतलावेंगे ।**

§ ५०१. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ ५०२. यह सूत्र सुगम है ।

*** विदियसमए अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए पदेसग्गं बहुअं दिज्जदि। विदियाए वग्गणाए विसेसहीणं। एवमणंतरोवणिधाए विसेसहीणं दिज्जदि ताव जाव जाणि विदियसमए अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि तेसिं चरिमादो वग्गणादो त्ति[२]।**

§ ५०३. विदियसमये णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए बहुअं पदेसग्गं णिक्खिवियूण तत्तो उवरिमासु वग्गणासु विदियसमयणिव्वत्तिज्जमाणापुव्वफद्दयचरिमवग्गणपज्जंतासु जहाकममणंतिमेगेगवग्गणविसेसेण हीणं कादूण पदेसणिक्खेवं कुणदि त्ति वुत्तं होइ। एत्तो पुण पढमसमए णिव्वत्तिदाणमपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए केरिसो पदेसणिक्खेवो होदि त्ति आसंकाए सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** तदो चरिमादो वग्गणादो पढमसमए जाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि तेसिमादिवग्गणाए दिज्जदि पदेसग्गमसंखेज्जगुणहीणं।**

§ ५०४. एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जहा पढमसमए पुव्वापुव्वफद्दयसंधीए अत्थविहासा कया तहा चेव कायव्वा, विसेसाभावादो। एत्तो उवरि सव्वत्थाणंतरोवणिधाए विसेसहीणमणंतभागेण पदेसविण्णासं करेदि, ण तत्थ कोवि भेदो त्ति पदुप्पायणफलो उत्तरसुत्तारंभो—

*** दूसरे समयमें अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें बहुत प्रदेशपुंज देता है, दूसरी वर्गणामें विशेष हीन प्रदेशपुंज देता है। इस प्रकार इस समय जो अपूर्व अपूर्व स्पर्धक किये गये उनमें, अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा उनकी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होनेतक, उत्तरोत्तर विशेष हीन-विशेष हीन प्रदेशपुंज देता है।**

§ ५०३. दूसरे समयमें रचे जानेवाले अपूर्व स्पर्धकोंकी आदिवर्गणामें बहुत प्रदेशपुंजका निक्षेप करके उससे दूसरे समयमें रची जानेवाली अपूर्व स्पर्धकोंकी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होनेतक उपरिम सभी वर्गणाओंमें विशेष हीन विशेष हीन प्रदेशोंका निक्षेप करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इसके बाद प्रथम समयमें रचे गये अपूर्व स्पर्धकोंकी आदिवर्गणामें किस विधिसे प्रदेशोंका निक्षेप होता है ऐसी आशंका होनेपर आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** तत्पश्चात् अन्तिम वर्गणासे प्रथम समयमें जो अपूर्व स्पर्धक किये गये उनकी आदि वर्गणामें असंख्यातगुणा हीन प्रदेशपुंज देता है।**

§ ५०४. इस सूत्रके अर्थका कथन करनेपर जिस प्रकार पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंकी सन्धिमें अर्थकी व्याख्या की उसी प्रकार करनी चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई अन्तर नहीं है। अब आगे सर्वत्र अन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है, उसमें कोई भेद नहीं है इस बातका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रका आरम्भ

---

१. ता०प्रतौ अपुव्वाणि फद्दयाणि इति पाठः। २. ता० क० आ० प्रतिषु अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि तेसिं चरिमादो वग्गणादो त्ति एवं सुत्तपाठः नोपलभ्यते।

*** तदो विदियाए वग्गणाए विसेसहीणं दिज्जदि । तत्तो पाए अणंतरोवणिधाए सव्वत्थ विसेसहीणं दिज्जदि । पुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए विसेसहीणं दिज्जदि । सेसासु वि विसेसहीणं दिज्जदि ।**

§ ५०५. पुव्वापुव्वफद्दएसु एगगोवुच्छसंपायणणिमित्तमेवंविहं पदेसणिक्खेवमेत्थ कुणदि त्ति घेत्तव्वं । सेसं सुगमं । एवं ताव विदियसमए दिज्जमाणयस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि तत्थेव दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** विदियसमये अपुव्वफद्दएसु वा पुव्वफद्दएसु वा एक्केक्किस्से वग्गणाए जं दिस्सदि पदेसग्गं तमपुव्वफद्दयआदिवग्गणाए बहुअं । सेसासु अणंतरोवणिधाए सव्वासु विसेसहीणं ।**

§ ५०६. कुदो ? पुव्वापुव्वफद्दएसु एगगोवुच्छे संजादे तत्थ दिस्समाणपदेसग्गस्स अणंतराणंतरादो विसेसहीणत्तं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो । संपहि तदियसमयपडिबद्धं परूवणं कुणमाणो उवरिमसुत्तपबंधमाह—

*** तदियसमए वि एसेव कमो[1] । णवरि अपुव्वफद्दयाणि ताणि च**

करते हैं—

*** उससे दूसरी वर्गणामें विशेषहीन प्रदेशपुंज देता है । पुनः वहाँसे लेकर अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा सर्वत्र क्रमसे विशेषहीन विशेषहीन देता है । फिर पूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें विशेषहीन देता है । तदनन्तर शेष वर्गणाओंमें विशेषहीन विशेषहीन देता है ।**

§ ५०५. पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें एक गोपुच्छाके सम्पादनके लिये यहाँपर इस प्रकार प्रदेशरचना करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये । शेष कथन सुगम है । इस प्रकार सर्वप्रथम दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब वहींपर दिखाई देनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** दूसरे समयमें अपूर्व स्पर्धकों तथा पूर्व स्पर्धकोंसम्बन्धी एक-एक वर्गणामें जो प्रदेशपुंज दिखाई देता है वह अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें बहुत होता है । शेष सब वर्गणाओंमें अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा उत्तरोत्तर विशेष हीन होता है ।**

§ ५०६. क्योंकि पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंकी एक गोपुच्छा बन जानेपर वहाँ दिखनेवाले प्रदेशपुंजमें अनन्तर तदनन्तररूपसे विशेष हीनपनेको छोड़कर अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है । अब तीसरे समयसे सम्बन्ध रखनेवाली प्ररूपणाको करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** तीसरे समयमें भी यही क्रम है । इतनी विशेषता है कि उस समय उन्हीं**

---

१. ता०प्रतौ कमा इति पाठः ।

अण्णाणि च णिव्वत्तयदि ।

§ ५०७. विदियसमए जाणि अपुव्वाणि फद्दयाणि णिव्वत्तिदाणि तेसिमसंखेज्जदिभागो विदियसमए णिरुद्धे जो कमो परूविदो सो चेव तदियसमए वि दट्ठव्वो, ठिदि-अणुभागखंडयादिपरूवणाए णाणत्ताणुवलंभादो । णवरि विदियसमयोकड्डिददव्वादो असंखेज्जगुणं दव्वमोकड्डियूणापुव्वफद्दयाणि एण्हिं करेमाणो ताणि च णिव्वत्तेदि तदो हेट्ठा अण्णाणि च णिव्वत्तेदि । तेसिं पुण पमाणं विदियसमए णिव्वत्तिदाणमपुव्वफद्दयाणमसंखेज्जदिभागो एसो एत्थतणो विसेसो ।

*** तस्स वि पदेसग्गस्स दिज्जमाणयस्स सेढिपरूवणं ।**

§ ५०८. वत्तइस्सामो त्ति वक्कसेसो । सेसं सुगमं ।

*** तदियसमए अपुव्वाणमपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए पदेसग्गं बहुअं दिज्जदि । विदियाए वग्गणाए विसेसहीणं । एवमणंतरोवणिधाए विसेसहीणं ताव जाव जाणि य तदियसमये अपुव्वाणमपुव्वफद्दयाणं चरिमादो वग्गणादो त्ति । तदो विदियसमए अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए पदेसग्गमसंखेज्जगुणहीणं । तत्तो पाए सव्वत्थ विसेसहीणं ।**

§ ५०९. गयत्थमेदं सुत्तं ।

अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है और अन्य अपूर्व स्पर्धकोंकी भी रचना करता है ।

§ ५०७. दूसरे समयमें जिन अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना की है । अर्थात् दूसरे समयमें जो उनका असंख्यातवाँ भागरूप क्रम कहा है वही तीसरे समयमें भी जानना चाहिये, क्योंकि यहाँपर भी स्थितिकाण्डक आदिकी प्ररूपणाका भेद नहीं पाया जाता । इतनी विशेषता है कि दूसरे समयमें अपकर्षित किये गये द्रव्यसे असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके इस समय अपूर्व स्पर्धकोंको करता हुआ उन्हींकी रचना करता है और उसके नीचे अन्य अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है । परन्तु उनका प्रमाण दूसरे समयमें रचे गये अपूर्व स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण है—यहाँ इतना विशेष है ।

*** अब उन अपूर्व स्पर्धकोंमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा बतलावेंगे ।**

§ ५०८. इस सूत्रमें 'बतलावेंगे' यह वाक्य शेष है । शेष कथन सुगम है ।

*** तीसरे समयमें अपूर्व अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें बहुत प्रदेशपुंज देता है । दूसरी वर्गणामें विशेषहीन देता है । इस प्रकार अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा तबतक विशेषहीन—विशेषहीन देता है जब जाकर तीसरे समयमें अपूर्व-अपूर्व स्पर्धकोंकी अन्तिम वर्गणा प्राप्त होती है । पुनः उससे दूसरे समयमें अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें असंख्यातगुणाहीन देता है । फिर वहाँसे लेकर सर्वत्र विशेषहीन देता है ।**

§ ५०९ यह सूत्र गतार्थ है ।

*** जं दिस्सदि पदेसग्गं तमादिवग्गणाए बहुअं। उवरिमणंतरोवणिधाए सव्वत्थ विसेसहीणं।**

§ ५१०. सुगमं। एवं तदियसमये परूवणं समाणिय एत्तो उवरि वि जाव पढमाणुभागखंडयचरिमसमओ त्ति ताव सव्वेसु समएसु एसा चेव परूवणा णिरवसेसमणुगंतव्वा त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** जहा तदियसमए एस कमो ताव जाव पढममणुभागखंडयं चरिमसमयअणुक्किण्णं ति।**

§ ५११. एदम्मि अद्धाणे तदियसमयपरूवणादो णत्थि किंचि णाणत्तमिदि वुत्तं होइ। कुदो णाणत्ताभावो चे ? तं चेव ट्ठिदिखंडयं, तं चेवाणुभागसंतकम्ममणुभागबंधो अणंतगुणहीणो, सेढी असंखेज्जगुणा, समये समये असंखेज्जगुणं दव्वमोकड्डियूण अपुव्वफद्दयाणि करेमाणो अणंतराइक्कंतसमये जाणि अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तिदाणि तेसिं हेट्ठा असंखेज्जदिभागमेत्ताणि ताणि णिव्वत्तेदि तहा चेव तेसु दिज्जमाणयस्स दिस्समाणयस्स च पदेसग्गस्स सेढिपरूवणा कायव्वा त्ति एदेण भेदाभावादो। पढमाणुभागखंडए उक्किण्णे वि अपुव्वफद्दयादिविहाणे[1] ण किंचि णाणत्तमत्थि, किंतु अणुभागसंतकम्मविसये तत्थ को वि भेदसंभवो अत्थि त्ति पदु-

---

*** वहाँ जो प्रदेशपुंज दिखाई देता है वह आदि वर्गणामें बहुत है। आगे अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा सर्वत्र विशेषहीन विशेषहीन है।**

§ ५१०. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार तीसरे समयमें प्ररूपणा समाप्त करके इससे आगे भी प्रथम अनुभागकाण्डकके अन्तिम समयके प्राप्त होनेतक सब समयोंमें पूरी तरहसे यही प्ररूपणा जाननी चाहिये इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जिस प्रकार तीसरे समयमें क्रम कहा है उसी प्रकार प्रथम अनुभागकाण्डक अन्तिम समयके प्राप्त होने तक जबतक अनुत्कीर्ण है तबतक यही क्रम जानना चाहिये।**

§ ५११. इस स्थानपर तीसरे समयकी प्ररूपणासे कुछ नानापन (भेद) नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—नानापनका अभाव किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि वही स्थितिकाण्डक है, वही अनुभागकाण्डक है, अनुभागबन्ध अनन्तगुणा हीन है, गुणश्रेणि असंख्यातगुणी है, क्योंकि समय-समयमें असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता हुआ अनन्तर अतीत समयमें जिन अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना की उनके नीचे असंख्यातवें भागप्रमाण उनकी रचना करता है तथा उनमें दिये जानेवाले और दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा उसी प्रकारकी करता है इस अपेक्षा पूर्व कथनसे इस कथनमें कोई भेद नहीं है। तथा प्रथम अनुभागकाण्डकके उत्कीर्ण होनेपर भी अपूर्व स्पर्धकों आदिके विधानमें कुछ भी नानापन नहीं है। किन्तु अनुभागसत्कर्मके विषयमें वहाँ कुछ भेद सम्भव है इस

---

१. ता०प्रतौ -विहाणे ण इति पाठः।

प्पाएमाणो इदमाह—

*** तदो से काले अणुभागसंतकम्मे णाणत्तं ।**

§ ५१२. पुव्वमणुभागसंतकम्ममागाइदेण सह माणे थोवमिच्चादिपरिवाडीए समवट्ठिदं एण्हिं पुण पढमाणुभागखंडए घादिदे सेसाणुभागसंतकम्मम्मि णाणत्तमत्थि तमिदाणिं वत्तइस्सामो त्ति भणिदं होइ ।

*** तं जहा**

§ ५१३. सुगमं ।

*** लोभे अणुभागसंतकम्मं थोवं । मायाए अणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । माणस्स अणुभागसंतकम्ममणंतगुणं । कोहस्स अणुभागसंतकम्ममणंतगुणं ।**

§ ५१४. घादिदसेसाणुभागसंतकम्ममेदीए अप्पाबहुअपरिवाडीए अस्सकण्णायारेण चिट्ठइ त्ति वुत्तं होइ ।

*** तेण परं सव्वम्हि अस्सकण्णकरणे एस कमो ।**

§ ५१५. एस अणंतरपरूविदो अणुभागसंतकम्मप्पाबहुअकमो अपुव्वफद्दय-

बातका कथन करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** तत्पश्चात् तदनन्तर समयमें अनुभागसत्कर्ममें जो नानापन है उसका कथन करेंगे ।**

§ ५१२. पहले अनुभागसत्कर्मको ग्रहण करनेके साथ 'मानसंज्वलनमें स्तोक अनुभाग हैं' इत्यादि परिपाटी क्रमसे जो अनुभाग समवस्थित है उसका इस समय पुनः प्रथम अनुभागकाण्डकके घाते जानेपर जो अनुभागसत्कर्म शेष रहता है उसमें नानापन है उसे इस समय बतलावेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** वह जैसे ।**

§ ५१३. यह सूत्र सुगम है ।

*** लोभमें अनुभागसत्कर्म सबसे स्तोक है । उससे मायामें अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा है । उससे मानमें अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा है और उससे लोभमें अनुभागसत्कर्म अनन्तगुणा है ।**

§ ५१४. घात करनेके बाद जो अनुभागसत्कर्म शेष रहता है वह इस अल्पबहुत्व परिपाटीके अनुसार अश्वकर्णके आकाररूपसे अवस्थित रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** इससे आगे सम्पूर्ण अश्वकर्णकरणके कालमें यही क्रम है ।**

§ ५१५. यह अनन्तर कहा गया अनुभागसत्कर्मके अल्पबहुत्वका क्रम और अपूर्व स्पर्धकों

विहाणादिक्कमो च जाव अस्सकण्णकरणद्धाचरिमसमओ त्ति णिव्वामोहमणुगंतव्वो, विसेसाभावादो। संपहि पढमादिसमएसु णिव्वत्तिदाणमपुव्वफद्दयाणं पमाणविसये णिण्णयसमुप्पायणट्ठमुवरिममप्पाबहुअपबंधमाह—

❀ पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि णिव्वत्तिदाणि बहुआणि। विदियसमए जाणि अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि ताणि असंखेज्जगुणहीणाणि। तदियसमए अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि ताणि असंखेज्जगुणहीणाणि। एवं समए समए जाणि अपुव्वाणि अपुव्वफद्दयाणि कदाणि ताणि असंखेज्जगुणहीणाणि। गुणगारो पलिदोवमवग्गमूलस्स[1] असंखेज्जदिभागो।

§ ५१६. एत्थ गुणगारो 'पलिदोवमवग्गमूलस्स असंखेज्जदिभागो' त्ति वुत्ते विदियसमयणिव्वत्तिदापुव्वफद्दएसु जेण गुणगारेण गुणिदेसु पढमसमयापुव्वफद्दयाणं पमाणमुप्पज्जदि सो गुणगारो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो होदूण असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तो अण्णो वा ण होदि, किंतु पलिदोवमवग्गमूलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव होदि। एवं सेसेसु वि समएसु णायव्वो त्ति भणिदं होदि। तदो समए समए णिव्वत्तिज्जमाणाणि अपुव्वफद्दयाणि एयगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागपमाणाणि होदूण एदेण गुणगारविसेसेण हीयमाणाणि दट्ठव्वाणि त्ति एसो

आदिके विधानका क्रम अश्वकर्णकरण कालके अन्तिम समय तक बिना व्यामोहके जानना चाहिये, क्योंकि उसमें कोई विशेषता नहीं है। अब प्रथम आदि समयोंमें रचे जानेवाले अपूर्व स्पर्धकोंके प्रमाणविषयक निर्णय उत्पन्न करनेके लिये आगेके अल्पबहुत्वप्रबन्धको कहते हैं—

*** प्रथम समयमें निष्पन्न किये गये अपूर्व स्पर्धक बहुत हैं। दूसरे समयमें जो अपूर्व अपूर्व स्पर्धक किये गये वे असंख्यातगुणे हीन हैं। तीसरे समयमें जो अपूर्व अपूर्व स्पर्धक किये गये वे असंख्यातगुणे हीन हैं। इस प्रकार समय-समयमें जो अपूर्व-अपूर्व स्पर्धक किये गये वे उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे हीन हैं। यहाँ गुणकार पल्योपमके वर्गमूलका असंख्यातवें भागप्रमाण है।**

§ ५१६. यहाँपर गुणकार 'पल्योपमके वर्गमूलका असंख्यातवाँ भाग है' ऐसा कहनेपर दूसरे समयमें निष्पन्न हुए अपूर्व स्पर्धकोंको जिस गुणकारसे गुणा करनेपर प्रथम समयके अपूर्व स्पर्धकोंका प्रमाण उत्पन्न होता है वह गुणकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर असंख्यात पल्योपमके प्रथम वर्गमूलप्रमाण या अन्य नहीं होता, किन्तु पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। इसी प्रकार शेष समयोंमें भी जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिये प्रत्येक समयमें निष्पन्न होनेवाले अपूर्व स्पर्धक एक गुणहानिस्थानान्तरके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर इस गुणकारविशेषकी अपेक्षा उत्तरोत्तर हीयमान जानने चाहिये यह इस सूत्रके

१. आ०प्रतौ पलिदोवमस्स इति पाठः।

एत्थ सुत्तत्थसंगहो। संपहि तेसु चेवापुव्वफद्दएसु आदिवग्गणाणमविभागपडिच्छेदा एदेण सरूवेणावचिट्ठंति त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** चरिमसमए लोभस्स अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए अविभाग-पलिच्छेदग्गं थोवं। विदियस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभाग-पडिच्छेदग्गं दुगुणं। तदियस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभाग-पडिच्छेदग्गं तिगुणं।**

§ ५१७. एवं पढमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्ग-मुद्दिस्सदि—तदित्थफद्दयस्स[1] आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं तदिगुणं[2]। एदं च आदिवग्गणाणमविभागपडिच्छेदप्पाबहुअं सरिसधणियपरिच्चागेण एगेगपरमाणुधरिदा-विभागपलिच्छेदे चेव घेत्तूण परूविदमिदि दट्ठव्वं, तहाविहविवक्खाए जहण्णफद्दयादि-वग्गणादो विदियादिफद्दयादिवग्गणाणं जहाकमं दुगुणतिगुणादिकमेणावट्ठाणसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो। सरिसधणियविवक्खाए पुण णेदमप्पाबहुअं होइ, तत्थ किंचूण-दुगुणादिकमेणादिवग्गणाणमवट्ठाणदंसणादो। अणंतराणंतरादो पुण अणंताभागुत्तरा-दिकमेण पुव्वुत्तमेवप्पाबहुअं होदि त्ति घेत्तव्वं। सेसं सुगमं। संपहि जहा लोभसंजलण-महिकिच्च अप्पाबहुअमेदं परूविदं तहा चेव सेससंजलणाणं पि पादेक्कणिरु भणं कादूण

अर्थका समुच्चय है। अब उन्हीं अपूर्व स्पर्धकोंसम्बन्धी आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेद इस रूपसे अवस्थित रहते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

*** अन्तिम समयमें लोभकी आदि वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेदपुंज थोड़ा होता है। उससे दूसरे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेदपुंज दूना होता है। उससे तीसरे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें अविभागप्रतिच्छेदपुंज तिगुणा होता है।**

§ ५१७. इस प्रकार प्रथम अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभागप्रदेशपुंज विवक्षित हैं। पुनः वहाँ सम्बन्धी जिस स्पर्धककी आदि वर्गणाके अविभागप्रदेशपुंज हों वह उतना गुणा है। और यह आदि वर्गणाओंके अविभागप्रतिच्छेदोंका अल्पबहुत्व, सदृश धनवाले द्रव्यके त्यागपूर्वक, एक-एक परमाणुमें प्राप्त अविभागप्रतिच्छेदोंको ही ग्रहण कर कहा गया है ऐसा जानना चाहिये, क्योंकि उस प्रकारकी विवक्षामें जघन्य स्पर्धककी आदि वर्गणासे दूसरे आदि स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाओंका क्रमसे दुगुणे, तिगुणे आदि क्रमसे अवस्थानकी सिद्धि निर्बाधरूपसे बन जाती है। परन्तु सदृश धनवाले द्रव्यकी विवक्षा करनेपर यह अल्पबहुत्व नहीं बनता, क्योंकि वहाँपर कुछ कम दुगुणे आदि क्रमसे वर्गणाओंका अवस्थान देखा जाता है। परन्तु अनन्तर तदनन्तररूपसे अनन्तभाग अधिक आदिके क्रमसे पूर्वोक्त अल्पबहुत्व ही होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। शेष कथन सुगम है। अब जिस प्रकार लोभसंज्वलनको अधिकृत कर यह अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार शेष संज्वलनोंमेंसे भी प्रत्येक संज्वलनको विवक्षित कर यह अल्पबहुत्व कहना चाहिये,

---

१. आ०प्रतौ तदियफद्दयस्स इति पाठः। २. आ०प्रतौ तदियगुणं इति पाठः।

वत्तव्वं, भेदाभावादो त्ति पदुप्पायणट्ठमुवरिमभप्पणासुत्तं—

❀ एवं मायाए माणस्स च कोहस्स च ।

§ ५१८. सुगमं । एवमेदमविभागपडिच्छेदप्पाबहुअमंतदीवयभावेण अस्सकण्ण-करणद्धाए चरिमसमए णिरूविय संपहि कोहादिसंजलणपडिबद्धाणं पुव्वापुव्वफद्दयाणं तव्वग्गणाणं च पमाणविसये णिण्णयजणणट्ठमप्पाबहुअं परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* अस्सकण्णकरणस्स पढमे अणुभागखंडए हदे अणुभागस्स अप्पा-बहुअं वत्तइस्सामो ।

§ ५१९. अस्सकण्णकरणस्स पढमाणुभागखंडए घादिदे संते जं सेसं संजल-णाणमणुभागसंतकम्मं पुव्वापुव्वफद्दयसरूवं तव्विसयमप्पाबहुअमेण्हिं वत्तइस्सामो त्ति वुत्तं होइ ।

* तं जहा ।

§ ५२०. सुगमं ।

❀ सव्वत्थोवाणि कोहस्स अपुव्वफद्दयाणि । माणस्स अपुव्वफद्द-

क्योंकि उससे इसमें भेद नहीं है । इस प्रकार इस बातका कथन करनेके लिए आगेका अर्पणासूत्र आया है—

❀ इस प्रकार माया, मान और लोभके अपूर्व स्पर्धकोंके अविभागप्रतिच्छेदोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिये ।

§ ५१८. यह सूत्र सुगम है । इस प्रकार अविभागप्रतिच्छेदोंके इस अल्पबहुत्वका अन्त्यदीपक-रूपसे अश्वकर्णकरणके कालके अन्तिम समयमें कथन कर अब क्रोधादि संज्वलनोंसे सम्बन्ध रखने-वाले पूर्व स्पर्धकों, अपूर्व स्पर्धकों और उनकी वर्गणाओंके प्रमाणके विषयमें निर्णय उत्पन्न करनेके लिये अल्पबहुत्वका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ अश्वकर्णकरणके प्रथम अनुभागकाण्डकके घाते जानेपर शेष रहे अनुभागके अल्पबहुत्वको बतलावेंगे ।

§ ५१९. अश्वकर्णकरणके प्रथम अनुभागकाण्डकके घाते जानेपर चारों संज्वलनोंका पूर्व और अपूर्व स्पर्धकस्वरूप जो अनुभागसत्कर्म शेष रहता है इस समय तद्विषयक अल्पबहुत्वको बतलावेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ वह जैसे ।

§ ५२०. यह सूत्र सुगम है ।

❀ क्रोधसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धक सबसे स्तोक हैं । उनसे मानसंज्वलनके अपूर्व

१. आ०प्रतौ माणस्स कोहस्स च इति पाठः ।

याणि विसेसाहियाणि। मायाए अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। लोभस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि।

§ ५२१. सुगममेदं, पुव्वमेव परूविदत्तादो।

❀ एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि असंखेज्जगुणाणि।

§ ५२२. किं कारणं? एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागमेत्ताणि चेवापुव्वफद्दयाणि होंति, तेणेयगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि तत्तो असंखेज्जगुणाणि जादाणि। एत्थ गुणगारो अपुव्वफद्दयागमणट्ठं गुणहाणीए ठविदभागहारमेत्तो।

❀ एयफद्दयवग्गणाओ अणंतगुणाओ।

§ ५२३. पुव्वफद्दएसु वा अपुव्वफद्दएसु वा एयफद्दयवग्गणाओ अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणसिद्धाणंतभागपमाणाओ होदूण सरिसीओ चेव होंति। एदाओ एयगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दएहिंतो अणंतगुणाओ होंति त्ति भणिदं होइ।

❀ कोधस्स अपुव्वफद्दयवग्गणाओ अणंतगुणाओ।

§ ५२४. किं कारणं? हेट्ठिमाओ एयफद्दयवग्गणाओ। एदाओ पुणो सव्वापुव्वफद्दयपडिबद्धाओ तदो अणंतगुणाओ जादाओ। को गुणगारो? एयगुणहाणिट्ठाणंतर-

---

स्पर्धक विशेष अधिक हैं। उनसे मायासंज्वलनके अपूर्व स्पर्धक विशेष अधिक हैं। उनसे लोभसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धक विशेष अधिक हैं।

§ ५२१. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका पहले ही कथन कर आये हैं।

❀ उनसे एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरके स्पर्धक असंख्यातगुणे हैं।

§ ५२२. क्योंकि एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण अपूर्व स्पर्धक होते हैं, इसलिये एक गुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धक उनसे असंख्यातगुणे हो जाते हैं। यहाँपर अपूर्व स्पर्धकोंको लानेके लिये जो गुणकार है वह गुणहानिके लिये स्थापित किये गये भागहारप्रमाण है।

❀ उनसे एक स्पर्धककी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हैं।

§ ५२३. पूर्व स्पर्धकोंमें और अपूर्व स्पर्धकोंमें एक स्पर्धककी वर्गणाएँ अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण होकर सदृश ही होती हैं, अतः ये एक गुणहानिस्थानान्तरके स्पर्धकोंसे अनन्तगुणी हो जाती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

❀ उनसे क्रोधसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंकी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हैं।

§ ५२४. क्योंकि अधस्तन (पूर्वकी) एक स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाएँ हैं और ये समस्त अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी हैं, इसलिए पूर्वकी वर्गणाओंसे ये अनन्तगुणी हो गई हैं।

शंका—गुणकार क्या है?

फद्दयाणमसंखेज्जदिभागो ।

❀ माणस्स अपुव्वफद्दयवग्गणाओ विसेसाहियाओ ।

❀ मायाए अपुव्वफद्दयवग्गणाओ विसेसाहियाओ ।

❀ लोभस्स अपुव्वफद्दयवग्गणाओ विसेसाहियाओ ।

§ ५२५. किं कारणं ? अपुव्वफद्दएसु विसेसाहिएसु संतेसु तव्वग्गणाणं तहाभावसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो ।

❀ लोभस्स पुव्वफद्दयाणि अणंतगुणाणि ।

§ ५२६. किं कारणं ? पुव्वफद्दयाणि अणंतखंडाणि कादूण तत्थेयखंडमेत्ताणि चेव अपुव्वफद्दयाणि होंति, एयगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागपमाणत्तादो । पुणो तेसु एयफद्दयवग्गणसलागाहिं गुणिदेसु अपुव्वफद्दयसव्ववग्गणाओ आगच्छंति । एदाओ पुव्वफद्दयाणमणंतभागमेत्तीओ, पुव्वफद्दयविसयणाणागुणहाणिसलागाहिंतो एयफद्दयवग्गणाणमणंतगुणहीणत्तोवएसादो । तदो सिद्धमेदेसिं अणंतगुणत्तं ।

❀ तेसिं चेव वग्गणाओ अणंतगुणाओ ।

§ ५२७. को गुणगारो ? एयफद्दयवग्गणसलागाओ ।

समाधान—एक गुणहानिस्थानान्तरसम्बन्धी स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

❀ उनसे मानसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंकी वर्गणाएँ विशेष अधिक हैं । उनसे मायासंज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंकी वर्गणाएँ विशेष अधिक हैं तथा उनसे लोभसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धकोंकी वर्गणाएँ विशेष अधिक हैं ।

§ ५२५. क्योंकि अपूर्व स्पर्धकोंके विशेष अधिक होनेपर उनकी वर्गणाओंकी उस रूपसे सिद्धि निर्बाधरूपसे पाई जाती है ।

❀ उनसे लोभके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे हैं ।

§ ५२६. क्योंकि पूर्व स्पर्धकोंके अनन्त खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डप्रमाण ही अपूर्व स्पर्धक होते हैं, क्योंकि वे एक गुणहानिस्थानान्तरके स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं । पुनः उनके एक स्पर्धककी वर्गणाशलाकाओंसे गुणित करनेपर अपूर्व स्पर्धकोंकी सब वर्गणाएँ उत्पन्न होती हैं । अतः ये पूर्व स्पर्धकोंके अनन्तवें भागप्रमाण होती हैं, क्योंकि पूर्व स्पर्धकविषयक नाना गुणहानिशलाकाओंसे एक स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हीन होती हैं ऐसा उपदेश पाया जाता है । इसलिये लोभसंज्वलनके अपूर्व स्पर्धककी वर्गणाओंसे लोभसंज्वलनके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे होते हैं यह सिद्ध हुआ ।

❀ उनसे उन्हींकी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हैं ।

५२७. शंका—गुणकार क्या है ?

समाधान—एक स्पर्धककी वर्गणाशलाकाएँ गुणकार हैं ।

*** मायाए पुव्वफद्दयाणि अणंतगुणाणि ।**

§ ५२८. कुदो ? पढमे अणुभागखंडए णिल्लेविदे लोहादिसंजलणेसु पुव्वफद्दयाणं जहाकममणंतगुणवड्ढीए समवट्ठाणदंसणादो। होदु णाम लोभसंजलणस्स पुव्वफद्दएहिंतो मायासंजलणपुव्वफद्दयाणमणंतगुणत्तं, तत्थ विसंवादाभावादो। कधं पुण तत्तो अणंतगुणाहिंतो तव्वग्गणाहिंतो एदेसिमणंतगुणत्तणिण्णयो ? ण एस दोसो, वग्गणसलागगुणगारादो फद्दयसलागगुणगारस्साणंतगुणत्तब्भुवगमादो।

*** तेसिं चेव वग्गणाओ अणंतगुणाओ। माणस्स पुव्वफद्दयाणि अणंतगुणाणि। तेसिं चेव वग्गणाओ अणंतगुणाओ। कोहस्स पुव्वफद्दयाणि अणंतगुणाणि। तेसिं चेव वग्गणाओ अणंतगुणाओ।**

§ ५२९. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

*** एवमंतोमुहुत्तमस्सकण्णकरणं ।**

§ ५३०. एवमणंतरपरूविदेण कमेण अणुभागखंडयसहस्सेसु णिवदमाणेसु अपुव्वफद्दएसु च समए समए णिव्वत्तिज्जमाणेसु संखेज्जसहस्समेत्तट्ठिदिखंडयगब्भ-

---

*** उनसे मायासंज्वलनके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे हैं ।**

§ ५२८. क्योंकि प्रथम अनुभागकाण्डकके निर्लेपित होनेपर लोभादि संज्वलनोंके पूर्व स्पर्धकोंमें क्रमसे अनन्तगुणीकी वृद्धि रूप अवस्थान देखा जाता हैं।

शंका—लोभसंज्वलनके पूर्व स्पर्धकोंसे मायासंज्वलके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे भले ही होओ, क्योंकि ऐसा होनेमें कोई विसंवाद नहीं पाया जाता। किन्तु लोभसंज्वलनके पूर्व स्पर्धकोंसे अनन्तगुणी उन्हींको वर्गणाओंसे मायासंज्वलनके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे होते हैं इसका निर्णय कैसे किया जाय ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि वर्गणाशलाकाओंके गुणकारसे स्पर्धकशलाकाओंका गुणकार अनन्तगुणा स्वीकार किया गया है। इससे मालूम पड़ता है कि लोभसंज्वलनके पूर्व स्पर्धकोंकी वर्गणाओंसे मायासंज्वलनके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे होते हैं।

*** उनसे उन्हींकी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हैं। उनसे मानसंज्वलनके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे हैं। उनसे उन्हींकी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हैं। उनसे क्रोधसंज्वलनके पूर्व स्पर्धक अनन्तगुणे हैं। उनसे उन्हींकी वर्गणाएँ अनन्तगुणी हैं।**

§ ५२९. ये सूत्र सुगम हैं।

*** इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक अश्वकर्णकरण प्रवृत्त रहता है ।**

§ ५३०. इस प्रकार अनन्तर पूर्व कहे गये क्रमके अनुसार हजारों अनुभागकाण्डकोंके पतित होनेपर और प्रत्येक समयमें अपूर्व स्पर्धकोंके रचे जानेपर संख्यात हजार स्थितिकाण्डक

मंतोमुहुत्तकालमस्सकण्णकरणं पवत्तदि त्ति वुत्तं होइ। तदो एदीए परूवणाए जहाकम-मस्सकण्णकरणद्धाए चरिमसमयं संपत्तस्स तक्कालभाविओ जो विसेसो ट्ठिदिबंधादि-विसओ तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** अस्सकण्णकरणस्स चरिमसमए संजलणाणं ट्ठिदिबंधो अट्ठ-वस्साणि।**

§ ५३१. पुव्वमस्सकण्णकरणकारयस्स पढमसमए अंतोमुहुत्तूणसोलसवस्स-पमाणो होंतो संजलणाणं ट्ठिदिबंधो तत्तो जहाकमं परिहाइदूण एण्हिमट्ठवस्समेत्तो संजादो त्ति वुत्तं होदि

*** सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।**

§ ५३२. णाणावरणादिसेसकम्माणं पुण ट्ठिदिबंधो पुव्वुत्तसंधिम्मि संखेज्ज-वस्ससहस्सिओ होंतो तत्तो जहाकमं संखेज्जगुणहाणीए संखेज्जसहस्समेत्तेसु ठिदि-बंधोसरणवियप्पेसु गदेसु वि संखेज्जवस्ससहस्सपमाणो चेव एत्थ वि दट्ठव्वो। एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। संपहि एत्थेव ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठमिदमाह—

*** णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि।**

र्गभ अन्तर्मुहूर्त कालतक अश्वकर्णकरण प्रवृत्त रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिये इस प्ररूपणाके द्वारा क्रमसे अश्वकर्णकरणके कालके अन्तिम समयको प्राप्त हुए क्षपक जीवके तत्काल होनेवाली स्थितिबन्धादि विषयक जो विशेषता है उसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** अश्वकर्णकरणके अन्तिम समयमें संज्वलनोंका स्थितिबन्ध आठ वर्षप्रमाण होता है।**

§ ५३१. पूर्वमें अश्वकर्णकरणकारकके प्रथम समयमें अन्तर्मुहूर्त कम सोलह वर्षप्रमाण होकर पुनः संज्वलनोंका स्थितिबन्ध क्रमसे घटकर इस समय आठ वर्षप्रमाण हो गया है यह उक्त कथन-का तात्पर्य है।

*** शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है।**

§ ५३२. तथा ज्ञानावरणादि शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध पूर्वोक्त सन्धिमें संख्यात हजार वर्ष-प्रमाण होकर उसमेंसे यथाक्रम संख्यात गुणहानिके द्वारा संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरणसम्बन्धी भेदोंके व्यतीत होनेपर भी यहाँपर भी संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध जानना चाहिये यह यहाँ सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ हैं। अब यहींपर शेष कर्मोंके स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिये इस सूत्रको कहते हैं—

*** नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है।**

५३३. सुगमं ।

*** चउण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।**

§ ५३४. सुगममेदं पि सुत्तं । एवमस्सकण्णकरणद्धा समत्ता भवदि ।

■

---

§ ५३३. यह सूत्र सुगम है ।

*** चार घाति कर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण है ।**

§ ५३४. यह सूत्र भी सुगम है । इस प्रकार अश्वकर्णकरणका विषय समाप्त होता है ।

■

परिसिट्ठाणि

परिसिट्ठाणि

१४ चरित्तमोहोवसामणा-अत्थाहियारो

सुत्तगाहा चुण्णिसुत्ताणि

[1]एत्तो सुत्तविहासा । तं जहा—[2]उवसामणा कदिविधा त्ति । उवसामणा दुविहा—करणोवसामणा च अकरणोवसामणा च । [3]जा सा अकरणोवसामणा तिस्से इमे दुवे णामधेयाणि—अकरणोवसामणा त्ति वि अणुदिण्णोवसामणा त्ति वि । एसा कम्मपवादे । जा सा करणोवसामणा सा दुविहा—देसकरणोवसामणा त्ति वि सव्वकरणोवसामणा त्ति वि ।[4] देसकरणोवसामणाए दुवे णामाणि–देसकरणोवसामणा त्ति वि अप्पसत्थ-करणोवसामणा त्ति वि । एसा कम्मपयडीसु ।[5] जा सा सव्वकरणोवसामणा तिस्से वि दुवे णामाणि सव्वकरणो-वसामणा त्ति वि पसत्थकरणोवसामणा त्ति वि । एदाए एत्थ पयदं ।

[6]उवसामो कस्स कस्स कम्मस्सेत्ति विहासा । तं जहा । मोहणीयवज्जाणं कम्माणं णत्थि उवसामो । दंसणमोहस्स वि णत्थि उवसामो ।[7] अणंताणुबंधीणं पि णत्थि उवसामो । बारसकसाय-णवणोकसायवेदणी-याणमुवसामो । कं कम्मं उवसंतं अणुवसंतं च कं कम्मेत्ति विहासा । तं जहा—[8]पुरिसवेदेण उवट्ठिदस्स पढमं ताव णवुंसयवेदो उवसामेदि, सेसाणि कम्माणि अणुवसमाणि । तदो इत्थिवेदो उवसमदि । तदो सत्तणोक-साया उवसामेदि । [10]तदो तिविहो कोहो उवसमदि । तदो तिविहो माणो उवसमदि । तदो तिविहा माया उवसमदि । तदो तिविहो लोहो उवसमदि किट्टिवज्जो । किट्टीसु लोहसंजलणमुवसमदि । तदो सव्वं मोहणीयं उवसंतं भवदि ।

[11]कदिभागमुवसामिज्जदि संकममुदरिणा च कदिभागेत्ति विहासा । तं जहा—जं कम्ममुवसामिज्जदि तमंतोमुहुत्तेण उवसामिज्जदि । जस्स जं पढमसमए उवसामिज्जदि पदेसग्गं तं थोवं । विदियसमए उवसामि-ज्जदि पदेसग्गमसंज्खेजगुणं । एवं गंतूण चरिमसमए पदेसग्गस्स असंखेज्जा भागा उवसामिज्जंति । [12]एवं सव्व-कम्माणं । ठिदीओ उदयावलियं बंधावलियं च मोत्तूण सेसाओ सव्वाओ समए समए उवसामिज्जंति । [13]अणु-भागाणं सव्वाणि फड्डयाणि सव्वाओ वग्गणाओ उवसामिज्जंति ।

[14]णवुंसयवेदस्स पढमपमयउवसामगस्स जाओ ठिदीओ बज्झंति ताओ थोवाओ । जाओ संकामिज्जंति ताओ असंखेज्जगुणाओ । जाओ उदीरिज्जंति ताओ तत्तियाओ चेव । उदिण्णाओ विसेसाहियाओ । [15]जट्ठिदि-उदयोदीरणा संतकम्मं च विसेसाहिओ । अणुभागेण बंधो थोवो । उदयो उदीरणा च अणंतगुणा । [16]संकमो संतकम्मं च अणंतगुणं । किट्टीओ वेदंतस्स बंधो णत्थि । उदयोदीरणा च थोवा । संकमो अणंत-गुणो । [17]संतकम्ममणंतगुणं ।

एत्तो पदेसेण णवुंसयवेदस्स पदेसउदीरणा अणुक्कस्स-अजहण्णा थोवा । [18]जहण्णओ उदओ असंखेज्ज-गुणो। उक्कसओ उदओ विसेसाहिओ । [19]जहण्णओ संकमो असंखेज्जगुणो । [20]जहण्णयं उवसामिज्जदि असं-खेज्जगुणं । जहण्णयं संतकम्ममसंखेज्जगुणं । [21]जहण्णयं संकामिज्जदि असंखेज्जगुणं । उक्कसगं उवसामिज्जदि असंखेज्जगुणं । [22]उक्कस्सयं संतकम्ममसंखेज्जगुणं । एदं अंतरदुसमयकदे णवुंसयवेदपदेसग्गमस्स अप्पाबहुअं ।

---

१. पृ० १ । २. पृ० २ । ३. पृ० ३ । ४. पृ० ४ । ५. पृ० ८ । ६. पृ० ९ । ७. पृ० १० । ८. पृ० ११ ९. पृ० १२ । १०. पृ० १३ । ११. पृ० १४ । १२. पृ० १५ । १३. पृ० १६ । १४. पृ० २३ । १५. पृ० २४ । १६. पृ० २५ । १७. पृ० २६ । १८. पृ० २७ । १९. पृ० २८ । २०. पृ० २९ । २१. पृ० ३० । २२ पृ० ३१ ।

इत्थीवेदस्स वि णिरवयवमेदमप्पाबहुअमणुमंतव्वं। अट्ठकसाय-छण्णोकसायाणमुदयमुदीरणं च मोत्तूण एवं चेव वत्तव्वं। पुरिसवेद-चदुसंजणाणं च जाणिदूण णेदव्वं। णवरि बंधपदस्स तत्थ सव्वत्थोवत्तं दट्ठव्वं।

[1]कं करणं वोच्छिज्जदि अव्वोच्छिण्णं च होइ कं करणं ति विहासा। तं जहा—अट्ठविहं ताव करणं। जहा—अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं बंधकरणं उदीरणकरणं ओकड्डणकरणं उक्कड्डणाकरणं संकामणकरणं च। [2]एदेसिं करणाणं अणियट्टिपढमसमए सव्वकम्माणं पि अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं च वोच्छिणाणि। सेसाणि ताधे आउगवेदणीयवज्जाणं पंच वि करणाणि अत्थि। [3]आउगस्स ओवट्टणाकरणमत्थि, सेसाणि सत्त करणाणि णत्थि। [4]वेदणीयस्स बंधणकरणमोवट्टणाकरणमुव्वट्टणाकरणं संकमणाकरणं एदाणि चत्तारि करणाणि अत्थि, सेसाणि करणाणि णत्थि।

[5]मूलपयडीओ पडुच्च एस कमो ताव जाव चरिमसमयबादरसांपराइओ त्ति। सुहुमसांपराइयस्स मोहणीयस्स दो करणाणि ओवट्टणाकरणमुदीरणाकरणं च, सेसाणं कम्माणं ताणि चेव करणाणि।[6] उवसंतकसायवीयरायस्स मोहणीयस्स वि णत्थि किंचि वि करणं मोत्तूण दंसणमोहणीयं, दंसणमोहणीयस्स वि ओवट्टणाकरणं संकमणाकरणं च अत्थि। सेसाणं कम्माणं पि ओवट्टणाकरणमुदीरणा च अत्थि। णवरि आउगवेदणीयाणमोवट्टणा चेव। [7]कं करणं उवसंतं अणुवसंतं च कं करणं ति एसा सव्वा वि गाहा विहासिदा भवदि।[8] केच्चिरमुवसामिज्जदि संकमणमुदीरणा च केवचिरं ति एदम्हि सुत्ते विहासिज्जमाणे एदाणि चेव अट्ठकरणाणि उत्तरपयडीणं पुध पुध विहासियव्वाणि।

[9]केवचिरमुवसंतं ति विहासा। तं जहा—उवसंतं णिव्वाघादेण अंतोमुहुत्तं। अणुवसंतं च केवचिरं ति विहासा।[10] तं जहा—अप्पसत्थउवसामणाए अणुवसंताणि कम्माणि णिव्वाघादेण अंतोमुहुत्तं।[11] एत्तो पदिवदमाणस्स विहासा। परूवणा विहासा ताव पच्छा सुत्तविहासा। [12]परूवणाविहासा। तं जहा—दुविहो पडिवादो—भवक्खएण च उवसामणक्खएण च। भवक्खएण पदिदस्स सव्वाणि करणाणि एगसमएण उग्घाडिदाणि। [13]पढमसमए चेव जाणि उदीरिज्जंति कम्माणि ताणि उदयावलियं पवेसिदाणि, जाणि ण उदीरिज्जंति ताणि वि ओकड्डियूण आवलियबाहिरे गोपुच्छाए सेढीए णिक्खित्ताणि। [14]जो उवसामणक्खएण पडिवददि तस्स विहासा। केण कारणेण पडिवददि अवट्ठिदपरिणामा संतो। सुणु कारणं, जधा अद्धाखएण सो लोभे पडिवदिदो होइ।[15]तं परूवइस्सामो। पढमसमयसुहुमसांपराएण तिविहं लोभमोकड्डियूण संजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा। [16]जा तस्स किट्टीलोभवेदगद्धा। तदो विसेसुत्तरकालो गुणसेढिणिक्खेवो। दुविहस्स लोभस्स तत्तिओ चेव णिक्खेवो। णवरि उदयावलियाए णत्थि। [17]सेसाणमाउगवज्जाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो अणियट्टिकरणद्धादो अपुव्वकरणद्धादो च विसेसाहिओ। सेसे सेसे च णिक्खेवो। [18]तिविहस्स लोहस्स तत्तिओ चेव णिक्खेवो। ताधे चेव तिविहो लोभो एगसमएण पसत्थउवसामणाए अणुवसंतो।

[19]ताधे तिण्हं घादिकम्माणमंतोमुहुत्तट्ठिदिगो बंधो। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो बत्तीसमुहुत्ता। वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो अडतालीस मुहुत्ता। से काले गुणसेढी असंखेज्जगुणहीणा। ट्ठिदिबंधो सो चेव। [20]अणुभागबंधो अप्पसत्थाणमणंतगुणो। पसत्थाणं कम्मंसाणमणंतगुणहीणो।

लोभं वेदयमाणस्स इमाणि आवासयाणि। तं जहा—लोभवेदगद्धाए पढमतिभागो किट्टीणमसंखेज्जा भागा उदिण्णा [21]पढमसमए उदिण्णाओ किट्टीओ। थोवाओ विदियसमए उदिण्णाओ किट्टीओ विसेसाहियाओ।

---

१. पृ० ३२। २. पृ० ३३। ३. पृ० ३४। ४. पृ० ३५। ५. पृ० ३६। ६. पृ० ३७। ७. पृ० ३८। ८. पृ० ३९। ९. पृ० ४३। १०. पृ० ४३। ११. पृ० ४४। १२. पृ० ४५। १३. पृ० ४६। १४. पृ० ४७। १५. पृ० ४८। १६. पृ० ४९। १७. पृ० ५०। १८. पृ० ५१। १९. पृ० ५२। २०. पृ० ५३।

[1]किट्टीवेदगद्धाए गदाए पढमसमयबादरसांपरायो जादो। [2]ताहे चेव सव्वमोहणीयस्स अणाणुपुव्विअओ संकमो। ताहे चेव दुविहो लोहो लोहसंजलणे संछुहदि। [3]ताहे चेव फड्डयगदं लोभं वेदेदि। किट्टीओ सव्वाओ णट्ठाओ। णवरि जाओ उदयावलियब्भंतराओ ताओ त्थिवुक्कसंकमेण फड्डएसु विपच्चिहिंति। [4]पढमसमयबादरसांपराइयस्स लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तो। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो दो अहोरत्ताणि देसूणाणि। वेदणीयणामागोदाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि वस्साणि देसूणाणि।

[5]एदम्हि पुण्णे ट्ठिदिबंधे जो अण्णो वेदणीयणामागोदाणं ट्ठिदिबंधो सो संखेज्जवस्ससहस्साणि। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो अहोरत्तपुधत्तगो। लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो पुव्वबंधादो विसेसाहिओ।

लोभवेदगद्धाए विदियस्स तिभागस्स संखेज्जदिभागं गंतूण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो मुहुत्तपुधत्तं। णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि [6]वस्ससहस्साणि। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो अहोरत्तपुधत्तियादो ट्ठिदिबंधादो वस्ससहस्सपुधत्तिगो ट्ठिदिबंधो जादो। एवं ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु लोभवेदगद्धा पुण्णा।

[7]से काले मायं तिविहमोकड्डियूण मायसंजलणस्स उदयादिगुणसेढी कदा। दुविहाए मायाए आवलियबाहिरा गुणसेढी कदा। पढमसमयमायावेदगस्स गुणसेढिणिक्खेवो तिविहस्स लोहस्स [8]तिविहाए मायाए च तुल्लो। मायावेदगद्धादो विसेसाहिओ। सव्वमायावेदगद्धाए तत्तियो तत्तियो चेव णिक्खेवो। सेसाणं कम्माणं जो पुण पुव्विल्लो णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे चेव णिक्खवदि गुणसेढिं। [9]मायावेदगस्स लोहो तिविहो माया दुविहा मायासंजलणे संकमदि। माया तिविहा लोभो च दुविहो लोभसंजलणे संकमदि।

पढमसमयमायावेदगस्स दोण्हं संजलणाणं दुमासट्ठिदिगो बंधो। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जवस्ससहस्साणि। [10]पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबंधे मोहणीयवज्जाणं कम्माणं संखेज्जगुणो ट्ठिदिबंधो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। एदेण कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेषु गदेसु चरिमसमयमायावेदगो जादो। ताधे दोण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा अंतोमुहुत्तूणा। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्स—सहस्साणि।

[11]तदो से काले तिविहं माणमोकड्डियूण माणसंजलणस्स उदयादिगुणसेढिं करेदि। दुविहस्स माणस्स आवलियबाहिरे गुणसेढिं करेदि। णवविहस्स वि कसायस्स गुणसेढिणिक्खेवो जा तस्स पडिवदमाणगस्स माणवेदगद्धा तत्तो विसेसाहिओ णिक्खेवो। मोहणीयवज्जाणं कम्माणं जो पढमसमयसुहुमसांपराइयेण णिक्खेवो णिक्खित्तो तस्स णिक्खेवस्स सेसे सेसे णिक्खिवदि। पढमसमयमाणवेदगस्स णवविहो वि कसायो संकमदि। [12]ताधे तिण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा पडिपुण्णा। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। एवं ट्ठिदिबंधसहस्साणि बहूणि गंतूण माणस्स चरिमसमयवेदगस्स तिण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो अट्ठमासा अंतोमुहुत्तूणा। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।

से काले तिविहं कोहमोकड्डियूण कोहसंजणस्स उदयादिगुणसेढिं करेदि। दुविहस्स कोहस्स आवलियबाहिरे करेदि। एण्हिं गुणसेढिणिक्खेवो केत्तिओ कायव्वो। [13]पढमसमयकोधवेदगस्स बारसण्हं पि कसायाणं जो गुणसेढिणिक्खेवो सो सेसाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसो होदि। जहा मोहणीयवज्जाणं कम्माणं सेसे सेसे गुणसेढिं णिक्खिवदि तहा एत्तो पाये बारसण्हं कसायाणं सेसे सेसे गुणसेढी णिक्खिविदव्वा। [14]पढमसमयकोहवेदगस्स बारसविहस्स वि कसायस्स संकमो होदि। ताधे ट्ठिदिबंधो चउण्हं संजलणाणमट्ठ मासा पडिपुण्णा। सेसाणं [15]कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। एदेण कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु मोहणीयस्स चरिमसमयचउव्विहबंधगो जादो। ताधे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो चउसट्ठिवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।

[16]तदो से काले पुरिसवेदस्स बंधगो जादो! ताधे चेव सत्तण्हं कम्माणं पदेसग्गं पसत्थउवसामणाए

---

१. पृ० ५५। २. पृ० ५६। ३. पृ० ५७। ४. पृ० ५८। ५. पृ० ५९। ६. पृ० ६०। ७. पृ० ६१। ८. पृ० ६२। ९. पृ० ६३। १०. पृ० ६४। ११. पृ० ६५। १२. पृ० ६६। १३. पृ० ६७। १४. पृ० ६८। १५. पृ० ६९। १६. पृ० ७०।

सव्वमणुवसंतं । ताधे चेव सत्त कम्मंसे ओकड्डियूण पुरिसवेदस्स उदयादिगुणसेढिं करेदि । छण्हं कम्मंसाणमुदयावलिबाहिरे गुणसेढिं करेदि । गुणसेढिणिक्खेवो बारसण्हं कसायाणं सत्तण्हं णोकसायवेदणीयाणं सेसाणं च आउगवज्जाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेण तुल्लो । सेसे सेसे च णिक्खेवो । ताधे चेव पुरिसवेदस्स ट्ठिदिबंधो बत्तीसवस्साणि पडिपुण्णाणि । [1]संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चउसट्ठिवस्साणि । सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । पुरिसवेदे अणुवसंते जाव इत्थिवेदो उवसंतो एदिस्से अद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णामागोदवेदणीयाणमसंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो जादो ।

[2]ताधे अप्पाबहुअं कायव्वं । सव्वत्थोवो मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो । तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

[3]तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु इत्थिवेदमेगसमएण अणुवसंतं करेदि । ताधे चेव तमोकड्डियूण आवलियबाहिरे गुणसेढिं करेदि । इदरेसिं कम्माणं जो गुणसेढिणिक्खेवो तत्तिओ च इत्थिवेदस्स वि । सेसे सेसे च णिक्खिवदि । इत्थिवेदे अणुवसंते जाव णवुंसयवेदो उवसंतो एदिस्से अद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणमसंखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधो जादो । [4]ताधे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो । तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ । जाधे घादिकम्माणमसंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो ताधे चेव एगसमएण णाणावरणीयचउव्विहं दंसणावरणीयतिविहं पंचंतराइयाणि एदाणि दुट्ठाणियाणि बंधेण जादाणि ।

[5]तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु णवुंसयवेदं अणुवसंतं करेदि । ताधे चेव णवुंसयवेदमोकड्डियूण आवलियबाहिरे गुणसेढिं णिक्खिवदि । इदरेसिं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसो गुणसेढिणिक्खेवो । सेसे सेसे च णिक्खेवो । णवुंसयवेदे अणुवसंते जाव अंतरकरणद्धाणं ण पावदि एदिस्से अद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु मोहणीयस्स असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो जादो । [6]ताधे चेव दुट्ठाणिया बंधोदया ।

सव्वस्स पडिवदमाणस्स छसु आवलियासु गदासु उदीरणा इदि णत्थि णियमो आवलियादिक्कंतमुदीरिज्जदि । [7]अणियट्टिप्पहुडि मोहणीयस्स अणाणुपुव्विसंकमो, लोमस्स वि संकमो । जाधे असंखेज्जवस्सिओ ट्ठिदिबंधो मोहणीयस्स ताधे मोहणीयस्स [8]ट्ठिदिबंधो थोवो । घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

एदेण कमेण संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु अणुभागबंधेण वीरियंतराइयं सव्वघादी जादं । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण आभिणिबोधियणाणावरणीयं परिभोगांतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण चक्खुदंसणावरणीयं सव्वघादी जादं । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण सुदणाणावरणीयमचक्खुदंसणावरणीयं भोगंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण ओहिणाणावरणीयं ओहिदंसणावरणीयं लाभंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि । तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण मणपज्जवणाणावरणीयं दाणंतराइयं च सव्वघादीणि जादाणि ।

[9]तदो ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा पडिहम्मदि । [10]जाधे असंखेज्जलोगपडिभागे समयपबद्धस्स उदीरणा ताधे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो । घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

एदेण कमेण ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तदो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो । णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ ।

---

१ । २. पृ० ७२ । ३. पृ० ७३ । ४. पृ० ७४ । ५. पृ० ७५ । ६. पृ० ७७ । ७. पृ० ७८ । ८. पृ० ७९ । ९. पृ० ८० । १०. पृ० ८१ ।

[1]एवं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि कादूण तदो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो। णामागोदाणं ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं ठिदिबंधो तुल्लो विसेसाहिओ।

[2]एवं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो अण्णो ठिदिबंधो। एक्कसराहेण णामागोदाणं ठिदिबंधो थोवो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। णाणावरण-दंसणावरण-वेदणीय-अंतराइयाणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो विसेसाहिओ।

[3]एदेण कमेण ट्ठिदिबंधसहस्साणि बहूणि गदाणि। तदो अण्णो ठिदिबंधो। एक्कसराहेण णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ठिदिबंधो तुल्लो विसेसाहिओ। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। जत्तो पाए असंखेज्जवस्सट्ठिदिबंधो तत्तो पाए पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबंधे अण्णं ट्ठिदिबंधमसंखेज्जगुणं बंधइ।

[4]एदेण कमेण सत्तण्हं पि कम्माणं पलिदो० असंखे०भागियादो ट्ठिदिबंधादो एक्कसराहेण सत्तण्हं पि कम्माणं पलिदो० संखे०भागिओ ट्ठिदिबंधो जादो।

[5]एत्तो पाये पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबंधे अण्णं ट्ठिदिबंधं संखेज्जगुणं बंधइ। एवं संखेज्जाणं ट्ठिदिबंधसहस्साण-मपुव्वा वड्ढी पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो। [6]तदो मोहणीयस्स जाधे अण्णस्स ट्ठिदिबंधस्स अपुव्वा वड्ढी पलिदोवमस्स संखेज्जा भागा ताधे चदुण्हं कम्माणं ठिदिबंधस्स वड्ढी पलिदोवमं चदुब्भागेण सादिरेगेण ऊणयं। [7]ताधे चेव णामागोदाणं ठिदिबंधपरिवड्ढी अद्धपलिदोवमं संखेज्जभागूणं।

[8]जाधे एसा परिवड्ढी ताधे मोहणीयस्स जट्ठिदिगो बंधो पलिदोवमं। चदुण्हं कम्माणं जट्ठिदिगो बंधो पलिदोवमं चदुण्हं भागूणं। णामागोदाणं जट्ठिदिगो बंधो अद्धपलिदोवमं। एत्तो पाये ट्ठिदिबंधे पुण्णे पुण्णे पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागेण वड्ढइ जत्तिया अणियट्टिअद्धा सेसा अपुव्वकरणद्धा सव्वा च तत्तियं।

[9]एदेण कमेण पलिदोवमस्स संखेज्जभागपरिवड्ढीए ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु अण्णो ट्ठिदिबंधो जादो। [10]एवं बीइंदिय-तीइंदिय-चदुरिंदिय-असण्णिठिदिबंधसमगो ट्ठिदिबंधो। तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमय-मणियट्टी जादो। चरिमसमयमणियट्टिस्स ट्ठिदिबंधो सागरोवमसदसहस्सपुधत्तमंतोकोडीए।

[11]से काले अपुव्वकरणं पविट्ठो। ताधे चेव अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं च उग्घाडिदाणि। ताधे चेव मोहणीयस्स णवविहबंधगो जादो। ताधे चेव हस्सरदिअरदिसोगाणमेक्कदरस्स संघादस्स उदीरगो सिया भयदुगुंछाणमुदीरगो। तदो अपुव्वकरणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे तदो परभवियणामाणं बंधगो जादो। [12]तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेहिं गदेहिं अपुव्वकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णिद्दापयलाओ बंधइ। तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसमयअपुव्वकरणं पत्तो।

[13]से काले पढमसमयअधापवत्तो जादो। तदो पढमसमयअधापवत्तस्स अण्णो गुणसेढिणिक्खेवो पोराणगादो णिक्खेवादो संखेज्जगुणो। [14]जाव चरिमसमयअपुव्वकरणादो त्ति सेसे सेसे णिक्खेवो। [15]जो पढमसमयअधापवत्तकरणे णिक्खेवो सो अंतोमुहुत्तिओ तत्तिओ चेव। तेण परं सिया वड्ढदि सिया हायदि सिया अवट्ठायदि। [16]पढमसमयअधापवत्तकरणे गुणसंकमो वोच्छिण्णो। सव्वकम्माणमधापवत्तसंकमो जादो। णवरि जेसिं विज्झादसंकमो अत्थि तेसिं विज्झादसंकमो चेव।

उवसामगस्स पढमसमयअपुव्वकरणप्पहुदि जाव पडिवदमाणगस्स चरिमसमयअपुव्वकरणो त्ति तदो एत्तो संखेज्जगुणं कालं पडिणियत्तो[17] अधापवत्तकरणेण उवसमसम्मत्तद्धमणुपालेदि। एदिस्से उवसमसम्मत्तद्धाए

---

१. पृ० ८२। २. पृ० ८३। ३. पृ० ८४। ४. पृ० ८५। ५. पृ० ८६। ६. पृ० ८७। ७. पृ० ८८। ८. पृ० ८९। ९. पृ० ९०। १०. पृ० ९१। ११. पृ० ९२। १२. पृ० ९३। १३. पृ० ९४। १४. पृ० ९५। १५. पृ० ९६। १६. पृ० ९७। १७. पृ० ९८।

अब्भंतरदो असंजमं पि गच्छेज्ज, संजमासंजमं पि गच्छेज्ज, दो वि गच्छेज्ज। [1]छसु आवलियासु सेसासु आसाणं पि गच्छेज्ज। [2]आसाणं पुण गदो जदि मरदि ण सक्को णिरयगदिं तिरिक्खगदिं मणुसगदिं व गंतुं णियमा देवगदिं गच्छदि। हंदि तिसु आउएसु एक्केण वि बद्धेण ण सक्को कसाये उवसामेदुं। [3]एदेण कारणेण णिरयगदि-तिरिक्खजोणि-मणुसगदीओ ण गच्छदि। एसा सव्वा परूवणा पुरिसवेदस्स कोहेण उवट्ठिदस्स।

पुरिसवेदेण चेव माणेण उवट्ठिदस्स णाणत्तं। तं जहा—जाव सत्तणोकसायाणमुवसामणा ताव णत्थि णाणत्तं। [4]उवरिमाणं वेदंतो कोहमुवसामेदि। जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोहस्स उवसामणद्धा तद्देही चेव माणेण वि उवट्ठिदस्स कोहस्स उवसामणद्धा। कोधस्स पढमट्ठिदी णत्थि। [5]जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोधस्स च माणस्स च पढमट्ठिदी तद्देही माणेण उवट्ठिदस्स माणस्स पढमट्ठिदी। माणे उवसंते एत्तो सेसस्स उवसामेयवस्स मायाए लोभस्स च जो कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामणविधी सो चेव कायव्वो।

[6]माणेण उवट्ठिदो उवसामेयूण तदा पडिवदयूण लोभं वेदयमाणस्स जो पुव्वपरूविदो विधी सो चेव विधी कायव्वो। एवं मायं वेदेमाणस्स। तदा माणं वेदयंतस्स णाणत्तं। [7]तं जहा—गुणसेढिणिक्खेवो ताव णवण्हं कसायाणं सेसाणं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण तुल्लो, सेसे सेसे च णिक्खेवो। कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स पुणो पडिवदमाणगस्स जद्देही माणवेदगद्धा एत्तियमेत्तेणेव कालेण माणवेदगद्धाए अधिच्छिदाए ताधे चेव माणं वेदंतो एगसमएण तिविहं कोहमणुवसंतं करेदि। [8]ताधे चेव ओकड्डियूण कोहं तिविहं पि आवलियबाहिरे गुणसेढीए इदरेसिं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवेण सरिसीए णिक्खिवदि, तदो सेसे सेसे णिक्खिवदि। एदं णाणत्तं माणेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स तस्स चेव पडिवदमाणगस्स।

[9]एवं ताव वियासेण णाणत्तं, एत्तो समासणाणत्तं वत्तइस्सामो। [10]तं जहा। [11]पुरिसवेदयस्स माणेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स अधापवत्तकरणमादिं कादूण जाव चरिमसमयपुरिसवेदो त्ति णत्थि णाणत्तं। पढमसमयवेदगप्पहुडि जाव कोहस्स उवसामणद्धा ताव णाणत्तं। माण-माया-लोभाणमुवसामणद्धाए णत्थि णाणत्तं। [12]उवसंतेदाणिं णत्थि चेव णाणत्तं। तस्स चेव माणेण उवट्ठियूण तदो पडिवदिदूण लोभं वेदेंतस्स णत्थि णाणत्तं। मायं वेदेंतस्स णत्थि णाणत्तं। माणं वेदयमाणस्स ताव णाणत्तं जाव कोहो ण ओकड्डिज्जदि। कोहे ओकड्डिदे कोधस्स उदयादिगुणसेढी णत्थि। माणो चेव वेदिज्जदि। [13]एदाणि दोण्णि णाणत्ताणि कोधादो ओकड्डिदादो पाये जाव अधापवत्तसंजदो जादो त्ति।

मायाए उवट्ठिदस्स उवसामगस्स केद्देही मायाए पढमट्ठिदी। जाओ कोहेण उवट्ठिदस्स कोधस्स च माणस्स च मायाए च पढमट्ठिदीओ ताओ तिण्णि पढमट्ठिदीओ संपिंडिदाओ मायाए उवट्ठिदस्स मायाए पढमट्ठिदी। [14]तीदो मायं वेदेंतो कोहं च माणं च मायं च उवसामेदि। तदो लोभमुवसामंतस्स णत्थि णाणत्तं। मायाए उवट्ठिदो उवसामेयूण पुणो पडिवदमाणगस्स लोभं वेदयमाणस्स णत्थि णाणत्तं। [15]मायं वेदेंतस्स णाणत्तं। तं जहा—तिविहाए मायाए तिविहस्स लोहस्स च गुणसेढिणिक्खेवो इदरेहिं कम्मेहिं सरिसो सेसे सेसे च णिक्खेवो। सेसे च कसाये मायं वेदंतो ओकड्डिहिदि। तत्थ गुणसेढिणिक्खेवविधिं च इदरकम्मगुणसेढिणिक्खेवेण सरिसं काहिदि।

[16]लोभेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स णाणत्तं वत्तइस्सामो। तंजहा—अंतरकदमेत्ते लोभस्स पढमट्ठिदिं करेदि। जद्देही कोहेण उवट्ठिदस्स कोहस्स पढमट्ठिदी माणस्स च पढमट्ठिदी मायाए च पढमट्ठिदी लोभस्स

---

१. पृ० ९९। २. पृ० १००। ३. पृ० १०१। ४. पृ० १०२। ५. पृ० १०३। ६. पृ० १०४। ७. पृ० १०५। ८. पृ० १०६। ९. पृ० १०७। १०. पृ० १०८। ११. पृ० १०९। १२. पृ० ११०। १३. पृ० १११। १४. पृ० ११२। १५. पृ० ११३। १६. पृ० ११४।

च सांपराइयपढमट्ठिदी तद्देही लोभस्स पढमट्ठिदी। [1]सुहुमसांपराइयं पडिवण्णस्स णत्थि णाणत्तं। तस्सेव पडिवदमाणगस्स सुहुमसांपराइयं वेदेंतस्स णत्थि णाणत्तं। पढमसमयबादरसांपराइयप्पहुडि णाणत्तं वत्तइस्सामो। तं जहा—तिविहस्स लोहस्स गुणसेढिणिक्खेवो इदरेहिं कम्मेहिं सरिसो। [2]लोभं वेदेमाणो सेसे कसाए ओकड्डिहिदि। गुणसेढिणिक्खेवो इदरेहिं कम्मेहिं गुणसेढिणिक्खेवेण सव्वेसिं कम्माणं सरिसो। सेसे सेसे च णिक्खिवदि। एदाणि णाणत्ताणि जो कोहेण उवसामेदुमुवट्ठादि तेण सह सण्णिकासिज्जमाणाणि। [3]एदे पुरिसवेदेणुवट्ठिदस्स वियप्पा।

इत्थिवेदेण उवट्ठिदस्स णाणत्तं वत्तइस्सामो। तं जहा—अवेदो सत्तकम्मंसे उवसामेदि। सत्तण्हं पि य उवसामणद्धा तुल्ला। [4]एदं णाणत्तं, सेसा सव्वे वियप्पा पुरिसवेदेण सह सरिसा।

णवुंसयवेदेणोवट्ठिदस्स उवसामगस्स णाणत्तं वत्तइस्सामो। तं जहा—अंतरदुसमयकदे णवुंसयवेदमुवसामेदि। जा पुरिसवेदेण उवट्ठिदस्स णवुंसयवेदस्स उवसमणद्धा तद्देही अद्धा गदा ण ताव णवुंसयवेदमुवसामेदि। तदो इत्थिवेदमुवसामेदि, णवुंसयवेदं पि उवसामेदि चेव। तदो इत्थिवेदस्स उवसामणद्धाए पुण्णाए इत्थिवेदो च णवुंसयवेदो च उवसामिदा भवंति। [5]ताधे चेव चरिमसमए सवेदो भवदि। तदो अवेदो सत्त कम्माणि उवसामेदि। तुल्ला च सत्तण्हं पि कम्माणं उवसामणा। एदं णाणत्तं णवुंसयवेदेण उवट्ठिदस्स। सेसा वियप्पा ते चेव कायव्वा।

[6]एत्तो पुरिसवेदेण सह कोहेण उवट्ठिदस्स उवसामगस्स पढमसमयअपुव्वकरणमादिं कादूण जाव पडिवदमाणगस्स चरिमसमयअपुव्वकरणो त्ति एदिस्से अद्धाए जाणि कालसंजुत्ताणि पदाणि तेसिमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो। तं जहा—सव्वत्थोवा जहण्णिया अणुभागखंडयउक्कीरणद्धा। [7]उक्कस्सिया अणुभागखंडयउक्कीरणद्धा विसेसाहिया। जहण्णिया ट्ठिदिबंधगद्धा ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धा च तुल्लाओ संखेजगुणाओ। पडिवदमाणगस्स जहण्णिया ट्ठिदिबंधगद्धा विसेसाहिया। [8]अंतरकरणद्धा विसेसाहिया। उक्कस्सिया ट्ठिदिबंधगद्धा ट्ठिदिखंडयउक्कीरणद्धा च विसेसाहिया। चरिमसमयसुहुमसांपराइयस्स गुणसेढिणिक्खेवो संखेज्जगुणो। [9]तं चेव गुणसेढिसीसयं ति भण्णदि।

उवसंतकसायस्स गुणसेढिणिखेवो संखेज्जगुणो। पडिवदमाणयस्स सुहुमसांपराइयद्धा संखेज्जगुणा। [10]तस्सेव लोभस्स गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। उवसामगस्स सुहुमसांपराइयद्धा किट्टीणमुवसामणद्धा सुहुमसांपराइयस्स पढमट्ठिदी च तिण्णि वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ। उवसामगस्स किट्टीकरणद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणगस्स बादरसांपराइयस्स लोभवेदगद्धा संखेज्जगुणा। [11]तस्सेव लोभस्स तिविहस्स वि तुल्लो गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। उवसामगस्स बादरसांपराइयस्स लोभवेदगद्धा विसेसाहिया। तस्सेव पढमट्ठिदी विसेसाहिया।

[12]पडिवदमाणयस्स लोभवेदगद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणगस्स मायावेदगद्धा विसेसाहिया। तस्सेव मायावेदगस्स छण्हं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। [13]पडिवदमाणगस्स माणवेदगद्धा विसेसाहिया। तस्सेव पडिवदवमाणगस्स माणवेदगस्स णवण्हं कम्माणं गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। उवसामयस्स मायावेदगद्धा विसेसाहिया। मायाए पढमट्ठिदी विसेसाहिया। मायाए उवसामणद्धा विसेसाहिया। उवसामगस्स माणवेदगद्धा विसेसाहिया। [14]माणस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया। माणस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया। कोहस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया। छण्णोकसायाणमुवसामणद्धा विसेसाहिया। पुरिसवेदस्स उवसामणद्धा विसेसा-

---

१. पृ० ११५। २. पृ० ११६। ३. पृ० ११७। ४. पृ० ११८। ५. पृ० ११९। ६. पृ० १२०। ७. पृ० १२१। ८. पृ० १२२। ९. पृ० १२३। १०. पृ० १२४। ११. मृ० १२५। १२. पृ० १२६। १३. पृ० १२७। १४. पृ० १२८

हिया। इत्थिवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया। [1]णवुंसयवेदस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया। खुद्दाभवग्गहणं विसेसाहियं।

[2]उवसंतद्धा दुगुणा। पुरिसवेदस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया। [3]कोहस्स पढमट्ठिदी विसेसाहिया। मोहणीयस्स उवसामणद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणगस्स जाव असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणा सो कालो संखेज्जगुणो। उवसामगस्स असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुदीरणाकालो विसेसाहिओ। [4]पडिवदमाणगस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा। उवसामगस्स अणियट्टिअद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा। उवसामगस्स अपुव्वकरणद्धा विसेसाहिया। पडिवदमाणगस्स उक्कस्सओ गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ।

[5]उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमयगुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। उवसामगस्स कोधवेदगद्धा संखेज्जगुणा। अधापवत्तसंजदस्स गुणसेढिणिक्खेवो संखेज्जगुणो। [6]दंसणमोहणीयस्स उवसंतद्धा संखेज्जगुणा। चरित्तमोहणीयमुवसामगो अंतरं करेंतो जाओ ट्ठिदीओ उक्कीरदि ताओ ट्ठिदीओ संखेज्जगुणाओ। दंसणमोहणीयस्स अंतरट्ठिदीओ संखेज्जगुणाओ। जहण्णिया आबाहा संखेज्जगुणा। [7]उक्कस्सिया आबाहा संखेज्जगुणा। उवसामगस्स मोहणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। पडिवदमाणयस्स मोहणीयस्स जहण्णओ ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। उवसामगस्स णाणावरणदंसणावरण-अंतराइयाणं जहण्णट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। एदेसिं चेव कम्माणं पडिवदमाणयस्स जहण्णगो ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। [8]अंतोमुहुत्तो संखेज्जगुणो।

उवसामगस्स जहण्णगो णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। वेदणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। पडिवदमाणगस्स णामागोदाणं जहण्णगो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। तस्सेव वेदणीयस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। उवसामगस्स मायासंजलणस्स जहण्णट्ठिदिबंधो मासो। [9]तस्सेव पडिवदमाणगस्स जहण्णओ ट्ठिदिबंधो वे मासा। उवसामगस्स माणसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो वे मासा। पडिवदमाणगस्स तस्सेव जहण्णओ ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा। उवसामगस्स कोहसंजलणस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा। पडिवदमाणयस्स तस्सेव जहण्णगो ट्ठिदिबंधो अट्ठ मासा। उवसामगस्स पुरिसवेदस्स जहण्णगो ट्ठिदिबंधो सोलस वस्साणि। तस्समये चेव संजलणाणं ट्ठिदिबंधो बत्तीस वस्साणि।

पडिवदमाणगस्स पुरिसवेदस्स जहण्णओ ट्ठिदिबंधो बत्तीस वस्साणि। तस्समए चेव संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चउसट्ठिवस्साणि। उवसामगस्स पढमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। [10]पडिवदमाणयस्स चरिमो संखेज्जवस्सट्ठिदिवो मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। उवसामगस्स णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं पढमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो। पडिवदमाणयस्स तिण्हं घादिकम्माणं चरिमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो। उवसामगस्स णामा-गोद-वेदणीयाणं पढमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो। [11]पडिवदमाणगस्स णामा-गोद-वेदणीयाणं चरिमो संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो संखेज्जगुणो।

उवसामगस्स चरिमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो मोहणीयस्स असंखेज्जगुणो। पडिवदमाणगस्स पढमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो मोहणीयस्स असंखेज्जगुणो। उवसामगस्स घादिकम्माणं चरिमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो असंखेज्जगुणो। [12]पडिवदमाणगस्स पढमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो घादिकम्माणमसंखेज्जगुणो। उवसामगस्स णामा-गोद-वेदणीयाणं चरिमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो असंखेज्जगुणो। पडिवदमाणगस्स णामा-गोद-वेदणीयाणं पढमो असंखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो असंखेज्जगुणो। उवसामगस्स णामा-गोदाणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिओ पढमो ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो।

[13]णाणावरण-दंसणावरण-वेदणीय-अंतराइयाणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिगो पढमो ट्ठिदिबंधो

---

१. पृ० १२९। २. पृ० १३०। ३. पृ० १३१। ४. पृ० १३२। ५. पृ० १३३। ६. पृ० १३४। ७. पृ० १३५। ८. पृ० १३६। ९. पृ० १२७। १०. पृ० १२८। ११. पृ० १३९। १२. पृ० १४०। १३. पृ० १४१।

असंखेज्जगुणो । मोहणीयस्स पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागिगो पढमो ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। चरिमट्ठिदिखंडयं संखेज्जगुणं । [1]जाओ ट्ठिदीओ परिहाइदूण पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो ताओ ट्ठिदीओ संखेज्जगुणाओ । पलिदोवमं संखेज्जगुणं । अणियट्टिस्स पढमसमये ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । पडिवदमाणयस्स अणियट्टिस्स चरिमसमये ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । [2]अपुव्वकरणस्स पढमसमए ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो ।

पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं । पडिवदमाणयस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमये ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । पडिवदमाणयस्स अणियट्टिस्स चरिमसमये ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । [3]उवसामगस्स अणियट्टिस्स पढमसयये ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं । उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स चरिमसमए ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । उवसामगस्स अपुव्वकरणस्स पढमसमए ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं । एत्तो पडिवदमाणयस्स चत्तारि सुत्तगाहाओ अणुभासियव्वाओ । तदो उवसामणा समत्ता भवदि ।

१५ चरित्तमोहक्खवणाअत्थाहियारो

[4]चरित्तमोहणीयस्स खवणाए अधापवत्तकरणद्धा अपुव्वकरणद्धा अणियट्टिकरणद्धा च एदाओ तिण्णि वि अद्धाओ एगसंबंधाओ एगावलियाए ओट्टिदव्वाओ । [5]तदो जाणि कम्माणि अत्थि तेसिं ट्ठिदीओ ओट्टिदव्वाओ । [6]तेसिं चेव अणुभागफद्दयाणं जहण्णफद्दयप्पहुडि एगफद्दयआवलिया ओट्टिदव्वा । [7]तदो अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अप्पा इदि कट्टु इमाओ चत्तारि सुत्तगाहाओ विभासियव्वाओ । [8]तं जहा—संकमणपट्ठवगस्स परिणामो केरिसो भवे त्ति विहासा । [9]तं जहा-परिणामो विसुद्धो पुव्वं पि अंतोमुहुत्तप्पहुडि विसुज्झमाणो आगदो अणंतगुणाए विसोहीए । जोगेत्ति विहासा । [10]अण्णदरो मणजोगो, अण्णदरो वचिजोगो, ओरालियकायजोगो वा । कसायेत्ति विहासा । अण्णदरो कसायो । [11]किं वड्ढमाणो हायमाणो ? णियमा हायमाणो । उवजोगेत्ति विहासा । एक्को उवएसो णियमा सुदोवजुत्तो । [12]एक्को उवदेसो सुदेण वा मदीए वा चक्खुदंसणेण वा अचक्खुदंसणेण वा । [13]लेस्सा त्ति विहासा । णियमा सुक्कलेस्सा । णियमा वड्ढमाणलेस्सा । वेदो को भवेत्ति विहासा । अण्णदरो वेदो ।

[14]काणि वा पुव्वबद्धाणि त्ति विहासा । एत्थ पयडिसंतकम्मं ट्ठिदिसंतकम्ममणुभागसंतकम्मं पदेससंतकम्मं च मग्गियव्वं । [15]के वा अंसे णिबंधदि त्ति विहासा । एत्थ पयडिबंधो ट्ठिदिबंधो अणुभागबंधो पदेसबंधो च मग्गियव्वो । कदि [16]आवलियं पविसंति त्ति विहासा । मूलपयडीओ सव्वाओ पविसंति । उत्तरपयडीओ वि जाओ अत्थि ताओ पविसंति । कदिण्हं वा पवेसगो त्ति विहासा ।[17] आउग-वेदणीयवज्जाणं वेदिज्जमाणाणं कम्माणं पवेसगो ।

[18]के अंसे झीयदे पुव्वं बंधेण उदएण वा त्ति विहासा । थीणगिद्धितियमसाद-मिच्छत्त-बारहकसाय-अरदि-सोग-इत्थिवेदणबुंसयवेद सव्वाणि चेव आउगाणि परियत्तमाणाओ णामाओ असुहाओ सव्वाओ चेव मणुसगइ-ओरालियसरीर-ओरालिय [19]सरीरंगोवंग-वज्जरिसहसंहडण-मणुसगइपाओग्गाणुपुव्वी-आदावुज्जोवणामाओ च सुहाओ णीचागोदं च एदाणि कम्माणि बंधेण वोच्छिण्णाणि ।[19] थीणगिद्धितियं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्भामिच्छत्त-बारसकसाय-मणुसागयवज्जाणि आउगाणि णिरियगइ-तिरिक्खगइदेवइपाओग्गणामाओ आहारदुगं च वज्जरिसहसंघडणवज्जाणि सेसाणि संघडणाणि मणुसगइ[20]पाओग्गाणुपुव्वी अपज्जत्तणामं असुहतियं तित्थयरणामं च सिया णीचागोदं एदाणि कम्माणि उदएण वोच्छिण्णाणि । अंतरं वा कहिं किच्चा के के संकामगो कहिं त्ति विहासा । [21]ण ताव अंतरं करेदि, पुरदो काहिदि त्ति अंतरं ।

१. पृ० १४२ । २. पृ० १४३ । ३. पृ० १४४ । ४. पृ० १४८ । ५. पृ० १५० । ६. पृ० १५१ । ७. पृ० १५३ । ८. पृ० १५४ । ९. पृ० १५५ । १०. पृ० १५६ । ११. पृ० १५७ । १२. पृ० १५८ । १३. पृ० १५९ । १४. पृ० १५९ । १५ पृ० १६० । १६. पृ० १६१ । १७. पृ० १६२ । १८. पृ० १६३ । १९. पृ० १६४ २०. पृ० १६५ । २१. पृ० १६६ ।

किं ट्ठिदियाणि कम्माणि अणुभागेसु केसु वा ? ओवट्टियूण सेसाणि कं ठाणं पडिवज्जदि त्ति विहासा। एदीए गाहाए ट्ठिदिघादो अणुभागधादो च सूचिदो भवदि ।[1] तदो इमस्स चारिमसमयअधापवत्तकरणे वट्टमाणस्स णत्थि ट्ठिदिघादो अणुभागघादो वा। से काले दो वि घादा पवत्तिहिंति। पढमसमय-अपुव्वकरणं पविट्ठेण ट्ठिदिखंडयमागाइदं। अणुभागखंडयं च आगाइदं। तं पुण अप्पसत्थाणं कम्माणमणंता भागा ।[2] कसायक्खवगस्स अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखंडयस्स पमाणाणुगमं वत्तइस्सामो। तं जहा। अपुव्वकरणे पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं थोवं। उक्कस्सयं संखेज्जगुणं। उक्कस्सयं पि पलिदोवसस्स संखेज्जदिभागो।

[3]जहा दंसणमोहणीयस्स उवसामणाए च दंसणमोहणीयस्स खवणाए च कसायाणमुवसामणाए च एदेसिं तिण्हमावासयाणं जाणि अपुव्वकरणाणि तेसु अपुव्वकरणेसु पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो, उक्कस्सयं सागरोवमपुधत्तं। एत्थ पुण कसायाणं खवणाए जं अपुव्वकरणं तम्हि अपुव्व-करणे पढमट्ठिदिखंडयं जहण्णयं पि उक्कस्सयं पि पलिदोवसस्स संखेज्जदिभागो।

[3]दो कसायक्खवगा अपुव्वकरणं समगं पविट्ठा। एकस्स पुण ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं, एकस्स ठ्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणहीणं। जस्स संखेज्जगुणहीणं ट्ठिदिसंतकम्मं तस्स ट्ठिदिखंडयादो पढमादो संखेज्ज-गुणट्ठिदिसंतकम्मियस्स ट्ठिदिखंडयं पढमं संखेज्जगुणं, विदियादो विदियं संखेज्जगुणं। एवं तदियादो तदियं। एदेण कमेण सव्वम्हि अपुव्वकरणे जाव चरिमादो ठिदिखंडयधादो त्ति तदिमादो तदिमं संखेज्जगुणं ।[4] एसा ट्ठिदिखंडयपरूवणा अपुव्वकरणे।

अपुव्वकरणस्स पढमसमए जाणि आवासयाणि ताणि वत्तइस्सामो। तं जहा—ठिदिखंडयमागाइदं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ।[5] अप्पसत्थाणं कम्माणमणंता भागा अणुभागखंडयमागाइदं। पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधेण ओसरिदो। गुणसेढी उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता अपुव्वकरणद्धादो अणियट्टि-करणद्धादो च विसेसुत्तरकालो। जे[6] अप्पसत्थकम्मंसा ण बज्झंति तेसिं कम्माणं गुणसंकमो जादो। तदो ट्ठिदिसंतकम्मं ट्ठिदिबंधो च सागरोवमकोडिसदसहस्सपुधत्तमंतोकोडाकोडीए। बंधादो पुणो संतकम्मं संखेज्ज-गुणं। एसा अपुव्वकरणपढमसमए परूवणा।

एत्तो विदियसमए णाणत्तं ।[8] तं जहा—गुणसेढी असंखेज्जगुणा। सेसे च णिक्खेवो। विसोही च अणंतगुणा। सेसेसु आवासयेसु णत्थि णाणत्तं। एवं जाव पढमाणुभागखंडयं समत्तं त्ति। तदो से काले अण्णमणुभागखंडयमागाइदं। सेसस्स अणंता भागा ।[9]

एवं संखेज्जेसु अणुभागखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभागखंडयं पढमट्ठिदिखंडयं च। जो च पढम-समए अपुव्वकरणे ट्ठिदिबंधो पबद्धो, एदाणि तिण्णि वि समगं णिट्ठिदाणि। एवं ट्ठिदिबंधसहस्सेहिं गदेहिं अपुव्वकरणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे तदो णिद्दा-पयलाणं बंधवोच्छेदो। ताधे चेव ताणि गुणसंकमेण संकमंति ।[10] तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु परभवियणामाणं बंधवोच्छेदो जादो। तदो ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चरिमसअसमअपुव्वकरणं पत्तो।

[11]से काले पढमसमयअणियट्टी जादो। पढमसमयअणियट्टिस्स आवासयाणि वत्तइस्सामो। तं जहा—[12]पढमसमयअणियट्टिस्स अण्णं ट्ठिदिखंडयं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो। अण्णमणुभागखंडयं सेसस्स अणंता भागा। अण्णो ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागेण हीणो। पढमट्ठिदिखंडयं विसमं जहण्णयादो उक्कस्सयं संखेज्जभागुत्तरं। [13]पढमे ट्ठिदिखंडये हदे सव्वस्स तुल्लकाले अणियट्टिपविट्ठस्स [14]ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं। ट्ठिदि-खंडयं पि सव्वस्स अणियट्टिपविट्ठस्स विदियट्ठिदिखंडयादो विदियट्ठिदिखंडयं तुल्लं। तदो प्पहुडि तदिमादो तदिमं तुल्लं। ट्ठिदिबंधो सागरोवमसहस्सपुधत्तमंतो सदसहसस्स। [15]ट्ठिदिसंतकम्मं सागरोवमसदसहस्स-पुधत्तमंतोकोडीए। गुणसेढिणिक्खेवो जो अपुव्वकरणे णिक्खेवो तस्स सेसे सेसे च भवदि।

१. पृ० १६७। २. पृ० १६८। ३. पृ० १६९। ४. पृ० १७०। ५. पृ० १७१। ६. पृ० १७३। ७. पृ० १७४। ८. पृ० १७५। ९. पृ० १७६। १. पृ० १७७। १०. पृ० १७८। ११. पृ० १७९। १२. पृ० १८०। १३. पृ० १८१। १४. पृ० १८२। १५. पृ० १८३।

सव्वकम्माणं पि तिण्णि करणाणि वोच्छिण्णाणि। जहा—[1]अप्पसत्थउवसामणाकरणं णिधत्तीकरणं णिकाचणाकरणं च एदाणि सव्वाणि पढमसमयअणियट्टिस्स आवासयाणि परूविदाणि। से काले एदाणि चेव, णवरि गुणसेढी असंखेज्जगुणा। सेसे सेसे च णिक्खेवो। विसोही च अणंतगुणा।

[2]एवं संखेज्जेसु ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो असण्णिट्ठिदिबंधसमगो जादो। तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चउरिंदियट्ठिदिबंधसमगो जादो। [3]एवं तेइंदियसमगो बीइंदियसमगो एइंदियसमगो जादो। तदो एइंदियट्ठिदिबंधसमगादो ट्ठिदिबंधादो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु णामागोदाणं पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जायो। ताधे णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं दिवड्ढपलिदोवमट्ठिदिगो बंधो, मोहणीयस्स वेपलिदोवमट्ठिदिगो बंधो। ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं सागरोवमसदसहस्सपुधत्तं।

जाधे णामा-गोदाणं पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो ताधे अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो। [4]तं जहा—णामा-गोदाणं ठिदिबंधो थोवो। णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेदणीय-अंतराइयाणं ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। मोहणीयस्स ट्ठिबंधो विसेसाहिओ। अदिक्कंता सव्वे ट्ठिदिबंधा एदेण अप्पाबहुअविहिणा गदा। तदो णामा-गोदाणं पलिदोवमट्ठिदिओ बंधे पुण्णे जो अण्णो ट्ठिदिबंधो सो संखेज्जगुणहीणो। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो विसेसहीणो।

[5]ताधे अप्पाबहुअं। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो संखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो णाणावरणीयदंसणावरणीयवेदणीयअंतराइयाणं पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो। ताधे मोहणीयस्स तिभागुत्तरपलिदोवमट्ठिदिगो बंधो जादो। तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो चदुण्हं कम्माणं संखेज्जगुणहीणो। [6]ताधे अप्पाबहुअं। णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो।

एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो मोहणीयस्स पलिदोवमट्ठिदिगो बंधो। सेसाणं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो। एदम्हि ट्ठिदिबंधे पुण्णे मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो। तदो सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो चेव। [7]ताधे वि अप्पाबहुअं। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। णाणावरण-दंसणावरण-वेदणीय-अंतराइयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि।

तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो जाधे णामा-गोदाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ताधे सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो। [8]ताधे अप्पाबहुअं। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो। तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु तिण्हं घादिकम्माणं वेदणीयस्स च पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो।

ताधे अप्पाबहुअं। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। [9]तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु मोहणीयस्स वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो। ताधे सव्वेसिं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो। ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं सागरोवमसहस्सपुधत्तमंतो सदसहस्सस्स।

---

१. पृ० १८४। २. पृ० १८५। ३. पृ० १८६। ४. पृ० १८७। ५. पृ० १८८। ६. पृ० १८९। ७. पृ० १९०। ८. पृ० १९१। ९. पृ० १९२।

[1]जाधे पढमदाए मोहणीयस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिबंधो जादो ताधे अप्पाबहुअं—णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो असंखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो जम्हि अण्णो ट्ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण णामागोदाणं ट्ठिदिबंधो थोवो। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो असखेज्जगुणो। मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो।

[2]एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो जम्हि अण्णो ट्ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो। णाम-गोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिबंधो तुल्लो असंखेज्जगुणो। एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो जम्हि अण्णो ट्ठिदिबंधो तम्हि एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्ज-गुणो। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो।

[3]एवं संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिबंधो थोवो। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो। वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ। एदेणेव कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिबंधसहस्साणि गदाणि। तदो ट्ठिदिसंतकम्ममसण्णिट्ठिदिबंधेण समगं जादं। तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु चउरिंदियट्ठिदि-बंधेण समगं जादं। एवं तीइंदिय-वीइंदियट्ठिदिबंधेण समगं जादं। [4]तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु गदेसु एइंदियट्ठिदिबंधेण समगं ट्ठिदिसंतकम्मं जादं।

तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिबंधसहस्सेसु, गदेसु णामागोदाणं पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं जादं। ताधे चदुण्हं कम्माणं दिवड्ढपलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं। मोहणीयस्स वि वेपलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं। एदम्मि ट्ठिदिखंडए उक्किण्णे णामा-गोदाणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागियं ट्ठिदिसंतकम्मं। ताधे अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवं णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं। चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं संखेज्जगुणं। मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं।

एदेण कमेण ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे तदो चदुण्हं कम्माणं पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं। ताधे मोहणीयस्स पलिदोवमं तिभागुत्तरं ट्ठिदिसंतकम्मं। [5]तदो ट्ठिदिखंडये पुण्णे चदुण्हं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं। ताधे अप्पाबहुअं—सव्वत्थोवं णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं संखेज्जगुणं। मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं।

तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं पलिदोवमं जादं। तदो ट्ठिदिखंडए पुण्णे सत्तण्हं कम्माणं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं जायं। तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु णामा-गोदाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं। ताधे अप्पाबहुअं—सव्वत्थोवं णामागोदाणं ट्ठिदि-संतकम्मं। चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं। मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणं।

[6]तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण चउण्हं कम्माणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं। ताधे अप्पाबहुअं—णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं। चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं। मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं। तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स वि पलिदोवमस्स असंखेज्ज-दिभागो ट्ठिदिसंतकम्मं जादं। ताधे अप्पाबहुअं। जधा—णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं। चदुण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं। मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जगुणं।

---

१. पृ० १९३। २. पृ० १९४। ३. पृ० १९५। ४. पृ० १९६। ५. पृ० १९७। ६. पृ० १९८।

एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिखंडयसहस्साणि गदाणि । तदो णामागोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं । मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं । चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं । [1]तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्ते गदे एक्कसराहेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं । णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं । चउण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लमसंखेज्जगुणं । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं । णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जगुणं । तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं । वेदणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं । तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जगुणं । वेणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । [2]एदेण कमेण संखेज्जाणि ट्ठिदिखंडयसहस्साणि गदाणि । तदो असंखेज्जाणं समयपवद्धाणमुदीरणा । तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु अट्ठण्हं कसायाणं संकामगो ।

[3]तदो अट्ठकसाया ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण संकामिज्जंति । अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडए उक्किण्णे तेसिं संतकम्ममावलियपविट्ठं सेसं । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिद्धीणं णिरयगदि-तिरिक्खगदिपाओग्गणामाणं संतकम्मस्स संकामगो । [4]तदो खंडयपुधत्तेण अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए उक्किण्णे एदेसिं सोलसण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममावलियब्भतरं सेसं । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण मणपज्जवणाणावरणीय-दाणंतराइयाणं च अणुभागो बंधेण देसघादी जादो । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण ओहिणाणावरणीय-ओहिदंसणावरणीय-लाहंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी जादो । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण सुदणाणावरणीय-अचक्खुदंसणावरणीय—[5]भोगंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी जादो । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण आभिणिबोहियणाणावरणीयपरिभोगंतराइयाणमणुभागो बंधेण देसघादी जादो । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण वीरियंतराइयस्स अणुभागो बंधेण देसघादी जादो ।

तदो ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णं ट्ठिदिखंडयमण्णमणुभागखंडयमण्णो ट्ठिदिबंधो अंतरट्ठिदीओ च उक्कीरेदुं चत्तारि वि एदाणि करणाणि समगमाढत्तो कालं कादुं । [6]चदुण्हं संजलणाणं णवण्हं णोकसायवेदणीयाणमेदेसिं तेरसण्हं कम्माणमंतरं । सेसाणं कम्माणं णत्थि अंतरं । पुरिसवेदस्स च कोहसंजलणाणं च पढमट्ठिदिमंतोमुहुत्तमेत्तं मोत्तूण अंतरं करेदि । सेसाणं कम्माणमावलियं मोत्तूण अंतरं करेदि ।

[7]जाओ अंतरट्ठिदीओ उक्कीरंति तासिं पदेसग्गमुकीरमाणियासु ट्ठिदीसु ण दिज्जदि । [8]जासिं पयडीणं पढमट्ठिदी अत्थि तिस्से पढमट्ठिदीए जाओ संपहि ट्ठिदीओ उक्कीरंति तमुक्कीरमाणगं पदेसग्गं संछुहदि । अध जाओ बज्झंति पयडीओ तासिमाबाहमधिच्छियूण जा जहण्णिया णिसेगट्ठिदी तमादिं कादूण बज्झमाणियासु ट्ठिदीसु उक्कड्डिज्जदे । संपहि अवट्ठिदअणुभागखंडयसहस्सेसु गदेसु अण्णमणुभागखंडयं । [9]जो च अंतरे उक्कीरिज्जमाणे ट्ठिदिबंधो पबद्धो जं च ट्ठिदिखंडयं जा च अंतरकरणद्धा एदाणि समगं णिट्ठाणियमाणाणि णिट्ठिदाणि । से काले पढमसमयदुसमयकदं ।

ताधे चेव णवुंसयवेदस्स आजुत्तकरणसंकामगो । मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो । मोहणीयस्स एगट्ठाणिया बंधोदया । जाणि कम्माणि बज्झंति तेसिं छसु आवलियासु गदासु उदीरणा । मोहणीयस्स आणुपुव्वीसंकमो । लोहसंजलणस्स असंकमो । एदाणि सत्त करणाणि अंतरदुसमयकदे आरद्धाणि । [10]तदो संखेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु णवुंसयवेदो संकामिज्जमाणो संकामिदो ।

तदो से काले इत्थिवेदस्स पढमसमयसंकामगो । [11]ताधे अण्णं ट्ठिदिखंडयमण्णमणुभागखंडयमण्णो ट्ठिदिबंधो च आरद्धाणि । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण इत्थिवेदक्खवणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे णाणावरणदंसणावरण-अंतराइयाणं तिण्हं घादिकम्माणं संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो । [12]तदो ट्ठिदिबंधपुधत्तेण इत्थिवेदस्स जं ट्ठिदिसंतकम्मं तं सव्वमागाइदं । सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मस्स असंखेज्जा भागा आगाइदा । तम्हि ट्ठिदिखंडए पुण्णे इत्थिवेदो संछुब्भमाणो संछुद्धो । ताधे चेव मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्साणि ।

[13]से काले सत्तण्हं णोकसायाणं पढमसमयसंकामगो । सत्तण्हं णोकसायाणं पढमसमयसंकामगस्स ट्ठिदि-

---

१. पृ० १९९ । २. पृ० २०० । ३. पृ० २०१ । ४. २०२ । ५. पृ० २०३ । ६. पृ० २०४ । ७. पृ० २०५ । ८. पृ० २०६ । ९. पृ० २०७ । १०. पृ० २०८ । ११. पृ० २०९ । १२. पृ० २१० । १३. पृ० २११ ।

बंधो मोहणीयस्स थोवो । णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो । णामा-गोदाणं ट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । वेदणीयस्स ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ । ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं मोहणीयस्स थोवं ।

[1]तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं । णामा-गोदाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणं । वेदणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । पढमट्ठिदिखंडए पुण्णे मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणहीणं । सेसाणं ट्ठिसंतकम्ममसंखेज्जगुणहीणं ।[2] ट्ठिदिबंधो णामा-गोद-वेदणीयाणं असंखेज्जगुणहीणो । घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्तेण गदे सत्तण्हं णोकसायाणं खवणद्धाए संखेज्जदिभागे गदे णामागोद-वेदणीयाणं संखेज्जवस्साणि ट्ठिदिबंधो । तदो ट्ठिदिखंडयपुधत्ते सत्तण्हं णोकसायाणं खवणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु णाणावरण-दंसणावरण-अंतराइयाणं संखेज्जवस्सट्ठिदिसंतकम्मं जादं । [3]तदो पाए घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधे ट्ठिदिखंडए च पुण्णे पुण्णे ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्माणि संखेज्जगुणहीणाणि । णामा-गोद-वेदणीयाणं पुण्णे ट्ठिदिखंडए असंखेज्जगुणहीणं ट्ठिदिसंतकम्मं । एदेसिं चेव ट्ठिदिबंधे पुण्णे अण्णो ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणहीणो ।

[4]एदेण कमेण ताव जाव सत्तण्हं णोकसायाणं संकामगस्स चरिमट्ठिदिबंधो त्ति । सत्तण्हं णोकसायाणं संकामयस्स चरिमो ट्ठिदिबंधो पुरिसवेदस्स अट्ठ वस्साणि । संजलणाणं सोलस वस्साणि । सेसाणं कम्माणं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ठिदिबंधो ।[5] ट्ठिदिसंतकम्मं पुण घादिकम्माणं चदुण्हं पि संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । णामा-गोद-वेदणीयाणमसंखेज्जाणि वस्साणि । अंतरादो दुसमयकदादो पाये छण्णोकसाए कोधे संछुहदि, ण अण्णम्हि कम्हि वि । पुरिसवेदस्स दोआवलियासु पढमट्ठिदीए सेसासु आगाल-पडिआगालो वोच्छिण्णो । पढमट्ठिदीदो चेव उदीरणा ।[6] समयाहियाए आवलियाए सेसाए जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा । तदो चरिमसमयसवेदो जादो । ताधे छण्णोकसाया संछुद्धा । पुरिसवेदस्स जाओ दो आवलियाओ समयूणाओ एत्तिगा समयपवद्धा विदियट्ठिदीए अत्थि उदयट्ठिदी च अत्थि । सेसं पुरिसवेदस्स संतकम्मं सव्वं संछुद्धं ।

[7]से काले अस्सकण्णकरणं पवत्तिहिदि । अस्सकण्णकरणं ताव थवणिज्जं । इमो ताव सुत्तफासो । अंतरदुसमयकदमादिं कादूण जाव छण्णोकसायाणं चरिमसमयसंकामगो त्ति एदिस्से अद्धाए अप्पा त्ति कट्टु [8]सुत्तं । तत्थ सत्त मूलगाहाओ ।

(७१) संकामयपट्ठवगस्स किंट्ठिदियाणि पुव्वबद्धाणि ।
केसु व अणुभागेसु य संकंतं वा असंकंतं ॥१२४॥

[9]एदिस्से पंच भासगाहाओ । तंजहा— [10]भासगाहाओ परूविज्जंतीओ चेव भणिदं होंति गंथगउरवपरिहरणट्ठं । मोहणीयस्स अंतरदुसमयकदे संकामगपट्ठवगो होदि । एत्थ सुत्तं ।

(७२)[11] संकामगपट्ठवगस्स मोहणीयस्स दो पुण ट्ठिदीओ ।
किंचूणयं मुहुत्तं णियमा से अंतरं होइ ॥१२५॥

[12]किंचूणगं मुहुत्तं ति अंतोमुहुत्तं ति णादव्वं । अंतरदुसमयकदादो आवलियं समयूणमधिच्छियूण इमा गाहा । यथा—

(७३) झीणट्ठिदिकम्मंसे जे वेदयदे दु दोसु वि ट्ठिदीसु ।
जे चावि ण वेदयदे विदियाए ते दु बोद्धव्वा ॥१२६॥

---

१. पृ० २१२ । २. पृ० २१३ । ३. पृ० २१४ । ४. पृ० २१५ । ५. पृ० २१६ । ६. पृ० २१७ । ७. पृ० २१८ । ८. पृ० २१९ । ९. पृ० २२० । १०. पृ० २२१ । ११. पृ० २२२ । १२. पृ० २२३ ।

[1]एत्तो ट्ठिदिसंतकम्मे च अणुभागसंतकम्मे च तदियगाहा कायव्वा । तं जहा ।

(७४) संकामगपट्ठवगस्स पुव्वबद्धाणि मज्झिमट्ठिदीसु ।
साद-सुहणाम-गोदा तहाणुभागेसुदुक्कस्सा ।।१२७।।

[2]मज्झिमट्ठिदीसु त्ति अणुक्कस्स-अजहण्णट्ठिदीसु त्ति भणिदं होदि । साद-सुभणाम-गोदा तहाणुभागेसुदुक्कस्सा त्ति । ण च एदे ओवुक्कस्सा, तस्समयपाओग्गउक्कस्सगा एदे अणुभागेण ।

(७५) [3]अध थीणगिद्धिकम्मं णिद्दाणिद्दा य पयलपयला य ।
तह णिरय-तिरियणामा झीणा संछोहणादिसु ।।१२८।।

[4]एदाणि कम्माणि पुव्वमेव झीणाणि । एदेणेव सूचिदा अट्ठ वि कसाया पुव्वमेव खविदा त्ति ।

(७६) संकंतम्हि य णियमा णामा-गोदाणि वेदणीयं च ।
वस्सेसु असंखेज्जेसु सेसगा होंति संखेज्जे ।।१२९।।

[5]एसा गाहा छसु कम्मेसु पढमसमयसंकंतेसु तम्हि समये ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं भणदि । एत्तो विदिया मूलगाहा । तं जहा ।

(७७) [6]संकामगपट्ठवगो के बंधदि के व वेदयदि अंसे ।
संकामेदि व के के केसु असंकामगो होइ ।।१३०।।

एदिस्से तिण्णि अत्था । तं जहा—के बंधदि त्ति पढमो अत्थो ।[7] के च वेदयदि त्ति विदिओ अत्थो । पच्छिमद्धे तदिओ अत्थो । पढमे अत्थे तिण्णि भासगाहाओ ।[8] विदिये अत्थे वे भासगाहाओ । तदिये अत्थे छब्भासगाहाओ । पढमस्स अत्थस्स तिण्हं भासगाहाणं समुक्कित्तणं विहासणं च एक्कदो वत्तइस्सामो ।[9] तं जहा ।

(७८) वस्ससदसहस्साइं ट्ठिदिसंखाए दु मोहणीयं तु ।
बंधदि च सदसहस्सेसु असंखेज्जेसु सेसाणि ।।१३१।।

[10]एसा गाहा अंतरदुसमयकदे ट्ठिदिबंधपमाणं भणइ ।

(७९) भय-सोगमरदि-रदिगं हस्स-दुगुंछा-णवुंसगित्थीओ ।
असादं णीचागोदं अजसं सारीरगं णामं ।।१३२।।

[11]एदाणि णियमा ण बंधइ ।

(८०) [12]सव्वावरणीयाणं जेसिं ओवट्टणा दु णिद्दाए ।
पयलायुगस्स य तहा अबंधगो बंधगी सेसे ।।१३३।।

[13]जेसिमोवट्टणा त्ति का सण्णा । जेसिं कम्माणं देसघादिफद्दयाणि अत्थि तेसिं कम्माणमोवट्टणा अत्थि त्ति सण्णा । एदीए सण्णाए सव्वावरणीयाणं जेसिमोवट्टणा त्ति एदस्स पदस्स विहासा ।[14] तं जहा । जेसिं कम्माणं देसघादिफद्दयाणि अत्थि ताणि कम्माणि सव्वघादीणि ण बंधदि, देसघादीणि बंधदि । तं जहा । णाणावरणं चउव्विहं दंसणावरणं तिविहं अंतराइयं पंचविहं एदाणि कम्माणि देसघादीणि बंधदि ।[15] एत्तिगे मूलगाहाए पढमो अत्थो समत्तो भवदि ।

(८१) णिद्दा य णीचगोदं पयला णियमा अगि त्ति णामं च ।
छच्चेव णोकसाया अंसेसु अवेदगो होदि ।।१३४।।

[16]एदाणि कम्माणि सव्वत्थ णियमा ण वेदेदि । एस अत्थो एदिस्से गाहाए ।

---

१. पृ० २२५ । २. पृ० २२६ । ३. पृ० २२८ । ४. पृ० २२९ । ५. पृ० २३० । ६. पृ० २३१ । ७. पृ० २३२ । ८. पृ० २३३ । ९. पृ० २३४ । १०. पृ० २३५ । ११. पृ० २३६ । १२. पृ० २३७ । १३. २३९ । १४. पृ० २४० । १५. पृ० २४१ । १६. पृ० २४३ ।

(८२) वेदे च वेदणीये सव्वावरणे तहा कसाये च ।
भयणिज्जो वेदेंतो अभज्जगो सेसगो होदि ।।१३५।।

[1]विहासा । तं जहा । वेदे च ताव तिण्हं वेदाणमण्णदरं वेदेज्ज । वेदणीये सादं वा असादं वा ।[2] सव्वावरणे आभिणिवोहियणाणावरणादीणमणुभागं सव्वघादिं वा देसघादिं वा । कसाये चउण्हं कसायाणमण्णदरं ।[3] एवं भजिदव्वो वेदे च वेदणीये सव्वावरणे कसाये च । विदियाए मूलगाहाए विदियो अत्थो समत्तो भवदि । तदिये अत्थे छब्भासगाहाओ ।

(८३) सव्वस्स मोहणीयस्स आणुपुव्वी य संकमो होदि ।
लोभकसाये णियमा असंकमो होइ णायव्वो ।।१३६।।

[4]विहासा । तं जहा । अंतरदुसमयकदप्पहुडि मोहणीयस्स आणुपुव्वीसंकमो । आणुपुव्वीसंकमो णाम किं । कोह-माण-माया-लोभा एसा परिवाडी आणुपुव्वीसंकमो णाम ।[5] एस अत्थो चउत्थीए भासगाहाए भणिहिदि । एत्तो विदियभासगाहा ।

(८४) संकामगो च कोधं माणं मायं तहेव लोभं च ।
सव्वं जहाणुपुव्वी वेदादी संछुहदि कम्मं ।।१३७।।

[6]वेदादि त्ति विहासा । णवुंसयवेदादी संछुहदि त्ति अत्थो ।

(८२) संछुहदि पुरिसवेदे इत्थीवेदं णवुंसयं चेव ।
सत्तेव णोकसाये णियमा कोहम्हि संछुहदि ।।१३८।।

[7]एदिस्से तदियाए गाहाए विहासा । जहा । इत्थीवेदं णवुंसयवेदं च पुरिसवेदे संछुहदि, ण अण्णत्थ । सत्त णोकसाये कोधे संछुहदि, ण अण्णत्थ ।

(८६) कोहं च छुहइ माणे माणं मायाए णियमसा छुहइ ।
मायं च छुहइ लोहे पडिलोमो संकमो णत्थि ।।१३९।।

[8]एदिस्से सुत्तपबंधो चेव विहासा ।

(८७) जो जम्हि संछुहंतो णियमा बंधसरिसम्हि संछुहइ ।
बंधेण हीणदरगे अहिए वा संकम्मो णत्थि ।।१४०।।

[9]विहासा । तं जहा । जो जं पयडिं संछुहदि णियमा बज्झमाणीए ट्ठिदीए संछुहदि ।[10] एसा पुरिमद्धस्स विहासा । पच्छिमद्धस्स विहासा । तं जहा । जं बंधदि ट्ठिदिं तिस्से वा तत्तो हीणाए वा संछुहदि । अबज्झमाणासु ट्ठिदीसु ण उक्कड्डिज्जदि ।[11] समट्ठिदिगं तु संकामेज्ज ।

(८८) संकामगपट्ठवगो माणकसायस्स वेदगो कोधं ।
संछुहदि अवेदेंतो माणकसाये कमो सेसे ।।१४१।।

[12]विहासा । जहा । माणकसायस्स संकामगपट्ठवगो माणं चेव वेदेंतो कोहस्स जे दोआवलियबंधा दुसमयूणा ते माणे संछुहदि । [13]विदियमूलगाहा त्ति विहासिदा समत्ता भवदि । एत्तो तदियमूलगाहा । जहा ।

(८९) बंधो व संकमो वा उदयो वा सह पदेस-अणुभागे ।
अधिगो समो व हीणो गुणेण किं वा विसेसेण ।।१४२।।

---

१. पृ० २४५ । २. पृ० २४६ । ३. पृ० २४७ । ४. २४८ । ५. २४९ । ६. पृ० २५० । ७. पृ० २५१ । ८. पृ० २५२ । ९. पृ० २५५ । १०. पृ० २५६ । ११. पृ० २५७ । १२. पृ० २५८ । १३. पृ० २५९ ।

[1]एदिस्से चत्तारि भासगाहाओ । भासगाहा समुक्कित्तणा । समुक्कित्तिदाए व अत्थविभासं भणिस्सामो । [2]तं जहा ।

(९०) बंधेण होइ उदओ अहिओ उदएण संकमो अहिओ ।
गुणसेढि अणंतगुणा बोद्धव्वा होइ अणुभागे ।।१४३।।

[3]विहासा । अणुभागेण बंधो थोवो । उदओ अणंतगुणो । संकमो अणंतगुणो । विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(९१) [4]बंधेण होइ उदओ अहिओ उदएण संकमो अहिओ ।
गुणसेढी असंखेज्जा च पदेसग्गेण बोद्धव्वा ।।१४४।।

विहासा । जहा । पदेसग्गेण बंधो थोवो । उदयो असंखेज्जगुणो । संकमो असंखेज्जगुणो । [5]तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(९२) उदओ च अणंतगुणो संपहिबंधेण होइ अणुभागे ।
से काले उदयादो संपहिबंधो अणंतगुणो ।।१४५।।

[6]विहासा । जहा । से काले अणुभागबंधो थोवो । से काले चेव उदओ अणंतगुणो । अस्सि समए बंधो अणंतगुणो । अस्सिं चेव समए उदओ अणंतगुणो । चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(९३) [7]गुणसेढी अणंतगुणेणूणाए वेदगो दु अणुभागे ।
गणणादियंतसेढी पदेसअग्गेण बोसव्वा ।।१४६।।

विहासा । जहा ! अस्सि समये अणुभागुदयो बहुगो । से काले अणंतगुणहीणो । [8]एवं सव्वत्थ । पदेसुदओ अस्सि समये थोवो । से काले अणंतगुणो । एवं सव्वत्थ । एत्तो चउत्थी भासगाहा । तं जहा ।

(९४) बंधो व संकमो वा उदओ वा किं सगे सगे ट्ठाणे ।
से काले से काले अधिओ हीणो समो वा पि ।।१४७।।

[9]एदिस्से गाहाए तिण्णि भासगाहाओ । तासिं समुक्कित्तणा तहेव विहासा च । जहा ।

(९५) [10]बंधोदएहिं णियमा अणुभागो होदि णंतगुणहीणो ।
से काले से काले भज्जो पुण संकमो होदि ।।१४८।।

विहासा । जहा । [11]अस्सि समए अणुभागबंधो बहुओ । से काले अणंतगुणहीणो । एवं समए समए अणंतगुणहीणो । एवमुदओ वि कायव्वो । संकमो जाव अणुभागखंडयमुक्कीरेदि ताव तत्तिगो तत्तिगो अणुभागसंकमो । अण्णम्हि अणुभागखंडए आढत्ते अणंतगुणहीणो अणुभागसंकमो । एत्तो विदियाए गाहाए समुक्कित्तणा ।

(९६) [12]गुणसेढि असंखेज्जा च पदेसग्गेण संकमो उदओ ।
से काले से काले भज्जो बंधो पदेसग्गे ।।१४९।।

[13]विहासा । पदेसुदओ अस्सि समए थोवो । से काले असंखेज्जगुणो । एवं सव्वत्थ । जहा उदओ तहा संकमो वि कायव्वो । पदेसबंधो चउव्विहाए वड्ढीए चउव्विहाए हाणीए अवट्ठाणे च भजियव्वो । एत्तो तदियाए गाहाए समुक्कित्तणा ।

(९७) गुणदो अणंतगुणहीणं वेदयदि णियमसा दु अणुभागे ।
अहिया च पदेसग्गे गुणेण गणणादियंतेण ।।१५०।।

[14]एदिस्से अत्थो पुव्वभणिदो । एत्तो पंचमी मूलगाहा । तिस्से समुक्कित्तणा । [15]जहा ।

---

१. पृ० २६० । २. पृ० २६१ । ३. पृ० २६२ । ४. पृ० २६३ ५. पृ० २६५ । ६. पृ० २६६ । ७. पृ० २६७ । ८. पृ० २६८ । ९. २६९ । १०. पृ० २७० । ११. पृ० २७१ । १२. पृ० २७२ । १३. पृ० २७३ । १४. पृ० २७४ । १५. २७५ ।

(९८) किं अंतरं करेंतो वड्ढदि हायदि ट्ठिदी य अणुभागे ।
णिरुवक्कमा च वड्ढी हाणी वा केच्चिरं कालं ॥१५१॥

[1]एत्थ त्तिण्णि भासगाहाओ । तासि समुक्कित्तणं विहासणं च वत्तइस्सामो । तं जहा । पढमाए गाहाए समुक्कित्तणा ।

(९९) ओवट्टणा जहण्णा आवलिया ऊणिया तिभागेण ।
एसा ट्ठिदीसु जहण्णा तहाणुभागेसणंतेसु ॥१५२॥

[2]विहासा । जा समयाहिया आवलिया उदयादो एवमादिट्ठिदी ओकड्डिज्जदि समयूणाए आवलियाए वे-त्तिभागे एत्तिगे अइच्छावेदूण णिक्खवदि । णिक्खेवो समयूणाए अवलियाए तिभागो समयुत्तरो ।[3] तदो जा अणंतरउपरिमट्ठिदी तिस्से णिक्खेवो तत्तिगो चेव । अइच्छावणा समयाहिया ।[4] एवं ताव अइच्छावणा वड्ढदि जाव आवलिया अधिच्छावणा जादा त्ति । तेण परमधिच्छावणा आवलिया, णिक्खेवो वड्ढदि । उक्कस्सओ णिक्खेवो कम्मट्ठिदी दोहि आवलियाहि समयाहियाहि ऊणिगा ।

[5]जहण्णओ णिक्खेवो थोवो । जहण्णिया अइच्छावणा समयूणाए आवलियाए वे-त्तिभागा विसेसाहिया । उक्कस्सिया अइच्छावणा विसेसाहिया । उक्कस्सओ णिक्खेवो असंखेज्जगुणो ।[6] विदियाए गाहाए समुक्कित्तणा । जहा ।

(१००) संकामेदुक्कड्डदि जे अंसे ते अवट्ठिदा होंति ।
आवलियं से काले तेण परं होंति भजियव्वा ॥१५३॥

[7]विहासा । जं पदेसग्गं परपयडीए संकामिज्जदि ट्ठिदीहि वा अणुभागेहि वा उक्कड्डिज्जदि तं पदेसग्गमावलियं ण सक्को ओकड्डिदुं वा उक्कड्डिदुं वा संकामेदुं वा ।[8] एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१०१) ओकड्डदि जे अंसे से काले ते च होंति भजियव्वा ।
वड्ढीए अवट्ठाणे हाणीए संकमे उदए ॥१५४॥

[9]विहासा । ठिदीहि वा अणुभागेहि वा पदेसग्गमोकड्डिज्जदि तं पदेसग्गं से काले चेव ओकड्डिज्जेज्ज वा उक्कड्डिज्जेज्ज वा संकामिज्जेज्ज वा उदीरिज्जेज्ज वा । [10]एत्तो छट्ठीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१०२) एक्कं च ट्ठिदिविसेसं तु ट्ठिदिविसेसेसु वड्ढेदि ।
हरस्सेदि कदिसु एगं तहाणुभागेसु बोद्धव्वं ॥१५५॥

[11]एदिस्से एक्का भासगाहा । तिस्से समुक्कित्तणा च विहासा च कायव्वा ।[12] तं जहा ।

(१०३) एक्कं च ट्ठिदिविसेसं तु असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु ।
वड्ढेदि हरस्सेदि च तहाणुभागेसणंतेसु ॥

[13] विहासा । जहा । ट्ठिदिसंतकम्मस्स अग्गट्ठिदीदो समयुत्तरट्ठिदिं बंधमाणो तं ट्ठिदिसंतकम्मअग्गट्ठिदिं ण उक्कड्डदि ।[14] दुसमयुत्तरट्ठिदिं बंधमाणो वि ण उक्कड्डदि एवं गंतूण आवलियुत्तर-

१. पृ० २७७ । २. पृ० २७८ । ३. पृ० २७९ । ४. पृ० २८० । ५. पृ० २८२ । ६. पृ० २८३ । ७. पृ० २८४ । ८. पृ० २८५ । ९. पृ० २८६ । १०. पृ० २८७ । ११. पृ० २८८ । १२. पृ० २८९ । १३. पृ० २९० । १४. पृ० २९१ ।

ट्ठिदिं बंधमाणो ण उक्कड्डदि । जइ संतकम्मअग्गट्ठिदीदो बज्झमाणिया ट्ठिदी अदिरित्ता आवलियाए आवलियाए असंखेज्जदिभागेण च तदो सो संतकम्मअग्गट्ठिदिं सक्को उक्कड्डिदुं ।[1] तं पुण उक्कड्डियूण आवलिमधिच्छावेयूण आवलियाए असंखेज्जदिभागे णिक्खिवदि । णिक्खेवो आवलियाए असंखेज्जदिभागमदिं कादूण समयुत्तराए वड्ढीए णिरंतरं जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति सव्वाणि ट्ठाणाणि अत्थि । उक्कस्सओ पुण णिक्खेवो केत्तिओ ।[2] कसायाणं ताव उक्कड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए उक्कस्सगं णिक्खेवं वत्तइस्सामो । चत्तालीसं सागरोवसकोडाकोडीओ चदुहि वस्ससहस्सेहि आवलियाए समयुत्तराए च ऊणियाओ एत्तो उक्कस्सगो णिक्खेवो ।[3] जाओ आबाहाए उवरि ट्ठिदीओ तासिमुक्कड्डिज्जमाणीणमइच्छावणा सव्वत्थ आवलिया । जाओ आबाहाए हेट्ठा संतकम्मट्ठिदीओ तासिमुक्कड्डिज्जमाणीणमइच्छावणा[4] किस्से वि ट्ठिदीए आवलिया । किस्से वि ट्ठिदीए समयुत्तरा किस्से वि ट्ठिदीए विसमयुत्तरा । किस्से वि ट्ठिदीए तिसमयुत्तरा । एवं णिरंतरमइच्छावणाट्ठाणाणि जाव उक्कस्सिया अइच्छावणा त्ति ।[5] उक्कस्सिया पुण अइच्छावणा केत्तिया ? जा जस्स उक्कस्सिया आबाहा सा उक्कस्सिया आबाहा समयाहियावलियूणाए उक्कस्सिया अइच्छावणा ।

[6]उक्कड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए जहण्णगो णिक्खेवो थोवो । ओकड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए जहण्णगो णिक्खेवो असंखेज्जगुणो । ओकड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए जहण्णिया अधिच्छावणा थोवूणा । ओकड्डिज्जमाणियाए ट्ठिदीए उक्कस्सिया अइच्छावणा णिव्वाघादेण[7] उक्कड्डिज्जमाणाए ट्ठिदीए जहण्णिया अइच्छावणा च तुल्लाओ विसेसाहियाओ । आवलिया तत्तिया चेव । उक्कड्डणा उक्कस्सिया अइच्छावणा संखेज्जगुणा । [8]ओकड्डणादो वाघादेण उक्कस्सिया अधिच्छावणा असंखेज्जगुणा । उक्कड्डणादो उक्कस्सगो णिक्खेवो विसेसाहिओ । [9] ओकड्डणादो उक्कस्सगो णिक्खेवो विसेसाहिओ । उक्कस्सयं ट्ठिदिसंतकम्मं विसेसाहियं । दो आवलियाओ समयुत्तराओ विसेसो ।[10] एत्तो सत्तमी मूलगाहा ।[11] तं जहा—

(१०४) ट्ठिदि-अणुभागे अंसे के के वड्ढदि के व हरस्सेदि ।
केसु अवट्ठाणं वा गुणेण किं वा विसेसेण ॥१५७॥

[12]एदिस्से चत्तारि भासगाहाओ । तासिं समुक्कित्तणा च विहासा च । पढमभासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१०५)[13]ओवट्टेदि ट्ठिदिं पुण अधिगं हीणं च बंधसमगं वा ।
उक्कड्डदि बंधसमं हीणं अधिगं ण वड्ढेदि ॥१५८॥

[14]विहासा जा ट्ठिदी ओकड्डिज्जदि सा ट्ठिदी बज्झमाणियादो अधिगा वा हीणा वा तुल्ला वा । उक्कड्डिज्जमणिया ट्ठिदी बज्झमाणिगादो ट्ठिदीदो तुल्ला हीणा वा, अहिया णत्थि ।

एत्तो विदियभासगाहा ।[15] जहा—

(१०६) सव्वे वि य अणुभागे ओकड्डदि जे ण आवलियपविट्ठे ।
उक्कड्डदि बंधसमं णिरुवक्कमं होदि आवलिया ॥१५९॥

[16]विहासा । एदिस्से गाहाए अण्णो बंधाणुलोमेण अत्थो, अण्णो सब्भावदो । [17]बंधाणुलोमं ताव वत्तइस्सामो ।[18] उदयावलियपविट्ठं अणुभागे मोत्तूण सेसे सव्वे चेव अणुभागे ओकड्डदि, एवं चेव उक्कड्डदि ।[19] सब्भावसण्णं वत्तइस्सामो । तं जहा । पढमफद्दयप्पहुडि अणंताणि फद्दयाणि ण ओकड्डिज्जंति । ताणि केत्तियाणि ?

---

१. पृ० २९२ । २. पृ० २९३ । ३. पृ० २९५ । ४. पृ० २९६ । ५. पृ० २९७ । ६. पृ० २९८ । ७. पृ० २९९ । ८. पृ० ३०० । ९. पृ० ३०१ । १०. पृ० ३०२ । ११. पृ० ३०३ । १२. पृ० ३०४ । १३. पृ० ३०५ । १४. पृ० ३०७ । १५. पृ० ३०८ । १६. पृ० ३०९ । १७. पृ० ३१० । १८. पृ० ३११ । १९. पृ० ३१२ ।

जत्तियाणि जहण्णअधिच्छावणफद्दयाणि जहण्णणिक्खेवफद्दयाणि च तत्तियाणि । तदो एत्तियमेत्तियाणि फद्दयाणि अधिच्छिदूण तं फद्दयमोकड्डिज्जदि। एवं जाव चरिमफद्दयं ति ओकड्डदि अणंताणि फद्दयाणि । [1]चरिमफद्दयं ण उक्कड्डदि । एवमणंताणि फद्दयाणि चरिमफद्दयादो ओसक्किऊण तं फद्दयमुक्कड्डदि । [2]उक्कड्डणादो ओकड्डणादो च जहण्णगो णिक्खेवो थोवो । जहण्णिया अधिच्छावणा ओकड्डणादो च उक्कड्डणादो च तुल्ला अणंतगुणा । वाघादेण ओकड्डणादो उक्कस्सिया अधिच्छावणा अणंतगुणा । अणुभागखंडयमेगाए वग्गणाए अदिरित्तं । [3]उक्कस्समणुभागसंतकम्मं बंधो च विसेसाहिओ । एत्तो तदियभासगाहाए समुक्कित्तणा विहासा च ।

(१०७) वड्ढीदु होदि हाणी अधिगा हाणीदु तह अवट्ठाणं ।
गुणसेढि असंखेज्जा च पदेसग्गेण बोद्धव्वा ।।१६०।।

[4]विहासा । जं पदेसग्गमुक्कड्डिज्जदि सा वड्ढि त्ति सण्णा । जमोकड्डिदि सा हाणि त्ति सण्णा । जं ण ओकड्डिज्जदि पदेसग्गं तमवट्ठाणं ति सण्णा ।[5] एदीए सण्णाए एक्कं ट्ठिदिं वा पडुच्च सव्वाओ वा ट्ठिदीओ पडुच्च अप्पाबहुअं । तं जहा ।

वड्ढी थोवा । हाणी असंखेज्जगुणा । अवट्ठाणमसंखेज्जगुणं । अक्खवगाणुवसामगस्स पुण सव्वाओ ट्ठिदीओ एगट्ठिदिं वा [6]पडुच्च वड्ढीदो हाणी तुल्ला वा विसेसाहिया वा अवट्ठाणमसंखेज्जगुणं । एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१०८) ओवट्टणमुव्वट्टण किट्टीवज्जेसु होदि कम्मेसु ।
ओवट्टणा च णियमा किट्टीकरणम्हि बोद्धव्वा ।।१६१।।

[7]एदिस्से गाहाए अत्थविहासा कायव्वा। सत्तसु मूलगाहासु विहासिदासु तदो अस्सकण्णकरणस्स परूवणा । अस्सकण्णकरणेत्ति वा आदोलकरणेत्ति वा ओवट्टणउव्वट्टणकरणेत्ति वा तिण्णि णामाणि अस्सकण्णकरणस्स । [8]छसु कम्मेसु संछुद्धेसु से काले पढमसमयअवेदो, ताधे चेव पढमसमयअस्सकण्णकरणकारगो । [9]ताधे ट्ठिदिसंतकम्मं संजलणाणं संखेज्जाणि वस्साणि । ट्ठिदिबंधो सोलस वस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि । [10]अणुभागसंतकम्मं सह आगाइदेण माणे थोवं, कोहे विसेसाहियं, मायाए विसेसाहियं । लोभे विसेसाहियं । बंधो वि एमेव । अणुभागखंडयं पुण जमागाइदं तस्स अणुभागखंडयस्स[11] फद्दयाणि कोधे थोवाणि, माणे फद्दयाणि विसेसाहियाणि, माणाए फद्दयाणि विसेसाहियाणि, लोभे फद्दयाणि विसेसाहियाणि । आगाइदसेसाणि पुण-फद्दयाणि लोभे थोवाणि, मायाए अणंतगुणाणि[12], माणे अणंतगुणाणि, कोधे अणंतगुणाणि । [13]एसा परूवणा पढमसमयअस्स कण्णकरणकारयस्स ।

तम्मि चेव पढमसमए अपुव्वफद्दयाणि णाम करेदि । [14]तेसिं परूवणं वत्तइस्सामो । तं जहा । [15]सव्वस्स अक्खवगस्स सव्वकम्माणं देसघादिफद्दयाणमादिवग्गणा तुल्ला । सव्वघादीणं पि मोत्तूण मिच्छत्तं सेसाणं कम्माणं सव्वघादीणमादिवग्गणा तुल्ला । एदाणि पुव्वफद्दयाणि णाम । [16]तदो चदुण्हं संजलणाणमपुव्वफद्दयाइं णाम-करेदि। ताणि कधं करेदि । [17]लोभस्स ताव, लोभसंजलणस्स पुव्वफद्दयेहिंतो पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागं घेत्तूण पढमस्स देसघादिफद्दयस्स हेट्ठा अणंतभागे अण्णाणि अपुव्वफद्दयाणि णिवत्तयदि ।[18] ताणि पगणणादो अणंताणि पदेसगुणहाणिट्ठाणांतरफद्दयाणमसंखेज्जदिभागो । एत्तियमेत्ताणि ताणि अपुव्वफद्दयाणि ।

---

१. पृ० ३१३ । २. पृ० ३१४ । ३. पृ० ३१५ । ४. पृ० ३१७ । ५. पृ० ३१८ । ६. पृ० ३१९ । ७. ३२० । ८. पृ० ३२२ । ९. पृ० ३२३ । १०. पृ० ३२४ । ११. पृ० ३२५ । १२. पृ० ३२६ । १३. पृ० ३२७ । १४. पृ० ३२९ । १५. पृ० ३३० । १६. पृ० ३३१ । १७. पृ० ३३२ । १८. पृ ३३३ । १९. पृ० ३३४ ।

पढमसमए[1] जाणि अपुव्वफद्दयाणि तत्थ पढमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं थोवं। विदियस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदमणंतभागुत्तरं।[2] एवमणंतराणंतरेण गंतूण दुचरिमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदादो चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणा विसेसाहिया अणंतभागेण।[3] जाणि पढमसमये अपुव्वफद्दयाणि णिवत्तिदाणि तस्स पढमस्स फद्दयस्स आदिवग्गणा थोवा। चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणा अणंतगुणा। पुव्वफद्दयस्सादिवग्गणा अणंतगुणा। [4]जहा लोभस्स अपुव्वफद्दयाणि परूविदाणि पढमसमए तहा मायाए माणस्स कोधस्स परूवेयव्वाणि।

[5]पढमसमए जाणि अपुव्वफद्दयाणि णिवत्तिदाणि तत्थ कोधस्स थोवाणि। माणस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। मायाए अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। लोभस्स अपुव्वफद्दयाणि विसेसाहियाणि। विसेसो अणंतभागो। [6]तेसिं चेव पढमसमए णिवत्तिदाणमपुव्वफद्दयाणं लोभस्स आदिवग्गणाए अविभागपलिच्छेदग्गं थोवं। मायाए आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं विसेसाहियं। माणस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं विसेसाहियं। कोहस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं विसेसाहियं। एवं चदुण्हं पि कसायाणं जाणि अपुव्वफद्दयाणि, तत्थ चरिमस्स अपुव्वफद्दयस्स आदिवग्गणाए अविभागपडिच्छेदग्गं च दुण्हं पि कसायाणं तुल्लमणंतगुणं।

●

१. पृ० ३३५। २. पृ० ३३७। ३. पृ० ३३९। ४. पृ० ३४०। ५. पृ० ३४१। ६. पृ० ३४२।

३ अवतरण सूची

		पृष्ठ			पृष्ठ
त	तिण्णिसया छत्तीसा वासट्ठि	१५९	त	तिण्णिसया सत्तय	१५९

४ ऐतिहासिक नाम सूची

		पृष्ठ			पृष्ठ
अ	अण्णारिय	७४	च	चुण्णिसुत्तयार	२२, २२७, २७४ २८२, २८४ ३०२, ३२१
व	वक्खाणाइरिय	४, ३५२			

५ ग्रन्थनामोल्लेख

		पृ०			पृष्ठ
क	कम्मपयडी	८	द	दसकरणीसंगह	३८
	कम्मपवाद	३			

६ न्यायोक्ति

जहा उद्देसो तहा णिद्देसो २३३, ४५८

वक्खाणदो विसेसे पडिवत्ती होइ १७७

७ उपदेशभेद

१ अण्णेसिं वक्खाणाइरियाणमहिप्पाओ ण एवंविहा देसकरणोवसामणा एत्थ विहासिदा, अकरणोवसामणाए एदिस्से अंतभावब्भुवगमादो पृ० ४

२ अण्णे पुण आइरिया जाव मोहणीयस्स संखेज्जवस्सट्ठिदिगो बंधो ताव ओदरमाणस्स वि छसु आवलियासु गदासु उदीरणा त्ति एसो णियमो होदूण पुणो असंखेज्जट्ठिदिबंधपारंभे एत्तो प्पहुडि तारिसो णियमो होदूण पुणो असंखेज्जवस्सट्ठिदिबंधपारंभे एत्तो तारिसो णियमो णट्ठो त्ति एदस्स सुत्तस्स अत्थं वक्खाणेंति । पृ० ४ ।

३ एक्को उवएसो णियमा सुदोवजुत्ता पृ० १५७ ।

४ एक्को उवदेसो सुदेण वा मदीए वा चक्खुदंसणेण वा अचक्खुदंसणेण वा । पृ० १५८ ।

८ मूलगाथा-चूर्णिसूत्रगत शब्दसूची

इसमें संख्यावाची और कर्मपर्यायवाची शब्दों को संग्रहीत नहीं किया गया है ।

अ	अइच्छावणा	२७९, २८०, २९६
	अकरणोवसामण	२, ३
	अक्खवय	४५
	अग्गट्ठिदि	२९०, २९१
	अचक्खुदंसणा	१५८
	अणाणुपुव्विसंकम	७८
	अणिच्छिद	१०५
	अणियट्टि	३३, ७८
	अणियट्टिअद्धा	१३२
	अणियट्टिकरणद्धा	१४८
	अणुदिण्णोवसामणा	३
	अणुभागखंडय	१२०, १२१
	अणुभागघाद	१४६, १६७
	अणुभागफद्दय	२५१

अणुवसम १२
अणुवसंत ११, ७३, ७५
अणुभागसंतकम्म १६०
अंतर १, १३४, १६६
अंतरकद ११४
अंतरकरण ७५, १२२
अंतरट्ठिदि १३४
अंतरदुसमयकद ११८, २०७, २१८
अत्थ २३१, २३२, २३३
अदिक्कंत ७७, १८७
अद्धा ११८, १४८
अद्धाक्खय ४७
अधापवतकरण ९५, ९६, ९८
अधापवत्तकरणद्धा १४८
अधापवत्तसंकम ९७
अधापवत्तसंजद १३३
अधिच्छावणा ३१४
अपुव्व ८६, ८७
अपुव्वकरण ९३, ९७, १३३
अपुव्वकरणद्धा ९३, ९५, १३२
अपुव्वफद्दय ३३९, ३४०
अप्पसत्थ १७४, १७५
अप्पसत्थउवसामणा ३३, ४३
अवट्ठिदपरिणाम ४७
अवट्ठिदअणुभागखंडय २०६
अवेद ११७, ११९
अवेदग १०९
असंकामग २३१
असंजम ९८
अस्सकण्णकरण २१८, ३२९
अंस १६१, १६२

आ आउगवज्ज ३३
आगाइद १६८, १७३, १७६
आजुत्तकरण २०७
आढत्त २०३
अणुपुव्वीसंकम २०७
आरद्ध २०९
आवलियबाहिर ४६, ६१, ७३
आवासय १७०, १७६, १७९
आसाण ९९, १००
उक्किण्ण २०१
उक्कीरणद्धा १२०, १२१
उक्कीरमाणग २०६
उदयादिगुणसेढि ४८, ६१, ६६, ११०
उदीरणाकरण ३६
उवजोग १५७
उवट्ठिद १२, १०१, १०२ आ.
उवदेस १५८
उव्वट्टणाकरण ३४
उवसमसम्मत्तद्ध ९८
उवसमसम्मतद्धा ९८
उवसाम १०, १०
उवसामग २३, ९७, १०५, १०६, १०९ आ.
उवसामणक्खअ ४५, ४७
उवसामणद्धा १०९, ११७, ११८ आ.
उवसामणविधि १०३
उवसामण २, १०१, ११९ आ.
उवसामेयव १०३
उवसंत ११, ४१, ७३ आ.
उवसंतकसाय १२३
उवसंतकसायवीयराय ३७
उवसंतद्धा १३०, १३४
उवसामेंत ११२
उस्सास १२९

ए एक्कसराह १८,८२,८३,८४,८५,१९४
एगट्ठाणिय २०७
एगसंबंध १४८
एगावलिय १४८

ओ ओकड्डिदव ११०, १११
ओकड्डणा २, ३०१
ओघुक्कस्स ३, २२६
ओट्टिदव्व ४, १४८, १५०, १५१
ओरालियकायजोग ५, १५६
ओवट्टणा ५, २३७, ३३९
ओवट्टणाकरण ६, ३४, ३५
ओसरिद ७, १४४

क कम्मंस २२३
करण ३३, ३४, ३५, ३६, २०३
करणोवसामणा २, ४
कसायउवसामणा १७०
कसायक्खवग १६९
कसायक्खवण १७१
कालसंजुत्त १२०
किट्टि १२, ४९, ५७, १२४
किट्टीकरण ३२०
किट्टीकरणद्धा १२४
केद्देही १११

ख. खवणद्धा २११
खवण १४८, १७०

च चक्खुदंसण १५८
चारित्तमोहणीय ३४, १४८

ज जद्ठिदिउदय २४
जट्ठिदिउदीरणा २४
जद्देही १०२, १०३, १०५, ११४

ज. झीण २२८, १२९
झीणट्ठिदि २२३

ट ट्ठिदि २३, २४, ५८ आ.
ट्ठिदिखंडय १२१, १६७, १७१
ट्ठिदिघाद १६६, १६७
ट्ठिदिबंधगद्धा १२१, १२२
ट्ठिदिबंधपुधत्त ७९
ट्ठिदिबंधसमग १८५

ण णिकाचणाकरण १, ३३
णिक्खित्त २, ४६
णिक्खेव ९४, १०५, ११३ आ.
णिधत्तीकरण ३, ३३
णिप्पडिबंध ३, ६९
णिक्कम ५, २७९, २७०
णिव्वाघाद ६, ४१, ४२

त तदिम १०६
तद्देही १०१, १०३, ११२
त्थिवुक्कसंकम ५७

थ थवणिज्ज १८
थोव १४, २४, ८१ आ.

द दुट्ठाणिय ७४, ७७
दुसमयकद २०७, २१६
देसघादि ७४, ७७

प पडिणियत्त १, ९७
पढमट्ठिदि १०२, १०३, १११
पडिवण्ण ११५
पडिलोम २५१
पडिवदद १, ४७
पडिवदमाण ३, ७७, ९७
पडिवदमाणग ९७, १०५, १०६ आ.
पडिवदमाणय ४४, १२३, १२६ आ.
पदेसग्ग १२, २६२, २७२, २७३
परभवणाम १७८
परियत्तमाणिय १६३
पडिवाद ४, ४५
परूवणाविहासा ४४, ४५
पविट्ठ १७१
पवेसग १६२, १६२
पसत्यकरणोवसामणा ९
पाए ८४, २९४
पाये ६७, ८४, ८६, १११
पुच्छावक्क ११
पुव्वबद्ध २२५

फ फड्डय १६
फद्दय १५१
फद्दयगद ५७

ब बंधणकरण ३५
बंधसमग १०२
बंधावलिय १५
बादरसांपराइय ४०, ५८, १२४, १२५

म मज्झिमट्ठिदि २२५, २२६
मणजोग १५६
मणुअ १२९
माणवेदग ६५, १२६
माणवेदगद्धा १२७
मायावेदग ६१, ६३, ६४
मायावेदगद्धा ६३, १०५, १२६
मूलगाहा २१९

मूलपयडि १६१
मोहणीयवज्ज १०, ६४
ल लोभवेदगद्धा ६०, १२५
व वग्गणा १, १६
वचिजोग २, १५६
वड्ढमाण ५७
वड्ढमाणलेस्सा ३, १५२
वड्ढि २, ८६, ८७
वाघाद ३१४
विज्झादसंकम २, ९७
वियप्प ११७, ११९
वियास १०७
विसम १८०
विसुज्झमाण १५५
विसुद्ध १५५
विसोही १५५
विहासण २३३
विहासा १२, १४, ४१, ४४
वेदयमाण ११०
वेदंत १०२, १०५, ११३
वेदेमाण १०४, ११६
वेदेंत ११०, ११२, ११३
वोच्छिण्ण ३३, ९७, १६५
स सण्णिकासिज्जमाण ११६
सब्भावसण्ण ३१२
समट्ठिदिग २५७
समयपबद्ध १३१, २००
समास ३०७
समुक्कित्तणा २३३, २७५
सव्वकरणोवसामणा ४, ९
सव्वघादि ७९
सव्वत्थोव ७२, १२०
संकम १४, ६८, ५८
संकमणाकरण ३५, ३७
संकामण २००, २०१, २४१
संकामणपट्ठवग २१५, २५७, २५८
संकामय २१५
संकामिज्जमाण २०८
संकामिद २०८
संछुद्ध २१७
संछोहणा २२८
संछोहंत २५३
संजमासंजम ९७
संपिंडिद १११
सांपराइय ११४
सिया ९६
सुक्कलेस्सा १५९
सुत्तगाहा १५३
सुत्तपबंध २५२
सुत्तविहासा १, १४
सुद १५८
सुदीवजुत्त १५७
सुहुमसांपराइयद्धा १२३, १२३
ह हायमाण १५७

९ जयधवलागत विशेष शब्दसूची

अ अइच्छावणा २७५, २९७
अकरणोवसामणा २, ३
अच्चंताभाव १००, १६५
अणागारोवजोग १५७
अणाणुपुव्विसंकम ७८
अणियट्टि १७९
अधापवत्तसंकम १८. ९७
अप्पसत्थोवसामणा ८
अपुव्वफद्दय ३२९, ३३२, ३३३
अवट्ठिदपरिणाम ४३, ४७
अविभागपडिच्छेद ३३५
अस्सकण्णकरण ३२२
अंतर २०४
आ आगाल २१६
आजुत्तकरण २०८
आदिवग्गणा ०३१
आदोलकरण ३२३
आवाहा २०६
आवासय १७४, १७९
उ उदय ३

	उदयावलि	१६
	उदिण्ण	३
	उवजोग	१५७
	उव्वट्टण	३२०, ३२३
	उवसामणा	२, १५
ओ	ओट्टिदव्व	१२०
	ओवट्टण	३२०, ३२०
	ओवट्टणा	३३९
क	करण	१०३
	करणोवसामणा	२, ४
ख	खुद्दाभवग्गहण	१२९
ग	गलिदसेसगुणसेढि	६७
	गुणसंकम	१७, १७८, १८३, २७२
	गुणसेढि	१८३
	गुणहाणिट्ठाणंतर	३३४
च	'च' सद्द	२४१, २८८
ज	जट्ठिदिउदीरणा	२४
ण	जट्ठिदिबंध	८९
	णिद्दा	२४२
	णिरुवक्कम	३०९
	णिवाद	८६, ८७
	णिव्वाघाद	४५
त	'तु' सद्द	२३४, २८८
	तेरासिय	८८
द	दुसमयकद	२०७
	दूरावकिट्टि	१५०
	देसकरणोवसामणा	४, ५, ६, ८
प	पडिआगाल	२१६
	पडिपदमाण	४४
	पडिवाद	८१
	पढमट्ठिदिखंडय	१८०
	पढमसमयकद	२०७
	पदेससंकम	१७
	पयला	२४२
	परभविय	१७८
	पसत्थोवसामणा	९, १०
	पडिलोमसंकम	२५२
ब	बंधाणुलोम	३१०
	बंधावलि	१६
भ	भवक्खयणिबंधण (पडिवाद)	४५, ४६
व	वड्ढि	२५६
	वाघाद	४६, ४७
	विज्झादसंकम	१७
	विलोमक्कम	७६
	विसुद्धपरिणाम	१५५
	विहासण	२३३
स	सब्भाव	३१०, ३१६
	समुक्कितण	२३३
	सव्वकरणोवसामणा	७, ११
	सुहपरिणाम	
ह	हाणि	